अध्यात्मिक
ज्ञान
गंगा

कबिर्देवाय: नमः

अध्यात्मिक ज्ञान गंगा

लेखक :-

* जगत गुरु तत्वदर्शी *
संत रामपाल जी महाराज
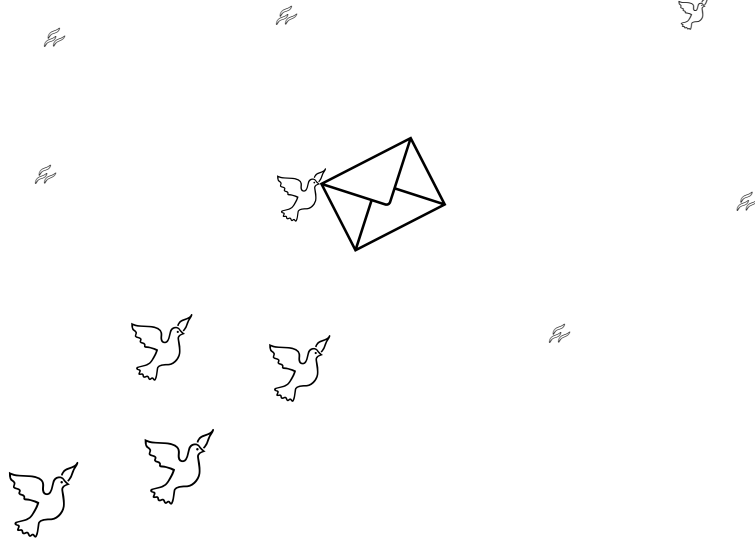
कुल लागत : 100/- रू.

धर्मार्थ मूल्य : मात्र 50/- रू.

संत रामपाल दास महाराज

सतलोक आश्रम

बन्दी छोड़ भक्ति मुक्ति ट्रस्ट (रजि. 3955),
रोहतक झज्जर रोड़, करौंथा, जि. रोहतक (हरि०) भारत।

सतलोक आश्रम, दौलतपुर रोड़, बरवाला, जि. हिसार (हरि०)भारत।

☎ **+91-9992600801, +91-9992600802, +91-9992600803,**
+91-9812166044, +91-9812151088, +91-9812026821,+91-9812142324

---

e-mail : jagatgururampalji@yahoo.com
visit us at - www.jagatgururampalji.org

विषय सूची

❑❑❑

अध्यात्मिक ज्ञान गंगा

भूमिका

पूर्ण परमात्मा(पूर्ण ब्रह्म) अर्थात् सतपुरुष का ज्ञान न होने के कारण सर्व विद्वानों को ब्रह्म(निरंजन/काल भगवान जिसे महाविष्णु भी कहते हैं) तक का ज्ञान है। पवित्र आत्माऐं चाहे वे ईसाई हैं, मुसलमान, हिन्दू या सिख धर्म से सम्बन्धित हैं इनको केवल अव्यक्त अर्थात् एक ओंकार परमात्मा की पूजा का ही ज्ञान पवित्र शास्त्रों (जिनको पुराणों, उपनिष्दों, कतेबों, वेदों, गीता आदि नामों से जाना जाता है) से हो पाया। क्योंकि इन सर्व शास्त्रों में ज्योति स्वरूपी अर्थात् काल ब्रह्म की ही पूजा विधि का वर्णन है तथा जानकारी पूर्ण ब्रह्म(सतपुरुष) की भी है। पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) न मिलने से पूर्ण ब्रह्म की पूजा का ज्ञान नहीं हुआ। जिस कारण से पवित्र आत्माऐं ईसाई फोर्मलैस गौड (निराकार प्रभु) कहते हैं। जबकि पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय के सष्टि की उत्पत्ति नामक अध्याय में लिखा है कि प्रभु ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया तथा छः दिन में सष्टि रचना करके सातवें दिन विश्राम किया। इससे स्वसिद्ध है कि प्रभु भी मनुष्य जैसे आकार में है। इसी का प्रमाण पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है। इसी प्रकार पवित्र आत्माऐं मुस्लमान प्रभु को बेचून (निराकार) अल्लाह (प्रभु) कहते हैं, जबकि पवित्र कुर्आन शरीफ के सुरत फूर्कानि संख्या 25, आयत संख्या 52 से 59 में लिखा है कि जिस प्रभु ने छः दिन में सष्टि रची तथा सातवें दिन तख्त पर जा विराजा, उसका नाम कबीर है। पवित्र कुर्आन को बोलने वाला प्रभु किसी और कबीर नामक प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है तथा कह रहा है कि वही कबीर प्रभु ही पूजा के योग्य है, पाप क्षमा करने वाला है, परन्तु उसकी भक्ति के विषय में मुझे ज्ञान नहीं, किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से पूछो। उपरोक्त दोनों पवित्र शास्त्रों (पवित्र बाईबल व पवित्र कुर्आन शरीफ) ने मिल-जुल कर सिद्ध कर दिया है कि परमेश्वर मनुष्य सदश शरीर युक्त है। उसका नाम कबीर है। पवित्र आत्माऐं हिन्दू व सिख उसे निरंकार(निराकार) के नाम से जानते हैं। जबकि आदरणीय नानक साहेब जी ने सतपुरुष के आकार रूप में दर्शन करने के पश्चात् अपनी अमतवाणी महला पहला 'श्रीगुरु ग्रन्थ साहेब' में पूर्ण ब्रह्म का आकार होने का प्रमाण दिया है, लिखा है ''धाणक रूप रहा करतार(पष्ठ 24), हक्का कबीर करीम तू बेएब परवरदिगार (पष्ठ 721)'' तथा प्रभु के मिलने से पहले पवित्र हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण श्री ब्रजलाल पाण्डे से पवित्र गीता जी को पढ़कर श्री नानक साहेब जी ब्रह्म को निराकार कहा करते थे। उनकी दोनों प्रकार की अमतवाणी गुरु ग्रन्थ साहेब में लिखी हैं। हिन्दुओं के माने जाने वाले शास्त्रों में पवित्र वेद व गीता विशेष हैं, उनके साथ-2 अठारह पुराणों को भी समान दष्टी से देखा जाता है। श्रीमद् भागवत सुधासागर, रामायण, महाभारत भी विशेष प्रमाणित शास्त्रों में से हैं। विशेष विचारणीय विषय यह है कि वर्तमान में जिन पवित्र शास्त्रों को हिन्दुओं के शास्त्र कहा जाता है, जैसे पवित्र चारों वेद व पवित्र श्रीमद् भगवत गीता जी आदि, वास्तव में ये सद् शास्त्र केवल पवित्र हिन्दु धर्म के ही नहीं हैं। ये सर्व शास्त्र महर्षि व्यास जी द्वारा उस समय लिखे गए थे जब कोई अन्य धर्म नहीं था। इसलिए पवित्र वेद व पवित्र श्रीमद्भगवत

गीता जी तथा पवित्र पुराणादि सर्व शास्त्र मानव मात्र के कल्याण के लिए हैं। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 1 मंत्र 15 तथा अध्याय 5 मंत्र 1 व 32 में स्पष्ट किया है कि ''{अग्नेः तनूर् असि, विष्णवे त्वा सोमस्य तनुर् असि, कविरंघारिः असि, बम्भारिः असि स्वर्ज्योति ऋतधामा असि} परमेश्वर का शरीर है, पाप के शत्रु परमेश्वर का नाम कविर्देव है, वही बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है। उस सर्व पालन कर्त्ता अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष का शरीर है। वह स्वप्रकाशित शरीर वाला प्रभु सत धाम अर्थात् सतलोक में रहता है। पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा कविर्मनीषी अर्थात् कविर्देव ही वह तत्वदर्शी है जिसकी चाह सर्व प्राणियों को है, वह कविर्देव परिभूः अर्थात् सर्व प्रथम प्रकट हुआ, जो सर्व प्राणियों की सर्व मनोकामना पूर्ण करता है। वह कविर्देव स्वयंभूः अर्थात् स्वयं प्रकट होता है, उसका शरीर किसी माता-पिता के संयोग से (शुक्रम् अकायम्) वीर्य से बनी काया नहीं है, उसका शरीर (अस्नाविरम्) नाड़ी रहित है अर्थात् पांच तत्व का नहीं है, केवल तेजपुंज से एक तत्व का है, जैसे एक तो मिट्टी की मूर्ति बनी है, उसमें भी नाक, कान आदि अंग हैं तथा दूसरी सोने की मूर्ति बनी है, उसमें भी सर्व अंग हैं। ठीक इसी प्रकार पूज्य कविर्देव का शरीर तेज तत्व का बना है, इसलिए उस परमेश्वर के शरीर की उपमा में अग्नेः तनूर् असि वेद में कहा है। जिसका अर्थ है ''तेजोमय परमेश्वर सशरीर है''।

आईए इस पवित्र पुस्तक में प्रवेश करते हैं तथा सर्व प्रथम पवित्र शास्त्र श्रीमद्भगवत गीता जी पर विचार करते हैं।

लेखक
संत रामपाल दास

❑❑❑

"पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी का ज्ञान किसने कहा?"

पवित्र गीता जी के ज्ञान को उस समय बोला गया था जब महाभारत का युद्ध होने जा रहा था। अर्जुन ने युद्ध करने से इन्कार कर दिया था। युद्ध क्यों हो रहा था? इस युद्ध को धर्मयुद्ध की संज्ञा भी नहीं दी जा सकती क्योंकि दो परिवारों कौरवों तथा पाण्डवों का सम्पत्ति वितरण पर विवाद था। कौरवों ने पाण्डवों को आधा राज्य भी देने से मना कर दिया था। दोनों पक्षों का बीच-बचाव करने के लिए प्रभु श्री कष्ण जी तीन बार शान्ति दूत बन कर गए। परन्तु दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी जिद्द पर अटल थे। श्री कष्ण जी ने युद्ध से होने वाली हानि से भी परिचित कराते हुए कहा कि न जाने कितनी बहन विधवा होंगी ? कितने ही बच्चे अनाथ हो जाऐंगे? महापाप के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलेगा। युद्ध में क्या पता कौन मरे, कौन बचे ? तीसरी बार जब श्री कष्ण जी समझौता करवाने गए तो दोनों पक्षों ने अपने-अपने पक्ष वाले राजाओं की सेना सहित सूची पत्र दिखाया तथा कहा कि इतने राजा हमारे पक्ष में हैं तथा इतने हमारे पक्ष में। श्री कष्ण जी ने देखा कि दोनों ही पक्ष टस से मस नहीं हो रहे हैं, युद्ध के लिए तैयार हो चुके हैं। तब श्री कष्ण जी ने सोचा कि एक दाव और है वह भी आज लगा देता हूँ। श्री कष्ण जी ने सोचा कि कहीं पाण्डव मेरे सम्बन्धी होने के कारण अपनी जिद्द इसलिए न छोड़ रहे हों कि श्री कष्ण हमारे साथ हैं, विजय हमारी ही होगी(क्योंकि श्री कष्ण जी की बहन सुभद्रा जी का विवाह श्री अर्जुन जी से हुआ था)। श्री कष्ण जी ने कहा कि एक तरफ मेरी सर्व सेना होगी और दूसरी तरफ मैं होऊँगा और इसके साथ-साथ मैं वचन बद्ध भी होता हूँ कि मैं हथियार भी नहीं उठाऊँगा। इस घोषणा से पाण्डवों के पैरों के नीचे की जमीन खिसक गई। उनको लगा कि अब हमारी पराजय निश्चित है। यह विचार कर पाँचों पाण्डव यह कह कर सभा से बाहर गए कि हम कुछ विचार कर लें। कुछ समय उपरान्त श्री कष्ण जी को सभा से बाहर आने की प्रार्थना की। श्री कष्ण जी के बाहर आने पर पाण्डवों ने कहा कि हे भगवन् ! हमें पाँच गाँव दिलवा दो। हम युद्ध नहीं चाहते हैं। हमारी इज्जत भी रह जाएगी और आप चाहते हैं कि युद्ध न हो, यह भी टल जाएगा।

पाण्डवों के इस फैसले से श्री कष्ण जी बहुत प्रसन्न हुए तथा सोचा कि बुरा समय टल गया। श्री कष्ण जी वापिस आए, सभा में केवल कौरव तथा उनके समर्थक शेष थे। श्री कष्ण जी ने कहा दुर्योधन युद्ध टल गया है। मेरी भी यह हार्दिक इच्छा थी। आप पाण्डवों को पाँच गाँव दे दो, वे कह रहे हैं कि हम युद्ध नहीं चाहते। दुर्योधन ने कहा कि पाण्डवों के लिए सुई की नोक तुल्य भी जमीन नहीं है। यदि उन्हें राज्य चाहिए तो युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र के मैदान में आ जाएें। इस बात से श्री कष्ण जी ने नाराज होकर कहा कि दुर्योधन तू इंसान नहीं शैतान है। कहाँ आधा राज्य और कहाँ पाँच गाँव? मेरी बात मान ले, पाँच गाँव दे दे। श्री कष्ण से नाराज होकर दुर्योधन ने सभा में उपस्थित योद्धाओं को आज्ञा दी कि श्री कष्ण को पकड़ो तथा कारागार में डाल दो। आज्ञा मिलते ही योद्धाओं ने श्री कष्ण जी को चारों तरफ से घेर लिया। श्री कष्ण जी ने अपना विराट रूप दिखाया। जिस कारण सर्व योद्धा और कौरव डर कर कुर्सियों के नीचे घुस

गए तथा शरीर के तेज प्रकाश से आँखें बंद हो गई। श्री कष्ण जी वहाँ से निकल गए।

आओ विचार करें :- उपरोक्त विराट रूप दिखाने का प्रमाण संक्षिप्त महाभारत गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित में प्रत्यक्ष है। जब कुरुक्षेत्र के मैदान में पवित्र गीता जी का ज्ञान सुनाते समय अध्याय 11 श्लोक 32 में पवित्र गीता बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि 'अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ। अब सर्व लोकों को खाने के लिए प्रकट हुआ हूँ।' जरा सोचें कि श्री कष्ण जी तो पहले से ही श्री अर्जुन जी के साथ थे। यदि पवित्र गीता जी के ज्ञान को श्री कष्ण जी बोल रहे होते तो यह नहीं कहते कि अब प्रवर्त्त हुआ हूँ। फिर अध्याय 11 श्लोक 21 व 46 में अर्जुन कह रहा है कि भगवन् ! आप तो ऋषियों, देवताओं तथा सिद्धों को भी खा रहे हो, जो आप का ही गुणगान पवित्र वेदों के मंत्रों द्वारा उच्चारण कर रहे हैं तथा अपने जीवन की रक्षा के लिए मंगल कामना कर रहे हैं। कुछ आपके दाढ़ों में लटक रहे हैं, कुछ आप के मुख में समा रहे हैं। हे सहस्त्र बाहु अर्थात् हजार भुजा वाले भगवान ! आप अपने उसी चतुर्भुज रूप में आईये। मैं आपके विकराल रूप को देखकर धीरज नहीं कर पा रहा हूँ।

अध्याय 11 श्लोक 47 में पवित्र गीता जी को बोलने वाला प्रभु काल कह रहा है कि 'हे अर्जुन यह मेरा वास्तविक काल रूप है, जिसे तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था।'

उपरोक्त विवरण से एक तथ्य तो यह सिद्ध हुआ कि कौरवों की सभा में विराट रूप श्री कष्ण जी ने दिखाया था तथा यहाँ युद्ध के मैदान में विराट रूप काल (श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके अपना विराट रूप काल) ने दिखाया था। नहीं तो यह नहीं कहता कि यह विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है। क्योंकि श्री कष्ण जी अपना विराट रूप कौरवों की सभा में पहले ही दिखा चुके थे।

दूसरी यह बात सिद्ध हुई कि पवित्र गीता जी को बोलने वाला काल(ब्रह्म-ज्योति निरंजन) है, न कि श्री कष्ण जी। क्योंकि श्री कष्ण जी ने पहले कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ तथा बाद में कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। श्री कष्ण जी काल नहीं हो सकते। उनके दर्शन मात्र को तो दूर-दूर क्षेत्र के स्त्री तथा पुरुष तड़फा करते थे। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में है जिसमें गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि बुद्धिहीन जन समुदाय मेरे उस घटिया (अनुत्तम) विद्यान को नहीं जानते कि मैं कभी भी मनुष्य की तरह किसी के सामने प्रकट नहीं होता। मैं अपनी योगमाया से छिपा रहता हूँ।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता श्री कष्ण जी नहीं है। क्योंकि श्री कष्ण जी तो सर्व समक्ष साक्षात् थे। श्री कष्ण नहीं कहते कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। इसलिए गीता जी का ज्ञान श्री कष्ण जी के अन्दर प्रेतवत् प्रवेश करके काल ने बोला था।

''विराट रूप क्या है ?''

विराट रूप : आप दिन के समय या चाँदनी रात्री में जब आप के शरीर की छाया छोटी लगभग शरीर जितनी लम्बी हो या कुछ बड़ी हो, उस छाया के सीने वाले स्थान पर दो मिनट तक एक टक देखें, चाहे आँखों से पानी भी क्यों न गिरें। फिर सामने आकाश की तरफ देखें। आपको अपना ही विराट रूप दिखाई देगा, जो सफेद रंग का आसमान को छू रहा होगा। इसी

प्रकार प्रत्येक मानव अपना विराट रूप रखता है। परन्तु जिनकी भक्ति शक्ति ज्यादा होती है, उनका उतना ही तेज अधिक होता जाता है।

इसी प्रकार श्री कष्ण जी भी पूर्व भक्ति शक्ति से सिद्धि युक्त थे, उन्होंने भी अपनी सिद्धि शक्ति से अपना विराट रूप प्रकट कर दिया, जो काल के तेजोमय शरीर(विराट) से कम तेजोमय था। तीसरी बात यह सिद्ध हुई कि पवित्र गीता जी बोलने वाला प्रभु काल सहस्त्रबाहु अर्थात् हजार भुजा युक्त है तथा श्री कष्ण जी तो श्री विष्णु जी के अवतार हैं जो चार भुजा युक्त हैं। श्री विष्णु जी सोलह कला युक्त हैं तथा श्री ज्योति निरंजन काल भगवान एक हजार कला युक्त है। जैसे एक बल्ब 60 वाट का होता है, एक बल्ब 100 वाट का होता है, एक बल्ब 1000 वाट का होता है, रोशनी सर्व बल्बों की होती है, परन्तु बहुत अन्तर होता है। ठीक इसी प्रकार दोनों प्रभुओं की शक्ति तथा विराट रूप का तेज भिन्न-भिन्न था।

इस तत्वज्ञान के प्राप्त होने से पूर्व जो गीता जी के ज्ञान को समझाने वाले महात्मा जी थे, उनसे प्रश्न किया करते थे कि पहले तो भगवान श्री कष्ण जी शान्ति दूत बनकर गए थे तथा कहा था कि युद्ध करना महापाप है। जब श्री अर्जुन जी ने स्वयं युद्ध करने से मना करते हुए कहा कि हे देवकी नन्दन मैं युद्ध नहीं करना चाहता हूँ। सामने खड़े स्वजनों व नातियों तथा सैनिकों का होने वाला विनाश देख कर मैंने अटल फैसला कर लिया है कि मुझे तीन लोक का राज्य भी प्राप्त हो तो भी मैं युद्ध नहीं करूँगा। मैं तो चाहता हूँ कि मुझ निहत्थे को दुर्योधन आदि तीर से मार डालें, ताकि मेरी मत्यु से युद्ध में होने वाला विनाश बच जाए। हे श्री कष्ण ! मैं युद्ध न करके भिक्षा का अन्न खाकर भी निर्वाह करना उचित समझता हूँ। हे कष्ण ! स्वजनों को मारकर तो पाप को ही प्राप्त होंगे। मेरी बुद्धि काम करना बंद कर गई है। आप हमारे गुरु हो, मैं आपका शिष्य हूँ। आप जो हमारे हित में हो वही दीजिए। परन्तु मैं नहीं मानता हूँ कि आपकी कोई भी राय मुझे युद्ध के लिए राजी कर पायेगी अर्थात् मैं युद्ध नहीं करूँगा। (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 1 श्लोक 31 से 39, 46 तथा अध्याय 2 श्लोक 5 से 8)

श्री कष्ण जी में प्रवेश काल बार-बार कह रहे हैं कि अर्जुन कायर मत बन, युद्ध कर। या तो युद्ध में मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा, या युद्ध जीत कर पथ्वी के राज्य को भोगेगा, आदि-आदि कह कर ऐसा भयंकर विनाश करवा डाला जो आज तक के संत-महात्माओं तथा सभ्य लोगों के चरित्र में ढूंढने से भी नहीं मिलता है। तब वे नादान गुरु जी(नीम-हकीम) कहा करते थे कि अर्जुन क्षत्री धर्म को त्याग रहा था। इससे क्षत्रित्व को हानि तथा शूरवीरता का सदा के लिए विनाश हो जाता। अर्जुन को क्षत्री धर्म पालन करवाने के लिए यह महाभारत का युद्ध श्री कष्ण जी ने करवाया था। पहले तो मैं उनकी इस नादानों वाली कहानी से चुप हो जाता था, क्योंकि मुझे स्वयं ज्ञान नहीं था।

पुनर् विचार करें :- भगवान श्री कष्ण जी स्वयं क्षत्री थे। कंस के वध के उपरान्त श्री अग्रसैन जी ने मथुरा की बाग-डोर अपने दोहते श्री कष्ण जी को संभलवा दी थी। एक दिन नारद जी ने श्री कष्ण जी को बताया कि निकट ही एक गुफा में एक सिद्धि युक्त राजा मुचकन्द सोया पड़ा है। वह छः महीने सोता है तथा छः महीने जागता है। जागने पर छः महीने युद्ध करता

रहता है तथा छः महीने सोने के समय यदि कोई उसकी निन्द्रा भंग कर दे तो मुचकन्द की आँखों से अग्नि बाण छूटते हैं तथा सामने वाला तुरन्त मत्यु को प्राप्त हो जाता है, आप सावधान रहना। यह कह कर श्री नारद जी चले गए।

कुछ समय उपरान्त श्री कष्ण जी से अपने दामाद कंश की हत्या का प्रतिशोध लेने के उद्देश्य से एक काल्यवन नामक राजा ने अठारह करोड़ सेना लेकर मथुरा पर आक्रमण कर दिया। श्री कष्ण जी ने देखा कि दुश्मन की सेना बहु संख्या में है तथा क्या पता कितने सैनिक मत्यु को प्राप्त होंगे? क्यों न काल्यवन का वध मुचकन्द से करवा दूं? यह विचार कर भगवान श्री कष्ण जी ने काल्यवन को युद्ध के लिए ललकारा तथा युद्ध छोड़ कर(क्षत्री धर्म को भूलकर विनाश टालना आवश्यक जानकर) भाग लिये और उस गुफा में प्रवेश किया जिसमें मुचकन्द सोया हुआ था। मुचकन्द के शरीर पर अपना पीताम्बर(पीली चद्दर) डाल कर श्री कष्ण जी गुफा में गहरे जाकर छुप गए। पीछे-पीछे काल्यवन भी उसी गुफा में प्रवेश कर गया। मुचकन्द को श्री कष्ण समझ कर उसका पैर पकड़ कर घुमा दिया तथा कहा कि कायर तुझे छुपे हुए को थोड़े ही छोड़ूंगा। पीड़ा के कारण मुचकन्द की निंद्रा भंग हुई, नेत्रों से अग्नि बाण निकलें तथा काल्यवन मत्यु को प्राप्त हुआ। काल्यवन के सैनिक तथा मंत्री अपने राजा के शव को लेकर लौट गए। क्योंकि युद्ध में राजा की मत्यु सेना की हार मानी जाती थी। जाते हुए कह गए कि हम नया राजा नियुक्त करके शीघ्र ही आयेंगे तथा श्री कष्ण तुझे नहीं छोड़ेंगे।

श्री कष्ण जी ने अपने मुख्य अभियन्ता (चीफ इन्जिनियर) श्री विश्वकर्मा जी को बुला कर कहा कि कोई ऐसा स्थान खोजो, जिसके तीन तरफ समुद्र हो तथा एक ही रास्ता(द्वार) हो। वहाँ पर अति शीघ्र एक द्वारिका(एक द्वार वाली) नगरी बना दो। हम शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान करेंगे। ये मूर्ख लोग यहाँ चैन से नहीं जीने देंगे। श्री कष्ण जी इतने नेक आत्मा तथा युद्ध विरोधी थे कि अपने क्षत्रीत्व को भी दाव पर रख कर युद्ध से होने वाले नरसंहार को टाला। क्या फिर वही श्री कष्ण जी अपने प्यारे साथी व सम्बन्धी को ऐसी बुरी सलाह दे सकते हैं तथा स्वयं युद्ध न करने का वचन करने वाले दूसरे को युद्ध की प्रेरणा दे सकते हैं? अर्थात् कभी नहीं। गीता अध्याय 18 श्लोक 43 में गीता ज्ञान दाता ने क्षत्री के स्वभाविक कर्मों का उल्लेख करते हुए कहा है कि ''युद्ध से न भागना'' आदि-२ क्षत्री के स्वभाविक कर्म है। इस से भी सिद्ध हुआ कि गीता जी का ज्ञान श्री कष्ण जी ने नहीं बोला। क्योंकि श्री कष्ण जी स्वयं क्षत्री होते हुए काल्यवन के सामने से युद्ध से भाग गए थे। व्यक्ति स्वयं किए कर्म के विपरीत अन्य को राय नहीं देता। न उसकी राय श्रोता को ठीक जचेगी। वह उपहास का पात्र बनेगा। यह गीता ज्ञान ब्रह्म(काल) ने प्रेतवत् श्री कष्ण जी में प्रवेश करके बोला था। भगवान श्री कष्ण रूप में स्वयं श्री विष्णु जी ही अवतार धार कर आए थे।

एक समय श्री भगु ऋषि ने विश्राम कर रहे भगवान श्री विष्णु जी(श्री कष्ण जी) के सीने में लात घात किया। श्री विष्णु जी ने श्री भगु ऋषि जी के पैर को सहलाते हुए कहा कि 'हे ऋषिवर! आपके कोमल पैर को कहीं चोट तो नहीं आई, क्योंकि मेरा सीना तो कठोर पत्थर जैसा है।' यदि श्री विष्णु जी(श्री कष्ण जी) युद्ध प्रिय होते तो सुदर्शन चक्र से श्री भगु जी के इतने टुकड़े

कर सकते थे कि गिनती न होती।

वास्तविकता यह है कि काल भगवान जो इक्कीस ब्रह्मण्ड का प्रभु है, उसने प्रतिज्ञा की है कि मैं वास्तविक शरीर में व्यक्त(मानव सदश अपने वास्तविक) रूप में सबके सामने नहीं आऊँगा। उसी ने सूक्ष्म शरीर बना कर प्रेत की तरह श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके पवित्र गीता जी का ज्ञान तो सही(वेदों का सार) कहा, परन्तु युद्ध करवाने के लिए भी अटकल बाजी में कसर नहीं छोड़ी। (काल ब्रह्म) कौन है? यह जानने के लिए कप्या पढ़िए सष्टि रचना इसी पुस्तक के पष्ठ नं. 84 से 159 पर।

जब तक महाभारत का युद्ध समाप्त नहीं हुआ तब तक ज्योति निरंजन (काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष) श्री कष्ण जी के शरीर में प्रविष्ट रहा तथा युधिष्ठिर जी से झूठ बुलवाया कि कह दो कि अश्वत्थामा मर गया, भीम के पौत्र अर्थात् घटोतकच्छ के पुत्र(श्याम जी) का शीश कटवाया तथा रथ के पहिए को हथियार रूप में उठाया, यह सर्व काल ही का किया-कराया उपद्रव था, प्रभु श्री कष्ण जी का नहीं। महाभारत का युद्ध समाप्त होते ही काल भगवान श्री कष्ण जी के शरीर से निकल गया। श्री कष्ण जी ने श्री युधिष्ठिर जी को इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) की राजगद्दी पर बैठाकर द्वारिका जाने को कहा। तब अर्जुन आदि ने प्रार्थना की कि हे श्री कष्ण जी! आप हमारे पूज्य गुरुदेव हो, हमें एक सतसंग सुना कर जाना, ताकि हम आपके सद्वचनों पर चल कर अपना आत्म-कल्याण कर सकें।

यह प्रार्थना स्वीकार करके श्री कष्ण जी ने तिथि, समय तथा स्थान निहित कर दिया। निश्चित तिथि को श्री अर्जुन ने भगवान श्री कष्ण जी से कहा कि प्रभु आज वही पवित्र गीता जी का ज्ञान ज्यों का त्यों सुनाना, क्योंकि मैं बुद्धि के दोष से भूल गया हूँ। तब श्री कष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन तू निश्चय ही बड़ा श्रद्धाहीन है। तेरी बुद्धि अच्छी नहीं है। ऐसे पवित्र ज्ञान को तूं क्यों भूल गया ? फिर स्वयं कहा कि अब उस पूरे गीता ज्ञान को मैं नहीं कह सकता अर्थात् मुझे ज्ञान नहीं। कहा कि उस समय तो मैंने योग युक्त होकर बोला था। विचारणीय विषय है कि यदि भगवान श्री कष्ण जी युद्ध के समय योग युक्त हुए होते तो शान्ति समय में योग युक्त होना कठिन नहीं था। जबकि श्री व्यास जी ने वही पवित्र गीता जी का ज्ञान वर्षों उपरान्त ज्यों का त्यों लिपिबद्ध कर दिया। उस समय काल ब्रह्म(ज्योति निरंजन) ने श्री व्यास जी के शरीर में प्रवेश कर के पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी को लिपिबद्ध कराया, जो वर्तमान में आप के कर कमलों में है।

प्रमाण के लिए संक्षिप्त महाभारत पष्ठ नं. 667 तथा पुराने के पष्ठ नं. 1531 पर :-

न शक्यं तन्मया भूयस्तथा वक्तुमशेषतः।।

परं हि ब्रह्म कथितं योगयुक्तेन तन्मया।

(महाभारत, आश्रवः 1612-13)

भगवान बोले - ‘वह सब-का-सब उसी रूपमें फिर <u>दुहरा देना अब मेरे वशकी बात नहीं है</u>। उस समय मैंने योगयुक्त होकर परमात्मतत्वका वर्णन किया था।‘

संक्षिप्त महाभारत द्वितीय भाग के

पष्ठ नं. 1531 से सहाभार :

(‘श्रीकष्णका अर्जुनसे गीता का विषय पूछना सिद्ध महर्षि वैशम्पायन और काश्यपका संवाद’) – पाण्डुनन्दन अर्जुन श्रीकष्णके साथ रहकर बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने एक बार उस रमणीय सभाकी ओर दष्टि डालकर भगवान्से यह वचन कहा ––‘देवकीनन्दन ! जब युद्धका अवसर उपस्थित था, उस समय मुझे आपके माहात्म्यका ज्ञान और ईश्वरीय स्वरूपका दर्शन हुआ था, किंतु केशव ! आपने स्नेहवश पहले मुझे जो ज्ञानका उपदेश किया था, वह सब इस समय बुद्धिके दोषसे भूल गया हूँ। उन विषयोंको सुननेके लिये बारंबार मेरे मनमें उत्कण्ठा होती है, इधर, आप जल्दी ही द्वारका जानेवाले हैं। अतः पुनः वह सब विषय मुझे सुना दीजिये।

वैशम्पायनजी कहते हैं ––अर्जुनके ऐसा कहनेपर वक्ताओं में श्रेष्ठ महातेजस्वी भगवान् श्रीकष्णने उन्हें गलेसे लगाकर इस प्रकार उत्तर दिया।

श्रीकष्ण बोले ––अर्जुन ! उस समय मैंने तुम्हें अत्यन्त गोपनीय विषयका श्रवण कराया था, अपने स्वरूपभूत धर्म सनातन पुरुषोत्तमतत्त्वका परिचय दिया था और (शुक्ल–कष्ण गतिका निरूपण करते हुए) नित्य लोकोंका भी वर्णन किया था। किंतु तुमने जो अपनी नासमझीके कारण उस उपदेशको याद नहीं रक्खा यह जानकर मुझे बड़ा खेद हुआ है। उन बातोंका अब पूरा–पूरा स्मरण होना सम्भव नहीं जान पड़ता। पाण्डुनन्दन ! निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन हो, तुम्हारी बुद्धि अच्छी नहीं जान पड़ती। अब मेरे लिये उस उपदेशको ज्यों–का–त्यों दुहरा देना कठिन है, क्योंकि उस समय योगयुक्त होकर मैंने परमात्मतत्त्वका वर्णन किया था। (अधिक जानकारी के लिए पढ़ें – ‘संक्षिप्त महाभारत द्वितीय भाग’)

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री कष्ण जी ने श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान नहीं बोला, यह तो काल (ज्योति निरंजन अर्थात् ब्रह्म) ने बोला था।

अन्य प्रमाण :- (1) कुछ समय उपरान्त श्री युधिष्ठिर जी को भयंकर स्वपन आने लगे। श्री कष्ण जी से कारण तथा समाधान पूछा तो बताया कि तुमने युद्ध में जो पाप किए हैं वह नर संहार का दोष तुम्हें दुःख दाई हो रहा है। इसके लिए एक यज्ञ करो। श्री कष्ण जी के मुख कमल से यह वचन सुन कर श्री अर्जुन को बहुत दुःख हुआ तथा मन ही मन विचार करने लगा कि भगवान श्री कष्ण जी पवित्र गीता बोलते समय तो कह रहे थे कि अर्जुन तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा, तूं युद्ध कर ले(पवित्र गीता अध्याय 2 श्लोक 37-38)। यदि युद्ध में मारा भी गया तो स्वर्ग का सुख भोगेगा, अन्यथा युद्ध में जीत कर पथ्वी के राज्य का आनन्द लेगा, तुम्हारे दोनों हाथों में लड्डू हैं। अर्जुन ने विचार किया कि जो समाधान दुःख निवारण का श्री कष्ण जी ने बताया है इसमें करोड़ों रूपया व्यय होना है। जिससे बड़े भाई युधिष्ठिर का कष्ट निवारण होगा। यदि मैं श्री कष्ण जी से वाद-विवाद करूंगा कि आप पवित्र गीता जी का ज्ञान देते समय तो कह रहे थे कि तुम्हें पाप नहीं लगेगा। अब उसके विपरित कह रहे हो। इससे मेरा बड़ा भाई यह न सोच बैठे कि करोड़ों रूपये के खर्च को देख कर अर्जुन बौखला गया है तथा मेरे कष्ट निवार्ण से प्रसन्न नहीं है। इसलिए मौन रहना उचित जान कर सहर्ष स्वीकति दे दी तथा कहा कि हे भगवन् जैसा आप कहोगे वैसा ही होगा। श्री कष्ण जी ने उस यज्ञ की तिथि निर्धारित कर दी। वह यज्ञ भी श्री सुदर्शन स्वपच के भोजन खाने से सफल हुई।

कुछ समय उपरान्त ऋषि दुर्वासा जी के शापवश सर्व यादव कुल का विनाश हो गया, श्री कष्ण भगवान के पैर के तलुवे में एक शिकारी (जो त्रेतायुग में सुग्रीव के भाई बाली की ही आत्मा थी) ने विषाक्त तीर मार दिया। तब पाँचों पाण्डवों के घटना स्थल पर पहुँच जाने के उपरान्त

श्री कष्ण जी ने कहा कि आप मेरे शिष्य हो मैं आप का धार्मिक गुरु भी हूँ। इसलिए मेरी अन्तिम आज्ञा सुनो। एक तो यह है कि अर्जुन, द्वारिका की सर्व स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) ले जाना, क्योंकि यहाँ कोई नर नहीं बचा है तथा दूसरे आप सर्व पाण्डव राज्य त्याग कर हिमालय में साधना करके शरीर को गला देना। क्योंकि तुमने महाभारत के युद्ध के दौरान जो हत्याऐं की थी, तुम्हारे शीश पर वह पाप बहुत भयंकर है। उस समय अर्जुन अपने आप को नहीं रोक सका तथा कहा प्रभु वैसे तो आप ऐसी स्थिति में हैं कि मुझे ऐसी बातें नहीं करनी चाहिऐं, परन्तु प्रभु यदि आज मेरी शंका का समाधान नहीं हुआ तो मैं चैन से मर भी नहीं पाऊँगा। पूरा जीवन रोता रहूँगा। श्री कष्ण जी ने कहा अर्जुन पूछ ले जो कुछ पूछना है, मेरा अन्तिम समय है। श्री अर्जुन ने आँखों में आंसू भर कर कहा कि प्रभु बुरा न मानना। जब आपने पवित्र गीता जी का ज्ञान कहा था उस समय मैं युद्ध करने से मना कर रहा था। आपने कहा था कि अर्जुन तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। यदि युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को प्राप्त होगा और यदि विजयी हुआ तो पथ्वी का राज्य भोगेगा तथा तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा। हमने आप ही की देख-रेख व आज्ञानुसार युद्ध किया(प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 2 श्लोक 37-38)। हे भगवन् ! हमारे तो एक हाथ में भी लड्डू नहीं रहा। न तो युद्ध में मर कर स्वर्ग प्राप्ति हुई तथा अब राज्य त्यागने का आदेश आप दे रहे हैं, न ही पथ्वी के राज्य का आनन्द ही भोग पाए। ऐसा छल युक्त व्यवहार करने में आपका क्या हित था? अर्जुन के मुख से यह वचन सुन कर युधिष्ठिर जी ने कहा कि अर्जुन ऐसी स्थिति में जब कि भगवान अन्तिम स्वांस गिन रहे हैं आपका शिष्टाचार रहित व्यवहार शोभा नहीं देता। श्री कष्ण जी ने कहा अर्जुन आज मैं अन्तिम स्थिति में हूँ, तुम मेरे अत्यन्त प्रिय हो, आज वास्तविकता बताता हूँ कि कोई खलनायक जैसी और शक्ति है जो अपने को यन्त्र की तरह नचाती रही, मुझे कुछ मालूम नहीं मैंने गीता में क्या बोला था। परन्तु अब मैं जो कह रहा हूँ वह तुम्हारे हित में है। श्री कष्ण जी यह वचन अश्रुयुक्त नेत्रों से कह कर प्राण त्याग गए। उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि पवित्र गीता जी का ज्ञान श्री कष्ण जी ने नहीं कहा। यह तो काल ब्रह्म(ज्योति निरंजन) ने बोला था, जो इक्कीश ब्रह्मण्ड का स्वामी है। काल ब्रह्म कौन है? यह जानने के लिए कप्या सष्टि रचना पढ़े। इसी पुस्तक के पष्ठ 84 से 159 पर।

श्री कष्ण सहित सर्व यादवों का अन्तिम संस्कार कर अर्जुन को छोड़ कर चारों भाई इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) चले गए। पीछे से अर्जुन द्वारिका की स्त्रियों को लिए आ रहा था। रास्ते में जंगली लोगों ने सर्व गोपियों को लूटा तथा कुछेक को भगा ले गए तथा अर्जुन को पकड़ कर पीटा। अर्जुन के हाथ में वही गांडीव धनुष था जिससे महाभारत के युद्ध में अनगिन हत्याऐं कर डाली थी, वह भी नहीं चला। तब अर्जुन ने कहा कि यह श्री कष्ण वास्तव में झूठा तथा कपटी था। जब युद्ध में पाप करवाना था तब तो मुझे शक्ति प्रदान कर दी, एक तीर से सैकड़ों योद्धाओं को मार गिराता था और आज वह शक्ति छीन ली, खड़ा-खड़ा पिट रहा हूँ। इसी विषय में पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब (कविर्देव) जी का कहना है कि श्री कष्ण जी कपटी व झूठे नहीं थे। यह सर्व छल काल ब्रह्म(ज्योति निरंजन) कर रहा है। जब तक यह आत्मा कबीर परमेश्वर(सतपुरुष) की शरण में पूरे सन्त(तत्वदर्शी) के माध्यम से नहीं आ जाएगी, तब तक काल इसी तरह कष्ट पर

कष्ट देता रहेगा। पूर्ण जानकारी तत्वज्ञान से होती है।

अन्य प्रमाण :-

(2) गीता अध्याय 10 श्लोक 9 से 11 में गीता ज्ञान दाता काल प्रभु कह रहा है कि जो श्रद्धालु मुझ ब्रह्म का ही निरन्तर चिन्तन करते रहते हैं उनके अज्ञान को नष्ट करने के लिए मैं ही उनके अन्दर(आत्मभावस्थः) जीवात्मा की तरह बैठकर शास्त्रों का ज्ञान देता हूँ।

(3) श्री विष्णु पुराण(गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चतुर्थ अंश अध्याय 2 श्लोक 21 से 26 में पष्ठ 233 पर लिखा है कि देवताओं और राक्षसों के युद्ध में देवताओं की प्रार्थना पर भगवान विष्णु ने कहा है कि मैं राजर्षि शशाद के शरीर में कुछ समय प्रवेश करके असुरों का नाश करूंगा। (यहाँ पर विष्णु रूप में काल ब्रह्म बोल रहा है)

(4) श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चतुर्थ अंश अध्याय 3 श्लोक 4 से 6 में पष्ठ 242 पर लिखा है कि ''नागेश्वरों की प्रार्थना स्वीकार करके श्री विष्णु जी ने कहा कि मैं मानधाता के पुत्र पुरूकुत्स के शरीर में प्रवेश करके गन्धर्वों का नाश करूंगा। {यहाँ पर विष्णु रूप में काल ब्रह्म बोल रहा है}

विशेष विचार :- उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कष्ण ने नहीं बोला, यह तो श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश होकर काल ब्रह्म(ज्योति निरंजन) ने बोला था।

क्योंकि वह उपरोक्त नियम से किसी भी योग्य व्यक्ति में प्रेतवत् प्रवेश करके अपना कार्य सिद्ध करता है। पश्चात् निकल जाता है जैसे अर्जुन में प्रवेश करके विरोधी सेना मार डाली पश्चात् निकल गया। फिर अर्जुन को जंगली व्यक्तियों ने मारा-पीटा। अर्जुन में पूर्व वाली शक्ति नहीं रही।

"काल की परिभाषा"

पवित्र विष्णु पुराण में वर्णन है कि भगवान विष्णु (महाविष्णु रूप में काल) का प्रथम रूप तो पुरुष (प्रभु जैसा) है परन्तु उसका परम रूप 'काल' है। जब भगवान विष्णु (काल जो महाविष्णु रूप में ब्रह्मलोक में रहता है तथा प्रकति अर्थात् दुर्गा को अपनी पत्नी महालक्ष्मी रूप में रखता है) अपनी प्रकति (दुर्गा) से अलग हो जाता है तो काल रूप में प्रकट हो जाता है। (विष्णु पुराण अध्याय 2 श्लोक 14 व 27 पष्ठ 4-5 गीता प्रैस गोरख पुर से प्रकाशित, अनुवादक हैं श्री मुनिलाल गुप्त)

विशेष :- उपरोक्त विवरण का भावार्थ है कि यह महाविष्णु अर्थात् काल पुरुष पहले तो लगता है कि यह दयावान भगवान है। जैसे खाने के लिए अन्न, मेवा व फल आदि कितने स्वादिष्ट प्रदान किए हैं तथा पीने के लिए दूध, जल कितने स्वादिष्ट तथा प्राण दायक प्रदान किए हैं। कितनी अच्छी वायु जीने के लिए चला रखी है, कितनी विस्तत पथ्वी रहने तथा घूमने के लिए प्रदान की है, फिर पति-पत्नी का योग, पुत्रों व पुत्रियों की प्राप्ति से लगता है कि यह तो बड़ा दयावान प्रभु है। जिसके लोक में हम रह रहे हैं।

महाविष्णु का वास्तविक रूप काल कैसे है :- किसी के पुत्र की मत्यु, किसी की पुत्री की मत्यु, किसी के दोनों पुत्रों की मत्यु, किसी का पूरा परिवार दुर्घटना में मत्यु को प्राप्त हो जाता है। किसी क्षेत्र में बाढ़ आकर हजारों व्यक्तियों की परिवार सहित मत्यु, किसी क्षेत्र में भूकंप से लाखों व्यक्ति सपरिवार मत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार इस विष्णु (महाविष्णु रूप में ज्योति निरंजन) का वास्तविक रूप काल है। क्योंकि ज्योति निरंजन (काल) शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करता है। इसलिए अपने तीनों पुत्रों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) से उत्पत्ति, स्थिति व संहार करवाता है।

उदाहरण :- पूर्ण ब्रह्म कविर्देव ने अपने प्रिय सेवक श्री धर्मदास जी द्वारा काल की स्थिति पूछने पर बताया कि जैसे कसाई बकरे पालता है। उन प्राणियों के चारे की व्यवस्था करता है, पानी का प्रबन्ध करता है, गर्मी व सर्दी से बचने के लिए कुछ मकान आदि का भी प्रबन्ध करता है, जिससे वे अबोध बकरे समझते हैं कि हमारा स्वामी बहुत दयालु है। हमारा कितना ध्यान रखता है। जब कसाई उनके पास आता है तो वे नर व मादा बकरे उसे अपना सुखदाई मालिक जान कर उसको प्यार जताने के लिए आगे वाले पैर उठाकर कसाई के शरीर को स्पर्श करते हैं, कुछ उसके हाथों व पैरों को चाटते हैं। कसाई उन बकरों को छूकर कमर पर हाथ लगा कर दबा-दबा कर देखता है तो वे बकरे समझते हैं कि हमें प्यार दे रहा है। परन्तु कसाई देख रहा होता है कि इस बकरे में कितने किलोग्राम मास हो चुका है। जब मांस लेने के लिए ग्राहक आता है तो उस समय कसाई नहीं देखता कि किसका बाप मर रहा है, किसकी बेटी या पुत्र या सर्व परिवार मर रहा है। उनको सुविधा देने का उसका यही उद्देश्य था। ठीक इसी प्रकार सर्व प्राणी काल ब्रह्म की साधना करके काल आहार ही बने हैं। इससे छूटने की विधि आपको इसी पुस्तक में विस्तत मिलेगी।

एक बहन ने मुझ दास का सतसंग सुना तथा बाद में अपनी दुःख भरी कथा सुनाई जो निम्न है :--

उस बहन ने कहा महाराज जी मैं विधवा हूँ। एक पुत्र की प्राप्ति होते ही मेरे पति की मत्यु हो गई। मैंने अपने पुत्र की परवरिश बहुत ही चाव तथा प्यार के साथ इस दष्टि कोण से की कि कहीं पुत्र को पिता का अभाव महसूस न हो जाए। उसने जो सम्भव वस्तु की प्रार्थना की मैंने दुःखी सुखी होकर उपलब्ध करवाई। जब वह ग्यारहवीं कक्षा में कॉलेज में जाने लगा तो मोटर साईकिल की जिद कर ली। दुर्घटना के भय से मैंने बहुत मना किया, परन्तु पुत्र ने खाना नहीं खाया। तब मैंने उसके प्यारवश होकर मोटर साईकिल जैसे-तैसे करके मोल लेकर दे दी। मैंने दूसरी शादी भी इसी उद्देश्य से नहीं करवाई की कि कहीं मेरे पुत्र को कष्ट न हो जाए। मैंने अपने पुत्र को गर्म-गर्म खाना खिलाया। वह प्रतिदिन की तरह अपने एक दोस्त को उसके घर से मोटर साईकिल पर बैठाकर कॉलेज जाने के लिए चला गया।

मैंने शेष भोजन बनाया तथा स्वयं खाने के लिए भोजन डाल कर प्रथम ग्रास ही तोड़ा था इतने में मेरे पुत्र का दोस्त दौड़ता हुआ आया, उसको कुछ चोट लगी हुई थी। उसने कहा कि चाची भईया को दुर्घटना में बहुत ज्यादा चोट आई है। इतना सुनते ही हाथ का ग्रास थाली में

गिर गया। नंगे पैरों उस बच्चे के साथ पागलों की तरह रोती हुई दौड़ कर उस स्थान पर गई जहाँ मेरे पुत्र की दुर्घटना हुई थी। वहाँ पर केवल क्षति ग्रस्त मोटर साईकिल पड़ी थी। उपस्थित व्यक्तियों ने बताया कि आपके पुत्र को हस्पताल लेकर गये हैं। मैं हस्पताल पहुँची तो डाक्टरों ने मत घोषित कर दिया। मैंने हस्पताल की दीवार को टक्कर मारी, मेरा सिर फट गया, सात टांके लगे, बेहोश हो गई, लगभग दो घंटे में होश आया।

उस दिन के बाद सर्व भगवानों के चित्र घर से बाहर फैंक दिए तथा स्वपन में भी किसी भगवान को याद नहीं करती। क्योंकि मैंने अपने पुत्र की कुशलता के लिए लोकवेद अनुसार सर्व साधनाऐं की, परन्तु कुछ भी काम नहीं आई। आज आप का सतसंग जो सष्टि रचना का प्रकरण आपने सुनाया तथा पवित्र गीता जी से भी बताया कि यह सर्व काल का जाल है, अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए कसाई की तरह सर्व प्राणियों को विवश किए हुए है। मेरी तो आज आंखें खुल गई। अब मन करता है कि आपका उपदेश लेकर काल जाल से निकल जाऊं। उस बहन ने उपदेश लिया तथा अपना कल्याण करवाया।

मैंने उस बहन से पूछा आप क्या साधना करते थे?

उस बहन ने उत्तर दिया :- एक सुप्रसिद्ध संत का नाम लेकर कहा कि उस मूर्ख से दस वर्ष से उपदेश भी ले रखा था। उसके बताए अनुसार नाम जाप घण्टों किया करती थी। श्री विष्णु जी का सहस्रनामा का जाप भी करती थी। गीता जी का नित्य पाठ, पितर पूजा (श्राद्ध निकालना) करती थी। गांव में परम्परागत बाबा श्याम जी की पूजा भी करती थी। अष्टमी तथा सोमवार का व्रत भी करती थी। निकटतम मन्दिर में प्रतिदिन जाती थी। वर्ष में दो बार वैष्णों देवी के दर्शन करने जाती थी। गुड़गांव वाली माता की पूजा भी करती थी। नवरात्रों का व्रत भी किया करती थी। एक बहन ने कहा बाबा गरीबदास जी की पूजा करने तथा वहाँ छुड़ानी धाम(जिला झज्जर) पर जाने से कोई आपत्ति नहीं आ सकती। वहाँ भी छठे महीने मेला भरता है जाया करती थी तथा पाठ भी करवाती थी। और क्या बताऊँ? बाबा हरिदास जी झाड़ौदा वाले की भी पूजा करती थी। मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। पहले तो लगता था कि मेरा परिवार सुखी है। जो उपरोक्त साधना का ही परिणाम है।

परन्तु अब आप के सतसंग से ज्ञान हुआ कि यह तो मेरा प्रारब्ध ही मिल रहा था। ये पूजाऐं पवित्र गीता जी में तथा पवित्र अमत वाणी परमेश्वर कबीर जी तथा गरीबदास जी के सद्ग्रन्थ में वर्णित न होने से शास्त्र विरुद्ध थी। जिस कारण से कोई लाभ होना ही नहीं था। हमारा क्या दोष है? जो गुरु जी ने साधना बताई मैं तो तन-मन-धन से कर रही थी। अब पता चला कि वे गुरु नहीं है, वे तो नीम हकीम हैं। मानव जीवन के सब से बड़े शत्रु हैं। यदि मुझे यह सत्य साधना मिल जाती तो मेरा पुत्र नहीं मरता। क्योंकि मैंने आपके सेवकों के सुखों को देखा है तथा उन पर आने वाली भयंकर आपतियों को टलते देखा है। तब मैं आपका सतसंग सुनने आई हूं तथा आप का लगातार चार दिन तक सतसंग सुनकर आज उपदेश लेने की इच्छा हुई है। मैंने उस बहन से कहा कि जिन साधनाओं को आप कर रही थी वे सर्व शास्त्र विधि अनुसार नहीं थी, जिस कारण आपको परमेश्वर का सहयोग प्राप्त नहीं हुआ। यह तो आप ने स्वयं ही

निर्णय लेकर बता दिया। क्योंकि आज तक आपको सत्संग ही प्राप्त नहीं हुआ था। जिसे आप सतसंग जान कर श्रवण करती थी वह सतसंग नहीं लोक वेद (सुना सुनाया शास्त्र विरुद्ध ज्ञान) था। जो आप किसी धाम पर जाती थी तथा पाठ करवाती थी। आदरणीय गरीबदास जी की पूजा करती थी। जब कि आदरणीय गरीबदास जी तो कहते हैं कि :-

सब पदवी के मूल हैं, सकल सिद्ध हैं तीर। दास गरीब सतपुरुष भजो, अविगत कला कबीर।।
अलल पंख अनुराग है, सुन्न मण्डल रहे थीर। दास गरीब उधारिया, सतगुरु मिलें कबीर।।
पूजें देई धाम को, शीश हलावें जो। गरीबदास साची कहैं, हद काफिर हैं सो।

उपरोक्त अमतवाणी में प्रमाण है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि मेरा उद्धार भी परमेश्वर कबीर(कविर्देव) ने किया तथा तुम भी उसी सर्वशक्तिमान कबीर(कविरमितौजा) परमेश्वर की ही भक्ति करो। उसके लिए कहा है कि पूर्ण संत जो कबीर परमेश्वर(कविर्देव) का कपा पात्र हो, उससे उपदेश लेकर अपना कल्याण करवाओ। झूठे गुरुओं के आश्रित रहने से जीवन व्यर्थ होता है। उस शास्त्र विरुद्ध साधना बताने वाले नकली गुरु को त्याग देना चाहिये। उसके तो दर्शन भी अशुभ होते हैं। आदरणीय गरीबदास साहेब जी अपनी अमतवाणी में कहते हैं कि :-

झूठे गुरु को लीतर लावैं, उसको निश्चय पीटे। उसके पीटे पाप नहीं है, घर से काढ़ घसीटे।।

उपरोक्त अमतवाणी में आदरणीय गरीबदास साहेब जी शास्त्र विधि रहित साधना बता कर अनमोल मानव जन्म को नष्ट करने वाले नकली (झूठे) मार्ग दर्शकों (गुरुओं) के विषय में कह रहे हैं कि वे आप का जीवन नष्ट करने वाले हैं। उनसे तुरंत छुटकारा लेना चाहिये। घर में घुसने नहीं देना चाहिए। वे तो परमेश्वर कबीर (कविर्देव) के द्रोही हैं तथा काल के भेजे दूत हैं।

"अन् अधिकारी से यज्ञ व पाठ करवाना व्यर्थ है"

जिसको पूर्ण परमात्मा का मार्ग दर्शन करने का अधिकार नहीं है तथा उसके पास सत्य भक्ति तीन मंत्र की नहीं है, वह अन् अधिकारी होता है। पूर्ण संत जो पूर्ण परमेश्वर की वास्तविक साधना बताता है उसे गुरु बना कर उसी के माध्यम से सर्व धार्मिक अनुष्ठान करवाना हितकर है।

कबीर गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान। गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, पूछो वेद पुराण।।
गुरु बिन यज्ञ हवन जो करही, निष्फल जाएं कबहुं नहीं फलहीं।

एक बार राजा परिक्षित को सातवें दिन सर्प ने डसना था। उस समय सर्व ऋषियों ने यह निर्णय लिया कि राजा को सात दिन तक श्रीमद्भागवद सुधासागर का पाठ सुनाया जाये, ताकि राजा का मोह संसार से हट जाए। कौन ऐसा कथा करने वाला ऋषि है जिसके पाठ करने से राजा का कल्याण हो सके ?

विचार करें :- सातवें दिन पता लग जाना था कि कथा (पाठ) करने वाला अधिकारी है या नहीं। इसलिए पथ्वी पर उपस्थित सर्व ऋषियों व महर्षियों ने पाठ (कथा) करने का कार्य स्वीकार नहीं किया। क्योंकि वे महापुरुष प्रभु के संविधान से परिचित थे, इसलिए राजा परिक्षित के जीवन से खिलवाड़ नहीं किया तथा जो ढोंगी थे वे इस डर से सामने नहीं आए कि सातवें दिन पोल खुल जायेगी। उस समय स्वर्ग से महर्षि सुखदेव जी बुलाए गए जो विमान में बैठ कर आए। आते ही श्री सुखदेव जी ने राजा परिक्षित जी से कहा कि राजन आप मेरे से उपदेश प्राप्त करो अर्थात् मुझे गुरु

बनाओ तब कथा (पाठ) करने का फल प्राप्त होगा। राजा परिक्षित ने श्री सुखदेव जी को गुरु बनाया तब सात दिन श्री भागवत सुधासागर (श्री विष्णु उर्फ श्री कष्ण जी की लीला) की कथा सुनाई। राजा को सर्प ने डसा। राजा की मत्यु हो गई। सूक्ष्म शरीर में राजा परिक्षित अपने गुरु श्री सुखदेव जी के साथ विमान में बैठ कर स्वर्ग गए। क्योंकि पहले राजा बहुत धार्मिक होते थे, पुण्य करते रहते थे।

राजा परिक्षित ने श्री कष्ण जी से उपदेश भी प्राप्त था। उन्हीं के मार्ग दर्शन अनुसार बहुत धर्म किया था। परन्तु बाद में कलयुग के प्रभाव से ऋषि भिंडी के गले में सर्प डालने से तथा अन्य मर्यादा हीन कार्य करने से राजा परिक्षित का उपदेश खण्ड हो गया था। उस समय न तो किसी ऋषि जी ने राजा को उपदेश दे कर शिष्य बनाने की हिम्मत की, क्योंकि वे गुरु बनने योग्य नहीं थे। उन्हें उपदेश देने का अधिकार नहीं था। केवल श्री कष्ण जी ही उपदेश देते थे, जो पाण्डवों के भी गुरु जी थे तथा छप्पन (56) करोड़ यादवों के भी गुरु जी थे। राजा परिक्षित के पुण्यों के आधार से श्री सुखदेव जी गुरु बन कर उसको कथा सुनाकर संसार से आस्था हटवा कर केवल स्वर्ग ले गए। इतना लाभ राजा परिक्षित को हुआ। स्वर्ग का समय पूरा होने अर्थात् पुण्य क्षीण होने के उपरान्त राजा परिक्षित तथा सुखदेव जी भी नरक जायेंगे, फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में नाना कष्ट उठायेंगे। जन्म-मत्यु समाप्त नहीं हुआ अर्थात् मुक्त नहीं हुए।

वर्तमान के सन्तों व महन्तों को स्वयं ही ज्ञान नहीं कि हम जो शास्त्र विरुद्ध साधना कर तथा करवा रहे हैं यह कितनी भयंकर कष्ट दायक दोनों (गुरु जी व शिष्यों) को होगी। इसलिए पुनर् विचार करना चाहिए तथा झूठे गुरुजी को तथा झूठी (शास्त्र विरुद्ध) पूजाओं को तुरन्त त्याग कर सत्य साधना प्राप्त करके आत्म कल्याण करवाना चाहिए। वह साधना मुझ दास के पास पूर्ण रूपेण उपलब्ध है।

सन्त रामपाल जी महाराज

❑❑❑

(क) श्री मद्भगवत् गीता के अध्याय 7 का सारांश

''इस ज्ञान को जानने के बाद कुछ भी जानना शेष नहीं''

अध्याय 7 के श्लोक 1 से 5 में कहा है कि अर्जुन जो कोई मेरे (ब्रह्म) में पूर्णरूप से आसक्त होकर लगा हुआ है और जिस ज्ञान से मेरा परमभक्त पूर्ण ज्ञान युक्त हो जाएगा। इस ज्ञान से उसे पता लग जाएगा कि कौन कितने पानी में है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी, ब्रह्म, परब्रह्म तथा पूर्णब्रह्म तक की स्थिति से परिचित हो जाएगा तथा पूर्ण सन्त की खोज करके तत् ब्रह्म (पूर्ण परमात्मा) की भक्ति की चेष्टा करेगा। इस ज्ञान को समझने के उपरान्त फिर जानने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहेगा। वह ज्ञान अब कहूँगा। हजारों साधको में कोई एक प्रभु प्राप्ति करने का यत्न करता है जो मेरे से पूर्ण परिचित है कि मैं वास्तव में काल हूँ। फिर वह साधक जन्म-मत्यु से छूटने की भरसक कोशिश करता है। {गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्री देवी भागवत महापुराण जिसके सम्पादक श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, चिमन लाल गोस्वामी, के पष्ठ 123 पर भी यह प्रमाण है। लिखा है कि भगवान शिव ने दुर्गा (प्रकति देवी) की महिमा करते हुए कहा, शिवे! सम्पूर्ण संसार की सष्टि करने में तुम बड़ी चतुर हो, मात! पथ्वी, जल, पवन, आकाश, अग्नि, ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय, बुद्धि, मन और अहंकार ये सब तुम्हीं हो। इस संसार की सष्टि, स्थिति और संहार करने में तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम (ब्रह्मा, विष्णु, शंकर) नियमानुसार कार्य करने में तत्पर रहते हैं।} गीता अध्याय 7 श्लोक 4 से 6 में स्पष्ट किया है कि मेरी आठ प्रकार की माया जो आठ भाग में विभाजित है पाँच तत्व तथा तीन (मन, बुद्धि, अहंकार) ये आठ भाग हैं। यह तो जड़ प्रकति है। सर्व प्राणियों को उत्पन्न करने में सहयोगी हैं, {जैसे मन के कारण प्राणी नाना इच्छाऐं करता है। इच्छा ही जन्म का कारण है। पाँच तत्वों से स्थूल शरीर बनता है तथा मन, बुद्धि, अहंकार के सहयोग से सूक्ष्म शरीर बना है तथा इससे दूसरी चेतन प्रकति (दुर्गा)है। यही दुर्गा (प्रकति) ही अन्य तीन रूप (महालक्ष्मी - महासावित्री - महागौरी) बनाकर काल ब्रह्म के सहयोग से तीनों पुत्रों रजगुण युक्त श्री ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त श्री विष्णु जी, तमगुण युक्त श्री शिव जी को उत्पन्न करती है। फिर भूल - भूलईयाँ (जाल साजी) करके तीन अन्य स्त्री रूप बनाकर तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) से विवाह करके काल के जीव उत्पन्न करती है। जो चेतन प्रकति (शेराँवाली) है। इसके सहयोग से काल सर्व प्राणियों की उत्पत्ति करता है, (प्रमाण गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में।) इस अध्याय 7 श्लोक 6-7 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म कह रहा है कि मैं सारे संसार के जीवों के प्रलय तथा उत्पत्ति का कारण हूँ। (क्योंकि काल को एक लाख मानव शरीर धारी प्राणी प्रतिदिन खाने पड़ते हैं)। सातवें श्लोक में कहा है कि सर्व संसार मेरे (ब्रह्म) में जकड़ा है। कबीर साहेब जी महाराज कहते हैं कि

सुर नर मुनिजन तेतिस करोड़ी। बंधे सब ज्योति निरंजनडोरी।।

''बल तथा बुद्धि काल के वश''

गीता अध्याय 7 श्लोक 8 से 11 तक ब्रह्म कहता है कि मैं जल का गुण रस हूँ, प्रकाश हूँ तथा वेदों में (प्रणव) औंकार (ऊँ) हूँ और सर्व तत्व का गुण भी मैं ही हूँ। मनुष्यों में श्रेष्ठ हूँ तथा मुझे ही

सर्व प्राणियों (स्थूल शरीर व सूक्ष्म शरीर में जीव) का कारण जान। तेजस्वियों का तेज भी मेरे से ही है। बुद्धिमानों की बुद्धि (जब चाहे बुद्धि प्रदान कर देता हूँ जब चाहे बुद्धि भ्रष्ट कर देता हूँ), तपस्वियों का तप भी मैं (काल) ही हूँ। (चूंकि तपस्वियों को राज देता है वहाँ भी आनन्द मन (काल) ही लेता है।) मैं (काल) ही शक्तिशालियों का बल हूँ तथा सब प्राणियों में व्यवस्थित काम (सैक्स) हूँ। (जैसे पहले अर्जुन को बल दे कर योद्धा बना दिया। युद्ध जीता, अर्जुन ने बड़े-2 योद्धा मार डाले फिर बल वापिस ले लिया। जब भगवान श्री कष्ण जी का वध एक शिकारी ने कर दिया तो अर्जुन गोपियों (कष्ण जी की 16000 (सोलह हजार) अवैध स्त्रियों) को लाने द्वारिका गया तो रास्ते में भीलों ने अर्जुन को पीटा तथा गोपियों को लूट ले गए तथा कुछ गोपियों को साथ भी ले गए। उस समय काल ब्रह्म ने अर्जुन को बल रहित कर दिया जिसके कारण अर्जुन से गांडिव धनुष भी नहीं चला और काम वासना (सैक्स) का भी मन ही आनन्द लेता है।)

दूसरा उदाहरण :- जिस समय लंका पति रावण ने सीता जी का अपहरण कर लिया था। उस समय सीता जी को खोज में श्री राम वन-2 भटक रहे थे। उन्हें पता नहीं था कि उनकी पत्नी सीता जी को कौन उठा ले गया है? कहां है? क्योंकि काल ब्रह्म ने उसकी बुद्धि को बंद कर रखा था। उसी समय पार्वती जी (पत्नी शिव जी) सीता जी का रूप धारण करके श्री रामचन्द्र जी की परीक्षा लेने आई तो श्री राम ने पहचान लिया की आप पार्वती हैं। उस समय काल ब्रह्म अर्थात् गीता ज्ञान दाता ने श्री रामचन्द्र(श्री विष्णु) की बुद्धि खोल दी। इसीलिए यहां श्लोक 10,11 में कहा है कि बलवानों का बल तथा बुद्धिमानों की बुद्धि मेरे हाथ में है।

''तीनों गुणों के पुजारी दुष्कर्मी, राक्षसवती के, मनुष्यों में नीच, मूर्ख हैं''
''तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कप्या से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों

को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कष्ण दास प्रकाश मुम्बई, इसमें संस्कत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् महेश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकतिः पुराणा (42)।

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

तीसरा स्कंद पष्ठ 14, अध्याय 5 श्लोक 43 :- एकमेवा द्वितीयं यत् ब्रह्म वेदा वदंति वै। सा किं त्वम् वाप्यसौ वा किं संदेहं विनिवर्तय (43)

अनुवाद :- जो कि वेदों में अद्वितीय केवल एक पूर्ण ब्रह्म कहा है क्या वह आप ही हैं या कोई और है? मेरी इस शंका का निवार्ण करें। ब्रह्मा जी की प्रार्थना पर देवी ने कहा-

देव्युवाच सदैकत्वं न भेदोस्ति सर्वदैव ममास्य च।। योसौ साहमहं योसौ भेदोस्ति मतिविभ्रमात्।।2।। आवयोरंतरं सूक्ष्मं यो वेद मतिमान्हि सः।। विमुक्तः स तू संसारान्मुच्यते नात्र संश्यः।।3।।

अनुवाद - यह है सो मैं हूं, जो मैं हूं सो यह है, मति के विभ्रम होनेसे भेद भासता है।।2।। हम दोनों का जो सूक्ष्म अन्तर है इसको जो जानता है वही मतिमान अर्थात् तत्वदर्शी है, वह संसार से पथक् होकर मुक्त होता है, इसमें संदेह नहीं।। 3।।

सुमरणाद्दर्शनं तुभ्यं दास्येहं विषमे स्थिते।। स्वर्तव्याहं सदा देवाः परमात्मा सनातनः।। 80।। उभयोः सुमरणादेव कार्यसिद्धिर संश्यम् ।।ब्रह्मोवाच।।इत्युक्त्वा विससर्जास्मान्द त्वा शक्तीः सुसंस्कतान् ।।81।। विष्णवेथ महालक्ष्मी महाकालीं शिवाय च।। महासरस्वतीं मह्यं स्थानात्तस्माद्विसर्जिताः।।82।।

अनुवाद - संकट उपस्थित होने पर सुमरण से ही मैं तुमको दर्शन दूंगी, देवताओं! परमात्मा सनातन देवकी शक्तिरूपसे मेरा सदा सुमरण करना।।80।। दोनों के सुमरण से अवश्य कार्यसिद्धि होगी, ब्रह्माजी बोले इस प्रकार संस्कार कर शक्ति देकर हमको विदा किया।।81।। विष्णु के निमित्त महालक्ष्मी, शिव के निमित्त महाकाली, और हमको महासरस्वती देकर विदा किया।।82।।

मम चैव शरीरं वै सूत्रमित्याभिधीयते।। स्थूलं शरीरं वक्ष्यामि ब्रह्मणः परमात्मनः।।83।।

अनुवाद - मेरा शरीर सूत्ररूप कहा जाता है, परमात्मा ब्रह्म का स्थूलशरीर कहाता है।।83।।

।। ब्रह्मा, विष्णु, शिव (त्रिगुण माया) जीव को मुक्त नहीं होने देते।।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 : तीनों गुणों से जो कुछ हो रहा है वह मुझ से ही हुआ जान। जैसे रजगुण (ब्रह्मा) से उत्पत्ति, सतगुण (विष्णु) से संस्कार अनुसार पालन-पोषण स्थिति तथा तमगुण (शिव) से प्रलय (संहार) का कारण काल भगवान ही है। फिर कहा है कि मैं इन में नहीं हूँ। क्योंकि काल बहुत दूर (इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में निज लोक में रहता है) है परंतु मन रूप में मौज काल ही मनाता है तथा रिमोट से सर्व प्राणियों तथा ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी को यन्त्र की तरह चलाता है। पवित्र गीता जी के अ. 7 श्लोक 1 से11 में काल ब्रह्म ने कहा है कि अर्जुन! अब तुझे वह ज्ञान सुनाऊँगा जिसके जानने के बाद और कुछ जानना शेष नहीं रह जाता। गीता बोलने वाला काल ब्रह्म कह रहा है कि मेरे इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों के प्राणियों के लिए मेरी पूजा से ही शास्त्र अनुकूल साधना प्रारम्भ होती है, जो वेदों में वर्णित है। मेरे अन्तर्गत जितने प्राणी हैं उनकी बुद्धि मेरे हाथ में है। मैं केवल इक्कीस ब्रह्मण्डों में ही मालिक हूँ। इसलिए (गीता अ. 7 श्लोक 12 से 15 तक) जो भी तीनों गुणों से (रजगुण-ब्रह्मा से जीवों की उत्पत्ति, सतगुण-विष्णु जी से स्थिति तथा तमगुण-शिव जी से संहार) जो कुछ भी हो रहा है उसका मुख्य कारण मैं (ब्रह्म काल) ही हूँ। (क्योंकि काल को एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के शरीर को मार कर मैल को खाने का शाप लगा है) जो साधक मेरी (ब्रह्म की) साधना न करके त्रिगुणमयी माया (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की साधना करके क्षणिक लाभ प्राप्त करते हैं, जिससे ज्यादा कष्ट उठाते रहते हैं, साथ में संकेत किया है कि इनसे ज्यादा लाभ मैं (ब्रह्म काल) दे सकता हूँ, परन्तु ये मूर्ख साधक तत्वज्ञान के अभाव से इस त्रिगुण माया अर्थात् इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) तक की साधना करते रहते हैं। इनकी बुद्धि इन्हीं तीनों प्रभुओं तक सीमित है। इसलिए ये राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करनेवाले, मूर्ख मुझे (ब्रह्म को)नहीं भजते। यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 4 से 20 व 23,24 तक अध्याय 17 श्लोक 2 से 14 तथा 19 व 20 में भी है। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में है।

विचार करें :- रावण ने भगवान शिव जी को मत्युंजय, अजर-अमर, सर्वेश्वर मान कर भक्ति की, दस बार शीश काट कर समर्पित कर दिया, जिसके बदले में युद्ध के दौरान दस शीश रावण को प्राप्त हुए, परन्तु मुक्ति नहीं हुई, राक्षस कहलाया। यह दोष रावण के गुरुदेव का है जिस नादान (नीम-हकीम) ने वेदों को ठीक से न समझ कर अपनी सोच से तमोगुण युक्त भगवान शिव को ही पूर्ण परमात्मा बताया तथा भोली आत्मा रावण ने झूठे गुरुदेव पर विश्वास करके जीवन व अपने कुल का नाश किया।

एक भस्मागिरी नाम का साधक था, जिसने शिव जी (तमोगुण) को ही इष्ट मान कर शीर्षासन (ऊपर को पैर नीचे को शीश) करके 12 वर्ष तक साधना की, वचन बद्ध करके भस्मकण्डा ले लिया। भगवान शिव जी को ही मारने लगा। उद्देश्य यह था कि भस्मकण्डा प्राप्त करके भगवान शिव जी को मार कर पार्वती जी को पत्नी बनाऊँगा। भगवान श्री शिव जी डर के मारे भाग गए, फिर श्री

विष्णु जी ने उस भस्मासुर को गंडहथ नाच नचा कर उसी भस्मकण्डे से भस्म किया। वह शिव जी (तमोगुण) का साधक राक्षस कहलाया। हरिण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा जी (रजोगुण) की साधना की तथा राक्षस कहलाया।

एक समय आज (सन् 2006) से लगभग 325 वर्ष पूर्व हरिद्वार में हर की पैड़ियों पर (शास्त्र विधि रहित साधना करने वालों के) कुम्भ पर्व की प्रभी का संयोग हुआ। वहाँ पर सर्व (त्रिगुण उपासक) महात्मा जन स्नानार्थ पहुँचे। गिरी, पुरी, नाथ, नागा आदि भगवान श्री शिव जी (तमोगुण) के उपासक तथा वैष्णों भगवान श्री विष्णु जी (सतोगुण) के उपासक हैं। गंगा नदी में प्रभी के समय प्रथम स्नान करने के हठ के कारण नागा तथा वैष्णों साधुओं में घोर युद्ध हो गया। लगभग 25000 (पच्चीस हजार) त्रिगुण उपासक मत्यु को प्राप्त हुए। जो व्यक्ति जरा-सी बात पर कत्ले आम कर देता है वह साधु है या राक्षस स्वयं विचार करें। आम व्यक्ति भी कहीं स्नान कर रहे हों और कोई व्यक्ति आ कर कहे कि मुझे भी कुछ स्थान स्नान के लिए देने की कप्या करें। शिष्टाचार के नाते कहते हैं कि आओ आप भी स्नान कर लो। इधर-उधर हो कर आने वाले को स्थान दे देते हैं। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 15 में कहा है कि जिनका मेरी त्रिगुणमई माया(रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की पूजा के द्वारा ज्ञान हरा जा चुका है, वे केवल मान बड़ाई के भूखे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच अर्थात् आम व्यक्ति से भी पतित स्वभाव वाले, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते। गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक पवित्र गीता जी के बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि मेरी भक्ति (ब्रह्म साधना) भी चार प्रकार के साधक करते हैं। एक तो अर्थार्थी (धन लाभ चाहने वाले) जो वेद मंत्रों से ही जंत्र-मंत्र, हवन आदि करते रहते हैं। दूसरे आर्त्त (संकट निवार्ण के लिए वेदों के मंत्रों का जन्त्र–मंत्र हवन आदि करते रहते हैं) *तीसरे जिज्ञासु जो परमात्मा के ज्ञान को जानने की इच्छा रखने वाले केवल ज्ञान संग्रह करके वक्ता बन जाते हैं तथा दूसरों में ज्ञान श्रेष्ठता के आधार पर उत्तम बन कर ज्ञानवान बनकर अभिमानवश भक्ति हीन हो जाते हैं, चौथे ज्ञानी हैं ये वे साधक जिनको यह ज्ञान हो गया कि मानव शरीर बार-बार नहीं मिलता, प्रभु साधना नहीं बन पाई तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। फिर वेदों को पढ़ा, जिनसे ज्ञान हुआ कि (ब्रह्मा-विष्णु-शिवजी) तीनों गुणों व ब्रह्म (क्षर पुरुष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) से ऊपर पूर्ण ब्रह्म की ही भक्ति करनी चाहिए, अन्य देवताओं की नहीं। उन ज्ञानी उदार आत्माओं को मैं अच्छा लगता हूँ तथा मुझे वे इसलिए अच्छे लगते हैं कि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) से ऊपर उठ कर मेरी (ब्रह्म) साधना तो करने लगे जो अन्य देवताओं से अच्छी है परन्तु वेदों में 'ओ३म्' नाम जो केवल ब्रह्म की साधना का मंत्र है उसी को आप ही विचार - विमर्श करके पूर्ण ब्रह्म का मंत्र जान कर वर्षों तक साधना करते रहे। प्रभु प्राप्ति हुई नहीं। अन्य सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। क्योंकि पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 व 13 में वर्णित तत्वदर्शी संत नहीं मिला, जो पूर्ण ब्रह्म की साधना तीन मंत्र से बताता है, इसलिए ज्ञानी भी ब्रह्म काल साधना करके जन्म-मत्यु के चक्र में ही रह गए। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को भी अनुत्तम कहा है।*

एक ज्ञानी उदारात्मा महर्षि चुणक जी ने वेदों को पढ़ा तथा एक पूर्ण प्रभु की भक्ति का मंत्र ओ३म् जान कर इसी नाम के जाप से वर्षों तक साधना की। एक मानधाता चक्रवर्ती राजा था।

(चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका पूरी पथ्वी पर शासन हो।) *उसने अपने अन्तर्गत राजाओं को युद्ध के लिए ललकारा, एक घोड़े के गले में पत्र बांध कर सारे राज्य में घुमाया। शर्त थी कि जिसे राजा मानधाता की आधीनता स्वीकार नहीं है वह इस घोड़े को पकड़ कर बांध ले तथा युद्ध के लिए तैयार रहे। किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। महर्षि चुणक जी को इस बात का पता चला कि राजा बहुत अभिमानी हो गया है। कहा कि मैं इस राजा के युद्ध को स्वीकार करता हूँ युद्ध शुरू हुआ। मानधाता राजा के पास 72 करोड़ सेना थी। उसके चार भाग करके एक-एक भाग (18 करोड़) सेना से चार बार महर्षि चुणक पर आक्रमण कर दिया। दूसरी ओर महर्षि चुणक जी ने अपनी साधना की कमाई से चार पूतलियाँ (बम्ब) बनाई तथा राजा की चारों भाग सेना का विनाश कर दिया।*

विशेष :- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म की भक्ति से पाप तथा पुण्य दोनों का फल भोगना पड़ता है, पुण्य स्वर्ग में तथा पाप नरक में व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में भिन्न-2 यातनाऐं भोगनी पड़ती हैं। जैसे ज्ञानी आत्मा श्री चुणक जी ने जो ओ३म् नाम के जाप की कमाई की उससे कुछ तो सिद्धि शक्ति (चार पुतलियाँ बनाकर) में समाप्त कर दिया जिससे भोले व्यक्तियों में महर्षि कहलाया। कुछ साधना फल को महास्वर्ग में भोग कर फिर नरक में जाएगा तथा फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर धारण करके कष्ट पर कष्ट सहन करेगा। जो 72 करोड़ प्राणियों (सैनिकों) का संहार वचन से तैयार की गई पुतलियों से किया था, उसका भोग भी भोगना होगा। चाहे कोई हथियार से हत्या करे, चाहे वचन रूपी तलवार से उन दोनों को समान दण्ड प्रभु देता है। जब उस महर्षि चुणक जी का जीव कुत्ते के शरीर में होगा उसके सिर में जख्म होगा, उसमें कीड़े बनकर उन सैनिकों के जीव अपना प्रतिशोध लेंगे। कभी टांग टूटेगी, कभी पिछले पैरों से अर्धंग हो कर केवल अगले पैरों से घिसड़ कर चलेगा तथा गर्मी-सर्दी का कष्ट असहनीय पीड़ा नाना प्रकार से भोगनी ही पड़ेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) गीता अ. 7 श्लोक 18 में स्वयं कह रहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्माऐं हैं तो उदार (नेक)। परन्तु पूर्ण परमात्मा की तीन मंत्र की वास्तविक साधना बताने वाला तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण ये सब मेरी ही (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ मुक्ति (गती) की आस में ही आश्रित रहे अर्थात् मेरी साधना भी अश्रेष्ठ है। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्व भाव से उस पूर्ण परमात्मा की शरण में चला जा। जिसकी कप्या से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा। पवित्र गीता जी को श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके काल ब्रह्म ने बोला, फिर कई वर्षों उपरांत पवित्र गीता जी तथा पवित्र चारों वेदों को महर्षि व्यास जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके काल ब्रह्म (क्षर पुरुष) द्वारा लिपिबद्ध किए हैं। इनमें परमात्मा कैसा है, कैसे उसकी भक्ति करनी है तथा क्या उपलब्धि होगी, ज्ञान तो पूर्ण है परन्तु सांकेतिक है तथा पूजा की विधि केवल ब्रह्म (क्षर पुरुष) अर्थात् ज्योति निरंजन तक की ही है।

पूर्ण ब्रह्म की भक्ति के लिए पवित्र गीता अ. 4 श्लोक 34 में पवित्र गीता बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु स्वयं कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति व प्राप्ति के लिए किसी तत्वज्ञानी सन्त की खोज कर फिर जैसे वह विधि बताएं वैसे कर। पवित्र गीता जी को बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान व भक्ति विधि मैं नहीं जानता। अपनी साधना के बारे में गीता अ. 8 के श्लोक

13 में कहा है कि मेरी भक्ति का तो केवल एक 'ओ३म्' (ओं) अक्षर है जिसका उच्चारण करके अन्तिम स्वांस (त्यजन् देहम्) तक जाप करने से मेरी वाली परमगति को प्राप्त होगा। फिर गीता अ. 7 श्लोक 18 में कहा है कि जिन प्रभु चाहने वाली आत्माओं को तत्वदर्शी सन्त नहीं मिला जो पूर्ण ब्रह्म की साधना जानता हो, इसलिए वे उदारात्माऐं मेरे वाली (अनुत्तमाम्) अति अनुत्तम परमगति में ही आश्रित हैं। (पवित्र गीता जी बोलने वाला प्रभु स्वयं कह रहा है कि मेरी साधना से होने वाली गति अर्थात् मुक्ति भी अति अश्रेष्ठ है।) गीता अ. 15 श्लोक 1 से 4 तक में कहा है कि यह उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वक्ष है, जिसकी मूल (जड़ें) तो पूर्ण ब्रह्म अर्थात् आदि पुरुष परमेश्वर है तथा नीचे तीनों गुण (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) रूपी शाखाऐं हैं। इस सष्टि रचना के पूर्ण ज्ञान को (श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश ब्रह्म कह रहा है कि) मैं नहीं जानता। इसलिए यहाँ विचार काल में अर्थात् इस गीता संवाद में मुझे पूर्ण जानकारी नहीं है। जो संत उपरोक्त संसार रूपी वक्ष अर्थात् सष्टि की रचना के विषय का पूर्ण ज्ञानी होगा, वह मूल, तना, डार तथा टहनियों का भिन्न-भिन्न वर्णन करेगा उसे (वेदवित्) तत्वदर्शी जानना। फिर उस पूर्ण ज्ञानी (तत्वदर्शी) सन्त से उपदेश लेकर परमेश्वर के उस परम पद को भली प्रकार खोजना चाहिए। जहाँ जाने के उपरान्त लौटकर संसार में नहीं आते भावार्थ है कि साधकों की जन्म-मत्यु कभी नहीं होती अर्थात् अनादि मोक्ष प्राप्त होता है तथा मैं (गीता बोलने वाला प्रभु कह रहा है) भी उसी आदि परम पुरुष परमेश्वर की शरण (आधीन) हूँ। इसलिए दढ़ विश्वास के साथ उसी पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) का ही सुमरण करना चाहिए।

पवित्र गीता अ. 4 श्लोक 5 तथा 9 में गीता बोलने वाला प्रभु (ब्रह्म) कह रहा है कि हे अर्जुन! मेरे तथा तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में यही प्रमाण है कहा है कि हे अर्जुन! तू मैं तथा यह सर्व सैनिक पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगें। गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में भी गीता ज्ञान दाता के जन्म का प्रमाण है कहा है कि मेरे जन्म को ऋषि व देवता नहीं जानते क्योंकि वे सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं। इससे सिद्ध है कि गीता ज्ञान दाता का जन्म तो हुआ है। जिसे उसकी सन्तान नहीं जानती। पिता की उत्पति को दादा जी बताते हैं। (कप्या पढ़ें इसी पुस्तक में 'सष्टि रचना') {इससे स्पष्ट है कि ब्रह्म भी नाशवान प्रभु (क्षर पुरुष) है।} *इसलिए गीता अ. 15 श्लोक 16 में तीन प्रभुओं की भिन्न-भिन्न व्याख्या है - दो प्रभु, हैं क्षर पुरुष (नाशवान भगवान अर्थात् ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (अविनाशी प्रभु अर्थात् अक्षर ब्रह्म) हैं, गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी तो इन दोनों से अन्य प्रभु है जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा परमेश्वर कहलाता है। जैसे एक मिट्टी का सफेद प्याला जो बिल्कुल अस्थाई है, ऐसे ब्रह्म(क्षर पुरुष) तथा इसके इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्राणी नाशवान हैं। दूसरा प्याला इस्पात (स्टील) का है। इस्पात को भी जंग लगता है और विनाश हो जाता है। सफेद मिट्टी के प्याले की तुलना में इस्पात का प्याला अधिक स्थाई है परन्तु है नाशवान इसलिए इतना अविनाशी इस्पात (स्टील) का प्याला है ऐसे अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इसके सात संख ब्रह्मण्डों के प्राणी अविनाशी जैसे लगते हुए भी नाशवान हैं अर्थात् वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। तीसरा प्याला स्वर्ण(गोल्ड) का है जो वास्तव में अविनाशी धातु से बना है। जिसका अस्तित्व समाप्त नहीं होता। ऐसे पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) तथा उसके असंख ब्रह्मण्डों में रहने वाले हंसात्माऐं (देवा) वास्तव में अविनाशी हैं तथा वही तीनों लोकों में प्रवेश*

करके सर्व का पालन-पोषण करता है। कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु ने अपने द्वारा रची सष्टि को स्वयं बताया है।

कबीर अक्षर पुरुष एक पेड़ है, ज्योति निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तो उलटे लटके पेड़ का तना है तथा मोटी डार ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष अर्थात् ब्रह्म) है तथा उस डार से आगे तीनों शाखाऐं तीनों गुण (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) हैं। परन्तु मूल (जड़) पूर्ण पुरुष (परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् सतपुरुष) है। पेड़ को जड़ (मूल) से अर्थात् पूर्ण ब्रह्म से आहार प्राप्त होता है। इसलिए कुल का पालनहार वही परम अक्षर ब्रह्म है जिसका प्रमाण गीता अ. 8 के श्लोक 1 व 3 में दिया है। अर्जुन ने पूछा - हे प्रभु! वह तत् ब्रह्म कौन है, जिसके विषय में आपने गीता अ. 7 श्लोक 29 में कहा है कि तत्ब्रह्म (उस पूर्ण परमात्मा) को तथा पूरे अध्यात्म ज्ञान (तत्वज्ञान) को जानने के बाद तो साधक जरा-मरण से छूटने का ही प्रयत्न करता है। पवित्र गीता बोलने वाले (ब्रह्म) ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह परम अक्षर ब्रह्म (पूर्ण ब्रह्म) है। गीता अ. 8 श्लोक 6, में कहा है कि यह विधान है कि अन्त समय में जो साधक जिस भी प्रभु (ब्रह्म, परब्रह्म, पूर्णब्रह्म) का स्मरण करता हुआ प्राण त्याग कर जाता है तो उसी को प्राप्त होता है।

प्रश्न :- आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 के अनुवाद में अर्थ का अनर्थ किया है ''अनुत्तमाम्'' का अर्थ अश्रेष्ठ किया है। जब कि समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है जिस से उत्तम कोई और न हो उस के विषय में समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है। अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने सही अर्थ किया है अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम किया है।

उत्तर :- हे भद्र पुरूष! जैसे उत्तीर्ण का अर्थ पास अर्थात् सफल होता है तथा अनुतीर्ण का अर्थ फेल अर्थात् असफल होता है। यदि कोई कहे कि अनुतीर्ण का अर्थ अति सफल होता है क्या यह बात न्याय संगत है? अर्थात् नहीं फिर भी मैं आप की इस बात को सत्य मान कर आप से प्रार्थना करता हूँ कि ''गीता ज्ञान दाता अपनी साधना के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 में बता रहे हैं। यदि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना व गति को अनुत्तम कह रहे हैं। जिस का भावार्थ आप के समास के अनुसार यह हुआ कि गीता ज्ञान दाता की गति से उत्तम अन्य कोई गति नहीं अर्थात् मोक्ष लाभ नहीं। फिर गीता ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उत्तम पुरूषः तू अन्यः अर्थात् सर्व श्रेष्ठ परमात्मा तो कोई अन्य ही है। उसी की उपासना से परम शान्ति तथा पूर्ण मोक्ष सम्भव है। इस से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ प्रभु अन्य है उसी की गति ही सर्व श्रेष्ठ सिद्ध हुई। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम का अर्थ सर्व श्रेष्ठ अनुचित सिद्ध हुआ।

गीता ज्ञान दाता स्वयं गीता अध्याय 18 श्लोक 62 व अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहे हैं। उसी की कपा से परम शान्ति व शाश्वत स्थान सदा रहने वाला मोक्ष स्थल अर्थात् सत्यलोक प्राप्त होगा। अपने विषय में भी कहा है कि मैं भी उसी की शरण हूँ। उसी पूर्ण परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए तथा कहा है कि उस परमेश्वर के परमपद (सत्यलोक) को प्राप्त करना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर इस संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म मत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

अपने से अन्य परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61-62,64,66 अध्याय 15

श्लोक 4,16-17, अध्याय 13 श्लोक 12 से 17, 22 से 24, 27-28,30-31,34 अध्याय 5 श्लोक 6-10,13 से 21 तथा 24-25-26 अध्याय 6 श्लोक 7,19,20,25,26-27 अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 8 श्लोक 3,8 से 10,17 से 22, अध्याय 7 श्लोक 19 से 29, अध्याय 14 श्लोक 19 आदि-2 श्लोकों में कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम परमात्मा तो अन्य है जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तम पुरूषः तु अन्यः जिसका अर्थ है उत्तम परमात्मा तो अन्य ही है। इसलिए उस उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमात्मा की गति अर्थात् उस से मिलने वाला मोक्ष भी अति उत्तम हुआ। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि उस परमेश्वर अर्थात् पूर्ण परमात्मा की गति गीता ज्ञान दाता वाली गति से उत्तम हुई। इसलिए गीता ज्ञान दाता वाली गति सर्व श्रेष्ठ नहीं है। अर्थात् जिस से श्रेष्ठ कोई न हो। यह विशेषण भी गलत सिद्ध हुआ। क्योंकि जब गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ कोई और परमेश्वर है तो उस की गति भी गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम का अर्थ अश्रेष्ठ ही न्याय संगत है अर्थात् उचित है। आप तथा अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने अर्थ का अनर्थ किया है। जो अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम कहा तथा किया है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 19 : इस मंत्र में काल ब्रह्म कह रहा है कि मेरी साधना भी कई जन्मों के बाद कोई-कोई ही करता है, नहीं तो नीचे के श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा अन्य देवताओं, भूतों व पितरों तक की भक्ति से ऊपर बुद्धि नहीं उठती। परन्तु यह बताने वाला संत बहुत दुर्लभ है कि पूर्ण परमात्मा ही पूजा के योग्य है। वह सर्व सष्टि रचनहार है। वही सर्व का धारण-पोषण करने वाला सर्वशक्तिमान है, वही वास्तव में वासुदेव है। वासुदेव का अर्थ है सर्व का मालिक। जैसे श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी एक ब्रह्मण्ड में एक-एक विभाग के मंत्री(प्रभु) हैं। रजोगुण विभाग के श्री ब्रह्मा जी, सतोगुण विभाग के श्री विष्णु जी तथा तमोगुण विभाग के श्री शिव जी, सर्व के मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं हैं। ब्रह्म इक्कीस ब्रह्मण्ड में मुख्य मंत्री (स्वामी) जानो जो काल के आधीन हैं, सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है। ऐसे - ऐसे सात संख ब्रह्मण्ड परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के हैं, केवल सात संख ब्रह्मण्ड का मालिक, सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है तथा असंख ब्रह्मण्ड पूर्णब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म/सतपुरुष) के हैं। वास्तव में सर्व का मालिक अर्थात् वासुदेव पूर्णब्रह्म है। जैसे उलटे लटके वक्ष की जड़ (पूर्णब्रह्म) है जिससे सर्व तना (अक्षर पुरुष) डार (काल-ब्रह्म) शाखा (तीनों रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) को भोजन मिलता है। इसलिए सर्व का पालन कर्त्ता भी पूर्ण ब्रह्म ही हुआ। यह व्याख्या करने वाला संत तो सुदुर्लभ है। उसके मिलने से ही पूर्ण मोक्ष होगा, अन्यथा काल जाल में ही प्राणी फंसे रहेंगे।

।। अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी) की पूजा बुद्धिहीन ही करते हैं।।

(गीता में प्रमाण)

गीता अध्याय 7 के श्लोक 20 में कहा है कि जिसका सम्बन्ध गीता अध्याय 7 के श्लोक 15 से लगातार है - श्लोक 15 में कहा है कि त्रिगुण माया (जो रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी,

ब्रह्मा
शिव
विष्णु
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)
कबीर-अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
तना
(अक्षर पुरुष परब्रह्म)
कबीर साहेब
(मूल जड़)
शास्त्रानुकूल साधना
अर्थात सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब
मूल जड़
कबीर - अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
तना
(अक्षर पुरुष परब्रह्म)
डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)
विष्णु (शाखा)
ब्रह्मा
शिव
शास्त्रविरुद्ध साधना
अर्थात उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा
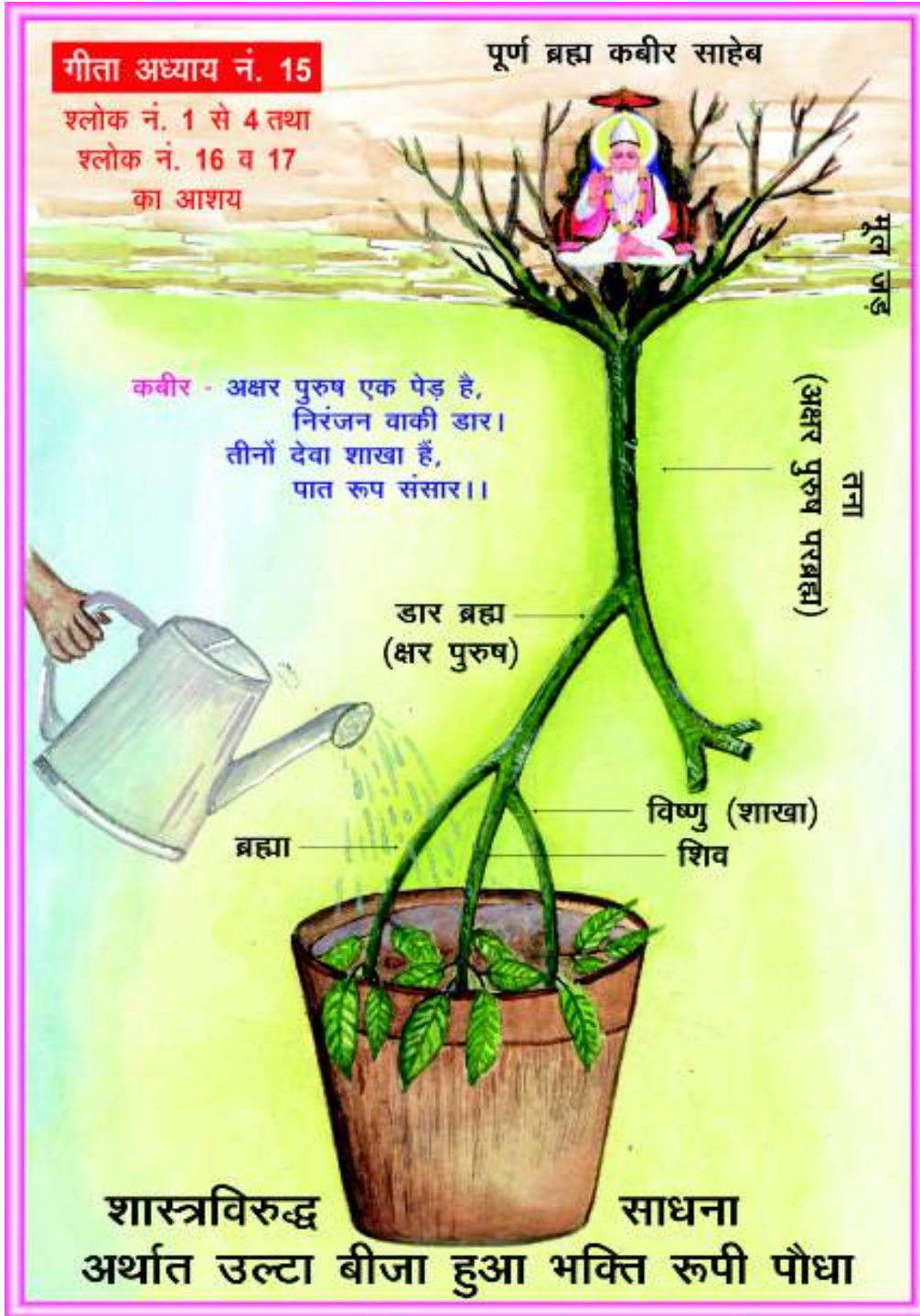
तमगुण शिव जी की पूजा तक सीमित हैं तथा इन्हीं से प्राप्त क्षणिक सुख) के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे असुर स्वभाव को धारण किए हुए नीच व्यक्ति दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझे नहीं भजते। अध्याय 7 के श्लोक 20 में उन-उन भोगों की कामना के कारण जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे अपने स्वभाव वश प्रेरित हो कर अज्ञान अंधकार वाले नियम के आश्रित अन्य देवताओं को पूजते हैं। अध्याय 7 के श्लोक 21 में कहा है कि जो-जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है उस-उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ।

गीता अध्याय 7 के श्लोक 22 में कहा है कि वह जिस श्रद्धा से युक्त हो कर जिस देवता का पूजन करता है क्योंकि उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किए हुए कुछ इच्छित भोगों को प्राप्त करते हैं। जैसे मुख्य मन्त्री कहे कि नीचे के अधिकारी मेरे ही नौकर हैं। मैंनें उनको कुछ अधिकार दे रखे हैं जो उनके (अधिकारियों के) ही आश्रित हैं वह लाभ भी मेरे द्वारा ही दिया जाता है, परंतु पूर्ण लाभ नहीं है। अध्याय 7 के श्लोक 23 में वर्णन है कि परंतु उन मंद बुद्धि वालों का वह फल नाशवान होता है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। (मदभक्त) जो शास्त्रों के अनुसार मेरी भक्ति करने वाले भक्त भी मुझको प्राप्त होते हैं अर्थात् काल के जाल से कोई बाहर नहीं है।

विशेष : अध्याय 7 के श्लोक 20 से 23 तक का सम्बन्ध इसी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 से लगातार है। इन 20 से 23 में कहा है कि वे जो भी साधना किसी भी पित्र, भूत, देवी-देवता आदि की पूजा स्वभाव वश करते हैं। मैं (ब्रह्म काल) ही उन मन्द बुद्धि लोगों (भक्तों) को उसी देवता के प्रति आसक्त करता हूँ। वे नादान साधक देवताओं से जो लाभ पाते हैं मैंने (काल ने) ही देवताओं को कुछ शक्ति दे रखी है। उसी के आधार पर उनके (देवताओं के) पूजारी देवताओं को प्राप्त हो जाएंगे। परंतु उन बुद्धिहीन साधकों की वह पूजा शास्त्र विधि अनुसार न होने के कारण चौरासी लाख योनियों में शीघ्र ले जाने वाली है तथा जो मुझे (काल को) भजते हैं वे तप्त शिला पर फिर मेरे महास्वर्ग (ब्रह्म लोक) में चले जाते हैं और उसके बाद जन्म-मरण चक्र में गिर जाते हैं परन्तु देवी-देवताओं व ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा माता मसानी से भगवान ब्रह्म की साधना अधिक लाभदायक है। भले ही महास्वर्ग में गए साधक का स्वर्ग समय एक कल्प होता है, परन्तु स्वर्ग तथा महास्वर्ग में शुभ कर्मों का मोक्ष का सुख भोगकर फिर नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर में भी कष्ट बना रहेगा, पूर्ण मोक्ष नहीं अर्थात् काल जाल से मुक्ति नहीं। श्री विष्णु पुराण में पष्ठ 51, प्रथम अंश-अध्याय 12 श्लोक 93 में लिखा है कि ध्रुव का मोक्ष समय एक कल्प है।

।। ज्योति निरंजन (काल) कभी वास्तविक शरीर में सर्व के समक्ष नहीं आता।।

अध्याय 7 के श्लोक 24 में भगवान ब्रह्म कह रहा है कि मूर्ख मेरे अति गन्दे अटल भाव (कालरूप) को नहीं जानते। मुझ (अव्यक्त) अदश्यमान अर्थात् योग माया से छिपे हुए को (व्यक्त) श्री कष्ण रूप में प्रकट हुआ मानते हैं अर्थात् मैं श्री कष्ण नहीं हूँ। अति गन्दे अविनाशी भाव को नहीं जानते का तात्पर्य है कि मेरा काल भाव जीवों को खाना, गधे, कुत्ते, सूअर आदि बनाना, नाना प्रकार से कष्ट पर कष्ट देना तथा पुण्यों के आधार पर स्वर्ग देना तथा काल ने प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में सर्व के समक्ष प्रकट नहीं होऊँगा। यह मेरा कभी समाप्त न होने वाला (अविनाशी) भाव है। मैं आकार में श्री कष्ण जी, श्री रामचन्द्र जी के रूप में कभी नहीं

आता। यह मेरा घटिया अटल अविनाशी नियम है। यह तो माया के द्वारा बने शरीर के भगवान आते हैं जो मेरे द्वारा ही भेजे जाते हैं और मैं (काल) उनमें प्रवेश करके अपना सर्व कार्य करता रहता हूँ।

गरीब, अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविंद। कर्त्ता हो–हो कर अवतरे, बहुर पड़े जम फन्द।।

अध्याय 7 के श्लोक 25 में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने कहा है कि मैं अपनी (योगमाया) सिद्धि शक्ति से छुपा रहता हूँ तथा अपने इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में सर्वोपरि निज स्थान पर रहता हूँ। इसलिए दश्यमान नहीं हूँ। इसलिए कहा है कि मैं कभी भी जन्म नहीं लेता अर्थात् स्थूल शरीर में श्री कष्ण जी की तरह माता से जन्म नहीं लेता। इस अविनाशी (अटल) नियम को यह मूर्ख संसार नहीं जानता अर्थात् यह अनजान प्राणी समुदाय मुझे कष्ण मान रहा है, मैं कष्ण नहीं हूँ तथा मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। इससे स्पष्ट है कि काल ही श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोल रहा है। नहीं तो कष्ण जी तो आकार में अर्जुन के समक्ष ही थे। श्री कष्ण जी का यह कहना उचित नहीं होता कि मैं आकार में नहीं आता, श्री कष्ण आदि की तरह दुर्गा (प्रकति) के गर्भ से जन्म नहीं लेता। क्योंकि दुर्गा तो ब्रह्म की पत्नी है। काल अपनी शब्द शक्ति से नाना रूप (महाब्रह्मा, महाविष्णु तथा महाशिव आदि) बना लेता है। फिर निर्धारित समय पर उस शरीर को त्याग देता है। इस प्रकार से जन्म व मत्यु होती है। इसीलिए पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में कहा है कि मेरे तथा तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। ऐसा नहीं है कि मैं तथा तू तथा ये सैनिक पहले नहीं थे या आगे नहीं रहेंगे। गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि मेरी उत्पत्ति (जन्म) को महर्षि तथा देवता भी नहीं जानते क्योंकि ये सर्व मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

गीता अध्याय 4 श्लोक 9 में कहा है कि मेरे जन्म और कर्म अलौकिक हैं। उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि ब्रह्म की भी उत्पत्ति हुई है। उसको तो पूर्ण परमात्मा ही बताता है क्योंकि पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) कविर्देव की शब्द शक्ति से अण्डे से काल ब्रह्म की उत्पत्ति हुई है, यही प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी है। जैसे पिता की उत्पत्ति बच्चे नहीं जानते, परन्तु दादा जी (पिता का पिता) ही बता सकता है। यहाँ यह संकेत है कि ब्रह्म कह रहा है कि मेरी उत्पत्ति भी है, परन्तु मेरे से उत्पन्न देवता (ब्रह्मा-विष्णु - शिव) भी नहीं जानते।

विशेष :- व्यक्त का भावार्थ है कि प्रत्यक्ष दिखाई देना अर्थात् साक्षात्कार होना। अव्यक्त का भावार्थ होता है कि कोई वस्तु है परन्तु अदश्य है। जैसे आकाश में बादल छा जाते हैं तो सूर्य अव्यक्त (अदश) हो जाता है। परन्तु बादलों के पार विद्यमान है। ऐसे सर्व प्रभु मानव सदश शरीर में विद्यमान हैं। परन्तु हमारी दष्टि से परे हैं। इसलिए अव्यक्त कहे जाते हैं। (1) एक अव्यक्त तो गीता ज्ञान दाता है जो गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में प्रमाण है यह ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष अव्यक्त है। (2) दूसरा अव्यक्त गीता अध्याय 8 श्लोक 18 में कहा है कि सर्व संसार दिन में अव्यक्त से उत्पन्न होता है यह परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष अव्यक्त है। (3) तीसरा अव्यक्त गीता अध्याय 8 श्लोक 20-21 में कहा है कि उस (गीता अ. 8 श्लोक 18 में वर्णित) अव्यक्त से दूसरा अव्यक्त सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है। इस प्रकार तीनों परमात्मा साकार हैं परन्तु जीव की दष्टि से परे हैं इसलिए अव्यक्त कहलाते हैं। अध्याय 7 के श्लोक 26 से 28 तक इन श्लोकों में गीता ज्ञान दाता भगवान कह रहा है कि मैं (ब्रह्म) भूत-भविष्य तथा

वर्तमान में सर्व प्राणियों (जो मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में मेरे आधीन हैं)की स्थिति से परिचित हूँ कि किसका जन्म किस योनी में होगा। परंतु मुझे कोई नहीं जान सकता। सब संसार राग, द्वेष, मोह से दुःखी है तथा अज्ञानी हो चुका है। जिनके राग-द्वेष व मोह दूर हो गये वे पाप रहित प्राणी ही मेरा भजन कर सकते हैं अन्यथा नहीं।

विचार करें : राग द्वेष व मोह और पाप रहित प्राणी ही प्रभु चिन्तन कर सकते हैं, अन्य नहीं। पाप रहित का भाव है कि जिनको तत्व ज्ञान हो गया कि चोरी, जारी, धूम्रपान, मांस-मदिरा सेवन करना, जीव हिंसा करना महापाप है फिर वह साधक उन पाप कर्मों को त्याग कर भगवन् चिंतन करता है। जो साधना पवित्र वेदों व पवित्र गीता में वर्णित है उससे साधक तीन लोक व इक्कीस ब्रह्मण्ड (काल लोक) में विकारों (काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार) से रहित हो ही नहीं सकता। फिर आम भक्त कैसे पाप या कर्म मुक्त हो सकता है? राग-द्वेष, मोह आदि से होने वाले पापों से भगवान विष्णु भी नहीं बचे, न ब्रह्मा जी न शिव जी। फिर आम व्यक्ति कैसे आशा रख सकता है? यहाँ मुझ दास (रामपाल दास) अर्थात् अनुवाद कर्त्ता के कहने का भाव यह है कि वेदों व गीता में वर्णित भक्ति विधि से साधक पाप मुक्त नहीं होता अपितु ''जैसा कर्म वैसा फल'' वाला सिद्धान्त ही प्राप्त होता है। जैसे भगवान विष्णु अवतार श्री रामचन्द्र जी ने बाली को धोखे से मारा था। उस पाप कर्म का प्रतिशोध भी श्री कष्ण रूप में देना पड़ा। पापनाशक परमात्मा पूर्ण ब्रह्म है वह विधि पांचवें वेद में अर्थात् स्वसम वेद में लिखी है। इसलिए तत्वदर्शी सन्त ही उस पाप नाशक साधना को बताता है जिससे साधक पाप रहित होकर पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है।

।। काल के जाल से कौन छूटते हैं ?।।

अध्याय 7 के श्लोक 29 का अर्थ है कि जो मुझे (कि मैं काल हूँ तथा मेरी पूजा भी अति अश्रेष्ठ है ऐसे) तत्वज्ञान से जान लेते हैं तथा सम्पूर्ण अध्यात्म व सम्पूर्ण कर्म को तथा तत् ब्रह्म अर्थात् उस पूर्ण परमात्मा को जानते हैं वे मेरे द्वारा बताए इस ज्ञान के आश्रित हो कर दुःखदाई बुढ़ापा तथा मत्यु से छूटने की कोशिश करते हैं भावार्थ है कि वे जन्म-मरण से पूर्ण रूप से छुटकारा चाहते हैं अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करने का ही प्रयत्न करते हैं। अध्याय 7 के श्लोक 30 में कहा है कि जो साधक मुझे तथा तीनों तापों (दुःखों को जो काल द्वारा जीव को पीड़ा दी जाती है) सहित जानता है और (अधियज्ञ) यज्ञों में प्रतिष्ठित पूर्णब्रह्म को जान कर हम दोनों के भेद को समझ कर वे फिर मुझे तत्व से जान कर कि मैं काल हूँ तथा पूर्ण परमात्मा ही पूर्ण मोक्ष दायक है फिर अंत समय में पूर्ण परमात्मा के भजन में मन को एकाग्र रखता है। इसलिए काल के दुःखों के डर के कारण काल जाल से निकल जाता है। {जैसे हम सतनाम जाप करते हैं उसमें काल (ब्रह्म) का जाप ऊँ भी है। जिसका जाप हम इस भाव से करते हैं कि हे सतपुरुष इस काल (ब्रह्म) के दुःख से बचाइऐ, इसका ऋण मुक्त हो जाए ताकि हमारा सदा के लिए इस काल (ज्योति निरंजन) से छुटकारा हो जाए तथा पूर्ण परमात्मा के भजन व पाने को मन लगाए रहते हैं। यदि काल (ज्योति निरंजन) के दुःख की भूल पड़ जाए तो जीव फिर भजन में आलस कर सकता है। इसलिए काल (ज्योति निरंजन) को तथा उस द्वारा जीवों को दी जा रही पीड़ा (कष्ट) व (अनुत्तमाम् गतिम) अति अश्रेष्ठ मुक्ति जो अध्याय 7 के श्लोक 18 में कही है को जान कर जीव उस परमात्मा के आश्रित हो कर उसी पूर्ण ब्रह्म की भक्ति में

चितको दढ़ भाव से (एकाग्र चित्त से) अनन्य मन से रखता है अर्थात् विचलित नहीं होता।}

पूर्ण ब्रह्म परमात्मा जो यज्ञों में प्रतिष्ठित (अधियज्ञ) है। अध्याय 3 के श्लोक 14,15 में पूर्ण विवरण है।

शंका - प्रभु प्रेमी पाठकों के मन में शंका उत्पन्न होगी कि जब ब्रह्म (काल) अपनी साधना को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कह रहे हैं (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) तो फिर अपनी साधना करने को क्यों कह रहे हैं (गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15) तथा तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) की भक्ति करने वालों को हेय किसलिए कहा है?

शंका समाधान :- शास्त्र अनुकूल भक्ति पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी में वर्णित विधि (ओ३म् नाम का जाप उच्चारण करके स्मरण करने व धर्म, ध्यान, प्रणाम, हवन, ज्ञान ये पाँचों यज्ञ करने) से प्रारम्भ होती है। उससे ब्रह्मलोक में बने महास्वर्ग में एक कल्प या महाकल्प तक मोक्ष सुख प्राप्त होता है, परन्तु पाप कर्मों के दण्ड आधार से नरक तथा फिर चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट भी उठाना ही पड़ेगा। एक मानव शरीर फिर प्राप्त होगा। वे पुण्यात्माऐं जब मानव शरीर में होंगी और उन्हें कोई तत्वदर्शी संत पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) का ज्ञान बताएगा तो वे शीघ्र ही उस साधना पर लग जाती हैं, क्योंकि उनमें पिछले भक्ति संस्कार विद्यमान होते हैं तथा सत्य साधना करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। अन्य देवताओं की पूजा से मोक्ष समय बहुत कम तथा नरक समय अधिक होता है तथा चौरासी लाख योनियों का कष्ट भी अधिक समय तक होता है। जैसे एक प्रकार के प्राणी (कुत्ते) के जन्म ही लगातार 20 हो जाऐं, फिर दूसरे प्राणी के रूप में जन्म भी अधिक होने के कारण अधिक कष्ट उठाते हैं। परन्तु मर्यादावत् ब्रह्म (काल) साधना करने वालों के प्रत्येक योनी के संस्कार वश कम जन्म होते हैं तथा चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों का कर्म चक्र शीघ्र-शीघ्र भोगा जाता है। जैसे कुत्ते की मत्यु 10 वर्ष में होती है, एक माता के गर्भ से बाहर आते ही मर जाता है। जैसे ऋषि सुखदेव जी का जीव मादा तोते के अण्डे में ही था, अण्डा खराब हो कर छूटकारा हो गया,नहीं तो तोतेकी आयु मनुष्य से भी अधिक होती है। इस प्रकार कष्टमय शरीरों से शीघ्र छुटकारा हो जाता है।

अन्य देवताओं के साधकों को जब कभी मानव शरीर प्राप्त होता है तो वे फिर अपने पिछले संस्कार से बने स्वभाववश उन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव आदि अन्य देवताओं) की तथा भूत-भैरवों व पितरों की ही पूजा करते हैं, कहने से भी नहीं मानते। प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 4 से 20 तक तथा पवित्र गीता अध्याय 17 श्लोक 1 से 10 तक। जो साधक शास्त्र अनुकूल साधना पिछले जन्म में करते थे उनमें दो प्रकार के साधक बताए गये हैं, (1) एक तो ब्रह्म साधक जो ओ३म् नाम मंत्र जाप व पाँचों यज्ञ किया करते थे, वे तो महास्वर्ग, नरक व अन्य प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाते रहते हैं। उनके मानव जन्म भी लगातार एक से अधिक भी हो सकते हैं। यदि उन सर्व मानव जन्मों में भी पूर्ण (तत्वदर्शी) संत नहीं मिला फिर उपरोक्त सर्व स्थितियों से गुजरना पड़ता है। परन्तु सत्य साधना पर शीघ्र लग जाते हैं। (2) दूसरी प्रकार के शास्त्र विधि अनुसार साधना करने वाले वे साधक हैं जो कभी किसी युग में पूर्ण परमात्मा की साधना पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) से प्राप्त करके किया करते थे। परन्तु मुक्त नहीं हो पाए। वे साधक एक ब्रह्मण्ड में बने सतगुरु कबीर लोक में चले जाते हैं। जहाँ पर उन साधकों की अपनी भक्ति कमाई

समाप्त नहीं होती, क्योंकि परमपिता का भण्डारा मुफ्त (निःशुल्क) चलता रहता है। वहाँ अन्य कोई नहीं जा सकता। फिर उन साधकों को पूर्ण परमात्मा पुनर् मानव जन्म उस समय प्रदान करता है जब कोई (तत्वदर्शी) संत पूर्ण साधना बताने वाला आने वाला होता है। उस समय वे साधक उस सत्य साधना बताने वाले पूर्ण संत की वाणी पर (प्रवचनों पर) शीघ्र विश्वास कर लेते हैं तथा भक्ति प्रारम्भ कर देते हैं। उन्हीं में से कुछ आत्माऐं नकली सतलोक व नकली साधना का मिलता-जुलता ज्ञान बताने वाले नकली संतों को पूर्ण संत मान कर उसी पर आधारित हो जाती हैं तथा फिर कुऐं के मेंढक बन कर उसी ज्ञान को सुनते रहते हैं। सत्यज्ञान को सुन कर आँखों देखकर भी नहीं मानते दूसरी प्रकार के शास्त्र अनुकूल साधक जो किसी युग में सतनाम जाप वाली साधना किए हुए हैं वे पिछले शास्त्र अनुकूल साधक भी काल जाल में ही रह जाते हैं। यदि वे तत्वज्ञान को ध्यान से सुन व पढ़ लेते हैं तो तुरन्त पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) की शरण में आ जाते हैं। जो पूर्ण संत की शरण में नहीं आते वे पिछले सत्यभक्ति साधना की कमाई अनुसार अनेकों मानव शरीर प्राप्त करते रहते हैं तथा पूर्ण संत के अभाव से फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों व नरक-स्वर्ग के चक्र में फंस जाते हैं।

''गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा का प्रमाण''

गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा हे भगवन् ! आप ने अध्याय 7 श्लोक 29 में जिस तत् ब्रह्म अर्थात् किसी अन्य परमात्मा के विषय में कहा है वह तत् ब्रह्म क्या है ? गीता ज्ञान दाता ने इसका उत्तर अध्याय 8 श्लोक 3 में दिया है कहा है कि वह परम अक्षर ब्रह्म है। उसी परम अक्षर ब्रह्म के विषय में अध्याय 8 के ही श्लोक 8 से 10 तथा 17 से 22 में कहा है तथा श्री गीता जी के अन्य अध्यायों में भी अनेक बार कहा है। जैसे गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61-62,64,66 अध्याय 15 श्लोक 4,16-17, अध्याय 13 श्लोक 12 से 17, 22 से 24, 27-28,30-31,34 अध्याय 5 श्लोक 6-10,13 से 21 तथा 24-25-26 अध्याय 6 श्लोक 7,19,20,25,26-27 अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 8 श्लोक 3,8 से 10,17 से 22, अध्याय 7 श्लोक 19 तथा 29, अध्याय 14 श्लोक 19 आदि-2 श्लोकों में कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम परमात्मा तो अन्य है जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तम पुरूषः तु अन्यः जिसका अर्थ है उत्तम परमात्मा तो अन्य ही है। इसलिए उस उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमात्मा की गति अर्थात् उस से मिलने वाला मोक्ष भी अति उत्तम हुआ।

❑❑❑

(ख) श्री मद्‌भगवत् गीता के अध्याय 18 का सारांश

अध्याय 18 के श्लोक 1 से 3 तक में अर्जुन ने त्याग व सन्यास के बारे में पथक- 2 पूछा। उसके उत्तर में अध्याय नं 18 के श्लोक 4 में भगवान पहले त्याग के बारे में कह रहे हैं - त्याग तीन प्रकार का होता है। दान-यज्ञ-तप रूपी कर्म तो करते रहना चाहिए। तप का तात्पर्य है जैसे संयम रखना, राजा हरिश्चन्द्र की तरह सत्यवादी होना। इनका त्याग नहीं करना चाहिए। यज्ञ व दान फलों की इच्छा रहित करना चाहिए।

।। नम्रता के बिना भक्ति व्यर्थ।।

अध्याय 18 के श्लोक 17 का भावार्थ है कि -

गरीब, मैं मैं करै सो मारिये, तू तुं करै सो छूट वे। इस मार में होशियार, गधा बने कै ऊँट वे।। हूं हूं करै सो गधा होई, मैं मैं करै बोक वे। बंदा बिसारे बंदगी, तो श्वान है सब लोक वे।।

रावण ने भक्ति के साथ-2 अभिमान भी किया जिसके परिणाम स्वरूप जिस लंका को वह चाहता था उसको भी नहीं रख सका तथा सपरिवार नष्ट हुआ। जबकि रावण का ही सोदर (सगा) भाई विभिषण जो पूर्ण परमात्मा सतपुरुष की भक्ति सतगुरु मुनिन्द्र साहिब से नाम उपदेश ले कर करता था और अपने गुरुदेव मुनिन्द्र (यही कबीर साहेब त्रेतायुग में मुनिन्द्र नाम से आए थे) जी के आदेशानुसार आधीनी भाव से (अहंकार रहित) परमेश्वर की साधना किया करता था। उसको भगवान रामचन्द्र जी ने लंका का राजा भी बना दिया। यह आधीनी भाव पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की विधिवत (मतानुसार) साधना का परिणाम हुआ। इसलिए इस श्लोक में यही प्रमाणित करना चाहा है कि जो लोग अभिमानी होते हैं उनका ईश्वर साथ नहीं देता और जो आधीन (विनम्र) होते हैं तथा शास्त्रानुकूल साधना करते हैं उनको परमात्मा यहाँ की सर्व सुविधाओं के साथ-साथ पूर्ण मुक्ति भी देता है।

दासभाव बिन लंका खोई, राज रसातल कुलह बिगोई।।
दास भाव बिन हार्‍या जन्मा, आशा तष्णा रहि गई धनमां।।
सर्व सोने की लंका लोई, दास भाव बिन सर्वस खोई।।
गरीब, दास भाव बिन बहु गये, रावणसे रणधीर।
लंक बिलंका लुटि गई, जम कै परै जंजीर।।
दासातन हंसा कूं खेऊं, राज पाट बैकुण्ठा देऊं।
दास दर्श परमानंद होई, बिन दासातन मिलै न कोई।।
दासातन कीन्हा भगवाना, भगुलता का उर में ध्याना।
विभीषण का भाग्य बडेरा, दासातन आय तिस नेरा।।
दासातन आया बिसवे बीसा, जाकौं लंक दई बक्षीसा।
ऐसा दासातन है भाई, लंक बकसतैं वार न लाई।।

।।पूर्ण गुरु से नाम लेने के बाद अनजाने में हुए पापों का दोष नहीं लगता।।

अध्याय 18 का श्लोक 5 से 28 तक का भाव है कि इस संसार में सर्व कर्म नहीं त्यागे जा

सकते। जो घणित कर्म (चोरी, जारी, शराब, सुल्फा, मांस आदि का सेवन करना) निंदा, झूठ, छुआ-छात, कटु वचन, त्यागने योग्य है तथा बच्चों का पालन-पोषण में जो कर्म (खेती करना उसमें भी जीव हिंसा, खाना पकाना - उसमें सुक्ष्म जीव जलना, पैदल चलना - उसमें भी जीव मरते हैं आदि) होते हैं वे त्यागे नहीं जा सकते। उनका समाधान है गुरु बनाए। फिर -

इच्छा कर मारै नहीं, बिन इच्छा मर जाय। कहै कबीर तास का, पाप नहीं लगाय।।

जैसे किसी ड्राईवर से दुर्घटना (एक्सीडैंट) हो जाती है। यदि उसका लाईसैंस बना हो तो वह दोष मुक्त है। क्योंकि वह पूरा चालक है। जानबूझ कर तो दुर्घटना हुई नहीं। अन्य कोई कारण हो सकता है जिसमें वह दोषी नहीं। यदि कोई व्यक्ति बिना चालक लाईसैंस बनवाए गाड़ी चला रहा है तथा दुर्घटना हो जाए तो वह पूरा दोषी है। इसलिए जिसने नाम उपदेश ले रखा है वह घणित कर्म नहीं करेगा। यदि अनजाने में जीव हिंसा हो जाती है तो वह दोषी नहीं है। यज्ञ दान आदि शुभ कर्म बिना फल की इच्छा से किए जाऐं तो वे साधक के कुछ पापों का विनाश करते हैं। इसलिए पाँचों यज्ञ विधिवत् अवश्य करने चाहिएं। ये त्यागने योग्य नहीं हैं। कोई अज्ञानी यह कहे कि मैंने दान किया, मैंने पाठ करवा दिया। उसे भक्ति भाव का व्यक्ति मत जान। वह मलिन बुद्धि वाला है। जब प्राणी पूर्ण संत के माध्यम से परमेश्वर (कविर्देव) की शरण में आ जाता है तब वही पूर्ण प्रभु पाप कर्म से होने वाली हानि रोक देता है। एक भक्त ने मुझ दास संत रामपाल दास से उपदेश लिया। कहा कि आप से उपदेश लेने से पूर्व प्रतिवर्ष 25000 (पच्चीस हजार) का खर्चा तो केवल दवाईयों आदि पर हो जाता था, अन्य हानि भी बहुत होती थी। अब तीन वर्ष उपदेश लिए हो चुके हैं। सर्व को बताता है कि वर्ष भर में केवल 500 रूपये की दवाईयों का खर्चा होता है तथा अन्य हानि भी नाम मात्र ही है। अब वह पुण्यात्मा पाठ करवाता है। जिससे पाँचों यज्ञ (धर्म, ध्यान, हवन, प्रणाम, व ज्ञान) हो जाती हैं। वह वर्ष में दो बार तथा तीन बार भी पाठ करवा देता है। एक दिन दूसरे भक्त साथी ने कहा कि आप तो बहुत दान कर देते हो। उस भक्त ने कहा मैं दान करने योग्य कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने बना दिया। मैं दान नहीं कर सकता था। मेरा सारा धन, रोग तथा अन्य पशु हानि में जाता था। जीव कुछ नहीं कर सकता। परमेश्वर ही करवा सकता है। अब यह पैसा तो पुण्य कर्म में लग रहा है। पहले व्यर्थ जा रहा था। मेरे मन में कभी भी नहीं आता कि मैं दान कर रहा हूँ, यह तो सर्व कपा बन्दी छोड़ भगवान कविरंघारि (पापविनाशक कविर् परमेश्वर) की है। मुझे तो केवल निमित बनाया है। इसी के प्रमाण में आदरणीय दादू साहेब जी कहते हैं :-

करे करावै साईयां, मन में लहर उठा। दादू सिर धर जीव के, आप बगल हो जा।।

इसी प्रकर इस पवित्र गीता जी के ज्ञान को समझा जाएगा।

श्लोक 4 से 12 में कहा है कि शुभ कर्मों (यज्ञ, दान तथा तप) को नहीं त्यागना चाहिए। यहाँ हठ योग द्वारा किये जाने वाले तप के बारे में नहीं कहा है। जिस तप के विषय में गीता अध्याय 17 श्लोक 14 से 17 में कहा है उस तप के लिए कहा है जिस में लिखा है कि देव स्वरूप विद्वानों और तत्वदर्शी सन्त जनों की सेवा में पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा में जो संघर्ष व प्रयत्न किया जाता है। वह शरीर सम्बन्धी तप कहा जाता है। सत्य भाषण, शास्त्रों का पठन-पाठन वाणी सम्बन्धी तप है आदि-2।

।। गुण व स्वभाव वश कर्मों का विवरण।।

श्लोक 29 से 40 में कर्मों का प्रकार बताया है जो स्वाभाविक परहित में किए कर्म सात्विक होते हैं। जैसे कहीं बाढ आ जाए, उसके लिए यत्न सात्विक कर्म, यदि किसी की दुर्घटना हो जाए उसमें सहयोग सात्विक तथा लाभदायक है, तथा राजसी कर्मों का तात्पर्य है जैसे आपके द्वार पर कुत्ता आया। आपने पहले तो उसे रोटी का टुकड़ा डाला फिर उसे लट्ठ दे मारा। यह राजसी कर्म है। फिर तामसी कर्म का अभिप्राय है कि किसी के द्वार पर कुत्ता आया, रोटी भी नहीं डाली, डंडा दे मारा, किसी का पशु भैंस या ऊँट या गाय या बैल शरारत करता है। उसको बंधे-2 दे लट्ठ-पै-लट्ठ अर्थात् बेरहमी से पीटना, बच्चों को थोड़े दोष पर अधिक सजा देना, किसी का पैसा लेकर नहीं दिया। मांगने आया तो गालियाँ व दुर्व्यवहार किया। गर्ज पड़े तो मद भाषी, काम बन जाए तो आँखे दिखाना। यह तामस कर्म है जो ज्यादा हानिकारक है आदि-2 । अध्याय 18 के श्लोक 29 से 40 तक में भगवान ने गुणों के आधार पर मनुष्यों की वत्तियों के स्वभाव का वर्णन किया है कि सतोगुण प्रधान व्यक्ति का स्वाभाविक कर्म कैसा है? रजोगुण प्रधान का कैसा कर्म तथा तमोगुण प्रधान का कैसा कर्म है?

यदि यह ज्ञान हो भी गया तो भी मुक्ति नहीं तथा यह भी भगवान स्पष्ट कह रहे हैं कि सर्व प्राणी स्वभाव वश कर्म कर रहे हैं। उन्हें समझाना व्यर्थ है। इसलिए जो बुद्धि जीवी प्राणी भगवत प्राप्ति चाहते हैं उनके लिए काल भगवान अगले श्लोकों में विवरण दे रहा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 41से 44 में चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य तथा शुद्र) के स्वभाविक कर्मों का उल्लेख है। श्लोक 45 में भगवान कह रहा है कि अपने-अपने स्वभाविक कर्मों में लगन से लगे हुए मनुष्य परमात्मा प्राप्ति रूप परम सिद्धी को प्राप्त होता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। इस का सम्बन्ध गीता अध्याय 5 श्लोक 2 से है। जिस प्रकार के कर्मों को करने से परम सिद्धि (भगवान की प्राप्ति करता है) उसको सुन अर्थात् अपने-2 भक्ति कर्मों के आधार पर जैसी भक्ति करता है वैसी ही उपलब्धि होती है। जिन भक्ति कर्मों से (पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति) परम सिद्धि होती है वह सुन। इसका वर्णन अध्याय 18 के श्लोक 46 में स्पष्ट है।

।। पूर्ण परमात्मा की शरण में जाने का प्रमाण।।

अध्याय 18 के श्लोक 46 में स्पष्ट करते हैं कि यदि व्यक्ति जन्म मत्यु से पूर्ण छुटकारा चाहता है तो उस परमात्मा (पूर्णब्रह्म/परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जाकर पूर्ण गुरु से नाम लेकर आजीवन भक्ति करें तथा अनन्य मन से (अनन्य का तात्पर्य है केवल एक परमेश्वर पूर्णब्रह्म को मुख्य रखकर पतिव्रता स्त्री की तरह।) पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर की भक्ति करता है वह भक्त अंत समय में उसी परमात्मा के सतनाम का सुमरण करता हुआ अभ्यास योग से युक्त शरीर छोड़ कर उसी को प्राप्त हो कर जन्म-मरण काल चक्र से पूर्णतया छूट जाता है।

।। दूसरों की घटिया साधना की दिखावटी चकाचौंध को देख कर अपनी सही साधना को नहीं त्यागना चाहिए।।

श्लोक 47 में कहा है कि दूसरों की सुव्यवस्थित दिखाई देने वाली तड़क-भड़क शास्त्र विरूद्ध गुणरहित साधना से अपनी शास्त्रानुकूल भक्ति कर्म (साधना) उत्तम है। उसे करते (उन शुभ भक्ति कर्मों को करते) हुए पाप को प्राप्त नहीं होते।

।। न त्यागे जाने वाले कर्म।।

श्लोक 48 में अच्छे कर्म जैसे यज्ञ-दान-सुमरण चाहे दोष युक्त हैं (क्योंकि हवन यज्ञ में सूक्ष्म जीव जलते हैं, दान में जब प्रसाद बनता है अग्नि में जीव हिंसा होती है। दान के लिए आटा मुख्य होता है। कनक (गेहूँ, बाजरा, ज्वार, धान की उत्पत्ति में जीव हिंसा होती है।) फिर भी यह कर्म नहीं त्यागने चाहिऐं, क्योंकि जैसे अग्नि में धुआँ होता है। ऐसे सर्व कर्म दोष युक्त हैं। (जैसे अच्छे कर्म सूखी लकड़ी व गैस समझो तथा बुरे कर्म गीली लकड़ी जिसमें धुआँ अधिक है वह समझो) श्लोक 49 में विकारों पर विजय प्राप्त पूर्ण रूप से बुरे कर्मों से तथा (सन्यासेन) विकारों से हटे हुए चित वाला (असक्त बुद्धिः) विषयों की होड से दूर (विगतस्पह) सर्व पाप कर्मों को नष्ट होने के पश्चात् जो पूर्ण मुक्ति अर्थात् सिद्धि होती है उस अनादि मोक्ष को प्राप्त करके सदा सुखी हो जाता है।

।। पूर्ण ज्ञान होने पर मेरी औकात (शक्ति) से परिचित साधक मतानुसार साधना करके पूर्ण मुक्त हो जाते हैं।।

श्लोक 50 जो ब्रह्म ज्ञान की श्रेष्ठ उपलब्धि है जिस (सिद्धि) उपलब्धि को प्राप्त होता है उसकी प्राप्ति को हे कुन्ती पुत्र संक्षिप्त में मुझसे समझ।

श्लोक 54 में कहा है कि परमात्मा प्राप्ति की इच्छा करने वाली आत्मा न तो चिन्ता करती है, न किसी की इच्छा करती है। समस्त प्राणियों में समान भाव वाली मतावलम्बी भक्ति से उत्तम ज्ञान को प्राप्त हो जाती है। (सर्व श्रेष्ठ भक्ति मत को प्राप्त हो जाती है अर्थात् उसे सही भक्ति मार्ग मिल जाता है।)

भावार्थ :-- इस श्लोक 54 का भावार्थ है कि जो प्रथम ब्रह्म गायत्री मन्त्र साधक को प्रदान किया जाता है जिस से सर्व कमल चक्र खुल जाते हैं अर्थात् कुण्डलनि शक्ति जागत हो जाती है वह उपासक परमात्मा प्राप्ति का पात्र बन जाता है। उस सुपात्र को ब्रह्म काल की परम भक्ति का मन्त्र ओं (ॐ) दिया जाता है। ओम्+तत् मिलकर दो अक्षर का सत्यनाम बनता है। इससे पूर्ण मोक्ष मार्ग प्रारम्भ होता है। इसलिए इस गीता अध्याय 18 श्लोक 54 में वर्णन है।

श्लोक 55 में कहा है कि इस भक्ति मत से मुझको जैसा और जितना है {अर्थात् केवल काल रूप क्षर (नाशवान) भगवान है तथा इससे ऊपर दो भगवान और हैं - अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा अन्य उत्तम परमात्मा परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जो कुल मालिक है तथा तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है। जैसे अध्याय 15 के श्लोक 1 से 6 में और 16 से 18 तक

में स्पष्ट है। } ठीक वैसा-वैसा तत्व से जान लेता है उससे पूर्ण रूप से मेरी शक्ति (औकात) व कर्म से परिचित हो कर कि पूर्ण परमात्मा कोई और है उसकी भक्ति अनन्य मन से स्वाभाविक अच्छे कर्म (सतनाम व सारनाम साधना) से काल जाल से छूट सकता है। फिर जन्म मरण नहीं होता। ऐसे जान कर तुरंत ही उसी मत (विचार) में प्रवेश कर जाता है अर्थात् पूर्ण परमात्मा को पाने का मत (विचार) बना लेता है। श्लोक 56 का भावार्थ है कि उस मत पर पूर्ण आश्रित (कि पूर्ण परमात्मा कोई और है उसी की भक्ति अनन्य मन से करनी चाहिए जिस धाम (सतलोक) में गए साधक फिर जन्म-मरण को प्राप्त नहीं होते) सर्व शुभ कर्मों को सदा करता हुआ अर्थात् गुरु जी के द्वारा दिये गए भक्ति मार्ग का पालन करता हुआ भी उस मत की कप्या से (मत् प्रसादात्) सनातन अविनाशी पद अर्थात् स्थाई जन्म-मरण रहित स्थिति अर्थात् अनादि मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

मत की व्याख्या अध्याय 13 के श्लोक 1,2 में स्पष्ट है। इसमें कहा है कि शरीर क्षेत्र है तथा जो उसको तत्व से जानता है वह क्षेत्रज्ञ है अर्थात् विद्वान है क्षेत्र (शरीर) को जानने वाला पंडित (क्षेत्रज्ञ) है। गरीबदास जी महाराज कहते हैं कि -

''पंडित सो जो पिण्ड (शरीर–क्षेत्र) को जाने''

काल कहता है कि यह शरीर क्षेत्र है तथा मैं क्षेत्रज्ञ हूँ। जो शरीर (क्षेत्र) और क्षेत्रज्ञ (मुझको) तत्व से जान लेता है वह सही जानकार है। यह मेरा मत (विचार) है। इसी प्रकार कहते हैं कि संतमत सतसंग अर्थात् संतों द्वारा दिए गए विचारों के आधार पर विवरण संतमत सतसंग कहलाता है। फिर आगे गीता अध्याय 13 के श्लोक 12 से 18 तक में स्पष्ट व्याख्या है कि उस जानने योग्य परमात्म तत्व को जो सर्वव्यापक है तथा सबका धारण पोषण करने वाला दूर से दूर (सतलोक में पाताल लोक से 16 शंख कोस की दूरी पर) और जैसे सूर्य आकाश में होते हुए भी आँखों में दष्टि गोचर है तथा ऊष्णता का भी आभास होता है। इसी प्रकार सतलोक में रहते हुए भी नजदीक से नजदीक सबके हृदय में रहने वाला वही पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) है। जो यह जान लेता है वह (मद्भावाय) मतावलम्बी (इन विचारों का अनुसरण करने वाला भाव) भाव को प्राप्त हो जाता है अर्थात् उसी रंग में रंग जाता है। वह फिर ब्रह्म द्वारा व देवी-देवताओं द्वारा दिए गए लाभ पर आकर्षित नहीं होता। जैसे बड़े जलाशय (तालाब) के मिल जाने पर छोटे तलईया (जोहड़ी) में आस्था अपने आप कम हो जाती है (गीता अध्याय 2 श्लोक 46)। अध्याय 13 के ही श्लोक 19 से अंतिम 34 श्लोक तक उसी परमात्मा को पाने का मत (विचार) काल भगवान द्वारा सही दिया गया है।

श्लोक 57,58 में गीता ज्ञान दाता भगवान कह रहे हैं कि सर्व कर्मों को मन से त्याग कर ज्ञान विधि (योग) का आश्रय करके मेरे मत पर आधारित होकर निरंतर मेरे विचारों में चित वाला हो। तू मुझमें चित वाला हो कर यदि इनको ध्यान से नहीं सुनेगा तो नष्ट हो जाएगा।

।। ब्रह्म (काल) भगवान द्वारा पूर्ण परमात्मा का वास्तविक ज्ञान अर्जुन को बताना।।

अध्याय 18 के श्लोक 59,60 में फिर भगवान कह रहा है अर्जुन मन-इन्द्रियों को वश करके राग-द्वेष रहित होकर कर्म कर। तू अहंकार वश होकर कह रहा है मैं युद्ध नहीं करूंगा। युद्ध न करना भी तेरे बस की बात नहीं। तू भी स्वभाव वश होकर (क्षत्री होने के कारण) युद्ध अवश्य

करेगा। जब अर्जुन बहुत दुःखी हो जाता है तथा सोचता है यह क्या? मरो और मारो। तब काल उसे सांत्वना देने के लिए बीच-2 में सच्चाई कहते हैं। श्लोक 61, 62 में कहा है कि वह अविनाशी परमात्मा (पूर्णब्रह्म) शरीर रूपी मशीन में शक्ति की तरह स्थिति अपनी शक्ति से कर्मानुसार घुमाता है जो सब प्राणियों के हृदय में स्थित है। हे अर्जुन! सर्वभाव से उस परमात्मा की शरण में चला जा। उस परमात्मा (पूर्णब्रह्म) की कप्या से परम शान्ति अर्थात् जन्म-मरण से पूर्ण रूप से मुक्त हो जाएगा तथा सनातन परम स्थान (उत्तम लोक सतलोक) को प्राप्त होगा।

अध्याय 18 के श्लोक 63 में गीता ज्ञान दाता भगवान कह रहा है कि यह गुप्त से भी गुप्त गीता ज्ञान तुझे कह दिया। तू मेरा बहुत प्रिय है। अब जो अच्छा लगे वो कर। यदि मेरी शरण में रहना है तो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी तथा अन्य देवों) की पूजा त्याग कर अनन्य मन से मेरी साधना ओ३म् मंत्र के जाप से कर (गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, गीता अध्याय 8 श्लोक 13)। मेरी साधना भी अश्रेष्ठ है (गीता अध्याय 7 श्लोक 18)। इसलिए उस परमेश्वर की शरण में जा उसके लिए किसी तत्वदर्शी संत की खोज कर। मैं उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति विधि को नहीं जानता (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)।

।। ब्रह्म (काल) का भी उपास्य देव पूर्णब्रह्म।।

अध्याय 18 के श्लोक 64 में भगवान कह रहा है कि सर्व ज्ञानों से भी गोपनीय मेरे अनमोल वचनों को फिर सुन। इसलिए यह हितकारक वचन तुझे फिर कहूँगा। वास्तव में मेरा उपास्य देव भी यही पूर्णब्रह्म ही है।

अध्याय 18 का श्लोक 64

सर्वगुह्यतमम्, भूयः, श्रणु, मे, परमम्, वचः,
इष्टः, असि, मे, दढम्, इति, ततः, वक्ष्यामि, ते, हितम्।। 64।।

अनुवाद : (सर्वगुह्यतमम्) सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय (मे) मेरे (परमम्) परम रहस्ययुक्त (हितम्) हितकारक (वचः) वचन (ते) तुझे (भूयः) फिर (वक्ष्यामि) कहूँगा (ततः) इसे (श्रणु) सुन (इति) यह पूर्ण ब्रह्म (मे) मेरा (दढम्) पक्का निश्चित (इष्टः) इष्टदेव अर्थात् पूज्यदेव (असि) है। (64)

केवल हिन्दी अनुवाद : सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय मेरे परम रहस्ययुक्त हितकारक वचन तुझे फिर कहूँगा इसे सुन यह पूर्ण ब्रह्म मेरा पक्का निश्चित इष्टदेव अर्थात् पूज्यदेव है। (64)

अध्याय 18 के श्लोक 65 में एक मन वाला मतावलम्बी अर्थात् मेरे में मनवाला हो मुझ को (गुरु रूप में) प्रणाम कर (परंतु रह मेरे आश्रित) इसलिए मुझे ही प्राप्त होगा। तुझसे यह सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। तू मेरा अत्यन्त प्रिय है।

।। ब्रह्म (काल) द्वारा अर्जुन को एक पूर्णब्रह्म की शरण में जाने को कहना।।

अध्याय 18 के श्लोक 66 में भगवान (काल) कह रहा है तू एक मेरी सर्व धार्मिक पूजाओं को मुझ में त्याग कर तू उस अद्वितीय पूर्णब्रह्म की शरण में जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त करवा दूंगा। चिंता मत कर।

अध्याय 18 का श्लोक 66

सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, व्रज,

अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः ।।66।।

अनुवाद : गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है इस श्लोक 66 में भी उसी के विषय में कहा है कि (माम्) मेरी (सर्वधर्मान्) सम्पूर्ण पूजाओंको (माम्) मुझ में (परित्यज्य) त्यागकर तू केवल (एकम्) एक उस अद्वितीय अर्थात् पूर्ण परमात्मा की (शरणम्) शरणमें (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तुझे (सर्वपापेभ्यः) सम्पूर्ण पापोंसे (मोक्षयिष्यामि) छुड़वा दूँगा तू (मा,शुचः) शोक मत कर। (66)

केवल हिन्दी अनुवाद : गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है इस श्लोक 66 में भी उसी के विषय में कहा है कि मेरी सम्पूर्ण पूजाओंको मुझ में त्यागकर तू केवल एक उस अद्वितीय अर्थात् पूर्ण परमात्मा की शरणमें जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे छुड़वा दूँगा तू शोक मत कर। (66)

विशेष :-

अध्याय 18 के श्लोक 61 से 66 तक का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता काल (ब्रह्म/क्षरपुरुष) कह रहा है कि जो पूर्ण परमात्मा (अन्य पुरुषोत्तम/अविनाशी परमात्मा/परम अक्षर ब्रह्म) सर्व जीवों के हृदय में स्थित है वही प्राणियों को कर्मानुसार यन्त्र (मशीन) की तरह घुमाता है अर्थात् कर्म आधार पर स्वर्ग-नरक-जन्म-मरण, चौरासी लाख जूनियों में चक्र कटवाता है। जो प्राणी उस (पूर्णब्रह्म/सतपुरुष) परमात्मा की शरण में नहीं है और क्षर पुरुष (ब्रह्म-काल) व तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की तथा देवी-देवताओं की उपासना करता है या बिल्कुल नहीं करता है। जैसे भी कर्म बनते हैं उनके आधार पर कर्मों का फल वही सर्वव्यापक परमात्मा (सतपुरुष) ही देता है। जैसे प्रहलाद भक्त विष्णु उपासक था तो उसकी रक्षा के लिए वह परमात्मा (पूर्णब्रह्म/सतपुरुष) ही नसिंह रूप बना कर आया, हिरणाकशिपु को मारा तथा पश्चात् विष्णु रूप दिखा कर भक्त प्रहलाद को कतार्थ किया। जो भक्त जिसका उपासक है उस भक्त की रक्षा वही पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) ही करता है तथा भक्त की श्रद्धा बनाए रखने के लिए उसी के इष्ट का रूप बना कर आता है। जो भक्ति करते हैं या नहीं करते उन सबका हिसाब धर्मराज रखता है। जो कर्मों का आधार है उसी परमात्मा के निर्देश पर फल देता है।

जो उस परमात्मा (पूर्णब्रह्म) की शरण में पूर्ण गुरु के माध्यम से जाता है। वह भक्त (योगी) जन्म-मरण चौरासी लाख जूनियों से छूट जाता है तथा सतलोक (सच्चे लोक/सच्च खण्ड/सनातन स्थान) को प्राप्त होता है तथा पूर्ण मुक्त हो जाता है। कुछ अस्थाई मुक्ति (राहत) भगवान काल (क्षर पुरुष) भी दे सकता है उसके लिए क्षर ब्रह्म कहता है कि ब्रह्मा-विष्णु-शिव व देवी-देवताओं की पूजा त्याग कर केवल मुझ (ब्रह्म) की अव्याभिचारिणी (अनन्य मन से) भक्ति गुरु बना कर करने से मुझ (काल) को प्राप्त होगा। उस साधक की चौथी मुक्ति (महास्वर्ग/ब्रह्मलोक में स्थापित) कर देगा। अपनी कमाई (पुण्यों) को समाप्त करके काल (क्षर, ब्रह्म) की महाप्रलय के समय समाप्त हो जाएगा और फिर जब काल (क्षर) सष्टी रचेगा उसमें फिर वही चौथी मुक्ति वाले साधक जन्म-मरण व

चौरासी लाख जूनियों में अवश्य जाएंगे। क्योंकि क्षर ब्रह्म का संविधान है कि जैसे कर्म प्राणी करेगा उन सर्व (अच्छे व बुरे) कर्मों का फल उस (जीव) को भोगना पड़ेगा। यह अटल नियम (मत) है। अच्छे कर्मों के लिए स्वर्ग, महास्वर्ग तथा बुरे कर्मों के लिए नरक तथा कुछ अच्छे और कुछ बुरों के मिश्रण से चौरासी लाख योनियों में भी कष्ट उठाना पड़ेगा। यह काल (क्षर ब्रह्म) भगवान की साधना का परिणाम है। इसलिए काल (क्षरपुरुष) ने अध्याय 7 के श्लोक 18 में स्पष्ट कहा है कि जो परमात्मा प्राप्ति की कोशिश कर रहे हैं वे मानव शरीरधारी ज्ञानी आत्मा उद्धार हैं परंतु वे मेरी (काल की) ही अनुत्तम (घटिया) गति (मुक्ति) में अच्छी तरह व्यवस्थित हैं अर्थात् उन नादानों को उस पूर्ण ब्रह्म परमात्मा को पाने का ज्ञान न होने से वे मेरे (काल) पर ही पूर्ण आश्रित हैं जिससे वे पूर्ण शांति (पूर्ण मुक्ति) से वंचित रहते हैं। इसलिए क्षर ब्रह्म (काल) अध्याय 18 के श्लोक 62 में स्पष्ट कह रहा है कि उस परमात्मा की शरण में जा जिससे परम शांति (पूर्ण मुक्ति) व सनातन स्थान (सतलोक) को प्राप्त होगा। फिर अध्याय 18 के ही श्लोक 62 से 66 में कहा है कि अर्जुन अब तू सोच ले मेरी शरण में रहना चाहता है या उस परमात्मा की शरण में जाना चाहता है। यह गुप्त से भी गुप्त उस परमात्मा का ज्ञान तेरे को दिया है और गुप्त से भी अति गुप्त मेरे अनमोल वचन सुन तूं मेरा अति प्रिय है इसलिए तुझे बताता हूँ कि तू उस एक (पूर्णब्रह्म) परमात्मा की शरण में जा। जो मेरा उपास्य देव (इष्ट) भी यही (पूर्णब्रह्म ही) है। यदि तू (अर्जुन) मेरी शरण में रहना चाहता है तो मेरे को ही प्राप्त होगा अर्थात् महास्वर्ग में जाएगा, मैं (काल) सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। यदि मेरी शरण में रहेगा तो युद्ध अवश्य करना होगा। यहाँ तो मारो मार बनी रहेगी। वह भी जब होगा जब मेरे विधान (मत) के अनुसार साधना करेगा। यदि ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी-देवताओं, पितरों व भूतों की पूजा भी साथ करता रहेगा तो भी मुझे प्राप्त नहीं होगा। क्योंकि यह व्यभिचारिणी भक्ति है जो एक इष्ट पर आधारित नहीं होते। वे व्याभिचारिणी भक्ति कर रहे हों उन्हें कोई लाभ नहीं हो सकेगा। अध्याय 18 के श्लोक 66 में कहा है कि उस परमात्मा से लाभ लेना है तो मेरी सर्व पूजाएँ मुझमें त्याग कर अर्थात् इन्हें भी छोड़ कर उस एक (पूर्णब्रह्म) की शरण जा। फिर मैं तेरे को सर्व पापों से छुड़वा दूँगा। तू चिंता मत कर।

।। अर्जुन, भगवान ब्रह्म (काल) की शरण में रहा फिर भी पाप मुक्त नहीं हुआ।।

विशेष : अध्याय 18 के श्लोक 73 में अर्जुन कहता है कि मैं आपकी शरण में ही रहूँगा अर्थात् आपकी आज्ञा का पालन करूँगा। मैं युद्ध करूँगा। इसीलिए अर्जुन को काल भगवान पाप मुक्त नहीं कर सका। क्योंकि वह नादान अर्जुन काल की शरण में रहा। अर्जुन भी बेचारा क्या करे? प्रथम तो इतना डराया कि काँपने लग गया फिर उस परमात्मा को प्राप्त करने का मार्ग काल भगवान ने नहीं बताया। ऊँ मन्त्र तथा यज्ञों का करना बताया जो उस परमात्मा को पाने का नहीं है अपितु काल जाल में ही रहने का है इसलिए तो अर्जुन पाप मुक्त नहीं हुआ। चूंकि प्रमाण है कि युद्ध में विजय के उपरांत राजा युधिष्ठिर को बुरे स्वपन आने लगे। तब भगवान कष्ण ने उन्हें एक यज्ञ की सलाह दी कि यज्ञ करो। क्योंकि तुम्हें युद्ध में किए पाप कर्म दुःखी कर रहे हैं। जबकि अर्जुन तो उन्हें अजम-अनादि तथा सर्व भूतों (प्राणियों) का महान् भगवान मानता ही था। प्रमाण के लिए देखें अध्याय 10 के श्लोक 12 से 14 तक। क्योंकि अर्जुन ने तो उनका काल (विराट) रूप अपनी आँखों

से देखा था। यह तो हो ही नहीं सकता कि अर्जुन काल (ब्रह्म) को सर्व प्राणियों का महान ईश्वर व अजन्मा अनादि न मानता हो। फिर पाप कर्म जो युद्ध में हुए थे, को समाप्त करने की सलाह स्वयं भगवान कष्ण ने दी थी कि तुम अंतिम स्वांस तक हिमालय में जा कर तप करो तथा वहीं शरीर समाप्त कर दो। तुम्हारे पाप जो युद्ध में हुए थे समाप्त हो जाएंगे। चारों पाण्डवों का शरीर हिमालय की बर्फ में शरीर गल कर नष्ट हो गया साथ में द्रौपदी तथा कुन्ती का भी तथा पांचवें युधिष्ठिर का केवल पंजा गला। चूंकि युधिष्ठिर ने झूठ बोला था कि अश्वत्थामा (द्रोणाचार्य का पुत्र) मर गया जबकि अश्वत्थामा मरा नहीं था। काल भगवान ने ही श्री कष्ण के शरीर में प्रवेश होकर युधिष्ठर से झूठ बुलवाया था। चारों पाण्डव (भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव) तथा द्रौपदी व कुंती आदि भी नरक में डाले गए जिसका प्रमाण महाभारत में पष्ठ नं. 1683 पर है और कुछ समय युधिष्ठिर को भी धोखे से नरक में डाला गया। फिर पाप मुक्त कौन हो सकता है? कपया पाठक विचारें तथा सतगुरु कबीर साहेब के नुमायन्दे तत्वदर्शी संत से नाम ले कर काल लोक से छुटकारा करवाएँ।

जैसा कि गीता जी के अध्याय 18 के श्लोक 64 तथा अध्याय 15 के श्लोक 4 और अध्याय 8 के श्लोक 21 में स्पष्ट है कि स्वयं गीता ज्ञान दाता भगवान कह रहा है कि हे अर्जुन! मेरा उपास्य देव (इष्ट) भी वही परमात्मा (पूर्ण ब्रह्म) ही है तथा मैं (काल) भी उसी की शरण हूँ तथा वही सनातन स्थान (सतलोक) मेरा (काल का) भी वास्तविक ठिकाना (स्थान) है अर्थात् मेरा परम धाम भी वही है। क्योंकि ब्रह्म (काल पुरुष) भी वहीं (सतलोक) से निष्कासित है।

।। साहेब कबीर व गोरख नाथ की गोष्ठी।।

एक समय गोरख नाथ (सिद्ध महात्मा) काशी (बनारस) में स्वामी रामानन्द जी (जो साहेब कबीर के गुरु जी थे) से शास्त्रार्थ करने के लिए (ज्ञान गोष्टी के लिए) आए। जब ज्ञान गोष्टी के लिए एकत्रित हुए तब कबीर साहेब भी अपने पूज्य गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी के साथ पहुँचे थे। एक उच्च आसन पर रामानन्द जी बैठे उनके चरणों में बालक रूप में कबीर साहेब (पूर्ण परमात्मा) बैठे थे। गोरख नाथ जी भी एक उच्च आसन पर बैठे थे तथा अपना त्रिशूल अपने आसन के पास ही जमीन में गाड़ रखा था। गोरख नाथ जी ने कहा कि रामानन्द मेरे से चर्चा करो। उसी समय बालक रूप (पूर्ण ब्रह्म) कबीर जी ने कहा - नाथ जी पहले मेरे से चर्चा करें। पीछे मेरे गुरुदेव जी से बात करना।

योगी गोरखनाथ प्रतापी, तासो तेज पथ्वी कांपी।
काशी नगर में सो पग परहीं, रामानन्द से चर्चा करहीं।
चर्चा में गोरख जय पावै, कंठी तोरै तिलक छुड़ावै।
सत्य कबीर शिष्य जो भयऊ, यह वतांत सो सुनि लयऊ।
गोरखनाथ के डर के मारे, वैरागी नहीं भेष सवारे।
तब कबीर आज्ञा अनुसारा, वैष्णव सकल स्वरूप संवारा।
सो सुधि गोरखनाथ जो पायौ, काशी नगर शीघ्र चल आयौ।
रामानन्द को खबर पठाई, चर्चा करो मेरे संग आई।
रामानन्द की पहली पौरी, सत्य कबीर बैठे तीस ठौरी।
कह कबीर सुन गोरखनाथा, चर्चा करो हमारे साथा।

प्रथम चर्चा करो संग मेरे, पीछे मेरे गुरु को टेरे।
बालक रूप कबीर निहारी, तब गोरख ताहि वचन उचारी।

इस पर गोरख नाथ जी ने कहा तू बालक कबीर जी कब से योगी बन गया। कल जन्मा अर्थात् छोटी आयु का बच्चा और चर्चा मेरे (गोरख नाथ के) साथ। तेरी क्या आयु है? और कब वैरागी (संत) बन गए?

कबके भए वैरागी कबीर जी, कबसे भए वैरागी।
नाथ जी जब से भए वैरागी मेरी, आदि अंत सुधि लागी।।
धूंधूकार आदि को मेला, नहीं गुरु नहीं था चेला।
जब का तो हम योग उपासा, तब का फिरूं अकेला।।
धरती नहीं जद की टोपी दीना, ब्रह्मा नहीं जद का टीका।
शिव शंकर से योगी, न थे जदका झोली शिका।।
द्वापर को हम करी फावड़ी, त्रेता को हम दंडा।
सतयुग मेरी फिरी दुहाई, कलियुग फिरौ नो खण्डा।।
गुरु के वचन साधु की संगत, अजर अमर घर पाया।
कहैं कबीर सुनों हो गोरख, मैं सब को तत्व लखाया।।

साहेब कबीर जी ने गोरख नाथ जी को बताया हैं कि मैं कब से वैरागी बना। साहेब कबीर ने उस समय वैष्णों संतों जैसा वेष बना रखा था। जैसा श्री रामानन्द जी ने बाणा (वेष) बना रखा था। मस्तिक में चन्दन का टीका, टोपी व झोली सिक्का एक फावड़ी (जो भजन करने के लिए लकड़ी की अंग्रेजी के अक्षर ''T'' के आकार की होती है) तथा एक डण्डा (लकड़ी का लट्ठा) साथ लिए हुए थे। ऊपर के शब्द में कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि जब कोई सष्टि (काल सष्टि) नहीं थी तथा न सतलोक सष्टि थी तब मैं (कबीर) अनामी लोक में था और कोई नहीं था। चूंकि साहेब कबीर ने ही सतलोक सष्टि शब्द से रची तथा फिर काल (ज्योति निरंजन-ब्रह्म) की सष्टि भी सतपुरुष ने रची। जब मैं अकेला रहता था जब धरती (पथ्वी) भी नहीं थी तब से मेरी टोपी जानो। ब्रह्मा जो गोरखनाथ तथा उनके गुरु मच्छन्दर नाथ आदि सर्व प्राणियों के शरीर बनाने वाला पैदा भी नहीं हुआ था। तब से मैंने टीका लगा रखा है अर्थात् मैं (कबीर) तब से सतपुरुष आकार रूप मैं ही हूँ।

सतयुग-त्रेतायुग-द्वापर तथा कलियुग ये चार युग तो मेरे सामने असंख्यों जा लिए। कबीर परमेश्वर जी ने कहा कि हमने सतगुरु वचन में रह कर अजर-अमर घर (सतलोक) पाया। इसलिए सर्व प्राणियों को तत्व (वास्तविक ज्ञान) बताया है कि पूर्ण गुरु से उपदेश ले कर आजीवन गुरु वचन में चलते हुए पूर्ण परमात्मा का ध्यान सुमरण करके उसी अजर-अमर सतलोक में जा कर जन्म-मरण रूपी अति दुःखमयी संकट से बच सकते हो।

इस बात को सुन कर गोरखनाथ जी ने पूछा हैं कि आपकी आयु तो बहुत छोटी है अर्थात् आप लगते तो हो बालक से।

जो बूझे सोई बावरा, क्या है उम्र हमारी।
असंख युग प्रलय गई, तब का ब्रह्मचारी।।टेक।।
कोटि निरंजन हो गए, परलोक सिधारी।
हम तो सदा महबूब हैं, स्वयं ब्रह्मचारी।।

अरबों तो ब्रह्मा गए, उनन्चास कोटि कन्हैया।
सात कोटि शम्भू गए, मोर एक नहीं पलैया।।
कोटिन नारद हो गए, मुहम्मद से चारी।
देवतन की गिनती नहीं है, क्या सष्टि विचारी।।
नहीं बुढ़ा नहीं बालक, नाहीं कोई भाट भिखारी।
कहैं कबीर सुन हो गोरख, यह है उम्र हमारी।।

श्री गोरखनाथ सिद्ध को सतगुरु कबीर साहेब अपनी आयु का विवरण देते हैं। असंख युग प्रलय में गए। तब का मैं वर्तमान हूँ अर्थात् अमर हूँ। करोड़ों ब्रह्म (क्षर पुरूष अर्थात् काल) भगवान मत्यु को प्राप्त होकर पुनर्जन्म प्राप्त कर चुके हैं।

एक ब्रह्मा की आयु 100 (सौ) वर्ष की है।

ब्रह्मा का एक दिन = 1000 (एक हजार) चतुर्युग तथा इतनी ही रात्री।

दिन-रात = 2000 (दो हजार) चतुर्युग।

{नोट – ब्रह्मा जी के एक दिन में 14 इन्द्रों का शासन काल समाप्त हो जाता है। एक इन्द्र का शासन काल बहतर चतुर्युग का होता है। इसलिए वास्तव में ब्रह्मा जी का एक दिन (72 गुणा 14 =) 1008 चतुर्युग का होता है तथा इतनी ही रात्री, परन्तु इस को एक हजार चतुर्युग ही मान कर चलते हैं।}

महीना= 30 गुणा 2000 = 60000 (साठ हजार) चतुर्युग।

वर्ष = 12 गुणा 60000 = 720000 (सात लाख बीस हजार) चतुर्युग की।

ब्रह्मा जी की आयु -

720000 गुणा 100= 72000000 (सात करोड़ बीस लाख) चतुर्युग की।

ब्रह्मा से सात गुणा विष्णु जी की आयु -

72000000 गुणा 7 = 504000000 (पचास करोड़ चालीस लाख) चतुर्युग की विष्णु की आयु है।

विष्णु से सात गुणा शिव जी की आयु -

504000000 गुणा 7 = 3528000000 (तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख) चतुर्युग की शिव की आयु हुई।

ऐसी आयु वाले सत्तर हजार शिव भी मर जाते हैं तब एक ज्योति निरंजन (ब्रह्म) मरता है। पूर्ण परमात्मा के द्वारा पूर्व निर्धारित किए समय पर एक ब्रह्मण्ड में महाप्रलय होती है। यह (सत्तर हजार शिव की मत्यु अर्थात् एक सदाशिव/ज्योति निरंजन की मत्यु होती है) एक युग होता है परब्रह्म का। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का होता है इतनी ही रात्री होती है तीस दिन-रात का एक महिना तथा बारह महिनों का परब्रह्म का एक वर्ष हुआ तथा सौ वर्ष की परब्रह्म की आयु है। परब्रह्म की भी मत्यु होती है। ब्रह्म अर्थात् ज्योति निरंजन की मत्यु परब्रह्म के एक दिन के पश्चात् होती है परब्रह्म के सौ वर्ष पूरे होने के पश्चात् एक शंख बजता है सर्व ब्रह्मण्ड नष्ट हो जाते हैं। केवल सतलोक व ऊपर तीनों लोक ही शेष रहते हैं। इस प्रकार कबीर परमात्मा ने कहा है कि करोड़ों ज्योति निरंजन मर लिए मेरी एक पल भी आयु कम नहीं हुई है अर्थात् मैं वास्तव में अमर पुरुष हूं। अन्य भगवान जिसका तुम आश्रय ले कर भक्ति कर रहे हो वे नाशवान हैं। फिर आप अमर कैसे हो

सकते हो? अरबों तो ब्रह्मा गए, 49 कोटि कन्हैया। सात कोटि शंभु गए, मोर एक नहीं पलैया।

यहां देखें अमर पुरुष कौन है? 343 करोड़ त्रिलोकिय ब्रह्मा मर जाते हैं, 49 करोड़ त्रिलोकिय विष्णु तथा 7 करोड़ त्रिलोकिय शिव मर जाते हैं तब एक ज्योति निरंजन (काल-ब्रह्म) मरता है। जिसे गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 16 में क्षर -पुरूष (नाशवान) भगवान कहा है इसे ब्रह्म भी कहते हैं तथा इसी श्लोक में जिसे अक्षर पुरूष (अविनाशी) कहा है वह परब्रह्म है जिसे अक्षर पुरुष भी कहते हैं। अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म भी नष्ट होता है। यह काल भी करोड़ों समाप्त हो जाएंगे। तब सर्व अण्डों अर्थात् ब्रह्मण्डों का नाश होगा। केवल सतलोक व उससे ऊपर के लोक शेष रहेगें। अचिंत, सत्यपुरूष के आदेश से सष्टि रचेगा। यही क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष की सष्टि पुनः प्रारम्भ होगी।

जो गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 17 में कहा है कि वह उत्तम पुरुष (पूर्ण परमात्मा) तो कोई और ही है जिसे अविनाशी परमात्मा नाम से जाना जाता है। वह पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर सतपुरुष स्वयं कबीर साहेब है। केवल सतपुरुष अजर-अमर परमात्मा है तथा उसी का सतलोक (सतधाम) अमर है जिसे अमर लोक भी कहते हैं। वहाँ की भक्ति करके भक्त आत्मा पूर्ण मुक्त होती है। जिसका कभी मरण नहीं होता। कबीर साहेब ने कहा कि यह उपलब्धि सत्यनाम के जाप से प्राप्त होती है जो उसके मर्म भेदी गुरु से मिले तथा उसके बाद सारनाम मिले तथा साधक आजीवन मर्यादा में रहकर तीनों मन्त्रों (ओम् तथा तत् जो सांकेतिक है तथा सत् भी सांकेतिक है) का जाप करे तब सतलोक में वास तथा सतपुरुष प्राप्ति होती है। करोंड़ों नारद तथा मुहम्मद जैसी पाक (पवित्र) आत्मा भी आकर (जन्म कर) जा (मर) चुके हैं, देवताओं की तो गिनती नहीं। मानव शरीर धारी प्राणियों तथा जीवों का तो हिसाब क्या लगाया जा सकता है? मैं (कबीर साहेब) न बूढ़ा न बालक, मैं तो जवान रूप में रहता हूँ जो ईश्वरीय शक्ति का प्रतीक है। यह तो मैं लीलामई शरीर में आपके समक्ष हूँ। कहै कबीर सुनों जी गोरख, मेरी आयु (उम्र) यह है जो आपको ऊपर बताई है।

यह सुन कर श्री गोरखनाथ जी जमीन में गड़े लगभग 7 फूट ऊँचें त्रिशूल के ऊपर के भाग पर अपनी सिद्धि शक्ति से उड़ कर बैठ गए और कहा कि यदि आप इतने महान् हो तो मेरे बराबर में (जमीन से लगभग सात फूट) ऊँचा उठ कर बातें करो। यह सुन कर कबीर साहेब बोले नाथ जी! ज्ञान गोष्टी के लिए आए हैं न कि नाटक बाजी करने के लिए। आप नीचे आएं तथा सर्व भक्त समाज के सामने यथार्थ भक्ति संदेश दें।

श्री गोरखनाथ जी ने कहा कि आपके पास कोई शक्ति नहीं है। आप तथा आपके गुरुजी दुनियाँ को गुमराह कर रहे हो। आज तुम्हारी पोल खुलेगी। ऐसे हो तो आओ बराबर। तब कबीर साहेब के बार-2 प्रार्थना करने पर भी नाथ जी बाज नहीं आए तो साहेब कबीर ने अपनी पराशक्ति (पूर्ण सिद्धि) का प्रदर्शन किया। साहेब कबीर की जेब में एक कच्चे धागे की रील (कुकड़ी) थी जिसमें लगभग 150 (एक सौ पचास) फुट लम्बा धागा लिप्टा (सिम्टा) हुआ था, को निकाला और धागे का एक सिरा (आखिरी छौर) पकड़ा और आकाश में फैंक दिया। वह सारा धागा उस बंडल (कुकड़ी) से उधड़ कर सीधा खड़ा हो गया। साहेब कबीर जमीन से आकाश में उड़े तथा लगभग 150 (एक सौ पचास) फुट सीधे खड़े धागे के ऊपर वाले सिरे पर बैठ कर कहा कि आओ नाथ जी!

बराबर में बैठकर चर्चा करें। गोरखनाथ जी ने ऊपर उड़ने की कोशिश की लेकिन उल्टा जमीन पर टिक गए।

पूर्ण परमात्मा (पूर्णब्रह्म) के सामने सिद्धियाँ निष्क्रिय हो जाती हैं। जब गोरख नाथ जी की कोई कोशिश सफल नहीं हुई, तब जान गए कि यह कोई मामूली भक्त या संत नहीं है। जरूर कोई अवतार (ब्रह्मा, विष्णु, महेश में से) है। तब साहेब कबीर से कहा कि हे परम पुरुष! कप्या नीचे आएँ और अपने दास पर दया करके अपना परिचय दें। आप कौन शक्ति हो? किस लोक से आना हुआ है? तब कबीर साहेब नीचे आए और कहा कि -

अवधु अविगत से चल आया, कोई मेरा भेद मर्म नहीं पाया।।टेक।।
ना मेरा जन्म न गर्भ बसेरा, बालक है दिखलाया।
काशी नगर जल कमल पर डेरा, तहाँ जुलाहे ने पाया।।
माता–पिता मेरे कछु नहीं, ना मेरे घर दासी।
जुलहा को सुत आन कहाया, जगत करे मेरी हांसी।।
पांच तत्व का धड़ नहीं मेरा, जानूं ज्ञान अपारा।
सत्य स्वरूपी नाम साहिब का, सो है नाम हमारा।।
अधर दीप (सतलोक) गगन गुफा में, तहां निज वस्तु सारा।
ज्योति स्वरूपी अलख निरंजन (ब्रह्म) भी, धरता ध्यान हमारा।।
हाड चाम लोहू नहीं मोरे, जाने सत्यनाम उपासी।
तारन तरन अभै पद दाता, मैं हूं कबीर अविनासी।।

साहेब कबीर ने कहा कि हे अवधूत गोरखनाथ जी मैं तो अविगत स्थान (जिसकी गति/भेद कोई नहीं जानता उस सतलोक) से आया हूँ। मैं तो स्वयं शक्ति से बालक रूप बना कर काशी (बनारस) में एक लहर तारा तालाब में कमल के फूल पर प्रकट हुआ हूँ। वहाँ पर नीरू-नीमा नामक जुलाहा दम्पति को मिला जो मुझे अपने घर ले आया। मेरे कोई मात-पिता नहीं हैं। न ही कोई घर दासी (पत्नी) है और जो उस परमात्मा का वास्तविक नाम है, वही कबीर नाम मेरा है। आपका ज्योति स्वरूप जिसे आप अलख निरंजन (निराकार भगवान) कहते हो वह ब्रह्म भी मेरा ही जाप करता है। मैं सतनाम का जाप करने वाले साधक को प्राप्त होता हूँ अर्थात् वहीं मेरे विषय में सही जानता है। हाड-चाम तथा लहु रक्त से बना मेरा शरीर नहीं है। कबीर साहेब सतनाम की महिमा बताते हुए कहते हैं कि मेरे मूल स्थान (सतलोक) में सतनाम के आधार से जाया जाता है। अन्य साधकों को संकेत करते हुए प्रभु कबीर (कविर्देव) जी कह रहे हैं कि मैं उसी का जाप करता रहता हूँ। इसी मन्त्र (सतनाम) से सतलोक जाने योग्य होकर फिर सारनाम प्राप्ति करके जन्म-मरण से पूर्ण छुटकारा मिलता है। यह तारन तरन पद (पूजा विधि) मैंने (कबीर साहेब अविनाशी भगवान ने) आपको बताई है। इसे कोई नहीं जानता। गोरख नाथ जी को बताया कि हे पुण्य आत्मा! आप काल क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) के जाल में ही हो। न जाने कितनी बार आपके जन्म हो चुके हैं। कभी चौरासी लाख जूनियों में कष्ट पाया। आपकी चारों युगों की भक्ति को काल अब (कलियुग में) नष्ट कर देता यदि आप मेरी शरण में नहीं आते।

यह काल इक्कीस ब्रह्मण्डों का मालिक है। इसको शाप लगा है कि एक लाख मानव शरीर

धारी (देव व ऋषि भी) जीव प्रतिदिन खायेगा तथा सवा लाख मानव शरीरधारी प्राणियों को नित्य उत्पन्न करेगा। इस प्रकार प्रतिदिन पच्चीस हजार बढ़ रहे हैं। उनको ठिकाने लगाए रखने के लिए तथा कर्म भुगताने के लिए अपना कानून बना कर चौरासी लाख योनियाँ बना रखी हैं। इन्हीं 25 हजार अधिक उत्पन्न जीवों के अन्य प्राणियों के शरीर में प्रवेश करता है। जैसे खून में जीवाणु, वायु में जीवाणु आदि-2। इसकी पत्नी आदि माया (प्रकति देवी) है। इसी से काल (ब्रह्म/अलख निरंजन) ने (पत्नी-पति के संयोग से) तीन पुत्र ब्रह्मा-विष्णु-शिव उत्पन्न किए। इन तीनों को अपने सहयोगी बना कर ब्रह्मा को शरीर बनाने का, विष्णु को पालन-पोषण का और शिव को संहार करने का कार्य दे रखा है। इनसे प्रथम तप करवाता है फिर सिद्धियाँ भर देता है जिसके आधार पर इनसे अपना उल्लु सीधा करता है और अंत में इन्हें (जब ये शक्ति रहित हो जाते हैं) भी मार कर तप्त शिला पर भून कर खाता है तथा अन्य पुत्र पूर्व ही उत्पन्न करके अचेत रखता है उनको सचेत करके अपना उत्पति, स्थिति तथा संहार का कार्य करता है। ऐसे अपने काल लोक को चला रहा है। इन सब से ऊपर पूर्ण परमात्मा है। उसका ही अवतार मुझ (कबीर परमेश्वर) को जान।

गोरख नाथ के मन में विश्वास हो गया कि कोई शक्ति है जो कुल का मालिक है। गोरख नाथ ने कहा कि मेरी एक शक्ति और देखो। यह कह कर गंगा की ओर चल पड़ा। सर्व दर्शकों की भीड़ भी साथ ही चली। लगभग 500 फुट पर गंगा नदी थी। उसमें जा कर छलांग लगाते हुए कहा कि मुझे ढूंढ दो। फिर मैं (गोरखनाथ) आप का शिष्य बन जाऊँगा। गोरखनाथ मछली बन गए। साहेब कबीर ने उसी मछली को पानी से बाहर निकाल कर सबके सामने गोरखनाथ बना दिया। तब गोरखनाथ जी ने परमेश्वर कबीर जी को पूर्ण परमात्मा स्वीकार किया और शिष्य बने। परमेश्वर कबीर जी से सतनाम ले कर भक्ति की तथा सिद्धियाँ प्राप्त करने वाली साधना त्याग दी।

गीता जी के अध्याय 14 के श्लोक 26,27 का भाव है कि साधक अव्याभिचारिणी भक्ति अर्थात् पूर्ण आश्रित मुझ (काल-ब्रह्म) पर हो कर (अन्य देवी-देवताओं तथा माता, रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव आदि की पूजा त्याग कर) केवल मेरी भक्ति करता है तथा एक मेरे मन्त्र ऊँ का जाप करता है वह उपासक उस परमात्मा को पाने योग्य हो जाता है और आगे की साधना करके उस परमानन्द के परम सुख को भी मेरे माध्यम से प्राप्त करता है।

जैसे कोई विधार्थी मैट्रिक, बी.ए., एम.ए. करके किसी कोर्स में प्रवेश ले कर सर्विस प्राप्त करके रोजी प्राप्त करके सुखी होता है तो उसके लिए उसने मैट्रिक की शिक्षा प्राप्त की जिसके बाद कोर्स (ट्रेनिंग) में प्रवेश किया। उसको मैट्रिक की शिक्षा प्रतिष्ठा (अवस्था) अर्थात् सहयोगी हुआ। सर्विस प्रदान कर्त्ता नहीं हुआ। ठीक इसी प्रकार काल भगवान (ब्रह्म) कह रहा है कि उस अविनाशी परमात्मा के अमरत्व का और नित्य रहने वाले स्वभाव का तथा धर्म का और अखण्ड स्थाई रहने के आनन्द का सहयोगी मैं (ब्रह्म) हूँ। इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय 18 के श्लोक 66 में कहा है कि सर्व मेरे सत्र की साधनाओं (ओम् एक अक्षर के जाप तथा पांचों यज्ञों की कमाई) को मुझमें त्याग कर एक (पूर्णब्रह्म) की शरण में जा तब तेरे सर्व पाप क्षमा करवा दूंगा। जिन भक्त आत्माओं ने काल (ब्रह्म) के ऊँ मन्त्र का जाप अनन्य मन से किया। उनको कबीर भगवान ने आगे की उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति प्रदान करके काल लोक से पार किया। जैसे नामदेव नामक परम भक्त केवल

एक नाम ऊँ का जाप करते थे। उससे उनको बहुत सिद्धियाँ प्राप्त हो गई थी फिर भी मुक्ति नहीं थी। फिर कबीर साहेब श्री नामदेव जी को मिले तथा सतलोक व सतपुरुष का ज्ञान कराया। सोहं मन्त्र दिया जो परब्रह्म का जाप है। फिर सार शब्द दिया जो पूर्णब्रह्म का जाप है। जब नामदेव जी मुक्त हुए।

ऐसे ही गोरखनाथ जी ने भी एक मन्त्र अलख निरंजन का जाप तथा चांचरी मुद्रा की साधना की। तब साहेब कबीर ने उन्हें ऊँ तथा सोहं मन्त्र दिया तथा काल जाल से बाहर किया।

।। साहेब कबीर द्वारा श्री नानक जी को तत्वज्ञान समझाना।।

''नानक जी का संक्षिप्त परिचय''

आदरणीय श्री नानक साहेब जी प्रभु कबीर(धाणक) जुलाहा के साक्षी - श्री नानक देव का जन्म विक्रमी संवत् 1526 (सन् 1469) कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को हिन्दु परिवार में श्री कालु राम मेहत्ता (खत्री) के घर माता श्रीमति तप्ता देवी की पवित्र कोख (गर्भ) से पश्चिमी पाकिस्तान के जिला लाहौर के तलवंडी नामक गाँव में हुआ। इन्होंने फारसी, पंजाबी, संस्कत भाषा पढ़ी हुई थी। श्रीमद् भगवत गीता जी को श्री बजलाल पांडे से पढ़ा करते थे। श्री नानक देव जी के श्री चन्द तथा लखमी चन्द दो लड़के थे।

श्री नानक जी अपनी बहन नानकी की सुसराल शहर सुल्तान पुर में अपने बहनोई श्री जयराम जी की कपा से सुल्तान पुर के नवाब के यहाँ मोदी खाने की नौकरी किया करते थे। प्रभु में असीम प्रेम था क्योंकि यह पुण्यात्मा युगों-युगों से पवित्र भक्ति ब्रह्म भगवान(काल) की करते हुए आ रहे थे। सत्ययुग में यही नानक जी राजा अम्ब्रीष थे तथा ब्रह्म भक्ति विष्णु जी को इष्ट मानकर किया करते थे। दुर्वासा जैसे महान तपस्वी ऋषि भी इनके दरबार में हार मान कर क्षमा याचना करके गए थे।

त्रेता युग में श्री नानक जी की आत्मा राजा जनक विदेही बने। जो सीता जी के पिता कहलाए। उस समय सुखदेव ऋषि जो महर्षि वेदव्यास के पुत्र थे जो अपनी सिद्धि से आकाश में उड़ जाते थे। परन्तु गुरु से उपदेश नहीं ले रखा था। जब सुखदेव विष्णुलोक के स्वर्ग में गए तो गुरु न होने के कारण वापिस आना पड़ा। विष्णु जी के आदेश से राजा जनक को गुरु बनाया तब स्वर्ग में स्थान प्राप्त हुआ। फिर कलियुग में यही राजा जनक की आत्मा एक हिन्दु परिवार में श्री कालुराम महत्ता (खत्री) के घर उत्पन्न हुए तथा श्री नानक नाम रखा गया।

''नानक जी तथा परमेश्वर कबीर जी की ज्ञान चर्चा''

बाबा नानक देव जी प्रातःकाल प्रतिदिन सुल्तानपुर के पास बह रही बेई दरिया में स्नान करने जाया करते थे तथा घण्टों प्रभु चिन्तन में बैठे रहते थे।

एक दिन एक जिन्दा फकीर बेई दरिया पर मिले तथा नानक जी से कहा कि आप बहुत अच्छे प्रभु भक्त नजर आते हो। कप्या मुझे भी भक्ति मार्ग बताने की कपा करें। मैं बहुत भटक लिया हूँ। मेरा संशय समाप्त नहीं हो पाया है।

श्री नानक जी ने पूछा कि आप कहाँ से आए हो? आपका क्या नाम है? क्या आपने कोई गुरु धारण किया है?

तब जिन्दा फकीर का रूप धारण किए कबीर जी ने कहा मेरा नाम कबीर है, बनारस (काशी) से आया हूँ। जुलाहे का काम करता हूँ। मैंने पंडित रामानन्द स्वामी जी से नाम उपदेश ले रखा है।

श्री नानक जी ने बन्दी छोड़ कबीर जी को एक जिज्ञासु जानकर भक्ति मार्ग बताना प्रारम्भ किया :-

श्री नानक जी ने कहा हे जिन्दा! गीता में लिखा है कि एक 'ओ३म' मंत्र का जाप करो। सतगुण श्री विष्णु जी (जो श्री कष्ण रूप में अवतरित हुए थे) ही पूर्ण परमात्मा है। स्वर्ग प्राप्ति का एक मात्र साधारण-मार्ग है। गुरु के बिना मोक्ष नहीं, निराकार ब्रह्म की एक 'ओम् 'मंत्र की साधना से स्वर्ग प्राप्ति होती है।

जिन्दा रूप में कबीर परमेश्वर ने कहा गुरु किसे बनाऊँ? कोई पूरा गुरु मिल ही नहीं रहा जो संशय समाप्त करके मन को भक्ति में लगा सके।

स्वामी रामानन्द जी मेरे गुरु हैं परन्तु उन से मेरा संशय निवारण नहीं हो पाया है(यहाँ पर कबीर परमेश्वर अपने आप को छुपा कर लीला करते हुए कह रहे हैं तथा साथ में यह उद्देश्य है कि इस प्रकार श्री नानक जी को समझाया जा सकता है।)।

श्री नानक जी ने कहा मुझे गुरु बनाओ, आप का कल्याण निश्चित है।

जिन्दा महात्मा के रूप में कबीर परमेश्वर ने कहा कि मैं आप को गुरु धारण करता हूँ, परन्तु मेरे कुछ प्रश्न हैं, उनका आप से समाधान चाहूँगा। श्री नानक जी बोले - पूछो।

जिन्दा महात्मा के रूप में कबीर परमेश्वर ने कहा हे गुरु नानक जी! आपने बताया कि तीन लोक के प्रभु (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) है। त्रिगुण माया सष्टि, स्थिति तथा संहार करती है। श्री कष्ण जी ही श्री विष्णु रूप में स्वयं आए थे, जो सर्वेश्वर, अविनाशी, सर्व लोकों के धारण व पोषण कर्ता हैं। यह सर्व के पूज्य हैं तथा सष्टि रचनहार भी यही हैं। इनसे ऊपर कोई प्रभु नहीं है। इनके माता-पिता नहीं है, ये तो अजन्मा हैं। श्री कष्ण ने ही गीता ज्ञान दिया है(यह ज्ञान श्री नानक जी ने श्री बजलाल पाण्डे से सुना था, जो उन्हें गीता जी पढ़ाया करते थे)। परन्तु गीता अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अर्जुन! मैं तथा तू पहले भी थे तथा यह सर्व सैनिक भी थे, हम सब आगे भी उत्पन्न होंगे। तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता मैं जानता हूँ। इससे तो सिद्ध है कि गीता ज्ञान दाता भी नाशवान है, अविनाशी नहीं है। गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि जो त्रिगुण माया (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी) के द्वारा मिलने वाले क्षणिक लाभ के कारण इन्हीं की पूजा करके अपना कल्याण मानते हैं, इनसे ऊपर किसी शक्ति को नहीं मानते अर्थात् जिनकी बुद्धि इन्हीं तीन प्रभुओं(त्रिगुणमयी माया) तक सीमित है वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले, मूर्ख मुझे भी नहीं पूजते। इससे तो सिद्ध हुआ कि श्री विष्णु (सतगुण) आदि पूजा के योग्य नहीं

है तथा अपनी साधना के विषय में गीता ज्ञान दाता प्रभु ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में कहा है कि मेरी (गति) पूजा भी (अनुत्तमाम्) अति घटिया है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 4, अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम सतलोक चला जाएगा। जहाँ जाने के पश्चात् साधक का जन्म-मत्यु का चक्र सदा के लिए छूट जाएगा। वह साधक फिर लौट कर संसार में नहीं आता अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। उस परमात्मा के विषय में गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि मैं नहीं जानता। उस के विषय में पूर्ण (तत्व) ज्ञान तत्वदर्शी संतों से पूछो। जैसे वे कहें वैसे साधना करो। प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में। श्री नानक जी से परमेश्वर कबीर साहेब जी ने कहा कि क्या वह तत्वदर्शी संत आपको मिला है जो पूर्ण परमात्मा की भक्ति विधि बताएगा ? श्री नानक जी ने कहा नहीं मिला। परमेश्वर कबीर जी ने कहा जो भक्ति आप कर रहे हो यह तो पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है। उस पूर्ण परमात्मा के विषय में पूर्ण ज्ञान रखने वाला मैं ही वह तत्वदर्शी संत हूँ। बनारस (काशी) में धाणक (जुलाहे) का कार्य करता हूँ। गीता ज्ञान दाता प्रभु स्वयं को नाशवान कह रहा है, जब स्वर्ग तथा महास्वर्ग (ब्रह्मलोक) भी नहीं रहेगा तो साधक का क्या होगा ? जैसे आप ने बताया कि श्रीमद् भगवत गीता में लिखा है कि ओ३म मंत्र के जाप से स्वर्ग प्राप्ति हो जाती है। वहाँ स्वर्ग में साधक जन कितने दिन रह सकते हैं?

श्री नानक जी ने उत्तर दिया जितना भजन तथा दान के आधार पर उनका स्वर्ग का समय निर्धारित होगा उतने दिन स्वर्ग में आनन्द से रह सकते हैं।

जिन्दा फकीर ने प्रश्न किया कि तत् पश्चात् कहाँ जाएँगे?

उत्तर (नानक जी का) - फिर इस मत लोक में आना होता है तथा कर्माधार पर अन्य योनियाँ भी भोगनी पड़ती हैं।

प्रश्न (जिन्दा रूप में कबीर साहेब का)- क्या जन्म मरण मिट सकता है?

उत्तर (श्री नानक जी का) - नहीं, गीता में कहा है अर्जुन तेरे मेरे अनेक जन्म हो चुके हैं और आगे भी होंगे अर्थात् जन्म-मरण बना रहेगा(गीता अध्याय 2 श्लोक 12 तथा अध्याय 4 श्लोक 5)। शुभ कर्म ज्यादा करने से स्वर्ग का समय अधिक हो जाता है।

प्रश्न {जिन्दा फकीर (कबीर जी) का} - गीता अध्याय न. 8 के श्लोक न. 16 में लिखा है कि ब्रह्मलोक से लेकर सर्वलोक नाशवान हैं। उस समय कहाँ रहोगे? जब न पथ्वी रहेगी, न श्री विष्णु रहेगा, न विष्णुलोक, न स्वर्ग लोक तथा पूरे ब्रह्मण्ड का विनाश होगा। इसलिए गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि किसी तत्वदर्शी संत की खोज कर, फिर जैसे उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति की विधि वह संत बताए उसके अनुसार साधना कर। उसके पश्चात् उस परम पद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए, जहाँ पर जाने के पश्चात् साधक का फिर जन्म-मत्यु कभी नहीं होता अर्थात् फिर लौट कर संसार में नहीं आते। जिस परमेश्वर से सर्व ब्रह्मण्डों की उत्पत्ति हुई है। मैं (गीता ज्ञान दाता) भी उसी पूर्ण परमात्मा की शरण में हूँ (गीता अध्याय 4 श्लोक 34, अध्याय 15 श्लोक 4) इसलिए कहा है कि अर्जुन सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कपा से ही तू परम शान्ति तथा सतलोक स्थान अर्थात् सच्चखण्ड में चला

जाएगा(गीता अध्याय 18 श्लोक 62)। उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का ओम-तत्-सत् केवल यही मंत्र है(गीता अध्याय 17 श्लोक 23)।

उत्तर नानक जी का - इसके बारे में मुझे ज्ञान नहीं।

जिन्दा फकीर (कबीर साहेब) ने श्री नानक जी को बताया कि यह सर्व काल की कला है। गीता अध्याय न. 11 के श्लोक न. 32 में स्वयं गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि मैं काल हूँ और सभी को खाने के लिए आया हूँ। वही निरंकार कहलाता है। उसी काल का ओंकार (ओम्) मंत्र है।

गीता अध्याय न. 11 के श्लोक न. 21 में अर्जुन ने कहा है कि आप तो ऋषियों को भी खा रहे हो, देवताओं को भी खा रहे हो जो आपही का स्मरण स्तुति वेद विधि अनुसार कर रहे हैं। इस प्रकार काल वश सर्व साधक साधना करके उसी के मुख में प्रवेश करते रहते हैं।

आपने इसी काल (ब्रह्म) की साधना करते करते असंख्यों युग हो गए। साठ हजार जन्म तो आपके महर्षि तथा महान भक्त रूप में हो चुके हैं। फिर भी काल के लोक में जन्म-मत्यु के चक्र में ही रहे हो।

सर्व सष्टि रचना सुनाई तथा श्री ब्रह्मा (रजगुण), श्री विष्णु (सतगुण) तथा श्री शिव (तमगुण) की स्थिति बताई। श्री देवी महापुराण तीसरा स्कंद (पष्ठ 123, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, मोटा टाईप) में स्वयं विष्णु जी ने कहा है कि मैं (विष्णु) तथा ब्रह्मा व शिव तो नाशवान हैं, अविनाशी नहीं हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होता है। आप (दुर्गा/अष्टांगी) हमारी माता हो। दुर्गा ने बताया कि ब्रह्म (ज्योति निरंजन) आपका पिता है। श्री शंकर जी ने स्वीकार किया कि मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर भी आपका पुत्र हूँ तथा ब्रह्मा भी आपका बेटा है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि हे नानक जी! आप इन्हें अविनाशी, अजन्मा, इनके कोई माता-पिता नहीं हैं आदि उपमा दे रहे हो। यह दोष आप का नहीं है। यह दोष दोनों धर्मों(हिन्दू तथा मुसलमान) के ज्ञानहीन गुरुओं का है जो अपने-अपने धर्म के सद्ग्रन्थों को ठीक से न समझ कर अपनी-अपनी अटकल से दंत कथा (लोकवेद) सुना कर वास्तविक भक्ति मार्ग के विपरीत शास्त्र विधि रहित मनमाना आचरण (पूजा) का ज्ञान दे रहे हैं। दोनों ही पवित्र धर्मों के पवित्र शास्त्र एक पूर्ण प्रभु का(मेरा) ही ज्ञान करा रहे हैं। कुर्आन शरीफ में सूरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में भी मुझ कबीर का वर्णन है।

श्री नानक जी ने कहा कि यह तो आज तक किसी ने नहीं बताया। इसलिए मन स्वीकार नहीं कर रहा है। तब जिन्दा फकीर जी (कबीर साहेब जी) श्री नानक जी की अरूचि देखकर चले गए। उपस्थित व्यक्तियों ने श्री नानक जी से पूछा यह भक्त कौन था जो आप को गुरुदेव कह रहा था? नानक जी ने कहा यह काशी में रहता है, नीच जाति का जुलाहा(धाणक) कबीर था। बेतुकी बातें कर रहा था। कह रहा था कि कष्ण जी तो काल के चक्र में है तथा मुझे भी कह रहा था कि आपकी साधना ठीक नहीं है। तब मैंने बताना शुरू किया तब हार मान कर चला गया। {इस वार्ता से सिक्खों ने श्री नानक जी को परमेश्वर कबीर साहेब जी का गुरु मान लिया।}

श्री नानक जी प्रथम वार्ता पूज्य कबीर परमेश्वर के साथ करने के पश्चात् यह तो जान गए थे कि मेरा ज्ञान पूर्ण नहीं है तथा गीता जी का ज्ञान भी उससे कुछ भिन्न ही है जो आज तक हमें बताया गया था। इसलिए हृदय से प्रतिदिन प्रार्थना करते थे कि वही संत एक बार फिर आए। मैं उससे कोई वाद-विवाद नहीं करूंगा, कुछ प्रश्नों का उत्तर अवश्य चाहूँगा। परमेश्वर कबीर जी तो अन्तर्यामी हैं तथा आत्मा के आधार व आत्मा के वास्तविक पिता हैं, अपनी प्यारी आत्माओं को ढूंढते रहते हैं। कुछ समय के ऊपरान्त जिन्दा फकीर रूप में कबीर जी ने उसी बेई नदी के किनारे पहुँच कर श्री नानक जी को राम-राम कहा। उस समय श्री नानक जी कपड़े उतार कर स्नान के लिए तैयार थे। जिन्दा महात्मा केवल श्री नानक जी को दिखाई दे रहे थे अन्य को नहीं। श्री नानक जी से वार्ता करने लगे। कबीर जी ने कहा कि आप मेरी बात पर विश्वास करो। एक पूर्ण परमात्मा है तथा उसका सतलोक स्थान है जहाँ की भक्ति करने से जीव सदा के लिए जन्म-मरण से छूट सकता है। उस स्थान तथा उस परमात्मा की प्राप्ति की साधना का केवल मुझे ही पता है अन्य को नहीं तथा गीता अध्याय न. 18 के श्लोक न. 62, अध्याय 15 श्लोक 4 में भी उस परमात्मा तथा स्थान के विषय में वर्णन है।

पूर्ण परमात्मा गुप्त है उसकी शरण में जाने से उसी की कपा से तू (शाश्वतम्) अविनाशी अर्थात् सत्य (स्थानम्) लोक को प्राप्त होगा। गीता ज्ञान दाता प्रभु भी कह रहा है कि मैं भी उसी आदि पुरुष परमेश्वर नारायण की शरण में हूँ। श्री नानक जी ने कहा कि मैं आपकी एक परीक्षा लेना चाहता हूँ। मैं इस दरिया में छुपूँगा और आप मुझे ढूंढ़ना। यदि आप मुझे ढूंढ दोगे तो मैं आपकी बात पर विश्वास कर लूँगा। यह कह कर श्री नानक जी ने बेई नदी में डुबकी लगाई तथा मछली का रूप धारण कर लिया। जिन्दा फकीर (कबीर पूर्ण परमेश्वर) ने उस मछली को पकड़ कर जिधर से पानी आ रहा था उस ओर लगभग तीन किलो मीटर दूर ले गए तथा श्री नानक जी बना दिया।

(प्रमाण श्री गुरु ग्रन्थ साहेब सीरी रागु महला पहला, घर 4 पष्ठ 25) -

तू दरीया दाना बीना, मैं मछली कैसे अन्त लहा।
जह–जह देखा तह–तह तू है, तुझसे निकस फूट मरा।
न जाना मेऊ न जाना जाली। जा दुःख लागै ता तुझै समाली।1।रहाऊ।।

नानक जी ने कहा कि मैं मछली बन गया था, आपने कैसे ढूंढ लिया? हे परमेश्वर! आप तो दरीया के अंदर सूक्ष्म से भी सूक्ष्म वस्तु को जानने वाले हो। मुझे तो जाल डालने वाले(जाली) ने भी नहीं जाना तथा गोताखोर(मेऊ) ने भी नहीं जाना अर्थात् नहीं जान सका। जब से आप के सतलोक से निकल कर अर्थात् आप से बिछुड़ कर आए हैं तब से कष्ट पर कष्ट उठा रहा हूँ। जब दुःख आता है तो आपको ही याद करता हूँ, मेरे कष्टों का निवारण आप ही करते हो? (उपरोक्त वार्ता बाद में काशी में प्रभु के दर्शन करके हुई थी)।

तब नानक जी ने कहा कि अब मैं आपकी सर्व वार्ता सुनने को तैयार हूँ।

कबीर परमेश्वर ने वही सष्टि रचना पुनर् सुनाई तथा कहा कि मैं पूर्ण परमात्मा हूँ मेरा स्थान सच्चखण्ड (सत्यलोक) है। आप मेरी आत्मा हो। काल (ब्रह्म) आप सर्व आत्माओं को भ्रमित

ज्ञान से विचलित करता है तथा नाना प्रकार से प्राणियों के शरीर में बहुत परेशान कर रहा है। मैं आपको सच्चानाम (सत्यनाम/वास्तविक मंत्र जाप) दूँगा जो किसी शास्त्र में नहीं है। जिसे काल (ब्रह्म) ने गुप्त कर रखा है।

श्री नानक जी ने कहा कि मैं अपनी आँखों अकाल पुरूष तथा सच्चखण्ड को देखूं तब आपकी बात को सत्य मानूं। तब कबीर साहेब जी श्री नानक जी की पुण्यात्मा को सत्यलोक ले गए। सच्च खण्ड में श्री नानक जी ने देखा कि एक असीम तेजोमय मानव सदश शरीर युक्त प्रभु तख्त पर बैठे थे। अपने ही दूसरे स्वरूप पर कबीर साहेब जिन्दा महात्मा के रूप में चंवर करने लगे। तब श्री नानक जी ने सोचा कि अकाल मूर्त तो यह रब है जो गद्दी पर बैठा है। कबीर तो यहाँ का सेवक होगा। उसी समय जिन्दा रूप में परमेश्वर कबीर साहेब उस गद्दी पर विराजमान हो गए तथा जो तेजोमय शरीर युक्त प्रभु का दूसरा रूप था वह खड़ा होकर तख्त पर बैठे जिन्दा वाले रूप पर चंवर करने लगा। फिर वह तेजोमय रूप नीचे से गये जिन्दा (कबीर) रूप में समा गया तथा गद्दी पर अकेले कबीर परमेश्वर जिन्दा रूप में बैठे थे और चंवर अपने आप ढुरने लगा।

तब नानक जी ने कहा कि वाहे गुरु, सत्यनाम से प्राप्ति तेरी। इस प्रक्रिया में तीन दिन लग गए। नानक जी की आत्मा को साहेब कबीर जी ने वापस शरीर में प्रवेश कर दिया। तीसरे दिन श्री नानक जी होश में आऐ।

उधर श्री जयराम जी ने (जो श्री नानक जी का बहनोई था) श्री नानक जी को दरिया में डूबा जान कर दूर तक गोताखोरों से तथा जाल डलवा कर खोज करवाई। परन्तु कोशिश निष्फल रही और मान लिया कि श्री नानक जी दरिया के अथाह वेग में बह कर मिट्टी के नीचे दब गए। तीसरे दिन जब नानक जी उसी नदी के किनारे सुबह-सुबह दिखाई दिए तो बहुत व्यक्ति एकत्रित हो गए, बहन नानकी तथा बहनोई श्री जयराम भी दौड़े गए, खुशी का ठिकाना नहीं रहा तथा घर ले आए।

श्री नानक जी अपनी नौकरी पर चले गए। मोदी खाने का दरवाजा खोल दिया तथा कहा जिसको जितना चाहिए, ले जाओ। पूरा खजाना लुटा कर शमशान घाट पर बैठ गए। जब नवाब को पता चला कि श्री नानक खजाना समाप्त करके शमशान घाट पर बैठा है। तब नवाब ने श्री जयराम की उपस्थिति में खजाने का हिसाब करवाया तो सात सौ साठ रूपये अधिक मिले। नवाब ने क्षमा याचना की तथा कहा कि नानक जी आप सात सौ साठ रूपये जो आपके सरकार की ओर अधिक हैं ले लो तथा फिर नौकरी पर आ जाओ। तब श्री नानक जी ने कहा कि अब सच्ची सरकार की नौकरी करूँगा। उस पूर्ण परमात्मा के आदेशानुसार अपना जीवन सफल करूँगा। वह पूर्ण परमात्मा है जो मुझे बेई नदी पर मिला था।

नवाब ने पूछा वह पूर्ण परमात्मा कहाँ रहता है तथा यह आदेश आपको कब हुआ?

श्री नानक जी ने कहा वह सच्चखण्ड में रहता है। बेई नदी के किनारे से मुझे स्वयं आकर वही पूर्ण परमात्मा सच्चखण्ड (सत्यलोक) लेकर गया था। वह इस पथ्वी पर भी आकार में आया हुआ है। उसकी खोज करके अपना आत्म कल्याण करवाऊँगा। उस दिन के बाद श्री नानक

जी घर त्याग कर पूर्ण परमात्मा की खोज पथ्वी पर करने के लिए चल पड़े।

श्री नानक जी सतनाम तथा वाहिगुरु की रटना लगाते हुए बनारस पहुँचे। इसीलिए अब पवित्र सिक्ख समाज के श्रद्धालु केवल सत्यनाम श्री वाहिगुरु कहते रहते हैं। सत्यनाम क्या है तथा वाहिगुरु कौन है यह मालूम नहीं है। जबकि सत्यनाम(सच्चानाम) गुरु ग्रन्थ साहेब में लिखा है, जो अन्य मंत्र है।

जैसा की कबीर साहेब ने बताया था कि मैं बनारस (काशी) में रहता हूँ। धाणक (जुलाहे) का कार्य करता हूँ। मेरे गुरु जी काशी में सर्व प्रसिद्ध पंडित रामानन्द जी हैं। इस बात को आधार रखकर श्री नानक जी ने संसार से उदास होकर पहली उदासी यात्रा बनारस (काशी) के लिए प्रारम्भ की (प्रमाण के लिए देखें ''जीवन दस गुरु साहिब'' (लेखक :- सोढ़ी तेजा सिंह जी, प्रकाशक=चतर सिंघ, जीवन सिंघ) पष्ठ न. 50 पर।)।

परमेश्वर कबीर साहेब जी स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में प्रतिदिन जाया करते थे। जिस दिन श्री नानक जी ने काशी पहुँचना था उससे पहले दिन कबीर साहेब ने अपने पूज्य गुरुदेव रामानन्द जी से कहा कि स्वामी जी कल मैं आश्रम में नहीं आ पाऊँगा। क्योंकि कपड़ा बुनने का कार्य अधिक है। कल सारा दिन लगा कर कार्य निपटा कर फिर आपके दर्शन करने आऊँगा।

काशी(बनारस) में जाकर श्री नानक जी ने पूछा कोई रामानन्द जी महाराज है। सब ने कहा वे आज के दिन सर्व ज्ञान सम्पन्न ऋषि हैं। उनका आश्रम पंचगंगा घाट के पास है। श्री नानक जी ने श्री रामानन्द जी से वार्ता की तथा सच्चखण्ड का वर्णन शुरू किया। तब श्री रामानन्द स्वामी ने कहा यह पहले मुझे किसी शास्त्र में नहीं मिला परन्तु अब मैं आँखों देख चुका हूँ, क्योंकि वही परमेश्वर स्वयं कबीर नाम से आया हुआ है तथा मर्यादा बनाए रखने के लिए मुझे गुरु कहता है परन्तु मेरे लिए प्राण प्रिय प्रभु है। पूर्ण विवरण चाहिए तो मेरे व्यवहारिक शिष्य परन्तु वास्तविक गुरु कबीर से पूछो, वही आपकी शंका का निवारण कर सकता है।

श्री नानक जी ने पूछा कि कहाँ हैं (परमेश्वर स्वरूप) कबीर साहेब जी ? मुझे शीघ्र मिलवा दो। तब श्री रामानन्द जी ने एक सेवक को श्री नानक जी के साथ कबीर साहेब जी की झोपड़ी पर भेजा। उस सेवक से भी सच्चखण्ड के विषय में वार्ता करते हुए श्री नानक जी चले तो उस कबीर साहेब के सेवक ने भी सच्चखण्ड व सष्टि रचना जो परमेश्वर कबीर साहेब जी से सुन रखी थी सुनाई। तब श्री नानक जी ने आश्चर्य हुआ कि मेरे से तो कबीर साहेब के चाकर (सेवक) भी अधिक ज्ञान रखते हैं। इसीलिए गुरुग्रन्थ साहेब पष्ठ 721 पर अपनी अमतवाणी महला 1 में श्री नानक जी ने कहा है कि -

"हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदीगार।
नानक बुगोयद जनु तुरा, तेरे चाकरां पाखाक"

जिसका भावार्थ है कि हे कबीर परमेश्वर जी मैं नानक कह रहा हूँ कि मेरा उद्धार हो गया, मैं तो आपके सेवकों के चरणों की धूर तुल्य हूँ।

जब नानक जी ने देखा यह धाणक (जुलाहा) वही परमेश्वर है जिसके दर्शन सत्यलोक

(सच्चखण्ड) में किए तथा बेई नदी पर हुए थे। वहाँ यह जिन्दा महात्मा के वेश में थे यहाँ धाणक (जुलाहे) के वेश में हैं। यह स्थान अनुसार अपना वेश बदल लेते हैं परन्तु स्वरूप (चेहरा) तो वही है। वही मोहिनी सूरत जो सच्चखण्ड में भी विराजमान था। वही करतार आज धाणक रूप में बैठा है। श्री नानक जी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। आँखों में आँसू भर गए।

तब श्री नानक जी अपने सच्चे स्वामी अकाल मूर्ति को पाकर चरणों में गिरकर सत्यनाम (सच्चानाम) प्राप्त किया। तब शान्ति पाई तथा अपने प्रभु की महिमा देश विदेश में गाई।

पहले श्री नानकदेव जी एक ओंकार(ओम) मन्त्र का जाप करते थे तथा उसी को सत मान कर कहा करते थे एक ओंकार। उन्हें बेई नदी पर कबीर साहेब ने दर्शन दे कर सतलोक(सच्चखण्ड) दिखाया तथा अपने सतपुरुष रूप को दिखाया। जब सतनाम का जाप दिया तब नानक जी की काल लोक से मुक्ति हुई। नानक जी ने कहा कि :

इसी का प्रमाण गुरु ग्रन्थ साहिब के राग ''सिरी'' महला 1 पष्ठ नं. 24 पर शब्द नं. 29

शब्द – एक सुआन दुई सुआनी नाल, भलके भौंकही सदा बिआल
कुड़ छुरा मुठा मुरदार, धाणक रूप रहा करतार।।1।।
मै पति की पंदि न करनी की कार। उह बिगड़ै रूप रहा बिकराल।।
तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहो आस एहो आधार।
मुख निंदा आखा दिन रात, पर घर जोही नीच मनाति।।
काम क्रोध तन वसह चंडाल, धाणक रूप रहा करतार।।2।।
फाही सुरत मलूकी वेस, उह ठगवाड़ा ठगी देस।।
खरा सिआणां बहुता भार, धाणक रूप रहा करतार।।3।।
मैं कीता न जाता हरामखोर, उह किआ मुह देसा दुष्ट चोर।
नानक नीच कह बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।4।।

इसमें स्पष्ट लिखा है कि एक(मन रूपी) कुत्ता तथा इसके साथ दो (आशा-तष्णा रूपी) कुतिया अनावश्यक भौंकती(उमंग उठती) रहती हैं तथा सदा नई-नई आशाएँ उत्पन्न(ब्याती हैं) होती हैं। इनको मारने का तरीका(जो सत्यनाम तथा तत्व ज्ञान बिना) झुठा(कुड़) साधन(मुठ मुरदार) था। मुझे धाणक के रूप में हक्का कबीर (सत कबीर) परमात्मा मिला। उन्होनें मुझे वास्तविक उपासना बताई।

नानक जी ने कहा कि उस परमेश्वर(कबीर साहेब) की साधना बिना न तो पति(साख) रहनी थी और न ही कोई अच्छी करनी(भक्ति की कमाई) बन रही थी। जिससे काल का भयंकर रूप जो अब महसूस हुआ है उससे केवल कबीर साहेब तेरा एक(सत्यनाम) नाम पूर्ण संसार को पार(काल लोक से निकाल सकता है) कर सकता है। मुझे(नानक जी कहते हैं) भी एही एक तेरे नाम की आश है व यही नाम मेरा आधार है। पहले अनजाने में बहुत निंदा भी की होगी क्योंकि काम क्रोध इस तन में चंडाल रहते हैं।

मुझे धाणक(जुलाहे का कार्य करने वाले कबीर साहेब) रूपी भगवान ने आकर सतमार्ग बताया तथा काल से छुटवाया। जिसकी सुरति(स्वरूप) बहुत प्यारी है मन को फंसाने वाली अर्थात् मन मोहिनी है तथा सुन्दर वेश-भूषा में(जिन्दा रूप में) मुझे मिले उसको कोई नहीं पहचान सकता।

जिसने काल को भी ठग लिया अर्थात् दिखाई देता है धाणक(जुलाहा) फिर बन गया जिन्दा। काल भगवान भी भ्रम में पड़ गया भगवान(पूर्णब्रह्म) नहीं हो सकता। इसी प्रकार परमेश्वर कबीर साहेब अपना वास्तविक अस्तित्व छुपा कर एक सेवक बन कर आते हैं। काल या आम व्यक्ति पहचान नहीं सकता। इसलिए नानक जी ने उसे प्यार में ठगवाड़ा कहा है और साथ में कहा है कि वह धाणक(जुलाहा कबीर) बहुत समझदार है। दिखाई देता है कुछ परन्तु है बहुत महिमा(बहुता भार) वाला जो धाणक जुलाहा रूप में स्वयं परमात्मा पूर्ण ब्रह्म(सतपुरुष) आया है। प्रत्येक जीव को आधीनी समझाने के लिए अपनी भूल को स्वीकार करते हुए कि मैंने(नानक जी ने) पूर्णब्रह्म के साथ बहस(वाद-विवाद) की तथा उन्होनें (कबीर साहेब ने) अपने आपको भी (एक लीला करके) सेवक रूप में दर्शन दे कर तथा(नानक जी को) मुझको स्वामी नाम से सम्बोधित किया। इसलिए उनकी महानता तथा अपनी नादानी का पश्चाताप करते हुए श्री नानक जी ने कहा कि मैं(नानक जी) कुछ करने कराने योग्य नहीं था। फिर भी अपनी साधना को उत्तम मान कर भगवान से सम्मुख हुआ(ज्ञान संवाद किया)। मेरे जैसा नीच दुष्ट, हरामखोर कौन हो सकता है जो अपने मालिक पूर्ण परमात्मा धाणक रूप(जुलाहा रूप में आए करतार कबीर साहेब) को नहीं पहचान पाया? श्री नानक जी कहते हैं कि यह सब मैं पूर्ण सोच समझ से कह रहा हूँ कि परमात्मा यही धाणक (जुलाहा कबीर) रूप में है।

भावार्थ :- श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि यह फासने वाली अर्थात् मनमोहिनी शक्ल सूरत में तथा जिस देश में जाता है वैसा ही वेश बना लेता है, जैसे जिंदा महात्मा रूप में बेई नदी पर मिले, सतलोक में पूर्ण परमात्मा वाले वेश में तथा यहाँ उतर प्रदेश में धाणक(जुलाहे) रूप में स्वयं करतार (पूर्ण प्रभु) विराजमान है। आपसी वार्ता के दौरान हुई नोक-झोंक को याद करके क्षमा याचना करते हुए अधिक भाव से कह रहे हैं कि मैं अपने सत्भाव से कह रहा हूँ कि यही धाणक(जुलाहे) रूप में सत्पुरुष अर्थात् अकाल मूर्त ही है।

दूसरा प्रमाण :- नीचे प्रमाण है जिसमें कबीर परमेश्वर का नाम स्पष्ट लिखा है। श्री गु.ग्र. पष्ठ नं. 721 राग तिलंग महला पहला में है।

और अधिक प्रमाण के लिए प्रस्तुत है ''राग तिलंग महला 1'' पंजाबी गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ नं. 721

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर गोश कुन करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेएब परवरदिगार।।
दूनियाँ मुकामे फानी तहकीक दिलदानी।
मम सर मुई अजराईल गिरफ्त दिल हेच न दानी।।
जन पिसर पदर बिरादराँ कस नेस्त दस्तं गीर।
आखिर बयफ्तम कस नदारद चूँ शब्द तकबीर।।
शबरोज गशतम दरहवा करदेम बदी ख्याल।
गाहे न नेकी कार करदम मम ई चिनी अहवाल।।
बदबख्त हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक।
नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरा पाखाक।।

सरलार्थ :–– (कुन करतार) हे शब्द स्वरूपी कर्ता अर्थात् शब्द से सर्व सष्टि के रचनहार (गोश) निर्गुणी संत रूप में आए (करीम) दयालु (हक्का कबीर) सत कबीर (तू) आप (बेएब परवरदिगार) निर्विकार परमेश्वर हैं। (पेश तोदर) आपके समक्ष अर्थात् आप के द्वार पर (तहकीक) पूरी तरह जान कर (यक अर्ज गुफतम) एक हृदय से विशेष प्रार्थना है कि (दिलदानी) हे महबूब (दुनियां मुकामे) यह संसार रूपी ठिकाना (फानी) नाशवान है (मम सर मूई) जीव के शरीर त्यागने के पश्चात् (अजराईल) अजराईल नामक फरिश्ता यमदूत (गिरफ्त दिल हेच न दानी) बेरहमी के साथ पकड़ कर ले जाता है। उस समय (कस) कोई (दस्तं गीर) साथी (जन) व्यक्ति जैसे (पिसर) बेटा (पदर) पिता (बिरादरां) भाई चारा (नेस्तं) साथ नहीं देता। (आखिर बेफ्तम) अन्त में सर्व उपाय (तकबीर) फर्ज अर्थात् (कस) कोई क्रिया काम नहीं आती (नदारद चूं शब्द) तथा आवाज भी बंद हो जाती है (शबरोज) प्रतिदिन (गशतम) गसत की तरह न रूकने वाली (दर हवा) चलती हुई वायु की तरह (बदी ख्याल) बुरे विचार (करदेम) करते रहते हैं (नेकी कार करदम) शुभ कर्म करने का (मम ई चिनी) मुझे कोई (अहवाल) जरीया अर्थात् साधन (गाहे न) नहीं मिला (बदबख्त) ऐसे बुरे समय में (हम चु) हमारे जैसे (बखील) नादान (गाफील) ला परवाह (बेनजर बेबाक) भक्ति और भगवान का वास्तविक ज्ञान न होने के कारण ज्ञान नेत्र हीन था तथा ऊवा–बाई का ज्ञान कहता था। (नानक बुगोयद) नानक जी कह रहे हैं कि हे कबीर परमेश्वर आप की कपा से (तेरे चाकरां पाखाक) आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ (जनु तूरा) बंदा पार हो गया।

केवल हिन्दी अनुवाद :-- हे शब्द स्वरूपी राम अर्थात् शब्द से सर्व सष्टि रचनहार दयालु ''सतकबीर'' आप निर्विकार परमात्मा हैं। आप के समक्ष एक हृदय से विनती है कि यह पूरी तरह जान लिया है हे महबूब यह संसार रूपी ठिकाना नाशवान है। हे दाता! इस जीव के मरने पर अजराईल नामक यम दूत बेरहमी से पकड़ कर ले जाता है कोई साथी जन जैसे बेटा पिता भाईचारा साथ नहीं देता। अन्त में सभी उपाय और फर्ज कोई क्रिया काम नहीं आता। प्रतिदिन गश्त की तरह न रूकने वाली चलती हुई वायु की तरह बुरे विचार करते रहते हैं। शुभ कर्म करने का मुझे कोई जरीया या साधन नहीं मिला। ऐसे बुरे समय कलियुग में हमारे जैसे नादान लापरवाह, सत मार्ग का ज्ञान न होने से ज्ञान नेत्र हीन था तथा लोकवेद के आधार से अनाप-सनाप ज्ञान कहता रहता था। नानक जी कहते हैं कि मैं आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ बन्दा नानक पार हो गया।

*भावार्थ - **श्री गुरु नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे हक्का कबीर (सत् कबीर)! आप निर्विकार दयालु परमेश्वर हो। आप से मेरी एक अर्ज है कि मैं तो सत्यज्ञान वाली नजर रहित तथा आपके सत्यज्ञान के सामने तो निर्उत्तर अर्थात् जुबान रहित हो गया हूँ। हे कुल मालिक! मैं तो आपके दासों के चरणों की धूल हूँ, मुझे शरण में रखना।***

इसके पश्चात् जब श्री नानक जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि पूर्ण परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता प्रभु से अन्य ही है। वही पूजा के योग्य है। पूर्ण परमात्मा की भक्ति तथा ज्ञान के विषय में गीता ज्ञान दाता प्रभु भी अनभिज्ञ है। परमेश्वर स्वयं ही तत्वदर्शी संत रूप से प्रकट होकर तत्वज्ञान को जन-जन को सुनाता है। जिस ज्ञान को वेद भी नहीं जानते वह तत्वज्ञान केवल पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) ही स्वयं आकर ज्ञान कराता है। श्री नानक जी का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में होने के कारण पवित्र गीता जी के ज्ञान पर पूर्ण रूपेण आश्रित थे। फिर स्वयं प्रत्येक हिन्दू श्रद्धालु तथा ब्राह्मण गुरुओं, आचार्यों से गीता जी के सात श्लोकों के विषय में पूछते थे। सर्व गुरुजन निरुतर हो जाते थे, परन्तु श्री नानक जी के विरोधी हो जाते थे। उस समय शिक्षा का अभाव था। उन झूठे गुरुओं की दाल गलती रही। गुरुजन जनता को यह कह कर श्री नानक

जी के विरुद्ध भड़काते थे कि श्री नानक झूठ कह रहा है। गीता जी में ऐसा नहीं लिखा है कि श्री कष्ण जी से ऊपर कोई शक्ति है। कबीर प्रभु से तत्वज्ञान से परिचित होकर श्री नानक जी पवित्र मुसलमान धर्म के श्रद्धालुओं तथा काजी व मुल्लाओं तथा पीरों (गुरुओं) से पूछा करते थे कि पवित्र कुर्आन शरीफ की सूरत फुर्कानि स. 25 आयत 19, 21, 52 से 58, 59 में कुर्आन शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, सर्व पाप (गुनाहों) का नाश (क्षमा) करने वाला जिसने छः दिन में सष्टि रचना की तथा सातवें दिन तख्त पर जा विराजा, जो सर्व के पूजा(इबादिह कबीरा) योग्य है, वह कबीर परमेश्वर है। काफिर लोग (अल्लाह कबीर) कबीर प्रभु को समर्थ नहीं मानते, आप उनकी बातों में मत आना। मेरे द्वारा दिए इस कुर्आन शरीफ के ज्ञान पर विश्वास रखकर उनके साथ ज्ञान चर्चा रूपी संघर्ष करना। उस अल्लाहु अकबिर् अर्थात् अल्लाहु अकबर (कबीर प्रभु) की भक्ति तथा प्राप्ति के विषय में मैं (कुर्आन शरीफ का ज्ञान दाता प्रभु) नहीं जानता। उसके विषय में किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो। पवित्र मुसलमान धर्म के मार्ग दर्शकों से पूछा कि यह स्पष्ट है कि श्री कुर्आन शरीफ के ज्ञान दाता प्रभु (जिसे हजरत मुहम्मद जी अपना अल्लाह मानते थे) के अतिरिक्त कोई और समर्थ परमेश्वर है जिसने सारे संसार की रचना की है। वही पूजा के योग्य है। कुर्आन शरीफ का ज्ञान दाता प्रभु अपनी साधना के विषय में तो बता चुका है कि पाँच समय निमाज करो, रोजे रखो, बंग दो। फिर वही प्रभु किसी अन्य समर्थ प्रभु की पूजा के लिए कह रहा है। क्या वह बाखबर(तत्वदर्शी) संत आप किसी को मिला है ? यदि मिला होता तो यह साधना नहीं करते। इसलिए आपकी पूजा वास्तविक नहीं है। क्योंकि पूजा के योग्य पूर्ण मोक्ष दायक पाप विनाशक तो केवल कबीर नामक प्रभु है। आप प्रभु को निराकार कहते हो। कुर्आन शरीफ में सूरत फुर्कानि स. 25 आयत 58-59 में स्पष्ट किया है कि कबीर अल्लाह (कबीर प्रभु) ने छः दिन में सष्टि रची तथा ऊपर तख्त पर जा बैठा। इससे तो स्पष्ट हुआ कि कबीर नामक अल्लाह साकार है। क्योंकि निराकार के विषय में एक स्थान पर बैठना नहीं कहा जाता। इसी की पुष्टि 'पवित्र बाईबल' उत्पत्ति विषय में कहा है कि प्रभु ने छः दिन में सष्टि की रचना की तथा सातवें दिन विश्राम किया अर्थात् आकाश में जा बैठा तथा प्रभु ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया। इससे भी स्वसिद्ध है कि परमेश्वर का शरीर भी मनुष्य जैसा है अर्थात् प्रभु साकार है।

आपकी कुर्आन शरीफ सही है परन्तु आप न समझ कर अपना तथा अपने अनुयाईयों का जीवन व्यर्थ कर रहे हो। आओ आप को अल्लाह कबीर सशरीर दिखाता हूँ। बहुत से श्रद्धालु श्री नानक जी के साथ पूज्य कबीर परमेश्वर की झोपड़ी के पास गए। श्री नानक जी ने कहा कि यही है वह अल्लाहु अकबर, मान जाओ मेरी बात। परन्तु भ्रमित ज्ञान में रंगे श्रद्धालुओं को विश्वास नहीं हुआ। मुल्ला, काजी तथा पीरों ने कहा कि नानक जी झूठ बोल रहे हैं, कुर्आन शरीफ में उपरोक्त विवरण कहीं नहीं लिखा। क्योंकि सर्व समाज अशिक्षित था, वही अज्ञान अंधेरा अभी तक छाया रहा, अब तत्वज्ञान रूपी सूर्य उदय हो चुका है। गुरु ग्रन्थ साहेब, राग आसावरी, महला 1 के कुछ अंश -

साहिब मेरा एको है। एको है भाई एको है।
आपे रूप करे बहु भांती नानक बपुड़ा एव कह।। (प. 350)
जो तिन कीआ सो सचु थीआ, अमत नाम सतगुरु दीआ।। (प. 352)
गुरु पुरे ते गति मति पाई। (प. 353)
बूडत जगु देखिआ तउ डरि भागे।
सतिगुरु राखे से बड़ भागे, नानक गुरु की चरणों लागे।। (प. 414)
मैं गुरु पूछिआ अपणा साचा बिचारी राम। (प. 439)

उपरोक्त अमतवाणी में श्री नानक साहेब जी स्वयं स्वीकार कर रहे हैं कि साहिब(प्रभु) एक ही है तथा मेरे गुरु जी ने मुझे उपदेश नाम मन्त्र दिया, वही नाना रूप धारण कर लेता है अर्थात् वही सतपुरुष है वही जिंदा रूप बना लेता है। वही धाणक रूप में भी विराजमान होकर आम व्यक्ति अर्थात् भक्त की भूमिका करता है। शास्त्र विरुद्ध पूजा करके सारे जगत् को जन्म-मत्यु व कर्मफल की आग में जलते देखकर जीवन व्यर्थ होने के डर से भाग कर मैंने गुरु जी के चरणों में शरण ली।

बलिहारी गुरु आपणे दिउहाड़ी सदवार।
जिन माणस ते देवते कीए करत न लागी वार।
आपीनै आप साजिओ आपीनै रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोइ सभसै दे लैसहि जिंद कवाउ करि आसणु डिठो चाउ। (प 463)

भावार्थ है कि पूर्ण परमात्मा जिंदा का रूप बनाकर बेई नदी पर आए अर्थात् जिंदा कहलाए तथा स्वयं ही दो दुनियाँ ऊपर(सतलोक आदि) तथा नीचे(ब्रह्म व परब्रह्म के लोक) को रचकर ऊपर सत्यलोक में आकार में आसन पर बैठ कर चाव के साथ अपने द्वारा रची दुनियाँ को देख रहे हो तथा आप ही स्वयम्भू अर्थात् माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते, स्वयं प्रकट होते हो। यही प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मं. 8 में है कि कविर् मनीषि स्वयम्भू: परिभू व्यवधाता, भावार्थ है कि कबीर परमात्मा सर्वज्ञ है (मनीषि का अर्थ सर्वज्ञ होता है) तथा अपने आप प्रकट होता है। वह सनातन (परिभू) अर्थात् सर्वप्रथम वाला प्रभु है। वह सर्व ब्रह्मण्डों का (व्यवधाता)अर्थात् भिन्न-भिन्न सर्व लोकों का रचनहार है।

एहू जीउ बहुते जनम भरमिआ, ता सतिगुरु शबद सुणाइया।। (प. 465)

भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मेरा यह जीव बहुत समय से जन्म तथा मत्यु के चक्र में भ्रमता रहा अब पूर्ण सतगुरु ने वास्तविक नाम प्रदान किया।

श्री नानक जी के पूर्व जन्म - सतयुग में राजा अम्ब्रीष, त्रेतायुग में राजा जनक हुए थे और फिर नानक जी हुए तथा अन्य योनियों के जन्मों की तो गिनती ही नहीं है।

इस निम्न लेख में प्रमाणित है कि कबीर साहेब तथा नानक जी की वार्ता हुई है। यह भी प्रमाण है कि राजा जनक विदेही भी श्री नानक जी थे तथा श्री सुखदेव जी भी राजा जनक का शिष्य हुआ था।

पराण संगली (पंजाबी लीपी में) संपादक : डॉ. जगजीत सिह खानपुरी पब्लिकेशन ब्यूरो पंजाबी युनिवर्सिटी, पटियाला। प्रकाशित सन् 1961 के पष्ठ न. 399 से सहाभार

गोष्टी बाबे नानक और कबीर जी की

(कबीर जी)उह गुरु जी चरनि लागि करवै, बीनती को पुन करीअहु देवा।
अगम अपार अभै पद कहिए, सो पाईए कित सेवा।।
मुहि समझाई कहहु गुरु पूरे, भिन्न–भिन्न अर्थ दिखावहु।
जिह बिधि परम अभै पद पाईये, सा विधि मोहि बतावहु।
मन बच करम कपा करि दीजे, दीजै शब्द उचारं।।
कहै कबीर सुनहु गुरु नानक, मैं दीजै शब्द बीचारं।।1।।

(नानक जी)नानक कह सुनों कबीर जी, सिखिया एक हमारी।
तन मन जीव ठौर कह ऐकै, सुंन लागवहु तारी।।
करम अकरम दोऊँ तियागह, सहज कला विधि खेलहु।
जागत कला रहु तुम निसदिन, सतगुरु कल मन मेलहु।।
तजि माया र्निमायल होवहु, मन के तजहु विकारा।
नानक कह सुनहु कबीर जी, इह विधि मिलहु अपारा।।2।।

(कबीर जी)गुरु जी माया सबल निरबल जन तेरा, क्युं अस्थिर मन होई।
काम क्रोध व्यापे मोकु, निस दिन सुरति निरत बुध खोई।।
मन राखऊ तवु पवण सिधारे, पवण राख मन जाही।
मन तन पवण जीवैं होई एकै, सा विधि देहु बुझाई।।3।।

(नानक जी) दिढ करि आसन बैठहु वाले, उनमनि ध्यान लगावहु।
अलप–अहार खण्ड कर निन्द्रा, काम क्रोध उजावहु।।
नौव दर पकड़ि सहज घट राखो, सुरति निरति रस उपजै।
गुरु प्रसादी जुगति जीवु राखहु, इत मंथत साच निपजै।।4।।

(कबीर जी) (कबीर कवन सुखम कवन स्थूल कवन डाल कवन है मूल)
गुरु जी किया लै बैसऊ, किआ लेहहु उदासी।
कवन अग्नि की धुणी तापऊ कवन मड़ी महि बासी।।5।।

(नानक जी) (नानक ब्रह्म सुखम सुंन असथुल, मन है पवन डाल है मूल)
करम लै सोवहु सुरति लै जागहु, ब्रह्म अग्नि ले तापहु।
निस बासर तुम खोज खुजावहु, सुंन मण्डल ले डूम बापहु।।6।।
(सतगुरु कहै सुनहे रे चेला, ईह लछन परकासे)
(गुरु प्रसादि सरब मैं पेखहु, सुंन मण्डल करि वासे)

(कबीर जी) सुआमी जी जाई को कहै, ना जाई वहाँ क्या अचरज होई जाई।
मन भै चक्र रहऊ मन पूरे, सा विध देहु बताई।।7।।
(अपना अनभऊ कहऊ गुरु जी, परम ज्योति किऊं पाई।)

(नानक जी) ससी अर चड़त देख तुम लागे, ऊहाँ कीटी भिरणा होता।
नानक कह सुनहु कबीरा, इत बिध मिल परम तत जोता।।8।।

(कबीर जी) धन धन धन गुरु नानक, जिन मोसो पतित उधारो।

निर्मल जल बतलाइया मो कऊ, राम मिलावन हारो।।9।।

(नानक जी) <u>जब हम भक्त भए सुखदेवा, जनक विदेह किया गुरुदेवा।</u>

कलि महि जुलाहा नाम कबीरा, ढूंड थे चित भईआ न थीरा।।
बहुत भांति कर सिमरन कीना, इहै मन चंचल तबहु न भिना।
जब करि ज्ञान भए उदासी, तब न काटि कालहि फांसी।।
जब हम हार परे सतिगुरु दुआरे, दे गुरु नाम दान लीए उधारे।।10।।

(कबीर जी) सतगुरु पुरुख सतिगुरु पाईया, सतिनाम लै रिदै बसाईआ।

जात कमीना जुलाहा अपराधि, गुरु कपा ते भगति समाधी।।
मुक्ति भइआ गुरु सतिगुरु बचनी, गईया सु सहसा पीरा।
जुग नानक सतिगुरु जपीअ, कीट मुरीद कबीरा।।11।।
सुनि उपदेश सम्पूर्ण सतगुरु का, मन महि भया अनंद।
मुक्ति का दाता बाबा नानक, रिंचक रामानन्द।।12।।

ऊपर लिखी वाणी 'प्राण संगली' नामक पुस्तक से लिखी हैं। इसमें स्पष्ट लिखा है कि वाणी संख्या 9 तक दोहों में पूरी पंक्ति के अंतिम अक्षर मेल खाते हैं। परन्तु वाणी संख्या 10 की पाँच पंक्तियां तथा वाणी संख्या 11 की पहली दो पक्तियां चौपाई रूप में हैं तथा फिर दो पंक्तियां दोहा रूप में है तथा फिर वाणी संख्या 12 में केवल दो पंक्तियां हैं जो फिर दोहा रूप में है। इससे सिद्ध है कि वास्तविक वाणी को निकाला गया है जो वाणी कबीर साहेब जी के विषय में श्री नानक जी ने सतगुरु रूप में स्वीकार किया होगा। नहीं तो दोहों में चलती आ रही वाणी फिर चौपाईयों में नहीं लिखी जाती। फिर बाद में दोहों में लिखी है। यह सब जान-बूझ कर प्रमाण मिटाने के लिए किया है। वाणी संख्या 10 की पहली पंक्ति 'जब हम भक्त भए सुखदेवा, जनक विदेही किया गुरुदेवा' ***स्पष्ट करती है कि श्री नानक जी कह रहे हैं कि मैं जनक रूप में था उस समय मेरा शिष्य (भक्त) श्री सुखदेव ऋषि हुए थे। इस वाणी संख्या 10 को नानक जी की ओर से कही मानी जानी चाहिए तो स्पष्ट है कि नानक जी कह रहे है कि मैं हार कर गुरू कबीर के चरणों में गिर गया उन्होंने नाम दान करके उद्धार किया। वास्तव में यह 10 नं. वाणी कही अन्य वाणी से है। यह पंक्ति भी परमेश्वर कबीर साहेब जी की ओर से वार्ता में लिख दिया है। क्योंकि परमेश्वर कबीर साहेब जी ने अपनी शक्ति से श्री नानक जी को पिछले जन्म की चेतना प्रदान की थी। तब नानक जी ने स्वीकार किया था कि वास्तव में मैं जनक था तथा उस समय सुखदेव मेरा भक्त हुआ था।***

वाणी संख्या 11 में चार पंक्तियां हैं जबकि वाणी संख्या 10 में पाँच पंक्तियां लिखी हैं। वास्तव में प्रथम पंक्ति 'जब हम भक्त भए सुखदेवा ... ' वाली में अन्य तीन पंक्तियां थी, जिनमें कबीर परमेश्वर को श्री नानक जी ने गुरु स्वीकार किया होगा। उन्हें जान बूझ कर निकाला गया लगता है।

वाणी संख्या 1 व 2 में 6-6 पंक्तियाँ है, वाणी संख्या 3 व 4 में 4-4 पंक्तियाँ, वाणी संख्या 5 व 6 में 3-3 पंक्तियाँ है, वाणी संख्या 7 में 4 पंक्तियाँ हैं, वाणी संख्या 8 में 3 पंक्तियाँ है, वाणी संख्या 9 में 2 पंक्तियाँ है, वाणी संख्या 10 में 5 पंक्तियाँ हैं, वाणी संख्या 11 में 4 पंक्तियाँ है तथा

वाणी संख्या 12 में 2 पंक्तियाँ है। यदि ये वाणी पूरी होती तो सर्व वाणीयों (कलियों) में एक जैसी वाणी संख्या होती।

श्री नानक जी ने दोनों की वार्ता जो प्रभु कबीर जी से हुई थी, लिखी थी। परन्तु बाद में प्राण संगली तथा गुरु ग्रन्थ साहिब में उन वाणियों को छोड़ दिया गया जो कबीर परमेश्वर जी को श्री नानक जी का गुरुदेव सिद्ध करती थी। इसी का प्रमाण कप्या निम्न देखें। दो शब्दों में प्रत्यक्ष प्रमाण है(श्री गुरू ग्रन्थ साहेब पष्ठ 1189, 929, 930 पर)।

आगे श्री गुरु ग्रन्थ पष्ठ नं. 1189
राग बसंत महला 1

चंचल चित न पावै पारा, आवत जात न लागै बारा।
दुख घणों मरीअै करतारा, बिन प्रीतम के कटै न सारा।।1।।
सब उत्तम किस आखवु हीना, हरि भक्ति **सचनाम** पतिना(रहावु)।
औखद कर थाकी बहुतेरे, किव दुख चुकै बिन गुरु मेरे।।
बिन हर भक्ति दुःख घणोरे, दुख सुख दाते ठाकुर मेरे।।2।।
रोग वडो किंवु बांधवु धिरा, रोग बुझै से काटै पीरा।
मैं अवगुण मन माहि सरीरा, ढुडत खोजत गुरि मेले बीरा।।3।।

नोट :-- यहाँ पर स्पष्ट है कि अक्षर कबीरा की जगह 'गुरु मेले बीरा' लिखा है। जबकि लिखना था 'ढुंडत खोजत गुरि मेले कबीरा'

गुरु का शब्द दास हर नावु, जिवै तू राखहि तिवै रहावु।
जग रोगी कह देखि दिखाऊ, हरि निमाईल निर्मल नावु।।4।।
घट में घर जो देख दिखावै, गुरु महली सो महलि बुलावै।
मन में मनुवा चित्त में चीता, अैसे हर के लोग अतीता।।5।।
हरख सोग ते रहैहि निरासा, अमत चाख हरि नामि निवासा।।
आप पीछाणे रह लिव लागा, जनम जीति गुरुमति दुख भागा।।6।।
गुरु दिया सच अमत पिवैऊ, सहज मखु जीवत ही जीवऊ।
अपणे करि राखहु गुरु भावै, तुमरो होई सु तुझहि समावै।।8।।
भोगी कऊ दुःख रोग बिआपै, घटि–घटि रवि रहिया प्रभु आपै।
सुख दुःख ही तै गुरु शब्द अतीता, नानक राम रमै हरि चीता।।9(4)।।

इस ऊपर के शब्द में प्रत्यक्ष प्रमाण है कि श्री नानक जी का कोई आकार रूप में गुरु था जिसने सच्चनाम (सतनाम) दिया तथा उस गुरुदेव को ढूंडते-खोजते काशी में कबीर गुरु मिला तथा वह सतनाम प्राणियों को कर्म-कष्ट रहित करता है तथा हरदम गुरु के वचन में रह कर गुरुदेव द्वारा दिए सत्यनाम (सच्चनाम) का जाप करते रहना चाहिए।

राग रामकली महला 1 दखणी औंकार
गुरु ग्रन्थ पष्ठ नं. 929-30

औंकार ब्रह्मा उत्पति। औंकार किया जिन चित।।
औंकार सैल जुग भए। औंकार वेद निरमए।।
औंकार शब्द उधरे। औंकार गुरु मुख तरे।।

ओंम अखर सुन हुँ विचार। ओम अखर त्रिभूवण सार।।
सुण पाण्डे किया लिखहु जंजाला, लिख राम नाम गुरु मुख गोपाला।।1।।रहाऊ।।
ससै सभ जग सहज उपाइया, तीन भवन इक जोती।
गुरु मुख वस्तु परापत होवै, चुण लै मानक मोती।।
समझै सुझै पड़ि–पड़ि बुझै अति निरंतर साचा।
गुरु मुख देखै साच समाले, बिन साचे जग काचा।।2।।
धधै धरम धरे धरमा पुरि गुण करी मन धीरा। {ग्रन्थ साहेब में एक ही पंक्ति है।}

यहाँ पंक्ति अधूरी(अपूर्ण) छोड़ रखी है। प्रत्येक पंक्ति में अंतिम अक्षर दो एक जैसे है। जैसे ऊपर लिखी वाणी में ''ज्योति'' फिर दूसरी में ''मोती''। फिर ''साचा'' दूसरी में ''काचा''। यहाँ पर ''धीरा'' अंतिम अक्षर वाली एक ही पंक्ति है। इसमें साहेब कबीर का नाम प्रत्यक्ष था जो कि मान वस होकर ग्रन्थ की छपाई करते समय निकाल दी गई है(छापाकारों ने काटा होगा, संत कभी ऐसी गलती नहीं करते) क्योंकि कबीर साहेब जुलाहा जाति में माने जाते हैं जो उस समय अछूत जानी जाती थी। कहीं गुरु नानक जी का अपमान न हो जाए कि एक जुलाहा नानक जी का पूज्य गुरु व भगवान था।

फिर प्रमाण है ''राग बसंत महला पहला'' पौड़ी नं. 3 आदि ग्रन्थ(पंजाबी) पष्ठ नं. 1188

नानक हवमों शब्द जलाईया, सतगुरु साचे दरस दिखाईया।।

इस वाणी से भी अति स्पष्ट है कि नानक जी कह रहे हैं कि सत्यनाम (सत्यशब्द) से विकार-अहम्(अभिमान) जल गया तथा मुझे सच्चे सतगुरु ने दर्शन दिए अर्थात् मेरे गुरुदेव के दर्शन हुए। स्पष्ट है कि नानक जी को कोई सतगुरु आकार रूप में अवश्य मिला था। वह ऊपर तथा नीचे पूर्ण प्रमाणित है। स्वयं कबीर साहेब पूर्ण परमात्मा(अकाल मूर्त) स्वयं सच्चखण्ड से तथा दूसरे रूप में काशी बनारस से आकर प्रत्यक्ष दर्शन देकर सच्चखण्ड (सत्यलोक) भ्रमण करवा के सच्चा नाम उपदेश काशी (बनारस) में प्रदान किया।

आदरणीय गरीबदास जी महाराज {गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर(हरियाणा)} को भी परमेश्वर कबीर जिन्दा महात्मा के रूप में जंगल में मिले थे। इसी प्रकार सतलोक दिखा कर वापिस छोड़ा था। परमेश्वर ने बताया कि मैंने ही श्री नानक जी तथा श्री दादू जी को पार किया था। जब श्री नानक जी ने पूर्ण परमात्मा को सतलोक में भी देखा तथा फिर बनारस (काशी) में जुलाहे का कार्य करते देखा तब उमंग में भरकर कहा था ''वाहेगुरु सत्यनाम'' वाहेगुरु-वाहेगुरु तथा इसी उपरोक्त वाक्य का उच्चारण करते हुए काशी से वापिस आए। जिसको श्री नानक जी के अनुयाईयों ने जाप मंत्र रूप में जाप करना शुरु कर दिया कि यह पवित्र मंत्र श्री नानक जी के मुख कमल से निकला था, परन्तु वास्तविकता को न समझ सके। अब उन से कौन छुटाए, इस नाम के जाप को जो सही नहीं है। क्योंकि वास्तविक मंत्र को बोलकर नहीं सुनाया जाता। उसका सांकेतिक मंत्र 'सत्यनाम' है तथा वाहे गुरु कबीर परमेश्वर को कहा है। इसी का प्रमाण संत गरीबदास साहेब ने अपने सतग्रन्थ साहेब में फुटकर साखी का अंग पष्ठ न. 386 पर दिया है।

गरीब – झांखी देख कबीर की, नानक कीती वाह।

वाह सिक्खों के गल पड़ी, कौन छुटावै ताह।।
गरीब – हम सुलतानी नानक तारे, दादू कुं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, कांशी माहे कबीर हुआ।।

प्रमाण के लिए ''जीवन दस गुरु साहिबान'' पष्ठ न. 42 से 44 तक (लेखक - सोढी तेजा सिंघ जी) - (प्रकाशक - चतर सिंघ जीवन सिंघ)

बेई नदी में प्रवेश

"जीवन दस गुरु साहेब से ज्यों का त्यों सहाभार"

गुरु जी प्रत्येक प्रातः बेई नदी में जो कि शहर सुलतानपुर के पास ही बहती है, स्नान करने के लिए जाते थे। एक दिन जब आपने पानी में डुबकी लगाई तो फिर बाहर न आए। कुछ समय ऊपरान्त आप जी के सेवक ने, जो कपड़े पकड़ कर नदी के किनारे बैठा था, घर जाकर जै राम जी को खबर सुनाई कि नानक जी डूब गए हैं तो जै राम जी तैराकों को साथ लेकर नदी पर गए। आप जी को बहुत ढूंढा किन्तु आप नहीं मिले। बहुत देखने के पश्चात् सब लोग अपने अपने घर चले गए।

भाई जैराम जी के घर बहुत चिन्ता और दुःख प्रकट किया जा रहा था कि तीसरे दिन सवेरे ही एक स्नान करने वाले भक्त ने घर आकर बहिन जी को बताया कि आपका भाई नदी के किनारे बैठा है। यह सुनकर भाईआ जैराम जी बेई की तरफ दौड़ पड़े और जब जब पता चलता गया और बहुत से लोग भी वहाँ पहुँच गए। जब इस तरह आपके चारों तरफ लोगों की भीड़ लग गई आप जी चुपचाप अपनी दुकान पहुँच गए। आप जी के साथ स्त्री और पुरूषों की भीड़ दुकान पर आने लगी। लोगों की भीड़ देख कर गुरु जी ने मोदीखाने का दरवाजा खोल दिया और कहा जिसको जिस चीज की जरूरत है वह उसे ले जाए। मोदीखाना लुटाने के पश्चात् गुरु जी फकीरी चोला पहन कर शमशानघाट में जा बैठे। मोदीखाना लुटाने और गुरु जी के चले जाने की खबर जब नवाब को लगी तो उसने मुंशी द्वारा मोदीखाने की किताबों का हिसाब जैराम को बुलाकर पड़ताल करवाया। हिसाब देखने के पश्चात् मुंशी ने बताया कि गुरु जी के सात सौ साठ रूपये सरकार की तरफ अधिक हैं। इस बात को सुनकर नवाब बहुत खुश हुआ। उसने गुरु जी को बुलाकर कहा कि उदास न हो। अपना फालतू पैसा और मेरे पास से ले कर मोदीखाने का काम जारी रखें। पर गुरु जी ने कहा अब हमने यह काम नहीं करना हमें कुछ और काम करने का भगवान् की तरफ से आदेश हुआ है। नवाब ने पूछा क्या आदेश हुआ है ? तब गुरु जी ने मूल–मंत्र उच्चारण किया।

1 ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू
अकाल मूरति अजूनी सब गुरप्रसादि।

नवाब ने पूछा कि यह आदेश आपके भगवान् ने कब दिया ? गुरु जी ने बताया कि जब हम बेई में स्नान करने गए थे तो वहाँ से हम सच्चखण्ड अपने स्वामी के पास चले गए थे वहाँ हमें आदेश हुआ कि नानक जी यह मंत्र आप जपो और बाकियों को जपा कर कलयुग के लोगों को पार लगाओ। इसलिए अब हमें अपने मालिक के इस हुक्म की पालना करनी है। इस सन्दर्भ को भाई गुरदास जी वार 1 पउड़ी 24 में लिखते हैं–
बाबा पैधा सचखण्ड नउनिधि नाम गरीबी पाई।।

अर्थात्–बाबा नानक जी सचखण्ड गए। वहाँ आप को नौनिधियों का खजाना नाम और निर्भयता प्राप्त हुई। यहाँ बेई किनारे जहाँ गुरु जी बेई से बाहर निकल कर प्रकट हुए थे, गुरु द्वारा संत घाट अथवा गुरुद्वारा बेर साहिब, बहुत सुन्दर बना हुआ है। इस स्थान पर ही गुरु जी प्रातः स्नान करके कुछ समय के लिए भगवान् की तरफ ध्यान करके बैठते थे।

जीवन दस गुरु साहेब नामक पुस्तक से लेख समाप्त

"पवित्र कबीर सागर में प्रमाण"

विशेष विचार :- *पूरे गुरु ग्रन्थ साहेब में कहीं प्रमाण नहीं है कि श्री नानक जी, परमेश्वर कबीर जी के गुरु जी थे। जैसे गुरु ग्रन्थ साहेब आदरणीय तथा प्रमाणित है, ऐसे ही पवित्र कबीर सागर भी आदरणीय तथा प्रमाणित सद्ग्रन्थ है तथा श्री गुरुग्रन्थ साहेब से पहले का है। इसीलिए तो लगभग चार हजार वाणी 'कबीर सागर' सद्ग्रन्थ से गुरु ग्रन्थ साहिब में ली गई हैं।*

पवित्र कबीर सागर में विस्तत विवरण है नानक जी तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी की वार्ता का तथा श्री नानक जी के पूज्य गुरुदेव कबीर परमेश्वर जी थे। कप्या निम्न पढ़ें।

विशेष प्रमाण के लिए कबीर सागर (स्वसमबेदबोध) पष्ठ न. 158 से 159 से सहाभार :-

नानकशाह कीन्हा तप भारी। सब विधि भये ज्ञान अधिकारी।।
भक्ति भाव ताको समिझाया। तापर सतगुरु कीनो दाया।।
जिंदा रूप धरयो तब भाई। हम पंजाब देश चलि आई।।
अनहद बानी कियौ पुकारा। सुनिकै नानक दरश निहारा।।
सुनिके अमर लोकको बानी। जानि परा निज समरथ ज्ञानी।।

नानक वचन

आवा पुरूष महागुरु ज्ञानी। अमरलोकी सुनी न बानी।।
अर्ज सुनो प्रभु जिंदा स्वामी। कहँ अमरलोक रहा निजधामी।।
काहु न कही अमर निजबानी। धन्य कबीर परमगुरु ज्ञानी।।
कोई न पावै तुमरो भेदा। खोज थके ब्रह्मा चहुँ वेदा।।

जिन्दा वचन

नानक तव बहुतै तप कीना। निरंकार बहुते दिन चीन्हा।।
निरंकारते पुरूष निनारा। अजर द्वीप ताकी टकसारा।।
पुरूष बिछोह भयौ तव जबते। काल कठिन मग रोंक्यौ तबते।।
इत तव सरिस भक्त नहिं होई। क्यों कि परमपुरूष न भेटेंउ कोई।।
जबते हमते बिछुरे भाई। साठि हजार जन्म भक्त तुम पाई।।
धरि धरि जन्म भक्ति भलकीना। फिर काल चक्र निरंजन दीना।।
गहु मम शब्द तो उतरो पारा। बिन सत शब्द लहै यम द्वारा।।
तुम बड़ भक्त भवसागर आवा। और जीवकी कौन चलावा।।
निरंकार सब सष्टि भुलावा। तुम करि भक्तिलौटि क्यों आवा।।

नानक वचन

धन्य पुरूष तुम यह पद भाखी। यह पद हमसे गुप्त कह राखी।।
जबलों हम तुमको नहिं पावा। अगम अपार भर्म फैलावा।।
कहो गोसाँई हमते ज्ञाना। परमपुरूष हम तुमको जाना।।
धनि जिंदा प्रभु पुरूष पुराना। बिरले जन तुमको पहिचाना।।

जिन्दा वचन

भये दयाल पुरूष गुरु ज्ञानी। दियो पान परवाना बानी।।
भली भई तुम हमको पावा। सकलो पंथ काल को ध्यावा।।

तुम इतने अब भये निनारा। फेरि जन्म ना होय तुम्हारा।।
भली सुरति तुम हमको चीन्हा। अमर मंत्र हम तुमको दीन्हा।।
स्वसमवेद हम कहि निज बानी। परमपुरूष गति तुम्हैं बखानी।।

नानक वचन

धन्य पुरूष ज्ञानी करतारा। जीवकाज प्रकटे संसारा।।
धनि करता तुम बंदी छोरा। ज्ञान तुम्हार महाबल जोरा।।
दिया नाम दान किया उबारा। नानक अमरलोक पग धारा।।

भावार्थ :- परम पूज्य कबीर प्रभु एक जिन्दा महात्मा का रूप बना कर श्री नानक जी से (पश्चिमी पाकिस्तान उस समय पंजाब प्रदेश हिन्दूस्तान का ही अंश था) मिलने पंजाब में गए तब श्री नानक साहेब जी से वार्ता हुई। तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि आप जैसी पुण्यात्मा जन्म-मत्यु का कष्ट भोग रहे हो फिर आम जीव का कहाँ ठिकाना है? जिस निरंकार को आप प्रभु मान कर पूज रहे हो पूर्ण परमात्मा तो इससे भी भिन्न है। वह मैं ही हूँ। जब से आप मेरे से बिछुड़े हो साठ हजार जन्म तो अच्छे-2 उच्च पद भी प्राप्त कर चुके हो जैसे सतयुग में यही पवित्र आत्मा राजा अम्ब्रीष तथा त्रेतायुग में राजा जनक(जो सीता जी के पिता जी थे) हुए तथा कलियुग में श्री नानक साहेब जी हुए। फिर भी जन्म मत्यु के चक्र में ही हो। मैं आपको सतशब्द अर्थात् सच्चा नाम जाप मन्त्र बताऊंगा उससे आप अमर हो जाओगे। श्री नानक साहेब जी ने प्रभु कबीर से कहा कि आप बन्दी छोड़ भगवान हो, आपको कोई बिरला सौभाग्यशाली व्यक्ति ही पहचान सकता है।

अमतवाणी कबीर सागर (अगम निगम बोध, बोध सागर से) पष्ठ नं. 44

।।नानक वचन।।

।।शब्द।।

वाह वाह कबीर गुरु पूरा है।
पूरे गुरु की मैं बलि जावाँ जाका सकल जहूरा है।।
अधर दुलिच परे है गुरुनके शिव ब्रह्मा जह शूरा है।।
श्वेत ध्वजा फहरात गुरुनकी बाजत अनहद तूरा है।।
पूर्ण कबीर सकल घट दरशै हरदम हाल हजूरा है।।
नाम कबीर जपै बड़भागी नानक चरण को धूरा है।।

विशेष विवेचन :- बाबा नानक जी ने उस कबीर जुलाहे (धाणक) काशी वाले को सत्यलोक (सच्चखण्ड) में आँखों देखा तथा फिर काशी में धाणक (जुलाहे) का कार्य करते हुए तथा बताया कि वही धाणक रूप (जुलाहा) सत्यलोक में सत्यपुरुष रूप में भी रहता है तथा यहाँ भी वही है।

श्री नानक जी ने बचपन में श्री बजलाल पाण्डे जी से गीता जी को समझा था। पूर्ण परमेश्वर कबीर जी के दर्शन के पश्चात् उन्हीं से प्राप्त तत्वज्ञान के आधार से उसी पाण्डे से गीता जी के सात श्लोकों के विषय में पूछा। श्री बजलाल पाण्डा निरूतर हो गया। अपनी बेइज्जती जान कर श्री नानक जी से ईर्ष्या करने लगा तथा श्री नानक जी के माता-पिता को तथा अन्य हिन्दूओं

को कहा कि श्री नानक तो अपने भगवानों का अपमान करता है। जिससे लोगों ने श्री नानक जी की बातों को ध्यान से नहीं सुना। वे सात श्लोक निम्न हैं -

श्री बजलाल पाण्डे से श्री नानक जी ने पूछा आप कहते हो कि गीता जी का ज्ञान श्री कष्ण जी ने बोला तथा श्री कष्ण जी ही श्री विष्णु अवतार हैं। श्री विष्णु जी अजन्मा, सर्वेश्वर, अविनाशी हैं। इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। आप यह भी कहते हो कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव है। यही त्रिगुण माया है। परन्तु गीता ज्ञान दाता प्रभु (1). गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में तथा (2). अध्याय 4 श्लोक 5 में अपने आप को नाशवान कह रहा है कि मेरे तो जन्म तथा मत्यु होते हैं तथा (3). अध्याय 15 श्लोक 4 तथा (4). अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता प्रभु किसी अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहा है तथा उसी की साधना से सर्व सुख तथा पूर्ण मोक्ष संभव है। मैं (गीता ज्ञान दाता) भी उसी की शरण में हूँ। (5). गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि जिनका ज्ञान त्रिगुण माया के द्वारा हरा जा चुका है। भावार्थ है कि जो साधक तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की पूजा करते हैं। इनसे अन्य प्रभु की साधना नहीं करते। जिनकी बुद्धि इन्हीं तक सीमित है वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले, मूर्ख मुझे नहीं भजते। उपरोक्त तीनों प्रभुओं (गुणों) की पूजा मना है। फिर गीता ज्ञान दाता ब्रह्म (काल) (6). अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना को (अनुत्तमाम्) अति घटिया कह रहा है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि पूर्ण मोक्ष तथा परम शान्ति के लिए उस परमेश्वर की शरण में जा, (7). गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में प्रमाण है कि उसके लिए किसी तत्वदर्शी संत की खोज कर। मैं उस परमात्मा के विषय में पूर्ण जानकारी नहीं रखता। उसी तत्वदष्टा संत द्वारा बताए ज्ञान अनुसार उस परमेश्वर की भक्ति कर। यही प्रश्न परमेश्वर कबीर साहेब जी ने श्री नानक जी से बेई दरिया के किनारे किया था। जिस तत्वज्ञान को समझ कर तथा कबीर परमेश्वर के सतपुरुष रूप में सतलोक (सच्चखण्ड) में तथा धाणक रूप में बनारस (काशी में) दर्शन करके समर्पण करके तत्वज्ञान को जन-जन तक पहुँचाया तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया।

विशेष :- पवित्र सिक्ख समाज इस बात से सहमत नहीं है कि श्री नानक साहेब जी के गुरु जी काशी वाला धाणक (जुलाहा) कबीर साहेब जी थे। इसके विपरीत श्री नानक साहेब जी को पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब जी का गुरु जी कहा है। परन्तु श्री नानक साहेब जी के पूज्य गुरु जी का नाम क्या है? इस विषय में पवित्र सिक्ख समाज मौन है, जबकि स्वयं श्री गुरु नानक साहेब जी श्री गुरु ग्रन्थ साहेब जी में महला 1 की अमतवाणी में स्वयं स्वीकार करते हैं कि मुझे गुरु जी जिंदा रूप में आकार में मिले। वही धाणक(जुलाहा) रूप में सत् कबीर (हक्का कबीर) नाम से पथ्वी पर भी थे तथा ऊपर अपने सच्चखण्ड में भी वही विराजमान है जिन्होंने मुझे अमत नाम प्रदान किया।

आदरणीय श्री नानक साहेब जी का आविर्भाव सन् 1469 तथा सतलोक वास सन् 1539 ''पवित्र पुस्तक जीवनी दस गुरु साहिबान''। आदरणीय कबीर साहेब जी धाणक रूप में

मतमण्डल में सन् 1398 में सशरीर प्रकट हुए तथा सशरीर सतलोक गमन सन् 1518 में ''पवित्र कबीर सागर''। दोनों महापुरुष 49 वर्ष तक समकालीन रहे। श्री गुरु नानक साहेब जी का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में हुआ। प्रभु प्राप्ति के बाद कहा कि ''न कोई हिन्दू न मुसलमाना'' अर्थात् अज्ञानतावश दो धर्म बना बैठे। सर्व एक परमात्मा सतपुरुष के बच्चे हैं। श्री नानक देव जी ने कोई धर्म नहीं बनाया, बल्कि धर्म की बनावटी जंजीरों से मानव को मुक्त किया तथा शिष्य परम्परा चलाई। जैसे गुरुदेव से नाम दीक्षा लेने वाले भक्तों को शिष्य बोला जाता है, उन्हें पंजाबी भाषा में सिक्ख कहने लगे। जैसे आज इस दास के लगभग सात-आठ लाख शिष्य हैं, परन्तु यह धर्म नहीं है। सर्व पवित्र धर्मों की पुण्यात्माऐं आत्म कल्याण करवा रही हैं। यदि आने वाले समय में कोई धर्म बना बैठे तो वह दुर्भाग्य ही होगा। भेदभाव तथा संघर्ष की नई दीवार ही बनेगी, परन्तु लाभ कुछ नहीं होगा।

विशेष :- केवल एक ही बात को ''कि कौन किसका गुरु तथा कौन किसका शिष्य है'' वाद-विवाद का विषय न बना कर सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए। कुछ देर के लिए श्री नानक साहेब जी को परमात्मा कबीर साहेब (कविर्देव) जी का गुरु जी मान लें। यह विचार करें कि इन महापुरुषों ने गुरु-शिष्य की भूमिका करके हमें कितनी अनमोल वाणी रच कर दी हैं तथा हम कितना उनका अनुशरण कर पा रहे हैं।

आज किसी व्यक्ति का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में है, वह अपनी साधना तथा इष्ट को सर्वोच्च मान रहा है। मत्यु उपरान्त उसी पुण्यात्मा का जन्म पवित्र सिक्ख धर्म में हुआ तो फिर वह उसी साधना को उत्तम मान कर निश्चिंत हो जाएगा, फिर पवित्र मुसलमान धर्म में जन्म मिला तो उपरोक्त साधनाओं के विपरीत पूजा पर आरूढ़ होगा तथा फिर पवित्र ईसाई धर्म में जन्म हुआ तो केवल उसी पूजा पर आधारित हो जाएगा। फिर कभी पवित्र आर्य समाज में वही पुण्यात्मा जन्म लेगी तो केवल हवन यज्ञ करने को ही मुक्ति मार्ग कहेगा। यदि वही पुण्यात्मा पवित्र जैन धर्म में पहुँचेगी तो हो सकता है निवस्त्र रह कर या मुख पर कपड़ा बांध कर नंगे पैरों चलना ही मुक्ति का अन्तिम साधन होगा। उपरोक्त जन्म पूर्ण परमात्मा की भक्ति न मिलने तक होते रहेंगे, क्योंकि द्वापर युग तक अपने पूर्वज एक ही थे तथा वेदों अनुसार पूजा करते थे, अन्य धर्मों की स्थापना नहीं हुई थी। जब श्री गुरु गोबिन्द साहेब जी ने पाँच प्यारों को चुना उनमें से 1. श्री दयाराम जी लाहौर के खत्री परिवार से हिन्दू थे। 2. श्री धर्मदास जी इन्द्रप्रस्थ(दिल्ली) के जाट(हिन्दू) थे। 3. भाई मुहकम चन्द जी 'छीबे' हिन्दू द्वारका वासी 4. भाई साहिब चन्द जी 'नाई' हिन्दू बीदर निवासी 5. भाई हिम्मतमल जी 'झींवर' हिन्दू जगन्नाथ पुरी (उड़ीसा) निवासी थे(''जीवन दस गुरु साहिबान'' लेखक सोढ़ी तेजा सिंह, प्रकाशक भाई चतर सिंघ, जीवन सिंघ अमतसर, पष्ठ नं. 343-344)। इसलिए अपने संस्कार मिले-जुले हैं। भले ही उपरोक्त पंच प्यारे उस समय अपनी भक्ति साधना गुरुग्रन्थ साहेब के अनुसार गुरूओं की आज्ञा अनुसार कर रहे थे परन्तु सर्व हिन्दू समाज से सम्बन्ध रखते थे। उस समय गुरूओं के अनुयाईयों को सिक्ख कहते थे। हिन्दी भाषा में शिष्य कहते हैं। इस कारण से एक अलग भक्ति मार्ग पर चलने वाले जन समूह को सिक्ख कहने लगे। अब यह एक अलग धर्म का रूप धारण कर गया है।

जैसे वर्तमान में कई पंथों के लाखों अनुयाई हैं। उनको भी अन्य नामों से सम्बोधित किया जाता है। जैसे राधास्वामी पंथ के अनुयाईयों को कहते हैं ये तो राधास्वामी हैं। परन्तु ये सर्व धर्मों के व्यक्त्यिों का समूह है। हो सकता है आने वाले समय में यह एक अलग धर्म का रूप धारण करले परन्तु वर्तमान में अधिकतर हिन्दू समाज और सिक्ख समाज के व्यक्ति हैं।

जो व्यक्ति मांस आहार, मदिरापान तथा अन्य नशीली वस्तु जैसे तम्बाकु(बीड़ी, सिगरेट, हुक्का आदि में) सेवन करता है तथा लूट-खसौट, जीव हिंसा करता है तथा बहन-बेटियों को बुरी नजर से देखता है वह न तो हिन्दू है - न मुसलमान - न सिक्ख - न ईसाई। क्या उपरोक्त बुराई करने का सर्व पवित्र धर्मों के सद्ग्रन्थों में विवरण है? नहीं। उपरोक्त बुराई युक्त व्यक्ति कभी प्रभु प्राप्ति नहीं कर सकता तथा न ही वह धार्मिक हो सकता।

एक समय यह दास एक दोस्त सिक्ख अधिकारी के साथ किसी सिक्ख की शादी में गया। वहाँ पर श्री गुरु ग्रन्थ साहेब जी के अखण्ड पाठ का भोग पड़ा। सर्व उपस्थित व्यक्तियों ने प्रसाद लिया। फिर खाना खाने के लिए साथ में ही लगे टैंट में प्रवेश हुए। जहाँ पवित्र अमतवाणी का भोग पड़ा था तथा जहाँ खाना खाया, दोनों के बीच केवल कनात(कपड़ा) लगी थी। खाने को मांस तथा पीने को मदिरा सरे आम थी। जो पाठ कर रहे थे वे भी सर्व प्रथम उसी आहार को प्रेम पूर्वक कर रहे थे। इसलिए सर्व प्रथम हिन्दू तो हिन्दू बनें, मुसलमान बनें मुसलमान, ईसाई बनें ईसाई तथा सिक्ख बनें सिक्ख। फिर हम प्रभु भक्ति करने योग्य होंगे। प्रभु साधना भी अपने सद्ग्रन्थों में वर्णित विधि अनुसार करने से प्रभु प्राप्ति होगी अन्यथा मानव शरीर व्यर्थ हो जाएगा।

हम एक कुल मालिक की संतान हैं। सत्ज्ञान न होने से हिन्दू-मुसलमान के झगड़े, हिन्दू-सिक्ख के झगड़े, मुसलमान-ईसाई के झगड़े धर्म के श्रेष्ठता और अश्रेष्ठता के कारण हैं। विश्व युद्ध में भी इतना रक्तपात नहीं हुआ होगा, जितना धर्म के खतरे की आड़ में हो चुका है। धार्मिकता के खतरे की तरफ ध्यान न देने से अनेक बुराईयां सर्व पवित्र धर्मो में घर कर चुकि हैं। सर्व पवित्र धर्मो में एक प्रतिशत व्यक्ति होते हैं जो 99 प्रतिशत को आपस में लड़वा कर मरवा देते हैं। इसके विपरीत हिन्दू-हिन्दू को मार रहा है, सिक्ख-सिक्ख को काट रहा है, मुसलमान - मुसलमान को परेशान कर रहा है, ईसाई - ईसाई का दुश्मन बना हुआ है, आर्य समाजी - आर्य समाजी पर ही मुकद्मे किए बैठा है, कबीर पंथी - कबीर पंथियों के दुश्मन बने हैं तथा अन्य आश्रमों तथा डेरों के महन्तों व सन्तों के आपस में कत्ले आम तथा मुकद्में तत्वज्ञान के अभाव के कारण ही हो रहे हैं।

मुझ दास का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में हुआ तथा वर्तमान में जो भी पूजाएें उपलब्ध थी सभी कर रहा था। सन् 1988 में तत्वदर्शी संत परम पूज्य स्वामी रामदेवानन्द जी महाराज के दर्शन हुए। उन्होंने जब मुझे यह शास्त्र आधारित तत्वज्ञान सुनाया, प्रथम बार ऐसा लगा जैसे किसी नास्तिक से मिलन हो गया हो और मन में आया कि ऐसे व्यक्ति के तो दर्शन भी व्यर्थ होते हैं जो हमारे देवी-देवताओं, ब्रह्मा-विष्णु-महेश तथा ब्रह्म से भी ऊपर कोई शक्ति बता रहा है। जब इस दास ने महाराज जी के द्वारा बताए शास्त्रों का अध्ययन उनकी पोल खोलने के लिए किया

तो मेरी ही पोल खुल गई कि मैं सर्व साधना अपने ही पवित्र शास्त्रों (पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों) के विरूद्ध ही कर रहा था। अब दास की प्रार्थना है कि सर्व भक्तजनों को एक बार अवश्य खेद होगा, परन्तु उपरोक्त सद्ग्रन्थों को प्रभु को साक्षी रख कर पुनर् पढें तथा मुझ दास के पास सर्व पवित्र धर्मों के सदग्रन्थों के आधार पर वास्तविक भक्ति मार्ग है। निःशुल्क उपदेश प्राप्त करके अपना तथा अपने प्यारे परिवार का कल्याण करवायें।

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, आपस में हैं भाई–भाई। आर्य, जैनी और बिश्नोई, एक प्रभु के बच्चे सोई।।
कबीरा खड़ा बाजार में, सब की माँगे खैर। ना काहूँ से दोस्ती, ना काहूँ से बैर।।

- संत रामपाल दास

।।गीता का ज्ञान सुनने व सुनाने वाले भी काल जाल में।।

अध्याय 18 के श्लोक 67 से 71 में लिखा है कि अर्जुन यह मेरा गीता ज्ञान अश्रद्धालुओं को नहीं कहना चाहिए तथा जो भक्त श्रद्धा से सुने उन्हें सुनाए उन्हें गीता ज्ञान सुनाने वाला व्यक्ति भी मुझे (काल के मुख में आजाएगा) ही प्राप्त होगा। क्योंकि इनका उपास्य देव (इष्ट) मैं (काल) ही होऊँगा। क्योंकि धार्मिक शास्त्र व ग्रन्थ पढ़ने से ज्ञान यज्ञ हो जाती है। उसका कुछ समय स्वर्ग में फल भोग कर फिर चौरासी लाख जूनियों व नरक का चक्र सदा बना रहेगा। अध्याय 18 के श्लोक 72 में काल भगवान कह रहा है कि क्या गीता को तूने एक चित हो कर सुना है? हे धनंजय! क्या तेरा अज्ञान जनित मोह नष्ट हो गया? भाव यह है कि क्या अर्जुन तुझे ज्ञान हो गया और तेरा संसार से मोह हटा या नहीं? क्या आया समझ में अर्थात् क्या फैसला किया?

अध्याय 18 के श्लोक 73 में अर्जुन ने कहा हे भगवन् ! आप की कप्या से मेरा मोह नष्ट हो गया और मुझे ज्ञान हो गया है। संस्य रहित हो कर स्थित हूँ और आप जो कहोगे वही करूँगा। अर्जुन (विवश तथा अन्य कोई विकल्प न देख कर सोचा कि मरना तो है ही, युद्ध न करूंगा तो यह काल मारेगा। यदि एक बार फिर वही रूप दिखा दिया तो अभी भय से जीवन लीला समाप्त हो जाएगी। हो सकता है युद्ध जीत जाएँ तो राज तो करलेगें) बोला भगवान आ गई समझ में। आपकी शरण हूँ तथा आपकी जो आज्ञा वही करूंगा अर्थात् युद्ध करूंगा।

यहाँ एक बात विशेष विचारणीय है कि अर्जुन कह रहा है कि मैं आप की शरण में हूँ। जो आप कहोगे वही करूँगा। काल भगवान अध्याय 18 के श्लोक 65 में कह रहा है कि तू मेरी शरण रह। मुझे आदर पूर्वक प्रणाम कर। मेरे में मन वाला बन फिर मुझे ही प्राप्त होगा। मैं सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ। तू चिंता मत कर। महाभारत में प्रमाण है कि पाँचों पाण्डव नरक में डाले गए। युधिष्ठिर कम समय के लिए। युधिष्ठिर ने पुण्य दिए तब वे नरक से छुटे। भगवन के वे वचन जो अध्याय 18 के श्लोक 65 में कहे थे, उनका क्या बना?

अध्याय 18 के श्लोक 74 से 78 तक संजय धतराष्ट्र के दिल को दहला रहा है, कह रहा है कि जिसके पक्ष में श्री कष्ण है वे (पाण्डव) तो निसंदेह विजयी होंगे। धतराष्ट्र की छाती पर पहले ही पहाड़ रख दिया। गीता सुन कर धतराष्ट्र कितना चिंतित हुआ होगा। शांति तो दूर रही चूंकि श्री

कष्ण पाण्डवों के पक्ष में थे जिसका परिणाम धतराष्ट्र के पुत्रों की हार निश्चित थी। श्री मद्भगवत् गीता जी का ज्ञान अर्जुन ने तथा धतराष्ट्र ने अत्यन्त श्रद्धा से सुना। उसके पश्चात् दोनों का अन्त दुःखदाई हुआ। इस से सिद्ध हुआ की केवल गीता के ज्ञान को श्रद्धा से सुनने व सुनाने मात्र से लाभ नहीं अपितु उस के ज्ञानानुसार कर्म साधना करने से लाभ होगा।

।।श्री मद्भगवत् गीता जी के कुछ श्लोक।।

अध्याय 7 का श्लोक 12

ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्त्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मत्तः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं। (12)

केवल हिन्दी अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा (विद्धि) जान परंतु वास्तवमें उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं। (12)

अध्याय 7 का श्लोक 13

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,
मोहितम्, न अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम्।।13।।

अनुवाद : (एभिः) इन (गुणमयैः) गुणोंके कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से (त्रिभिः) तीनों प्रकारके (भावैः) भावोंसे (इदम्) यह (सर्वम्) सारा (जगत्) संसार — प्राणिसमुदाय (माम्) मुझ काल के ही जाल में (मोहितम्) मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है (एभ्यः) इसलिए (परम् अव्ययम्) पूर्ण अविनाशीको (न) नहीं (अभिजानाति) जानता। (13)

केवल हिन्दी अनुवाद : इन गुणोंके कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से तीनों प्रकारके भावोंसे यह सारा संसार - प्राणिसमुदाय मुझ काल के ही जाल में मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है इसलिए पूर्ण अविनाशीको नहीं जानता। (13)

{परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी की महिमा सन्त गरीबदास जी ने कही है तथा काल का जाल समझाया है :— गरीब, ब्रह्मा विष्णु महेश, माया और धर्मराया(काल) कहिए। इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया वाणी हमरी लहिए।।}

अध्याय 7 का श्लोक 14

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया, माम्,
एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्,तरन्ति,ते।।14।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (एषा) यह (दैवी) अलौकिक अर्थात् अति अद्भूत (गुणमयी) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी त्रिगुणमयी (मम) मेरी (माया) माया (दुरत्यया) बड़ी दुस्तर है परंतु (ये) जो पुरुष केवल (माम्) मुझको (एव) ही निरंन्तर (प्रपद्यन्ते) भजते हैं (ते) वे (एताम्) इस (मायाम्) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण रूपी मायाका (तरन्ति) उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी से ऊपर उठ कर काल ब्रह्म की साधना में लग जाते हैं। (14)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भूत रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है परंतु जो पुरुष केवल मुझको ही निरंन्तर भजते हैं वे इस रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण रूपी मायाका उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी से ऊपर उठ कर काल ब्रह्म की साधना में लग जाते हैं। (14)

अध्याय 7 का श्लोक 15

न, माम्, दुष्कतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ।।15।।

अनुवाद : (मायया) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाले क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं अन्य साधना नहीं करना चाहते अर्थात् इसी त्रिगुणमई माया के द्वारा (अपहृतज्ञानाः) जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे (आसुरम् भावम्) आसुर स्वभावको (आश्रिताः) धारण किये हुए (नराधमाः) मनुष्यों में नीच (दुष्कतिनः) दूषित कर्म करनेवाले (मूढाः) मूर्ख (माम्) मुझको (न) नहीं (प्रपद्यन्ते) भजते अर्थात् वे तीनों गुणों अर्थात् रजगुण–ब्रह्मा, सतगुण–विष्णु, तमगुण–शिव की साधना ही करते रहते हैं। (15)

केवल हिन्दी अनुवाद : रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाले क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं अन्य साधना नहीं करना चाहते अर्थात् इसी त्रिगुणमई माया के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं ऐसे आसुर स्वभावको धारण किये हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करनेवाले मूर्ख मुझको नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों की साधना ही करते रहते हैं। (15)

भावार्थ - गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 का भावार्थ है कि जो साधक स्वभाव वश तीनों गुणों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी तक की साधना से मिलने वाले लाभ पर ही आश्रित रहकर इन्हीं तीनों प्रभुओं की भक्ति से जिन का ज्ञान हरा जा चुका है वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ ब्रह्म अर्थात् गीता ज्ञानदाता को भी नहीं भजते इन्हीं के विषय में गीता अध्याय 17 श्लोक 1 से 6 तक कहा तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 का भी इन्हीं से लगातार सम्बन्ध है।

अध्याय 7 का श्लोक 18

उदाराः, सर्वे, एव, एते, ज्ञानी, तु, आत्मा, एव, मे, मतम्,
आस्थितः, सः, हि, युक्तात्मा, माम्, एव, अनुत्तमाम्, गतिम् ।।18।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (मे) मेरे (मतम्) विचार में (एते) ये (सर्वे,एव) सभी ही (ज्ञानी) ज्ञानी (आत्मा) आत्मा (उदाराः) उदार हैं (तु) परंतु (सः) वह (माम्) मुझमें (एव) ही (युक्तात्मा) लीन आत्मा (अनुत्तमाम्) मेरी अति घटिया (गतिम्) मुक्तिमें (एव) ही (आस्थितः) आश्रित हैं। (18)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि मेरे विचार में ये सभी ही ज्ञानी आत्मा उदार हैं परंतु वह मुझमें ही लीन आत्मा मेरी अति घटिया मुक्तिमें ही आश्रित हैं। (18)

भावार्थ :- गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 का भावार्थ है कि मेरी अर्थात् ब्रह्म की भक्ति भी चार प्रकार के भक्त करते हैं 1. आर्त्त : जो संकट निवार्ण के लिए वेद मंत्रों से ही अनुष्ठान करते हैं 2. अर्थार्थी : जो धन लाभ के लिए वेद मंत्रों से ही अनुष्ठान आदि करता है 3. जिज्ञासु : जो ज्ञान प्राप्ति की इच्छा से वेदों का पठन-पाठन करके ज्ञान संग्रह कर लेता है फिर वक्ता बनकर जीवन व्यर्थ कर जाता है 4. ज्ञानी : जिस साधक ने वेदों को पढ़ा तथा जाना कि मनुष्य जीवन केवल प्रभु प्राप्ति के लिए ही मिला है तथा एक पूर्ण परमात्मा की भक्ति से ही पूर्ण मोक्ष होगा। तत्वदर्शी संत जो गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णित है न मिलने से ब्रह्म को ही पूर्ण परमात्मा मान कर काल (ब्रह्म) साधना करते रहे जो अति अनुत्तम कही है अर्थात् ब्रह्म साधना भी अश्रेष्ठ है।

प्रश्न :- आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 के अनुवाद में अर्थ का अनर्थ किया है ''अनुत्तमाम्'' का अर्थ अश्रेष्ठ किया है। जब कि समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है जिस से उत्तम कोई और न हो। अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने सही अर्थ किया है अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम किया है।

उत्तर :- मैं आप की इस बात को सत्य मानकर आप से प्रार्थना करता हूँ कि ''गीता ज्ञान दाता अपनी साधना के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 में बता रहे हैं। यदि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना व गति को अनुत्तम कह रहे हैं। जिस का भावार्थ आप के समास के अनुसार यह हुआ कि गीता ज्ञान दाता की गति से उत्तम अन्य कोई गति नहीं अर्थात् मोक्ष लाभ नहीं।

गीता ज्ञान दाता स्वयं गीता अध्याय 18 श्लोक 62 व अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहे हैं। उसी की कपा से परम शान्ति व शाश्वत स्थान सदा रहने वाला मोक्ष स्थल अर्थात् सत्यलोक प्राप्त होगा। अपने विषय में भी कहा है कि मैं भी उसी की शरण हूँ। उसी पूर्ण परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए तथा कहा है कि उस परमेश्वर के परमपद (सत्यलोक) को प्राप्त करना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर इस संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म मत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाता है। अपने विषय में गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12 अध्याय 4 श्लोक 34 तथा अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि अर्जुन तू और मैं जनमते मरते रहते हैं। भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता अविनाशी नहीं है इसलिए अपने से अन्य अविनाशी पूर्ण परमात्मा के विषय में गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61-62,64,66 अध्याय 15 श्लोक 4,16-17, अध्याय 13 श्लोक 12 से 17, 22 से 24, 27-28,30-31,34 अध्याय 5 श्लोक 6-10,13 से 21 तथा 24-25-26 अध्याय 6 श्लोक 7,19,20,25,26-27 अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 8 श्लोक 3,8 से 10,17 से 22, अध्याय 7 श्लोक 19 तथा 29, अध्याय 14 श्लोक 19 आदि-2 श्लोकों में कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम परमात्मा तो अन्य है जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तम

पुरूषः तु अन्यः जिसका अर्थ है उत्तम परमात्मा तो अन्य ही है। इसलिए उस उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमात्मा की गति अर्थात् उस से मिलने वाला मोक्ष भी अति उत्तम सिद्ध हुआ। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि उस परमेश्वर अर्थात् पूर्ण परमात्मा की गति गीता ज्ञान दाता वाली गति से उत्तम हुई। इसलिए गीता ज्ञान दाता वाली गति सर्व श्रेष्ठ नहीं है। अर्थात् जिस से श्रेष्ठ कोई न हो। यह विशेषण भी गलत सिद्ध हुआ। क्योंकि जब गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ कोई और परमेश्वर है तो उस की गति भी गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम का अर्थ अश्रेष्ठ ही न्याय संगत है अर्थात् उचित है। आप तथा अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने अर्थ का अनर्थ किया है। जो अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम कहा तथा किया है।

अध्याय 8 का श्लोक 21

अव्यक्तः, अक्षरः, इति, उक्तः, तम्, आहुः, परमाम्, गतिम्।
यम्, प्राप्य, न, निवर्तन्ते, तत् धाम, परमम्, मम्।।21।।

अनुवाद : (अव्यक्तः) अदश अर्थात् परोक्ष (अक्षरः) अविनाशी (इति) इस नामसे (उक्तः) कहा गया है (तम्) उस अज्ञान में छुपे गुप्त स्थान को (परमाम्, गतिम्) परमगति (आहुः) कहते हैं (यम्) जिसे (प्राप्य) प्राप्त होकर मनुष्य (न, निवर्तन्ते) वापस नहीं आते (तत् धाम) वह लोक (परमम् मम्) मुझ से व मेरे लोक से श्रेष्ठ है। (21)

केवल हिन्दी अनुवाद : अदश अर्थात् परोक्ष अविनाशी इस नामसे कहा गया है अज्ञान के अंधकार में छुपे गुप्त स्थान को परमगति कहते हैं जिसे प्राप्त होकर मनुष्य वापस नहीं आते वह लोक मुझ से व मेरे लोक से श्रेष्ठ है। (21)

अन्य अनुवाद कर्ताओं ने लिखा है कि गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि ''वह लोक मेरा परमधाम है'' उसके लिए आगे पढ़ें :-

क्योंकि काल (ब्रह्म) सत्यलोक से निष्कासित है, इसलिए कह रहा है कि मेरा भी वास्तविक स्थान सत्यलोक है। मैं भी पहले वहीं रहता था तथा मेरे लोक से श्रेष्ठ है। जहाँ जाने के पश्चात् वापिस जन्म-मत्यु में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं।

उपरोक्त गीता अध्याय 8 के श्लोक 18,20,21 में दो परमात्माओं का वर्णन है। श्लोक 18 में कहा है कि सर्व प्राणी इस अव्यक्त परमात्मा अर्थात् परब्रह्म में प्रलय समय लीन हो जाते है। फिर उत्पत्ति समय उत्पन्न हो जाते हैं। श्लोक 20-21 में कहा है कि उस अव्यक्त अर्थात् परब्रह्म से दूसरा अव्यक्त परमात्मा अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जहाँ जाने के पश्चात् प्राणी फिर लौट कर संसार में नहीं आते। अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। एक अव्यक्त गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में है गीता ज्ञानदाता ने अपने को अव्यक्त कहा है। इस प्रकार तीन परमात्मा सिद्ध हुए। (1) एक अव्यक्त गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में वह क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म है यह प्रथम अव्यक्त है। (2) गीता अध्याय 8 श्लोक 18 में वह अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म है। यह दूसरा अव्यक्त है। (3) तीसरा अव्यक्त गीता अध्याय 8 श्लोक 20-21 में लिखा है कि श्लोक 18 में वर्णित अव्यक्त से दूसरा अव्यक्त परमात्मा वास्तव में अविनाशी है वह सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है। यह तीसरा अव्यक्त परमात्मा है। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16 व 17

में है। जिसमें लिखा है कि दो प्रभु हैं जो इस लोक में जाने जाते हैं। एक क्षर पुरूष तथा दूसरा अक्षर पुरूष। परन्तु वास्तव में सर्वश्रेष्ठ परमात्मा तो इन उपरोक्त (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) दोनों से अन्य ही है वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता हैं वह वास्तव में अविनाशी है। वह परम अक्षर पुरूष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म है। इन अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी तीन प्रभु सिद्ध हुए।

अध्याय 8 का श्लोक 22

पुरुषः, सः, परः, पार्थ, भक्त्या, लभ्यः, तु, अनन्यया।
यस्य, अन्तःस्थानि, भूतानि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्।।22।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! (यस्य) जिस परमात्माके (अन्तःस्थानि) अन्तर्गत (भूतानि) सर्वप्राणी हैं और (येन) जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मासे (इदम्) यह (सर्वम्) समस्त जगत् (ततम्) परिपूर्ण है (सः) वह (परः) परम (पुरुषः) परमात्मा (तु) तो (अनन्यया) अनन्य (भक्त्या) भक्तिसे ही (लभ्यः) प्राप्त होने योग्य है। (22)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! जिस परमात्माके अन्तर्गत सर्वप्राणी हैं और जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मासे यह समस्त जगत् परिपूर्ण है वह परम परमात्मा तो अनन्य भक्तिसे ही प्राप्त होने योग्य है। (22)

अध्याय 8 का श्लोक 23

यत्र, काले, तु, अनावत्तिम्, आवत्तिम्, च, एव, योगिनः,
प्रयाताः यान्ति, तम्, कालम्, वक्ष्यामि, भरतर्षभ।।23।।

अनुवाद : (भरतर्षभ) हे अर्जुन! (यत्र) जिस (काले) कालमें (प्रयाताः) शरीर त्यागकर गये हुए (योगिनः) योगीजन (तु) तो (अनावत्तिम्) वापस न लौटने वाली गतिको (च) और जिस कालमें गये हुए (आवत्तिम्) वापस लौटनेवाली गतिको (एव) ही (यान्ति) प्राप्त होते हैं (तम्) उस गुप्त (कालम्) कालको अर्थात् दोनों मार्गोंको (वक्ष्यामि) कहूँगा। (23)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! जिस कालमें शरीर त्यागकर गये हुए योगीजन तो वापस न लौटने वाली गतिको और जिस कालमें गये हुए वापस लौटनेवाली गतिको ही प्राप्त होते हैं उस गुप्त कालको अर्थात् दोनों मार्गोंको कहूँगा। (23)

अध्याय 17 का श्लोक 23

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मतः,
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा।।23।।

अनुवाद : (ॐ)ओं मन्त्र ब्रह्म का(तत्) तत् यह सांकेतिक मंत्र परब्रह्म का (सत्) सत् यह सांकेतिक मन्त्र पूर्णब्रह्म का है (इति) ऐसे यह (त्रिविधः) तीन प्रकार के (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा के नाम सुमरण का (निर्देशः) आदेश (स्मतः) कहा है (च) और (पुरा) सष्टिके आदिकालमें (ब्राह्मणाः) विद्वानों ने (तेन) उसी (वेदाः) तत्वज्ञान के आधार से वेद (च) तथा (यज्ञाः) यज्ञादि (विहिताः) रचे। उसी आधार से साधना करते थे। (23)

केवल हिन्दी अनुवाद : ओं मन्त्र ब्रह्म का तत् यह सांकेतिक मंत्र परब्रह्म का सत् यह सांकेतिक मन्त्र पूर्णब्रह्म का है ऐसे यह तीन प्रकार के पूर्ण परमात्मा के नाम सुमरण का आदेश कहा है और

सष्टिके आदिकालमें विद्वानों ने उसी तत्वज्ञान के आधार से वेद तथा यज्ञादि रचे। उसी आधार से साधना करते थे। (23)

अध्याय 18 का श्लोक 62

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,

तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम्।।62।।

अनुवाद : (भारत) हे भारत! तू (सर्वभावेन) सब प्रकारसे (तम्) उस परमेश्वरकी (एव) ही (शरणम्) शरणमें (गच्छ) जा। (तत्प्रसादात्) उस परमात्माकी कपा से ही तू (पराम्) परम (शान्तिम्) शान्तिको तथा (शाश्वतम्) सदा रहने वाला सत (स्थानम्) स्थान/धाम/लोक को अर्थात् सत्लोक को (प्राप्स्यसि) प्राप्त होगा। (62)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे भारत! तू सब प्रकारसे उस परमेश्वरकी ही शरणमें जा। उस परमात्माकी कपा से ही तू परम शान्तिको तथा सदा रहने वाला सत स्थान/धाम/लोक को अर्थात् सत्लोक को प्राप्त होगा। (62)

अध्याय 18 का श्लोक 63

इति, ते, ज्ञानम्, आख्यातम्, गुह्यात्, गुह्यतरम्, मया,

विमश्य, एतत्, अशेषेण, यथा, इच्छसि, तथा, कुरु।। 63।।

अनुवाद : (इति) इस प्रकार (गुह्यात्) गोपनीयसे (गुह्यतरम्) अति गोपनीय (ज्ञानम्) ज्ञान (मया) मैंने (ते) तुझसे (आख्यातम्) कह दिया (एतत्) इस रहस्ययुक्त ज्ञानको (अशेषेण) पूर्णतया (विमश्य) भलीभाँति विचारकर (यथा) जैसे (इच्छसि) चाहता है (तथा) वैसे ही (कुरु) कर। (63)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस प्रकार गोपनीयसे अति गोपनीय ज्ञान मैंने तुझसे कह दिया इस रहस्ययुक्त ज्ञानको पूर्णतया भलीभाँति विचारकर जैसे चाहता है वैसे ही कर। (63)

अध्याय 18 का श्लोक 64

सर्वगुह्यतमम्, भूयः, श्रणु, मे, परमम्, वचः,

इष्टः, असि, मे, दढम्, इति, ततः, वक्ष्यामि, ते, हितम्।। 64।।

अनुवाद : (सर्वगुह्यतमम्) सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय (मे) मेरे (परमम्) परम रहस्ययुक्त (हितम्) हितकारक (वचः) वचन (ते) तुझे (भूयः) फिर (वक्ष्यामि) कहूँगा (ततः) इसे (श्रणु) सुन (इति) यह पूर्ण ब्रह्म (मे) मेरा (दढम्) पक्का निश्चित (इष्टः) इष्टदेव अर्थात् पूज्यदेव (असि) है। (64)

केवल हिन्दी अनुवाद : सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय मेरे परम रहस्ययुक्त हितकारक वचन तुझे फिर कहूँगा इसे सुन यह पूर्ण ब्रह्म मेरा पक्का निश्चित इष्टदेव अर्थात् पूज्यदेव है। (64)

अध्याय 18 का श्लोक 65

मन्मनाः, भव, मद्भक्तः, मद्याजी, माम्, नमस्कुरु,

माम्, एव, एष्यसि, सत्यम्, ते, प्रतिजाने, प्रियः, असि, मे।।65।।

अनुवाद : (मन्मनाः) एक मनवाला (मद्भक्तः) मेरा मतानुसार भक्त (भव) हो (मद्याजी) मतानुसार मेरा पूजन करनेवाला (माम्) मुझको (नमस्कुरु) प्रणाम कर। (माम्) मुझे (एव) ही (एष्यसि) प्राप्त होगा (ते) तुझसे (सत्यम्) सत्य (प्रतिजाने) प्रतिज्ञा करता हूँ (मे) मेरा (प्रियः) अत्यन्त प्रिय (असि) है। (65)

केवल हिन्दी अनुवाद : एक मनवाला मेरा मतानुसार भक्त हो मतानुसार मेरा पूजन करनेवाला मुझको प्रणाम कर। मुझे ही प्राप्त होगा तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ मेरा अत्यन्त प्रिय है। (65)

अध्याय 18 का श्लोक 66

सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, व्रज,

अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः ।।66।।

अनुवाद : गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है इस श्लोक 66 में भी उसी के विषय में कहा है कि मेरी (सर्वधर्मान्) सम्पूर्ण पूजाओंको (माम्) मुझ में (परित्यज्य) त्यागकर तू केवल (एकम्) एक उस अद्वितीय अर्थात् पूर्ण परमात्मा की (शरणम्) शरणमें (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तुझे (सर्वपापेभ्यः) सम्पूर्ण पापोंसे (मोक्षयिष्यामि) छुड़वा दूँगा तू (मा,शुचः) शोक मत कर। (66)

केवल हिन्दी अनुवाद : गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है इस श्लोक 66 में भी उसी के विषय में कहा है कि मेरी सम्पूर्ण पूजाओंको मुझ में त्यागकर तू केवल एक उस अद्वितीय अर्थात् पूर्ण परमात्मा की शरणमें जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे छुड़वा दूँगा तू शोक मत कर। (66)

विशेष :- अन्य गीता अनुवाद कर्ताओं ने ''व्रज्'' शब्द का अर्थ आना किया है जो अनुचित है ''व्रज्'' शब्द का अर्थ जाना, चला जाना आदि होता है।

भावार्थ :- गीता अध्याय 18 श्लोक 63 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि हे अर्जुन! यह गीता वाला अति गोपनीय ज्ञान मैंने तुझे कह दिया। जैसा उचित समझे कर। मेरी भक्ति करनी है या उस परमेश्वर की भक्ति करनी है। फिर श्लोक 64 में गीता ज्ञानदाता एक और सम्पूर्ण गोपनीयों से भी गोपनीय वचन कहता है कि वह परमेश्वर जिस के विषय में श्लोक 62 में कहा है वह परमेश्वर मेरा (गीता ज्ञान दाता का) ईष्ट देव अर्थात् पूज्य देव है यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 4 में भी कहा है कि मैं भी उस परमेश्वर की शरण हूँ। इससे सिद्ध है कि गीता ज्ञान दाता प्रभु से कोई अन्य सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर है वही पूजा के योग्य है। यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 17 में भी है गीता ज्ञान दाता प्रभु कहता है कि अध्याय 15 श्लोक 16 में वर्णित क्षर पुरूष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) से भी श्रेष्ठ परमेश्वर तो उपरोक्त दोनों से अन्य ही है तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है। वही वास्तव में परमात्मा कहलाता है। वही वास्तव में अविनाशी है।

❑❑❑

''पूर्ण सन्त की पहचान(1)''

प्रश्नः- पूर्ण सन्त की पहचान कैसे करें? जिस भी सन्त के विचार सुनते हैं वह पूर्ण लगता है।

राधास्वामी पंथ में तो हमें बताया है कि सतलोक अर्थात सतनाम में सतपुरूष निराकार है। केवल प्रकाश ही प्रकाश है। आत्मा का सतपुरूष में विलीन हो जाना ही मोक्ष है। धुन सुनना ही सतपुरूष प्राप्ति है। मैंने 4 से 8 घण्टे तक अभ्यास कर के देख लिया कोई मण्डल दिखाई नहीं दिए। जो प्रकाश व धुन कुछ दिन बाद दिखने तथा सुनने लगा था वही चल रहा है, कान भी खराब हो गए, पैरों में भी कमजोरी आ गई है। आप के द्वारा लिखी पुस्तकों ''परमेश्वर का सार संदेश'' तथा ''गहरी नजर गीता में'' ने तो आँखें खोल दी हैं। समाचार पत्रों में आप के लेख पढ़ने से लग रहा है कि शायद परमात्मा फिर से निकट आ रहा है। कप्या पूर्ण सन्त की प्रमाणित पहचान बताऐं।

उत्तरः- पूर्ण सन्त की पहचान(1):- राधास्वामी पंथ के प्रथम सन्त माने जाने वाले श्री शिवदयाल जी उर्फ राधास्वामी जी को ज्ञान ही नहीं कि सतनाम क्या वस्तु है। श्री शिव दयाल जी तथा उनके अनुयाई मोक्ष प्राप्त ही नहीं कर सकते। वे सतनाम को स्थान भी कहते हैं कहीं पर कहा है सतनाम हमारी जाति है, कहीं पर सतपुरूष कहते हैं, कहीं पर सारनाम कहते हैं, कहीं पर सतलोक कहते हैं तथा जो पांच नाम राधास्वामी पंथ में प्रदान किए जाते हैं उन में एक सतनाम का जाप भी है। जब की सतनाम दो अक्षर का मन्त्र है। जिसमें एक ओम् तथा दूसरा तत्(जो सांकेतिक है केवल उपदेशी को ही बताया जाएगा) तथा इस दो अक्षर के सतनाम की कमाई करने के पश्चात् एक मन्त्र और दिया जाएगा जो सारनाम (सत शब्द) कहा जाता है।

कप्या पढ़ें पूर्ण सन्त की पहचान :- जैसे राजा का संविधान है। ऐसे ही पवित्र शास्त्र परमात्मा का संविधान है जो किसी व्यक्ति विशेष का बनाया हुआ नहीं है। स्वयं प्रभु प्रदत्त है। पवित्र चारों वेद ब्रह्म सष्टि के आदि ग्रन्थ हैं जो ब्रह्म(काल अर्थात ज्योति निरंजन) द्वारा बोले गए हैं। इन्हीं चारों वेदों का सारांश पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी है जो काल भगवान(ब्रह्म/क्षर पुरूष) द्वारा श्री कष्ण जी में प्रवेश करके बोला गया अमत ज्ञान है। जिसमें काल प्रभु की भक्ति तक का ज्ञान है तथा पूर्ण परमात्मा (सतपुरूष) का तथा सतलोक का भी ज्ञान है। परन्तु भक्ति विधि केवल काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) तक की ही है परन्तु पूर्ण परमात्मा की साधना तथा तत्व ज्ञान को किसी तत्वदर्शी(पूर्ण) सन्त से जानने को कहा है (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)। क्योंकि पवित्र चारों वेद तथा पवित्र श्री मद्भगवत गीता जी को ऐसा ज्ञान जानो जैसे दसवीं कक्षा तक का पाठ्यक्रम। पाँचवां वेद जिसे स्वसम वेद(सूक्ष्म वेद) कहते हैं जिसमें चारों वेद तथा गीता जी तथा इनसे ऊपर का भी ज्ञान है। वह पूर्ण परमात्मा अर्थात सतपुरूष कविर्देव(कबीर परमेश्वर) ने स्वयं सतलोक से आकर काल लोक में अपनी अमत वाणी(कबीर वाणी) द्वारा स्वयं प्रकट किया है। जो काल भगवान(क्षर पुरूष) ने समाप्त कर दिया था। जैसे किसी अपराध की धारा के विषय में पाँच वकील अपना-2 मत व्यक्त कर रहे हैं। एक कहता है इस अपराध पर संविधान की धारा 304 लगेगी, दूसरा कहता है 307 लगेगी, तीसरा कहता है 305 लगेगी, चौथा कहता है 376 लगेगी, पाँचवा कहता है 311-बी लगेगी। वे पाँचों वकील ठीक नहीं हो सकते। कौन सी धारा ठीक है यह निर्णय

देश के संविधान से ही होगा। संविधान में लिखा विवरण अन्तिम तथा सत्य मान्य होता है।

ठीक इसी प्रकार परमात्मा के ज्ञान तथा भक्ति मार्ग की जांच के लिए पवित्र सद्ग्रन्थों को ही आधार माना जाएगा। पवित्र गीता जी में तथा पवित्र चारों वेदों में तथा(पांचवें वेद) कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की अमत वाणी में सर्व ज्ञान तथा भक्ति विधि स्पष्ट लिखी है। पहले पवित्र गीता जी को आधार मान कर ज्ञान ग्रहण करते हैं। पवित्र गीता जी में तीनों प्रभुओं {ब्रह्म (क्षर पुरूष/काल) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरूष) तथा पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरूष अर्थात सतपुरूष)} की भी जानकारी है।

गीता जी का ज्ञान ब्रह्म (क्षर पुरूष/काल) द्वारा दिया गया है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए ॐ-तत्-सत् इस तीन मन्त्र के जाप करने का निर्देश है। गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा कि पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का ॐ-तत्-सत् तीन मन्त्र का जाप है उस मन्त्र में मेरी भक्ति (साधना) का केवल एक ओम् (ॐ) अक्षर है जिसका उच्चारण करके स्मरण करना है। जो साधक अन्तिम स्वांस तक मेरा स्मरण करता हुआ प्राण त्याग जाता है उसे परमगति प्राप्त होती है। अकेला ॐ नाम का जाप काल ब्रह्म की साधना का है। तथा ब्रह्म साधना का प्रतिफल स्वर्ग- महास्वर्ग प्राप्ति, फिर पाप कर्म आधार से नरक का भोग तथा चौरासी लाख योनियों में जन्म-मत्यु का कष्ट सदा बना रहेगा। केवल जैसा कर्म प्राणी (पाप-पुण्य) करता है वह दोनों का फल भोगता है। इसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता (केवल पूर्ण परमात्मा की साधना करने से पाप कर्म दण्ड समाप्त होता है)।

इसी का प्रमाण गीता ज्ञान दाता प्रभु गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में कहता है कि अर्जुन तेरे तथा मेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में भी यही प्रमाण है तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 17 तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 62, गीता अध्याय 15 श्लोक 4, 17 में अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा (परमेश्वर) के विषय में कहा है तथा वही वास्तव में अविनाशी परमात्मा है। वही सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार है। उसी की शरण में जाने से जन्म-मत्यु का रोग पूर्ण रूप से समाप्त हो जाएगा अर्थात पूर्ण मोक्ष प्राप्त हो जाएगा।

उस पूर्ण परमात्मा (सतपुरूष अर्थात अविनाशी परमेश्वर) के तत्वज्ञान तथा भक्ति विधि के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि परमेश्वर को प्राप्त करने के लिए बहुत विस्तत साधनाओं का ज्ञान स्वयं परमेश्वर ने अपने मुख से मुख्य ज्ञान में अर्थात् तत्वज्ञान में कहा है फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा कि उस तत्वज्ञान को समझ उसको समझने के लिए तत्वदर्शी सन्तों की खोज कर। उन तत्वदर्शी सन्तों को विनम्र भाव से डण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना पूर्वक प्रश्न करने पर वे तत्व ज्ञान को जानने वाले तत्वदर्शी सन्त तुझे तत्वज्ञान सुनाऐंगे। उस पूर्ण परमात्मा के तत्व ज्ञान को समझ तथा जैसे वे साधना बतायें वैसे कर। (प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में है।)

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि यह संसार उल्टे लटके वक्ष तुल्य जानो जिसकी मूल तो ऊपर को है तथा शाखाएं नीचे को हैं। ऊपर को जड़ें तो पूर्ण परमात्मा जानो तथा तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्माजी, सतगुण-विष्णुजी तथा तमगुण-शिवजी) रूपी शाखाऐं जानो। गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि मेरे तथा तेरे इस विचार काल में अर्थात् गीता ज्ञान में आपको मैं पूर्ण रूप से इस संसार रूपी वक्ष (सष्टि रचना) का ज्ञान नहीं बता सकता।

क्योंकि इसके आदि तथा अंत से मैं अपरिचित हूँ। इस उलझी हुई ज्ञान गुत्थी को तत्व ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा ही काटा जा सकता है अर्थात समझा जा सकता है। सष्टि रचना के विषय में तत्वदर्शी(पूर्ण) सन्त ही बता सकता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्वदर्शी (पूर्ण) सन्त की पहचान बताते हुए कहा है कि इस उल्टे लटके हुए संसार रूपी वक्ष के भिन्न- 2 भागों को जो सन्त बतावे(सः वेद वित्) वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है अर्थात तत्वदर्शी (पूर्ण) सन्त है। क्योंकि गीता ज्ञान दाता ने तो केवल इतना ही बताया है कि ऊपर को तो जड़(मूल) है तथा नीचे को तीनों गुण रूपी शाखाएं हैं। फिर कहा है कि मुझे पूर्ण ज्ञान नहीं है। जो संसार रूपी वक्ष के सर्व भागों जैसे मूल, तना, डार, शाखाऐं, पत्तों का ज्ञान भिन्न-2 बताए उसे तत्वदर्शी(पूर्ण) सन्त जानना।

परमेश्वर कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने स्वयं अपने द्वारा रची सष्टि का ज्ञान दिया।

''कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।''

कपा देखें उल्टा लटके हुए संसार रूपी वक्ष का चित्रः-

इस उल्टे संसार रूपी वक्ष की जड़ें तो पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म अर्थात पूर्ण ब्रह्म/सतपुरूष) है। जमीन से बाहर तुरन्त जो हिस्सा दष्टिगोचर होता है जिसे तना कहते हैं वह अक्षर पुरूष (परब्रह्म) जानो तथा मोटी डार को क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) जानो तथा डार की तीनों शाखाओं को श्री ब्रह्माजी(रजगुण), श्री विष्णुजी(सतगुण) तथा श्री शिवजी(तमगुण) रूपी तीनों देव जानो तथा पात रूप में संसार समझें। अब समझें कि पूर्ण परमात्मा (जड़ों) से सर्व वक्ष का पालन होता है। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 16 में लिखा है। दो प्रभु तो इस पथ्वी लोक में हैं (ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों को पथ्वी वाला लोक कहा जाता है। क्योंकि यह नाशवान है) एक क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तथा दोनों ही प्रभुओं (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) के लोकों में दोनों प्रभुओं के तथा इनके अन्तर्गत प्राणियों के स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरूष (वास्तव में श्रेष्ठ परमात्मा) तो इन (उपरोक्त) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य ही है। जो परमात्मा(परम अक्षर ब्रह्म) कहा जाता है वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है।

उदाहरणार्थः- जैसे एक मूर्ति तो मिट्टी की बनी हो जो स्पष्ट नाशवान दिखाई देती है। गिरते ही टुकड़े-2 हो जाएगी। ऐसी स्थिती तो क्षर पुरूष (ब्रह्म) की जानो तथा दूसरी मूर्ति स्टील(इस्पात) की बनी हो जो मिट्टी वाली मूर्ति की तुलना में अधिक टिकाऊ है। परन्तु स्टील (इस्पात) को भी जंग लगेगा। एक दिन नष्ट हो जाएगी। भले ही समय अधिक लगे। इसी प्रकार अक्षर पुरूष को भी अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी तो तीसरी धातु स्वर्ण की बनी मूर्ति होती है जिसका कभी विनाश नहीं होता। ऐसी स्थिति परम अक्षर ब्रह्म अर्थात पूर्ण ब्रह्म (सतपुरूष) की जानो। वही तीसरा पूर्ण परमात्मा जो संसार रूपी वक्ष की जड़(मूल) है सर्व का पालन पोषण करने वाला है। उसी पूर्ण परमात्मा की साधना तत्वदर्शी सन्त बताएगा। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि पूर्ण सन्त(तत्वदर्शी) के मिल जाने के पश्चात् उस परमेश्वर(सतपुरूष) के उस स्थान की खोज करनी चाहिए जिस स्थान(सतलोक) में जाने के पश्चात् साधक पुनर् लौटकर संसार में

नहीं आते अर्थात् जन्म-मत्यु से पूर्ण रूप से मुक्त हो जाते हैं तथा जिस आदि पुरूष अर्थात पूर्ण परमात्मा(सतपुरूष) से संसार रूपी वक्ष का विस्तार हुआ है अर्थात जिसने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है। स्वयं गीता ज्ञान दाता प्रभु ने भी कहा है कि मैं भी उसी की शरण में हूँ। उसी परमात्मा की भक्ति विश्वास के साथ करनी चाहिए। यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में है कि गीता ज्ञान दाता प्रभु किसी अन्य पूर्ण परमात्मा की ओर संकेत कर रहा है। कहा है कि हे अर्जुन ! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कपा से तू परम शान्ति तथा सतलोक(शाश्वत स्थान) को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 18 श्लोक 64 में कहा है कि मेरा पूज्य देव भी यही पूर्ण परमात्मा है।

विशेषः- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि तत्वदर्शी अर्थात पूर्ण सन्त वह है जो संसार रूपी उल्टे वक्ष के सर्वांगों का भिन्न- 2 विवरण बताए। जिसे गीता ज्ञान दाता प्रभु भी नहीं जानता। वह विवरण आप जी ने ऊपर पढ़ा तथा उल्टे संसार रूपी वक्ष का चित्र भी देखा। आगे पढ़े पूर्ण सन्त की अन्य पहचान तथा कैसे मिले वह पूर्ण परमात्मा जिस के विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में व अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है।

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

❑❑❑
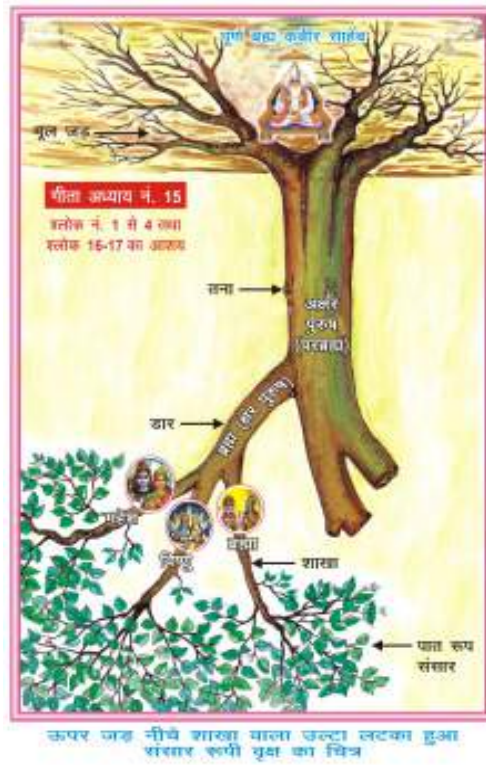
''पूर्ण सन्त की पहचान (2)''

नानक साहेब जी कहते हैं :-

सोई सतगुरू पूरा कहावै। दोय अख्खर का भेद बतावै।।
एक छुड़ावै एक लखावै। तो प्राणी निज घर जावै।।

गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में उस पूर्ण परमात्मा (सतपुरूष) की साधना का भी संकेत दिया है। कहा है कि उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का तो केवल ॐ-तत्-सत् इस तीन मन्त्र के जाप का निर्देश है। जिसका तीन विधि से स्मरण किया जाता है। यही साधना साधक जन सष्टि के प्रारम्भ में करते थे। तीन मन्त्र के स्मरण की विधि तत्वदर्शी(पूर्ण) सन्त बताएगा। क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा के विषय में तत्वदर्शी सन्त से पूछो।

ओम् शब्द- यह ब्रह्म(क्षर पुरूष) का जाप है। तत् शब्द यह परब्रह्म का जाप है। यहाँ तत् शब्द सांकेतिक है। जो यह दास केवल उपदेशी को ही बताएगा।

ओम्+तत् (सांकेतिक) मिलकर सतनाम (दो अक्षर का मन्त्र) बनता है तथा सत् शब्द(सांकेतिक) तीसरा मन्त्र है इसे सारनाम भी कहते हैं। इसी को आदि नाम भी कहते हैं। जो गुप्त है उसको पूर्ण सन्त ही बताएगा जो स्मरण करने का है। ओम मन्त्र का जाप काल (ब्रह्म) के ऋण से मुक्त कराएगा (काल से छुड़वाएगा) तथा दूसरा तत्(सांकेतिक) परब्रह्म का मन्त्र है। जिसका जाप परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों को पार करने का किराया है। यह भंवर गुफा तक पहुँचाएगा अर्थात पूर्ण परमात्मा को दिखाएगा(लखाएगा) तथा तीसरा मन्त्र सारनाम पूर्ण परमात्मा के सतलोक में स्थाई करेगा। फिर साधक का जन्म-मत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाएगा। सतलोक में पूर्ण परमात्मा अर्थात् सतपुरूष मानव सदश आकार में है। जिसके एक रोम कूप की शोभा करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है। जीव आत्मा भी साकार मानव सदश शरीर में रहती है तथा आत्मा के शरीर का प्रकाश सोलह सूर्यों के प्रकाश के समान है। आत्मा अपने साकार परमात्मा के सिर पर चंवर करती है(प्रमाण कबीर परमेश्वर की अमतवाणी शब्द 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' जो सन्तमत प्रकाश भाग-3 के प्रथम पष्ठ पर लिखा है)।

राधास्वामी पन्थ तथा धन-धन सतगुरू पंथ वाले सन्तों का कहना है कि सतलोक में तो केवल प्रकाश ही प्रकाश है। सतपुरूष निराकार है। आत्मा सतलोक में जा कर परमात्मा में ऐसे समा जाती है जैसे बूंद समुंद्र में समा जाती है। परमात्मा और आत्मा का भिन्न अस्तित्व नहीं रहता। जबकि वास्तविकता ऊपर वर्णित है वह सही है जो परमात्मा पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) ने स्वयं बताई है। मुझ दास को अपनी कपा से दर्शन कराए हैं।

उपरोक्त सतनाम जो दो अक्षर (ओम् + तत् सांकेतिक) के योग से बनता है का उदाहरण स्वयं श्री सावन सिंह जी महाराज (जो श्री खेमामल उर्फ शाहमस्ताना जी के गुरु जी है। शाहमस्ताना जी ने धन-धन सतगुरु सच्चा सौदा सिरसा में स्थापित किया है) ने पुस्तक संतमत प्रकाश भाग-4 के पष्ठ 261-262 पर लिखा है। परन्तु स्वयं ज्ञान नहीं है, ग्रंथ साहेब का प्रमाण लिया है। नानक साहेब कहते हैं कि -

सोई सतगुरु पूरा कहावै, दोय अख्खर का भेद बतावै। एक छुड़ावै एक लखावै, तो प्राणी निज घर जावै।

फिर कहते हैं - जे तू पढ़या पंडित बीना दोय अख्खर दुयनावां। प्रणवत नानक एक लंघाए जे कर सच्च समावां। ***(आदि गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ 1171)***

फिर कबीर परमेश्वर जी की वाणी का प्रमाण दिया है :- **कह कबीर अक्षर दुय भाख। होयगा खसम त लेयगा राख।** *(आदि गुरु ग्रन्थ पष्ठ 329)*

फिर लिखा है :- ओम् शब्द, सोहं शब्द, सतशब्द

विचार करें :- उपरोक्त मंत्र पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति तथा सतलोक निवास के हैं जिसका पवित्र गीता जी में तथा पवित्र अमत वाणी कबीर साहेब तथा प्रभु प्राप्त संतों की अमतवाणी में भी प्रमाण है। परंतु राधास्वामी पंथ तथा धन-धन सतगुरु पंथ तथा जयगुरुदेव तथा दिनोंद भिवानी आदि राधास्वामी वाले पंथों के संतों को ज्ञान नहीं है। सतनाम जो दो अक्षर के योग से बनता है उस के विषय में गोल-मोल लिख दिया कि ये आगे पारब्रह्म में हैं तथा एक अक्षर(सारनाम) के विषय में लिखा है कि वह भी पारब्रह्म में मिलेगा। स्वयं वे ''ज्योति निरंजन'', ''औंकार'', ''रंरकार'', ''सोहं'' तथा ''सतनाम'' ये पांच नाम देते हैं तथा धन-धन सतगुरू सच्चा सौदा वाले सन्त पहले तो यही पांच नाम देते थे अब, ''सतपुरुष'', ''अकाल मूर्ति'', ''शब्द स्वरूपी राम'' ये अन्य तीन नाम देते हैं। दिनोंद भिवानी वाले ताराचन्द जी महाराज वाला पंथ केवल ''राधास्वामी'' नाम देता है, स्वयं दो अख्खर के वास्तविक मंत्र से अपरिचित हैं। इसलिए कबीर परमेश्वर की अमतवाणी तथा श्री नानक जी की अमतवाणी के आधार से जो दो अक्षर का भेद नहीं जानता वह पूरा गुरु (पूर्ण संत) नहीं है। इससे सिद्ध हुआ कि राधा स्वामी पंथ तथा धन-धन सतगुरू-सच्चा सौदा पंथ तथा श्री ठाकुर सिंह, श्री कपाल सिंह तथा जय गुरूदेव मथुरा वाले तथा दिनोद भिवानी वाले राधास्वामी के सन्त जी पूर्ण सन्त नहीं हैं क्योंकि उनको दो अक्षर का ज्ञान नहीं है।

पुस्तक सन्तमत प्रकाश भाग-4 पष्ठ 262 में लिखा है सतनाम हमारी जाति है, सतपुरूष हमारा धर्म है, सच्चखण्ड(सतलोक) हमारा देश है। यहाँ पर सतनाम, सतपुरूष, सच्चखण्ड तीनों को भिन्न-2 बताया है। इसी पुस्तक के पष्ठ 21 पर सतनाम को स्थान कहा है। पुस्तक सारवचन वार्तिक प्रथम भाग के वचन 4 में सतनाम, सच्चखण्ड, सतपुरूष, सारशब्द, सतशब्द को एक बताया है। क्या ये विचार परम सन्त के हो सकते हैं? {कप्या पढ़ें सन्तमत प्रकाश भाग- 4 पष्ठ 261-262 से फोटो कापी इसी पुस्तक (अध्यात्मिक ज्ञान गंगा) के पष्ठ 82-83 पर}

अधूरे सन्तों के विषय में पूज्य कबीर परमेश्वर जी कहते हैं:-

सतगुरू बिन काहु न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छिड़ै मूढ किसाना।

सतगुरू बिन बेद पढें जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।

वस्तु कहीं खोजे कहीं, किस विद्य लागे हाथ।

एक पलक में पाईए, भेदी लिजै साथ।

एक समय एक व्यक्ति की अचानक मत्यु हो गई। उसने बहुत सारा धन जमीन में दबा रखा था। उस का विवरण एक बही(पैड) में लिखा था जो सांकेतिक था। उस व्यक्ति ने अपने मकान के एक कोने में मन्दिर बनवा रखा था। बही में लिखा था चाँदनी चौदस रात्रि के बारह बजे मन्दिर के गुमज में सर्व धन दबा रखा है। लड़कों ने रात्री में मन्दिर का गुमज फोड़ा। उसमें कुछ नहीं पाया।

उनके पिता का एक दोस्त दूसरे गांव में रहता था। बच्चों ने उसको सर्व विवरण बताया तथा कहा कि पिता जी ने झूठ लिखा है। मन्दिर के गुमज में धन नहीं मिला। पिता जी के दोस्त ने उस लेख को पढ़ा तथा कहा कि आप मन्दिर के गुमज का पुनर् निर्माण करवाएं। मन्दिर के गुमज का पुनर् निर्माण होने के पश्चात् चांदनी चौदस (शुद्धि चतुर्दशी) को रात्रि के बारह बजे जहां पर गुमज की छाया थी उस स्थान को खोदा गया तो सर्व धन मिल गया।

अपने सद्ग्रन्थों में प्रभु ज्ञान का अपार धन छुपा है जो सांकेतिक है। वह पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) के बिना किसी को नहीं मिला। इसीलिए राधास्वामी तथा धन-धन सतगुरू वाले पंथों के सन्तों ने श्रद्धालुओं को भ्रमित कर दिया कि वेद तथा गीता आदि शास्त्र तो व्यर्थ हैं। कबीर परमेश्वर तो कहते हैं :-

वेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहीं।

भावार्थ है कि वेद तथा गीता जी व कुर्आन झूठे नहीं हैं। जो इन्हें समझ नहीं सके वे अज्ञानी हैं। राधास्वामी तथा धन-धन सतगुरू-सच्चा सौदा वाले पंथों के सन्त जी कहते हैं कि गीता व वेदों में पूर्ण परमात्मा का ज्ञान नहीं है। स्वयं लोक वेद(दंत कथाओं) के आधार पर ढेर सारी पुस्तकें रच कर गलत ज्ञान प्रचार कर डाला। अब श्रद्धालुओं को शास्त्रों का ज्ञान समझाना कठिन हो रहा है। वर्तमान में मुझ दास को पूर्ण परमात्मा ने आप सर्व प्रभु प्रेमियों को छुपा धन बताने भेजा है। कप्या अविलम्ब प्राप्त करें। वर्तमान में दो अक्षर से बने ''सतनाम'' का तथा एक अक्षर ''सारनाम'' का केवल मुझ दास (रामपाल दास) ही को दान करने का अधिकार पूज्य गुरूदेव तथा परमात्मा कबीर साहेब ने स्वयं प्रदान किया है। मुझ दास से विमुख एक-दो पापात्माऐं तीनों मंत्रों को प्राप्त करके स्वयंभू गुरू बन कर नाम दान करने लगे हैं। वे अधिकारी नहीं। उन्हें भक्त समाज के पक्के दुश्मन जानना। न तो वे स्वयं पार हो सकते हैं तथा न ही उनसे उपदेश प्राप्त भक्तजन पार हो सकते हैं। ऐसे ही लालची व्यक्तियों ने परमात्मा कबीर जी के साथ भी धोखा किया था जो अभी तक तत्वज्ञान समझने में बाधक सिद्ध हो रहा है। उनके तो दर्शन करना भी पाप है। जिनके विषय में ''परमेश्वर का सार संदेश'' पुस्तक के अध्याय पन्द्रह में ''शंका समाधान विषय'' में विस्तत वर्णन है। एक समय में सन्त एक ही होता है वह पूरे विश्व को नाम देकर पार कर सकता है। जैसे परमपूज्य कबीर परमेश्वर जी काशी में आए थे उस समय पूरे विश्व में अकेले ही नाम दान करते थे। उनके चौसठ लाख शिष्य सर्व धर्मों के हुए थे। अपने रहते उन्होंने कोई उत्तराधिकारी नहीं बनाया था। इसलिए नकली संतों से सावधान रहें।

है। गुरु ग्रन्थ साहिब में बड़े गहरे और गुप्त रहस्य हैं। एक स्थान पर आता है :

बावन अच्छर लोक त्रै सभ कछु इन ही माहे।
ऐ अक्खर खिर जाहिंगे ओय अक्खर इन मह नाहे।

(आदि ग्रन्थ, पृ. 340)

बावन अक्षर संस्कृत भाषा के हैं। शायद ही कोई ऐसी भाषा हो, जिसके बावन अक्षर हों। इस संसार का सारा मसाला बावन अक्षरों में आ जाता है। पिण्ड, अण्ड का हाल तो बावन अक्षरों में आ गया। आगे दो अक्षर और हैं जो पारब्रह्म में हैं। इसके विषय में ग्रन्थ साहिब में लिखा है :

सोई गुरु पूरा कहावै। दोय अख्खर का भेद बतावै।
एक छुड़ावै एक लखावै। तो प्राणी निज घर को पावै।

फिर कहते हैं :

जे तू पढ़या पंडित बीना दुय अक्खर दुय नावां।
प्रणवत नानक एक लंघाए जे कर सच समावां।

(आदि ग्रन्थ, पृ. 1171)

यदि तुम गुणी हो, ज्ञानी हो तो वे अक्षर बताओ ? वे अक्षर पारब्रह्म में हैं। एक अक्षर ने दुनिया बनाई है और एक ने सतलोक बनाया है। यही कबीर साहिब कहते हैं :

कह कबीर अक्षर दुय भाख। होयगा खसम त लेयगा राख।

(आदि ग्रन्थ, पृ. 329)

गुरु नानक साहिब भी कहते हैं :

इक अक्खर हरि मन वसै नानक होत निहाल।

~~पूर्ण सन्त की पहचान (2)~~

(पुस्तक 'संतमत प्रकाश' भाग-4 पष्ठ 261 से फोटो कॉपी)

एक स्थान पर फिर गुरु साहिब कहते हैं :

बेद कतेब सिमृत सभ सासत इन पढ़या मुकत न होई।
एक अक्खर जो गुरमुख जापै तिस की निरमल सोई।

(आदि ग्रन्थ, पृ. 747)

वह अक्षर आपके अन्दर है और पारब्रह्म में जाकर मिलेगा। यह धर्म हमारा धर्म नहीं, यह जाति हमारी जाति नहीं। यह देश हमारा देश नहीं। हमारा देश सचखण्ड, हमारी जाति सतनाम और हमारा धर्म सत्पुरुष है यह पराया देश छोड़कर आत्मा अपने उस देश को जा रही है।

सूरत साफ़ उड़ी ऊँचे को। छूट गया सब महल पुराना॥

अब आत्मा इस पुराने महल को, जिसमें लाखों जन्म रही, छोड़कर सतनाम में जा रही है।

आगे चढ़ चढ़ अधर समानी। शब्द शब्द का मर्म पिछाना॥

अन्दर शब्द के दरजे हैं–ओम शब्द, सोहं शब्द, सत शब्द। आत्मा दरजे के अनुसार अपने असली मकसद भाव असली देश को जा रही है।

(पुस्तक 'संतमत प्रकाश' भाग-4 पृष्ठ 262 से फोटो कॉपी)

❑❑❑

सृष्टी रचना

श्री देवी भागवत पुराण के पहले स्कन्ध में अध्याय 1 से 8 पृष्ठ 21 से 43 पर प्रमाण है। कि महर्षि व्यास जी के परम शिष्य श्री सूत जी से शौनकादि ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे सूत जी! कृपा आप देवी पुराण की पावन कथा सुनाऐं। श्री सूत जी ने कहा (पृष्ठ 23) पौराणिकों एवं वैदिकों का कथन है तथा यह भली–भांति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत् के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्मा जी का जन्म भगवान् विष्णु जी के नाभि कमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिती में ब्रह्मा जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे ? भगवान् विष्णु को स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते क्योंकि वे शेष नाग की शय्या पर सोए थे। नाभि से कमल निकला और उस पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किन्तु वे श्री विष्णु जी भी तो किसी आधार पर अवलम्बित थे। उनके आधार भूत क्षीर समुन्द्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता क्योंकि वह रस है, रस बिना पात्र के ठहरता नहीं कोई न कोई उसका आधार रहना ही चाहिए। अतएव चराचर जगत् की आधार भूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निश्चित हुई'' (देवी पुराण के पृष्ठ 41 पर लिखा है :–) ऋषियों ने पूछा :– महाभाग सूत जी ! इस कथा प्रसंग को जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है, क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञ जनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर–ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। आपने इस सर्व की सृष्टी कारण भूत जिस जगदम्बिका (दुर्गा) के विषय में कहा है वह कौन शक्ति है उसकी सृष्टी (उत्पति) कैसे हुई। यह सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं :– मुनिवरों ! चराचर सहित इस त्रिलोकी में कौन ऐसा है जो इस संदेह को दूर कर सके। ब्रह्मा जी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावों ! यह बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इस सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ ?

(श्री देवीपुराण के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 13 पृष्ठ 115 पर) नारद जी ने अपने पिता ब्रह्मा जी से पूछा ''पिता जी! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ है। विभो ! आपने सम्यक प्रकार से इसकी रचना की है ? अथवा विष्णु इस विश्व के रचियता हैं ? या शंकर ने इसकी सृष्टी की है ? जगत् प्रभो ! आप विश्व की आत्मा हैं। सच्ची बात बताने की कृपा करें। किस देवता की पूजा करनी चाहिए ? तथा कौन देवता (प्रभु) सबसे बड़ा एवं सर्व समर्थ है ? इन सभी प्रश्नों का समाधान करके मेरे हृदय के संदेह को दूर करने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी ने कहा – बेटा मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। इस संसार में कोई भी रागी पुरूष ऐसा नहीं है जिसे यह रहस्य विदित हो। (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

प्रिय पाठक जनों ! जिस सृष्टी रचना के विषय में तथा सर्व समर्थ प्रभु के विषय में न व्यास जी जानते हैं न श्री ब्रह्मा जी। उस रहस्य को इस सृष्टी रचना के उल्लेख में निम्न पढ़ें :-

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टी की रचना को पढ़ेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले ऊँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अध्यात्मिक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते रहिए तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखिए। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु अर्थात् सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टी रचना अर्थात् अपने द्वारा निर्मित सर्व लोकों की रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र
अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कबीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्टी के ढले (छोटे-छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग अस्तित्व नहीं रहता।
अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरुष रूप में रहते हैं।
अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरुष रूप में रहते हैं।
साहेब कबीर (सतपुरुष) का सतलोक में परम स्थान
कुर्म का द्वीप
धैर्य का द्वीप
दयाल का द्वीप
असंख्य ब्रह्माण्ड का कुल मालिक सतपुरु कबीर साहेब का सतलोक
ज्ञानी का द्वीप
परब्रह्म का स्थान
अचिन्त का द्वीप
विवेक का द्वीप
प्रेम का द्वीप
परब्रह्म के सात शंख ब्रह्माण्ड
ज्योति निरंजन (काल) के इक्कीस ब्रह्माण्ड अर्थात काल लोक
मानसरोवर
तेज का द्वीप
जलरंगी का द्वीप
सुरति का द्वीप
आनन्द का द्वीप
संतोष का द्वीप
सहज का द्वीप
क्षमा का द्वीप
निष्काम का द्वीप
सत्लोक
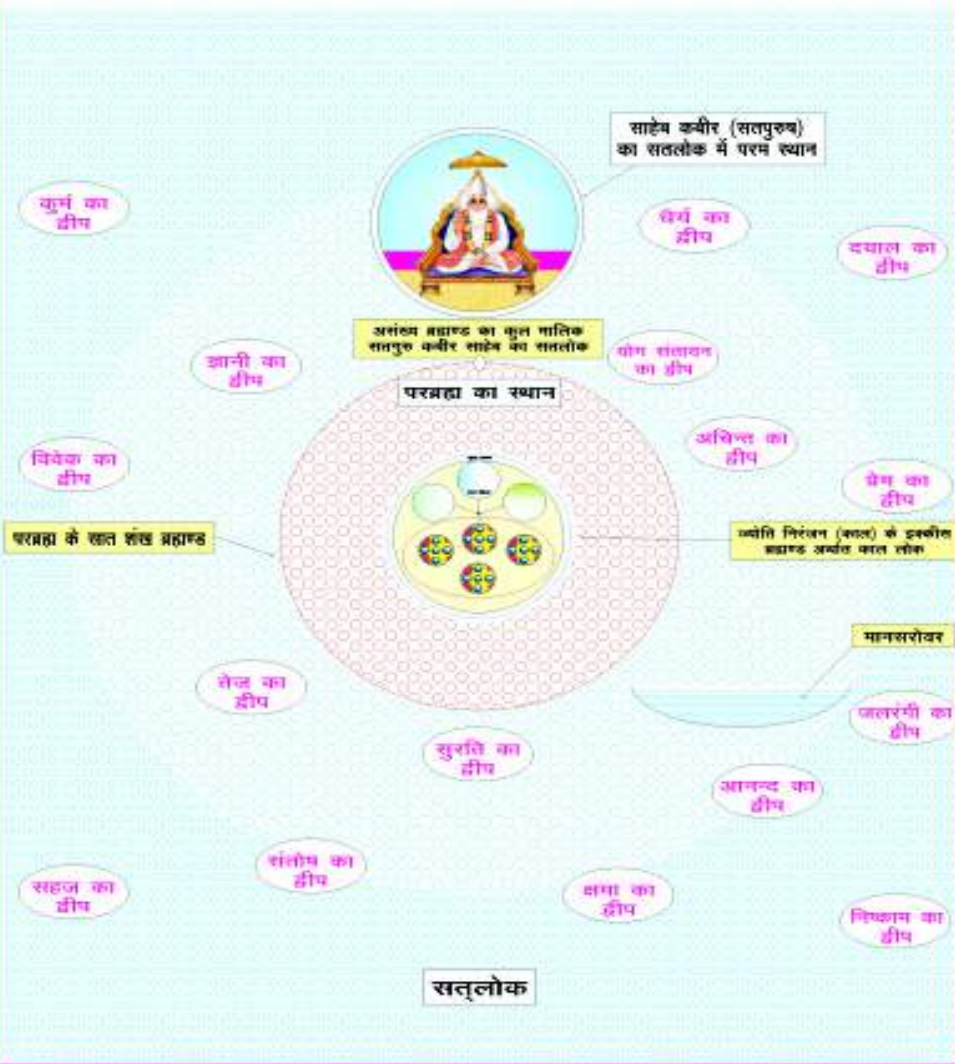
1. इस सृष्टी रचना में सतपुरुष, सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष, अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष अनामी लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है। जो भिन्न-2 रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्मण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परंतु यह तथा इसके ब्रह्मण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्मण्ड नाशवान हैं।

4. ब्रह्मा :- इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा कहलाता है तथा विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्मण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टी रचना।

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने अपने द्वारा रची सृष्टी का ज्ञान स्वयं ही बताया है। उसी ज्ञान को कृप्या पढ़िए लेखक के शब्दों में}

परमेश्वर कबीर जी द्वारा दिया ज्ञान लेखक के शब्दों में :- सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है पूर्ण परमात्मा उस अनामी अर्थात् अकह लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सर्व आत्माऐं उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम कूप का प्रकाश असंख्य सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेता है। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करता है तो उस समय उसी पद को लिखता है। जैसे गृहमंत्रालय के हस्ताक्षर करेगा तो अपने को गृह मंत्री लिखेगा। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति प्रधान मंत्री रूप में किए हस्ताक्षर से कम होती है। जबकि व्यक्ति वही होता है इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द (वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है। जिसके एक रोम कूप की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वर्ज्योति स्वयं प्रकाशित) है। एक रोम कूप की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की, एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3) ''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ जल में प्रवेश करके स्नान करने लगा। शीतल जल में आनन्द आया तथा जल में ही सो गया (क्योंकि सतलोक में शरीर स्वांसों पर आधारित नहीं है) ***लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निंरजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष(कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे। (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति/परानन्दनी भी कहते हैं। सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16(सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर का करोड़ों सूर्यों से भी अधिक एक रोम कूप का प्रकाश***

है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।

"आत्माऐं काल के जाल में कैसे फंसी ?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सर्व आत्माऐं जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्मण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा आत्मा से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्तता क्षर पुरुष से नहीं हटी। {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टी में सर्व प्राणियों में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्मी स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे अभिनय पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाते हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता–पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं – कभी न कभी लुक–छिप कर जाते ही रहते हैं।}

पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्मण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इसमें कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्मण्ड (प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्मण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि हे ब्रह्म ! तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्मण्ड दे सकता हूँ, परन्तु अपनी प्रिय आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वइच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन उन आत्माओं के पास आया। जो पहले से ही उस पर आसक्त थे। वे आत्माऐं उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्मण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार से रमणिक स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सर्व हंसों ने जो आज 21 ब्रह्मण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तो। तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष (कैल) तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा) दोनों

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र
शुन्य स्थान
परमेश्वर का राजदूत भवन
जटा कुण्डली और
महाशिव रूप में काल
महाब्रह्मा रूप में काल
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
ब्रह्म लोक
दुर्गा लोक
सप्तपुरी
धर्मराय का लोक
मानसरोवर
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
सुमेरु पर्वत
फलदार वृक्षों का वन
स्वर्ग
नरक
विष्णु लोक
शिव लोक
ब्रह्मा लोक
इन्द्र का लोक
सूर्य
पृथ्वी
वितल
महातल
अतल
सूतल
तलातल
रसातल
पाताल लोक

ब्रह्म लोक का लघु चित्र
महाविष्णु रूप में काल
सतोगुण प्रधान क्षेत्र
जटा कुण्डली झील
महाशिव रूप में काल
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
महाब्रह्मा रूप में काल
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
शुन्य स्थान
दुर्गा लोक
सप्तपुरी
अठासी हजार द्वीप
नकली अनामी लोक
नकली अगम लोक
नकली अलख लोक
नकली सतलोक
महाइन्द्र का द्वीप
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
सुमेरु पर्वत
फलदार वृक्षों का वन

उन हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं उन) सर्व आत्माओं ने हाँ कर दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्मण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्मण्ड सतलोक में ही थे।

तत् पश्चात पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा उन सर्व आत्माओं को जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इस बहन को वचन शक्ति प्रदान की है। आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा प्रारम्भ मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह विवाहकर्म महापाप का कारण है। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखूनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव (कबीर प्रभु)से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्मण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्मण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

{विशेष विवरण – अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/परम अक्षर पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म सर्व ब्रह्मण्डों का स्वामी है अर्थात् वासुदेव है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्मण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है। जो केवल इक्कीस ब्रह्मण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टी के एक ब्रह्मण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें आपको तीन अन्य नाम पढ़ने को मिलेंगे – ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद – एक ब्रह्मण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्मण्ड में बने चौदह लोकों में से केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकीय ब्रह्मा कहा जाता है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा जाता है।}

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मन मानी करूंगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी कबीर पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप ब्रह्म की अण्डे से उत्पति हुई है तथा बाद में मेरी उत्पति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी तू कहेगा मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर प्रकृति के साथ बलपूर्वक विवाह किया तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। युवा होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करा दिया, युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इक्त्रित किया तथा प्रकृति (दुर्गा) के द्वारा इन तीनों का विवाह किया। एक ब्रह्मण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त किए। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का प्रभु बनाया तथा स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्मण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही

रजोगुणी बन जाता है। उसका नाम ब्रह्मा रखता है दूसरा सत्तोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखता है दोनों के संयोग से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सत्तोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण युक्त पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं।(प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 8, 9 पृष्ठ नं. 99 से 110 तक, अनुवाद कर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरख पुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद्देवीमहापुराण तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्त्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) ***इन्हीं को धोखे में रख कर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार श्री शिव जी द्वारा करवाता है।*** (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वयं गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) ***गुण प्रधान क्षेत्र को समझने के लिए :- जैसे किसी घर में तीन कक्ष बने हों। एक कक्ष में अश्लील चित्र लगे हों। उस कक्ष में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कक्ष में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार उत्पन्न होते हैं तथा प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कक्ष में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना ब्रह्मलोक में की हुई है।***

''तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की

सृष्टी-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा (42)।

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् हम तीनों को जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव हैं ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

"ब्रह्म काल की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा"

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकृति) से कहा कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे ? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। आप मेरी आज्ञा का पालन करो जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाऐं तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा। दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।

अध्याय 7 का श्लोक 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्। २४।

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।

परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम) मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धि हीन मेरे अनुत्तम अर्थात् घटिया अविनाशी विशेष भाव को न जानते हुए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) प्रथम बार सागर मन्थन किया तो चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चें माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढ़े।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कर्विर्गिरिः अर्थात् कविर्वाणी(कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुप गई। सागर मन्थन के समय तीन भिन्न-2 रूपों में बाहर आई। गीता अध्याय 7 श्लोक 4 से 6 में स्पष्ट है कि जो जड़ प्रकृति है उससे भिन्न जो चेतन प्रकृति है। वह दुर्गा है। गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में स्पष्ट किया है कि सर्व प्राणी प्रकृति से उत्पन्न किए हैं मैं उसकी योनि में बीज स्थापित करता हूँ मैं सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा दुर्गा (प्रकृति) सब की माता है फिर श्लोक 5 में कहा है कि तीनों गुण (रजगुण, सतगुण, तमगुण) प्रकृति से उत्पन्न हुए हैं।

सिद्ध हुआ कि प्रकृति अर्थात् दुर्गा ही तीन रूप हुई। उन्हीं में से वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} ***जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी से बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से***

पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृतांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त अन्य कोई प्रभु नहीं है। मैं ही कर्त्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने कसम खाई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तू क्या करेगा? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको मुख नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्मण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।२४।

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष (माम्) मुझ (व्यक्तिम्) मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।(24)

केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धिहीन लोग मेरे अश्रेष्ठ अटल परम भावको न जानते हुए अदृश्यमान छुपे हुए अर्थात् परोक्ष मुझ मानव आकार में अर्थात् कृष्ण अवतार प्राप्त हुआ मानते हैं।(24)

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।२५।

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न–भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

केवल हिन्द अनुवाद : मैं योगमायासे छिपा हुआ अर्थात् अव्यक्त रूप में रहता हुआ सबके प्रत्यक्ष नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये जन्म न लेने वाले अविनाशी अटल भावको यह अज्ञानी जनसमुदाय संसार मुझे नहीं जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने भिन्न-भिन्न रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।(25)

"ब्रह्मा का अपने पिता(काल) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

जब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निंरजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। यह सुनकर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की ओर चल दिया। जहां अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि दुर्गा सृष्टी रचना क्यों नहीं की। भवानी ने कहा आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्म(काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। ब्रह्मा के बिना सब कार्य असम्भव है। तब दुर्गा(प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए था उसे कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोला तू कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री ने कहा की मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा ने पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साखि (गवाही) भरूँ। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी अन्य विकल्प न देख गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की पुहपवति नाम की उत्पन्न की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ। हाँ यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहां महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

"माता दुर्गा द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? तब तीनों ने कहा कि हाँ हमने अपनी आँखों से देखा है। भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निंरजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए।

यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं प्रतिज्ञा करके पिता की खोज करने गया था। परन्तु पिता ब्रह्म के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

ब्रह्मा को शाप : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाईयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मूर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

गायत्री को शाप : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मृतलोक में गाय बनेगी।

पुहपवति को शाप : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। {हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।}

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरूष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता–पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल–निंरजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} ***यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल/ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सत्ताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निंरजन (ब्रह्म/काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकृति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (ज्योति निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही दुर्गा का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निंरजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।***

"विष्णु का अपने पिता ब्रह्म की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आर्शीवाद पाना"

इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी ब्रह्म का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रवेश किया देख कर क्रोधित हो कर विष भरा फूंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को सजा देनी चाहिए। ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि विष्णु को शांत करना चाहिए तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र
शुन्य स्थान
परमेश्वर का राजदूत भवन
जटा कुण्डली और
महाशिव रूप में काल
महाब्रह्मा रूप में काल
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
ब्रह्म लोक
दुर्गा लोक
सप्तपुरी
धर्मराय का लोक
मानसरोवर
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
सुमेरु पर्वत
स्वर्ग
नरक
फलदार वृक्षों का वन
जटा कुण्डली झील
विष्णु लोक
शिव लोक
इन्द्र का लोक
सूर्य
ब्रह्मा लोक
पृथ्वी
वितल
महातल
अतल
सूतल
तलातल
रसातल
पाताल लोक
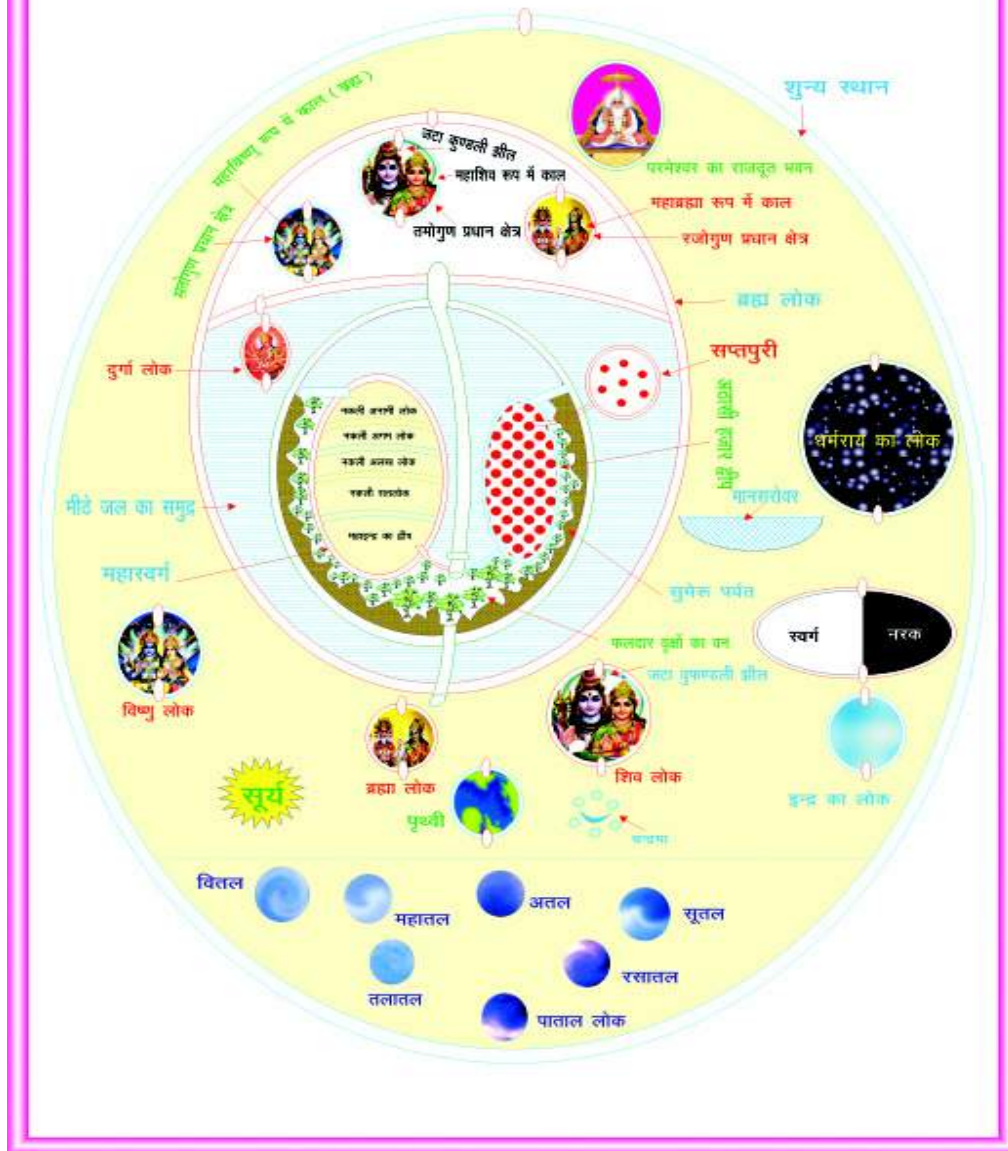
ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

भवंर गुफा जो परब्रह्म लोक में पहुंचती है।

सतलोक जाने का रास्ता

काल का निज लोक

महाब्रह्मण्ड

तप्त शिला

नकली अनामी लोक

नकली अगम लोक

नकली अलख लोक

नकली सतलोक

द्वादश अचिन्त भक्तों का निवास स्थान

वज्र कपाट (कुलुफ)

शून्य स्थान

शून्य स्थान

ब्रह्मण्ड

महाब्रह्मण्ड

ब्रह्मण्ड

ब्रह्मण्ड

ब्रह्मण्ड
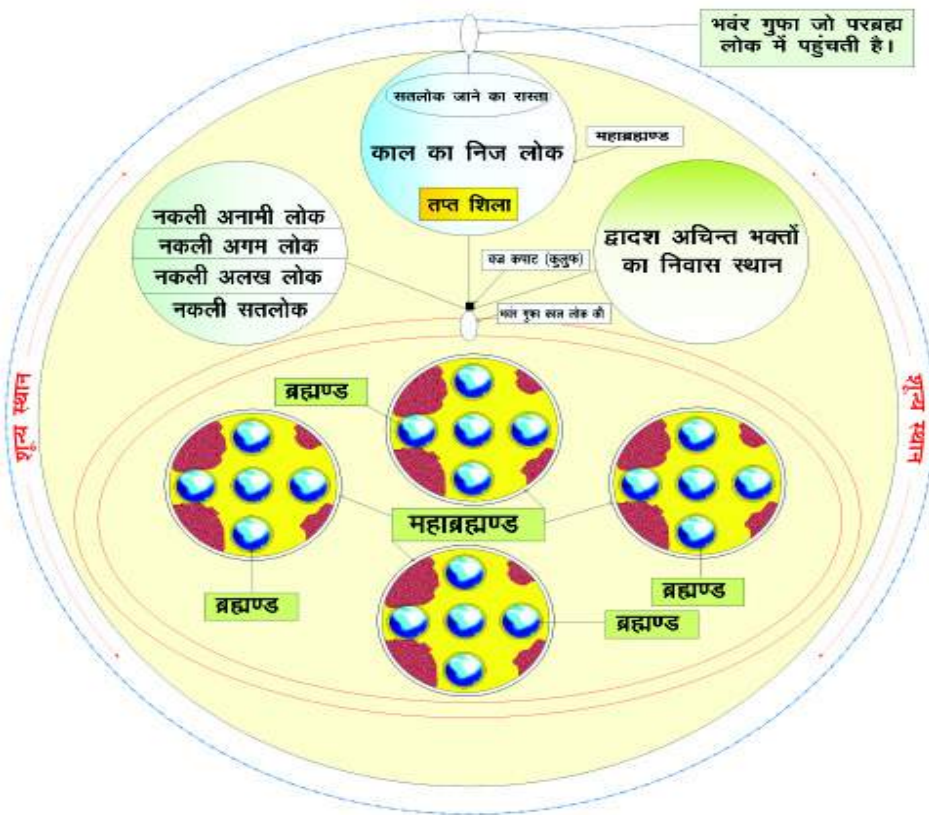
देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोद्ध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।

जो जीव देवे पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता प्रकृति बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से आपको तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय समाप्त करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।

मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।

स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।

निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।

देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

इस प्रकार अष्टंगी (प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब अष्टंगी (प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जगत् में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जगत् में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाईयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। जबकि सर्व शास्त्रों में परमात्मा साकार-मानव सदृश शरीर युक्त लिखा है। इसके बाद आदि भवानी, रूद्र (महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी! यदि मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर तो प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए : --

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चौले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया।

भगवान विष्णु जी को इन जीवों में मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग प्रदान किया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया।

क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

उपरोक्त विवरण एक ब्रह्मण्ड का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (अर्थात् काल भगवान) के इक्कीस ब्रह्मण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त नहीं होता अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। परन्तु नहीं समझ सके क्योंकि सबकी बुद्धि काल वश है। वेदों में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 दो बार में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'*। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर परमेश्वर पूर्ण विद्वान् है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम् अकायम्) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्यः अर्थान्) वास्तव में (शाश्वतिभः) अविनाशी है जिसके विषय में वेद वाणी द्वारा भी जाना जाता है कि परमात्मा साकार है तथा उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् जीव जिस भी योनी में जाता है। जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की साकार स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का जान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधी लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने प्रतिज्ञा की है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त कहा करेंगे* (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त अर्थात् परोक्ष कहते हैं।)*। (प्रमाण के लिए गीता*

अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 47, 48 तथा 32)

पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (अध्याय 11 श्लोक 32 से 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। क्योंकि मैं अपनी योग माया अर्थात् सिद्धी शक्ति से छिपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 का श्लोक 24-25) विचार करें :- अपने छूपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

क्योंकि जो पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 हजार प्रतिदिन जो अधिक उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की व्यवस्था की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाए तो सर्व को काल ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आऐं या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाएं। इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है। (कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र पृष्ठ 89 पर।)

प्रत्येक ब्रह्मण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करा रखी है। एक ब्रह्मण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभाले हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्मण्ड {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्मण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्मण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है।} *में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है। जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस*

समय इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डारे से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है। क्योंकि इस काल ब्रह्म का लोक (ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड) तथा परब्रह्म लोक (परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड) में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है। (कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का व ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड का लघु चित्र)

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्मण्डों को चार महाब्रह्मण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्मण्ड में पाँच ब्रह्मण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्मण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड की रचना एक महाब्रह्मण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। {प्रत्येक युग में अपने संदेश वाहक (नकली सतगुरु) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाईयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं।} *सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे जैसी* (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट जैसी होती है) *स्वयं गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंद निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हा-हाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म - मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।*

"परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों की स्थापना"

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में सतर्कता नहीं की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब) ने उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण इसे भी यह सतलोक में रहने योग्य नहीं रहा। अन्य कारण :- अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की वियोग में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत

आनन्द मना रहा होगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्मण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन आत्माओं की वियोग की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्मण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सहज ध्यान प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु सहज समाधी का अभ्यास केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं उसके वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान मांगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वइच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु के पूछने पर कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्मण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वइच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्रीइन्द्री (योनी) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्मण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मृत्यु कर्माधार पर कर्म फल तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्मण्ड उसके सहज समाधी के अभ्यास की इच्छा रूपी भक्ति की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किया तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्मण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख ब्रह्मण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है। (कृप्या देखें असंख ब्रह्मण्डों का चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ नं. 85 पर)

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएँ तथा 16 कलाऐं हैं तथा प्रकृति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाऐं हैं तथा 64 कला हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाऐं हैं तथा एक हजार कला है तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की

दस हजार भुजाऐं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। {**परब्रह्म की दस हजार कला हैं का प्रमाण :-** श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश अध्याय 9 श्लोक 53 (पृष्ठ 32) में है ''यस्य अयुतांश अयुतांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। पर ब्रह्मस्वरूपम् यत् प्रणमाम् अस्तम् अव्ययम् (53) हिन्दी अनुवाद :– जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में अर्थात् दस हजार वें अंश के दस हजार वें अंश में यह विश्व रचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्यक्त को हम प्रणाम करते हैं। (53) इस प्रमाण से सिद्ध हुआ कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष की दस हजार कलांऐं हैं जो स्वसम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के प्रमाण का समर्थन है। क्योंकि यह तत्व ज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने प्रथम सत्ययुग में ऋषि सत्य सुकृत नाम से प्रकट होकर श्री ब्रह्मा जी को सुनाया था। इसलिए श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान उस तत्वज्ञान से तथा शेष अपना अनुभव के ज्ञान का मिश्रण करके पुराण ज्ञान कहा है।} ***पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाऐं तथा असंख्य कलाऐं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्डों सहित असंख ब्रह्मण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाऐं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा इस परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी.वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए। उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।***

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए है तथा प्रत्येक ब्रह्मण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं। जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।

''वेदों में सृष्टी रचना का प्रमाण''

"पवित्र अथर्ववेद में सृष्टी रचना का प्रमाण"

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :–

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।।1।।

संधिछेद :– ब्रह्म जज्ञानम् प्रथमम् पुरस्तात् विसिमतः सुरुचः वेनः आवः सः बुध्न्याः उपमा अस्य विष्ठाः सतः च योनिम् असतः च वि वः। (1)

अनुवाद :– (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (जज्ञानम्) प्रकट होकर अपनी सूझ–बूझ से (पुरस्तात्) सर्व प्रथम समय में शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को उस (वेनः) रचनहार ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है इसलिए उसी मूल मालिक ने मूल स्थान सतलोक की रचना की है इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक को रच कर (अस्य) इस सतलोक के (उपमा) उपमा के सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई अर्थात् नाशवान लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म(काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय(अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को भिन्न-2 सीमा युक्त स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्मण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :–

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।
तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

संधिछेद :– इयम् पित्र्या राष्ट्रि एतु अग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः तस्मा एतम् सुरुचम् हवारमह्यम धर्मम् श्रीणान्तु प्रथमाय धास्यवे (2)

अनुवाद :– (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर से (एतु) इस (अग्रे) सर्वोतम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, उत्पन्न हुई जिस को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वइच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) सर्व प्रथम उत्पन्न की गई माया अर्थात् पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकषर्ण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को पूर्ण परमात्मा ने आदेश दिया कि सृष्टी समय तक बना रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव अर्थात् गुरूत्व आकर्षण से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्मण्डों को स्थापित किया है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :–

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।
ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

संधिछेद :– प्र यः जज्ञे विद्वानस्य बन्धुः विश्वा देवानाम् जनिमा विवक्ति ब्रह्मः ब्रह्मणः उज्जभार मध्यात् निचैः उच्चैः स्वधा अभिः प्रतस्थौ। (3)

अनुवाद :– (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्मण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी (जनिमा) पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को अपने द्वारा सृजन किए हुए सर्व ब्रह्मण्डों तथा सर्व देवों अर्थात् आत्माओं के विषय में (विवक्ति) स्वयं ही ठीक–ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म/क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्मण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः प्रतस्थौ) आकर्षण शक्ति से दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टी का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म(क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्मण्डों (ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख

ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों) को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टी का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

इस अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 3 में स्पष्ट है कि ब्रह्म की उत्पति पूर्ण ब्रह्म से हुई है। यही प्रमाण आगे लिखे ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में है तथा यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पति हुई है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः स पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।
महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां स**द्म** पार्थिवं च रजः।।4।।

संधिछेद :– सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमम् रोदसी अकस्भायत् महान् मही अस्कभायद विजातः धाम् सदम् पार्थिवम् च रजः। (4)

अनुवाद – (सः) वह वही परमात्मा है जिसने (हि) निःसंदेह ही (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक अगम लोक तथा अनामी/अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अविनाशी रूप से स्थिर किया है (सः) वह परमात्मा सर्व रचना करता है उसी ने उन्हीं के समान (मही) पृथ्वी वाले नीचे के सर्व लोक जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्मण्ड (पृथिव्या) पृथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पृथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को उसी {**जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म/अक्षर पुरूष के सप्त संख ब्रह्मण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्मण्डों को पृथ्वी तत्व से अस्थाई रचा**} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न–भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्मण्ड में छोटे–छोटे लोकों की (जातः) उसी परमात्मा ने रचना की तथा (अस्कभायत्) स्थिर किया।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर अस्थाई स्थापित किए।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

स बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोभ्यग्रं ब्हस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।
अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

संधिछेद :– सः बुध्न्यात् आष्ट्र जनुषेः अभि अग्रम् बृहस्पतिः देवता तस्य सम्राट अहः यत् शुक्रम् ज्योतिषः जनिष्ट अथ द्युमन्तः वि वसन्तु विप्राः। (5)

अनुवाद :– (सः) वह (बुध्न्यात्) मूल मालिक है जिस से (अभि–अग्रम्) सर्व प्रथम वाले सतलोक स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया/दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके पश्चात् (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज

शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) ब्राह्मण अर्थात् भक्त आत्माएं (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वि) भिन्न–2 (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी(प्रकृति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर(सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन(काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पृथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।
एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

संधिछेद :– नूनम् तत् अस्य काव्यः महः देवस्य पूर्व्यस्य धाम हिनोति पूर्वे विषिते एष जज्ञे बहुभिः साकम् इत्था अर्धे ससन् नु। (6)

अनुवाद – (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है (पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) सृष्टी उत्पति के ज्ञान से यर्थाथता को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची लगन से स्तुति करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर स्वयं जगत गुरु अर्थात् तत्वदर्शी सन्त के रूप में प्रकट होकर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आऐ थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तथा सत्य लोक दिखाकर वापस छोड़ा था। तब अपनी अमृतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने कहाः-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन। झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

संधिछेद :– यः अथर्वाणम् पित्तरम देवबन्धुम बृहस्पतिम नमसा अव च गच्छात त्वम विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्। (7)

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम्) सबसे बड़ा मालिक अर्थात् परमेश्वर (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक जा चुके हैं तथा अन्य को

सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों को (जनिता) रचने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्–देवः) कविर्देव है। भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं। क्योंकि कविर्=कबिर् फिर अपभ्रंश होकर कबीर कहा जाने लगा तथा देव=परमेश्वर अर्थ है। इसलिए कबीर परमेश्वर उसी काशी वाले जुलाहे का सम्बोधन वेदों में है।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) सबसे बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल(ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणम् त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

"पवित्र ऋग्वेद में सृष्टी रचना का प्रमाण"

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।1।।

संधिछेद :– सहस्रशिर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात् स भूमिम् विश्वतः वृत्वा अत्यातिष्ठत् दशंगुलम्। (1)

अनुवाद :– (पुरुषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरूष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्मण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल-ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल-ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है गीता अध्याय 11 श्लोक 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्रबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज में दर्शन दीजिए। क्योंकि अर्जुन काल का वास्तविक रूप भी आँखों देख रहा था तथा अपनी बुद्धि से उसे कृष्ण अर्थात् विष्णु मान रहा था) जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्मण्डों को गोलाकार परिधी में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में बैठा है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।

उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।2।।

संधिछेद :– पुरूष एव इदम् सर्वम् यत् भूतम् यत् च भाव्यम् उत अमृतत्वस्य इशानः यत् अन्नेन अतिरोहति। (2)

अनुवाद :– (एव) परब्रह्म ही कुछ (पुरूष) भगवान जैसे लक्षणों युक्त है (च) और (इदम्) इस के लोक में यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत) सन्देह युक्त (अमृतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है। अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मृत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।।3।।

संधिछेद :– एतावान अस्य महिमा अतः ज्यायान् च पुरूषः पादः अस्य विश्वा भूतानि त्रि पाद् अस्य अमृतम् दिवि। (3)

अनुवाद :– (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर मात्र है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक– अलख लोक–अगम लोक (अमृतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्मण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश अर्थात् उन्हीं की रचना है।

भावार्थ :- इस उपरोक्त मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्मण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी(अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरुष-अक्षर पुरुष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरुष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 संख्या 16-17 में तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 18 से 22 में भी है इस प्रकार तीन अव्यक्त प्रभु हैं {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :- गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार।
दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से सर्व रचना करने के कारण शब्द स्वरूपी प्रभु। हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ सर्व सुखदाई परमात्मा है।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

संधिछेद :– त्रि पाद ऊर्ध्वः उदैत् पुरूषः पादः अस्य इह अभवत् पूनः ततः विश्वङ् व्यक्रामत् सः अशनानशने अभि।(4)

अनुवाद :– (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टी रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अन्य रचना से पूर्व का है। फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज(क्षमता) को सर्व ब्रह्मण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए सर्व ओर छोड़ा हुआ है। जैसे मोबाइल फोन का टावर एक देशीय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज(क्षमता) सर्वत्र अपनी सीमा में फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा ने अपनी निराकार शक्ति को सर्वव्यापक किया है। जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित

रखता है।

उपरोक्त तीन प्रभुओं (1. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म, 2. अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म 3. परम अक्षर पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत्गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 1 तथा 3 में भी है। क्योंकि श्रीमद्भगवत् गीता जी पवित्र चारों वेदों का सारांश है)

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुलन न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।5।।

संधिछेद :– तस्मात् विराट अजायत विराजः अधि पुरूषः सः जातः अत्यरिच्यत पश्चात् भूमिम् अथः पुरः। (5)

अनुवाद :– (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरूष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक अर्थात् काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे–छोटे लोक (सः) वह (जातः) पूर्ण परमेश्वर ही उत्पन्न किया करता है अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व लोकों को स्थापित किया।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव(कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म(काल) की उत्पत्ति हुई {यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 14 में है कि अक्षर पुरूष से अर्थात् अविनाशी परमात्मा से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई।} ***उस पूर्ण ब्रह्म ने भूमिम् अर्थात् पृथ्वी तत्व से ब्रह्म तथा परब्रह्म के उसी ने छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।***

इस ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 5 में स्पष्ट है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष/काल की उत्पति पूर्ण परमात्मा से हुई है। यही प्रमाण पूर्वोक्त अथर्ववेद काण्ड 4 में अनुवाक 1 मन्त्र 3 में है तथा यही प्रमाण श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 3 मन्त्र 14-15 में है कि ब्रह्म की उत्पति अक्षरम् सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् अविनाशी सर्व व्यापक परमात्मा से हुई है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।।15।।

संधिछेद :– सप्त अस्य आसन् परिधयः त्रिसप्त समिधः कृताः देवा यत् यज्ञम् तन्वानाः अबध्नन् पुरूषम् पशुम्। (15)

अनुवाद :– (सप्त) सात संख ब्रह्मण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्मण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कृताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं

(यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- वह पूर्ण परमात्मा सात संख ब्रह्मण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्मण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बली दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मृत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंध छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि=(कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि=(बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।16।।

संधिछेद :– यज्ञेन यज्ञम् अयजन्त देवाः तानि धर्माणि प्रथमानि आसन् ते ह नाकम् महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। (16)

अनुवाद :– जो (देवाः) देव स्वरूप भक्तात्मायें (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार से अर्थात् शास्त्रवर्णीत विधि अनुसार (यज्ञम्) यज्ञ रूपी धार्मिक (अयजन्त्) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन अपनी भक्ति कमाई के बल द्वारा(नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली सृष्टी के (देवाः) देव स्वरूप भक्त आत्मायें (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू आदि नशीली व अखाद्य वस्तुओं का सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है) देव स्वरूप भक्त आत्माऐं शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची सृष्टी के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माऐं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माऐं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्मण्डों में आ गई, फिर भी असंखों आत्माऐं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरे वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक उस पूर्ण परमात्मा (परम दिव्य पुरूष) की साधना अंतिम स्वांस तक करता है वह शास्त्र अनुकूल की गई साधना की कमाई के बल के कारण उस परमात्मा पूर्ण ब्रह्म को प्राप्त होता है अर्थात् उस परम दिव्य पुरूष के पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ की तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म

- पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म=ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म=अक्षर पुरुष - अक्षर ब्रह्म तथा 3. पूर्ण ब्रह्म=परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाईयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। इस कारण से उस परमात्मा को महान कवि की उपाधी से जाना जाता है परन्तु वह कविर्देव वही परमात्मा होता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें नराकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश अर्थात् नराकार में विराजमान है। अधिक जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें वेदों में प्रमाण पृष्ठ 421 से 440 पर इसी पुस्तक में।

''पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण''

(दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द (गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा, ब्रह्म (काल) की पत्नी है। एक ब्रह्मण्ड की सृष्टी रचना के विषय में राजा श्री परिक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्मण्ड की रचना कैसे हुई ? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्मण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है ? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे नहीं मालूम इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया ? एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टी करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षए आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रवेश दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा। (यह ब्रह्म ही तीन रूप बना कर ऊपर लीला कर रहा है। कृप्या देखें एक ब्रह्मण्ड का चित्र पृष्ठ 89) फिर एक देवी देखी, उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म

काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा-सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देवता नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा काल ब्रह्म (सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी ने प्रश्न किया कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है ? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कंद के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ये तीनों देवता, ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) का विवाह दुर्गा (प्रकृति देवी) ने किया। पृष्ठ नं. 128-129 पर, श्री देवी पुराण तीसरे स्कंद में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि। १२।

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तवमें (तेषु)

उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।(12)

केवल हिन्दी अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा जान परंतु वास्तवमें उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं।(12)

*भावार्थ :- **गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) द्वारा जो भी उत्पति, स्थिति तथा संहार हो रहा है इसका निमित्त मैं ही हूँ। परन्तु मैं इनसे दूर हूँ। कारण है कि काल को शापवश एक लाख प्राणियों का आहार करना होता है। इसलिए मुख्य कारण अपने आप को कहा है तथा काल भगवान तीनों देवताओं से भिन्न ब्रह्म लोक में रहता है तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में रहता है। इसलिए कहा है कि मैं उनमें तथा वे मुझ में नहीं हैं।***

श्री मद्देवीभागवत से लेख :-(प्रथम स्कन्ध अध्याय 23,28,29,31,38,39,41,42 पृष्ठ 1 से 8)

(प्रथम स्कन्ध अध्याय 1 पृष्ठ 23) श्री सूत जी ने कहा :-पौराणिकों एवं वैदिकोंका कथन है तथा यह भलीभाँति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्माजी का जन्म भगवान् विष्णु के नाभिकमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिति में ब्रह्माजी जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे? भगवान् विष्णु को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते। वे शेषनागकी शय्यापर सोये हुए थे। नाभिसे कमल निकला और उसपर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किंतु वे श्रीहरि भी तो किसी आधारपर अवलम्बित थे। उनके आधारभूत क्षीरसमुद्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता; क्योंकि वह रस है। रस बिना पात्र के ठहरता नहीं, कोई न कोई रसका आधार रहना ही चाहिये। अतएव चराचर जगत् की आधारभूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निशचित हुई।

(प्रथम स्कन्ध, अध्याय 8 पृष्ठ 41 पर) ऋषियों ने पूछा - महाभाग सूत जी! इस कथा प्रसङ्गको जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है; क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञजनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर—ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। ब्रह्माजी सारे संसार की सृष्टी करते हैं। जगत् का संरक्षण भगवान् विष्णु के अधीन रहता है। प्रलय के अवसर पर शंकर जी उसका संहार किया करते हैं। इस जगत्प्रपञ्च के ये ही तीनों देवता कारण हैं। ये वास्तव में एक ही हैं, किंतु कार्यवश सत्त्व, रज और तम आदि गुणों को स्वीकार करके ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नाम से विख्यात होते हैं। इन तीनों में परमपुरूष भगवान् विष्णु सबसे श्रेष्ठ हैं। वे जगत् के स्वामी और आदिदेव कहलाते हैं। उनमें सब कुछ करने की योग्यता है। दूसरा कोई भी देवता उन अतुल तेजस्वी श्रीविष्णु के समान शक्तिशाली नहीं है। फिर ऐसे सर्वसमर्थ परमप्रभु भगवान् श्री विष्णु योगमाया के अधीन होकर कैसे सो गये? महाभाग! हमें यह महान् संदेह हो रहा है! इस मङ्गलमय प्रसङ्ग को सुनाने की कृपा कीजिये। सुव्रत! आप पहले जिसकी चर्चा कर चुके हैं तथा जिसने परमप्रभु विष्णु पर भी अधिकार जमा लिया, वह कौन—सी शक्ति है? कहाँ से उसकी सृष्टी हुई, उसमें कैसे इतना पराक्रम हो गया और क्या उसका परिचय है — सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं - मुनिवरो! चराचर सहित इस त्रिलोकीमें कौन ऐसा है, जो इस संदेहको दूर कर सके। ब्रह्माजी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावो ! यह प्रश्न बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इसके सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ ?

(पृष्ठ 42) विद्वान पुरूष ऐसा कहते हैं और पुराणों ने भी घोषणा की है कि ब्रह्मा में सृष्टी करने की शक्ति है और विष्णु पालन करने में समर्थ हैं तथा शंकर संहार करने में कुशल है। सूर्य जगत् को प्रकाश देते हैं। शेष और

कच्छप पृथ्वी धारण किये रहते हैं। अग्नि में जलाने की और पवन में हिलाने–डुलाने की शक्ति है। सबमें जो शक्ति विराजमान है, वही आद्याशक्ति है। उसी के प्रभाव से शिव भी शिवता को प्राप्त होते हैं। जिसपर उस शक्ति की कृपा न हुई, वह कोई भी हो, शक्तिहीन हो जाता है। बुधजन उसे असमर्थ कहते हैं। सबमें व्यापक रहने वाली जो आद्याशक्ति है, उसी का 'ब्रह्म' इस नाम से निरूपण किया गया है। अतएव विद्वान् पुरूषों को चाहिये कि भलीभाँति विचार करके सदा उसी शक्तिकी उपासना करे। विष्णु में सात्त्विकी शक्ति व्याप्त है। यदि वह उनसे अलग हो जाए तो विष्णु कुछ भी न कर सकें। ब्रह्मा में जो राजसी शक्ति है, उसके बिना वे सृष्टी–कार्य में अयोग्य हैं। शिव में जो तामसी शक्ति है, उसी के प्रभाव से वे संहारलीला करते हैं। मनोयोग–पूर्वक इस प्रकार बार–बार विचार करके सारी बात समझ लेनी चाहिये। वही आद्याशक्ति इस अखिल ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करती और उसका पालन भी करती है। वही इच्छा होने पर इस चराचर जगत् का संहार भी करने में संलग्न हो जाती है। **ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, इन्द्र, अग्नि और पवन-ये सभी किसी प्रकार भी स्वतन्त्ररूप से अपने-अपने कार्य का सम्पादन नहीं कर सकते; किंतु जब वह आद्याशक्ति इन्हें सहयोग देती है, तभी ये अपने कार्य में सफल होते हैं।** अतः इन कार्य–कारणों से यही प्रत्यक्ष सिद्ध होता है कि वह शक्ति ही सर्वोपरि है।

(पहला स्कन्ध अध्याय 6 पृष्ठ 38-39) ब्रह्मा जी के स्तुति करने पर भी भगवान् विष्णु की नींद नहीं टूटी। उन पर योगनिद्रा का पूरा अधिकार जम चुका था। तब ब्रह्मा जी सोचने लगे–'अब श्रीहरि शक्ति के प्रभाव से पूर्ण प्रभावित होकर खूब गाढ़ी नींद में मग्न हो गये हैं।

इससे सिद्ध हो गया, ये भगवती योगनिद्रा इन लक्ष्मीकान्त भगवान् विष्णु की भी अधिष्ठात्री हैं। लक्ष्मी जी भी इन्हीं के अधीन हो गयीं; क्योंकि पतिदेव विष्णु ही जब अधीन हो गये, तब उनकी अलग सत्ता कहाँ। इससे निश्चित होता है कि यह अखिल ब्रह्माण्ड भगवती योगनिद्रा के अधीन है। मैं (ब्रह्मा), विष्णु, शंकर, सावित्री, लक्ष्मी और उमा–सभी इन्हीं योगनिद्रा के शासनसूत्र में बँधे हैं।

ब्रह्मा जी बोले - देवी! मैं जान गया, तुम निश्चय ही इस जगत् की कारणस्वरूपा हो। सम्पूर्ण वेद–वचन इसे प्रमाणित कर रहे हैं। यही कारण है कि चराचर जगत् को प्रबुद्ध करने वाले परमपुरूष भगवान् विष्णु आज गाढ़ी नींद में मग्न हैं।

(पहला स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29) नारदजी ने कहा - महाभाग व्यासजी! तुम इस विषय में जो पूछ रहे हो, ठीक यही प्रश्न मेरे पिताजी ने भगवान् श्रीहरि से किया था। देवाधिदेव भगवान् जगत् के स्वामी हैं। लक्ष्मी जी उनकी सेवा में उपस्थित रहती हैं। दिव्य कौस्तुभमणि उनकी शोभा बढ़ाती है। वे शङ्ख, चक्र और गदा लिये रहते हैं। पीताम्बर धारण करते हैं। चार भुजाएँ हैं। वक्षःस्थलपर श्रीवत्सका चिन्ह चमकता रहता है। वे चराचर जगत् के आश्रयदाता हैं, जगत्गुरु एवं देवताओं के भी देवता हैं। ऐसे जगत्प्रभु भगवान् श्रीहरि महान् तप कर रहे थे। उनकी समाधि लगी थी। यह देखकर मेरे पिता जी ब्रह्माजी को बड़ा आश्चर्य हुआ। अतः उन्होंने उनसे जानने की इच्छा प्रकट की।

ब्रह्मा जी ने पूछा-प्रभो! आप देवताओं के अध्यक्ष, जगत् के स्वामी और भूत, भविष्य एवं वर्तमान–**सभी जीवों के एकमात्र शासक हैं। भगवन्! फिर आप क्यों तपस्या कर रहे हैं और किस देवता की आराधना में ध्यानमग्न हैं?** मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा हैं कि आप देवश्वर एवं सारे संसार के शासक होते हुए भी समाधि लगाये बैठे हैं।

ब्रह्माजी के ये विनीत वचन सुनकर भगवान् श्रीहरि (श्री विष्णु) उनसे कहने लगे-'ब्रह्मन्! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मनका विचार व्यक्त करता हूँ। देवता, दानव और मानव–सब यही जानते हैं कि तुम सुष्टि करते हो, मैं पालन करता हूँ और शंकर संहार किया करते हैं, किन्तु फिर भी वेद के पारगामी पुरूष अपनी युक्ति से यह सिद्ध करते हैं कि रचने, पालने और संहार करने की यह योग्यता जो हमें मिली है, इसकी अधिष्ठात्री शक्तिदेवी हैं। वे कहते हैं कि संसार की सृष्टी करनेके लिये **तुममें राजसी शक्तिका संचार हुआ है, मुझे सात्त्विकी शक्ति**

मिली है और रूद्र में तामसी शक्ति का अविर्भाव हुआ है। उस शक्ति के अभाव में तुम इस संसार की सृष्टी नहीं कर सकते, मैं पालन करने में सफल नहीं हो सकता और रूद्रसे संहारकार्य होना भी सम्भव नहीं। ब्रह्माजी! हम सभी उस शक्ति के सहारे ही अपने कार्य में सदा सफल होते आये हैं। सुव्रत! प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों उदाहरण मैं तुम्हारे सामने रखता हूँ, सुनो। यह निश्चित बात है कि उस शक्ति के अधीन होकर ही मैं (प्रलयकालमें) इस शेषनाग की शय्यापर सोता हूँ और सृष्टी करने का अवसर आते ही जग जाता हूँ। **मैं सदा तप करने में लगा रहता हूँ। उस शक्ति के शासन से कभी मुक्त नहीं रह सकता। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मी के साथ सुख-पूर्वक समय बिताने का सौभाग्य प्राप्त होता है। मैं कभी तो दानवों के साथ युद्ध करता हूँ।** अखिल जगत् को भय पहुँचानेवाले दैत्यों के विकराल शरीरोंको शान्त करना मेरा परम कर्तव्य हो जाता है।

मुझे सब प्रकारसे शक्ति के अधीन होकर रहना पड़ता है। उन्हीं भगवती शक्ति का मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। ब्रह्माजी! मेरी जानकारी में इन भगवती शक्ति से बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।

(पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31) सूतजी कहते हैं - इस प्रकार ब्रह्माजी के कहने पर उसी क्षण वम्री ने प्रत्यञ्चा को, जो नीचे भूमि पर थी, खा लिया। फिर तो बन्धन–मुक्त हो गया। प्रत्यञ्चा कटते ही दूसरी ओर की डोरी भी वैसे ही ढीली पड़ गयी। उस समय बड़े जोर से भयंकर शब्द हुआ, जिससे देवता भयभीत हो उठे। चारों ओर अन्धकार छा गया। सूर्य की प्रभा क्षीण हो गयी। फिर तो सभी देवता घबराकर सोचने लगे–'अहो, ऐसे भयंकर समय में पता नहीं क्या होने वाला है।' ऋषियों! समस्त देवता यों सोच रहे थे; इतने में पता नहीं, भगवान् विष्णुका मस्तक कुण्डल और मुकुटसहित कहाँ उड़कर चला गया। कुछ समय के बाद जब घोर अन्धकार शान्त हुआ, तब भगवान् शंकर और ब्रह्मा जी ने देखा श्रीहरिका श्रीविग्रह बिना मस्तक का पड़ा हुआ है। यह बड़े आश्चर्य की बात सामने आ गयी।

ब्रह्माजी ने कहा - कालभगवान् ने जैसा विधान रच रखा है, वैसा अवश्य ही होता है – यह बिलकुल असंदिग्ध बात है। जैसे बहुत पहले काल की प्रेरणा से भगवान् शंकर ने मेरा ही मस्तक काट दिया था। उसी तरह आज भगवान् विष्णु का भी मस्तक धड़ से अलग होकर समुद्र में जा गिरा है।

श्री देवी भागवत् पुराण से निष्कर्ष :-(1)अध्याय 1 प्रथम स्कन्ध पृष्ठ 23 पर लिखे विवरण से स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी सृष्टा नहीं है। सर्व शक्तिमान नहीं हैं।

2. श्री सूत जी अर्थात् पुराण ज्ञान वक्ता दुर्गा को सृष्टा कह रहा है तथा यह भी कह रहा है कि जगदम्बा (दुर्गा) की उत्पति के विषय में कपिल जी तथा नारद जी भी नहीं जानते मैं क्या उत्तर दे सकता हूँ। इस से सिद्ध है कि पुराण वक्ता भी अल्पज्ञ है। इसलिए उसका ज्ञान कि जगदम्बा (दुर्गा) सृष्टा है मान्य नहीं है।

3. प्रथम स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29 वाले लेख से स्पष्ट है कि (क) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी है।(ख) श्री विष्णु जी भी दुर्गा देवी की पूजा करता है। (ग) श्री विष्णु जी तप करता है। (घ) श्री विष्णु जी स्वीकार करता है कि मैं महा दुःखी हूँ क्योंकि राक्षसों के साथ युद्ध करने में लगा रहता हूँ। कभी तप करके अपनी बैट्री चार्ज करता हूँ बहुत कम समय ही लक्ष्मी के साथ रहने को मिलता है। (ड़) श्री विष्णु जी दुर्गा देवी को सबसे बड़ा देवता (परमात्मा) मानते हैं। जो श्री विष्णु जी की अल्पज्ञता का प्रमाण है।

4. पहला स्कन्ध अध्याय 5 पृष्ठ 31 वाले विवरण से स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव भी काल भगवान के आधीन हैं। वह इनको जैसा नाच नचाना चाहता है नचाता है।

5. पहला स्कन्ध अध्याय 8 पृष्ठ 41 वाले विवरण में स्पष्ट है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव समर्थ नहीं हैं।

''पवित्र शिव महापुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण''

(दुर्गा अर्थात् प्रकृति तथा सदा शिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

यही प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्त्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पृष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकृति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभु और महेश्वर भी कहते हैं। (पृष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (पृष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पृष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पृष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए जिस से सिद्ध हुआ कि सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकृति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

कृप्या पढ़ें अन्य प्रमाण जो स्वसम वेद (कविर्वाणी) में वर्णित हैं। अन्तर इतना है कि पुराणों के वक्ता व ज्ञान दाता तथा लेखक तत्वज्ञान से अपरिचित थे। जिस कारण से काल ब्रह्म (क्षर पुरूष अर्थात् ज्योति निरंजन) के जाल को नहीं समझ सके। यही कारण रहा की सर्व ऋषिजन व देवता काल ब्रह्म को विष्णु या शिव या ब्रह्मा कह कर अखिल विश्व का सृष्टा बताते रहे। जो ऋषि साधक उस काल ब्रह्म को शिव रूप में ईष्ट देव मानकर उपासना करता था। उसने श्री ब्रह्मा जी द्वारा बताए सृष्टी रचना के अधूरे ज्ञान के आधार पर श्री शिव पुराण की रचना की जिसमें वक्ता व ज्ञान दाता दोनों विचलित हैं। एक तरफ तो कहा है कि भगवान शिव ही श्री ब्रह्मा रूप धारण करके सृष्टी करता है। विष्णु रूप धारण करके स्थिति बनाए रखता है या श्री शिव रूप धारण करके संहार करता है। फिर लिखा है (पृष्ठ 19) जिन से ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र (शिव) आदि पहले प्रकट हुए हैं। वे ही महादेव, सर्वज्ञ एवं सम्पूर्ण जगत के स्वामी हैं। शिव पुराण में ही फिर लिखा है (पृष्ठ 86) :- हमने सुना है कि भगवान शिव शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। वे महान दयालु हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश- ये तीनो देवता शिव के ही अंग से उत्पन्न हुए हैं। शिव पुराण में ही लिखा है (पृष्ठ 131 पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- मुनि श्रेष्ठ नारद! इस प्रकार मैंने सृष्टी क्रम का तुम से वर्णन किया है। ब्रह्माण्ड का यह सारा भाग भगवान् शिव की आज्ञा से मेरे द्वारा रचा गया है। भगवान शिव को

परब्रह्म परमात्मा कहा गया है। मैं, विष्णु तथा रूद्र- ये तीनों देवता उन्हीं के भाग बताए गये हैं। वे मनोरम शिव लोक में शिवा (दुर्गा) के साथ स्वच्छन्द विहार करते हैं। भगवान् शिव स्वतन्त्र परमात्मा हैं। निगुर्ण और सर्गुण भी वे ही हैं। इसी शिव पुराण में (पृष्ठ 115 पर) श्री ब्रह्मा जी ने कहा है कि नारद! जो स्फटिक मणी के समान निर्मल, निष्कल (आकार रहित) अविनाशी परम देव है, जो ब्रह्मा, रूद्र और विष्णु आदि देवताओं की भी दृष्टि में नहीं आते। जिनकी शिवत्व नाम से ख्याती है। जो शिव लिंग के रूप में प्रतिष्ठित है। उन भगवान शिव का शिव लिंग के मस्तक पर प्रणव मन्त्र (ओम्) से ही पूजन करें।

➽ उपरोक्त विवरण श्री शिव पुराण से है। जिसमें स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी से भिन्न कोई अन्य प्रभु भी है। परन्तु ऋषिजन उस अन्य प्रभु (काल ब्रह्म) से अपरिचित है। इसीलिए कभी ब्रह्मा जी को सृष्टा बताते हैं कभी विष्णु जी को तथा कभी शिव को सृष्टा बताते हैं। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) से अपरिचित हैं। पूर्वोक्त सृष्टी रचना से आप पाठकों को काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) परब्रह्म (अक्षर पुरूष) तथा इन से भी भिन्न परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा का ज्ञान हुआ। कृप्या पढ़ें श्री शिव पुराण में सृष्टी रचना का सांकेतिक ज्ञान जो श्री ब्रह्मा जी ने पूर्ण परमात्मा से सुना था। परन्तु काल ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी को आकाशवाणी आदि करके भ्रम में डाल कर गलत ज्ञान से परिपूर्ण कर दिया जो पुराणों में वर्णित है। श्री शिव पुराण में श्री ब्रह्मा जी ने कुछ ज्ञान पूर्ण परमात्मा सतसुकृत जी से सुना हुआ तथा कुछ अपने अनुभव का लिखा है तथा श्री ब्रह्मा जी से सुना हुआ ज्ञान अन्य वक्ताओं ने जो ज्ञान कहा है, लिखा गया है। यही दशा अन्य सत्तरह पुराणों के ज्ञान की है। श्री ब्रह्मा जी ने कुछ सत्य तथा कुछ असत्य तथा कुछ अपना अनुभव तथा कुछ पूर्ण परमात्मा के मुख से सुना ज्ञान पुराणों में कहा है। फिर भी यथार्थ ज्ञान को समझने व परखने के लिए पुराणों व वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता जी का ज्ञान बहुत सहयोगी है। कृप्या आगे पढ़ें श्री शिव पुराण से लेख :-

संक्षिप्त शिवपुराण, (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार) के अध्याय रूद्रसंहिता पृष्ठ 99 से 110 :-

ब्रह्माजीने कहा - ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत् के उपकार में ही लगे रहते हो। तुमने लोगों के हित की कामना से यह बहुत उत्तम बात पूछी है।

जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अंधकार ही अंधकार था। न सूर्य दिखायी देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों और नक्षत्रों का भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात; अग्नि, पृथ्वी, वायु और जल की भी सत्ता नहीं थी।

उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुति में जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था।
जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण उक्तियोंद्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते हैं; उसने कुछ काल के बाद (सृष्टीका समय आने पर) द्वितीय की इच्छा प्रकट की—उसके भीतर एकसे अनेक होने का संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्मा ने अपनी लीलाशक्ति से अपने लिये मूर्ति (आकार) की कल्पना की।

जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हीं को ईश्वर कहते हैं। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करनेवाले **उन सदाशिव ने अपने विग्रहसे स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्ति की सृष्टी की,** जो उनके अपने श्रीअंग से कभी अलग होनेवाली नहीं थी। **उस पराशक्ति को प्रधान, प्रकृत्ति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्वकी जननी** तथा

विकाररहित बताया गया है। **वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसीको प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी, नित्या, और मूलकारण भी कहते हैं। सदाशिवद्वारा प्रकट की गयी उस शक्तिके आठ भुजाएँ हैं।** नाना प्रकार के आभूषण उसके श्रीअंगोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकार की गतियों से सम्पन्न है और अनेक प्रकारके अस्त्र–शस्त्र धारण करती है। एकाकिनी होने पर भी वह माया संयोगवशात् अनेक हो जाती है।

वे जो सदाशिव हैं, उन्हें परमपुरूष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन कालरूपी ब्रह्मने एक ही समय शक्ति के साथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्र का निर्माण किया था। उस उत्तम क्षेत्र को ही काशी कहते हैं। वह परम निर्वाण या मोक्ष का स्थान है, जो सबसे ऊपर विराजमान है। **वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव, जो परमानन्द स्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्र में नित्य निवास करते हैं।** काशीपुरी परमानन्दरूपिणी है। मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्र को अपने सांनिध्यसे मुक्त नहीं किया है।

देवर्षे! एक समय उस आनन्दवन में रमण करते हुए शिवा और शिव के मन में यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरूष की भी सृष्टी करनी चाहिए, जिसपर यह सृष्टी–संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरें और निर्वाण धारण करें।

ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वामभाग के दसवें अंगपर अमृत मल दिया। फिर तो वहाँ से एक पुरूष प्रकट हुआ।

तदनन्तर उस पुरूष ने परमेश्वर शिव को प्रणाम करके कहा–'स्वामिन्! मेरे नाम निश्चित कीजिये और काम बताइये। उस पुरूष की यह बात सुनकर महेश्वर भगवान् शंकर हँसते हुए मेघके समान गम्भीर वाणी में उससे बोले–

शिव ने कहा- वत्स! व्यापक होने के कारण तुम्हारा विष्णु नाम विख्यात हुआ। इसके सिवा और भी बहुत–से नाम होंगे, जो भक्तों को सुख देने वाले होगें। तुम सुस्थिर उत्तम तप करो; क्योंकि वही समस्त कार्यों का साधन है।

ऐसा कहकर भगवान् शिवने श्वासमार्गसे श्री विष्णु को वेदों का ज्ञान प्रदान किया। तदनन्तर अपनी महिमा से कभी च्युत न होनेवाले श्रीहरि भगवान् शिवको प्रणाम करके बड़ी भारी तपस्या करने लगे और शक्तिसहित परमेश्वर शिव भी पार्षदगणों के साथ वहाँ से अदृश्य हो गये। भगवान विष्णु ने सुदीर्घ काल तक बड़ी कठोर तपस्या की।

ब्रह्माजी कहते हैं - देवर्षे! तत्पश्चात् कल्याणकारी परमेश्वर साम्ब सदाशिव ने पूर्ववत् प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंग से उत्पन्न किया। मुने! उन महेश्वर ने मुझे तुरन्त ही अपनी माया से मोहित करके नारायण देव के नाभी कमल में डाल दिया और लीला पूर्वक मुझे वहाँ से प्रकट किया। इस प्रकार उस कमल से पुत्र के रूप में मुझ हिरण्यगर्भ का जन्म हुआ।

मैंने उस कमल के सिवा दूसरे किसी को अपने शरीर का जनक या पिता नहीं जाना। मैं कौन हूँ, कहाँ से आया हूँ, मेरा कार्य क्या है, मैं किसका पुत्र होकर उत्पन्न हुआ हूँ और किसने इस समय मेरा निर्माण किया है–

ऐसा निश्चय करके मैंने अपने को कमल से नीचे उतारा। मुने! मैं उस कमल की एक–एक नाल में गया और सैकड़ों वर्षो तक वहाँ भ्रमण करता रहा, किन्तु कहीं भी उस कमल के उद्गम का उत्तम स्थान मुझे नहीं मिला। तब पुनः संशय में पड़कर मैं उस कमल पुष्प पर जाने को उत्सुक हुआ और नाल के मार्ग से उस कमल पर चढ़ने लगा। इस तरह बहुत ऊपर जाने पर भी मैं उस कमल के कोश को न पा सका। उस दशा में मैं और भी मोहित हो उठा। मुने! उस समय भगवान शिव की इच्छा से परम मंगलमयी उत्तम आकाशवाणी प्रकट हुई, जो मेरे मोहका विध्वंस करने वाली थी। उस वाणी ने कहा–'तप' (तपस्या) करो। उस आकाशवाणी को सुनकर मैंने अपने जन्मदाता पिता का दर्शन करने के लिए उस समय पुनः प्रयत्नपूर्वक बारह

वर्षों तक घोर तपस्या की तब मुझपर अनुग्रह करने के लिये ही चार भुजाओं और सुन्दर नेत्रों से सुशोभित भगवान् विष्णु वहाँ सहसा प्रकट हो गये।

तदनन्तर उन नारायण देव के साथ मेरी बातचीत आरम्भ हुई। भगवान् शिव की लीला से वहाँ हम दोनों में कुछ विवाद छिड़ गया। इसी समय हम लोगों के बीच में एक महान अग्निस्तम्भ (ज्योतिर्मयलिंग) प्रकट हुआ। मैंने और विष्णु ने क्रमशः ऊपर और नीचे जाकर उसके आदि–अन्त का पता लगाने के लिए बड़ा प्रयत्न किया, परन्तु हमें कहीं भी उसका ओर–छोर नहीं मिला। मैं थककर ऊपर से नीचे लौट आया और भगवान् विष्णु भी उसी तरह नीचे से ऊपर आकर मुझसे मिले। हम दोनों शिव की माया से मोहित थे। श्री हरि ने मेरे साथ आगे–पीछे और अगल–बगल से परमेश्वर शिव को प्रणाम किया। फिर वे सोचने लगे–'यह क्या वस्तु है?' इसके स्वरूप का निर्देश नहीं किया जा सकता; क्योंकि न तो इसका कोई नाम है और न कर्म ही है। लिंग रहित तत्व ही यहाँ लिंगभाव को प्राप्त हो गया है। ध्यानमार्ग में भी इसके स्वरूप का कुछ पता नहीं चलता। इसके बाद मैं और श्रीहरि दोनों ने अपने चित्त को स्वस्थ करके उस अग्निस्तम्भ को प्रणाम करना आरम्भ किया।

हम दोनों बोले–महाप्रभो! हम आपके स्वरूप को नहीं जानते। आप जो कोई भी क्यों न हों, आपको हमारा नमस्कार है। महेशान! आप शीघ्र ही हमें अपने यथार्थ रूपका दर्शन कराइये।

मुनिश्रेष्ठ! इस प्रकार अहंकार से आविष्ट हुए हम दोनों ही वहाँ नमस्कार करने लगे। ऐसा करते हुए हमारे सौ वर्ष बीत गये।

ब्रह्माजी कहते हैं – मुनिश्रेष्ठ नारद! इस प्रकार हम दोनों देवता गर्व रहित हो निरन्तर प्रणाम करते रहे। हम दोनों के मन में एक ही अभिलाषा थी कि इस ज्योर्तिलिंग के रूपमें प्रकट हुए परमेश्वर प्रत्यक्ष दर्शन दें। भगवान शंकर दीनों के प्रतिपालक, अहंकारियों का गर्व चूर्ण करने वाले तथा सबके अविनाशी प्रभु हैं। वे हम दोनों पर दयालु हो गये। उस समय वहाँ उन सुरश्रेष्ठ से, 'ओ३म्' 'ओ३म्' ऐसा शब्द रूप नाद प्रकट हुआ, जो स्पष्टरूपसे सुनाई देता था।

तब वहाँ एक ऋषि प्रकट हुए, जो ऋषि समूह के परम साररूप माने जाते हैं। उन्हीं ऋषि के द्वारा परमेश्वर श्रीविष्णु ने जाना की इस शब्दब्रह्ममय शरीरवाले परम लिंगके रूप में साक्षात् परब्रह्मस्वरूप महादेवजी ही यहाँ प्रकट हुए हैं।

उस परब्रह्म परमात्मा शिव का वाचक एकाक्षर (प्रणव) ही है, वे इसके वाच्यार्थरूप हैं। वह परम कारण, ऋत,सत्य,आन्नद एवं अमृतस्वरूप परात्पर परब्रह्म एकाक्षर वाच्य है।

तत्पश्चात् परमेश्वर भगवान् महेश प्रसन्न हो अपने दिव्य शब्दमय रूप को प्रकट करके हँसते हुए खड़े हो गये।

परमात्मा के शब्दमय रूप को भगवती उमा के साथ देखकर मैं और श्रीहरि दोनों कृतार्थ हो गये। इस तरह शब्द–ब्रह्ममय–शरीरधारी महेश्वर शिवका दर्शन पाकर मेरे साथ श्री हरि ने उन्हें प्रणाम किया और पुनः ऊपर की ओर देखा। उस समय उन्हें पाँच कलाओं से युक्त ॐकारजनित मन्त्र का साक्षात्कार हुआ। तत्पश्चात् महादेवजी का 'ॐ तत्वमसि' यह महावाक्य दृष्टिगोचर हुआ, जो परम उत्तम मन्त्र रूप है तथा शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल है। फिर सम्पूर्ण धर्म और अर्थ का साधक तथा बुद्धिस्वरूप गायत्री नामक दूसरा महान् मन्त्र लक्षित हुआ, जिसमें चौबीस अक्षर हैं तथा जो चारों पुरूषार्थरूपी फल देने वाला है। तत्पश्चात् मृत्युंजय–मन्त्र फिर पञ्चाक्षर–मन्त्र तथा दक्षिणामूर्तिसंज्ञक चिन्तामणि–मन्त्रका साक्षात्कार हुआ। इस प्रकार पाँच मन्त्रों की उपलब्धि करके भगवान् श्रीहरि उनका जप करने लगे।

जो मुझ ब्रह्मके भी अधिपति, कल्याणकारी तथा सृष्टी, पालन एवं संहार करने वाले हैं, उन वरदायक साम्बशिवका मेरे साथ भगवान् विष्णु ने प्रिय वचनों द्वारा संतुष्टचित्त से स्तवन किया।

तब पापहारी करूणाकर भगवान् महेश्वर ने प्रसन्नचित्त होकर उन श्रीविष्णुदेवको श्वासरूप से वेद का उपदेश दिया। मुने! उसके बाद शिव ने परमात्मा श्रीहरि को गुह्य ज्ञान प्रदान किया। फिर उन परमात्मा ने

कृपा करके मुझे भी वह ज्ञान दिया। वेदका ज्ञान प्राप्त करके कृतार्थ हुए भगवान् विष्णु ने मेरे साथ हाथ जोड़कर महेश्वर को नमस्कार करके पुनः उनसे पूजन की विधि बताने तथा सदुपदेश देने के लिये प्रार्थना की।

ब्रह्मा जी कहते हैं - मुने! श्रीहरि की यह बात सुनकर अत्यंत प्रसन्न हुए कृपानिधान भगवान् शिवने प्रीतिपूर्वक यह बात कही।

श्री शिव बोले - सूरश्रेष्ठगण! मैं तुम दोनों की भक्ति से निश्चय ही बहुत प्रसन्न हूँ। तुमलोग मुझ महादेव की ओर देखो। इस समय तुम्हें मेरा स्वरूप जैसा दिखायी देता है, वैसे ही रूपका प्रयत्नपूर्वक पूजन—चिन्तन करना चाहिये। **तुम दोनों महाबली हो और मेरी स्वरूपभूता प्रकृति से प्रकट हुए हो।**

शम्भु की उपर्युक्त बात सुनकर मेरेसहित श्रीहरिने महेश्वर को हाथ जोड़ प्रणाम करके कहा ।

भगवान विष्णु बोले - प्रभो! यदि हमारे प्रति आपके हृदय में प्रीति उत्पन्न हुई है और यदि आप हमें वर देना आवश्यक समझते है तो हम यही वर माँगते है कि आपमें हम दोनों की सदा अनन्य एवं अविचल भक्ति बनी रहे।

श्रीमहेश्वर बोले - मै सृष्टी, पालन और संहारका कर्ता हूँ, सगुण और निर्गुण हूँ तथा सच्चिदानन्दस्वरूप निर्विकार परब्रह्म परमात्मा हूँ । विष्णो! सृष्टी, रक्षा और प्रलयरूप गुणों अथवा कार्यों के भेदसे मैं ही ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र नाम धारण करके तीन स्वरूपों में विभक्त हुआ हूँ।

ब्रह्मन! मेरा ऐसा ही परम उत्कृष्ट रूप तुम्हारे शरीर से इस लोक में प्रकट होगा जो नाम से 'रूद्र' कहलायेगा।

मैं, तुम, ब्रह्मा तथा जो ये रूद्र प्रकट होंगे, वे सब-के-सब एकरूप हैं । ब्रह्मन्! इस कारण से तुम्हे ऐसा करना चाहिये। तुम तो इस सृष्टी के निर्माता बनो और श्रीहरि इसका पालन करें तथा मेरे अंशसे प्रकट होने वाले जो रूद्र हैं, वे इसका प्रलय करने वाले होंगे। ये जो 'उमा' नामसे विख्यात परमेश्वरी प्रकृति देवी है, इन्हीं की शक्तिभूता वाग्देवी ब्रह्माजी का सेवन करेगी। फिर इन प्रकृति देवी से वहाँ जो दूसरी शक्ति प्रकट होगी वे लक्ष्मी रूप से भगवान् विष्णु का आश्रय लेंगी। तदनन्तर पुनः काली नाम से जो तीसरी शक्ति प्रकट होगी, वे निश्चय ही मेरी अंश भूत रूद्रदेव को प्राप्त होंगी।

मैं ही सृष्टी, पालन और संहार करने वाले रज आदि त्रिविध गुणों द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और रूद्रनाम से प्रसिद्ध हो तीन रूपों में पृथक—पृथक प्रकट होता हूँ। साक्षात् शिव गुणों से भिन्न हैं। वे प्रकृति और पुरूष से भी परे हैं—अद्वितीय, नित्य, अनन्त पूर्ण एवं निरंजन परब्रह्म परमात्मा हैं। तीनों लोकों का पालन करने वाले श्री हरि भीतर तमोगुण और बाहर सत्त्वगुण धारण करते हैं, त्रिलोकी का संहार करने वाले रूद्रदेव भीतर सत्त्वगुण और बाहर तमोगुण धारण करते हैं तथा त्रिभुवन की सृष्टी करने वाले ब्रह्माजी बाहर और भीतर से भी रजोगुणी ही है। **इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र-इन तीन देवताओं में गुण हैं, परंतु शिव गुणातीत माने गये हैं।**

परमेश्वर शिव बोले - उत्तम व्रतका पालन करने वाले हरे! विष्णो! अब तुम मेरी दूसरी आज्ञा सुनों। उसका पालन करने से तुम सदा समस्त लोकों में माननीय और पूजनीय बने रहोगे। ब्रह्माजी के द्वारा रचे गये लोक में जब कोई दुःख या संकट उत्पन्न हो, तब तुम उन सम्पूर्ण दुःखों का नाश करने के लिए सदा तत्पर रहना। तुम्हारे सम्पूर्ण दुस्सह कार्यों में मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। तुम्हारे जो दुर्जेय और अत्यन्त उत्कट शत्रु होंगे, उन सबको मैं मार गिराऊँगा। हरे! तुम नाना प्रकार के अवतार धारण करके लोक में अपनी उत्तम कीर्तिका विस्तार करो और सबके उद्धार के लिये तत्पर रहो। तुम रूद्र के ध्येय हो और रूद्र तुम्हारे ध्येय हैं। तुममें और रूद्र में कुछ भी अन्तर नहीं है।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 114 से :-

'ॐ वामदेवाय नमः' इत्यादि वामदेव—मन्त्र से उन्हें आसनपर विराजमान करे।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 126 से :-

वे ब्रह्माण्ड से बाहर जाकर भगवान शिव की कृपा प्राप्त करके वैकुण्ठधाम में जा पहुँचे और सदा वहीं

रहने लगे। मैंने सृष्टी की इच्छा से भगवान् शिव और विष्णु का स्मरण करके पहले के रचे हुए जल में अपनी अंजली डालकर जलको ऊपर की ओर उछाला। इससे वहाँ एक अण्ड प्रकट हुआ।

संक्षिप्त शिवपुराण, रूद्रसंहिता पृष्ठ 130 से :-

उस जोड़े में जो पुरूष था, वही स्वायम्भुव मनु के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

विशेष प्रमाण :- श्री शिव महापुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 से 9 में (अनुवाद कर्ता विद्यावारिधि पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र, प्रकाशक=खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन बम्बई-400004 इस शिव महापुराण में मूल संस्कृत भी विद्यमान है। परन्तु यहाँ पुस्तक विस्तार के कारण केवल हिन्दी अनुवाद ही लिखा गया है।) पृष्ठ 11-13,14,17,18 से सारांश ज्ञान :- लिखा है कि ''एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी में प्रभुता के कारण युद्ध हुआ। श्री ब्रह्मा जी ने कहा मैं सर्व सृष्टी का रचनहार हूँ मैं ही आप (श्री विष्णु) का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इसी का प्रत्युत्तर देते हुए श्री विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी से कहा मैं आप (श्री ब्रह्मा जी) का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता हूँ। इस बात पर दोनों का युद्ध हुआ।(पृष्ठ 11 पर उपरोक्त विवरण है)

उनके मध्य में एक प्रकाशमान स्तम्भ प्रकट हुआ। दोनों (ब्रह्मा–विष्णु) को उसके आदि अन्त का भेद नहीं पाया तब वह निराकार ब्रह्म शिव रूप में साकार हुआ तथा कहा ''मेरे सकल निष्कल भेद से दो स्वरूप हैं'' पहला स्तम्भ रूप और पीछे मूर्तिमान रूप धारण किया इसमें ब्रह्म निष्कल (निराकार) और ईशरूप सगुण (साकार) मेरे यह दोनों रूप सिद्ध हैं। दूसरे किसी के नहीं। **इस कारण तुम दोनों को (ब्रह्मा व विष्णु को) अथवा दूसरों को ईश्वरत्व की प्राप्ति नहीं हो सकती तुमने (श्री ब्रह्मा तथा श्री विष्णु जी ने) जो अज्ञानता से अपने आप को ईश (भगवान) माना यह बड़ा अद्भुत हुआ उसको दूर करने को ही मैं रणस्थान मैं आया हूँ।** अब तुम अपना अभिमान त्याग कर मुझ ईश्वर में अपनी बुद्धि लगाओ मेरे प्रसाद से लोक में सब अर्थ प्रकाश करते हैं। **मैं ही ब्रह्म हूँ और** मेरा ही कल–अकल रूप है, **ब्रह्म होने से मैं ईश्वर हूँ**। मैं इस सबका ईश्वर हूँ यह मेरा है मेरे सिवाय किसी दुसरे का नहीं है। प्रथम तो ब्रह्म ज्ञान के निमित्त निष्कल ब्रह्म का प्रादुर्भाव हुआ है। इसी से मैं अज्ञात स्वरूप हूँ पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देने के निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षण ही में सगुण रूप हुआ हूँ। (पृष्ठ18) हे पुत्रों ! **यह कृत्य (उत्पति व स्थिति का कार्य) आपने तप से प्राप्त किया है जो सृष्टी की उत्पति तथा पालन कहलाता हैं। सौ मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है। इसी प्रकार से दूसरे दो कृत्य रूद्र और महेश को प्रदान किए हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पाने को समर्थ नहीं है।**

''श्री शिव पुराण के उपरोक्त लेखों का सारांश'' :-

उपरोक्त शिव पुराण से निम्न बातें स्पष्ट हुई :-

(1) सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म, श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश जी का जनक (पिता) है।

(2) प्रकृति अर्थात् दुर्गा जिसकी आठ भुजाऐं हैं यह श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर (रूद्र) जी की जननी (माता) है।

(3) दुर्गा को प्रधान, प्रकृति, शिवा भी कहा जाता है।

(4) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश ईश (भगवान) नहीं हैं क्योंकि खेमराज श्री कृष्णदास प्रकाशन बम्बई वाली श्री शिवपुराण में श्री शिव अर्थात् काल ब्रह्म ने कहा है कि हे ब्रह्मा तथा विष्णु तुमने अपने आप को ईश (भगवान) माना है यह ठीक नहीं है अर्थात् तुम प्रभु नहीं हो।

(5) श्री शिव अर्थात् काल ब्रह्म से भिन्न तथा इसी के आधीन तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश/रूद्र) हैं।

(6) श्री ब्रह्मा, विष्णु ने जो उपाधी प्राप्त की है यह तप करके प्राप्त की है। जो ब्रह्म काल अर्थात् सदाशिव द्वारा तप के प्रतिफल में प्रदान की गई है।

(7) सदाशिव अर्थात् महाशिव ही ब्रह्म है यही काल रूपी ब्रह्म है। दुर्गा ने अपनी शब्द (वचन) शक्ति से सावित्री, लक्ष्मी, पार्वती को उत्पन्न किया।

(8) श्री ब्रह्मा जी से सावित्री, श्री विष्णु *जी से लक्ष्मी तथा श्री महेश/रूद्र से पार्बती/काली का विवाह किया गया।*

(9) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश को क्षमा करने का अधिकार नहीं है। केवल कर्म फल ही प्रदान कर सकते हैं।

(10) श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री महेश/रूद्र तमगुण युक्त हैं।

''श्री विष्णु पुराण में सृष्टी रचना का प्रमाण''

श्री विष्णु पुराण (प्रकाशक एवं मुद्रक गीता प्रैस गोरखपुर। अनुवाद :- श्री मुनिलाल गुप्त)

(उल्लेख संख्या - 1) अध्याय 2 श्लोक 1–2 (प्रथम अंश)

श्री पराशर उवाच

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने। सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ।।1।।

नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च। वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे।।2।।

अनुवाद – श्री पराशरजी बोले– **जो ब्रह्मा, विष्णु और शंकर रूप से जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार के कारण हैं** तथा अपने भक्तों को संसार–सागर से तारने वाले हैं, उन विकाररहित, शुद्ध, **अविनाशी, परमात्मा, सर्वदा एकरस, सर्वविजयी भगवान् वासुदेव विष्णु को नमस्कार है।**।1–2।।

(उल्लेख संख्या - 2) अध्याय 2 श्लोक 3 (प्रथम अंश)

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः। अव्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे।।3।।

अनुवाद :– जो एक होकर भी नाना रूपवाले हैं, स्थूलसूक्ष्ममय हैं, अव्यक्त (कारण) एवं व्यक्त (कार्य) रूप हैं तथा {अपने अनन्य भक्तों की} मुक्ति के कारण हैं, {उन श्री विष्णु भगवान् को नमस्कार है}।।3।।

(उल्लेख संख्या - 3) अध्याय 2 श्लोक 9 (प्रथम अंश)

तैश्चोक्तं पुरूकुत्साय भूभुजे नर्मदातटे। सारस्वताय तेनापि मह्यं सारस्वतेन च ।।9।।

अनुवाद :- वह प्रसंग दक्ष आदि मुनियों ने नर्मदा-तटपर राजा पुरूकुत्स को सुनाया था तथा पुरूकुत्सने सारस्वत से और सारस्वत ने मुझसे कहा था।।9।।

(उल्लेख संख्या - 4) अध्याय 2 श्लोक 10-13 (प्रथम अंश)

परः पराणां परमः परमात्मात्मसंस्थितः। रूपवर्णादिनिर्देशविशेषणविवर्जितः।।10।।

अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामर्धिजन्मभिः। वर्जितः शक्यते वक्तुं यः सदास्तीति केवलम्।।11।।

सर्वत्रासौ समस्तं च वसत्यत्रेति वै यतः। ततः स वासुदेवेति विद्वद्भिः परिपठ्यते।।12।।

तद्ब्रह्म परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम्। एकस्वरूपं तु सदा हेयाभावाच्च निर्मलम्।।13।।

अनुवाद :- जो पर (प्रकृति) से भी पर, परमश्रेष्ठ, अन्तरात्मा में स्थित परमात्मा, रूप, वर्ण, नाम और विशेषण आदि से रहित है; जिसमें जन्म, वृद्धि, परिणाम, क्षय और नाश–इन छः विकारों का सर्वथा अभाव है; जिसको सर्वदा केवल 'है' इतना ही कह सकते हैं, तथा **जिनके लिये यह प्रसिद्ध है कि 'वे सर्वत्र हैं** और उनमें समस्त विश्व बसा हुआ है–**इसलिये ही विद्वान् जिसको वासुदेव कहते हैं' वही नित्य, अजन्मा,** अक्षय,

अव्यय, एकरस और हेय गुणों के अभाव के कारण **निर्मल परब्रह्म है**।।10–13।।

(उल्लेख संख्या - 5) अध्याय 2 श्लोक 14 (प्रथम अंश)

तदेव सर्वमेवैतद्व्यक्ताव्यक्तस्वरूपवत्। तथा पुरूषरूपेण कालरूपेण च स्थितम्।।14।।

अनुवाद :- वही इन सब व्यक्त (कार्य) और अव्यक्त (कारण) जगत् के रूपसे, तथा इसके साक्षी पुरुष और महाकारण काल के रूप से स्थित है।।14।।

(उल्लेख संख्या - 6) अध्याय 2 श्लोक 15 (प्रथम अंश)

परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरुषः प्रथमं द्विज। व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम्।।15।।

अनुवाद :- हे द्विज! परब्रह्म का प्रथम रूप पुरुष है, अव्यक्त (प्रकृति) और व्यक्त (महदादि) उसके अन्य रूप हैं तथा {सबको क्षोभित करनेवाला होने से} **काल उसका परमरूप है**।।15।।

(उल्लेख संख्या - 7) अध्याय 2 श्लोक 16 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालानां परमं हि यत्। पश्यन्ति सूरयः शुद्धं तद्विष्णोः परमं पदम्।।16।।

अनुवाद :- इस प्रकार जो प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल-इन चारों से परे है तथा जिसे पण्डितजन ही देख पाते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है।।16।।

(उल्लेख संख्या - 8) अध्याय 2 श्लोक 17 (प्रथम अंश)

प्रधानपुरूषव्यक्तकालास्तु प्रविभागशः। रूपाणि स्थितिसर्गान्तव्यक्तिसद्भावहेतवः।।17।।

अनुवाद :– प्रधान, पुरूष, व्यक्त और काल–ये {भगवान विष्णु के} रूप पृथक्–पृथक् संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार के प्रकाश तथा उत्पादन में कारण हैं।।17।।

(उल्लेख संख्या - 9 अध्याय 2 श्लोक 18 (प्रथम अंश)

व्यक्तं विष्णुस्तथाव्यक्तं पुरूषः काल एव च। क्रीडतो बालकस्येव चेष्टां तस्य निशामय।।18।।

अनुवाद :– भगवान् विष्णु जो व्यक्त, अव्यक्त, पुरूष और काल रूप से स्थित होते हैं, इसे उनकी बालवत् क्रीडा ही समझो।।18।।

(उल्लेख संख्या - 10) अध्याय 2 श्लोक 23 (प्रथम अंश)

नाहो न रात्रिर्न नभो न भूमि र्नासीत्तमोज्योतिरभूच्च नान्यत्।
श्रोत्रादिबुद्ध्यानुपलभ्यमेकं प्राधानिकं ब्रह्म पुमांस्तदासीत्।।23।।

अनुवाद :- 'उस समय (प्रलयकालमें) न दिन था, न रात्रि थी, न आकाश था, न पृथिवी थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था और न इनके अतिरिक्त कुछ और ही था। बस, श्रोत्रादि इन्द्रियों और **बुद्धि आदि का अविषय एक प्रधान ब्रह्म और पुरुष ही था'**।।23।।

(उल्लेख संख्या - 11) अध्याय 2 श्लोक 24 (प्रथम अंश)

विष्णोः स्वरूपात्परतो हि ते द्वे रूपे प्रधानं पुरूषश्च विप्र।
तस्यैव तेन्येन धृते वियुक्ते रूपान्तरं तद्द्विज कालसंज्ञम्।।24।।

अनुवाद :- हे विप्र! विष्णु के परम (उपाधिरहित) स्वरूप से प्रधान और पुरूष-ये दो रूप हुए; उसी (विष्णु) के जिस अन्य रूप के द्वारा वे दोनों {सृष्टी और प्रलयकाल में} संयुक्त और वियुक्त होते है, उस रूपान्तरका ही नाम 'काल' है।।24।।

(उल्लेख संख्या - 12) अध्याय 2 श्लोक 25 (प्रथम अंश)

प्रकृतौ संस्थितं व्यक्तमतीतप्रलये तु यत्। तस्मात्प्राकृतसंज्ञोयमुच्यते प्रतिस ञ्चरः।।25।।

अनुवाद :– बीते हुए प्रलयकाल में यह व्यक्त प्रपञ्च प्रकृति में लीन था, इसलिये प्रपञ्चके इस प्रलय को प्राकृत प्रलय कहते हैं।।25।।

(उल्लेख संख्या - 13) अध्याय 2 श्लोक 26 (प्रथम अंश)

अनादिर्भगवान्कालो नान्तोस्य द्विज विद्यते। अव्युच्छिन्नास्ततस्त्वेते सर्गस्थित्यन्तसंयमाः।। 26।।

अनुवाद :– हे द्विज! कालरूप भगवान् अनादि हैं, इनका अन्त नहीं है इसलिए संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी कभी नहीं रूकते {वि प्रवाह रूप से निरन्तर होते रहते हैं}।।26।।

(उल्लेख संख्या - 14) अध्याय 2 श्लोक 27 (प्रथम अंश)

गुणसाम्ये ततस्तस्मिन्पृथक्पुंसि व्यवस्थिते। कालस्वरूपं तद्विष्णोमैत्रेय परिवर्त्तते।।27।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! प्रलयकाल में प्रधान (प्रकृति) के साम्यावस्था में स्थित हो जाने पर और पुरूष के प्रकृति से पृथक् स्थित हो जाने पर **विष्णु भगवान् का काल रूप** {इन दोनों को धारण करने के लिये} **प्रवृत्त होता है**।।27।।

(उल्लेख संख्या - 15) अध्याय 2 श्लोक 28–29 (प्रथम अंश)

ततस्तु तत्परं ब्रह्म परमात्मा जगन्मयः। सर्वगः सर्वभूतेशः सर्वात्मा परमेश्वरः।।28।।
प्रधानपुरूषौ चापि प्रविश्यात्मेच्छया हरिः। क्षोभयामास सम्प्राप्ते सर्गकाले व्ययाव्ययौ।।29।।

अनुवाद :– तदनन्तर {सर्गकाल उपस्थित होने पर} उन परब्रह्म परमात्मा विश्वरूप सर्वव्यापी सर्वभूतेश्वर सर्वात्मा **परमेश्वर ने अपनी इच्छा से विकारी प्रधान और अविकारी पुरूष में प्रविष्ट होकर उनको क्षोभित किया**।।28–29।।

(उल्लेख संख्या - 16) अध्याय 2 श्लोक 30 (प्रथम अंश)

यथा सन्निधिमात्रेण गन्धः क्षोभाय जायते। मनसो नोपकर्तृत्वात्तथासौ परमे श्वरः।।30।।

अनुवाद :– जिस प्रकार क्रियाशील न होने पर भी गन्ध अपनी सन्निधिमात्रसे ही मन को क्षुभित कर देता है **उसी प्रकार परमेश्वर अपनी सन्निधिमात्र से ही प्रधान और पुरूष को प्रेरित करते हैं**।।30।।

(उल्लेख संख्या - 17) अध्याय 2 श्लोक 31 (प्रथम अंश)

स एव क्षोभको ब्रह्मन् क्षोभ्यश्च पुरूषोत्तमः। स सङ्कोचविकासाभ्यां प्रधानत्वेपि च स्थितः।। 31।।

अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! वह पुरूषोत्तम ही इनको क्षोभित करने वाले हैं और वे ही क्षुब्ध होते हैं तथा संकोच (साम्य) और विकास (क्षोभ) युक्त प्रधानरूप से भी वे ही स्थित हैं।।31।।

(उल्लेख संख्या - 18) अध्याय 2 श्लोक 32 (प्रथम अंश)

विकासाणुस्वरूपैश्च ब्रह्मरूपादिभिस्तथा। व्यक्तस्वरूपश्च तथा विष्णुः सर्वेश्वरेश्वरः।।32।।

अनुवाद :- ब्रह्मादि समस्त ईश्वरोंके ईश्वर वे विष्णु ही समष्टि-व्यष्टिरूप, ब्रह्मादि जीवरूप तथा महत्तत्त्वरूप से स्थित हैं।।32।।

(उल्लेख संख्या - 19) अध्याय 2 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

तत्क्रमेण विवृद्धं सज्जलबुद्बुदवत्समम्। भूतेभ्योण्डं महाबुद्धे महत्तदुदकेशयम्।
प्राकृतं ब्रह्मरूपस्य विष्णोः स्थानमनुत्तमम्।।55।।

अनुवाद :- हे महाबुद्धे! जल के बुलबुले के समान क्रमशः भूतों से बड़ा हुआ वह गोलाकार और जलपर स्थित महान् अण्ड ब्रह्म (हिरण्यगर्भ) रूप विष्णु का अति उत्तम प्राकृत आधार हुआ। ।55।।

(उल्लेख संख्या - 20) अध्याय 2 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

तत्राव्यक्तस्वरूपोसौ व्यक्तरूपो जगत्पतिः। विष्णुर्ब्रह्मस्वरूपेण स्वयमेव व्यवस्थितः।। 56।।

अनुवाद :- उसमें वे अव्यक्त-स्वरूप जगत्पति विष्णु व्यक्त हरिण्यगर्भरूपसे स्वयं ही विराजमान हुए।।56।।

(उल्लेख संख्या - 21) अध्याय 2 श्लोक 61 (प्रथम अंश)

जुषन् रजो गुणं तत्र स्वयं विश्वेश्वरो हरिः। ब्रह्मा भूत्वास्य जगतो विसृष्टौ सम्प्रवर्त्तते।।61।।

अनुवाद :- उसमें स्थित हुए स्वयं विश्वेश्वर भगवान् विष्णु ब्रह्मा होकर रजोगुण का आश्रय लेकर इस संसार की रचना में प्रवृत्त होते हैं।

(उल्लेख संख्या - 22) अध्याय 9 श्लोक 40 से 41 (प्रथम अंश)

नमामि सर्वं सर्वेशमनन्तमजमव्ययम्। लोकधाम धराधारमप्रकाशमभेदिनम्।।40।।
नारायणमणीयांसमशेषाणामणीयसाम्। समस्तानां गरिष्ठं च भूरादीनां गरीयसाम्।।41।।

अनुवाद :– ब्रह्मा जी कहने लगे–जो समस्त अणुओं से भी अणु और पृथिवी आदि समस्त गुरुओं (भारी पदार्थों) से भी गुरु (भारी) है उन निखिललोकविश्राम, पृथिवीके आधारस्वरूप, अप्रकाश्य, अभेद्य, सर्वरूप, सर्वेश्वर, अनन्त, अज और अव्यय नारायण को मैं नमस्कार करता हूँ।।40–41।।

(उल्लेख संख्या - 23) अध्याय 9 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

यस्यायुतायुतांशांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता। परब्रह्मस्वरूपं यत्प्रणमामस्तमव्ययम्।।53।।

अनुवाद :– जिसके अयुतांश (दस हजारवें अंश) के अयुतांश में यह विश्वरचना की शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अव्ययको हम प्रणाम करते हैं ।।53।।

(उल्लेख संख्या - 24) अध्याय 9 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

यद्योगिनः सदोद्युक्ताः पुण्यपापक्षयेक्षयम्। पश्यन्ति प्रणवे चिन्त्यं तद्विष्णोः परमं पदम्।। 54।।

अनुवाद :– नित्य–युक्त योगिगण अपने पुण्य–पापादिका क्षय हो जानेपर **ॐकारद्वारा चिन्तनीय जिस अविनाशी पदका साक्षात्कार करते हैं वही भगवान् विष्णु का परमपद है**।।54।।

(उल्लेख संख्या - 25) अध्याय 9 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

यन्न देवा न मुनयो न चाहं न च शङ्करः।जानन्ति परमेशस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।55।।

अनुवाद :- जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं-कोई भी नहीं जान सकते वही परमेश्वर श्री विष्णु का परमपद है।।55।।

(उल्लेख संख्या - 26) अध्याय 9 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

शक्तयो यस्य देवस्य ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाः। भवन्त्यभूतपूर्वस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।।56।।

अनुवाद :– **जिस अभूतपूर्व देवकी ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप शक्तियाँ हैं वही भगवान् विष्णुका परमपद है**।।56।।

(उल्लेख संख्या - 27) अध्याय 9 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

सर्वेश सर्वभूतात्मन्सर्व सर्वाश्रयाच्युत। प्रसीद विष्णो भक्तानां व्रज नो दृष्टिगोचरम्।।57।।

अनुवाद :– हे सर्वेश्वर! हे सर्व भूतात्मन्! हे सर्वरूप! हे सर्वाधार! हे अच्युत! हे विष्णो! हम भक्तोंपर प्रसन्न होकर हमें दर्शन दीजिये।।57।।

(उल्लेख संख्या - 28) अध्याय 6 श्लोक 32–33

संसिद्धायां तु वार्तायां प्रजाः सृष्टा प्रजापतिः। मर्यादां स्थापयामास यथास्थानं यथागुणम्।।32।।
वर्णानामाश्रमाणां च धर्मान्धर्मभृतां वर। लोकांश्च सर्ववर्णानां सम्यग्धर्मानुपालिनाम्।।33।।

अनुवाद :– हे धर्मवानोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय! इस प्रकार कृषि आदि जीविकाके साधनों के निश्चित हो जाने पर प्रजापति ब्रह्माजीने प्रजाकी रचना कर उनके स्थान और गुणों के अनुसार मर्यादा, वर्ण और आश्रमोंके धर्म तथा अपने धर्मका भली प्रकार पालन करनेवाले समस्त वर्णोंके लोक आदिकी स्थापना की।।32–33।।

उल्लेख संख्या - 29) अध्याय 6 श्लोक 34 (प्रथम अंश)

प्राजापत्यं ब्राह्मणानां स्मृतं स्थानं क्रियावताम्।स्थानमैन्द्रं क्षत्रियाणां संग्रामेषवनिवर्तिनाम्।।34।।

अनुवाद :- कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों का स्थान पितृलोक है, युद्ध-क्षेत्र से कभी न हटनेवाले क्षत्रियों का इन्द्रलोक है।।34।।

(उल्लेख संख्या - 30) अध्याय 6 श्लोक 35 (प्रथम अंश)

वैश्यानां मारूतं स्थानं स्वधर्ममनुवर्तिनाम्। गान्धर्वं शुद्रजातीनां परिचर्यानुवर्तिनाम्।।35।।

अनुवाद :– तथा अपने धर्म का पालन करने वाले वैश्योंका वायुलोक और सेवाधर्मपरायण शुद्रोंका गन्धर्वलोक है।।35।।

(उल्लेख संख्या - 31) अध्याय 6 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

अष्टाशीतिसहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्। स्मृतं तेषां तु यत्स्थानं तदेव गुरुवासिनाम्।।36।।

अनुवाद :- अट्ठासी हजार ऊर्ध्वरेता मुनि हैं; उनका जो स्थान बताया गया है वही गुरुकुलवासी ब्रह्मचारियों का स्थान है।।36।।

(उल्लेख संख्या - 32) अध्याय 6 श्लोक 37–38 (प्रथम अंश)

सप्तर्षीणां तु यत्स्थानं स्मृतं तद्वै वनौकसाम्। प्राजापत्यं गृहस्थानां न्यासिनां ब्रह्मसंज्ञितम्।।37।।
योगिनाममृतं स्थानं स्वात्मसन्तोषकारिणाम्।।38।।

अनुवाद :- इसी प्रकार वनवासी वानप्रस्थोंका स्थान सप्तर्षिलोक, गृहस्थोंका पितृलोक और संन्यासियों का ब्रह्मलोक है तथा आत्मानुभवसे तृप्त योगियोंका स्थान अमरपद (मोक्ष) है।।37–38।।

(उल्लेख संख्या - 33) अध्याय 6 श्लोक 39 (प्रथम अंश)

एकान्तिनः सदा ब्रह्मध्यायिनो योगिनश्च ये। तेषां तु परमं स्थानं यत्तत्पश्यन्ति सूरयः।।39।।

अनुवाद :- जो निरन्तर एकान्तसेवी और ब्रह्मचिन्तनमें मग्न रहनेवाले योगिजन हैं उनका जो परमस्थान है उसे पण्डितजन ही देख पाते हैं।।39।।

(उल्लेख संख्या - 34) अध्याय 22 श्लोक 36 (प्रथम अंश)

कालेन न विना ब्रह्मा सृष्टीनिष्पादको द्विज। न प्रजापतयः सर्वे ने चैवाखिलजन्तवः।।36।।

अनुवाद :- हे द्विज! काल के बिना ब्रह्मा, प्रजापति एवं अन्य समस्त प्राणी भी सृष्टी-रचना नहीं कर सकते {अतः भगवान् कालरूप विष्णु ही सर्वदा सृष्टीके कारण हैं}।।36।।

(उल्लेख संख्या - 35) अध्याय 22 श्लोक 53 (प्रथम अंश)

एवंप्रकारममलं नित्यं व्यापकमक्षयम्। समस्तहेयरहितं विष्ण्वाख्यं परमं पदम्।।53।।

अनुवाद :– इस प्रकार का वह निर्मल, नित्य, व्यापक, अक्षय और समस्त हेय गुणों से रहित **विष्णु नामक परमपद है।।53।।**

(उल्लेख संख्या - 36) अध्याय 22 श्लोक 54 (प्रथम अंश)

तद्ब्रह्म परमं योगी यतो नावर्त्तते पुनः। श्रयत्यपुण्योपरमे क्षीणक्लेशोतिनिर्मलः।। 54।।

अनुवाद :- पुण्य-पापका क्षय और क्लेशों की निवृत्ति होने पर जो अत्यन्त निर्मल हो जाता है वही योगी उस परब्रह्मका आश्रय लेता है जहाँसे वह फिर नहीं लौटता।।54।।

(उल्लेख संख्या - 37) अध्याय 22 श्लोक 55 (प्रथम अंश)

द्वे रूपे ब्रह्मणस्तस्य मूर्तं चामूर्तमेव च। क्षराक्षरस्वरूपे ते सर्वभूतेषव्वस्थिते।।55।।

अनुवाद :– उस ब्रह्मके मूर्त और अमूर्त दो रूप हैं, जो क्षर और अक्षररूपसे समस्त प्राणियों में स्थित हैं।।55।।

{विशेष :- इस (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है

अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म

इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरूष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिती इस लोक में प्राणियों की हैं कि स्थूल शरीर सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरुष तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}

(उल्लेख संख्या - 38) अध्याय 22 श्लोक 56 (प्रथम अंश)

अक्षरं तत्वरं ब्रह्म क्षरं सर्वमिदं जगत्। एकदेशस्थितस्यागेन्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा।
परसय ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत्।।56।।

अनुवाद :- अक्षर ही वह परब्रह्म है और क्षर सम्पूर्ण जगत् है। जिस प्रकार एकदेशीय अग्निका प्रकाश सर्वत्र फैला रहता है। **उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् परब्रह्म की ही शक्ति है।**।56।।

(उल्लेख संख्या - 39) अध्याय 22 श्लोक 57 (प्रथम अंश)

तत्राप्यासन्नदूरत्वाद्बहुत्वस्वल्पतामयः। ज्योत्स्नाभेदोस्ति तच्छक्तेस्तनद्वन्मैत्रेय विद्यते।। 57।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! अग्नि की निकटता और दूरताके भेदसे जिस प्रकार उसके प्रकाशमें भी अधिकता और न्यूनताका भेद रहता है। उसी प्रकार ब्रह्मकी शक्ति में भी तारतम्य है।।57।।

(उल्लेख संख्या - 40) अध्याय 22 श्लोक 58 (प्रथम अंश)

ब्रह्मविष्णुशिवा ब्रह्मन्प्रधाना ब्रह्मशक्तयः। ततश्च देवा मैत्रेय न्यूना दक्षादयस्ततः।।58।।

अनुवाद :- हे ब्रह्मन्! ब्रह्मा, विष्णु और शिव ब्रह्मकी प्रधान शक्तियाँ हैं उनसे न्यून देवगण हैं तथा उनके अनन्तर दक्ष आदि प्रजापतिगण हैं।।58।।

(उल्लेख संख्या - 41) अध्याय 22 श्लोक 59 (प्रथम अंश)

ततो मनुष्याः पशवो मृगपक्षिसरीसृपाः। न्यूनान्न्यूनतराश्चैव वृक्ष गुल्मादयस्तथा।।59।।

अनुवाद :- उनसे भी न्यून मनुष्य, पशु, पक्षी, मृग और सरीसृपादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्ष, गुल्म और लता आदि हैं।।59।।

(उल्लेख संख्या - 42) अध्याय 22 श्लोक 63 (प्रथम अंश)

स परः परशक्तीनां ब्रह्मणः समनन्तरम्। मूर्त्तं ब्रह्म महाभाग सर्वब्रह्ममयो हरिः।।63।।

अनुवाद :- हे महाभाग! हे सर्वब्रह्ममय श्री विष्णुभगवान् समस्त परा शक्तियों में प्रधान और ब्रह्मके अत्यन्त निकटवर्ती मूर्त-ब्रह्मस्वरूप हैं।।63।।

(उल्लेख संख्या - 43) अध्याय 22 श्लोक 80 (प्रथम अंश)

भूर्लोकोथ भुवर्लोकः स्वर्लोको मुनिसत्तम। महर्जनस्तपः सत्यं सप्त लोका इमे विभुः।। 80।।

अनुवाद :– हे मुनिश्रेष्ठ! भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक तथा मह, जन, तप, और सत्य आदि सातों लोक भी सर्वव्यापक भगवान् ही हैं।।80।।

(उल्लेख संख्या - 44) अध्याय 22 श्लोक 81 (प्रथम अंश)

लोकात्ममूर्त्तिः सर्वेषां पूर्वेषामपि पूर्वजः। आधारः सर्वविद्यानां स्वयमेव हरिः स्थितः।।81।।

अनुवाद :- सभी पूर्वजों के पूर्वज तथा समस्त विद्याओं के आधार श्रीहरि ही स्वयं लोकमयस्वरूप से स्थित हैं।।81।।

(उल्लेख संख्या - 45) अध्याय 22 श्लोक 82 (प्रथम अंश)

देवमानुषपश्वादिस्वरूपैर्बहुभिः स्थितः। ततः सर्वेश्वरोनन्तो भूतमूर्तिरमूर्तिमान्।। 82।।

अनुवाद :- निराकार और सर्वेश्वर श्रीअनन्त ही भूतस्वरूप होकर देव, मनुष्य और पशु आदि

नानारूपोंसे स्थित हैं।।82।।

(उल्लेख संख्या - 46) अध्याय 7 श्लोक 40 (द्वितीय अंश)

स च विष्णुः परं ब्रह्म यतः सर्वमिदं जगत्। जगच्च यो यत्र चेदं यस्मिंश्च लयमेष्यति।।40।।

अनुवाद :– जिससे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जो स्वयं जगत्रूप से स्थित है, जिसमें यह स्थित है तथा जिसमें यह लीन हो जायगा वह परब्रह्म ही विष्णुभगवान् हैं।।40।।

(उल्लेख संख्या - 47) अध्याय 7 श्लोक 41 (द्वितीय अंश)

तद्ब्रह्म तत्परं धाम सदसत्परमं पदम्। यस्य सर्वमभेदेन यतश्चैतच्चराचरम्।।41।।

अनुवाद :- वह ब्रह्म ही उन (विष्णु) का परमधाम (परस्वरूप) है, वह पद सत् और असत् दोनों से विलक्षण है तथा उससे अभिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उससे उत्पन्न हुआ है।।41।।

(उल्लेख संख्या - 48) अध्याय 1 श्लोक 83 (चतुर्थ अंश)

न ह्यादिमध्यान्तमजस्य यस्य विझ्मो वयं सर्वमयस्य धातुः।
न च स्वरूपं न परं स्वभावं न चैव सारं परमेश्वरस्य।।83।।

अनुवाद :- श्रीब्रह्माजीने कहा-जिस अजन्मा, सर्वमय, विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते।।83।।

(उल्लेख संख्या - 49) अध्याय 1 श्लोक 84 (चतुर्थ अंश)

कलामुहूर्तादिमयश्च कालो न यद्विभूतेः परिणामहेतुः।
अजन्मनाशस्य सदैकमूर्तेरनामरूपस्य सनातनस्य।।84।।

अनुवाद :– कलामुहूर्तादिमय काल भी जिसकी विभूतिके परिणाम का कारण नहीं हो सकता, जिसका जन्म और मरण नहीं होता, जो सनातन और सर्वदा एकरूप है तथा जो नाम और रूपसे रहित है।।84।।

(उल्लेख संख्या - 50) अध्याय 1 श्लोक 85 (चतुर्थ अंश)

यस्य प्रसादादहमच्युतस्य भूतः प्रजासृष्टीकरोन्तकारी।
क्रोधाच्च रूद्रः स्थितिहेतुभूतो यस्माच्च मध्ये पुरूषः परस्मात्।।85।।

अनुवाद :- जिस अच्युतकी कृपासे मैं प्रजाका उत्पत्तिकर्ता हूँ, जिसके क्रोध से उत्पन्न हुआ रूद्र सृष्टीका अन्तकर्त्ता है तथा जिस परमात्मासे मध्यमें जगत्स्थितिकारी विष्णुरूप पुरूषका प्रादुर्भाव हुआ है।।85।।

(उल्लेख संख्या - 51) अध्याय 1 श्लोक 86 (चतुर्थ अंश)

मद्रूपमास्थाय सृजत्यजो यः स्थितौ च योसौ पुरूषस्वरूपी।
रूद्रस्वरूपेण च योत्ति वि श्वं धत्तें तथानन्तवपुस्समस्तम्।।86।।

अनुवाद :- जो मेरा रूप धारणकर संसारकी रचना करता है, स्थितिके समय जो पुरूषरूप (विष्णु) है तथा जो रूद्ररूप से सम्पूर्ण विश्वका ग्रास कर जाता है एवं अनन्तरूपसे सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।।86।।

(उल्लेख संख्या - 52) अध्याय 1 श्लोक 35 (पंचम अंश)

द्वे विद्ये त्वमनामनाय परा चैवापरा तथा।त एव भवतो रूपे मूर्तामूर्तात्मिके प्रभो।।35।।

अनुवाद :– ब्रह्माजी बोले–हे वेदवाणीके अगोचर प्रभो! परा और अपरा–ये दोनों विद्याएँ आप ही हैं। हे नाथ! वे दोनों आपहीके मूर्त और अमूर्त रूप हैं।।35।।

(उल्लेख संख्या - 53 अध्याय 1 श्लोक 36 (पंचम अंश)

द्वे ब्रह्मणी त्वणीयोतिस्थूलात्मन्सर्व सर्ववित्। शब्दब्रह्म परं चैव ब्रह्म ब्रह्ममयस्य यत्।। 36।।

अनुवाद :- हे अत्यन्त सुक्ष्म! हे विराट्स्वरूप! हे सर्व! हे सर्वज्ञ! शब्दब्रह्म और परब्रह्म-ये दोनों आप ब्रह्ममय के ही रूप हैं। ।36।।

(उल्लेख संख्या - 54) अध्याय 7 श्लोक 1 (द्वितीय अंश)

श्रीमैत्रय उवाच

कथितं भूतलं ब्रह्मन्ममैतदखिलं त्वया। भुवर्लोकादिकाँल्लोकाञ्छ्रोतुमिच्छाम्यहं मुने।।1।।

अनुवाद :– श्री मैत्रेयजी बोले–ब्रह्मन्! आपने मुझसे समस्त भूमण्डलका वर्णन किया। हे मुने! अब मैं भुवर्लोक आदि समस्त लोकोंके विषयमें सुनना चाहता हूँ।।1।।

(उल्लेख संख्या - 55) अध्याय 7 श्लोक 2 (द्वितीय अंश)

तथैव ग्रहसंस्थानं प्रमाणानि यथा तथा। समाचक्ष्व महाभाग तन्मह्यं परिपृच्छते।।2।।

अनुवाद :– हे महाभाग! मुझ जिज्ञासु से आप ग्रहगणकी स्थिति तथा उनके परिणाम आदि का यथावत् वर्णन कीजिये।।2।।

(उल्लेख संख्या - 56) अध्याय 7 श्लोक 3 (द्वितीय अंश)

श्रीपराशर उवाच

रविचन्द्रमसोर्यावन्मयूखैरवभास्यते। ससमुद्रसरिच्छैला तावती पृथिवी स्मृता।।3।।

अनुवाद :– श्री पराशरजी बोले–जितनी दूरतक सूर्य और चन्द्रमा की किरणों का प्रकाश जाता है; समुद्र, नदी और पर्वतादिसे युक्त उतना प्रदेश पृथिवी कहलाता है।।3।।

(उल्लेख संख्या - 57) अध्याय 7 श्लोक 4 (द्वितीय अंश)

यावत्प्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डलात्। नभस्तावत्प्रमाणं वै व्यासमण्डलतो द्विज।।4।।

अनुवाद :– हे द्विज! जितना पृथिवीका विस्तार और परिमण्डल (घेरा) है उतना ही विस्तार और परिमण्डल भुवर्लोकका भी है।।4।।

(उल्लेख संख्या - 58) अध्याय 7 श्लोक 5 (द्वितीय अंश)

भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम्। लक्षाद्दिवाकरस्यापि मण्डलं शशिनः स्थितम्।।5।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! **पृथिवी से एक लाख योजन दूर सूर्यमण्डल है और सूर्यमण्डल से भी एक लक्ष योजनके अन्तरपर चन्द्रमण्डल है**।।5।।

(उल्लेख संख्या - 59) अध्याय 7 श्लोक 6 (द्वितीय अंश)

पूर्णे शतसहस्रे तु योजनानां निशाकरात्। नक्षत्रमण्डलं कृत्स्नमुपरिष्टात्प्रकाशते।।6।।

अनुवाद :- चन्द्रमा से पूरे सौ हजार (एक लाख) योजन ऊपर सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल प्रकाशित हो रहा है।।6।।

(उल्लेख संख्या - 60) अध्याय 7 श्लोक 7 (द्वितीय अंश)

द्वे लक्षे चोत्तरे ब्रह्मन् बुधो नक्षत्रमण्डलात्। तावत्प्रमाणभागे तु बुधस्याप्युशनाः स्थितः।।7।।

अनुवाद :– हे ब्रह्मन्! नक्षत्रमण्डल से दो लाख योजन ऊपर बुध और बुध से भी दो लक्ष योजन ऊपर शुक्र स्थित है।।7।।

(उल्लेख संख्या - 61) अध्याय 7 श्लोक 8 (द्वितीय अंश)

अङ्गारकोपि शुक्रस्य तत्प्रमाणे व्यवस्थितः। लक्षद्वये तु भौमस्य स्थितो देवपुरोहितः।। 8।।

अनुवाद :– शुक्र से इतनी ही दूरी पर मंगल है और मंगल से भी दो लाख योजन ऊपर बृहस्पतिजी हैं।।8।।

(उल्लेख संख्या - 62) अध्याय 7 श्लोक 9 (द्वितीय अंश)

शौरिर्बृहस्पतेश्चोर्ध्वं द्विलक्षे समवस्थितः। सप्तर्षिमण्डलं तस्माल्लक्षमेकं द्विजोत्तम।।9।।

अनुवाद :– हे द्विजोत्तम! बृहस्पतिजी से दो लाख योजन ऊपर शनि हैं और शनि से एक लक्ष योजनके अन्तर पर सप्तर्षिमण्डल है।।9।।

(उल्लेख संख्या - 63) अध्याय 7 श्लोक 10 (द्वितीय अंश)

ऋषिभ्यस्तु सहस्राणां शतादूर्ध्वं व्यवस्थितः ।मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिश्चक्रस्य वै ध्रुवः ।।10।।

अनुवाद :– तथा सप्तर्षियों से भी सौ हजार योजन ऊपर समस्त ज्योतिश्चक्रकी नाभिरूप ध्रुवमण्डल स्थित है।।10।।

(उल्लेख संख्या - 64) अध्याय 7 श्लोक 11 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कथितमुत्सेधेन महामुने। इज्याफलस्य भूरेषा इज्या चात्र प्रतिष्ठिता।।11।।

अनुवाद :- हे महामुने! मैंने तुमसे यह त्रिलोकी की उच्चता के विषय में वर्णन किया। यह त्रिलोकी यज्ञफलकी भोग-भूमि है और यज्ञानुष्ठानकी स्थिति इस भारतवर्षमें ही है।।11।।

(उल्लेख संख्या - 65) अध्याय 7 श्लोक 12 (द्वितीय अंश)

ध्रुवादूर्ध्वं महर्लोको यत्र ते कल्पवासिनः। एकयोजनकोटिस्तु यत्र ते कल्पवासिनः।।12।।

अनुवाद :- ध्रुव से एक करोड़ योजन ऊपर महर्लोक है, जहाँ कल्पान्त-पर्यन्त रहने वाले भृगु आदि सिद्धगण रहते हैं। ।12।।

(उल्लेख संख्या - 66) अध्याय 7 श्लोक 13 (द्वितीय अंश)

द्वे कोटी तु जनो लोको यत्र ते ब्रह्मणः सुताः। सनन्दनाद्याः प्रथिता मैत्रेयामलचेतसः।।13।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! उससे भी दो करोड़ योजन ऊपर जनलोक है जिसमें ब्रह्माजी के प्रख्यात पुत्र निर्मलचित्त सनकादि रहते हैं।।13।।

(उल्लेख संख्या - 67) अध्याय 7 श्लोक 14 (द्वितीय अंश)

चतुर्गुणोत्तरे चोर्ध्वं जनलोकात्तपः स्थितम्। वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता दाहविवर्जिताः।।24।।

अनुवाद :– जनलोकसे चौगुना अर्थात् आठ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है; वहाँ वैराज नामक देवगणों का निवास है जिनका कभी दाह नहीं होता।।14।।

(उल्लेख संख्या - 68) अध्याय 7 श्लोक 15 (द्वितीय अंश)

षड्गुणेन तपोलोकात्सत्यलोको विराजते। अपुनर्मारका यत्र ब्रह्मलोको हि स स्मृतः।।15।।

अनुवाद :- तपलोकसे छः गुना अर्थात् बारह करोड़ योजनके अन्तरपर सत्यलोक सुशोभित है जो ब्रह्मलोक भी कहलाता है और जिसमें फिर न मरनेवाले अमरगण निवास करते हैं।।15।।

(उल्लेख संख्या - 69) अध्याय 7 श्लोक 16 (द्वितीय अंश)

पादगम्यन्तु यत्किञ्चिद्वस्त्वस्ति पृथिवीमयम्। स भूर्लोकः समाख्यातो विस्तरोस्य मयोदितः।। 16।।

अनुवाद :– जो भी पार्थिव वस्तु चरणसञ्चार के योग्य है वह भुर्लोक ही है। उसका विस्तार मैं कह चुका।।16।।

(उल्लेख संख्या - 70) अध्याय 7 श्लोक 17 (द्वितीय अंश)

भूमिसूर्यान्तरं यच्च सिद्धादिमुनिसेवितम्। भुवर्लोकस्तु सोप्युक्तो द्वितीयो मुनिसत्तम।। 17।।

अनुवाद :– हे मुनिश्रेष्ठ! पृथिवी और सूर्य के मध्यमें जो सिद्धगण और मुनिगण–सेवित स्थान है, वही दूसरा भुवर्लोक है।।17।।

(उल्लेख संख्या - 71) अध्याय 7 श्लोक 18 (द्वितीय अंश)

ध्रुवसूर्यान्तरं यच्च नियुतानि चतुर्दश। स्वर्लोकः सोपि गदितो लोकसंस्थानचिन्तकैः।। 18।।

अनुवाद :- सूर्य और ध्रुव के बीच में जो चौदह लक्ष योजनका अन्तर है, उसीको लोकस्थितिका विचार करने वालोंने स्वर्लोक कहा है।।18।।

(उल्लेख संख्या - 72) अध्याय 7 श्लोक 19 (द्वितीय अंश)

त्रैलोक्यमेतत्कृतकं मैत्रेय परिपठ्यते। जनस्तपस्तथा सत्यमिति चाकृतकं त्रयम्।।19।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! ये (भूः, भुवः, स्वः) 'कृतक' त्रैलोक्य कहलाते हैं और जन, तप तथा सत्य–ये तीनों 'अकृतक' लोक हैं।।19।।

(उल्लेख संख्या - 73) अध्याय 7 श्लोक 20 (द्वितीय अंश)

कृतकाकृतयोर्मध्ये महर्लोक इति स्मृतः। शून्यो भवति कल्पान्ते योत्यन्तं न विनश्यति।। 20।।

अनुवाद :– इन कृतक और अकृतक त्रिलोकियों के मध्यमें **महर्लोक कहा जाता है, जो कल्पान्त में केवल जनशून्य हो जाता है,** अत्यन्त नष्ट नहीं होता [इसलिए यह 'कृतकाकृत' कहलाता है]।।20।।

(उल्लेख संख्या - 74) अध्याय 7 श्लोक 21 (द्वितीय अंश)

एते सप्त मया लोका मैत्रेय कथितास्तव। पातालानि च सप्तैव ब्रह्माण्डस्यैष विस्तरः।।21।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! इस प्रकार मैंने तुमसे **ये सात लोक और सात ही पाताल कहे। इस ब्रह्माण्ड का बस इतना ही विस्तार है**।।21।।

(उल्लेख संख्या - 75) अध्याय 7 श्लोक 22 (द्वितीय अंश)

एतदण्डकटाहेन तिर्यक् चोर्ध्वमधस्तथा। कपित्थस्य यथा बीजं सर्वतो वै समावृतम्।।22।।

अनुवाद :– यह ब्रह्माण्ड कपित्थ (कैथे) के बीजके समान ऊपर–नीचे सब ओर अण्डकटाहसे घिरा हुआ है।।22।।

(उल्लेख संख्या - 76) अध्याय 7 श्लोक 23 (द्वितीय अंश)

दशोत्तरेण पयसा मैत्रेयाण्डं च तद्वृतम्। सर्वोम्बुपरिधानोसौ वह्निना वेष्टितो बहिः।।23।।

अनुवाद :– हे मैत्रेय! यह अण्ड अपने से दसगुने जल से आवृत है और वह जलका सम्पूर्ण आवरण अग्नि से घिरा हुआ है।।23।।

(उल्लेख संख्या - 77) अध्याय 7 श्लोक 24 (द्वितीय अंश)

वह्निश्च वायुना वायुमैत्रेय नभसा वृतः। भूतादिना नभः सोपि महता परिवेष्टितः।
दशोत्तराण्यशेषाणि मैत्रेयैतानि सप्त वै।।24।।

अनुवाद :– अग्नि वायु से और वायु आकाश से परिवेष्टित है तथा आकाश भूतों के कारण तामस अहंकार और अहंकार महत्तत्वसे घिरा हुआ है। हे मैत्रेय! ये सातों उत्तरोत्तर एक–दूसरे से दसगुने हैं।।24।।

(उल्लेख संख्या - 78) अध्याय 7 श्लोक 25–26 (द्वितीय अंश)

महान्तं च समावृत्य प्रधानं समवस्थितम्। अनन्तस्य न तस्यान्तः संख्यानं चापि विद्यते।।25।।

तदनन्तमसंख्यातप्रमाणं चापि वै यतः। हेतुभूतमशेषस्य प्रकृतिः सा परा मुने।।26।।

अनुवाद :– महत्तत्वको भी प्रधानने आवृत कर रखा है। वह अनन्त है; तथा उसका न कभी अन्त (नाश) होता है और न कोई संख्या ही है; क्योंकि हे मुने! वह अनन्त, असंख्येय, अपरिमेय और सम्पूर्ण जगत्का कारण है और वही परा प्रकृति है।।25–26।।

(उल्लेख संख्या - 79) अध्याय 7 श्लोक 27 (द्वितीय अंश)

अण्डानां तु सहस्राणां सहस्राण्ययुतानि च। ईदृशानां तथा तत्र कोटिकोटिशतानि च।।27।।

अनुवाद :- उसमें ऐसे-ऐसे हजारों, लाखों तथा सैकड़ों करोड़ ब्रह्माण्ड हैं।।27।।

''श्री विष्णु पुराण के उपरोक्त उल्लेखों का सारांश''

उपरोक्त श्री विष्णु पुराण के लेख से निम्न तथ्य स्पष्ट हुए :- 1. श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी हैं जो श्री कृष्णद्वैपायन अर्थात् वेदव्यास जी के पुज्य पिता जी हैं। श्री वेद व्यास जी अठारह पुराणों के लेखक हैं। सर्व पुराणों तथा चारों वेदों, श्री मद्भगवत् गीता तथा श्री मद्भागवत सुधासागर के लेखक भी श्री वेद व्यास जी हैं। सर्व पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी (पुत्र श्री काल रूपी ब्रह्म) हैं। अठारह पुराणों का ज्ञान एक बोध है अर्थात् एक ही ज्ञान है। जो ब्रह्मा जी द्वारा कहा गया है। उसी ज्ञान को अन्य ऋषियों ने श्री ब्रह्मा जी से सुना फिर उन्होंने अन्य को बताया फिर आगे से आगे वक्ता इस ज्ञान का प्रचार करने लगे तथा कुछ अपना

अनुभव भी मिलाने लगे। श्री विष्णु पुराण में पुराण वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि यह ज्ञान दक्षादि ऋषियों ने राजा पुरूकुत्स को सुनाया, पुरूकुत्स ने सारस्वत को सुनाया तथा सारस्वत ने मुझे (पारासर जी को) सुनाया जो श्री विष्णु पुराण नाम से श्री व्यास जी ने लीपिबद्ध किया। श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 56 में लिखा है कि ''जिस अभूतपूर्व देव की ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप शक्तियाँ हैं वही भगवान विष्णु का परमपद है'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 58 में लिखा है कि ''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव, ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 1 श्लोक 36 में लिखा है कि ''शब्द ब्रह्म तथा परब्रह्म आप ब्रह्ममय अर्थात् ब्रह्म के ही रूप हैं'' फिर (द्वितीय अंश) अध्याय 7 श्लोक 41 में लिखा है कि वह ब्रह्म (तत् ब्रह्म) ही उन (विष्णु) का परम धाम है। वह पद सत् (अक्षर पुरूष) तथा असत् (क्षर पुरूष) से विलक्षण है तथा उस से भिन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उसी से उत्पन्न हुआ है।'' फिर (चतुर्थ अंश) अध्याय 1 श्लोक 85 में लिखा है कि ''श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पारासर जी ने कहा है कि श्री ब्रह्मा जी ने कहा ''मैं जो प्रजा की उत्पति करता हूँ तथा रूद्र जो संहार करता है तथा जो विष्णु स्थिति करता है, हम उसी परमात्मा ब्रह्म से उत्पन्न हुए हैं'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 54 में लिखा है कि योगीजन ओंकार अर्थात् ओ३म् नाम द्वारा जिस का साक्षात्कार करते हैं वह श्री विष्णु का परमपद है।'' फिर (प्रथम अंश) अध्याय 9 श्लोक 55 में लिखा है कि ''जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं (ब्रह्मा) कोई भी नहीं जानते वह श्री विष्णु का परमपद है।''

श्री विष्णु पुराण के लेख से निष्कर्ष निकला कि :-

1. श्री ब्रह्मा जी (जिसने सर्व पुराणों का ज्ञान कहा है उसी को अन्य ने आगे से आगे बताया है) अल्पज्ञ हैं। क्योंकि वे कह रहे हैं (क) कि श्री विष्णु के परमपद के विषय मैं क्या शंकर व देवता व मुनिगण कोई नहीं जानते। यह भी सिद्ध हुआ कि श्री शंकर जी व अन्य देवगण तथा मुनिजन भी अल्पज्ञ हैं अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं हैं।

(ख) उल्लेख संख्या (58-59) में श्री विष्णु पुराण के वक्ता अर्थात् श्री पारासर जी ने कहा है कि पृथ्वी से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलोमीटर दूर सूर्य है सूर्य से एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख किलो मीटर दूर चन्द्रमा है। इस प्रकार चन्द्रमा की पृथ्वी से दूरी 24 लाख कि.मी. बनती है। जो श्री पारासर की प्रत्यक्ष अज्ञानता का प्रमाण। जिसमें सूर्य को पृथ्वी के अति निकटवर्ति कहा तथा चन्द्रमा को सूर्य से भी 12 लाख कि.मी. दूर कहा है। जबकि वर्तमान में खगोलविद्धों ने सिद्ध किया है कि चाँद, पृथ्वी के अति निकट है तथा पृथ्वी का उपग्रह है जो धरती के चारों और चक्र लगाता रहा है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 46, 48, 58, 59 में

2. श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का उत्पति करता ब्रह्म है जिस ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ ब्रह्मा-विष्णु-शिव हैं। भावार्थ है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से अन्य तथा शक्तिशाली है तथा ब्रह्मा,विष्णु व महेश का उत्पति कर्ता अर्थात् पिता है।

प्रमाण :- उपरोक्त श्री विष्णु पुराण उल्लेख संख्या 26, 40, 42, 47, 50 में है।

3. अक्षर पुरूष को परब्रह्म कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 38 में

4. ब्रह्म लोक को सत्यलोक (सतलोक) कहते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 68 में

5. काल भगवान ही अपने अन्य ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के रूप धारण करके धोखा देता है।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या :- 51,1 में

6. क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म काल (जिसे असत् भी कहते हैं) तथा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म (जिसे सत् भी कहते हैं) से अन्य परम अक्षर ब्रह्म है जो इन दोनों से विलक्षण अर्थात् निराला व समर्थ है। उसी परम अक्षर ब्रह्म से सर्व चराचर जगत् भिन्न हुआ है। श्री विष्णु पुराण का वक्ता श्री पारासर ऋषि तत्वज्ञानहीन है जिस कारण से ब्रह्म, को ही परब्रह्म तथा विष्णु तथा परम अक्षर ब्रह्म को भी ब्रह्म काल ही कह रहा है परन्तु तथ्य स्पष्ट करते हैं कि पूर्ण परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म सर्व शक्तिमान सर्व का उत्पति करता तथा सर्व को व्यवस्थित करने वाला है वही सर्व का पालन करता है तथा ब्रह्म काल (क्षर पुरूष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरूष) से अन्य (भिन्न) है। उसी परमदिव्य पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म (सत्यपुरूष) से सर्व चराचर जगत् उत्पन्न हुआ तथा भिन्न हुआ है। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ द्वारा बताई सृष्टी रचना का पूर्ण समर्थन श्री विष्णु पुराण में वर्णित है। इससे सिद्ध हुआ कि बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी द्वारा दिया गया सृष्टी रचना का ज्ञान सत्य है। जिसे वर्तमान तक कोई भी ऋषि, देव तथा गुरु, पण्डित कोई भी नहीं बता सका। इससे यह भी सिद्ध हुआ कि सर्व ऋषि व गुरु जन तत्वज्ञानहीन थे तथा मानव समाज को दिशा भ्रष्ट करते रहे। जिस कारण से मानवता का ह्रास हुआ है।

{विशेष :- (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 55 का अनुवाद उचित नहीं किया गया है कृप्या अनुवाद पढ़ें जो उचित है

अनुवाद :- जिस तत् ब्रह्म अर्थात् परमअक्षर ब्रह्म के विषय में श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 7 श्लोक 29 अध्याय 8 श्लोक 1,3,8,9 तथा 10 अध्याय 15 श्लोक 1,4,16 तथा 17 में वर्णन है। उसी के विषय में श्री विष्णु पुराण (प्रथम अंश) अध्याय 22 श्लोक 54-55 में भी किया है श्लोक 54 में कहा है कि (तत् परमम् ब्रह्म) उस परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरुष की साधना करने वाले योगी अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पुरूषोत्तम के विषय में श्लोक 55 में कहा है कि ''उस परम अक्षर ब्रह्म के दो रूप है मूर्त अर्थात् साकार तथा अमूर्त अर्थात् अव्यक्त क्योंकि पूर्ण ब्रह्म दूर देश में तेजोमय शरीर युक्त है। जब वह परम अक्षर ब्रह्म इस लोक में आता है तो अन्य हल्के तेज युक्त शरीर धारण करके आता है। इसलिए मूर्त तथा अमूर्त'' कहा है और वही परम अक्षर ब्रह्म ही क्षर पुरुष (ब्रह्म/काल) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) रूपी प्रभुओं तथा सर्व प्राणियों को व्यवस्थित किए हुए है। जैसे श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में कहा है क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दो परमात्मा इस लोक में जाने जाते हैं। इसी प्रकार दो स्थिती इस लोक में प्राणियों की है। कि स्थूल शरीर सबका नाशवान है आत्मा सब की अविनाशी है। (उत्तम पुरूषः तू अन्यः) परन्तु वास्तव में श्रेष्ट परमात्मा तो इन दोनों से अन्य (भिन्न) है वही वास्तव में अविनाशी है तथा सर्व का पालन कर्ता है}

7. अनेक ब्रह्मण्डों का प्रमाण :- उल्लेख संख्या 79 में

8. ब्राह्मण मोक्ष प्राप्त नहीं करते अपितु पितृ बनकर पितृलोक में निवास करते हैं :-

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 29 में

9. गृहस्थों का स्थान भी पितृ लोक है जो पितृ पूजते हैं क्योंकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 प्रमाण है कि जो पितृ पूजते हैं वे पितरों को प्राप्त होते हैं अर्थात् पितृ लोक में चले जाते हैं। मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

10. अठासी हजार ऋषियों का स्थान अठासी हजार खेड़े हैं वही स्थान गुरुकुल वासियों का है अर्थात् ये सर्व मोक्ष से वंचित रह जाते हैं।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 31,32 में

11. वानप्रस्थों का स्थान सप्तऋषि लोक है तथा सन्यासियों का स्थान ब्रह्मलोक है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक प्रयन्त सर्व लोक पुनरावृत्ति में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक भी जन्म-मरण के चक्र में ही रहते हैं मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

प्रमाण :- उल्लेख संख्या 32 में

12. जल में एक अण्डा उत्पन्न हुआ उस अण्ड में ब्रह्म काल विराजमान था। उसी ब्रह्म काल अर्थात् महाविष्णु ने ब्रह्मा रूपधारण किया।

प्रमाण :- उल्लेख 19,20,21 में

''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता में सृष्टी रचना का प्रमाण''

(दुर्गा तथा ब्रह्म की मैथुन क्रिया से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म(काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकृति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।१।

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ।।1 ।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है (यस्य) जिसके (छन्दांसि) छोटे–छोटे हिस्से या टहनियाँ (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसार रूप वृक्षको (यः) जो (वेद) सर्वांगों सहित जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

केवल हिन्दी अनुवाद : ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला नीचे को शाखा वाला अविनाशी विस्तारित, पीपल का वृक्ष रूप संसार है जिसके छोटे-छोटे हिस्से या टहनियाँ पत्ते कहे हैं उस संसार रूप वृक्षको जो सर्वांगों सहित जानता है वह पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

भावार्थ : गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में जिस तत्वदर्शी संत के विषय में कहा है उसकी पहचान अध्याय 15 श्लोक 1 में बताया है कि वह तत्वदर्शी संत कैसा होगा जो संसार रूपी वृक्ष का पूर्ण विवरण बता देगा कि मूल तो पूर्ण परमात्मा है, तना अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म है, डार ब्रह्म अर्थात्

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

क्षर पुरुष है तथा शाखा तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी)है तथा पात रूप संसार अर्थात् सर्व ब्रह्मण्ड़ों का विवरण बताएगा वह तत्वदर्शी संत है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।२।

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः, विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके।।2।।

अनुवाद : (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मोमें बाँधने की (अपि) भी (मूलानि) जड़ें मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक अर्थात् पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।(2)

केवल हिन्दी अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी फैली हुई डाली जीवको कर्मोमें बाँधने की भी मुख्य कारण हैं तथा मनुष्यलोक अर्थात् पृथ्वी लोक में नीचे-नरक, चौरासी लाख जूनियों में ऊपर स्वर्ग लोक आदि में व्यवस्थित किए हुए हैं।(2)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।३।

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा।।3।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) न (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) न (अन्तः) अन्त है (न) न (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूप वाले (असंड्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा (दृढेन्) दृढ़ता से सूक्षम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर अर्थात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।(3)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस रचना का नहीं शुरूवात तथा नहीं अन्त है नहीं वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति है का मुझे भी ज्ञान नहीं है इसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा काटकर अर्थात् सूक्षम वेद (तत्वज्ञान के) द्वारा जानकर उसे तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से काटकर।(3)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।४।

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृतिः, प्रसृता, पुराणी।।4।।

अनुवाद : जब तत्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझकर (तत्) उस परमात्माके (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भलीभाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गये हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसारमें नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा–परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृतिः) रचना–सृष्टी (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)

केवल हिन्दी अनुवाद : (जब तत्वदर्शी संत मिल जाए तत्वज्ञान से सर्व स्थिति को समझ कर इसके पश्चात् उस परमात्माके परमपद अर्थात् सतलोक को भलीभाँति खोजना चाहिए जिसमें गये हुए साधक फिर लौटकर संसारमें नहीं आते और जिस परमात्मा-परम अक्षर ब्रह्म से आदि रचना-सृष्टी उत्पन्न हुई है अज्ञात आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन पूर्ण परमात्मा की ही मैं शरण में हूँ अर्थात् उसी पूर्ण परमात्मा की मैं भी पूजा करता हूँ।(4)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।१६।

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।16।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियोंके शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।(16)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस संसार में क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) दो प्रकार के भगवान हैं इसी प्रकार इन दोनों प्रभुओं के लोकों में सम्पूर्ण प्राणियोंके शरीर तो नाशवान् और जीवात्मा अविनाशी कहा जाता है।(16)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः।१७।

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।17।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं (क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष) से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्+वर =प्रभु श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)

केवल हिन्दी अनुवाद : उत्तम प्रभु तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं से भी अन्य ही है यह वास्तव में परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है एवं अविनाशी (ईश्+वर) = प्रभु

श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु है।(17)

''सर्व प्रभुओं की आयु''

अध्याय 8 का श्लोक 17

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्त्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।१७।

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः,यत्,ब्रह्मणः, विदुः,रात्रिम्,
युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः ।।17।।

अनुवाद : (ब्रह्मणः) परब्रह्म का (यत्) जो (अहः) एक दिन है उसको (सहस्त्रयुगपर्यन्तम्) एक हजार युग की अवधिवाला और (रात्रिम्) रात्रिको भी (युगसहस्त्रान्ताम्) एक हजार युगतककी अवधिवाली (विदुः) तत्वसे जानते हैं (ते) वे (जनाः) तत्वदर्शी संत (अहोरात्रविदः) दिन–रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : परब्रह्म का जो एक दिन है उसको एक हजार युग की अवधिवाला और रात्रिको भी एक हजार युगतककी अवधिवाली तत्वसे जानते हैं वे तत्वदर्शी संत परब्रह्म के दिन-रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

विशेष:- सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म-काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। (प्रमाण :- कबीर सागर अध्याय ज्ञान सागर पृष्ठ 43) ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग अर्थात् एक हजार ब्रह्मलोकिय शिव (ब्रह्मलोक में स्वयं काल ही महाशिव रूप में रहता है) की मृत्यु के बाद काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है। इसलिए यहाँ पर परब्रह्म के एक दिन जो एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री होती है। लिखा है।

(1) रजगुण ब्रह्मा की आयुः-*ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का है तथा इतनी ही रात्री है। (एक चतुर्युग में 43,20,000 मनुष्यों वाले वर्ष होते हैं) एक महिना तीस दिन रात का है, एक वर्ष बारह महिनों का है तथा सौ वर्ष की ब्रह्मा जी की आयु है। जो सात करोड़ बीस लाख चतुर्युग की है।*

(2) सतगुण विष्णु की आयुः-*श्री ब्रह्मा जी की आयु से सात गुणा अधिक श्री विष्णु जी की आयु है अर्थात् पचास करोड़ चालीस लाख चतुर्युग की श्री विष्णु जी की आयु है।*

(3) तमगुण शिव की आयुः-*श्री विष्णु जी की आयु से श्री शिव जी की आयु सात गुणा अधिक है अर्थात् तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख चतुर्युग की श्री शिव की आयु है।*

(4) काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की आयुः-*सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म/काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना*

एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग का परब्रह्म का एक दिन होता है। परब्रह्म के एक दिन के समापन के पश्चात् काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है तथा काल व प्रकृति देवी(दुर्गा) की मृत्यु होती है। परब्रह्म की रात्री (जो एक हजार युग की होती है) के समाप्त होने पर दिन के प्रारम्भ में काल व दुर्गा का पुनर् जन्म होता है फिर ये एक ब्रह्मण्ड में पहले की भांति सृष्टी प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष का एक दिन एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री है।

अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की आयु :- *परब्रह्म का एक युग ब्रह्मलोकीय शिव अर्थात् महाशिव (काल ब्रह्म) की आयु के समान होता है। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का तथा इतनी ही रात्री होती है। इस प्रकार परब्रह्म का एक दिन-रात दो हजार युग का हुआ। एक महिना 30 दिन का एक वर्ष 12 महिनों का तथा परब्रह्म की आयु सौ वर्ष की है। इस से सिद्ध है कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष भी नाशवान है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में किसी अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है जो वास्तव में अविनाशी है।*

नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का लिखा है जो उचित नहीं है। क्योंकि मूल संस्कृत में सहंसर युग लिखा है न की चतुर्युग। तथा ब्रह्मणः लिखा है न कि ब्रह्मा। तत्वज्ञान के अभाव से अर्थो का अनर्थ किया है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीनों गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्वदर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष(अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं भी उसी की शरण में हूँ। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरूष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है। उस संसार रूपी वृक्ष का चित्र कृप्या देखें पृष्ठ संख्या 139 पर तथा संक्षिप्त विवरण निम्न पढ़ें :-

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उलटे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाऐं

निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष(परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

उपरोक्त तीनों परमात्माओं की स्थिती को स्पष्ट करने के लिए उदाहरण :- (1)जैसे एक चाय पीने का प्याला होता है जो सफेद मिट्टी का बना होता है। जो हाथ से छुटते ही जमीन पर गिरते ही टुकड़े-2 हो जाता है। यह क्षर प्याला जानो। ऐसी स्थिती ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष की जाने। (2) एक प्याला इस्पात (स्टील) का बना होता है। जो मिट्टी के प्याले से अधिक स्थाई है। परन्तु विनाश इस्पात का भी होता है। भले ही समय अधिक लगता है। इसी प्रकार परब्रह्म को अक्षर पुरूष अर्थात् अविनाशी प्रभु कहा है क्योंकि परब्रह्म की मृत्यु उस समय होती है जिस समय तक क्षर पुरूष अर्थात् काल की मृत्यु 36000 (छःत्तीस हजार) बार हो चुकी होती है। परन्तु फिर भी अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं है।

इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से दूसरा ही है वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है वही वास्तव में परमात्मा कहा जाता है।

यह प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 20,21,22 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अध्याय 8 श्लोक 18 में जिस अव्यक्त के विषय में कहा है उससे दुसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य पुरूष सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। (श्लोक 20) वही अव्यक्त अक्षर इस नाम से कहा गया है उसी पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति को परम गति है। जिस सनातन अव्यक्त परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस नहीं आते वह मेरा भी परम धाम है अर्थात् मेरा भी उपेक्षित धाम है। (श्लोक 21) हे पार्थ जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी आते हैं जिस परम पुरूष से यह समस्त जगत परिपूर्ण है वह सनातन अव्यक्त अर्थात् परम पुरूष तो अनन्य भक्ति से ही प्राप्त होने योग्य है। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी है कहा है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते है अन्न की उत्पति वर्षा से होती है। वर्षा यज्ञ से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान शास्त्रविधि अनुसार कर्मों से होती है। कर्म ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष से उत्पन्न हुए क्योंकि हम ब्रह्म काल के लोक में आए तो कर्म करने पड़े क्योंकि यहां कर्म फल ही मिलता है। सतलोक में बिना कर्म ही सर्व फल प्रभु कृपा से प्राप्त होता है। ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की प्राप्ति अविनाशी परमात्मा से हुई। इससे स्पष्ट है कि सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठीत है परम अक्षर परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 1,8,9,10 में वर्णन हैं

उपरोक्त गीता अध्याय 3 श्लोक 14 से 15 में भी स्पष्ट है कि ब्रह्म काल की उत्पति परम अक्षर पुरूष से हुई वही परम अक्षर ब्रह्म ही यज्ञों में पूज्य है।

"पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में सृष्टी रचना का प्रमाण"

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है।

कुर्आन शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने

मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टी रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है?

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :– प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टी की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (मांस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :– विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टी की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप (आकार) जैसा बनाया। इसलिए सिद्ध हुआ कि परमात्मा नराकार अर्थात् मानव सदृश शरीर युक्त है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टी की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुर्आन शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :– फला तुतिअल् – काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्) ।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी–देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुर्आन के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना(लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् – हय्यिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा(कबीरा) ।58।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी(पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन् (कबीरन्) ।59।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुर्आन शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टी की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि कुरान ज्ञान दाता बाखबर अर्थात् पूर्ण ज्ञानी नहीं है।

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी? तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं (कुरान ज्ञान दाता) नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों (ईसाई तथा मुस्लमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर

प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टी रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू अर्थात् अल्लाहु अक्बर भी कहते हैं।

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुर्आन शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेदों (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेबों (कुर्आन शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) का ज्ञान गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

"पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टी रचना"

विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुस्लमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है तथा ये तीनों प्रभु अविनाशी है। इनका जन्म मृत्यु कभी नहीं होता न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुर्आन शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है। कहते थे कि सर्वशास्त्रों में परमात्मा तो निराकार लिखा है। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर) गुरुओं पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मो के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। कि परमात्मा साकार है। वही पूर्ण परमात्मा ही जब चाहे प्रकट हो जाता है। वही परमात्मा काशी में कबीर नाम से प्रकट हुआ था। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टी रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टी का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कृपा प्रेमी पाठक पढ़े निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारितः-

धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।
यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो एक राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवोंका भरम नशाओ।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।

भरम गये जग बेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोइ बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
मां अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। हे साहेब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग बिलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उसको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्मको ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी ने सद्ग्रन्थों के वास्तविक ज्ञान को पांच वर्ष की आयु में सन् 1403 में कविर्गिर्भी अर्थात् कबीर वाणी द्वारा बोलना प्रारम्भ कर दिया था। फिर मथुरा में भक्त धर्मदास जी से मिलने के उपरान्त अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कहा है कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टी रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टी की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई ? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म/काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त

होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्मण्ड समेत सतलोक से 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी,सत्गुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) भी इस ब्रह्म अर्थात् काल प्रभु की साधना करते हैं। यह ब्रह्म इनको भी नहीं मिला है क्योंकि इसने सौंगन्ध खाई है कि मैं किसी भी वेद वर्णीत विधि से या अन्य किसी जप, तप साधना क्रिया से किसी को दर्शन नहीं दूंगा। प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में है। परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि सब व्यक्ति ब्रह्म की महिमा से परिचित है परन्तु आदि ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को कोई नहीं जानता। तीनों देवताओं तथा ब्रह्म (काल) को सब पूज रहे हैं। जिसके कारण से काल जाल में ही रह जाते हैं। यह ब्रह्म काल अपने पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) को भी खाता है। फिर नए ब्रह्मा, विष्णु, शिव उत्पन्न कर लेता है। इस प्रकार अपने ब्रह्मण्डों में सर्व को धोखे में रखता है। स्वयं ऊपर शुन्य स्थान पर भिन्न रहता है। यह कबीर परमेश्वर जी ने सर्व काल का जाल बताया है।

विशेषः- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिती अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाशवान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरुओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नही) है, विद्यार्थीयों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरुओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरु, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधी त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरुओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो अब स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कर्विदेव (कबीर प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

"आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टी रचना का प्रमाण"

सन्त गरीबदास जी की आत्मा को परमेश्वर कबीर जी सत्यलोक लेकर गए तथा सर्व ब्रह्मण्डों के दर्शन कराए। तत्वज्ञान से परिचित कराए फिर उनकी आत्मा को शरीर में पुनर् से प्रवेश किया उस के पश्चात् सन्त गरीबदास जी ने आँखों देखा तथा कबीर परमेश्वर से सुने

यथार्थ ज्ञान को अपनी वाणी में वर्णन किया।

आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सत्त पुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्मण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगर द्वीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस द्वीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर द्वीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर द्वीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमांन चले अधिकाई। छिन में अगर द्वीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर रु माया। धर्मराय का राज पठाया।।31।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कृतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति याह प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय मांही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।

आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्मण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्मण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। सत्य लोक है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहां अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

भावार्थ :– ***उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान के आधार पर आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने कहा है कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ ख्वास अर्थात् चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्मण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकृति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकृति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मृत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। बन्दी छोड़ कबीर जी ने कहा है कि हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।***

।।सन्त गरीबदास जी महाराज की वाणी।।
(सत ग्रन्थ साहिब पृष्ठ नं. 690 से सहाभार)

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाऐ आपै खाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।
सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।
लाख ग्रास नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपन बहिस्त वैकुंठ बनाये।

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंधा है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- *ज्योति निरंजन (कालबलि) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी पत्नी दुर्गा अर्थात् माया के संयोग से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करता है और फिर मार देता है। जिस प्रकार नागिनी अपनी कुण्डली बनाती है तथा उसमें अण्डे देती है और फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है और उसमें से बच्चा निकल जाता है। उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के काफी अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।*

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्मण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रूव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा। वह भी पार नहीं हुए। काल लोक में ही रहे तथा 'ऊँ नमः भगवते वासुदेवायः' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कृष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती है।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

भावार्थ :– *सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है।*

जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म के भक्ति धन को स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त कर के वापिस कर्माधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले कर्म आधार से काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोद्ध लिया। श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी

अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जौरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
एक न कर्ता दो न कर्ता दश ठहराए भाई।
दशवां भी धूंध्र में मिलसी सत कबीर दुहाई।।
संहस अठासी द्वीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहां ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं जाहीं।
जहां कर्त्ता नहीं अन्य भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जौरा काल उस द्वीप नहीं जाँहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।
बन्दी छोड़ कबीर गुसांइ। झिलमलै नूर द्रव झांइ।।

भावार्थ :- ***सन्त गरीब दास जी ने परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी से तत्वज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् बताया कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शिव तथा माया अर्थात् दुर्गा देवी व ज्योति निरंजन अर्थात् काल, इन पांचों ने मिल कर सर्व प्राणियों को जाल में फंसाए रखने का षड़यंत्र रचा है। हम जो वचन कह रहे हैं इनको ध्यान पूर्वक सुनों तथा गहराई से विचार करो। परमेश्वर बन्दी छोड़ जी हैं। उनका सत्यलोक स्थान शाशवत अर्थात् अविनाशी है। सुर नर अर्थात् देव लोग व मुनि -ज्ञानी अर्थात् परमात्मा प्राप्ति में लगे मनशील ज्ञानीजन इन सर्व को पूर्ण मोक्ष मार्ग प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए सर्व ऋषिजन व देवता काल जाल में ही फंसे हैं। गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान***

दाता ब्रह्म ने कहा है कि यह ज्ञानी आत्माएं जो परमात्मा प्राप्ति के लिए प्रयत्न शील हैं ये हैं तो नेक परन्तु तत्वदर्शी सन्त के अभाव से मेरी अनुत्तम (अश्रेष्ठ) साधना में लीन हैं। यही प्रमाण कबीर जी ने दिया है :- कबीर, सुर नर मुनि जन तेतीस करोड़ी, बन्धे सबै निरंजन डोरी।

भावार्थ है कि सर्व मुनि, ऋषि तथा तेतीस करोड़ देवता काल साधना करके काल की डोरी से ही बन्धे हैं अर्थात् ब्रह्म काल के नियमानुसार जन्म मृत्यु तथा कर्मदण्ड भोगते रहते हैं। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होता। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो निरधारित समय अनुसार छोटी आयु में मृत्यु को प्राप्त होते या निरधारित समय से पहले अर्थात् अकाल मृत्यु को प्राप्त होते, उन दोनों प्रकार की मृत्यु को टाल कर पूरा जीवन अपनी कृपा से प्रदान कर देता है तथा इस काल मृत्यु तथा अकाल मृत्यु का मुख्य कारण महाकाल अर्थात् ज्योति निरंजन जो इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में वास्तविक काल रूप में विराजमान है उस चोर को ढूढ़ लिया है उस का प्रभाव भी अपने साधक से समाप्त कर दूगाँ। काल ने अपनी पत्नी दुर्गा द्वारा जाल फैलवाया है। जिस कारण से प्राणी पूर्ण परमात्मा तक नहीं जा पाते इस दुर्गा को भी दण्ड देता हूँ। तब अपना नाम व सारनाम दे कर पार करता हूँ।

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा जताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। (बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला,) काल ब्रह्म के इक्कीश ब्रह्मण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देता है। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, न विष्णु, न शिव जी कर सकते। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) हैं। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी आयु है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त अवश्य होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमांयदे पूर्ण संत (सतगुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ3म तथा तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख हैं।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके

अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्मण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड व अन्य सर्व ब्रह्मण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान है। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान है। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

"आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टी रचना का संकेत"

श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पृ. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा। (3)
त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।। (4)
पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।
तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।। (10)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टी की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टी का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिन जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु (अंश) अमृतवाणी महला 1 (गु.ग्र.पृ. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।
इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।। (3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।
ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।। (9)

उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टी रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सर्व शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारू कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओ३म् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओ३म् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर मन्त्र जाप करने से उद्धार होता है।

विशेष :– श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओ३म् + तत् + सत्) का स्थान - स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।

(पृ. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।। (15)
सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा।
नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)।।5।।17।।

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पृ. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं। (1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं। (2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीत (3)
सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं। (4)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व के पार अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों

को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा जो साधना आप करते हैं पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमृत वाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. पृ. 420)

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री सन्त नानक जी ने स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर) सत्कबीर आप (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टी के रचन हार हो, आप ही (बेएब) निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।

नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत् कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टी रचना कैसे हुई? अब पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए।

''राधा स्वामी व धन-धन सतगुरु सच्चा सौदा पन्थों के सन्तों तथा अन्य संतों द्वारा सृष्टी रचना की दन्त कथा''

अन्य संतों द्वारा जो सृष्टी रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़ें :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज'' पृष्ठ नं. 102-103 से ''सृष्टी की रचना'' (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक – अलखलोक – अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाश राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सृष्टी की रचना'' पृष्ठ 81,

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

यह ज्ञान तो ऐसा है। एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सृष्टी रचना का ज्ञान तो ऐसा है। यथार्थ जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें पूर्वोक्त सृष्टी रचना।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष।

संतमत प्रकाश भाग 3 पृष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस सन्तमत प्रकाश पुस्तक के पृष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पृष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।'' पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पृष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पृष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक

है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् तथा तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। ये सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहां सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माओं से प्रार्थना है कि सत्य का ग्रहण करें असत्य का परित्याग करें।

❑❑❑

"तत्व ज्ञान"

"काल ब्रह्म द्वारा आत्मा को जीवात्मा रूप देना"

परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परमेश्वर से बिछुड़ने के पश्चात् आत्माऐं क्षरब्रह्म के साथ यहाँ पर आ गई। क्षर ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) ने अपनी चतुरता से आत्मा के ऊपर कई आवर्ण चढ़ा दिए तथा आत्मा को जीव रूप दे दिया। जीव पर सुक्ष्म शरीर अन्तिम आवरण है। सुक्ष्म शरीर पर स्थूल शरीर वचन शक्ति से तथा नरमादा के संयोग से चढ़ता है। स्थूल शरीर दो प्रकार का होता है। एक नूरी (तेज पुण्ज का) स्थूल शरीर जो देवताओं को प्राप्त होता है, (जैसे दुर्गा तथा काल ब्रह्म के मिलन से ब्रह्मा-विष्णु-महेश का शरीर तेजपुंज का नर-मादा से प्राप्त हुआ) नूरी स्थूल शरीर में एक श्रेणी लिंग शरीर भी होता है जो भक्ति प्रताप से प्राप्त होता है। तेज पूण्ज का शरीर (जो नूरी स्थूल शरीर की अन्य श्रेणी है) दो प्रकार से प्राप्त होता है एक नर-मादा के संयोग से (अन्य देवी-देवताओं के संयोग से प्राप्त होता है) दूसरा शब्द शक्ति व सिद्धी से (जैसे दुर्गा ने अपनी शब्द शक्ति से सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती तेजपुंज के शरीर युक्त उत्पन्न की) दूसरा स्थूल शरीर पांच तत्व (आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वी के विशेष अनुपात से बना पांच तत्व) का होता है जो कई प्रकार से जीव को प्राप्त होता है। (1) एक नर-मादा के संयोग से दूसरा विशेष वातावरण से (सुरसी जो गेहूं में अपने आप उत्पन्न हो जाती है। ढेरे- जो बालों में या शरीर पर डाले कपड़ों में उत्पन्न हो जाते हैं। उन कीड़ों को ढेरे कहते हैं। तीसरे किसी ऋषि या प्रभु या सन्त के वचन से जीव को प्राप्त होता है। जैसे महर्षि वालमीकी ने कुशा से कुश उत्पन्न किया था। जो सीता जी का पुत्र था।

उपरोक्त सर्व शरीर जीवात्मा को पाप व पुण्य के आधार से प्राप्त होते हैं।

विशेषकर स्थूल शरीर प्राप्त प्राणियों को चार श्रेणियों (चार खानियों) में विभाजित किया गया है। 1. अण्डर्ज (अण्डों में उत्पत्ति) 2. जेरज (जेर में उत्पत्ति जैसे पशु व मानव जेर में उत्पन्न होते हैं। 3. स्वेतज (पसीने से उत्पत्ति जैसे ढेरे, कीड़े आदि)4.उद्धभूज (गेहूं आदि कनक में सुरसी आदि जैसे गुलर के फल में जीव उत्पन्न होते हैं)

उपरोक्त चार खानी अर्थात्त चार श्रेणियों में उत्पन्न होने वाले प्राणी चौरासी लाख प्रकार के हैं। जो स्थूल शरीर धारण करते हैं।

➽ नूरी (तेज पुण्ज) के शरीर कई प्रकार के होते हैं।

1. देवताओं का भी नूरी शरीर है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का भी नूरी शरीर है जो अन्य देवताओं से अधिक तेजोमय है। इन तीनों देवताओं के शरीर से अधिक तेजोमय शरीर इनके पिता श्री क्षर पुरूष अर्थात् काल रूपी ब्रह्म का है। क्षर पुरूष से अधिक तेजोमय शरीर अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का है। उपरोक्त सर्व प्रभुओं का नूरी शरीर नाशवान है परन्तु परम अक्षर पुरूष अर्थात् परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) का शरीर उपरोक्त प्रभुओं से अत्यधिक तेजोमय है तथा वास्तव में अविनाशी है। परम अक्षर ब्रह्म का शरीर भी तेजपुंज (नूर तत्व) का है। परन्तु स्नायु तंत्र नहीं है। अस्नाविरम् अर्थात् नाड़ियों रहित है। अन्य देवताओं का शरीर नाड़ियों सहित है चाहे वह शब्द शक्ति से प्राप्त हुआ है चाहे नर-मादा से प्राप्त हुआ है। काल ब्रह्म तथा दुर्गा का शरीर भी

नाड़ियों सहित है।

आओ तेजोमय नूरी शरीरों की भिन्नता समझें:- जैसे एक बल्ब शुन्य वाट का, एक बल्ब 25 वाट का, एक बल्ब 100 वाट का, एक बल्ब 1000 वाट का होता है। सर्व का प्रकाश (नूर) है परन्तु चमक में अन्तर है यदि अन्य देवताओं को 25 वाट के प्रकाश युक्त शरीर सहित माने तो ब्रह्मा, विष्णु व शिव का शरीर 100 वाट का जाने तथा इनके पिता काल रूपी ब्रह्म (क्षर पुरूष) का शरीर एक हजार वाट का जाने तथा अक्षर ब्रह्म (अक्षर पुरूष) का शरीर दस हजार वाट के प्रकाश समान जाने। परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् परमेश्वर के शरीर का प्रकाश सूर्य के प्रकाश तुल्य जाने।

''नाशवान तथा अविनाशी प्रभुओं के विषय में ज्ञान''

श्री मद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन प्रभुओं के विषय में निर्णायक ज्ञान है तथा श्लोक 1 से 4 में पूर्वोक्त सर्व प्रभुओं का सांकेतिक निर्णायक ज्ञान है। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में कहा है कि यह संसार रूपी पीपल का वृक्ष है जिसकी परमेश्वर रूपी जड़ें (मूल) ऊपर को हैं तथा तीनों गुण (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु तथा तमगुण शिव) रूपी शाखाऐं नीचे को हैं। जो सन्त इस संसार रूपी वृक्ष का सर्वांग सहित भिन्न-2 वर्णन करता है वह तत्वदर्शी सन्त है। जिस तत्वदर्शी सन्त के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णन है तथा गीता ज्ञानदाता भगवान ने कहा है कि जिस मुख्य ज्ञान अर्थात् तत्व ज्ञान के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है उस तत्व ज्ञान को तत्वदर्शी सन्तों से समझ (मैं गीता ज्ञान दाता नहीं जानता)। उस तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है। तत्व दर्शी सन्त संसार रूपी वृक्ष का विस्तृत वर्णन करेगा। परमात्मा कबीर (कविर्देव) ने स्वयं अपने द्वारा रची सृष्टी का ज्ञान तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करके दिया था।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, ज्योति निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

यह उपरोक्त वाणी (दोहा/श्लोक) स्वसमवेद का है। जिसमें संसार रूपी वृक्ष का वर्णन है। वृक्ष का पृथ्वी से तुरंत बाहर जो मोटा हिस्सा होता है वह तना कहलाता है। यह तना तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) है। तने के उपरी भाग में मोटी डालें होती हैं। उन मोटी डालों में से एक डाल क्षर पुरुष (अर्थात् काल ब्रह्म) है। उस मोटी डाल से तीन शाखाएं तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) हैं। उन से आगे पत्ते रूपी प्राणी हैं।

उपरोक्त वृक्ष की जड़ (मूल) जो पृथ्वी के अन्दर है। वह परम अक्षर पुरुष अर्थात् अविनाशी परमात्मा है जिसे परमेश्वर कहते हैं। जो ऊपर के लोकों में चार रूपों में विराजमान है। वही मूल रूप परमात्मा तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है। जो क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से अन्य पुरुषोत्तम है अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर है।

गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के विषय में कहा है कि ये दोनों प्रभु नाशवान हैं तथा इन दोनों के लोकों के प्राणियों के तथा इन प्रभुओं के स्थूल शरीर तो नाशवान हैं। परंतु जीवात्मा अविनाशी कही गई है। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट किया है कि उपरोक्त दोनों प्रभुओं (क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष) से अन्य जो प्रभु है वह वास्तव में पुरुषोत्तम है, वही अविनाशी परमेश्वर तथा परमात्मा कहा जाता है। वही तीनों लोकों में प्रवेश

करके सबका धारण-पोषण करता है।

➽ *''सर्व प्रभुओं की कार्य प्रणाली समझने के लिए कृप्या देखें संसार रूपी वृक्ष का चित्र।''*

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

उपरोक्त संसार रूपी वृक्ष की मूल (जड़) रूपी परमात्मा ही पूरे वृक्ष रूपी संसार को आहार प्रदान करता है अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म व सर्व प्राणियों का पालन-पोषण व धारण करने वाला परम अक्षर ब्रह्म परमेश्वर ही है। जैसे वृक्ष के तने, डालों व शाखाओं आदि को आहार जड़ से प्राप्त होता है। जिसका उल्लेख गीता अध्याय 8 श्लोक 6 तथा 8 से 10 व 20 से 22 में भी है तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62, 64 तथा 66 में भी है। (कृप्या पाठक जन पढ़ें उपरोक्त गीता श्लोक इसी पुस्तक के पृष्ठ 387 से 389 पर)

1. क्षर पुरुष का अर्थ है नाशवान प्रभु

2. अक्षर पुरुष का अर्थ है अविनाशी प्रभु

3. परम अक्षर पुरुष का अर्थ है वास्तव में अविनाशी प्रभु अर्थात् परमेश्वर्।

➽ उदाहरण : जैसे एक सफेद प्याला (चीनी का व मिट्टी का बना) होता है। यह क्षर अर्थात् नाशवान है। ऐसी स्थिति तो ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष व उसके लोक के प्राणियों के शरीर की जानें।

➽ दूसरा प्याला इस्पात (स्टील) का होता है। यह भी कुछ अक्षर अर्थात् अविनाशी (स्थाई) है। परंतु वास्तव में अविनाशी नहीं है। क्योंकि इस्पात को भी जंग लगता है, वह भी नष्ट हो जाता है चाहे समय अधिक लगे। यह स्टील का प्याला मिट्टी वाले प्याले की तुलना में स्थाई लगता है। परंतु वास्तव में स्थाई (अक्षर अर्थात् अविनाशी) नहीं है। यह स्थिति परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की जानें।

➽ तीसरा प्याला स्वर्ण (सोने) का होता है। यह परम अक्षर धातु है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। स्वर्ण को जंग नहीं लगता अर्थात् सदा रहने वाला अविनाशी है। यह स्थिति परम अक्षर पुरुष अर्थात् परमेश्वर की जानें जो वास्तव में अविनाशी है।

''सर्व प्रभुओं की आयु''

अध्याय 8 का श्लोक 17

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्त्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः। १७।

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः,यत्,ब्रह्मणः, विदुः,रात्रिम्,
युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः ।।17।।

अनुवाद : (ब्रह्मणः) परब्रह्म का (यत्) जो (अहः) एक दिन है उसको (सहस्त्रयुगपर्यन्तम्) एक हजार युग की अवधिवाला और (रात्रिम्) रात्रिको भी (युगसहस्त्रान्ताम्) एक हजार युगतककी अवधिवाली (विदुः) तत्वसे जानते हैं (ते) वे (जनाः) तत्वदर्शी संत (अहोरात्रविदः) दिन–रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : परब्रह्म का जो एक दिन है उसको एक हजार युग की अवधिवाला और रात्रिको भी एक हजार युगतककी अवधिवाली तत्वसे जानते हैं वे तत्वदर्शी संत परब्रह्म के दिन-रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

विशेषः- सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म-काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग अर्थात् एक हजार ब्रह्मलोकिय शिव (ब्रह्मलोक में स्वयं काल ही महाशिव रूप में रहता है) की मृत्यु के बाद काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है। इसलिए यहाँ पर परब्रह्म के एक दिन जो एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री होती है। लिखा है।

(1) रजगुण ब्रह्मा की आयुः-*ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का है तथा इतनी ही रात्री है। (एक चतुर्युग में 43,20,000 मनुष्यों वाले वर्ष होते हैं) एक महिना तीस दिन रात का है, एक वर्ष बारह महिनों का है तथा सौ वर्ष की ब्रह्मा जी की आयु है। जो सात करोड़ बीस लाख चतुर्युग की है।*

(2) सतगुण विष्णु की आयुः- *श्री ब्रह्मा जी की आयु से सात गुणा अधिक श्री विष्णु जी की आयु है अर्थात् पचास करोड़ चालीस लाख चतुर्युग की श्री विष्णु जी की आयु है।*

(3) तमगुण शिव की आयुः- *श्री विष्णु जी की आयु से श्री शिव जी की आयु सात गुणा अधिक है अर्थात् तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख चतुर्युग की श्री शिव की आयु है।*

(4) काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की आयुः- *सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म/काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग का परब्रह्म का एक दिन होता है। परब्रह्म के एक दिन के समापन के पश्चात् काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है तथा काल व प्रकृति देवी(दुर्गा) की मृत्यु होती है। परब्रह्म की रात्री (जो एक हजार युग की होती है) के समाप्त होने पर दिन के प्रारम्भ में काल व दुर्गा का पुनर् जन्म होता है फिर ये एक ब्रह्मण्ड में पहले की भांति सृष्टी प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष का एक दिन एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री है।*

अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की आयु :- *ब्रह्मलोकिय महाशिव अर्थात् काल ब्रह्म की आयु के समान अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का एक युग होता है। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का तथा इतनी ही रात्री होती है। इस प्रकार परब्रह्म का एक दिन-रात दो हजार युग का हुआ। एक महिना 30 दिन का एक वर्ष 12 महिनों का तथा परब्रह्म की आयु सौ वर्ष की है। इस से सिद्ध है कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष भी नाशवान है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में किसी अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है जो वास्तव में अविनाशी है।*

नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का लिखा है जो उचित नहीं है। क्योंकि मूल संस्कृत में सहंसर युग लिखा है न की चतुर्युग। तथा ब्रह्मणः लिखा है न कि ब्रह्मा। तत्वज्ञान के अभाव से अर्थों का अनर्थ किया है।

विशेष जानकारी :- काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों में उत्पति तथा प्रलय इस प्रकार होती है। :- एक महाब्रह्माण्ड में विनाश (प्रलय) परब्रह्म के सौ वर्षों के उपरान्त होता है तब तक प्रत्येक ब्रह्मण्ड में 20-20 बार प्रलय व उत्पति हो चुकि होती है एक ब्रह्माण्ड में सौ वर्ष ही प्रलय रहती है। इस प्रकार चारों महाब्रह्माण्डों में उत्पति प्रलय होती है। इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में जिसमें काल ब्रह्म का निज लोक है, में प्रलय परब्रह्म के एक दिन अर्थात् एक हजार युग के उपरान्त होती है। उस समय काल ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्डों का विनाश हो जाता है। परब्रह्म की यह रात्री होती है। पुनः दिन के प्रारम्भ होने पर काल ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्डों में क्रमवार उत्पति कार्य शुरू हो जाता है।

''भक्त धर्मदास जी को तत्वज्ञान प्राप्ति''

भक्त धर्मदास जी का जन्म सन् 1405 (वि.सं. 1462) में बांधवगढ नगर में वैश्य कुल में हुआ। भक्त धर्मदास जी परमेश्वर कबीर जी के समकालीन थे। जब परमेश्वर कबीर जी लीला करने के

लिए काशी में प्रकट थे। परमेश्वर कबीर जी का लीला काल संवत् 1455 (सन् 1398) से संवत् 1575 (सन् 1518) तक है। बांधवगढ स्थान मध्यप्रदेश राज्य में है। भक्त धर्मदास जी बहुत बड़े साहुकार थे। जब कभी प्राकृतिक आपदा (जैसे अकाल गिरना, बाढ़ आना) आने पर बांधवगढ नवाब धर्मदास जी के पूर्वजों से वित्तिय सहायता प्राप्त करता था। भक्त धर्मदास जी पवित्र हिन्दू धर्म में जन्में थे। जिस कारण हिन्दू धर्म में लोक वेद के आधार से प्रचलित धार्मिक पूजाएं अत्यंत श्रद्धा से किया करता थे। श्री रूपदास जी वैष्णों सन्त से दिक्षा प्राप्त कर रखी थी। संत रूपदास जी ने अपने भक्त धर्मदास जी को श्री राम व श्री कृष्ण नाम का जाप करने को कहा हुआ था। भगवान शंकर जी की भी पूजा ओम् नमोः शिवाय् तथा एकादशी का व्रत रखने की राय भी प्रदान कर रखी थी। अठारह पुराणों के ज्ञान के आधार से भक्ति रंग में रंगा हुआ था। गीता जी का पाठ नित्य करने को कहा हुआ था। श्री विष्णु जी को ईष्ट रूप में मानकर पूजा करने को कहा हुआ था। श्री विष्णु जी को अजर-अमर, सर्वेश्वर, सर्व सृष्टी रचनहार कुल का मालिक बताया हुआ था। श्री विष्णु जी के कोई माता-पिता नहीं हैं। ये अजर-अमर हैं। इसी विष्णु जी के अवतार श्री रामचन्द्र जी त्रेतायुग में तथा श्री कृष्णचन्द्र जी द्वापर युग में हुए जो साक्षात् श्री विष्णु जी वाली ही आत्मा थी। श्री विष्णु जी ही श्री ब्रह्मा का रूप धारण करके सृष्टी रचना करता है तथा श्री विष्णु रूप से स्थिति तथा श्री शिव रूप से सर्व का संहार करता है। इस से अन्य कोई परमात्मा नहीं है। श्री विष्णु जी की पूजा से स्वर्ग प्राप्ति हो जाएगी। इस उपरोक्त ज्ञान के आधार पर आधारित भक्त धर्मदास जी अटूट श्रद्धा से साधना कर रहा था। श्री रूपदास जी ने अड़सठ तीर्थों की यात्रा करना भी अत्यंत लाभप्रद बता रखा था। जिस कारण भक्त धर्मदास जी अपने पूज्य गुरुदेव संत रूपदास जी की आज्ञा लेकर अड़सठ तीर्थों के भ्रमण के लिए निकला।

तीर्थ यात्रा करता हुआ भक्त धर्मदास जी मथुरा शहर (उत्तर प्रदेश) में गया। प्रातः काल मथुरा के उस जलास्य में स्नान किया जिसके विषय में यह कहा जाता है कि श्री कृष्ण लला इसी तालाब में स्नान किया करते थे। जो तीर्थ रूप में मान्य है। उसी जलास्य के जल का लोटा भर कर पूजा के लिए लाया। कुछ स्थान को गाय का गोबर व मिट्टी मिलाकर गारा बना कर लीपा। उस लिपाई किए स्थान पर एक स्वच्छ कपड़ा बिछा कर श्रीमद्भागवत् गीता को रखा। पहले भगवान विष्णु जी की मूर्ति (शालिग्राम) के पहले वाले कपड़े उतार कर जोहड़ वाले जल से स्नान करवाया जो लोटे में भर कर पास ही रखे हुए था। तत् पश्चात् धोए हुए स्वच्छ वस्त्र भगवान श्री विष्णु जी की प्रतिमा को पहनाए। मुकुट शीश पर रख कर तिलक लगा था। पश्चात् स्वयं को तिलक लगाया। इस सर्व क्रिया को पूर्ण परमात्मा एक जिंदा महात्मा के वेश में प्रकट होकर लगभग दस गज (तीस फिट) की दूरी पर विराजमान होकर देख रहे थे (जिन्दा महात्मा मुसलमानों में होते हैं जो सिर पर काला टोप ऊंची चोटी वाला पहनते हैं तथा शेष शरीर पर एक कच्छा जो घुटनों के ऊपर तक होता है तथा एक काला चौगा अर्थात् ओवर कोट जैसा वस्त्र पहनते हैं जो घुटनों से नीचे तक लम्बा होता है।)

मूर्ति पूजा के उपरांत धर्मदास जी ने एक सौ आठ मनकों की माला द्वारा ओम् नमः शिवाय् तथा ओम् नमोः भगवते वासुदेवाय की एक माला का जाप किया। तत् पश्चात् श्री विष्णु सतोत्र का कई बार पाठ किया। तत् पश्चात् श्रीमद् भगवद् गीता के सातवें अध्याय का पाठ ऊंचे स्वर में शुद्ध उच्चारण करते हुए जिन्दा महात्मा को सुनाने के उद्देश्य से किया। परमेश्वर कबिर (कबिर्देव) जी

गीता पाठ को श्रवण कर रहे थे तथा अपने हाथों व शीश की क्रियाऐं ऐसे कर रहे थे जैसे गीता पाठ का ज्ञान अति उत्तम लग रहा हो। भक्त धर्मदास जी एक दो श्लोक पढ़ कर उनका हिन्दी अनुवाद भी साथ पढ़ रहे थे तथा बार-2 जिन्दा महात्मा की ओर निहार रहे थे तथा मन-2 में सोच रहे थे कि अन्य धर्म का श्रद्धालु भी हमारी गीता जी के ज्ञान से कितना प्रभावित है तथा इसे अच्छा लग रहा है। इसीलिए गर्दन व हाथों को श्रद्धा पूर्वक हर्षित होकर क्रियावान कर रहा है। भक्त धर्मदास जी प्रतिदिन श्री गीता जी के एक अध्याय का पाठ करता था। उस क्रम से उस दिन गीता अध्याय सात का पाठ करना था।

भक्त धर्मदास जी ने जिन्दा संत के वेश में विराजमान परमेश्वर को एक मुसलमान श्रद्धालु जिज्ञासु जाना जो गीता जी के ज्ञान में अत्यधिक रूची (Intrest) ले रहा है। धर्मदास जी ने मन-मन में विचार किया की लगता है इस भक्त को गीता ज्ञान बहुत पसन्द आ रहा है। क्यों ना इस मुसलमान जिज्ञासु को गीता जी का अनमोल ज्ञान अधिक से अधिक सुनाया जाए। हो सकता है इस पुण्यात्मा को यह पवित्र गीता ज्ञान समझ में आ जाए तो गुरुदेव रूपदास जी से उपदेश दिलाकर इस का कल्याण करा दूं। इस दृष्टिकोण से धर्मदास जी ने श्रीमद्भगवत् गीता जी के सातवें अध्याय के पश्चात् लगातार आठवां अध्याय भी संपूर्ण पढ़ा। परमेश्वर कबीर जी गीता जी के दोनों अध्याय सुनकर ऐसी मुद्रा में बैठे थे मानों अभी ज्ञान सुनने की भूख शेष है। भक्त धर्मदास जी अपने उदेश्य में काल्पनिक सफलता देख कर श्रीमद्भगवत् गीता जी के अन्य अध्यायों के फुटकर श्लोक भी सुनाए जिनमें गीता अध्याय 2 श्लोक 12, 17, गीता अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 तथा अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16 से 18 तक व अंत में गीता अध्याय 18 श्लोक 66 को भी अनुवाद सहित सुनाया। जिसका हिन्दी अनुवाद अन्य अनुवाद कर्ता द्वारा किया हुआ पढ़ सुनाया कि सर्व धर्मो को त्याग कर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान की शरण में आजा मैं तुझे सर्व पापों से मुक्त कर दूंगा, शोक मत कर (गीता अ. 18/मं.66)।

जिस समय भक्त धर्मदास जी ने श्रीमद्भगवत् गीता जी के श्लोक पढ़ने प्रारम्भ किए उस समय जिन्दा वेशधारी परमेश्वर भक्त धर्मदास के निकट आकर विराजमान हो गए थे। भक्त धर्मदास जी ने वैष्णव संत वाली वेशभूषा धारण कर रखी थी जिससे वह एक वैष्णव संत लगता था। परमात्मा ने अपने आपको छुपा कर एक भक्त की भूमिका करते हुए भक्त धर्मदास जी से करबद्ध होकर प्रार्थना की तथा वैष्णव संत कह कर सम्बोधित करते हुए कहा है कि हे वैष्णव संत ! आपके द्वारा बताया ज्ञान मुझे बहुत अच्छा लगा। मैं एक जिज्ञासु भक्त हूं। परमेश्वर (अल्लाह) की खोज में भटक रहा हूँ। कृप्या मुझे परमात्मा प्राप्ति की विधि बताईए। जिस से मेरा कल्याण हो जाए। जन्म-मरण से सदा के लिए छुटकारा हो जाए।

भक्त धर्मदास जी ने कहाः- सर्व प्रथम गुरु धारण करना होता है। तत्पश्चात् गुरुदेव जी द्वारा बताए भक्ति मार्ग पर अटूट श्रद्धा से साधना करने से कल्याण होता है। मैं अपने गुरुदेव श्री रूप दास जी द्वारा बताए मार्ग अनुसार सतगुण भगवान विष्णु को ईष्ट रूप में मान कर साधना करता हूँ। भगवान विष्णु जी सर्वशक्तिमान हैं। सर्व सृष्टी रचनहार तथा अविनाशी प्रभु हैं। इनके कोई माता-पिता नहीं है। ये ही प्रभु श्री रामचन्द्र व श्री कृष्णचन्द्र रूप में अवतार धारण करते हैं।

इनकी पूजा करने से साधक का पुनर्जन्म नहीं होता। भगवान श्री विष्णु जी ने ही श्री कृष्ण जी अवतार धारण करके गीता जी का ज्ञान अर्जुन को निमित्त बनाकर मानव कल्याण हेतु बोला था। जो मैंने अभी पाठ किया। यह अनमोल ज्ञान भगवान श्री कृष्ण जी द्वारा बोला गया तथा श्री वेदव्यास (कृष्णद्वैपायन) द्वारा लिपिबद्ध किया गया था। आज से लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व पवित्र गीता जी का ज्ञान प्रकाश हुआ था। जब कोई धर्म नहीं था। इसलिए गीता ज्ञान सर्व धर्मो के अनुयाईयों के लिए ग्रहण करने योग्य है। मानव का कल्याण केवल गीता जी व वेदों के ज्ञान द्वारा ही सम्भव है।

धर्मदास जी ने यह भी कहा कि मैं भगवान शिव जी की पूजा भी करता हूं। भगवान शिव अजरो-अमर हैं, सर्वशक्तिमान हैं, मृत्युंजय है तथा सर्वेश्वर है, पूर्ण मोक्ष दायक हैं। इनके भी कोई माता पिता नहीं हैं। ये भगवान शीघ्र प्रसन्न होने वाले आसुतोष हैं। तमोगुण युक्त प्रभु श्री शिव जी सर्व के पूज्य हैं। हिन्दू धर्म के श्रद्धालु भी भगवान विष्णु जी के साथ-2 भगवान शिव शंकर की पूजा भी अवश्य करते हैं। मैं गुरुदेव की आज्ञा से दोनों प्रभुओं की पूजा करता हूँ तथा पितरों के मोक्ष के लिए श्राद्ध आदि कर्म भी करता हूं जो अति आवश्यक हैं। गीता जी का नित्य पाठ करता हूँ। इसके पाठ से पूर्ण मोक्ष होता है तथा परमात्मा प्राप्ति होती है तथा तीर्थो की यात्रा महाकल्याण कारक होती है। उसी उदेश्य से मैं तीर्थ भ्रमण पर निकला हूँ। अड़सठ तीर्थो व चारों धामों की यात्रा करके पुनः घर लौटूंगा। गुरुदेव जी के आदेशानुसार एकादशी का व्रत भी करता हूँ जो अति अनिवार्य है तथा मोक्षदायक है। हे भक्त जिन्दा ! आप भी मेरे गुरुदेव जी से उपदेश ग्रहण करके अपना कल्याण कराओ।

धर्मदास जी के मुख से उपरोक्त वार्ता सुनकर जिन्दा वेशधारी परमेश्वर बोले कि हे वैष्ण संत जी ! आपको मैं गुरु धारण कर लूंगा, आप मेरे गुरुदेव और मैं आपका शिष्य बन जाऊंगा। कृप्या आप मेरी शंकाओं का समाधान करें। भक्त धर्मदास जी ने उत्तर दिया कि हे भक्त जिन्दा मैं आपका गुरु नहीं बन सकता क्योंकि मुझे शिष्य बनाने का आदेश नहीं है। जो आज्ञा के बिना शिष्य बनाता है। वह महापाप का भागी होता है। वह व्यक्ति घोर नरक में गिरता है। मैं यह पाप अपने सिर पर नहीं रखुंगा। आप मेरे साथ मेरे गुरुदेव के पास चलना आपको उनसे उपदेश दिला दूंगा। जिन्दा रूपी परमेश्वर ने कहा कि हे वैष्णव संत ! जब तक मेरी शंकाओं का समाधान नहीं होगा तब तक मैं आपके गुरुदेव का शिष्य नहीं बन पाऊंगा। भक्त धर्मदास जी ने कहा कि आपकी शंकाओं का समाधान मैं कर सकता हूँ। जिन्दा रूप धारी परमेश्वर ने प्रश्न किया :- आपने बताया कि श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी अजर-अमर अर्थात् अविनाशी हैं। इनका जन्म नहीं हुआ, ये स्वयंभू हैं। इनके माता पिता का प्रश्न ही नहीं उठता अर्थात् इन दोनों भगवानों के कोई माता-पिता नहीं हैं। आपने यह भी कहा कि भगवान विष्णु सत्गुणी हैं तथा भगवान शिव तम्गुणी हैं। भक्त धर्मदास जी बीच में ही बोल उठे कि कहा - मैं क्या अकेला कहता हूं, सर्व हिन्दू समाज कहता है तथा गुरुदेव जी ने बताया है कि यह महिमा पुराणों में भी लिखी है।

जिन्दा रूप धारी परमेश्वर ने पूछाः- संत जी आपका शुभनाम क्या है ? कौन कुल में आप जन्में हैं। कौन शहर के वासी हो या सदैव भ्रमण करते रहते हो। धर्मदास जी ने उत्तर दिया कि मेरा नाम धर्मदास है। वैश्य कुल में जन्म है तथा बांधवगढ़ शहर (मध्य प्रदेश) का निवासी हूं। वैष्णव धर्म

(हिन्दू धर्म की शाखा) में जन्म हुआ है तथा हिन्दू धर्म का कट्टर अनुयाई हूं। श्री राम-कृष्ण जी की भक्ति अटूट श्रद्धा से करता हूँ। मैं किसी अन्य धर्म के व्यक्ति की बातों में आने वाला नहीं हूँ। जिन्दा वेशधारी परमेश्वर ने कहा कि हे वैष्णव संत धर्मदास जी ! कृप्या मुझे ऋषि दतात्रेय जी की उत्पत्ति तथा सती अनुसूईया जी की कथा सुनाइए। धर्मदास जी ने अति प्रसन्नता पूर्वक कहा कि आपको सती अनुसूईया जी की महिमा तथा दतात्रेय की उत्पत्ति की कथा सुनाता हूं।

''सती अनुसूईया की महिमा तथा दत्तात्रेय की उत्पति''

सती अनुसूईया श्री अत्री ऋषि की पत्नी थी। जो अपने पतिव्रता धर्म के कारण सुप्रसिद्ध थी। एक दिन देव ऋषि नारद जी भगवान विष्णु जी से मिलने विष्णु लोक में गए। श्री विष्णु जी घर पर उपस्थित नहीं थे। श्री लक्ष्मी जी घर पर अकेली थी। बात-बातों में नारद जी ने अत्री ऋषि की पत्नी अनुसूईया जी की सुन्दरता तथा उसके पतिव्रता धर्म की अति महिमा की। जिस कारण से लक्ष्मी जी को अनुसूईया के प्रति ईर्षा हो गई तथा उसके पतिव्रता धर्म को खण्ड करवाने की युक्ति सोचने लगी। नारद जी वहाँ से चल कर श्री शिव शंकर जी के लोक में उनसे मिलने के उद्देश्य से गए। वहाँ पर भी देवी पार्वती जी ही घर पर थी, श्री शिव जी घर पर नहीं थे। श्री नारद जी ने बात-बातों में सती अनुसूईया जी के पतिव्रत धर्म व सुन्दरता की अति महिमा सुनाई तथा श्री ब्रह्मा लोक को प्रस्थान किया। देवी पार्वती को अनसुईया के प्रति ईर्षा हो गई कि ऐसी पतिव्रता कौन हो गई जिसकी चर्चा सर्व जगत् में हो रही है। पार्वती जी भी अनुसूईया के पतिव्रत धर्म को खण्ड करवाने का उपाय सोचने लगी।

नारद जी श्री ब्रह्मा लोक में पहुँचे तो श्री ब्रह्मा जी की पत्नी श्री सावित्री जी ही घर पर उपस्थित थी, श्री ब्रह्मा जी नहीं थे। ऋषि नारद जी ने वहाँ पर भी सती अनुसूईया के पतिव्रत धर्म तथा सुन्दरता की अति महिमा कही तथा वहाँ से चल पड़े। देवी सावित्री जी भी अनुसूईया से ईर्षा करने लगी तथा अनुसूईया के पतिव्रत धर्म को खण्ड करवाने का उपाय सोचने लगी। तीनों (सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती) इक्ट्ठी हुई तथा अनुसूईया के पतिव्रत धर्म को खण्ड कराने की युक्ति निकाली कि अपने-2 पतियों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) को भेज कर अनुसूईया का पतिव्रत धर्म खण्ड कराना है। उसे अपने पतिव्रत धर्म का अधिक घमण्ड है। तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) अपने-2 निवास स्थान पर पहुँचे।

तीनों देवियों ने अनुसूईया का पतिव्रत धर्म खण्ड करने की जिद्द की। तीनों भगवानों ने बहुत समझाया कि यह पाप हमसे मत करवाओ। परंतु तीनों देवी (सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती) टस से मस नहीं हुई। तीनों भगवानों ने साधु वेश धारण किया तथा अत्रि ऋषि के आश्रम पर पहुंचे। उस समय अनुसूईया जी आश्रम पर अकेली थी। साधुवेश में तीन अत्तिथियों को द्वार पर देख कर अनुसूईया ने भोजन ग्रहण करने का आग्रह किया। तीनों साधुओं ने कहा कि हम आपका भोजन अवश्य ग्रहण करेंगे। परंतु एक शर्त पर कि आप निःवस्त्र होकर भोजन कराओगी। अनुसूईया ने साधुओं के शाप के भय से तथा अतिथि सेवा से वंचित रहने के पाप के भय से परमात्मा से प्रार्थना की कि हे परमेश्वर ! इन तीनों को छः-छः महीने के बच्चे की आयु के शिशु बनाओ। जिससे मेरा पतिव्रत धर्म भी खण्ड न हो तथा साधुओं को आहार भी प्राप्त हो व अतिथि सेवा न करने का पाप भी

न लगे। परमेश्वर की कृपा से तीनों देवता छः-छः महीने के बच्चे बन गए तथा अनुसूईया ने तीनों को निःवस्त्र होकर दूध पिलाया तथा पालने में लेटा दिया।

तीनों देवता वापिस न लौटने के कारण तीनों देवी (सावित्री, लक्ष्मी तथा पार्वती) अत्रि ऋषि के आश्रम पर गई। अनुसूईया से अपने पतियों के विषय में पूछा कि क्या आपके पास हमारे पति (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) आए थे। अनुसूईया ने कहा कि ये तीनों पालने में झूल रहे हैं। ये मुझ से निःवस्त्र होकर भोजन ग्रहण करने की इच्छा रखते थे। इसलिए इनका शिशु रूप होना आवश्यक था। तीनों देवियों ने तीनों भगवानों को पालने में शिशु रूप में लेटे देखा तथा पहचानने में असमर्थ रही। तब सती अनुसूईया के पतिव्रत धर्म की महिमा कही कि आप वास्तव में पतिव्रता पत्नी हो। हमसे ईर्षावश यह गलती हुई है। ये तीनों तो मना कर रहे थे। परंतु हमारे हठ के समक्ष इन्होंने यह घृणित कार्य करने की चेष्टा की थी। कृप्या आप इन्हें पुनः उसी अवस्था में कीजिए। आपकी हम आभारी होंगी। अत्री ऋषि की पत्नी अनुसूईया ने परमेश्वर से अर्ज की जिस कारण से तीनों बालक उसी (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) अवस्था में हो गए तथा अनुसूईया की अति प्रसंशा की। अत्री ऋषि व अनुसूईया से तीनों भगवानों ने वर मांगने को कहा। तब अनुसूईया ने कहा कि आप तीनों हमारे घर बालक बन कर पुत्र रूप में आएँ। हम निःसंतान हैं। तीनों भगवानों ने तथास्तु कहा तथा अपनी-2 पत्नियों के साथ अपने-2 स्थान को प्रस्थान कर गए। कालान्तर में दतात्रेय रूप में भगवान विष्णु का जन्म अनुसूईया के गर्भ से हुआ तथा ब्रह्मा जी का चन्द्रमा तथा शिव जी का दुर्वासा रूप में अत्रि की पत्नी अनुसूईया के गर्भ से जन्म हुआ। इस प्रकार श्री दतात्रेय जी का अर्विभाव अनुसूईया के गर्भ से हुआ। दत्तात्रेय जी ने चौबीस गुरूओं से शिक्षा पाई। भगवान दत्त (दत्तात्रेय) जी के नाम पर ''दत्त'' सम्प्रदाय दक्षिण भारत में विशेष प्रसिद्ध है। गिगनार क्षेत्र में श्री दत्तात्रेय जी का सिद्ध पीठ है। दक्षिण भारत में इनके कई मन्दिर हैं। (कथा समाप्त्)

भक्त धर्मदास जी से उपरोक्त कथा सुनकर जिन्दा रूप धारी परमेश्वर ने धर्मदास जी का धन्यवाद किया तथा पुनः प्रार्थना की ''कृप्या आप गीता अध्याय 9 को भी सुनाईए। आप के मुख कमल से ज्ञान सुनकर मैं अति आनन्दित हो रहा हूँ। अपनी प्रशंसा सुनकर धर्मदास जी ने अति उत्साहित होकर श्रीमद्‌भगवत् गीता जी का नौवां अध्याय हिन्दी अनुवाद सहित सुनाया। उपरोक्त सर्व ज्ञान सुनने के पश्चात् जिन्दा रूपधारी परमेश्वर ने प्रश्न किया। हे धर्मदास जी ! हे वैष्णव सन्त ! क्या मैं आपसे कुछ शंकाओं के समाधान के लिए प्रश्नोत्तर कर सकता हूँ। धर्मदास जी ने कहा अवश्य किजिए, प्रश्न-उत्तर के बिना शंका निवारण होना अति असम्भव है।

➽ जिन्दा महात्मा का प्रश्नः- आप ने अनुसूईया जी की कथा में बताया कि अनुसूईया ने तीनों देवों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव) को छः-छः माह के बालक बनाने के लिए परमात्मा से प्रार्थना की जिस कारण वे शिशु बन गए। पुनः यथा अवस्था में परिवर्तित करने के लिए भी अनुसूईया जी ने परमात्मा से प्रार्थना की तब प्रभु कृपा से त्रिदेव अपनी यथा अवस्था को प्राप्त हुए। वह परमात्मा कौन है जो त्रिदेवों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) से भी प्रबल है? श्री विष्णु जी तथा श्री शिव शंकर जी तो अनुसुईया देवी से भी कम शक्तियुक्त सिद्ध हुए, अनुसूईया देवी किसी अन्य प्रभु की भक्ति करती थी जो त्रिदेवों से भिन्न तथा शक्तिवान है। इसी कारण से उस परमात्मा ने अनुसूइया की प्रार्थना पर तीनों देवों का प्रारूप बदला था। भक्त धर्मदास जी निरूत्तर हो गए।

''श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी की स्थिती से परिचित कराना''

जिन्दा वेश धारी कबीर परमेश्वर जी का प्रश्नः- धर्मदास जी आपने बताया है कि श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी भगवान अविनाशी हैं। इनके माता-पिता नहीं है। मैंने सुना है कि श्री देवीमहापुराण के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 1 से 6 पृष्ठ 115 से 129 पर लिखा है कि ''भगवान विष्णु जी ने कहा हे माता ! मैं (विष्णु) ब्रह्मा तथा शिव नाशवान हैं अविनाशी नहीं हैं। हमारा अविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु होती है। श्री शंकर भगवान ने कहा हे माता (दुर्गा) ! आप से ब्रह्मा उत्पन्न हुआ तथा विष्णु जी भी आप ही से उत्पन्न हुआ तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर आपका पुत्र नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी जन्म देने वाली आप ही हैं। (कृप्या पाठक जन श्री देवी पुराण का आंशिक ज्ञान इसी पुस्तक के पृष्ठ 491 पर पढ़ें) तथा श्री शिवपुराण के रूद्र संहिता के अध्याय 6-7 पृष्ठ 100 से 102 पर श्री शिवपुराण में लिखा है कि ''दुर्गा को अष्टांगी, प्रकृति देवी, त्रिदेव जननी तथा शिवा भी कहते हैं। काल रूपी ब्रह्म को सदाशिव भी कहते हैं। अध्याय 6-7 में पृष्ठ 100 से 102 पर लिखा है कि काल रूपी ब्रह्म (सदाशिव) तथा शिवा (प्रकृति) के पति-पत्नी सम्बन्ध से एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम विष्णु रखा, इसी प्रकार दूसरा पुत्र हुआ उसका नाम ब्रह्मा रखा (कृप्या पाठक जन पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 495 से 515 पर विस्तृत उल्लेख पुराण से)

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि (1) श्री ब्रह्मा जी रजगुण तथा श्री विष्णु जी सतगुण व श्री शिवजी तमगुण का जन्म व मृत्यु होता है। ये अविनाशी नहीं हैं नाशवान हैं। इन तीनों देवों की माता दुर्गा (प्रकृति देवी) है तथा पिता काल रूपी ब्रह्म है।

उपरोक्त वचनों को सुनकर भक्त धर्मदास जी ने जिन्दा रूपधारी परमेश्वर से कहा कि जो आपने ''देवी पुराण'' तथा ''शिव पुराण'' का उल्लेख किया है। यह ज्ञान न तो मेरे गुरूदेव जी ने बताया तथा न मैंने कभी दोनों पुराणों में पढ़ा तथा न किसी अन्य सन्त से सुना। आप की बातें अविश्वस्नीय लगती हैं। जिन्दा सन्त ने कहाः- धर्मदास जी आप उपरोक्त दोनों पुराणों को पुनः पढ़ें तथा अपने गुरूजी से पुनः राय लीजिए। यदि आपने किसी से नहीं सुना तो मैं आज यह दास आप को सुना रहा है। किसी ने आपको उपरोक्त पुराणों का यह अनमोल ज्ञान नहीं सुनाया तो उन अज्ञानियों का दोष है जो सन्त बनकर जनता को भ्रमित कर रहे हैं। हे महात्मा धर्मदास जी ! आपने गीता अध्याय 7 तथा 8 व 9 को पढ़ा तथा यह भी बताया कि गीता जी का ज्ञान श्री विष्णु जी सत्गुण के अवतार श्री कृष्णजी ने बोला। हे प्रिय धर्मदास जी ! गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं बोला यह तो श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके काल (काल रूपी ब्रह्म अर्थात् ज्योति निरंजन) ने बोला है। (जिन्दा रूपधारी परमेश्वर ने प्रमाण सहित सिद्ध किया जो धर्मदास जी ने स्वीकार किया। कृप्या पाठक जन पढ़ें ''गीता ज्ञान किसने बोला'' इसी पुस्तक के पृष्ठ 3 से 10 पर)

जिन्दा वेश धारी परमेश्वर ने गीता जी के ज्ञान को यथार्थ समझाया कहा है धर्मदास सन्त जी ! आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में पढ़ा कि गीता ज्ञान दाता काल रूपी ब्रह्म ने कहा है कि ''जो भी सृष्टी (श्री ब्रह्मा रजगुण से) स्थिति श्री विष्णु जी से तथा संहार (श्री शिव तमगुण से) हो रहा है उसका मुख्य कारण अर्थात् निमित्त मैं ही हूँ वास्तव में मैं इनमें नहीं हूँ ये मुझ में नहीं है। {गीता अ.7/मं.12} इन तीनों गुणों अर्थात् ब्रह्मा रजगुण, विष्णु सतगुण तथा शिवजी तमगुण द्वारा

तीन प्रकार के प्रभाव से सर्व संसार-प्राणी समुदाय मोहित हो रहा है। इसलिए इन तीनों देवों से परे मुझे व अविनाशी परमेश्वर को नहीं जानता {गीता अ.7/मं.13} क्योंकि यह मेरी त्रिगुणमई माया (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव द्वारा फैलाया जाल) बड़ी दुस्तर (भयंकर) है। जो मुझे भजता है वह इन से ऊपर उठ जाता है। इस त्रिगुण जाल का उलंघन कर जाता है। {गीता अ. 7/मं.14} इस त्रिगुण माया (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है अर्थात् जो इन तीनों देवताओं के अतिरिक्त किसी अन्य शक्ति (प्रभु) को न मानते वे असुर (राक्षस) स्वभाव को धारण किए हुए। मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले, मुर्ख लोग मुझको (गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म को) नहीं भजते। {गीता अ.7/मं.15}

गीता के इसी सातवें अध्याय के श्लोक 20 से 23 में भी यही प्रमाण है। हे धर्मदास जी। आप इन्हीं देवताओं (सत् गुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की पूजा कर रहे हो जिनकी पूजा करने वालों को असुर (राक्षस) स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है जो मुझे (गीता ज्ञान दाता ब्रह्म को) नहीं भजते। गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने भी अपनी पूजा को भी अति अश्रेष्ठ (अनुत्तम) कहा है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि यदि तूझे परमशान्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष चाहिए तो हे अर्जुन! सर्व भाव से उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म) की शरण में जा जिसकी कृपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन (सदा रहने वाले सत्) परम धाम (सतलोक) को प्राप्त होगा। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 के श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में भी कहा है। उस परमात्मा (तत् ब्रह्म) के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में अध्याय 8 श्लोक 1-3 तथा 8 से 10 तथा 20 से 22 में भी विस्तृत उल्लेख है। कृप्या पाठक जन पढ़ें यथार्थ अनुवाद गीता अध्याय 7 व 8 तथा सारांश इसी पुस्तक के पृष्ठ 359 से 386 तक गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16 से 18 पृष्ठ 390 से 393 गीता अध्याय 18 श्लोक 46 तथा 61 से 66 पृष्ठ 387 से 389)

''श्राद्ध कर्म करना शास्त्रानुकूल है या शास्त्रविरूद्ध''

इसके पश्चात् जिन्दा महात्मा अर्थात् परमेश्वर ने कहा कि ''हे धर्मदास जी! आपने बताया कि आप भूत पूजा (तेरहवीं, सतरहवीं आदि भी करते हैं तथा अस्थियाँ उठा कर गति कराते हो) पित्तर पूजा (श्राद्ध आदि करना पिण्ड भराना) तथा देवताओं विष्णु-शिव आदि की पूजा भी करते हो। जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में गीता ज्ञानदाता ने मना किया है। संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण में मदालसा वाले प्रकरण में पृष्ठ 80 पर लिखा है ''जो पितर देवलोक में हैं, जो तिर्यग्योनि में पड़े हैं, जो मनुष्य योनि में एवं भूतवर्ग में अर्थात् प्रेत बने हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा जब भूख–प्यास विकल (तड़फते) होते है तो पिण्डदान तथा जलदान द्वारा तृप्त किया जाता है (लेख समाप्त)

विचार करें :- शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् मनमानी पूजा (देवों की, पितरों की, भूतों की पूजा) करके प्राणी पितर व भूत (प्रेत) बने। वे देवलोक (जो देवताओं की पूजा करके देवलोक में चले गए वे अपने पुण्यों के समाप्त होने पर पितर रूप में रहते हैं।) में हैं चाहे यमलोक में या प्रेत बने हैं, सर्व कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब जो उनकी पूजा करेगा वह भी इसी कष्टमयी योनी को प्राप्त होगा। इसलिए सर्व मानव समाज को शास्त्रविधि अनुसार साधना करनी

चाहिए। जिससे उन पितरों की पितर योनि छूट जाएगी तथा साधक भी पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा। (विस्तृत विवरण कृप्या पाठक जन पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 178 से 182 तक)

''गीता में वर्णित विधि से साधना करना लाभदायक है केवल नित्य पाठ मात्र से नहीं''

परमेश्वर अर्थात् जिन्दा रूपधारी ने कहा हे धर्मदास जी ! आप ने कहा था कि गीता जी का नित्य पाठ करता हूँ जिसके करने से पूर्ण मोक्ष होता है तथा परमात्मा प्राप्ति होती है। परन्तु आप साधना गीता जी के ज्ञान के विपरीत कर रहे हो। उदाहरण :- एक जमींदार को वृद्धावस्था में पुत्र की प्राप्ति हुई। किसान ने सोचा जब तक बच्चा जवान होगा, अपने खेती-बाड़ी के कार्य को संभालने योग्य होगा, कहीं मेरी मृत्यु न हो जाए। इसलिए किसान ने अपना अनुभव लिख कर छोड़ दिया तथा अपने पुत्र से कहा कि पुत्र जब तू जवान हो, तब अपने खेती-बाड़ी के कार्य को समझने के लिए इस मेरे अनुभव के लेख को प्रतिदिन पढ़ लेना तथा अपनी कृषि करना। पिता जी की मृत्यु के उपरान्त किसान का पुत्र प्रतिदिन पिता जी के द्वारा लिखे अनुभव के लेख को पढ़ता। परन्तु जैसा उसमें लिखा है वैसा कर नहीं रहा है। वह किसान का पुत्र क्या धनी हो सकता है ? कभी नहीं। वैसे ही करना चाहिए जो पिता जी ने अपना अनुभव लेख में लिखा है।

इसी संदर्भ में एक संक्षिप्त कथा बताता हूँ कि एक व्यक्ति की शादी के दस वर्ष पश्चात् पुत्र हुआ था। पुत्र की खुशी में उसने बहुत ही खुशी मनाई। बीस-पच्चीस गाँवों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया और बहुत ही गाना-बजाना हुआ अर्थात् काफी पैसा खर्च किया। फिर एक वर्ष के बाद उस पुत्र का देहान्त हो जाता है। फिर वही परिवार टक्कर मार कर रो रहा था और अपने दुर्भाग्य को कोस रहा था। इसलिए कबीर साहेब हमें बताते हैं कि :-

कबीर, बेटा जाया खुशी हुई, बहुत बजाये थाल। आना जाना लग रहा, ज्यों कीड़ी का नाल।।
कबीर, पतझड़ आवत देख कर, बन रोवै मन माहिं। ऊंची डाली पात थे, अब पीले हो हो जाहिं।।
कबीर, पात झडंता यूं कहै, सुन भई तरूवर राय। अब के बिछुड़े नहीं मिला, न जाने कहां गिरेंगे जाय।
कबीर, तरूवर कहता पात से, सुनों पात एक बात। यहाँ की याहे रीति है, एक आवत एक जात।।

उपरोक्त तथ्यों को सुनकर भक्त धर्मदास जी कुछ खिन्न होकर बोला मैं वैष्णव साधु हूँ। हम मांस नहीं खाते हम जीव हिंसा नहीं करते। जो जीव हिंसा करते है वे कभी मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते धर्मदास जो अन्दर से टूट चुके थे। समझ चुके थे कि मेरी साधना पूर्ण रूप से गलत है परन्तु मान वश स्वीकार करने में झिझक रहे थे। इसलिए ऊपर से असन्तुष्टि प्रकट करते हुऐ बोले आप मुस्लमान हैं इसलिए हमारे देवताओं पर व्यंग कर रहे हो। मैं भगवान विष्णु के विषय में कुछ भी सुनने को तैयार नहीं हूँ। भक्त धर्मदास की अरूची देखकर परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी अचानक अन्तर्ध्यान हो गए। धर्मदास जी देखता ही रह गया। सामने से अचानक लुप्त होने की लीला को देखकर धर्मदास जी को लगा कि यह कोई आम सन्त नहीं था। यह तो परमेश्वर या कोई देव ही था जो सर्व यथार्थ ज्ञान कह रहा था। मन-मन में प्रार्थना करने लगा हे देव! एक बार फिर दर्शन देना। मैं आप से कोई वाद-विवाद नहीं करूगां। आपको मेरे लिए परमात्मा ने भेजा था। मैं मूर्ख इतने प्रमाण देखकर भी अभिमान वश आपकी बात नहीं माना। यह प्रार्थना सर्व रात्री भर करता रहा।

अगले दिन सुबह उठा तथा जो भक्ति क्रियाएं प्रतिदिन करता था। वे नहीं की क्योंकि वह सर्व

व्यर्थ प्रयत्न नजर आने लगा। इसलिए स्नान करके कुछ स्थान गोबर-गारा से लीप कर खाना बनाने लगा। चुल्हे में एक लम्बी लकड़ी तथा अन्य छोटी सहयोगी लकड़ियाँ लगा कर अग्नि प्रज्वलित करके खाना पका रहा था। लम्बी लकड़ी कुछ मोटी थी तथा अन्दर से थोथी (खाली) थी। जिसमें अनगिन चिटियाँ निवास कर रही थी। अन्धेरा होने के कारण धर्मदास जी उन चिटि्यों को लकड़ी में नहीं देख सका। जिस समय वह लकड़ी जलती हुई छोटी होकर चुल्हे के निकट आई उस समय धर्मदास जी को दिखाई दी। तब सूर्य उदय होने को था। चिटि्याँ अपने अण्डों को मुख में लिए लकड़ी से बाहर निकलने का प्रयत्न कर रही थी। लकड़ी के पिछले सिरे पर उबलते हुए तरल पदार्थ पर गिर कर जल रही थी तथा सामने से अग्नि व धूवें से मर रही थी। ज्यों ही उस पुण्यात्मा भक्त धर्मदास जी ने यह दृश्य देखा उस को गहरा धक्का लगा। धर्मदास ने विचार किया यह लकड़ी तीन फुट लम्बी थी। जलने के उपरान्त मात्र एक फुट शेष बची है। इस में अनगिन चिटियाँ जल कर भस्म हो गई हैं। आज मेरे से घोर पाप हो गया है। मैं आज आहार नहीं करूगां तथा इस भोजन को किसी सन्त को खिलाकर प्रायश्चित करूंगा। सर्व भोजन को थाल में डालकर कपड़े से ढक कर हाथ में उठा कर सन्त को खिलाने के लिए सन्त की खोज में निकला।

परमेश्वर कबीर जी ने उस दिन हिन्दु सन्त का वेश धारण किया तथा एक वृक्ष के नीचे विराजमान हो गए। धर्मदास जी ने सामने पेड़ के नीचे बैठे साधु को देखा तथा निकट पहुँच कर नमस्कार किया तथा भोजन ग्रहण करने के लिए प्रार्थना की। साधु रूपधारी परमेश्वर ने कहा लाओ धर्मदास भूख लगी है। अपना नाम सन्त के मुख से सुनकर धर्मदास जी ने सोचा यह सन्त मेरे किसी धार्मिक अनुष्ठान पर आया होगा इसलिए जानता होगा परन्तु मैंने इसे आज प्रथम बार देखा है। ऐसा सोचते हुए भोजन का थाल सन्त जी के समक्ष रख दिया। परमेश्वर ने अपने करमण्डल (लोटे) से कुछ जल हाथ पर रखकर कुछ वाणी उच्चारण की तत् पश्चात् उस हाथ वाले जल को भोजन पर छिड़का। थाल में रखे सर्व भोजन की चिटि्टयाँ बन गई। चिटि्टयों से भर जाने के कारण थाली काली दिखाई देने लगी। चिटि्टयों ने अपने अण्डे मुख में लिए थे तथा थाली से बाहर निकलने की कोशिश कर रही थी। हिन्दु साधु रूपधारी परमेश्वर जी अपने पूर्व वाले जिन्दा महात्मा (मुसलमान सन्त) की वेशभुषा में दिखाई दिए। बीते दिन मिले वान्छित देव को देख कर तथा भोजन की चिटि्टयाँ बनी देखकर भक्त धर्मदास जी हैरान रह गया।

परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! आप इस घोर पाप युक्त भोजन को मुझे खिलाने लाया था? आप कल कह रहे थे मैं कोई जीव हिंसा नहीं करता। जो जीव हिंसा करते हैं वे कभी मोक्ष प्राप्ति नहीं कर सकते।

धर्मदास जी ने जिन्दा वेषधारी परमेश्वर के चरण पकड़ लिए तथा पहले दिन वाले वाद-विवाद के लिए क्षमा याचना की तथा कहा हे जिन्दा फकीर आप का ज्ञान यथार्थ है। आप ने जो गीता जी के श्लोक बताए वे निर्णायक ज्ञान युक्त हैं। परन्तु कई वर्षो से गलत ज्ञान का रट्टा लगा रखा है इसलिए सत्य को सामने देखकर भी मन स्वीकार करने को तैयार नहीं था। आज आप ने मुझ पापी आत्मा पर पुनः दर्शन देने की कृपा की है आप मुझे और ज्ञान सुनाईए। मैं आप के मुख कमल से अमृत वचन सुनना चाहता हूँ। आप जी का ज्ञान सुनने के पश्चात् पहले वाली साधना

करने की इच्छा ही नहीं हुई। ऐसा लगा जैसे यात्री विपरित दिशा जा रहा है उसे वही ठहर जाना चाहिए। मैं पूरी रात्री परमेश्वर से प्रार्थना करता रहा कि वही सन्त एक बार पुनः मिले। आप परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास जी! आप का नगर बांधवगढ़ मथुरा से कितनी दूर है। धर्मदास ने बताया 250 कोस अर्थात् 800 कि.मि. है तथा मैं पैदल चलकर आया हूँ। परमेश्वर ने कहा आपने पैरों के नीचे अनगिन कीड़े-मकौड़े अर्थात् प्राणी मार डाले आपने, जिस सरोवर में मल-मल कर स्नान किया घर्षण में बहुत जीव मार डाले। जो प्रतिदिन स्थान लीप कर खाना बनाते हो तथा पूजा करते हो उस में भी बहुत जीव नष्ट होते हैं। यह सर्व पाप आप के सिर मंडे जाते हैं। जो साधना आप कर रहे हो यह शास्त्र विरूद्ध होने से पाप नाशक व मोक्षदायक नहीं हैं। गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में कहा है कि शास्त्र विधि को त्यागकर जो साधक मनमाना आचरण (पूजा) करता है उसको न तो सुख होता है न परम गति तथा उसको न कोई सिद्धी प्राप्त होती है अर्थात् व्यर्थ है। आप एकादशी का व्रत करते हो उस दिन निराहार रहते हो अर्थात् भोजन बिल्कुल नहीं खाते। यह भी आप की साधना श्रीमद्भगवत गीता जी के विरूद्ध है। गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में लिखा है कि हे अर्जुन यह योग अर्थात् भक्ति न तो अधिक खाने वाले की न बिल्कुल न खाने वाले की अर्थात् व्रत रखने वाले की न अधिक जागने वाले की तथा न अधिक सोने वाले की ही सफल होती है। व्रत रखने वाले की साधना अर्थात् व्रत रखना व्यर्थ है।

आपने बताया कि पित्तर पूजा श्राद्ध कर्म-पिण्डदान आदि भी करता हूँ। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में लिखा है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते है अर्थात् अपने इष्टदेव के लोक में जाकर अपने पुण्य को समाप्त करके पाप कर्म के आधार से नरक में गिरते हैं। पितरों को पूजने वाले पित्तरों को प्राप्त होते हैं अर्थात पित्तर लोक चले जाते हैं वहाँ पितर बनकर कष्ट उठाते हैं। भूतों को पूजने वाले भूत बनकर भूतों की मण्डली में मिलकर भटकते रहते हैं। मेरा (ब्रह्म का) पूजन करने वाले मुझ को ही प्राप्त होते हैं। (गीता अध्याय 9 श्लोक 25) हे धर्मदास जी! आप देवताओं (श्री विष्णु, श्री शिव) की पूजा कर रहे हो आप इन देवों के लोक में अपने पुण्यों को समाप्त करके पाप के आधार से नरक में भी जाओगे परन्तु इन देवताओं का आप जाप करते हो वह भी लाभ प्राप्त नहीं होगा। आप पितर बनकर कष्ट उठाओगे। जो भूत पूजा (श्राद्ध कर्म-पिण्ड क्रिया) करते है उसके कारण पितर बन कर कष्ट उठाओगे। जो भूत पूजा (तेरहवीं, सत्तरहवीं, वर्षी आदि करना व अस्थियाँ उठाकर गति कराने के लिए ले जाना) करते हो इस के कारण आप भूत योनी प्राप्त करोगे। आप का अनमोल मानव जीवन नष्ट हो रहा है।

पितर पूजा निषेध :-- किसी प्रकार की पितर पूजा, श्राद्ध निकालना आदि कुछ नहीं करना है। भगवान श्री कृष्ण जी ने भी इन पितरों की व भूतों की पूजा करने से साफ मना किया है। गीता जी के अध्याय नं. 9 के श्लोक नं. 25 में कहा है कि -

यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्। २५।

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितृऋन्, यान्ति, पितृव्रताः।

भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, मद्याजिनः, अपि, माम् ।।25।।

अनुवाद : देवताओंको पूजनेवाले देवताओंको प्राप्त होते हैं पितरोंको पूजनेवाले पितरोंको प्राप्त होते हैं भूतोंको पूजनेवाले भूतोंको प्राप्त होते हैं और मतानुसार पूजन करनेवाले भक्त मुझसे ही लाभान्वित होते हैं।

बन्दी छोड़ गरीबदास जी महाराज और कबीर साहिब जी महाराज भी कहते हैं :-

"गरीब, भूत रमै सो भूत है, देव रमै सो देव।
राम रमै सो राम है, सुनो सकल सुर भेव।।"

इसलिए उस (पूर्ण परमात्मा) परमेश्वर की भक्ति करो जिससे पूर्ण मुक्ति होवे। वह परमात्मा पूर्ण ब्रह्म सतपुरुष (सत कबीर) है। इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय नं. 18 के श्लोक नं. 46 में है।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः। ४६।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।46।।

अनुवाद : जिस परमेश्वरसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत् व्याप्त है, उस परमेश्वरकी अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा पूजा करके मनुष्य परमसिद्धिको प्राप्त हो जाता है।।46।।

गीता अध्याय नं. 18 का श्लोक नं. 62 :––

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्। ६२।

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।62।।

अनुवाद : हे भरतवंशोभ्द्रव अर्जुन! तू सर्वभावसे उस ईश्वरकी ही शरणमें चला जा। उसकी कृपासे तू परम शान्ति (संसारसे सर्वथा उपरित) को और अविनाशी परमपदको प्राप्त हो जायगा।

सर्वभाव का तात्पर्य है कि कोई अन्य पूजा न करके मन–कर्म–वचन से एक ईश्वर में आस्था रखना।

गीता अध्याय नं. 8 का श्लोक नं. 22 :––

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्। २२।

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तः स्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्।।22।।

अनुवाद : हे पृथानन्दन अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणी जिसके अन्तर्गत हैं और जिससे यह सम्पूर्ण संसार व्याप्त है, वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्यभक्तिसे प्राप्त होनेयोग्य है।

अनन्य भक्ति का तात्पर्य है एक परमेश्वर (पूर्ण ब्रह्म) की भक्ति करना, दूसरे देवी–देवताओं अर्थात् तीनों गुणों (रजगुण–ब्रह्मा, सतगुण–विष्णु, तमगुण–शिव) की नहीं। गीता जी के अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1,2,4 :––

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्। १।

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ।।1 ।।

अनुवाद : ऊपर को जड़ वाला नीचे को शाखा वाला अविनाशी विस्तृत वृक्ष है, घोड़े जैसा मजबूत जिसके छोटे–छोटे हिस्से या टहनियाँ पत्ते कहे हैं, उस संसाररूप वृक्षको जो इस प्रकार जानता है वह भक्त पूर्ण ज्ञानी है।।1।।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।२।

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः, विषयप्रवालाः,
अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ।।2 ।।

अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी फैली हुई विकार काम क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार रूपी कोपल डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव जीवको कर्मोमें बाँधने की भी जड़ें अर्थात् मूल कारण हैं तथा मनुष्यलोक, स्वर्ग, नरक लोक पृथ्वी लोक में नीचे (चौरासी लाख जूनियों में) ऊपर व्यस्थित किए हुए हैं।।2।।

अध्याय 15 का श्लोक 3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा।३।

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा ।।3 ।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) न (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) न (अन्तः) अन्त है (न) न (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले (असङ्गशस्त्रेण) निर्लेप तत्वज्ञान रूपी (दृढेन्) दृढ़ शस्त्र से अर्थात् निर्मल तत्वज्ञान के द्वारा (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक जानकर। (3)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस रचना का न शुरूवात तथा न अन्त है न वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है इस अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला मजबूत स्वरूपवाले निर्लेप तत्वज्ञान रूपी दृढ़ शस्त्र से अर्थात् निर्मल तत्वज्ञान के द्वारा काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक जानकर। (3)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।४।

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रतृत्ति प्रसृता पुराणी।।4।।

अनुवाद : उसके बाद उस परमपद परमात्मा की खोज करनी चाहिये। जिसको प्राप्त हुए मनुष्य फिर लौटकर संसारमें नहीं आते और जिससे अनादिकालसे चली आनेवाली यह सृष्टी विस्तारको प्राप्त हुई है, उस आदि पुरुष परमात्माके ही मैं शरण हूँ।।4।।

इस लिए स्वयं भगवान श्री कृष्ण ने ईन्द्र जो देवी–देवताओं का राजा है कि पूजा भी छुड़वा कर उस परमात्मा की भक्ति करने के लिए ही प्रेरणा दी थी। जिस कारण उन्होंने गोवर्धन पर्वत को उठा कर इन्द्र के कोप से ब्रज वासियों की रक्षा की।

गरीब, इन्द्र चढ़ा ब्रिज डुबोवन, भीगा भीत न लेव।
इन्द्र कढाई होत जगत में, पूजा खा गए देव।।

कबीर, इस संसार को, समझाऊँ कै बार।
पूँछ जो पकड़ै भेढ की, उतरा चाहै पार।।

माता मसानी पूजना निषेध :– आपने खेत में बनी मंढी या किसी खेड़े आदि की या किसी अन्य देवता की समाध नहीं पूजनी है। समाध चाहे किसी की भी हो बिल्कुल नहीं पूजनी है। अन्य कोई उपासना नहीं करनी है। यहाँ तक कि तीनों गुणों(ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की पूजा भी नहीं करनी है। केवल गुरु जी के बताए अनुसार ही करना है।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 15

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः।१५।

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः।।15।।

अनुवाद : माया के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे आसुर स्वभाव को धारण किये हुए मनुष्यों में नीच दुषित कर्म करनेवाले मूर्ख मुझको नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों(रजगुण–ब्रह्मा, सतगुण–विष्णु, तमगुण–शिव) की साधना ही करते रहते हैं।

कबीर, माई मसानी शेढ शीतला, भैरव भूत हनुमंत। परमात्मा उनसे दूर है, जो इनको पूजंत।।
कबीर, सौ वर्ष तो गुरु की सेवा, एक दिन आन उपासी। वो अपराधी आत्मा, परै काल की फांसी।।
गुरु को तजै भजै जो आना। ता पसुवा को फोकट ज्ञाना।।

❑❑❑

''श्राद्ध समीक्षा''

(श्रद्धा से किया गया शास्त्रविधि अनुसार अध्यात्मिक कर्त्तव्य कर्म श्राद्ध कहलाता है)

श्राद्ध के विषय में :- प्रश्नः- श्राद्ध आदि द्वारा पितरों को संतुष्ट करना भी एक उत्तम आध्यात्मिक कर्म है। यह अवश्य करना चाहिए। आप श्राद्ध कर्म को मना किस लिए करते हो। विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित अनुवाद कर्ता = मुनिलाल गुप्त) के तृतीय अंश के अध्याय 15 के श्लोक 1 से 53 पृष्ठ 210-213 पर लिखा है कि श्राद्ध से तृप्त हो कर पितृगण समस्त कामनाओं को पूर्ण कर देते हैं। आप जनता को भ्रमित कर रहे हो।

उत्तर :- विष्णु पुराण में भगवान श्री कृष्ण जी की मृत्यु तक का उल्लेख पुराण वक्ता ने पंचम अंश के अध्याय 37 में पृष्ठ 413 से 415 तक लिखा है। जिस से सिद्ध होता है कि उस से पूर्व यह विष्णु पुराण नहीं थी। ऋषिगण मौखिक वार्ता से ही भक्ति साधना बताते थे। जो शास्त्रविरूद्ध है। क्योंकि इसी लिए भगवान काल रूपी ब्रह्म ने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके श्री मद्भगवत् गीता जी का ज्ञान बोला जिसके अध्याय 4 श्लोक 1 से 3 में गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि अर्जुन यह भक्ति ज्ञान पहले मैंने सूर्य से कहा था। सूर्य ने अपने पुत्र वैवस्त मनु से कहा मनु ने इक्ष्वाकु को कहा फिर यह ज्ञान योग कुछ राजर्षियों तक चला। अब यह शास्त्रविधि अनुसार ज्ञान योग बहुत समय से नष्ट अर्थात् समाप्त था। इस विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री पारासर ऋषि को गीता अर्थात् वेदों वाला भक्ति मार्ग का ज्ञान नहीं था। श्री पारासर जी ने श्राद्ध करना अर्थात् पितर पूजा करने की राय विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 14 से 16 तक पृष्ठ 206 से 215 तक दी है। विस्तृत विवरण लिखा है। जब कि वेदों व श्री मदभगवत् गीता जी में पितर पूजा (श्राद्ध कर्म) भूत पूजा (प्रेतकर्म) व देवपूजा आदि को मना किया है। गीता अ. 9 श्लोक 25 में स्पष्ट किया है कि जो भूत पूजा (प्रेत कर्म=अस्थियाँ चुनना अर्थात् फूल उठाना, तेरहवीं क्रिया, मासिक क्रिया, पिण्ड दान आदि प्रेत कर्म है जिनका विवरण विष्णु पुराण तृतीय अंश के अध्याय 13 में श्लोक 1 से 41 पृष्ठ 203 से 206 तक उल्लेख है) करने वाले भूतों को प्राप्त होंगे अर्थात् प्रेत बन कर पूर्व बने प्रेतों के पास चले जाऐंगे। देव पूजा (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि देवताओं को पूजने वाले) देवताओं को प्राप्त होगें अर्थात् अनुचरों की पदवी प्राप्त करके अपने-2 इष्ट देव के लोक को प्राप्त हो जाऐंगे। फिर अपना पूण्य कर्म स्वर्ग लोक में समाप्त करके नरक में तथा फिर अन्य प्राणियों की योनियों में सदा कष्ट उठाऐंगे।

क्योंकि गीता अध्याय 9 श्लोक 23 तथा 24 में कहा है कि जो साधक श्रद्धा से अन्य देवताओं की पूजा करते हैं वे मेरी पूजा करते हैं भावार्थ है कि वे साधक परमात्मा प्राप्ति के लिए ही प्रयत्न शील हैं परन्तु उनकी वह अन्य देवताओं की पूजा शास्त्रविरूद्ध है। (श्लोक 23) क्योंकि वे साधक मुझे तथा मेरी साधना को तत्व से नहीं जानते (क्योंकि पूर्ण मोक्ष मार्ग का तत्वज्ञान तत्वदर्शी सन्त ही बताऐंगे जिनके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा गीता अध्याय 15 में 1 से 4 में वर्णित है।) इसलिए वे श्रद्धा से शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण करने वाले साधक पतन को प्राप्त होते हैं अर्थात् भक्ति हीन होकर भिन्न प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाते हैं। (श्लोक 9/24) यही

प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 15 तथा 20 से 23 तक है। जिन में कहा है अन्य देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी आदि) को मैंने ही कुछ शक्ति प्रदान कर रखी हैं परन्तु उन अल्पबुद्धि वालों (मूर्खों) की वह शास्त्रविधि रहित साधना होने के कारण व्यर्थ है। गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में भी स्पष्ट किया है कि जिन साधकों का त्रिगुणात्मक माया (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) से मिलने वाले क्षणिक लाभ से ज्ञान हरा जा चुका है वे स्वभाव वश उन्हीं की पूजा करते हैं वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मूझे भी नहीं भजते अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते। गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में स्पष्ट किया है कि जो साधक शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा करते हैं उनको न तो कोई लाभ होता है अर्थात् न कोई सिद्धि प्राप्त होती है न कोई सुख होता है न परमगति अर्थात् मोक्ष होता है। भावार्थ है कि शास्त्रों (वेदों) में वर्णित साधना छोड़ कर मनमानी पूजा किसी व्यक्ति या ऋषि व सन्त विशेष के कहने से साधक की साधना व्यर्थ होती है। इसलिए गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि कौन सी साधना करने योग्य (कर्तव्य कर्म) है तथा कौन सी छोड़ने योग्य (अकर्तव्य कर्म) है। इसके लिए शास्त्र (वेद) ही प्रमाण है। किसी अन्य द्वारा लोकवेद अर्थात् दन्त कथाओं के आधार से बताया मार्ग स्वीकार नहीं करना चाहिए।

मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में अध्याय ''रौच्य मनु की उत्पत्ति कथा'' पृष्ठ 242 से 244 तक में प्रमाण है की वेदों में कर्ममार्ग अर्थात् श्राद्ध आदि करने को अविद्या कहा अर्थात् शास्त्रविधि रहित साधना मनमाना आचरण कहा है। कथा का अंश मार्कण्डेय जी कहते है :– पूर्व काल में एक रूची नामक ऋषि वेदों से ज्ञान ग्रहण कर के साधना कर रहा था। वह बाल ब्रह्मचारी था उस समय वह प्रौढ़ हो चुका था। जिस समय रूचि ऋषि को उसके चार पितर (पिता, पितामह, परपितामह तथा दूसरा परपितामह) दिखाई दिए। उन्होंने कहा बेटा आपने विवाह क्यों नहीं किया। गृहस्थ पुरूष समस्त देवताओं की पितरों, ऋषियों और अतिथियों की पूजाकरके पुण्यमय लोकों को प्राप्त करता है। वह ''स्वाह'' के उच्चारण से (देवताओं को) ''स्वधा'' शब्द से (पितरों को) तथा अन्नदान (बलिवैश्वदेव) आदि से भूत आदि प्राणियों एवं अतिथियों को उनका भाग समर्पित करता है। बेटा हम ऐसा मानते हैं। रूचि बोलाः– पितामहो! वेद में कर्म मार्ग को अविद्या कहा गया है। फिर क्यों आप लोग मुझे उस मार्ग में लगाते हैं। पितर बोले :– यह सत्य है कि कर्म को अविद्या ही कहा गया है इस में तनिक भी मिथ्या नहीं है। फिर भी वत्स तुम अविद्यापूर्वक स्त्री संग्रह करो ऐसा न हो कि इस लोक का लाभ न मिलने के कारण तुम्हारा जन्म निष्फल हो जाए। रूचि ने कहाः– पितरो! अब तो मैं बूढ़ा हो गया हूँ। भला मुझ को कौन स्त्री देगा। मेरे जैसा दरिद्र (कंगाल) स्त्री को कैसे रख सकेगा। पितर बोले – वत्स! यदि हमारी बात नहीं मानेगा तो हम लोगों का पतन हो जाएगा और तुम्हारी भी अधोगति होगी। मार्कण्डेय जी ने कहा :– इस प्रकार कह कर पितर अदृश हो गए। रूचि उनकी बातों से चिन्तित हो गया। विवाह के लिए प्रयत्न किया। तपस्या की। तपस्या करके पत्नी प्राप्त करके गृहस्थी बन गया। फिर पितरों के श्राद्ध किए।

विचार करें:- रूचि ऋषि के पूर्वज स्वयं शास्त्रविधि रहित श्राद्ध आदि द्वारा पितर पूजा करके पितर बने खड़े है। फिर अपने बच्चे को गुमराह कर रहे हैं। जो शास्त्रविधि अनुसार (वेदों अनुसार) साधना कर रहा था। पितर यह भी स्वीकार कर रहे हैं कि वेदों में कर्म मार्ग (श्राद्ध आदि करना) अविद्या (मूर्ख कार्य) कहा है पितर भी अपने लोक वेद के आधार से अपने बच्चे रूचि को शिक्षा दे रहे है कि पितर, देवता व भूतों की पूजा करके पुण्यमय लोकों को प्राप्त करता है। विचार करने वाली

बात है कि पितर क्यों नहीं गए उन पुण्यमय लोकों को? स्वयं शास्त्रविधि त्याग कर साधना करके भूखे मर रहे हैं। रूचि को भी पितर बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। स्वयं कह रहे हैं कि यदि कोई श्राद्ध नहीं करेगा तो हमारापतन हो जाएगा। भावार्थ है कि श्राद्ध करने से ही पितरों को आहार मिलता है। फिर उनके पुण्य कहां गए? वास्तविकता यह है कि पितर पूजा करके पितर बन गए। पितर योनि बहुत, कष्टमय होती है। इसकी आयु भी अधिक होती है। इस योनि को भोग कर फिर अन्य प्राणियों की योनियों में शरीर धारण करना पड़ेगा।

शंका प्रश्नः- यदि किसी के माता-पिता भूखे हो वे दिखाई दे कर कहें तो वह पुत्र नहीं जो उनकी इच्छा पूरी न करे।

शंका समाधानः- यदि किसी का बच्चा कुएं में गिरा हो वह तो चिल्लाएगा मुझे बचा लो। पिता जी आ जाओ मैं मर रहा हूँ। वह पिता मूर्ख होगा जो भावुक हो कर कुएं में छलांग लगाकर बच्चे को बचाने की कोशिश करके स्वयं भी डूब कर मर जाएगा। बच्चे को भी नही बचा पाएगा। उस को चाहिए कि लम्बी रस्सी का प्रबन्ध करे। फिर उस कुएं में छोड़े। बच्चा उसे पकड़ ले फिर बाहर खेंच कर बच्चे को कुएं से निकाले। इसी प्रकार पूर्वज तो शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करके पितर बन चुके हैं। संतान को भी पितर बनाने के लिए पुकार रहे हैं। तत्वज्ञान को समझ कर अपना कल्याण कराए तथा मुझ दास (रामपाल दास) के पास परमेश्वर कबीर बंदी छोड़ जी की प्रदान की हुई वह विधि है जो साधक का तो कल्याण करेगी ही उसके पितरों की भी पितर योनि छूट कर मानव जन्म प्राप्त होगा तथा भक्ति युग में जन्म होकर सत्य भक्ति करके एक या दो जन्म में पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें।

विचार करें :- जैसा कि उपरोक्त रूचि ऋषि की कथा में पितर डर रहे हैं कि यदि हमारे श्राद्ध नहीं किए गए तो हम पतन को प्राप्त होगें अर्थात् हमारा पतन (मृत्यु) हो जाएगा। अब उनको पितर योनि जो अत्यंत कष्टमय है अच्छी लग रही है। उसे त्यागना नहीं चाह रहे यह तो वही कहानी वाली बात है कि ''एक समय एक ऋषि को अपने भविष्य के जन्म का ज्ञान हुआ। उसने अपने पुत्रों को बताया कि मेरा अगला जन्म अमूक व्यक्ति के घर एक सूअरी से होगा। मैं सूअर का जन्म पाऊंगा उस सूअरी के गले में गांठ है यह उसकी पहचान है उसके उदर से मेरा जन्म होगा। मेरी पहचान यह होगी की मेरे सिर पर गांठ होगी जो दूर से दिखाई देगी। मेरे बच्चों उस व्यक्ति से मुझे मोल ले लेना तथा मुझे मार देना, मेरी गति कर देना। बच्चों ने कहा बहुत अच्छा पिता जी। ऋषि ने फिर आँखों में पानी भर कर कहा बच्चों कही लालच वश मुझे मोल न लो और मुझे तुम मारो नहीं, यह कार्य तुम अवश्य करना, नहीं तो मैं सूअर योनि में महाकष्ट उठाऊंगा। बच्चों ने पूर्ण विश्वास दिलाया। उसके पश्चात् कुछ दिनों में उस ऋषि का देहांत हो गया उसी व्यक्ति के घर पर उसी गले में गांठ वाली सुअरी के वहीं सिर पर गांठ वाला बच्चा भी अन्य बच्चों के साथ उत्पन्न हुआ उस ऋषि के बच्चों ने वह सुअरी का बच्चा मोल ले लिया तब उसे मारने लगे उसी समय वह बच्चा बोला बेटा मुझे मत मारो मेरा जीवन नष्ट करके तुम्हें क्या मिलेगा तब उस ऋषि के पूर्व जन्म के बेटों ने कहा, पिता जी! आपने ही तो कहा था। तब वह सुअर के बच्चे रूप में ऋषि बोला मैं आपके सामने हाथ जोड़ता हूँ मुझे मत मारो, मेरे भाईयों (अन्य सूअर के बच्चों) के साथ मेरा दिल लगा है। मुझे बख्श दो। बच्चों ने वह बच्चा छोड़ दिया मारा नहीं। इस प्रकार यह जीव जिस भी योनि में उत्पन्न

हो जाता है उसे त्यागना नहीं चाहता। जबकि यह शरीर एक दिन सर्व का जाएगा। इसलिए भावुकता में न बह कर विवेक से कार्य करना चाहिए। यह दास (रामपाल दास) जो साधना बताएगा उससे आम के आम और गुठलियों के दाम भी मिलेगें इसी विष्णु पुराण में तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 213 पर लिखा है कि ''(और्व ऋषि सगर राजा को बता रहा है)'' हे राजन् श्राद्ध करने वाले पुरूष से पितरगण, विश्वदेव गण आदि सर्व संतुष्ट हो जाते हैं। हे भूपाल! पितरगण का आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमा का आधार योग (शास्त्रअनुकूल भक्ति) है। इसलिए श्राद्ध में योगी जन (तत्व ज्ञान अनुसार शास्त्रविधि अनुसार साधक जन) को अवश्य बुलाए यदि श्राद्ध में एक हजार ब्राह्मण भोजन कर रहे हों उनके सामने एक योगी (शास्त्रअनुकूल साधक) भी हो तो वह उन एक हजार ब्राह्मणों का भी उद्धार कर देता है तथा यजमान का भी उद्धार कर देता है। ***(पितरों का उद्धार का अर्थ है कि पितरों की योनि छूट कर मानव शरीर मिलेगा यजमान तथा ब्राह्मणों के उद्धार से तात्पर्य यह है कि उनको सत्य साधना का उपदेश करके मोक्ष का अधिकारी बनाएगा)***

योगी की परिभाषा :- गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा है कि हे अर्जुन! जिस समय आप की बुद्धि भिन्न-2 प्रकार के भ्रमित करने वाले ज्ञान से हट कर एक तत्व ज्ञान पर स्थिर हो जाएगी तब तू योगी बनेगा अर्थात् भक्त बनेगा। भावार्थ है कि तत्व ज्ञान आधार से साधना करने वाला ही मोक्ष का अधिकारी बनता है उसी में नाम साधना (भक्ति) का धन होता है वह राम नाम की कमाई का धनी होता है।

इसलिए यह दास (रामपाल दास) आपको वह शास्त्रअनुकूल साधना प्रदान करेगा जिससे आप योगी (सत्य साधक) हो जाओगे। आपका कल्याण तथा आपके पितरों का भी कल्याण हो जाएगा। जैसा कि विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 15 श्लोक 13 से 17 पृष्ठ 210 पर लिखा है कि देवताओं के निमित्त श्राद्ध (पूजा) में अयुग्म संख्या (3,5,7,9 की संख्या) में ब्राह्मणों को एक साथ भोजन कराए तथा उनका मुंह पूर्व की ओर बैठा कर भोजन कराए तथा पितरों के लिए श्राद्ध (पूजा) करने के समय युग्म संख्या (दो, चार, छः, आठ की संख्या) में उत्तर की ओर मुख करके बैठाए तथा भोजन कराए। विचार करने की बात यह है कि इसी विष्णु पुराण, इसी तृतीया अंश के अध्याय 15 में श्लोक 55-56 पृष्ठ 213 पर यह भी तो लिखा है कि एक योगी (शास्त्रअनुकूल सत्य साधक) अकेला ही पितरों तथा एक हजार ब्राह्मणों तथा यजमान सहित सर्व का उद्धार कर देगा। क्यों न हम एक योगी की खोज करें जिससे सर्व लाभ प्राप्त हो जाएगा।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा है :- एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय,
माली सीचें मूल को, फलै फूलै अघाय।।

यह दास (रामपाल दास) भी धार्मिक अनुष्ठान (श्रद्धा से पूजा) करता और कराता है। जिसके करने से साधक पितर, भूत नहीं बनता अपितु पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है तथा जो पूर्वज गलत साधना (शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा) करके पितर भूत बने हैं। उनका भी छुटकारा हो जाता है। यही प्रमाण इसी विष्णु पुराण पृष्ठ 209 पर इसी तृतीय अंश के अध्याय 14 श्लोक 20 से 31 में भी लिखा है कि जिसके पास श्राद्ध करने के लिए धन नहीं है तो वह यह कहे '' हे पितर गणों आप मेरी भक्ति से तृप्ति लाभ प्राप्त करें। क्योंकि मेरे पास श्राद्ध करने के लिए वित्त नहीं है'' कृप्या पाठक जन विचार करें कि जब भक्ति (मन्त्र जाप की कमाई) से पितर तृप्त हो जाते हैं तो

फिर अन्य कर्मकाण्ड की क्या आवश्यकता है। यह सर्व प्रपण्च ज्ञानहीन गुरू लोगों ने अपने उदर पोषण के लिए ही किया है। क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में भी लिखा है द्रव्य (धन द्वारा किया) यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) से ज्ञान यज्ञ (तत्वज्ञान आधार पर नाम जाप साधना) श्रेष्ठ है।

एक और विशेष विचारणीय विषय है कि विष्णु पुराण में पितर व देव पूजने का आदेश एक ऋषि का है तथा वेदों व गीता जी में पितरों वे देवताओं की पूजा का निषेध है जो आदेश ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) भगवान का है। यदि पुराणों के अनुसार साधना करते हैं तो प्रभु के आदेश की अवहेलना होती है। जिस कारण से साधक दण्ड का भागी होता है।

एक कथा है :- एक समय एक व्यक्ति की दोस्ती एक पुलिस थानेदार से हो गई। उस व्यक्ति ने अपने दोस्त थानेदार से कहा कि मेरा पड़ोसी मुझे बहुत परेशान करता है। थानेदार (S.H.O.) ने कहा कि मार लट्ठ मैं आप निपट लूंगा। थानेदार दोस्त की आज्ञा का पालन करके उस व्यक्ति ने अपने पड़ौसी को लट्ठ मारा, सिर में चोट लगने के कारण पड़ौसी की मृत्यु हो गई। उसी क्षेत्र का अधिकारी होने के कारण वह थाना प्रभारी अपने दोस्त को पकड़ कर लाया, कैद में डाल दिया तथा उस व्यक्ति को मृत्यु दण्ड मिला। उसका दोस्त थानेदार कुछ मदद नहीं कर सका। क्योंकि राजा का संविधान है कि यदि कोई किसी की हत्या करेगा तो उसे मृत्यु दण्ड प्राप्त होगा। उस नादान व्यक्ति ने अपने दोस्त दरोगा की आज्ञा मान कर राजा का संविधान भंग कर दिया। जिससे जीवन से हाथ धो बैठा। ठीक इसी प्रकार पवित्र गीता जी व पवित्र वेद यह प्रभु का संविधान है। जिसमें केवल एक पूर्ण परमात्मा की पूजा का ही विधान है, अन्य देवताओं - पित्तरों - भूतों की पूजा करना मना है। पुराणों में ऋषियों (थानेदारों) का आदेश है। जिनकी आज्ञा पालन करने से प्रभु का संविधान भंग होने के कारण कष्ट पर कष्ट उठाना पड़ेगा। इसलिए आन उपासना पूर्ण मोक्ष में बाधक है।

अन्य उदाहरण :-

मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी लगभग सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए अचानक घर त्याग कर निकल गए। प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्रों को अपने ही खेतों के निकट घने जंगल में किसी मृत पशु की अस्थियों के पास डाल गए। शाम को घर न पहुँचने के कारण घर वालों ने जंगल में तलाश की। रात्री का समय था। कपड़े पहचान कर दुःखी मन से पशु की अस्थियों को बच्चे की अस्थियाँ जान कर उठा लाए तथा यह सोचा कि बच्चा जंगल में चला गया, किसी हिंसक जानवर ने खा लिया। अन्तिम संस्कार कर दिया। सर्व क्रियाऐं की, तेरहवीं - बरसी आदि की तथा श्राद्ध भी निकालते रहे। लगभग 104 वर्ष की आयु प्राप्त होने के उपरान्त स्वामी जी अचानक अपने गाँव बड़ा पैंतावास,त.चरखीदादरी,जिला भिवानी, हरियाणा में पहुँच गए। स्वामी जी का बचपन का नाम श्री हरिद्वारी जी था तथा पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म था।

मुझ दास को पता चला तो मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी की भाभी जी जो लगभग 92 वर्ष की आयु की थी। मैंने उस वृद्धा से पूछा कि हमारे गुरु जी के घर त्याग जाने के उपरान्त क्या महसूस किया? उस वृद्धा ने बताया कि मेरा विवाह हुआ तब मुझे बताया गया कि इनका एक भाई हरिद्वारी था जो किसी हिंसक जानवर ने जंगल में खा लिया था। उसके श्राद्ध निकाले जा रहे हैं।

मुझे भी इनके श्राद्ध निकालने को कहा गया। वृद्धा ने बताया कि 70 श्राद्ध तो मैं अपने हाथों निकाल चुकी हूँ। जब कभी फसल अच्छी नहीं होती या कोई घर का सदस्य बीमार हो जाता तो अपने पुरोहित (गुरु जी) से कारण पूछते तो वह कहा करता कि हरद्वारी पित्तर बना है, वह तुम्हें दुःखी कर रहा है। श्राद्धों के निकालने में कोई अशुद्धि रही है। अबके मैं स्वयं सर्व क्रिया अपने हाथों से करूंगा। पहले मुझे समय नहीं मिला था, क्योंकि एक ही दिन में कई जगह श्राद्ध क्रियाऐं करने जाना पड़ा। इसलिए बच्चे को भेजा था। तब तक कुछ भेंटें चढ़ाओं ताकि उसे शान्त किया जाए। तब उसे 21 या 51 जो भी कहता था डरते भेंट करते थे, फिर श्राद्धों के समय गुरु जी स्वयं श्राद्ध करते थे। तब मैंने कहा माता जी अब तो छोड़ दो इस गीता जी विरुद्ध साधना को। नहीं तो आप भी प्रेत बनोगी। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 सुनाया। तब वह वृद्धा कहने लगी गीता मैं भी पढती हूँ। दास (रामपाल दास) ने कहा आपने गीता जी को पढ़ा है, समझा नहीं। आगे से तो बन्द कर दो इस नादान साधना को। वृद्धा ने उत्तर दिया ना भाई, कैसे छोड़ दें श्राद्ध निकालना, यह तो सदियों पुरानी (लाग) परम्परा है।

प्रश्नः- मैं तो योगी उसी को मानता हूँ जो आसन करता है तथा कराता (सिखाता) है तथा किसी आसन विशेष पर आरूढ़ होकर तपस्या भक्ति करता है ?

उत्तरः- योगी वह भी कहलाता है परन्तु वह योगी तो एक मात्र प्राकृतिक चिकित्सक (वैद्य) है। यह अष्टांग योग प्रभु साधना में इसलिए सहयोगी माना गया है कि इससे शरीर स्वस्थ रहता है। स्वस्थ शरीर से भक्ति अच्छी होती है। परन्तु आध्यात्मिक मार्ग में उस योगी की भूमिका नहीं मानी जाती क्योंकि परमात्मा की सत्य साधन (योग) से साधक का असाध्य रोग भी ठीक हो जाता है। जिससे साधक की श्रद्धा अधिक बढ़ जाती है वह अधिक श्रद्धा से साधना (योग) करके परमात्मा प्राप्ति कर जाता है। एक अष्टांग योगी (आसन व क्रिया करने वाला) दुर्घटना की चपेट में आ गया दोनों टांगे टूट गई। उनमें स्टील (इस्पात) की राड़ें (छड़ीयाँ) डाली गई। वह आजीवन अष्टांग योग नहीं कर सका। किसी एक स्थान पर आसन पर बैठकर भी वह दुर्घनाग्रस्त व्यक्ति भक्ति भी नहीं कर सकता। आप के अनुसार तो वह भक्ति से वंचित रह जाऐगा। शास्त्रअनुकूल साधक (योगी) का ऐसी घटनाओं से परमात्मा बचाव करता है।

श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में कहा है कि जो मूर्ख व्यक्ति हठ योग कर (एक स्थान पर किसी आसन पर आरूढ़ होकर) भक्ति करता है। वह पाखण्ड करता है क्योंकि वह केवल कर्म इन्द्रियों को हठ पूर्वक रोक कर स्थित है परन्तु ज्ञान इन्द्रियों द्वारा बाह्यय वस्तुओं के चिन्तन में लगा है। यदि अर्जुन तू एक स्थान पर किसी आसन पर आरूढ़ होकर बैठा रहेगा तो तेरा निर्वाह कैसे होगा? इसलिए संसारिक कर्म करता हुआ, परमात्मा को भी याद कर। गीता अध्याय 8 श्लोक 7 तथा 13 में तो यहाँ तक कहा है कि मेरा एक ॐ (ओं) अक्षर है समरण करने का उसका अन्तिम स्वांस तक समरण करने से मेरे वाली गति प्राप्त होती हैं इसलिए अर्जुन तू युद्ध भी कर तथा मेरा समरण भी कर।

विचार करें :- युद्ध से कठिन कार्य कुछ नहीं होता उसमें भी प्रभु का समरण करने को कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि परमात्मा की भक्ति कार्य करते-करते करनी है। जो सर्व सद्ग्रन्थों में प्रमाण है।

यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में कहा है ! ओम् (ॐ) मन्त्र का समरण काम करते-करते कर, विशेष कसक के साथ समरण कर मानव जीवन का मूल कर्तव्य समझ कर समरण कर जिससे मृत्यु के पश्चात् तेरा लिंग शरीर अमर हो जाएगा। जब तक स्थूल शरीर है अर्थात् जीवित है तब तक समरण करने से लाभ प्राप्त होता है। इससे सिद्ध हुआ कि एक स्थान पर आसन लगाकर साधना करना शास्त्रविरूद्ध है। पाठकों के मन में यह भी प्रश्न उठेगा कि गीता ज्ञान दाता ने, गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में यह भी कहा है कि एकांत स्थान में एक आसन पर बैठकर नाक के अगले भाग को देखें ऐसे साधना करें। इस प्रश्न का उत्तर पवित्र गीता जी से मिलता है। गीता ज्ञान दाता (काल रूपी ब्रह्म) ने गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि तत्वज्ञान (पूर्ण मोक्ष मार्ग की भक्तिविधि के ज्ञान) को समझने के लिए तत्वदर्शी संतों से विनम्र भाव से पूछो फिर जैसा मार्गदर्शन वे करें। उस प्रकार साधना कर। तत्वदर्शी संत की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 व 4 में बताई है।

इस प्रकार गीता ज्ञान दाता प्रभु ने अपने आप को दोष मुक्त कर रखा है तथा अपने गीता ज्ञान में स्थान-2 पर कहा है कि यह मेरा मत (विचार) है। वास्तविक भक्ति विधि तो तत्वदर्शी सन्त ही बताएगा। इस (गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 वाले) ज्ञान का गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में तथा अध्याय 6 के 16 में ही खण्डन किया है। पूर्ण परमात्मा द्वारा मिलने वाला पूर्ण मोक्ष (न एकांतम्) न तो एक स्थान पर विशेष आसन पर बैठने से सिद्ध होता है। न अधिक खाने वाले का न बिल्कुल न खाने वाले का (व्रत/उपवास रखने वाले का) न अधिक जागने वाले (हठयोग करने वाले) का न अधिक सोने वाले का सिद्ध होता है अर्थात् उपरोक्त क्रिया करने वाले की भक्ति व्यर्थ है। क्योंकि गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति साधना विधि बताई है। जिससे होने वाली मुक्ति (गति) को गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अश्रेष्ठ बताया है। जिस कारण से गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में कहा है कि अर्जुन तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। अर्थात् हम (मैं तथा मेरे साधक तथा तू) पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62, अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमात्मा की साधना करने को कहा है तथा उस परमात्मा की भक्तिविधि कोई तत्वदर्शी (पूर्ण) सन्त बताएगा। (इसलिए पाठक जन भ्रमित न होकर तत्वज्ञान को समझें)

श्री विष्णु पुराण के जिस विवरण के विषय में आपने कहा है उसका निष्कर्ष यह है कि ''श्री पारासर जी ने अपने शिष्य श्री मैत्रेय जी को बताया है कि जो श्राद्ध कर्म (पितर पूजा) आदि के विषय में आपने मुझ से पूछा है यही प्रश्न राजा सगर ने भृगु वंशी ऋषि और्व जी से पूछा था। जो और्व ऋषि ने राजा सगर से श्राद्ध कर्म (पितर पूजा) के विषय में बताया था वह मैं आप को सुनाता हूँ ध्यान पूर्वक सुन! पाठक जन कृपया पूर्ण वार्ता श्री विष्णु पुराण तृतीय अंश के अध्याय 13 से 16 पृष्ठ 203 से 215 तक पढ़ें। यहां पर पुस्तक विस्तार को ध्यान रखते हुए, संक्षिप्त व सांकेतिक विवरण विवेचन के साथ लिखा जाता है। सर्वप्रथम तो श्री विष्णु पुराण के वक्ता महर्षि पाराशर जी को तत्वज्ञान रूपी तुला में तोलते हैं। निर्णय करते हैं कि पाराशर जी कितने विद्वान थे।

श्री पाराशर महर्षि जी ने श्री विष्णु पुराण द्वितीय अंश के अध्याय 7 श्लोक 5 में पृष्ठ संख्या 126-127 पर ग्रहों की जानकारी दी है। जिसमें पृथ्वी के निकटतम् सूर्य को बताया जिसकी पृथ्वी से

दूरी एक लाख योजन अर्थात् तेरह लाख किलो मीटर बताई इसके पश्चात् बताया है कि चन्द्रमा सूर्य ये भी एक लाख योजन दूर है। जिसकी पृथ्वी से दूरी 2 लाख योजन (26 लाख किलो मीटर) बताई है।

विचार करें वर्तमान में (सन् 2006 तक की खोज से) स्पष्ट हो चुका है कि चन्द्रमा पृथ्वी के निकटतम् है जिसकी पृथ्वी से दूरी सूर्य की तुलना में कई गुणा कम है।

दूसरा प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश अध्याय 5 पृष्ठ 17 पर दिन-रात कैसे बने हैं। इसकी जानकारी ये है। श्री पारासर जी ने कहा कि प्रजापति ब्रह्मा जी सृष्टी-रचना की इच्छा से युक्तचित हुए तो तमोगुण की वृद्धि हुई। सब से पहले असुर उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने उस शरीर को त्याग दिया वह छोड़ा हुआ शरीर रात्रि हुआ। दूसरा शरीर धारण किया उस शरीर से देव उत्पन्न हुए। प्रजापति ब्रह्मा ने वह शरीर भी त्याग दिया। वह त्यागा हुआ शरीर दिन हुआ। पाठक जन कृप्या विचार करें क्या ये विचार एक विद्वान के हैं।

श्री विष्णु पुराण के वक्ता का सामान्य ज्ञान भी ठीक नहीं है तो उसके द्वारा बताया गया अध्यात्मिक ज्ञान कैसे ठीक हो सकता है। श्री पारासर जी ने फिर ग्रहों की अन्य व्याख्या की है :- श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पाराशर जी ने श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से ही प्रकाशित) के द्वितीय अंश के अध्याय 8 के श्लोक 1 से 7 में पृष्ठ 129 पर सुर्य (जो अग्नि पिण्ड आकाश में तप रहा है) के रथ के विषय में कहा है "सूर्य के रथ का विस्तार नो हजार योजन है। इसके जूआ और रथ के बीच की दूरी 18 हजार योजन है। इसका धुरा डेढ़ करोड़ सात लाख योजन है। अर्थात् एक करोड़ 57 लाख योजन लम्बा है। जिसमें उसका पहिया लगा है आदि–2 बहुत कुछ लिखा है। ***कृपया पाठक जन विचार करें क्या यह ज्ञान किसी विद्वान पुरूष का हो सकता है। श्री विष्णु पुराण में इसी अग्नि पिण्ड सूर्य के विषय में पृष्ठ 166 से 167 पर तृतीय अंश के अध्याय 2 के श्लोक 1 से 13 में श्री पाराशर ऋषि ने कहा है कि*** "सूर्य का विवाह विश्वकर्मा की बेटी संज्ञा से हुआ उससे दो पुत्र मनु व यम तथा एक कन्या यमी उत्पन्न हुई। सूर्य की पत्नी संज्ञा अपने पति के तेज से दुःखी होकर तपस्या करने के लिए वन में चली गई। वहां घोड़ी का रूप बना कर तपस्या करने लगी अपने स्थान पर अपनी हमशक्ल अन्य स्त्री प्रकट की उसका नाम छाया रखा तथा उससे संज्ञा ने कहा तू मेरे पति की पत्नी बनकर रह। यह भेद किसी को मत बताना। मेरा पति तुझे संज्ञा ही समझेगा। छाया ने कहा जो आपकी आज्ञा। सूर्य ने छाया को संज्ञा जानकर दो संतान उत्पन्न की एक लड़का एक लड़की।

एक दिन भेद खुलने पर सूर्य अपने श्वशुर विश्वकर्मा के पास गए तथा विश्वकर्मा से कहा आप मेरा तेज छांट दो इस तेज के डर से आपकी बेटी संज्ञा वन में चली गई है। श्री विश्वकर्मा जी ने सूर्य को भ्रमीयन्त्र (सान) पर चढ़ा कर उसका तेज छांटा (काट दिया) वह कचरा (खराद से छटा हुआ कट पीस) धरती पर गिरा जिससे श्री विश्वकर्मा ने भगवान विष्णु का "चक्र" भगवान शिव का त्रिशुल तथा कुबेर का विमान आदि–2 बनाए। तत् पश्चात सूर्य घोड़ा बन कर संज्ञा के पास वन में गया। संज्ञा से घोड़ी रूप में ही संभोग करके तीन पुत्र उत्पन्न किए। दो घोड़ी के मुख से उत्पन्न हुए उनको अश्वनी कुमार कहा जाता है। जिनके नाम है (1) नासत्य (2) दस्र ये दोनों अश्वनी कुमार देवताओं के वैद्य बने तथा तीसरा पुत्र रेतःस्राव उत्पन्न हुआ जहां पर सूर्य का वीर्य उस समय गिरा था। जब वह घोड़ी रूप धारी संज्ञा के मुख की ओर ही घोड़ा रूप में संभोग करने की कोशिश कर रहा था। वहां गिरे वीर्य से रेतःस्राव पुत्र जमीन पर ही उत्पन्न हो गया। वह घोड़ा पर बैठा हुआ हाथ में धनुष आदि लिए हुए उत्पन्न हुआ था जिस स्थान पर इस आग के गोले (अग्नि पिण्ड) सूर्य ने घोड़े का रूप धारण करके घोड़ी रूप नारी संज्ञा से संभोग किया था। जहां दो पुत्र अश्विनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न किए थे। उस तीर्थ का नाम अश्व तीर्थ, भानु तीर्थ

और पंचवटी आश्रम के नाम से विख्यात हुआ सूर्य की दोनों कन्याएं दो नदीयों अरूणा, वरूणा नाम से अपने पिता से मिलने आई थी उन दोनों का जहां गंगा नदी में संगम हुआ है वह बहुत उत्तम तीर्थ उन तीर्थों में स्नान करने से व दान करने से अक्षय धन देने वाला है। उस तीर्थ का समरण, कीर्तन, श्रवण (सुनने) करने से सर्व पापों का नाश होकर मनुष्य सुखी हो जाता है। **(उपरोक्त विवरण मार्कण्डेय पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित पृष्ठ 172 से 175 अध्याय वैवस्वत मन्वन्तर की कथा तथा सावर्णिक मन्वन्तर का संक्षिप्त परिचय से तथा ब्रह्म पुराण अध्याय ''जन स्थान, अश्व तीर्थ, भानु तीर्थ और अरूणा वरूणा संगम की महिमा से तथा विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 2 श्लोक 1 से 13 पृष्ठ 166-167 से लिया गया है)** इसी विष्णु पुराण द्वितीय अंश के अध्याय 8 श्लोक 41 से 52 तक तथा पृष्ठ 132 पर कहा है कि सूर्य कभी दिन में तेज गति से चलता है कभी रात्री में मंद गति से चलता है इस प्रकार अपना एक दिन रात का चक्र मण्डलाकार में घूम कर पूरा करता है। **(पुराण वक्ता का भाव है कि सूर्य के पृथ्वी के चारों ओर चक्र लगाने से दिन रात बनते हैं जब कि वर्तमान में (सन् 2006 तक की खोज में)स्पष्ट हो चुका है कि पृथ्वी स्वयं घूमती है जिस कारण से दिन-रात बनते हैं तथा पृथ्वी एक वर्ष में (364 (दिन में) सूर्य के चारों ओर भी घूमती है जिस कारण से दिन-रात छोटे बड़े बनते हैं।)**

पुराण के वक्ता ने यह भी लिखा है कि शाम के समय (संध्या समय) मन्देहा नामक भयंकर राक्षक गण सूर्य को खाना चाहते है। संध्या काल में उनका सूर्य से भयंकर युद्ध होता है।

निष्कर्ष :- उपरोक्त पुराण के लेख से पुराण के वक्ता श्री पाराशर ऋषि के आध्यात्मिक व सामान्य ज्ञान का पता चलता है कि वह विद्वान नहीं था। फिर उस महापुरूष द्वारा बताया श्राद्ध कर्म जिसे आप करते हैं। वह कैसे श्रेष्ठ माना जाए। जबकि पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी आदि प्रभुदत्त सद्ग्रन्थों में श्राद्ध कर्म व देवताओं की पूजा को मूर्खों की साधना लिखा है। पूर्वोक्त लेख में रूची ऋषि के प्रकरण में आपने पढ़ा जिसमें वेदों के ज्ञाता रूची ऋषि जी अपने पितरो को वेदों के प्रमाण दे कर कह रहा है कि श्राद्ध कर्म, देवताओं की पूजा, भूत (प्रेत) पूजा को वेदों में मूर्खों की साधना कहा है। फिर आप मुझे किसलिए शास्त्रविरूद्ध साधना करने की प्रेरणा दे रहे हो। श्री रूची ऋषि जी व चारों पितर भी, इसी बात का समर्थन कर रहे हैं कि यह तो सत्य है कि वेदों में श्राद्ध कर्म, देवताओं की पूजा, प्रेत (भूत) पूजा का निषेध है। मूर्खों की पूजा कहा है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। इसके पश्चात् पितरों ने अपने भोले-भाले वंशज रूची ऋषि को शास्त्रविधि अनुसार साधना त्यागने तथा शास्त्रविधि विरूद्ध मनमाना आचरण (पूजा) करने के लिए विवश कर दिया जिस कारण से श्री रूचि ऋषि भी शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करके मानव जीवन को व्यर्थ करके पितर जूनी (योनि) को प्राप्त हुआ। श्री मद्भगवत् गीता जी (जो चारों वेदों का सारांश है।) के अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो साधक शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करता है। उस को न तो सिद्धि प्राप्त होती है, न उसकी परमगति (मोक्ष) होती है न कोई सुख ही प्राप्त होता है अर्थात् उस शास्त्रविरूद्ध साधना करने वाले योगी (भक्त) का जीवन नष्ट हो जाता है। यह प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में है। श्लोक 24 में लिखा है कि जो साधना ग्रहण करनी चाहिए तथा जो त्यागनी चाहिए उसके लिए तुझे शास्त्र (चारों वेद) ही प्रमाण है। अन्य किसी के लोक वेद (दन्त कथा) का अवलम्बन नहीं करना चाहिए।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10 से 14 में श्राद्ध के विषय में श्री सनत्कुमार ने कहा है कि तृतीया, कार्तिक, शुक्ला नौमी, भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी तथा माघमास

की अमावस्या इन चारों तिथीयाँ अनन्त पुण्यदायीनि हैं। चन्द्रमा या सूर्य ग्रहण के समय तीन अष्टकाओं अथवा उत्तरायण या दक्षिणायन के आरम्भ में जो पुरूष एकाग्रह चित से पितर गणों को तिल सहित जल भी दान करता है वह मानो एक हजार वर्ष तक के लिए श्राद्ध कर लेता है। यह परम रहस्य स्वयं पितर गण ही बताते है।'' (लेख समाप्त)

विचार करें उपरोक्त श्राद्ध विधि पितरों के द्वारा बताई गई है न की वेदोक्त या श्री मद्भगवत् गीता के आधार से है। इसलिए कृप्या पढ़े पूर्वोक्त विवरण ''थानेदार वाला'' इसी पुस्तक के पृष्ठ 182 पर।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 में पृष्ठ 214 पर लिखा है ''क्षीरमेकशफाना यदौष्ट्रमाविकमेव च। मार्ग च माहिष चैव वर्जयेच्छाकर्माणि''।। इस श्लोक का हिन्दी अनुवाद=एक खुरवालों का, ऊंटनी का, भेड़ का मृगी का तथा भैंस का दूध श्राद्धकर्म में प्रयोग न करें (काम में न लाऐं)

***समीक्षा :-** वर्तमान (सन् 2006 तक) सर्व व्यक्ति श्राद्धों में भैस के दूध का ही प्रयोग कर रहे हैं। जो पुराण में वर्जित है। जिस कारण से उनके द्वारा किया श्राद्ध कर्म भी व्यर्थ हुआ। श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 में पृष्ठ 213 पर (मांस द्वारा श्राद्ध करने से पितर गण सदा तृप्त रहते हैं।) लिखा है* ''हविष्यमत्स्य मांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च । सौकरछाग लैणेयरौरवैर्गवयेन च।। (1) और भ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्धया पिता महाः (2) खडगमांसमतीवात्र कालशाकं तथा मधु। शस्तानि कर्मण्यत्यन्ततृप्तिदानि नरेश्वर ।। (3) हिन्दी अनुवाद :– हवि, मत्सय (मच्छली) शशंक (खरगोश) नकुल, शुकर (सुअर), छाग, कस्तूरिया मृग, काला मृग, गवय (नील गाय/वन गाय) और मेष (भेड़) के मांसों से गव्य (गौ के घी, दूध) से पितरगण एक–एक मास अधिक तृप्त रहते हैं और वार्घ्रीणस पक्षी के मांस से सदा तृप्त रहते हैं। (1-2) श्राद्ध कर्म में गेड़े का मांस काला शाक और मधु अत्यंत प्रशस्त और अत्यंत तृप्ती दायक है।। (3) श्री विष्णु पुराण अध्याय 2 चतुर्थ अंश पृष्ठ 233 पर भी श्राद्ध कर्म में मांस प्रयोग प्रमाण स्पष्ट है।

***समीक्षा :-** उपरोक्त पुराण के ज्ञान आदेशानुसार श्राद्ध कर्म करने से पुण्य के स्थान पर पाप ही प्राप्त होगा।*

क्या यह उपरोक्त मांस द्वारा श्राद्ध करने का आदेश अर्थात् प्रावधान न्याय संगत है अर्थात् नहीं। इसलिए पुराणों में वर्णित भक्तिविधि तथा पुण्य साधना कर्म शास्त्रविरूद्ध है। जो लाभ के स्थान पर हानिकारक है।

विशेष :- उपरोक्त श्लोक 1-2 के अनुवाद कर्ता ने कुछ अनुवाद को घुमा कर लिखा है। मूल संस्कृत भाषा में स्पष्ट गाय का मांस श्राद्ध कर्म में प्रयोग करने को कहा गया है। हिन्दी अनुवाद कर्ता ने गव्य अर्थात् गौ के मांस के स्थान पर कोष्ठ में ''गौ के घी दूध से'' लिखा है। विचार करें क्या हिन्दु धर्म उपरोक्त मांस आहार को श्राद्ध कर्म में प्रयोग कर सकता है। कभी नहीं। इसलिए ऐसे श्राद्ध न करके श्रद्धापूर्वक धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण सन्त के बताए मार्ग से करना चाहिए। वह है नाम मंत्र का जाप, पांचों यज्ञ, तीनों समय की उपासना वाणी पाठ से जो यह दास (रामपाल दास) बताता है। जिससे पितरों, प्रेतों आदि का भी कल्याण होकर उपासक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा तथा उसके पितर (पूर्वज) जो भूत या पितर योनियों में कष्ट उठा रहे हैं, उनकी वह योनि छूटकर तुरन्त मानव शरीर प्राप्त करके इस भक्ति को प्राप्त करेगें। जिससे उनका भी पूर्ण मोक्ष हो जाएगा।

मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में अध्याय ''श्राद्धकर्म का वर्णन पृष्ठ 92 पर लिखा है''जो प्रपितामह के ऊपर के तीन पीढ़ीयाँ जो नरक में निवास करती हैं, जो पशु–पक्षी की योनि में पड़े है, तथा जो भूत प्रेत आदि के रूप में स्थित है उन सब को विधि पूर्वक श्राद्ध करने वाला यजमान तृप्त करता है। पृथ्वी पर जो अन्न बिखेरते हैं (श्राद्ध कर्म करते समय) उससे पिशाच योनि में पड़े पितरों की तृप्ति होती है। स्नान के वस्त्र से जो जल पृथ्वी पर टपकता है, उससे वृक्ष योनि में पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं। नहाने पर अपने शरीर से जो जल के कण पृथ्वी पर गिरते हैं उनसे उन पितरो की तृप्ति होती है जो देव भाव को प्राप्त हुए हैं। पिण्डों के उठाने पर जो अन्न के कण पृथ्वी पर गिरते हैं, उनसे पशु–पक्षी की योनि में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धन से जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियों में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है।

विचार करें :- उपरोक्त योनियों में जो अपने पूर्वज पड़े हैं। उसका मूल कारण है कि उन्होंने शास्त्रविधि अनुसार भक्ति नहीं की। पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करते तो उपरोक्त महाकष्ट दायक योनियों में नहीं पड़ते। मुझ दास (लेखक-रामपाल दास) की सर्व मानव समाज से कर बद्ध प्रार्थना है अब तो जागो, पीछे जो गलती हो चुकी है, उसकी आवृत्ति न हो। जो साधना यह दास (रामपाल दास) बताता है उससे आपके पूर्वज (सात पीढ़ी तक के) किसी भी योनि में (पितर, भूत, पिशाच, पशु-पक्षी, वृक्ष आदि में) पड़े हों उन सर्व की वर्तमान योनि छूटकर तुरन्त मानव जन्म मिलेगा। फिर वे वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा भक्ति साधना प्राप्त करके यदि मर्यादा में रह कर आजीवन यह भक्ति करते रहेगें तो पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें। यही प्रमाण कबीर परमेश्वर द्वारा दिए तत्वज्ञान को संत गरीबदास जी बता रहे हैं :-

अग्नि लगा दिया जद लम्बा, फूंक दिया उस ठाई। पुराण उठाकर पण्डित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।।
नर सेती फिर पशुवा किजे गधा बैल बनाई, छप्पन भोग कहा मन बौरे किते कुरड़ी चरने जाई।
प्रेत शिला पर जाय विराजे पितरों पिण्ड भराई, बहुर श्राद्ध खाने को आऐ काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगत करते सकल कर्म कट जाई। अमर पुरी पर आसन होते जहाँ धूप ना छांई।

उपरोक्त वाणी पांचवे वेद (सुक्ष्म अर्थात् स्वसम वेद) की है। जिसमें स्पष्ट किया है कि पितरों आदि के पिण्ड दान करते हुए अर्थात् श्राद्ध कर्म करते-करते भी पशु-पक्षी व भूत प्रेत की योनियों में प्राणी पड़ते हैं तो वह श्राद्ध कर्म किस काम आया? फिर कहा है कि यदि सतगुरू (तत्वज्ञान दाता तत्वदर्शी संत) का संग करते अर्थात् उसके बताए अनुसार भक्ति साधना करते तो सर्व कर्म कट जाते। न पशु बनते, न पक्षी, न पितर बनते, न प्रेत। सीधे सतधाम (शाश्वत स्थान) पर चले जाते जहां जाने के पश्चात् फिर लौट कर इस संसार में किसी भी योनि में नहीं आते (प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में व अध्याय 9 श्लोक 25 में)

प्रश्न :- पुराणों की रचना किस कारण हुई। वेदों को छोड़ कर श्रद्धालु पुराणों पर ही किस कारण से आसक्त हो गए।

उत्तर :- पवित्र श्री मद्भगवत् गीता जी चारों वेदों का सारांश है। गीता के अध्याय 4 श्लोक 34 में तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में लिखा है कि गीता व वेद ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा को कोई उत्पन्न होने वाला अर्थात् जन्म लेने वाला कहता है, तो कोई उत्पन्न न होने वाला कहता है परन्तु उस परमात्मा के तत्वज्ञान को तत्वदर्शी (धीराणाम्) सन्तजन ही बताऐंगे।

उनसे विनम्रता से पूछो। ऋषियों ने वेदों को पढ़ा उनके अनुसार तथा काल प्रेरणा से हठयोग से तप आदि साधनाऐं की। जिससे परमात्मा प्राप्ति नहीं हुई। उस साधना से सिद्धीयाँ प्राप्त करके चमत्कार करने लगे, आशीर्वाद देने लगे। साधारण व्यक्तियों को अत्यंत लाभ होने लगे जिस कारण से साधारण जनता उन ऋषियों की प्रत्येक बात पर अटूट विश्वास करने लगी। ऋषियों के शरणागत व्यक्ति ऋषियों के प्रवचन सुनते ऋषि जी कहते कि परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए नहीं तो मानव जन्म व्यर्थ है। अनुयाई कहते थे कि हे गुरुवर! आप जैसी कठिन साधना हम नहीं कर सकते। वे ऋषि जन अपने अनुयाईयों को कोई भी साधना करने को कह देते थे। अनुयाई अपने गुरुदेव ऋषि द्वारा बताई शास्त्रविरूद्ध साधना करने लगे। जिस उद्देश्य से साधना करते जैसे पुत्र प्राप्ति, पुत्र विवाह, धन वृद्धि, कष्ट निवारण आदि। उनमें से कुछेक को यह लाभ उन ऋषियों के आशीर्वाद से तथा अपने पूर्व जन्म के पुण्यों से प्राप्त हो जाता। परन्तु अनुयाईयों की शास्त्रविरूद्ध साधना जो उनके गुरू ऋषि ने बताई थी उस से कोई लाभ नहीं होता था। श्रद्धालु मानते थे कि हम जो भक्ति कर रहे हैं इसी से हमें लाभ हो रहा है। जिस कारण से उन ऋषियों के अनुयाई शास्त्रविरूद्ध साधना पर आरूढ़ होते चले गये। इसके पीछे काल भगवान (काल रूपी ब्रह्म, जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव का पिता है) की चाल है। वह चाहता है कि सर्व प्राणी शास्त्रविरूद्ध साधना करके मेरे (काल के) जाल में फंसे रहें। यदि कोई ज्ञानी व्यक्ति परमात्मा को वेदों के अपने आधार से समझ कर कि केवल एक पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने से मोक्ष होता है। वह वेदों के अनुसार साधना करके भी काल जाल से नहीं निकल सकता। क्योंकि वेदों में भक्ति विधि केवल ब्रह्म तक की है। पूर्ण मोक्ष तो परम अक्षर ब्रह्म की उपासना से ही सम्भव है। उसको तत्वदर्शी सन्त बताता है। वह तत्व दृष्टा सन्त उन ऋषियों को नहीं मिला। उन ऋषियों के अनुयाई अपने गुरूदेव जी के बताए अनुसार किसी भी मन्त्र का जाप करते, या किसी दरिया (नदी) में स्नान करने या कोई पत्थर का या मिट्टी का लींग बनाकर उसकी पूजा करते उनको उस ऋषि की भक्ति कमाई से आशीर्वाद द्वारा तथा अपनी पूर्व जन्म की भक्ति से वांच्छित लाभ मिल जाता। क्योंकि सत्ययुग में बहुत ही पुण्यकर्मी मानव जन्म लेते हैं। उनके पूर्व जन्म के शुभकर्म अत्यधिक होते हैं। अधिकतर उनकी मनोकामना पूर्ती पूर्व जन्म के पुण्यों से ही होती है। वे श्रद्धालु उस शास्त्र विरूद्ध साधना को सत्य जानकर करते थे तो वे समझते थे कि जो साधना (नाम जाप, मूर्ति पूजा या नदी स्नान) की है उसी से मेरी मनोकामना पूर्ण हुई है। वास्तव में वह लाभ उन साधकों को पूर्व जन्म के शुभ कर्मों से प्राप्त होता था। कुछ उस ऋषि गुरु के आशीर्वाद से प्राप्त होता था। उस ऋषि गुरु की भक्ति कम हो जाती थी। जैसे कोई धनी व्यक्ति अपने प्रशंसकों को अपने पास से धन दे देता है तो उसका धन क्षय हो जाता है। उसी से उसके साथियों को आर्थिक लाभ हो जाता है यदि वह धनी व्यक्ति अपना कारोबार न करके केवल धन बांटता रहता है तो वह निर्धन हो जाता है। इसी प्रकार ऋषिजन कुछ दिन जंगल में जाकर सिद्धियाँ प्राप्ति की साधना करके आते। पश्चात् उसी को अपने अनुयाईयों में बांट देते। अन्त में भक्तिहीन होकर पितर योनि को प्राप्त हो जाते थे। ऋषियों के ऋषि शिष्य अपने गुरू जी ऋषि से कहते हैं हे गुरूवर ! आपने जो मन्त्र जाप (ओम् गुरू, ओम् नमोंः भगवते् वासुदेवायः, ओम् ऐ नम् आदि) अमूक व्यक्ति को जाप करने को दिया तथा नदी में स्नान करने की

विधि बताई थी तथा मूर्ति पूजन, लींग पूजना का विधान बताया था जिससे उस व्यक्ति को मन वांछित फल प्राप्त हुआ। यह सर्व मन्त्र व विधि वेदों में कहीं नहीं लिखी है। इनको करना तो शास्त्रविरूद्ध साधना है। जो हानीकारक बताई है। आप यह शास्त्रविरूद्ध साधना किस लिए बताते हो? इस शास्त्रविधि विरूद्ध साधना से लाभ भी उनको हो रहा है। जबकि वेदों व गीता में लिखा है कि शास्त्रविधि को त्याग कर जो साधक मनमाना आचरण (पूजा) करता है उसको कोई लाभ नहीं होता। न तो उससे सिद्धी की प्राप्ति होती है। न कोई सुख होता है, न उसकी परम गति होती है (गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में भी प्रमाण है)। आपके द्वारा बताई विधि से लाभ मिलता है तो क्या वेदों व गीता में लिखा विवरण ठीक नहीं है। ऋषि जी उत्तर देते थे :- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में (तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में) लिखा है कि जिस तत्वज्ञान को वेद भी नहीं जानते उसको तत्वदर्शी सन्त जन (ऋषिजन) जानते हैं। वह तत्वज्ञान हमारे पास है। उसी के आधार से हम यह साधना बताते हैं। इस कारण वे ऋषियों के शिष्य ऋषिजन भी अपने गुरूदेव के अज्ञान को तत्वज्ञान जानकर शास्त्रविधि त्यागकर मनमुखी जाप करने लगे। जब किसी को लाभ नहीं होता तो वे अज्ञानी ऋषि गुरूजन अपने ऋषि शिष्यों को कठिन हठ योग करने को कहने लगे। किसी को जल में खड़ा होकर, किसी को शिर्षासन पर (ऊपर पैर करके सिर जमीन पर रख कर), किसी को पदमासन पर बैठकर साधना करने को कहने लगे। जिस कारण से उन शिष्य ऋषियों में कुछ अपने पूर्व जन्म के शुभ कर्मो से तथा सिद्धियाँ वर्तमान के हठयोग तप से तथा कुछ गुरूजी की कमाई से आर्शीवाद द्वारा(यदि उस ऋषि की शेष हो तो) सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती। उसके पश्चात् वो शिष्य स्वयं गुरू बनकर अपने अनुयाईयों को अन्य मनमुखी साधना बताने लगे। जिसकारण से सर्व भक्त समाज शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करने लगा है।

प्रमाण :- (1) श्री देवी पुराण छठा स्कन्ध अध्याय 10 पृष्ठ 414 पर महर्षि व्यास जी राजा जनमेजय को ज्ञान सुना रहे हैं कहा हे राजन् ! यह निश्चय है कि सतयुग में ब्राह्मण वेद के पूर्ण विद्वान थे।। वे भगवती जगदम्बा की निरन्तर आराधना करते थे। भगवती के दर्शन करने के लिए वे सदा ललायित रहते थे। गायत्री के ध्यान, प्राणायाम् और जप में वे अपना सारा समय व्यतीत करते थे। माया बीज का जाप करना उनका प्रधान कार्य था। प्रत्येक गाँव में शक्ति (दुर्गा) का मन्दिर स्थापित हो यह उन सतयुग के ब्राह्मणों की हार्दिक इच्छा रहती थी। तत्वज्ञान के पारगामी उन ब्राह्मणों द्वारा जो भी कर्म होता था। उस में सत्य, दया और शौच ये तीन गुण निहित रहते थे।(लेख समाप्त)

सार विचार :- उपरोक्त उल्लेख श्री देवी पुराण से है। इसमें कहा है कि सतयुग के ब्राह्मण वेद के पूर्ण विद्वान होते थे अर्थात् तत्वदर्शी होते थे। पूजा देवी की करते थे। गाँव-गाँव दुर्गा के मन्दिर बनवाना चाहते थे।

अन्य प्रमाण :– (2) श्री देवी पुराण प्रथम स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29 पर श्री ब्रह्मा जी के पूछने पर श्री श्री विष्णु जी ने कहा मैं श्री भगवती शक्ति के सदा आधीन रहता हूँ उसी के आधीन होकर मैं शेष शय्या पर सोता हूँ उत्पत्ति समय जागता हूँ। मैं निरन्तर उसी भगवती शक्ति (दुर्गा) का ध्यान करता हूँ मेरे विचार में इस शक्ति से बढकर कोई देवता नहीं है। मैं अधिकतर समय तप करने तथा राक्षसों का संहार करने में ही व्यतीत करता हूँ।

विशेष विचार :- विचार करने योग्य बात है कि वेदों में कहीं पर भी दुर्गा (प्रकृति) की पूजा करने का प्रावधान नहीं है। केवल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की साधना ॐ नाम के जाप द्वारा करने का

उल्लेख है। पूर्ण ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर पुरूष की पूजा से पूर्ण मोक्ष होता है। उसका ओम्-तत्-सत् मन्त्र जाप हैं जिस में तत् तथा सत् मन्त्र सांकेतिक हैं। जिनके विषय में तत्वदर्शी सन्त बताएगा। यह उल्लेख वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता में है। ब्रह्म साधना का ॐ (ओं) मन्त्र है। परन्तु यह भी पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है। इस प्रकार वेद ज्ञान हीनों को तत्वदर्शी कहा जाता था। तथा उनके द्वारा बताया भक्ति मार्ग सर्व श्रद्धालुओं ने ग्रहण कर लिया। जो व्यर्थ है। जबकि श्री देवी जी (दुर्गा जी) ने (श्री देवी पुराण के सातवें स्कन्ध के अध्याय 36 पृष्ठ 562 से 563 तक में) कहा है कि ''उस ब्रह्म का क्या स्वरूप है ?– यह बतलाया जाता है। जो प्रकाश स्वरूप, सबके अत्यन्त समीप में स्थित महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है। वह समस्त पूजा के ज्ञान से परे है– अर्थात् किसी कि बुद्धि में आने वाला नहीं है। यह तुम जानो। जो प्रकाश स्वरूप है, जो सुक्ष्म से भी अत्यन्त सुक्ष्म है। जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकों में निवास करने वाले प्राणी स्थित हैं। यह वह ''अक्षर ब्रह्म'' है। वह परम सत्य और अमृत–अविनाशी तत्व है। तुम उस वेधने योग्य लक्ष्य का तुम वेधन करो–मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ। उस एक परमात्मा को ही जानों दूसरी बातें छोड़ दो। वह परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से वर्तमान रहता है। इस विश्वात्मा अर्थात् ब्रह्म का ॐ नाम के जाप के साथ ध्यान करो। इस से अज्ञानमय अन्धकार से सर्वथा परे और संसार समुन्द्र से उस पार जो ब्रह्म है। उसको पा जाओगे। वह सबका आत्मा ब्रह्म–ब्रह्मलोक रूप दिव्य आकाश में स्थित है। उसे धीर पुरूष अर्थात् तत्वदर्शी सन्त (धीर–बुद्धिमान पुरूष) अपने विज्ञान (तत्वज्ञान) के द्वारा उस अविनाशी ब्रह्म को देख लेते हैं। उस पुरूषोतम् को देख लेने पर इस जीव की अविद्या नष्ट हो जाती है। वह निर्मल और निष्कलंक ब्रह्म प्रकाशमय पर दिव्य परम धाम में विराजित है। यह सम्पूर्ण विश्व सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म ही है। जो श्रेष्ठ पुरूष इस प्रकार अनुभव करते हैं वे ही कृतार्थ हैं। वे ब्रह्म को प्राप्त पुरूष नित्य प्रसन्नचित रहते हैं। (लेख समाप्त्)

सार विचार :- पूर्वोक्त उल्लेख में श्री देवी पुराण के छठे स्कन्ध के अध्याय 10 पृष्ठ 414 पर व्यास जी ने बताया है कि सतयुग के ब्राह्मण वेद के महाविद्वान अर्थात् तत्वदर्शी थे। वे देवी की अराधना करते थे। उपरोक्त उल्लेख में इसी श्री देवी पुराण में श्री देवी जी कह रहीं हैं कि उस ब्रह्म की उपासना करो उसका ॐ मन्त्र जाप करने का है। अन्य सर्व बातें त्याग दो। वह ब्रह्म, ब्रह्मलोक में है। उसी की पूजा से संसार समुद्र से उस पार जो ब्रह्म है उसको पा जाओगे। वह निर्मल और निष्कलंक ब्रह्म दिव्य धाम में विराजित है। श्री विष्णु भगवान तो (श्री देवी पुराण प्रथम स्कन्ध अ. 4 पृष्ठ 28-29) कह रहे हैं कि देवी दुर्गा से बढ़कर कोई भगवान नहीं है। मैं इसी की पूजा करता हूँ अन्य ऋषि जन भी देवी दुर्गा को ही प्रभु मानकर पूजा करते थे। उसके मन्दिर भी बनाए जाते थे। जबकि देवी दुर्गा (प्रकृति) कह रही है कि कोई अन्य पूर्ण परमात्मा है उसकी पूजा करनी चाहिए। इससे सिद्ध हुआ कि न तो श्री विष्णु जी को वेदों का ज्ञान है न अन्य ऋषियों को वेदों का ज्ञान था। केवल लोक वेद (सुना सुनाया क्षेत्रीय ज्ञान) ही सुनते सुनाते थे। श्री देवी यह भी कह रही है कि सर्व संसार ही ब्रह्म है। यह ज्ञान विचलित करने वाला है। इस से ऊपर का वेद ज्ञान है जो श्री देवी (दुर्गा) ने बताया है। ब्रह्म काल तथा दुर्गा (प्रकृति देवी) जी दोनों यथार्थ ज्ञान के साथ-2 भ्रमित ज्ञान भी प्रदान करते हैं। कारण यह है कि ये नहीं चाहते की काल ब्रह्म के अन्तर्गत प्राणियों को तत्वज्ञान हो जाए। इसलिए भ्रमित ज्ञान देकर ऋषि, महर्षि तथा देव व ब्राह्मण व श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी तत्वज्ञान से परिचित नहीं है। इसी कारण से सर्व का जन्म-मरण का चक्र

चलता रहता है। पूर्ण परमात्मा स्वयं इस ब्रह्म काल के लोक में प्रकट होकर तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करके तत्वज्ञान प्रदान करते हैं।

उदाहरण :- संक्षिप्त ब्रह्म पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के अध्याय ''अहिल्या संगम तीर्थ का महात्यम्'' पृष्ठ 158-159 श्री ब्रह्मा जी ने कहा :– मैंने एक सुन्दर कन्या की उत्पत्ति की युवा होने पर उसकी शादी करने का विचार आया। उस लड़की को पत्नी रूप में प्राप्त करने के लिए इन्द्र, वरूण, आदि कई देवता आए। मेरे से उस कन्या को पत्नी रूप में देने की प्रार्थना करने लगे। मैं उस कन्या का विवाह गौतम ऋषि से करना चाहता था। अधिक देवगण होने के कारण मैंने एक शर्त रखी की जो पृथ्वी की प्रदीक्षणा देकर (पृथ्वी का चक्कर लगाकर) सर्वप्रथम आएगा उसी के साथ अहिल्या नामक कन्या का विवाह किया जाएगा। सर्व देव चले गए। गौतम ऋषि ने एक गाय देखी जो बच्चे को जन्म दे रही थी। आधा बच्चा बाहर था आधा अन्दर। गौतम ऋषि ने उस सुरभी की पृथ्वी भाव से परीकृमा की। इसके साथ ही गौतम ऋषि ने शिव लींग की भी प्रदक्षिणा की और सर्वप्रथम लौट कर मेरे पास (ब्रह्मा के पास) आ गया। मैं (ब्रह्मा) भी उस कन्या अहिल्या का विवाह गौतम से करना चाहता था। गौतम ने मुझसे कहा '' कमलासन ! विश्वात्मन् आप को बारम्बार नमस्कार है। ब्रह्मन् ! मैने सारी वसुधा की प्रदक्षिणा कर ली ! (ब्रह्मा जी ने कहा है) मैंने ध्यान द्वारा देखा सब बातें जान कर गौतम से कहा ब्रह्मर्षे ! तुम्हीं को यह सुन्दर कन्या दी जाती है। वास्तव में तुमने पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर ली है। जो वेदों के लिए भी दुर्बाध है (अर्थात् जिस बात का ज्ञान वेदों में भी नहीं है) उस धर्म का स्वरूप तुम जानते हो। जो गाय आधा प्रसव कर चुकी हो वह सात द्वीपों वाली पृथ्वी के तुल्य है। उसकी प्रदक्षिणा की जाए तो समूची पृथ्वी की परिक्रमा हो जाती है। शिव लिंग की प्रदक्षिणा का भी यही फल है''

विचार करें :- श्री ब्रह्मा जी को काल सृष्टी में वेदों का उत्कृष्ट विद्वान माना जाता हैं उसके द्वारा कहे वचन वेद वचन माने जाते हैं। ब्रह्मा जी को वेदों का बिल्कुल ज्ञान नहीं है। इसी का प्रमाण उनके द्वारा बताए उपरोक्त ज्ञान से मिलता है। गौतम के मन में प्रेरणा काल ब्रह्म ने की तथा फिर ब्रह्म ने अपनी मनोकामना पूर्ति के लिए उस शास्त्रविरूद्ध साधना की पुष्टि अपने पुत्र रजगुण ब्रह्मा में प्रेतवत् प्रवेश होकर कर दी की गाय की प्रदक्षिणा और शिव लींग की प्रदक्षिणा का फल पूरी पृथ्वी की परिक्रमा का ही फल होता है। श्री ब्रह्मा जी के मुख से निकले वचनों को सर्व देवताओं तथा ऋषियों को स्वीकार करना पड़ता है। इस प्रकार इन पुराणों की रचना हुई। जो बाद में महर्षि वेद व्यास (कृष्ण द्वैपायान) ने लीपी बद्ध किया। विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 15 श्लोक 11 से 51 पृष्ठ 63 से 66 पर लिखा है ''पूर्व समय में वेद वेताओं (तत्वदर्शी सन्तों में) श्रैष्ठ एक कण्डु नामक मुनिश्वर थे। उसने गोमती नदी पर घोर तप किया। फिर एक प्रम्लोचा अप्सरा ने उनका तप खण्ड किया उसके साथ नौ सौ वर्ष विलास किया फिर वह चली गई। ***विचार करे :- पवित्र गीता जी जो वेदों का सारांश है, उसके अध्याय 16 व 17 तथा अध्याय 3 में प्रमाण है। हठ योग द्वारा घोर तप करना व्यर्थ है जैसे गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में कहा है कि जो व्यक्ति एक स्थान पर बैठकर तप को तपता है वह शास्त्रविरूद्ध साधक है। गीता अध्याय 17 श्लोक 5 तथा 6 में घोर तप करना मना है। श्री गौतम ऋषि, कण्डू आदि ऋषियों ने जो वेद विरूद्ध वचन कहे उनके कारण अन्य अनुयाईयों को उन ऋषियों की भक्ति कमाई से लाभ हुआ। जिस कारण से उन तत्वज्ञान हीन ऋषियों को तत्वेता(तत्वज्ञान को जानने वाला) कहा जाने लगा। जबकि पवित्र श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 4***

श्लोक 34 में वर्णित तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 में 1 से 4, 16 से 17 श्लोकों में बताई है कि जो सन्त या ऋषि उल्टे लटके संसार रूपी वृक्ष का विस्तृत विवरण बताए वह (वेदवित्) वेद के तात्पर्य को जानने वाला अर्थात् तत्वदर्शी सन्त है। जैसे ऊपर को जड़ (मूल) तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म जानों। जमीन से बाहर जो वृक्ष का हिस्सा तुरन्त दिखाई देता है। वह तना अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने की एक मोटी डार को क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म जानों तथा उस मोटी डार की तीन शाखाओं को रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तथा तमगुण शिव जी जानों, उन शाखाओं पर लगे पतों को अन्य संसारी प्राणी जानो। यह उपरोक्त ज्ञान स्वयं पूर्ण परमात्मा ही बताता है। वह स्वयं कुछ दिन इस काल के लोक में अतिथी की तरह रहता है। अपने तत्वज्ञान को लोकोक्तियों, दोहों व साखीयों तथा कविताओं (शब्दों-भजनों) के द्वारा उच्चारण करता है। उसी पूर्ण परमात्मा ने कलयुग में अवतरित हो कर सन् 1398 से सन् 1518 तक 120 वर्ष काशी में जुलाहे की भूमिका करके अपने तत्वज्ञान को बताया।

कबीर :- अक्षर पुरूष एक पेड़ है निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा है ये पात रूप संसार।।

यही तत्वदर्शी संत का प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20 में है। (कृप्या पढें इसी पुस्तक ''अध्यात्मिक ज्ञान गंगा'' में पृष्ठ 426 से 429 तक) जिस तत्वज्ञान का (संसार रूपी वृक्ष का प्रत्येक अंग का) ज्ञान किसी ऋषि व संत को नहीं था। वह स्वयं परमात्मा कबीर बन्दी छोड़ ने जी ने बताया था। जो वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा उजागर किया गया है। वह तत्वज्ञान वर्तमान में मुझ दास के अतिरिक्त किसी के पास नहीं है।

दूसरा कारण पुराण रचना का :- श्री ब्रह्मा जी सर्वप्रथम उत्पन्न हुए थे। जिस कारण से उनके वंशजों ने श्री ब्रह्मा जी को सर्वज्ञ मानकर संसार रचना का कारण व सर्व की रचना करने वाले परमेश्वर के विषय में जानना चाहा। देवी पूराण तीसरे स्कंद अध्याय 3 से 6 में श्री ब्रह्मा जी स्वयं कह रहे हैं कि जब मैं सचेत हुआ तो अपने आप को कमल के फूल पर बैठा पाया। मुझे नहीं पता इस अगाध जल में कहां से उत्पन्न हो गया। मुझे उत्पन्न करने वाला कौन प्रभु है?''। इससे सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी सर्वज्ञ नहीं हैं। उनके द्वारा बताया सृष्टी रचना का ज्ञान भी सत्य नहीं हो सकता। हाँ अपने जन्म के पश्चात् का वर्णन पुराणों में घटनाक्रम का ज्ञान ठीक है परन्तु जो भक्तिसाधना की विधि व परमेश्वर परिचय यदि वेदों से नहीं मिलता है वह असत्य है।

श्री शिव पुराण, श्री विष्णु पुराण, श्री ब्रह्म पुराण तथा श्री देवी पुराण आदि इन पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी भगवान हैं। श्री देवी पुराण के तीसरे स्कन्ध (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित है जिसके अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी) में ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान देते समय श्री ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद से कहा बेटा नारद जब मेरी उत्पति हुई तो मैं कमल के फूल पर बैठा हुआ था। मुझे नहीं पता कि मेरा उत्पति कर्ता कौन है? इस अगाध जल में मैं कैसे उत्पन्न हो गया- - - - - - - - - - - - - - - - - - -''

श्री ब्रह्मा जी द्वारा दिया गया पुराणों का ज्ञान अधूरा है। सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है क्योंकि श्री ब्रह्मा जी ने ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान भी देने का प्रयत्न किया है। जो संस्य युक्त तथा सुना सुनाया है जो तोड़-मरोड़ कर बताया है। क्योंकि श्री ब्रह्माजी को पूर्ण परमात्मा एक ऋषि के रूप में अग्नि ऋषि के नाम से प्रकट होकर मिले थे तथा पांचवें शवस्म (सुक्ष्म) वेद से सृष्टी रचना का ज्ञान व

काल का जाल समझाया था। श्री ब्रह्मा जी ने उस ऋषि से उपदेश ग्रहण किया। परन्तु बाद में काल रूपी ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी की बुद्धि बदल दी, अन्दर से प्रेरणा की कोई पांचवां वेद नहीं है केवल चार ही वेद हैं। इन्हीं का ज्ञान श्रेष्ठ है अन्य किसी की बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए। तू जगत का ज्ञान दाता है तुझे किसी से ज्ञान ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है।

इस कारण से श्री ब्रह्मा जी ने परमेश्वर से सुने ज्ञान को सत्य न मानकर अपनी बुद्धि द्वारा काल रूपी ब्रह्म की गुप्त प्रेरणा से उसे तोड़-मरोड़ कर अपने वंशजों को बताया जो पुराणों में लिपीबद्ध है। श्री ब्रह्म जी ने अपने जन्म के पश्चात् ही सत्य घटनाओं का सत्य विवरण बताया है। जो पूर्वोक्त पुराणों में लिखा है।

जिन्दा वेश धारी परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! आप जो यह तीर्थ यात्रा करते हो इसका गीता जी में कोई विवरण नहीं हैं।

''तीर्थ तथा धाम क्या है''

"तीर्थ तथा धाम की जानकारी"

किसी साधक ऋषि जी ने किसी स्थान या जलाशय पर बैठ कर साधना की या अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन किया। वह अपनी भक्ति कमाई करके साथ ले गया तथा अपने ईष्ट लोक को प्राप्त हुआ। उस साधना स्थल का बाद में तीर्थ या धाम नाम पड़ा। अब कोई उस स्थान को देखने जाए कि यहां कोई साधक रहा करता था। उसने बहुतों का कल्याण किया। अब न तो वहाँ संत जी है, जो उपदेश दे। वह तो अपनी कमाई करके चला गया।

विचार करें :- कृप्या तीर्थ व धाम को हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानें। (एक डेढ़ फुट का लोहे का गोल पात्र लगभग नौ इंच परिधि का उखल जैसा होता है तथा डेढ़ फुट लम्बा तथा दो इन्च परिधि का गोल लोहे का डंडा-सा मूसल जैसा होता है जो सामग्री व दवाईयाँ आदि कूटने के काम आता है, उसे हमोमदस्ता (हमामदस्ता) कहते हैं।) एक व्यक्ति अपने पड़ौसी का हमोम दस्ता मांग कर लाया। उसने हवन की सामग्री कूटी तथा मांज-धोयकर लौटा दिया। जिस कमरे में हमोम दस्ता रखा था उस कमरे में सुगंध आने लगी। घर के सदस्यों ने देखा कि यह सुगन्ध कहां से आ रही है तो पता चला कि हमोम दस्ते से आ रही है। वे समझ गए कि पड़ौसी ले गया था, उसने कोई सुगंध युक्त वस्तु कूटी है। कुछ दिन बाद वह सुगंध भी आनी बंद हो गई।

इसी प्रकार तीर्थ व धाम को एक हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानों। जैसे सामग्री कूटने वाले ने अपनी सर्व वस्तु पोंछ कर रख ली। खाली हमोम दस्ता लौटा दिया। अब कोई उस हमोम दस्ते को सूंघकर ही कृत्यार्थ माने तो नादानी है। उसको भी सामग्री लानी पड़ेगी, तब पूर्ण लाभ होगा।

ठीक इसी प्रकार किसी धाम व तीर्थ पर रहने वाला पवित्र आत्मा तो राम नाम की सामग्री कूट कर झाड़-पौंछ कर अपनी सर्व भक्ति साधना की कमाई को साथ ले गया। बाद में अनजान श्रद्धालु, उस स्थान पर जाने मात्र से कल्याण समझें तो उनके मार्ग दर्शकों (गुरुओं) की शास्त्र विधि रहित बताई साधना का ही परिणाम है। उस महान आत्मा सन्त की तरह प्रभु साधना करने से ही कल्याण सम्भव है। उसके लिए तत्वदर्शी संत की खोज करके उससे उपदेश लेकर आजीवन भक्ति करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। शास्त्र विधि अनुकूल सत साधना मुझ दास

(रामपाल दास) के पास उपलब्ध है कृप्या निःशुल्क प्राप्त करें।

''तीर्थ स्थापना के प्रमाण''

1. शुक्र तीर्थ कैसे बना? :- श्री ब्रह्मा पुराण लेखक कृष्णद्वेपायन अर्थात व्यास जी प्रकाशक गीता प्रैस गोरखपुर पृष्ठ 167-168 पर भृगु ऋषि का पुत्र कवि अर्थात शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर जहाँ भगवान महेश्वर की आराधना करके विद्या पायी थी, वह स्थान शुक्र तीर्थ कहलाता है।

2. ➽ सरस्वती संगम तीर्थ तथा पुरूरव तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 172-173 पर एक दिन राजा पुरूरवा, ब्रह्मा जी की सभा में गये, वहाँ ब्रह्मा जी की पुत्री सरस्वती को देखकर उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने हाँ कर दी। सरस्वती नदी के तट पर सरस्वती तथा पुरूरवा ने अनेक वर्षो तक संभोग (सैक्स) किया। एक दिन ब्रह्मा ने उनको विलास करते देख लिया। अपनी बेटी को शाप दे दिया। वह नदी रूप में समा गई। जहाँ पर पुरूरवा तथा सरस्वती ने संभोग किया था। वह पवित्र तीर्थ सरस्वती संगम नाम से विख्यात हुआ। जहाँ पर पुरूरवा ने महादेव की भक्ति की वह स्थान पुरूरवा तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

3. वृद्धा संगम तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 173 से 175 एक गौतम ऋषि थे। उनका एक हजार वर्ष की आयु तक विवाह नहीं हुआ। वह वेद ज्ञान भी नहीं पढ़ा था केवल गायत्री मंत्र याद था। उसी का जाप करता था। एक दिन वह एक पर्वत पर एक गुफा में गया। वहाँ पर नब्बे हजार वर्ष की आयु की एक वृद्धा स्त्री मिली। दोनों ने विवाह किया। एक दिन वशिष्ठ ऋषि तथा वाम देव ऋषि वहाँ गुफा में अन्य ऋषियों के साथ आए। उन्होंने गौतम ऋषि का उपहास किया कहा हे गौतम जी! यह वृद्धा आप की माँ है या दादी माँ? उनके जाने के पश्चात् दोनों बहुत दुःखी हुए। अगस्त ऋषि की राय से गोदावरी नदी के गौतमी तट पर गये और कठोर तपस्या करने लगे। उन्होंने भगवान शंकर और विष्णु का स्तवन किया तथा पत्नी के लिए गंगा जी को भी खुश किया। गंगा ने उनके तप से प्रशन्न होकर कहा :— ब्राह्मण आप मन्त्र पढ़ते हुए मेरे जल से अपनी पत्नी का अभिषेक करो। इससे वह रूपवती हो जाएगी। गंगा जी के आदेश से दोनों ने एक दुसरे के लिए ऐसा ही किया। दोनों पति—पत्नी सुन्दर रूप वाले हो गये। वह जल जो मन्त्रों का था। उससे वृद्धा नाम नदी बह चली। उसी स्थान पर गौतम ऋषि ने उस वृद्धा के साथ जो युवती हो गई थी। मन भरकर संभोग किया। तब से उस स्थान का नाम ''वृद्धा संगम'' तीर्थ हो गया। वहीं पर गौतम ऋषि ने साधनार्थ एक शिवलिंग स्थापित किया था। वह भी वृद्धा के नाम पर वृद्वेश्वर कहलाया। इस वृद्वा संगम तीर्थ की कथा सब पापों का नाश करने वाली है। वहाँ किया हुआ स्नान—दान सब मनोरथों को सिद्ध करने वाला है।

4. अश्वतीर्थ अर्थात् भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम की स्थापना :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 162-163 तथा श्री मार्कण्डेय पुराण पृष्ठ 173 से 175 पर लिखा है ''महर्षि कश्यप के ज्येष्ठ पुत्र आदित्य (सूर्य) है, उनकी पत्नी का नाम उषा है (मार्कण्डेय पुराण में सूर्य की पत्नी का नाम संज्ञा लिखा है जो महर्षि विश्वकर्मा की बेटी है) सूर्य पत्नी अपने पति सूर्य के तेज को सहन न कर सकने के कारण दुःखी रहती थी। एक दिन अपनी सिद्धि शक्ति से अन्य स्त्री अपनी ही स्वरूप की उत्पन्न की उसे कहा आप मेरे पति की पत्नी बन कर रहो तेरी तथा मेरी शक्ल समान है। आप यह भेद मेरी सन्तान तथा पति को भी नहीं बताना यह कह कर संज्ञा (उषा) तप करने के उद्देश्य से उत्तर कुरूक्षेत्र में चली

गई वहाँ घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या करने लगी। भेद खुलने पर सूर्य भी घोड़े का रूप धारण करके वहाँ गया जहाँ संज्ञा (उषा) घोड़ी रूप में तपस्या कर रही थी। घोड़े रूप में सूर्य ने घोड़ी रूप धारी संज्ञा से संभोग करना चाहा। उषा (संज्ञा) घोड़ी रूप में वहाँ से भाग कर गौतमी नदी के तट पर आई घोड़ा रूप धारी सूर्य ने भी पीछा किया। वहाँ आकर घोड़ी रूप में अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूप धारी पति को न पहचान कर उस की ओर अपना पृष्ठ भाग न करके मुख की ओर से ही सामना किया। दोनों की नासिका मिली। सूर्य वासना के वेग को रोक नहीं सके तथा घोड़ी रूप धारी उषा (संज्ञा) के मुख ओर ही संभोग करने के उद्देश्य से प्रयत्न किया। नासिका द्वारा वीर्य प्रवेश से घोड़ी रूप धारी उषा के मुख से दो पुत्र अश्वनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न हुए तथा शेष वीर्य जमीन पर गिरने से रेवन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह स्थान अश्व तीर्थ भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम नाम से विख्यात हुआ। उसी स्थान पर सूर्य की बेटियों का अरूणा तथा वरूणा नामक नदियों के रूप में समागम हुआ। उसमें भिन्न–2 देवताओं और तीर्थों का पृथक–पृथक समागम हुआ है। उक्त संगम में सताईस हजार तीर्थों का समुदाय है। वहाँ किया हुआ स्नान व दान अक्षय पुण्य देने वाला है। नारद! उस तीर्थ के स्मरण से कीर्तन और श्रवण से भी मनुष्य सब पापों से मुक्त हो धर्मवान् और सुखी होता है।

5. जन स्थान तीर्थ की स्थापना :- श्री ब्रह्म पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) पृष्ठ 161-162 पर ऋषि याज्ञवल्क्य से राजा जनक ने पूछा कि हे द्विजश्रेष्ठ! बड़े–2 मुनियों ने निर्णय किया है कि भोग और मोक्ष दोनों श्रेष्ठ हैं। आप बताऐं! भोग से भी मुक्ति प्राप्त कैसे होती है? ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने कहा इस प्रश्न का उत्तर आप श्वशुर वरूण जी ठीक–2 बता सकते हैं। चलो उनसे पूछते हैं। दोनों भगवान वरूण के पास गए तथा वरूण ने बताया कि ''वेद में यह मार्ग निश्चित किया है कि कर्म न करने की उपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चारों पुरूषार्थ कर्म से बंधे हुए हैं। नृप श्रेष्ठ! कर्म द्वारा सब प्रकार से साध्यों की सिद्धी होती है, इसलिए मनुष्यों को सब तरह से वैदिक कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए। इससे वे इस लोक में भोग तथा मोक्ष दोनों प्राप्त करते हैं। अकर्म से कर्म पवित्र इसके पश्चात् राजा जनक ने ऋषि याज्ञवल्क्य को पुरोहित बनाकर गंगा के तट पर अनेकों यज्ञ किए। इसलिए उस स्थान का नाम ''जन स्थान'' तीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। उस तीर्थ का चिन्तन करने, वहाँ जाने और भक्ति पूर्वक उसका सेवन (पूजन) करने से मनुष्य सब अभिलाषित वस्तुओं को पाता है और मोक्ष का भोगी होता है।

उपरोक्त पुराणों के लेखों का निष्कर्ष :- प्रमाण संख्या 1 में कहा है कि भृगु ऋषि के पुत्र शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर साधना की थी जिस कारण से वह स्थान शुक्र तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। यदि कोई उस शुक्र तीर्थ में केवल स्नान व वहाँ पर बैठे कामचोर व्यक्तियों को दान करने से ही मोक्ष मानता है वह ज्ञानहीन व्यक्ति है। परमात्मा की साधना जैसे शुक्राचार्य ने की थी। वैसी ही साधना किसी भी स्थान पर कोई साधक करेगा तो शुक्राचार्य को जो लाभ हुआ था वह प्राप्त होगा। यही स्थिती प्रमाण संख्या 5 की समझें की गंगा के तट पर जिस स्थान पर राजा जनक ने अनेकों अश्वमेघ यज्ञ किए। एक अश्वमेघ यज्ञ में करोंड़ों रूपये (वर्तमान में अरबों रूपये) खर्च हुए थे। तब राजा जनक को स्वर्ग प्राप्ति हुई थी। यदि कोई अज्ञानी कहे कि उस जन स्थान तीर्थ पर जाने व स्नान करने तथा वहाँ उपस्थित ऐबी (शराब,तम्बाकू व मांस

सेवन करने वाले) व्यक्तियों कों दान करने से राजा जनक वाला लाभ मिलेगा। क्या यह बात न्याय संगत है? इतना कुछ करने के पश्चात् भी राजा जनक मुक्त नहीं हो सका। वही आत्मा कलयुग में सन्त नानक जी के रूप में श्री कालु राम महता के घर जन्मा। फिर पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरु कबीर परमेश्वर से नाम प्राप्त करके की तब मोक्ष प्राप्त हुआ। प्रमाण संख्या 2 में ब्रह्मा की बेटी सरस्वती ने पूरूरवा नामक राजा के साथ अपने पिता से छुपकर सैक्स (संभोग) किया। जब पिता जी ने उन्हें ऐसा करते देखा तो श्राप दे दिया। वह स्थान जहाँ पर सरस्वती ने तथा राजा पुरूरवा ने दुराचार किया उस स्थान का नाम सरस्वती संगत तीर्थ विख्यात हुआ।

विचार करें :- क्या ऐसे स्थान पर जाने व स्नान करने से कोई लाभ हो सकता है? प्रमाण संख्या 3 में कहा है कि एक गौतम नामक ऋषि ने एक हजार वर्ष की आयु में नब्बे हजार वर्ष की आयु की वृद्धा से विवाह किया। अपने को युवा बनाने के उद्देश्य से दोनों ने गोदावरी नदी के गौतमी तट पर कठोर तप किया। पश्चात् मन्त्रों से जल मन्त्रित करके एक-दूसरे पर डाला। दोनों युवा हो गये। तत्पश्चात् उस स्थान पर दोनों ने मन भर कर संभोग अर्थात् विलास (सैक्स) किया। वह स्थान वृद्धा संगम तीर्थ कहलाया।

विचार करने योग्य बात है कि ऐसे स्थानों पर जाने से आत्मकल्याण के स्थान पर पतन ही होगा। आत्म उद्धार नहीं। प्रमाण संख्या 4 में कहा है कि सूर्य की पत्नी घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या कर रही थी। सूर्य काम वासना (सैक्स प्रैसर) के वश होकर घोड़ा रूप धारण करके घोड़ी रूप धारी अपनी पत्नी के पास गया। घोड़ी ने उसे अपने पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया। सूर्य इतना सैक्स प्रैसर (काम वासना के दबाव) में था कि उसने घोड़ी के मुख की ओर ही संभोग क्रिया प्रारम्भ की जिस कारण से उन्हें तीन पुत्र प्राप्त हुए। वह स्थान अश्व तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। वहीं पर सूर्य की दो बेटियाँ जाकर नदी बन कर बहने लगी। जिस कारण से वही स्थान पंचवटी आश्रम नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। उसी स्थान को भानू तीर्थ भी कहा जाता है। इस तीर्थ का लाभ लिखा है कि इसके स्मरण से तथा कीर्तन करने से तथा इसकी कथा श्रवण करने से सब पापों से मुक्त होकर धर्मवान और सुखी होता है विचार करो पुण्यात्माओं क्या ऐसी कथाओं को सुनने तथा ऐसे स्थान पर जाने से आत्म कल्याण सम्भव है। इसलिए शास्त्रों (पाचों वेदों, गीता जी) के अनुसार भक्ति करने से सर्व पापों से मुक्त होकर पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

चितशुद्ध तीर्थ अर्थात् तत्वदर्शी सन्त का सत्संग सर्व तीर्थो से श्रेष्ठ :- श्री देवी पुराण छठा स्कन्द अध्याय 10 पृष्ठ 417 पर लिखा है व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा राजन्! यह निश्चय है कि तीर्थ देह सम्बन्धी मैल को साफ कर देते हैं, किन्तु मन के मैल को धोने की शक्ति तीर्थों में नहीं है। चितशुद्ध तीर्थ गंगा आदि तीर्थों से भी अधिक पवित्र माना जाता है। यदि भाग्यवश चितशुद्ध तीर्थ सुलभ हो जाए तो अर्थात् तत्वदर्शी संतों का सत्संग रूपी तीर्थ प्राप्त हो जाए तो मानसिक मैल के धुल जाने में कोई संदेह नहीं। परन्तु राजन्! इस चितशुद्ध तीर्थ को प्राप्त करने के लिए ज्ञानी पुरूषों अर्थात् तत्वदर्शी सन्तों के सत्संग की विशेष आवश्यकता है। वेद, शास्त्र, व्रत, तप, यज्ञ और दान से चितशुद्ध होना बहुत कठिन है। वशिष्ठ जी ब्रह्मा जी के पुत्र थे। उन्होंने वेद और विद्या का सम्यक

प्रकार से अध्ययन किया था। गंगा के तट पर निवास करते थे। तथापि द्वेष के कारण उनका विश्वामित्र के साथ वैमनस्य हो गया और दोनों ने परस्पर श्राप दे दिए तथा उनमें भयंकर युद्ध होने लगा। इससे सिद्ध हुआ कि संतों के सत्संग से चितशुद्ध कर लेना अति आवश्यक है अन्यथा वेद ज्ञान, तप, व्रत, तीर्थ, दान तथा धर्म के जितने साधन है वे सबके सब कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

विशेष विचार :- उपरोक्त श्री देवी पुराण के लेख से स्पष्ट है कि तत्वदर्शी सन्तों के सत्संग से श्रेष्ठ कोई भी तीर्थ नहीं है तथा तत्वदृष्टा सन्त के बताए मार्ग से साधना करने से कल्याण सम्भव है। तीर्थ, व्रत, तप, दान आदि व्यर्थ प्रयत्न है। तत्वदर्शी सन्त के अभाव के कारण केवल चारों वेदों में वर्णित भक्ति विद्यी से पूर्ण मोक्ष लाभ नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है :-

सतगुरु बिन वेद पढ़ें जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।
सतगुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुष छिड़ै मूढ किसाना।।
अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै सर्व फल सतगुरू चरणा पावै।।
कबीर तीर्थ करि–करि जग मुआ, उड़ै पानी नहाय। सत्नाम जपा नहीं, काल घसीटें जाय।।

"श्री अमरनाथ धाम की स्थापना कैसे हुई?"

भगवान शंकर जी ने पार्वती जी को एकांत स्थान पर उपेदश दिया था जिस कारण से माता पार्वती जी इतनी मुक्त हो गई कि जब तक प्रभु शिव जी (तमोगुण) की मृत्यु नहीं होगी, तब तक उमा जी की भी मृत्यु नहीं होगी। सात ब्रह्मा जी (रजोगुण) की मृत्यु के उपरान्त भगवान विष्णु (सतोगुण) की मृत्यु होगी। सात विष्णु जी की मृत्यु के पश्चात् शिवजी की मृत्यु होगी। तब माता पार्वती जी भी मृत्यु को प्राप्त होगी, पूर्ण मोक्ष नहीं हुआ। फिर भी जितना लाभ पार्वती जी को हुआ वह भी अधिकारी से उपदेश मंत्र ले कर आजीवन जाप करने से हुआ। बाद में श्रद्धालुओं ने उस स्थान की याद बनाए रखने के लिए मन्दिर नुमा यादगार बनाकर उसको सुरक्षित रखा तथा दर्शक जाने लगे।

जैसे यह दास (सन्त रामपाल) स्थान-स्थान पर जा कर सत्संग करता है। वहाँ पर खीर व हलवा भी बनाऐं जाते हैं। जो भक्तात्मा उपदेश प्राप्त कर लेता है, उसका कल्याण हो जाता है। सत्संग समापन के उपरान्त सर्व टैंट आदि उखाड़ कर दूसरे स्थान पर सत्संग के लिए चले जाते हैं, पूर्व स्थान पर केवल मिट्टी या ईंटों की बनाई भट्ठी व चूल्हे शेष रह जाते हैं। फिर कोई उसी शहर के व्यक्ति से कहे कि आओ आप को वह स्थान दिखा कर लाता हूँ, जहां संत रामपाल दास जी का सत्संग हुआ था, खीर बनाई थी। बाद में उन भट्ठियों को देखने जाने वाले को न तो खीर मिले, न ही सत्संग के अमृत वचन सुनने को मिले, न ही उपदेश प्राप्त हो सकता जिससे कल्याण हो सके। उसके लिए संत ही खोजना पड़ेगा, जहां सत्संग चल रहा हो, वहाँ पर सर्व कार्य सिद्ध होंगे।

ठीक इसी प्रकार तीर्थों व धामों पर जाना तो उस यादगार स्थान रूपी भट्ठी को देखना मात्र ही है।

यह पवित्र गीता जी में वर्णित न होने से शास्त्र विरूद्ध हुई। जिससे कोई लाभ नहीं (प्रमाण

पवित्र गीता अध्याय 16 मंत्र 23-24)।

तत्व ज्ञान हीन सन्तों व महंतों तथा आचार्यों द्वारा भ्रमित श्रद्धालु तीर्थों व धामों पर आत्म कल्याणार्थ जाते हैं। श्री अमरनाथ जी की यात्रा पर गए श्रद्धालु तीन-चार बार बर्फानी तुफान में दब कर मृत्यु को प्राप्त हुए। प्रत्येक बार मरने वालों की संख्या हजारों होती थी। विचारणीय विषय है कि यदि श्री अमरनाथ जी के दर्शन व पूजा लाभदायक होती तो क्या भगवान शिव उन श्रद्धालुओं की रक्षा नहीं करते? अर्थात् प्रभु शिव जी भी शास्त्र विरूद्ध साधना से अप्रसन्न हैं।

''वैष्णो देवी के मन्दिर की स्थापना कैसे हुई?''

जब सती जी (उमा देवी) अपने पिता राजा दक्ष के हवन कुण्ड में छलांग लगाने से जलकर मृत्यु को प्राप्त हुई। भगवान शिव जी सती जी के अद्ध जले शरीर की अस्थियों के कंकाल को मोहवश सती जी (पार्वती जी) जान कर दस हजार वर्ष तक कंधे पर लिए पागलों की तरह घूमते रहे। भगवान विष्णु जी ने सुदर्शन चक्र से सती जी के कंकाल को छिन्न-भिन्न कर दिया। जहां धड़ गिरा वहाँ पर उस को जमीन में गाढ़ दिया गया। इस धार्मिक घटना की याद बनाए रखने के लिए उसके उपर एक मन्दिर जैसी यादगार बना दी कि कहीं आने वाले समय में कोई यह न कह दे कि पुराण में गलत लिखा है। उस मन्दिर में एक स्त्री का चित्र रख दिया उसे वैष्णो देवी कहने लगे। उसकी देख-रेख व श्रद्धालु दर्शकों को उस स्थान की कहानी बताने के लिए एक नेक व्यक्ति नियुक्त किया गया। उसको अन्य धार्मिक व्यक्ति कुछ वेतन देते थे। बाद में उसके वंशजों ने उस पर भेंट (दान) लेना प्रारम्भ कर दिया तथा कहने लगे कि एक व्यक्ति का व्यापार ठप्प हो गया था, माता के सौ रूपये संकल्प किए, एक नारियल चढ़ाया। वह बहुत धनवान हो गया। एक निःसन्तान दम्पति था, उसने माता के दो सौ रूपए, एक साड़ी, एक सोने का गले का हार चढ़ाने का संकल्प किया। उसको पुत्र प्राप्त हो गया।

इस प्रकार भोली आत्माऐं इन दन्त कथाओं पर आधारित होकर अपनी पवित्र गीता जी तथा पवित्र वेदों को भूल गए, जिसमें वह सर्व साधनाएं शास्त्र विधि रहित लिखी हैं। जिसके कारण न कोई सुख होता है, न कोई कार्य सिद्ध होता है, न ही परम गति अर्थात् मुक्ति होती है। (प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 मंत्र 23-24)। इसी प्रकार जहां देवी की आँखे गिरी वहाँ नैना देवी का मन्दिर व जहां जिह्वा गिरी वहाँ श्री ज्वाला जी के मन्दिर तथा जहां धड़ गिरा वहाँ वैष्णो देवी के मन्दिर की स्थापना हुई।

विशेषः- वैष्णो देवी पर दर्शनार्थ जाने वालों में से बहुत से श्रद्धालु दुर्घटना से मृत्यु को प्राप्त होते हैं। एक समय गांव लखन माजरा (जि. रोहतक) के पास दो रोडवेज की बसें आपस में टकराई जिनमें लगभग 30 व्यक्ति मारे गये, मरने वालों की संख्या उस बस में अधिक थी, जो वैष्णों देवी से आई थी।

"पुरी में श्री जगन्नाथ जी का मन्दिर अर्थात् धाम कैसे बना"

उड़ीसा प्रांत में एक इन्द्रदमन नाम का राजा था। वह भगवान श्री कृष्ण जी का अनन्य भक्त था। एक रात्री को श्री कृष्ण जी ने राजा को स्वपन में दर्शन देकर कहा कि जगन्नाथ

नाम से मेरा एक मन्दिर बनवा दे। श्री कृष्ण जी ने यह भी कहा था कि इस मन्दिर में मूर्ति पूजा नहीं करनी है। केवल एक संत छोड़ना है जो दर्शकों को पवित्र गीता अनुसार ज्ञान प्रचार करे। समुद्र तट पर वह स्थान भी दिखाया जहाँ मन्दिर बनाना था। सुबह उठकर राजा इन्द्रदमन ने अपनी पत्नी को बताया कि आज रात्री को भगवान श्री कृष्ण जी दिखाई दिए। मन्दिर बनवाने के लिए कहा है। रानी ने कहा शुभ कार्य में देरी क्या? सर्व सम्पत्ति उन्हीं की दी हुई है। उन्हीं को समर्पित करने में क्या सोचना है? राजा ने उस स्थान पर मन्दिर बनवा दिया जो श्री कृष्ण जी ने स्वपन में समुद्र के किनारे पर दिखाया था। मन्दिर बनने के बाद समुद्री तुफान उठा, मन्दिर को तोड़ दिया। निशान भी नहीं बचा कि यहाँ मन्दिर था। ऐसे राजा ने पाँच बार मन्दिर बनवाया। पाँचों बार समुद्र ने तोड़ दिया।

राजा ने निराश होकर मन्दिर न बनवाने का निर्णय ले लिया। यह सोचा कि न जाने समुद्र मेरे से कौन-से जन्म का प्रतिशोध ले रहा है। कोष रिक्त हो गया, मन्दिर बना नहीं। कुछ समय उपरान्त पूर्ण परमेश्वर (कविर्देव) ज्योति निरंजन (काल) को दिए वचन अनुसार राजा इन्द्रदमन के पास आए तथा राजा से कहा आप मन्दिर बनवाओ। अब के समुद्र मन्दिर (महल) नहीं तोड़ेगा। राजा ने कहा संत जी मुझे विश्वास नहीं है। मैं भगवान श्री कृष्ण (विष्णु) जी के आदेश से मन्दिर बनवा रहा हूँ। श्री कृष्ण जी समुद्र को नहीं रोक पा रहे हैं। पाँच बार मन्दिर बनवा चुका हूँ, यह सोच कर कि कहीं भगवान मेरी परीक्षा ले रहे हों। परन्तु अब तो परीक्षा देने योग्य भी नहीं रहा हूँ क्योंकि कोष भी रिक्त हो गया है। अब मन्दिर बनवाना मेरे वश की बात नहीं। परमेश्वर ने कहा इन्द्रदमन जिस परमेश्वर ने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है, वही सर्व कार्य करने में सक्षम है, अन्य प्रभु नहीं। मैं उस परमेश्वर की वचन शक्ति प्राप्त हूँ। मैं समुद्र को रोक सकता हूँ (अपने आप को छुपाते हुए यर्थाथ कह रहे थे)। राजा ने कहा कि संत जी मैं नहीं मान सकता कि श्री कृष्ण जी से भी कोई प्रबल शक्ति युक्त प्रभु है। जब वे ही समुद्र को नहीं रोक सके तो आप कौन से खेत की मूली हो। मुझे विश्वास नही होता तथा न ही मेरी वितिय स्थिति मन्दिर (महल) बनवाने की है। संत रूप में आए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने कहा राजन् यदि मन्दिर बनवाने का मन बने तो मेरे पास आ जाना मैं अमूक स्थान पर रहता हूँ। अब के समुद्र मन्दिर को नहीं तोड़ेगा। यह कह कर प्रभु चले आए।

उसी रात्री में प्रभु श्री कृष्ण जी ने फिर राजा इन्द्रदमन को दर्शन दिए तथा कहा इन्द्रदमन एक बार फिर महल बनवा दे। जो तेरे पास संत आया था उससे सम्पर्क करके सहायता की याचना कर ले। वह ऐसा वैसा संत नहीं है। उसकी भक्ति शक्ति का कोई वार-पार नहीं है।

राजा इन्द्रदमन नींद से जागा, स्वपन का पूरा वृतान्त अपनी रानी को बताया। रानी ने कहा प्रभु कह रहे हैं तो आप मत चुको। प्रभु का महल फिर बनवा दो। रानी की सद्भावना युक्त वाणी सुन कर राजा ने कहा अब तो कोष भी खाली हो चुका है। यदि मन्दिर नहीं बनवाऊंगा तो प्रभु अप्रसन्न हो जायेंगे। मैं तो धर्म संकट में फंस गया हूँ। रानी ने कहा मेरे पास गहने रखे हैं। उनसे आसानी से मन्दिर बन जायेगा। आप यह गहने लो तथा प्रभु के आदेश का पालन करो, यह कहते हुए रानी ने सर्व गहने जो घर रखे थे तथा जो पहन रखे थे निकाल कर प्रभु

के निमित अपने पति के चरणों में समर्पित कर दिये। राजा इन्द्रदमन उस स्थान पर गया जो परमेश्वर ने संत रूप में आकर बताया था। कबीर प्रभु अर्थात् अपरिचित संत को खोज कर समुद्र को रोकने की प्रार्थना की। प्रभु कबीर जी (कविर्देव) ने कहा कि जिस तरफ से समुद्र उठ कर आता है, वहाँ समुद्र के किनारे एक चौरा (चबूतरा) बनवा दे। जिस पर बैठ कर मैं प्रभु की भक्ति करूंगा तथा समुद्र को रोकूंगा।

राजा ने एक बड़े पत्थर को कारीगरों से चबूतरा जैसा बनवाया, परमेश्वर कबीर उस पर बैठ गए। छटी बार मन्दिर बनना प्रारम्भ हुआ। उसी समय एक नाथ परम्परा के सिद्ध महात्मा आ गए। नाथ जी ने राजा से कहा राजा बहुत अच्छा मन्दिर बनवा रहे हो, इसमें मूर्ति भी स्थापित करनी चाहिए। मूर्ति बिना मन्दिर कैसा? यह मेरा आदेश है। राजा इन्द्रदमन ने हाथ जोड़ कर कहा नाथ जी प्रभु श्री कृष्ण जी ने मुझे स्वपन में दर्शन दे कर मन्दिर बनवाने का आदेश दिया था तथा कहा था कि इस महल में न तो मूर्ति रखनी है, न ही पाखण्ड पूजा करनी है। राजा की बात सुनकर नाथ ने कहा स्वपन भी कोई सत होता है। मेरे आदेश का पालन कीजिए तथा चन्दन की लकड़ी की मूर्ति अवश्य स्थापित कीजिएगा। यह कह कर नाथ जी बिना जल पान ग्रहण किए उठ गए। राजा ने डर के मारे चन्दन की लकड़ी मंगवाई तथा कारीगर को मूर्ति बनाने का आदेश दे दिया। एक मूर्ति श्री कृष्ण जी की स्थापित करने का आदेश श्री नाथ जी का था। फिर अन्य गुरुओं-संतों ने राजा को राय दी कि अकेले प्रभु कैसे रहेंगे? वे तो श्री बलराम को सदा साथ रखते थे। एक ने कहा बहन सुभद्रा तो भगवान श्री कृष्ण जी की लाड़ली बहन थी, वह कैसे अपने भाई बिना रह सकती है? तीन मूर्तियाँ बनवाने का निर्णय लिया गया। तीन कारीगर नियुक्त किए। मूर्तियाँ तैयार होते ही टुकड़े-टुकड़े हो गई। ऐसे तीन बार मूर्तियाँ खण्ड हो गई। राजा बहुत चिन्तित हुआ। सोचा मेरे भाग्य में यह यश व पुण्य कर्म नहीं है। मन्दिर बनता है वह टूट जाता है। अब मूर्तियाँ टूट रही हैं। नाथ जी रूष्ट हो कर गए हैं। यदि कहूँगा कि मूर्तियाँ टूट जाती हैं तो सोचेगा कि राजा बहाना बना रहा है, कहीं मुझे शाप न दे दे। चिन्ता ग्रस्त राजा न तो आहार कर रहा है, न रात्री भर निन्द्रा आई। सुबह अशान्त अवस्था में राज दरबार में गया।

उसी समय पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर प्रभु एक अस्सी वर्षीय कारीगर का रूप बनाकर राज दरबार में उपस्थित हुआ। कमर पर एक थैला लटकाए हुए था जिसमें आरी बाहर स्पष्ट दिखाई दे रही थी, मानों बिना बताए कारीगर का परिचय दे रही थी तथा अन्य बसोला व बरमा आदि थेले में भरे थे। कारीगर वेश में प्रभु ने राजा से कहा मैंने सुना है कि प्रभु के मन्दिर के लिए मूर्तियाँ पूर्ण नहीं हो रही हैं। मैं 80 वर्ष का वृद्ध हो चुका हूँ तथा 60 वर्ष का अनुभव है। चन्दन की लकड़ी की मूर्ति प्रत्येक कारीगर नहीं बना सकता। यदि आप की आज्ञा हो तो सेवक उपस्थित है। राजा ने कहा कारीगर आप मेरे लिए भगवान ही कारीगर बन कर आये लगते हो। मैं बहुत चिन्तित था। सोच ही रहा था कि कोई अनुभवी कारीगर मिले तो समस्या का समाधान बने। आप शीघ्र मूर्तियाँ बना दो। वृद्ध कारीगर रूप में आए कविर्देव (कबीर प्रभु) ने कहा राजन मुझे एक कमरा दे दो, जिसमें बैठ कर प्रभु की मूर्ति तैयार करूंगा। मैं अंदर से दरवाजा बंद

करके स्वच्छता से मूर्ति बनाऊंगा। ये मूर्तियां जब तैयार हो जायेंगी तब दरवाजा खुलेगा, यदि बीच में किसी ने खोल दिया तो जितनी मूर्तियाँ बनेगी उतनी ही रह जायेंगी। राजा ने कहा जैसा आप उचित समझो वैसा करो।

बारह दिन मूर्तियाँ बनाते हो गए तो नाथ जी आ गए। नाथ जी ने राजा से पूछा इन्द्रदमन मूर्तियाँ बनाई क्या? राजा ने कर बद्ध हो कर कहा कि आप की आज्ञा का पूर्ण पालन किया गया है महात्मा जी। परन्तु मेरा दुर्भाग्य है कि मूर्तियाँ बन नहीं पा रही हैं। आधी बनते ही टुकड़े-टुकड़े हो जाती हैं नौकरों से मूर्तियों के टुकड़े मंगवाकर नाथ जी को विश्वास दिलाने के लिए दिखाए। नाथ जी ने कहा कि मूर्ति अवश्य बनवानी है। अब बनवाओं मैं देखता हूँ कैसे मूर्ति टूटती है। राजा ने कहा नाथ जी प्रयत्न किया जा रहा है। प्रभु का भेजा एक अनुभवी 80 वर्षीय कारीगर बन्द कमरें में मूर्ति बना रहा है। उसने कहा है कि मूर्तियाँ बन जाने पर मैं अपने आप द्वार खोल दूंगा। यदि किसी ने बीच में द्वार खोल दिया तो जितनी मूर्तियाँ बनी होंगी उतनी ही रह जायेंगी। आज उसे मूर्ति बनाते बारह दिन हो गये। न तो बाहर निकला है, न ही जल पान तथा आहार ही किया है। नाथ जी ने कहा कि मूर्तियाँ देखनी चाहिये, कैसी बना रहा है? बनने के बाद क्या देखना है। ठीक नहीं बनी होंगी तो ठीक बनायेंगे। यह कहकर नाथ जी राजा इन्द्रदमन को साथ लेकर उस कमरे के सामने गए जहाँ मूर्ति बनाई जा रही थी तथा आवाज लगाई कारीगर द्वार खोलो। कई बार कहा परन्तु द्वार नहीं खुला तथा जो खट-खट की आवाज आ रही थी, वह भी बन्द हो गई। नाथ जी ने कहा कि 80 वर्षीय वृद्ध बता रहे हो, बारह दिन खाना-पिना भी नहीं किया है। अब आवाज भी बंद है, कहीं मर न गया हो। धक्का मार कर दरवाजा तोड़ दिया, देखा तो तीन मूर्तियाँ रखी थी, तीनों के हाथ के व पैरों के पंजे नहीं बने थे। कारीगर अन्तर्ध्यान था।

मन्दिर बन कर तैयार हो गया और चारा न देखकर अपने हठ पर अडिग नाथ जी ने कहा ऐसी ही मूर्तियों को स्थापित कर दो, हो सकता है प्रभु को यही स्वीकार हो, लगता है श्री कृष्ण ही स्वयं मूर्तियां बना कर गए हैं।

मुख्य पांडे ने शुभ मूहूर्त निकाल कर अगले दिन ही मूर्तियों की स्थापना कर दी। सर्व पाण्डे तथा मुख्य पांडा व राजा तथा सैनिक व श्रद्धालु मूर्तियों में प्राण स्थापना करने के लिए चल पड़े। पूर्ण परमेश्वर (कविर्देव) एक शुद्र का रूप धारण करके मन्दिर के मुख्य द्वार के मध्य में मन्दिर की ओर मुख करके खड़े हो गए। ऐसी लीला कर रहे थे मानों उनको ज्ञान ही न हो कि पीछे से प्रभु की प्राण स्थापना की सेना आ रही है। आगे-आगे मुख्य पांडा चल रहा था। परमेश्वर फिर भी द्वार के मध्य में ही खड़े रहे। निकट आ कर मुख्य पांडे ने शुद्र रूप में खड़े परमेश्वर को ऐसा धक्का मारा कि दूर जा कर गिरे तथा एकान्त स्थान पर शुद्र लीला करते हुए बैठ गए। राजा सहित सर्व श्रद्धालुओं ने मन्दिर के अन्दर जा कर देखा तो सर्व मूर्तियाँ उसी द्वार पर खड़े शुद्र रूप परमेश्वर का रूप धारण किए हुए थी। इस कौतूक को देखकर उपस्थित व्यक्ति अचम्भित हो गए। मुख्य पांडा कहने लगा प्रभु क्षुब्ध हो गया है क्योंकि मुख्य द्वार को उस शुद्र ने अशुद्ध कर दिया है। इसलिए सर्व मूर्तियों ने शुद्र रूप धारण कर लिया है। बड़ा अनिष्ठ हो

गया है। कुछ समय उपरान्त मूर्तियों का वास्तविक रूप हो गया। गंगा जल से कई बार स्वच्छ करके प्राण स्थापना की गई। {कविर्देव ने कहा अज्ञानता व पाखण्ड वाद की चरम सीमा देखें। कारीगर मूर्ति का भगवान बनता है। फिर पूजारी या अन्य संत उस मूर्ति रूपी प्रभु में प्राण डालता है अर्थात् प्रभु को जीवन दान देता है। तब वह मिट्टी या लकड़ी का प्रभु कार्य सिद्ध करता है, वाह रे पाखण्डियों खूब मूर्ख बनाया प्रभु प्रेमी आत्माओं को।}

मूर्ति स्थापना हो जाने के कुछ दिन पश्चात् लगभग 40 फूट ऊँचा समुद्र का जल उठा जिसे समुद्री तुफान कहते हैं तथा बहुत वेग से मन्दिर की ओर चला। सामने कबीर परमेश्वर चौरा (चबुतरे) पर बैठे थे। अपना एक हाथ उठाया जैसे आर्शीवाद देते हैं, समुद्र उठा का उठा रह गया तथा पर्वत की तरह खड़ा रहा, आगे नहीं बढ़ सका। विप्र रूप बना कर समुद्र आया तथा चबूतरे पर बैठे प्रभु से कहा कि भगवन आप मुझे रास्ता दे दो, मैं मन्दिर तोड़ने जाऊंगा। प्रभु ने कहा कि यह मन्दिर नहीं है। यह तो महल (आश्रम) है। इस में विद्वान् पुरुष रहा करेगा तथा पवित्र गीता जी का ज्ञान दिया करेगा। आपका इसको विधवंश करना शोभा नहीं देता। समुद्र ने कहा कि मैं इसे अवश्य तोडूंगा। प्रभु ने कहा कि जाओ कौन रोकता है? समुद्र ने कहा कि मैं विवश हो गया हूँ। आपकी शक्ति अपार है। मुझे रस्ता दे दो प्रभु। परमेश्वर कबीर साहेब जी ने पूछा कि आप ऐसा क्यों कर रहे हो? विप्र रूप में उपस्थित समुद्र ने कहा कि जब यह श्री कृष्ण जी त्रेतायुग में श्री रामचन्द्र रूप में आया था तब इसने मुझे अग्नि बाण दिखा कर बुरा भला कह कर अपमानित करके रास्ता मांगा था। मैं वह प्रतिशोध लेने जा रहा हूँ।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि प्रतिशोध तो आप पहले ही ले चुके हो। आपने द्वारिका को डूबो रखा है। समुद्र ने कहा कि अभी पूर्ण नहीं डूबा पाया हूँ, आधी रहती है। वह भी कोई प्रबल शक्ति युक्त संत सामने आ गया था जिस कारण से मैं द्वारिका को पूर्ण रूपेण नहीं समा पाया। अब भी कोशिश करता हूँ तो उधर नहीं जा पा रहा हूँ। उधर जाने से मुझे बांध रखा है।

तब परमेश्वर कबीर (कविर्देव) ने कहा वहाँ भी मैं ही पहुँचा था। मैंने ही वह अवशेष बचाया था। अब जा शेष बची द्वारिका को भी निगल ले, परन्तु उस यादगार को छोड़ देना, जहाँ श्री कृष्ण जी के शरीर का अन्तिम संस्कार किया गया था (श्री कृष्ण जी के अन्तिम संस्कार स्थल पर बहुत बड़ा मन्दिर बना दिया गया। यह यादगार प्रमाण बना रहेगा कि वास्तव में श्री कृष्ण जी की मृत्यु हुई थी तथा पंच भौतिक शरीर छोड़ गये थे। नहीं तो आने वाले समय में कहेंगे कि श्री कृष्ण जी की तो मृत्यु ही नहीं हुई थी)***। आज्ञा प्राप्त कर शेष द्वारिका को भी समुद्र ने डूबो लिया। परमेश्वर कबीर जी (कविर्देव) ने कहा अब आप आगे से कभी भी इस जगन्नाथ मन्दिर को तोड़ने का प्रयत्न न करना तथा इस महल से दूर चला जा। आज्ञा प्रभु की मान कर प्रणाम करके समुन्द्र मन्दिर से दूर लगभग डेढ़ किलोमीटर अपने जल को ले गया। ऐसे श्री जगन्नाथ जी का मन्दिर अर्थात् धाम स्थापित हुआ।***

"श्री जगन्नाथ के मन्दिर में छुआछात प्रारम्भ से ही नहीं है"

कुछ दिन पश्चात जिस पांडे ने प्रभु कबीर जी को शुद्र रूप में धक्का मारा था उसको

कुष्ट रोग हो गया। सर्व औषधी करने पर भी स्वस्थ नहीं हुआ। कुष्ट रोग का कष्ट अधिक से अधिक बढ़ता ही चला गया। सर्व उपासनायें भी की, श्री जगन्नाथ जी से रो-रोकर संकट निवार्ण के लिए प्रार्थना की, परन्तु सर्व निष्फल रही। स्वपन में श्री कृष्ण जी ने दर्शन दिए तथा कहा पांडे उस संत के चरण धोकर चरणामृत पान कर जिसको तुने मन्दिर के मुख्य द्वार पर धक्का मारा था। तब उसके आशीर्वाद से तेरा कुष्ट रोग ठीक हो सकता है। यदि उसने तुझे हृदय से क्षमा किया तो, तेरा कुष्ट रोग समाप्त होगा अन्यथा नहीं। मरता क्या नहीं करता?

वह मुख्य पांडा सवेरे उठा। कई सहयोगी पांडों को साथ लेकर उस स्थान पर गया जहाँ पर प्रभु कबीर जी शुद्र रूप में विराजमान थे। ज्यों ही पांडा प्रभु के निकट आया तो परमेश्वर उठ कर चल पड़े तथा कहा हे पांडा मैं तो अछूत हूँ मेरे से दूर रहना, कहीं आप अपवित्र न हो जायें। पांडा निकट पहूँचा, परमेश्वर और आगे चल पड़े। तब पांडा फूट-फूट कर रोने लगा तथा कहा परवरदीगार मेरा दोष क्षमा कर दो। तब दयालु प्रभु रूक गए। पांडे ने आदर के साथ एक स्वच्छ वस्त्र जमीन पर बिछा कर प्रभु को बैठने की प्रार्थना की। प्रभु उस वस्त्र पर बैठ गए। तब उस पांडे ने स्वयं चरण धोए तथा चरणामृत को पात्र में वापिस डाल लिया। प्रभु कबीर जी ने कहा पांडे चालीस दिन तक इसे पीना भी तथा स्नान करने वाले जल में कुछ डाल कर स्नान करते रहना। चालीसवें दिन तेरा कुष्ट रोग समाप्त होगा तथा कहा कि भविष्य में भी इस जगन्नाथ जी के मन्दिर में किसी ने छूआछात किया तो उसको भी दण्ड मिलेगा। सर्व उपस्थित व्यक्तियों ने वचन किए कि आज के बाद इस पवित्र स्थान पर कोई छुआ-छात नहीं की जायेगी।

विचार करें :- हिन्दुस्तान का एकमात्र ऐसा मन्दिर है जिसमें प्रारम्भ से ही छूआ-छात नहीं रही है।

मुझ दास को भी उस स्थान को देखने का अवसर प्राप्त हुआ। कई सेवकों के साथ उस स्थल को देखने के लिए गया था कि कुछ प्रमाण प्राप्त करूं। वहाँ पर सर्व प्रमाण आज भी साक्षी मिले। जिस पत्थर के चबूतरे (चौरा) पर बैठ कर कबीर परमेश्वर जी ने मन्दिर को बचाने के लिए समुद्र को रोका था वह आज भी विद्यमान है। उसके उपर एक यादगार रूप में गुमज बना रखा है। वहाँ पर बहुत पुरातन महन्त (रखवाला) परम्परा से एक आश्रम भी विद्यमान है। वहाँ पर लगभग 70 वर्षीय वृद्ध महन्त जी से उपरोक्त मन्दिर की समुद्र से रक्षा की जानकारी चाही तो उसने भी यही बताया तथा कहा कि मेरे पूर्वज कई पीढ़ीयों से यहाँ पर महन्त (रखवाले) रहे हैं। यहाँ पर ही श्री धर्मदास साहेब व उनकी पत्नी भक्तमति आमनी देवी ने शरीर त्यागा था। दोनों की समाधियाँ भी साथ-साथ बनी दिखाई।

हम श्री जगन्नाथ जी के मन्दिर में भी गए। वहाँ पर मूर्ति पूजा आज भी नहीं है। परन्तु प्रदर्शनी अवश्य लगा रखी है। जो तीन मूर्तियाँ भगवान श्री कृष्ण जी तथा श्री बलराम जी व बहन सुभद्रा जी की मन्दिर के अन्दर स्थापित हैं उनके दोनों हाथों के पंजे नहीं हैं, दोनों हाथ टूंडे हैं। उन मूर्तियों की भी पूजा नहीं होती, केवल दर्शनार्थ रखी हैं। वहाँ पर एक गाईड पांडे से पूछा कि सुना है कि यह मन्दिर पाँच बार समुद्र ने तोड़ा था पुनर बनवाया था। समुद्र ने क्यों तोड़ा? फिर किसने समुद्र को रोका। पांडे ने कहा इतना तो मुझे पता नहीं। यह सर्व कृपा

जगन्नाथ जी की थी, उन्होंने ही समुद्र को रोका था, सुना तो है कि समुद्र ने तीन बार मन्दिर को तोड़ा था। मैंने फिर प्रश्न किया कि प्रथम वार ही क्यों न समुद्र रोका प्रभु ने। पांडे ने उत्तर दिया कि लीला है जगन्नाथ की।

मैंने फिर पूछा कि इस मन्दिर में छूआछात है या नहीं? उसने कहा जब से मन्दिर बना है यहाँ कोई छूआछात नहीं है। मन्दिर में शुद्र तथा पांडा एक थाली या पतल में खाना खा सकते हैं कोई मना नहीं करता। मैंने प्रश्न किया पांडे जी अन्य हिन्दु मन्दिरों में तो पहले बहुत छुआछात थी, इसमें क्यों नहीं? प्रभु तो वही है। पांडे का उतर था लीला है जगन्नाथ की।

अब पुण्यात्माऐं विचार करें कि सत को कितना दबाया गया है, एक लीला जगन्नाथ की कह कर। पवित्र यादगारें आदरणीय हैं, परन्तु आत्म कल्याण तो केवल पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों में वर्णित तथा परमेश्वर कबीर जी द्वारा दिए तत्वज्ञान के अनुसार भक्ति साधना करने मात्र से ही सम्भव है, अन्यथा शास्त्र विरुद्ध होने से मानव जीवन व्यर्थ हो जाएगा। प्रमाण गीता अध्याय 16 मंत्र 23-24 । श्री जगन्नाथ के मन्दिर में प्रभु के आदेशानुसार पवित्र गीता जी के ज्ञान की महिमा का गुणगान होना ही श्रेयकर है तथा जैसा श्रीमद्भगवत गीता जी में भक्ति विधि है उसी प्रकार साधना करने मात्र से ही आत्म कल्याण संभव है, अन्यथा जगन्नाथ जी के दर्शन मात्र या खिचड़ी प्रसाद खाने मात्र से कोई लाभ नहीं, क्योंकि यह क्रिया श्री गीता जी में वर्णित न होने से शास्त्र विरुद्ध हुई, जो अध्याय 16 मंत्र 23-24 में प्रमाण है।

''मूर्ति पूजा करना उचित या अनुचित''

कबीर परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! आप मूर्ति पूजा (सालिगराम की पूजा) करते हो यह पूजा भी गीता जी में नहीं कही है। प्रश्न :- धर्मदास जी ने प्रश्न किया, हे महात्मा जी क्या मूर्ति रखना ही नहीं चाहिए?

परमेश्वर ने उत्तर दिया :- जैसे आम या सेब के फल की पत्थर या मिट्टी की मूर्ति किसी ने ले रखी है या कागज पर सुन्दर चित्र बना रखा है वह केवल चित्र है वास्तविक वस्तु नहीं है। उस फल के चित्र से फल के गुणों का ज्ञान होता है उस को प्राप्त करके खाने को मन करता है। उस फल को जिसका चित्र आपके पास है प्राप्त करके खाने से लाभ होगा न की उस फल के चित्र या मूर्ति की पूजा करने मात्र से। आम के फल की मूर्ति आम का फल नहीं हैं उस मूर्ति वाले फल को प्राप्त करने की विद्यी भिन्न है। जैसे मजदूरी परिश्रम करके रूपये प्राप्त करे तत् पश्चात् बाजार में जाकर फल प्राप्त करके खाए। इसी प्रकार जिस देव की मूर्ति है उस देव को प्राप्त करने की विधि भिन्न है। किसी तत्वदर्शी सन्त गुरु के पास जाकर उस प्रभु को प्राप्त करने की साधना (पूजा) करके उस परमात्मा के लाभ को प्राप्त करें। ध्यान रहे कि वह मूर्ति परमात्मा की है वह मूर्ति परमात्मा नहीं है। मूर्ति को देखकर उसे प्राप्त करने की प्रेरणा होती है इसलिए अपने इष्ट देव की मूर्ति रखना अच्छी बात है उसे नमस्कार करने से साधक में आधीनी का भाव बना रहता है जो भक्ति मार्ग में अति आवश्यक है तथा प्रभु को पसन्द है परन्तु उस मूर्ति व चित्र वाले परमात्मा को प्राप्त करने पर ही उसका वास्तविक लाभ अर्थात् मोक्ष प्राप्त होगा केवल मूर्ति पूजा से नहीं।

''क्या गीता ज्ञान से भी उत्तम ज्ञान है? ब्रह्म पूजा मोक्षदायक है या नहीं''

प्रश्न (धर्मदास का प्रश्न):- हे महात्मा जी! क्या गीता ज्ञान दाता अर्थात् ब्रह्म पूजा से पूर्ण मोक्ष सम्भव है? क्या गीता ज्ञान से भी कोई अन्य उत्तम ज्ञान है?

उत्तरः- (जिन्दा रूपधारी परेश्वर का) श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 12 गीता ज्ञान दाताने कहा है कि हे अर्जुन! मैं तू तथा यह सर्व राजा व सैनिक पहले भी जन्मे थे वर्तमान में भी प्रकट है आगे भी जन्मते-मरते रहेगें। गीता अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि हे अर्जुन! तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं तू नहीं जानता मैं जानता हूँ। मेरे जन्म तथा कर्म अलौकिक हैं। गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि मेरे जन्म को न ऋषिजन जानते हैं न देवता (ब्रह्मा-विष्णु व शिव आदि) क्योंकि ये सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता प्रभु भी मोक्ष प्राप्त नहीं है। इस के भी जन्म मृत्यु होती हैं तो इसके उपासक मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकते हैं? गीता ज्ञान से भी उत्तम ज्ञान ''तत्व ज्ञान'' है जो स्वसम वेद में वर्णित है। जिस के विषय में स्वयं गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि उस तत्व ज्ञान को समझ। उसके लिए तत्वदर्शी सन्तों की खोज कर उनको दण्डवत् प्रणाम कर निष्कपट भाव से प्रश्न करके तत्व ज्ञान प्राप्त कर फिर जैसे वे तत्वदर्शी सन्त साधना बताऐं वैसे कर तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है जिस में कहा है कि यह संसार रूपी वृक्ष पूर्ण परमात्मा रूपी ऊपर को जड़ (मूल) वाला है जो सन्त इस संसार रूपी वृक्ष को विस्तार पूर्वक बताए (सः वेद वित्) वह तत्वदर्शी सन्त है। गीता अध्याय 15 श्लोक 2 से 4 में कहा है कि तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सत्गुण विष्णु,तमगुण शिव) इस संसार रूपी वृक्ष की शाखा हैं। इस संसार रूपी वृक्ष के विषय में अर्थात् सृष्टी रचना के विषय में मैं (गीता ज्ञान दाता) यहाँ विचार काल में अर्थात् इस गीता ज्ञान में नहीं बता सकता क्योंकि मुझे इस के आदि और अन्त का ज्ञान नहीं है। इस संसार की रचना (सृष्टी रचना) को तत्वज्ञान द्वारा समझ कर उसके पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौट कर संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं।

गीता ज्ञान दाता प्रभु ने गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 31 में कहा है कि कोई साधक देवताओं की पूजा (यज्ञ) करते हैं। कोई अपनी इन्द्रियों को हठ योग (जैसे कान-आँख आदि बन्द करके अभ्यास करने) से संयम करके साधना (यज्ञ) करते हैं। कितने ही केवल ज्ञान को ग्रहण करना ही (यज्ञ) पूजा मानते हैं। अन्य प्राणायाम विधि से स्वांस रोकने के अभ्यास को (यज्ञ) पूजा मानते हैं। इन्हीं साधनाओं को पाप नाशक जानते हैं। यह तो मनमाना आचरण (पूजा) है। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि यथार्थ यज्ञों (पूजाओं) का तत्वज्ञान पूर्ण परमात्मा ने अपने मुख कमल से मुख्य ज्ञान में अर्थात् स्वस्म वेद में विस्तार से कहा है। उसको तत्व से जानकर साधक पूर्ण मुक्त हो जाएगा। गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में कहा है कि द्रव्य यज्ञ की अपेक्षा ज्ञान यज्ञ अत्यंत श्रेष्ठ है अर्थात् साधना प्रारम्भ करने से पूर्व तत्वज्ञान होना अति आवश्यक है। क्योंकि सत्य साधना शास्त्रविधि अनुसार न होने के कारण धन, दान आदि व्यर्थ हो जाता है। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस तत्वज्ञान को जो गीता में वर्णित ज्ञान से भिन्न तथा श्रेष्ठ है, तत्व ज्ञानियों के

पास जाकर समझ उनको भली-भांति प्रमाण करने से उनकी सेवा करने से और कपट छोड़ कर सरलता पूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वदर्शी सन्त परमात्मा के विषय में सम्पूर्ण ज्ञान रखने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्वज्ञान का उपदेश करेगें। गीता अध्याय 4 श्लोक 35 में कहा है कि जिस तत्वज्ञान को जानकर फिर तू इस प्रकार अज्ञानता को प्राप्त नहीं होगा। जिस तत्वज्ञान के द्वारा तू मुझे देखेगा कि मैं (गीता ज्ञान दाता) काल हूँ फिर तू अपने आप को समझेगा कि कैसे काल जाल में फंसा। इसी प्रकार अन्य प्राणियों की स्थिती से भी तत्वज्ञान द्वारा ही परिचित होगा।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिस की कृपा से ही तू परम शान्ति को प्राप्त होगा अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होगा तथा सदा रहने वाले लोक अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 14 श्लोक 5 में कहा है कि प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जीवात्मा को कर्म बन्धन में बांधते है अर्थात् काल जाल में फांसते हैं जीव को मुक्त नहीं होने देते।

हे धर्मदास! ये तीनों भगवान (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) भी काल जाल में ये भी नाशवान हैं। अपना जीवन समय पूरा करके ये तीनों भी चौरासी लाख योनियों में कर्माधार से शरीर धारण करेगें। नरक में भी पाप कर्म भोगेगें। फिर इनके पुजारी कैसे पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। विस्तृत जानकारी के लिए कृपा पढ़ें गीता अध्याय 7, 8 इसी पुस्तक ''अध्यात्मिक ज्ञान गंगा'' में पृष्ठ 356 से 382 पर।

प्रश्न (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! वह तत्वज्ञान बताने की कृपा कीजिए तथा सृष्टी रचना का ज्ञान कराईए। यह काल कौन है ? कौन प्रभु पुजा के योग्य है? कृप्या प्रमाण सहित बताना जिससे विश्वास दृढ़ हो?

उत्तर :- (कबीर परमेश्वर उर्फ जिन्दा जी का) :- सृष्टी रचना कृप्या पाठक जन पढ़ें सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर

धर्मदास जी ने सृष्टी रचना को सुनकर तथा सर्व प्रमाणों को देखकर आश्चर्य किया तथा कहा कि सचमुच आपका ज्ञान अद्वितीय है। यह तत्वज्ञान आज तक किसी ने नहीं सुनाया परन्तु महात्मा जी यह ज्ञान प्रथम बार सुना है आप की बातों पर कैसे विश्वास किया जाए। मेरा मन उस पूर्व वाली साधना को त्यागने को नहीं करता। श्री विष्णु जी व श्री शिव जी महान् शक्तियाँ हैं। ये परम सुखदायक हैं। इन देवों में मेरा मन आसक्त है इनकी पूजा को नहीं त्याग सकता। परमेश्वर कबीर जी ने कहाः-

मूर्ख को समझावते, ज्ञान गांठ का जाय। कोयला हो ना उजला, चाहे सौमन साबुन लाय।।(50)

कबीर इस संसार कूं, समझाऊं कै बार। पूछ पकड़ कर भेड़ की, उतरा चाहें पार।।

इतना कह कर परमेश्वर कबीर जी (जिन्दा वेषधारी) सामने से अन्तर्धान (अदृश) हो गए तथा अन्तर्धान होने से पूर्व कहा था कि जहाँ पर सच्ची श्रद्धा से परमेश्वर के निमित्त धर्म भण्डारा होता है वहाँ मैं अवश्य उपस्थित होता हूँ। अपने सामने से परमेश्वर के अन्तर्धान हो जाने से धर्मदास अपने अनाड़ी व्यवहार के कारण परमात्मा को रूष्ट करके बहुत पश्चाताप करने लगा, अपने आपको कोसने लगा। मैं कितना नीच हूँ मैनें परमेश्वर को रूष्ट कर दिया। हे परमात्मा आप एक बार फिर दर्शन दो। मैं आप की सर्व बात स्वीकार कर लूगाँ। मेरी गलती को क्षमा करो प्रभु मैं

आपका बच्चा हूँ। बच्चे गलती करते हैं पिता क्षमा कर देता है। हे परमेश्वर! आपने ऐसा ज्ञान बताया है मैं घर का रहा न घाट का। अब पूर्व वाली साधना करने को मन नहीं करता। आपसे भक्ति विद्यी प्राप्त न कर सका। अब क्या करूं- कहां जाऊं। मैं अब आप के दर्शन व तत्वज्ञान आधार से साधना बिना जीवित नहीं रह सकता। हे परमेश्वर! यह तो बता दो मुझे कब मिलोगे- कहाँ मिलोगे, आपका दास वही पर पहुँच जाएगा। ऐसे प्रार्थना करके धर्मदास जी फूट-2 कर रोने लगा। परमेश्वर के दूर जाने पर धर्मदास जी को ऐसा कष्ट महसूस हो रहा था जैसे गर्मी के मौसम में वातानुकूल कक्ष में बैठा हो और विद्युत चली जाए, कई घण्टों न आए तो पसीने में बुरा हाल हो जाता है। ठीक इसी प्रकार परमात्मा के वियोग से धर्मदास जी बैचेन हो गए।

➽{परमेश्वर कबीर जी द्वारा सन्त गरीबदास जी का ज्ञान योग खोलने के पश्चात् वर्षों पूर्व का यर्थाथ ज्ञान सन्त गरीबदास जी ने अपनी अमृतवाणी के पद्य भाग में वर्णन किया उसका कुछ अंश निम्न है।}

तहाँ वहाँ लीन भए निरबानी, मगन रूप साहेब सैलानी।। (1)
तहाँ वहाँ रोवत है धर्मनी नागर, कहाँ गए मेरे सुख के सागर।। (2)
हम जाने तुम देह स्वरूपा, हमरी बुद्धि अन्ध गहर कूपा।। (3)
हम तो मानुष रूप तुम जाना, सुन सतगुरू कहाँ किया पीयाना।। (4)
कल्प करै और मन में रोवै, दशों दिशा को वह मग जोवे।। (5)
बेगी मिलो करहूँ अपघाता, मैं ना जीऊँ सुनो विधाता।। (6)
तुम सतगुरू अविगत अधिकारी, मैं नहीं जानी लीला थारी।(7)
तुम अविगत अविनाशी सांई, फिर मोकूं कहाँ मिलो गोसाई।(8)
ऐसा वियोग हुआ हम सेती, जैसी निर्धन की लुटजा खेती।(9)
बेग मिलो कर हूँ अपघाता, मैं ना जीयूँ सुनो विधाता।(10)

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- धर्मदास जी के हठी स्वभाव को जानकर परमेश्वर कबीर जी अन्तर्धान हो गये। वे स्वतन्त्र परमेश्वर हैं। किसी के बंधन में नहीं हैं।

(1) परमेश्वर कबीर जी के अचानक लुप्त हो जाने से धर्मदास जी विलाप करते हुए लगा कहा हे सुखसागर! परमेश्वर आप कहा चले गये?

(2) मैंने तो आपको मनुष्य रूप ही जाना तथा आप के शरीर को भी अपने जैसा भौतिक देही जाना। हे ! सतगुरू अर्थात् तत्वदर्शी सन्त। आप कहाँ प्रस्थान कर गये? इस प्रकार अपने आप कल्पनाऐं करके मन-मन में रोने लगा तथा दसों दिशाओं में परमेश्वर खोजने लगा। (3 से 5) धर्मदास जी ने कहा हे विधाता! शीघ्र दर्शन दो अन्यथा मैं आत्महत्या कर लूगां। आप के वियोग में मैं जीवित नहीं रह सकता।

इसके पश्चात् धर्मदास जी ने अपना तीर्थ भ्रमण का कार्यक्रम स्थगित कर दिया तथा अपने निवास स्थान बांधवगढ़ शहर की ओर प्रस्थान किया। सारे रास्ते में रोता रहा तथा रोता हुआ अपने घर पर पहुँचा, घर के अन्दर जाते ही जमीन पर मुंह के बल लेट कर बुरी तरह रोने लगा। धर्मदास जी की पत्नी भक्तमति आमीनि देवी बहुत ही धार्मिक विचारों की थी। उसने सोचा भक्त जी तीर्थ यात्रा पर कई महिनों का कार्यक्रम बना कर निकले थे। इनके शीघ्र लौटने का तथा ऐसी स्थिती होने का एक ही कारण हो सकता है कि किसी ने इनका धन चुरा लिया है जिस कारण से ये अपना

कार्यक्रम स्थगित करके लौट आए हैं। भक्त धर्मदास जी बहुत धर्मात्मा थे, साधु सन्तों व भूखों तथा जरूरत मन्द व्यक्तियों को दोनों हाथों दान करता थे। कभी-2 आमिनी देवी उन्हें अधिक दान-धर्म करने से रोक देती थी तथा कहा करती हे भक्त जी ! दान धर्म सीमा में ही करना चाहिए। बच्चों की ओर भी देख कर खर्च करना चाहिए। जिस कारण से धर्मदास दुःखी हो कर दान देने में कमी करता था। जिस स्थिती से आमिनी देवी भी परिचित रहती थी की भक्त धर्मदास जी ने दान में कटौती तो की है परन्तु अन्दर से दुःखी है।

उस दिन धर्मदास को रोते-बिलखते देखकर आमिनी देवी (पत्नी भक्त धर्मदास) ने सोचा भक्त धर्मदास जी के किसी ने रूपये चुरा लिए होगें। धन के अभाव से यह घर लौट आया है तीर्थ भ्रमण पूर्ण न हो पाने के कारण दुःखी है। यह सोच रहा होगा कि अब फिर धन लेकर यात्रा जाना चाहुँगा तो आमिनी मेरे से क्लेश करेगी। इसलिए यह (धर्मदास) बिलख-बिलख कर रो रहा है। यह विचार करके धर्मदास जी की पत्नी आमिनी देवी ने धर्मदास जी से कहा हे भक्त जी! आप किस कारण से रो रहे हो? क्या आपका यात्रा धन किसी ठग ने ले लिया? यदि ऐसा है तो आप चिन्ता मत करो आप के घर में धन की कोई कमी नहीं है परमात्मा ने आपका घर धन से भर रखा है। आप और धन ले जाइए अपनी धार्मिक यात्रा पूर्ण कीजिए। मैं आप को नहीं रोकूंगी। धर्मदास फिर भी उसी तरह मुंह के बल गिरा हुआ सुबक-2 कर रो रहा था। आमिनी ने फिर प्रार्थना की हे भक्त जी ! मैं आपको कभी भी दान धर्म करने से नहीं रोकूंगी मुझे अपने इकलौते पुत्र नारायण दास की सौगंध। धर्मदास ने रोते-2 कुछ हिम्मत करके कहा आमिनी देवी यदि मेरा यात्रा धन चला जाता मैं आप से हाथ-पैर जोड़कर प्रार्थना करके प्राप्त कर लेता परन्तु भक्तमति मेरा वह धन चला गया जो मुझे प्रथम बार मिला था। वह अब मुझ पापी को कभी नहीं मिलेगा। क्योंकि मैंने अज्ञानता वश उस अनमोल रत्न को ठोकर मार दी। वह संसार रूपी सागर में गिर कर लुप्त हो गया। वह धन मुझे नहीं मिला तो मैं जीवित नहीं रह सकूंगा, तड़फ-2 कर मेरी जान जाएगी। यह वचन धर्मदास जी ने रोते-2 कहे तथा इतना कह कर फिर से धाड़ मार कर रोने लगा तथा रोते-2 वे ही वाणी उच्चारण करने लगा:-

तुम सतगुरू अविगत अधिकारी, मैं नहीं जानी लीला थारी।
तुम अविगत अविनाशी सांई, फिर मोकूं कहाँ मिलो गोसाई।
ऐसा वियोग हुआ हम सेती, जैसी निर्धन की लुटजा खेती।
बेग मिलो कर हूँ अपघाता, मैं ना जीयूँ सुनो विधाता।

आमिनी देवी ने बार-2 पूछा वह कौन सा धन था? अब कैसे नहीं मिलेगा। आप किस सतगुरू की बात कह रहे हो? अपने गुरू तो रूपदास जी हैं उन्हें बुला देती हूँ। तब धर्मदास जी ने अपने दिल को बलपूर्वक रोका तथा गीली आँखों से आमिनी देवी की और देखा तो पति के रोने से दुःखी होकर उसकी आँखें भी नम थी तथा दातों नीचे हौंठ दबा कर मन-मन में रो रही थी कहीं मेरे रोने को सुनकर भक्त जी अधिक दुःखी हो जाऐं। परन्तु धर्मदास जी ने जब उठ कर जमीन पर अपने पास बैठी अपनी पत्नी को भी रोते देखा तब धर्मदास जी अपनी प्राणप्रिया पत्नी की आँखों के आंसुओं को हाथों से पौंछते हुए रोते-2 कहा यदि आप भी रोने लगोगी तो मुझे हिम्मत कौन बंधाएगा। यह वचन धर्मदास जी का सुनकर आमिनी देवी का रोना फूट गया तथा अपने पति के

गोड़ों में गिर कर फूट-2 कर रोने लगी तथा कहा कि मैं पापीनी हूँ मेरे कृपण (कंजूस) स्वभाव ने आज मेरे देव स्वरूप पति को कितना कष्ट पहुँचा दिया मुझे तो कुंभी नरक में डाला जाएगा हे पतिदेव! मुझे क्षमा कर दो मैं कभी आप को दान धर्म करने से नहीं रोकूंगी मैं अपने इकलौते पुत्र नारायण दास की फिर से---------(कहना चाहती थी कि सौगंध लेती हूँ। परन्तु धर्मदास जी ने उसके मुंह पर हाथ रख दिया तथा कहा) आप गलत समझ रही हो देवी। मैं इस धन के कारण दुःखी नहीं हूँ। परालौकिक धन के लिए तड़फ रहा हूँ।

तब धर्मदास जी ने जो-2 वार्ता जिन्दा वेषधारी परमेश्वर से हुई थी वह सर्व आमिनी देवी को सुनाई। तत् पश्चात् परमेश्वर के मुख कमल से सुनी सृष्टी रचना सुनाई। (कृप्या देखें सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) सर्वज्ञान को समझने के पश्चात् आमिनी देवी ने कहा है भक्त जी! आप सौदागर होते हुए सौदा चूक गए। राम-कृष्ण व शिव आदि प्रभुओं से कौन सी अपनी रिश्तेदारी है इन प्रभुओं की महिमा को सुन कर इनकी पूजा कर रहे थे। इनके विषय में भी अपने पूर्व गुरूओं ने यथार्थ ज्ञान नहीं बता रखा है। अपने साथ महाधोखा हुआ है। आपने ऐसे परमात्मा स्वरूप सन्त के पैर पकड़ कर छोड़ने नहीं थे। धर्मदास जी बोले हे देवी मैंने जीवन में प्रथम बार सौदे में घाटा खाया है। यह हानि शायद इस जन्म में पूरी नहीं हो पाएगी। मेरे उस पूर्व सुने ज्ञान ने मुझे इतना हठी बना दिया है कि मैं सर्व तथ्यों को आँखों देख तथा कानों सुन कर भी स्वीकार नहीं कर सका। जिनका जिन्दा महात्मा ने उल्लेख किया था। मैंने आवश्यकता से अधिक वाद-विवाद किया जिस कारण से वह सिद्धी सम्पन्न जिन्दा महात्मा मेरे सामने से अन्तर्धान हो गया। उनके चले जाने के पश्चात् मुझे अपनी मुर्खता का अत्यधिक आभास हुआ। मैं रोता हुआ अपनी मुर्खता पर पश्चाताप करता हुआ लौट आया हूँ। मुझ से यह भूल आजीवन नहीं भुलाई जा सकती।

आमिनी देवी प्रतिदिन धर्मदास जी से वह ज्ञान सुनने लगी जो जिन्दा साधु ने सुनाया था। आमिनी देवी को भी तत्व ज्ञान समझ में आने लगा। धर्मदास जी बहुत कम आहार करते तथा अधिक समय घर की देहरी पर चौखट के पास बाहर गली में बने चबूतरे पर बैठकर गली में दोनों और ऐसे देखने में व्यतीत करता जैसे किसी के आने की प्रतिक्षा कर रहा हो। जैसे भक्तमति शबरी ने भगवान श्री रामचन्द्र जी की प्रतिक्षा की थी ठीक उसी प्रकार भक्त धर्मदास जी जिन्दा महात्मा के आने की प्रतिक्षा करने लगा। दूर से कोई भी व्यक्ति दाढ़ी वाला दिखाई देता उसी और नंगे पैरों चल पड़ता तथा अति निकट जा के उस के चेहरे को ध्यानपूर्वक देखता फिर अपने घर के चबूतरे पर बैठ जाता। कभी घर में अन्दर जा कर घण्टों रोता तथा दर्शन देने की प्रार्थना करता।

आमिनी देवी अपने पति की यह दशा देखकर अति दुःखी रहने लगी तथा उनका इस तरफ से ध्यान हटाने के लिए घर व व्यापार की बातें करना चाहती तो धर्मदास जी हां-हम्बै करके टाल देता तथा वही ज्ञान सुनाने लग जाता जो जिन्दा सन्त से सुना था। फिर बाहर आकर प्रतिक्षा करने लग जाता अन्त मैं ऐसी स्थिती हो गई थी कि खाना-पीना लगभग छूट गया था तथा हर किसी से पूछने लगा आपने ऐसी वेशभूषा वाला कोई सन्त देखा क्या? कोई कह देता एक सन्त अपने नगर के जंगल में उस तालाब पर कल ही आया है। धर्मदास नंगे पैरों उस स्थान की ओर चल पड़ता तथा रास्तें में मन की कल्पनाऐं करता, जाते ही चरण पकड़ कर अपनी मूर्खता की क्षमा याचना करूंगा

अपने घर लाऊँगा। अपने हाथों चरण धोकर पीऊंगा तथा आधा आमिनी व अपने पुत्र नारायण दास को पिलाऊँगा। दो गद्दे बिछाकर उनके ऊपर बैठाऊँगा। खीर-खाण्ड, हल्वा-पूरी सब्जी, दही-बड़े-मिठाई अपने भगवान को खिलाऊँगां उनका छोड़ा हुआ झूठा अमृत प्रसाद स्वयं खाऊँगा तथा अपने परिवार को खिलाऊँगा पूरे परिवार को नाम दिलाऊँगा मैं भी उनके चरणों में गिर कर दिक्षा (नाम) प्राप्त करूँगा। ऐसे विचारों में खोया हुआ उस स्थान पर पहुँच जाता जहाँ पर किसी ने सन्त बैठा बताया था। वहाँ जाकर देखा वह तो कोई अन्य ही सन्त है। फिर भी सोचता कि कहीं वही सन्त अन्य वेश धारण करके तो नहीं आए हैं। उसकी पहचान के लिए कुछ ज्ञान चर्चा करता कुछ प्रश्न पूछता परन्तु वह सन्त धर्मदास जी के प्रश्नों का उत्तर न दे पाता तथा उल्टा धर्मदास जी से कहता हे धर्मदास लगता है तेरे दिमाग में फर्क हो गया है (पागल हो गया है) जो तू श्री विष्णु तथा श्री शिव से भी अन्य परमात्मा के विषय में जानना चाहता है। इन परमात्माओं से ऊपर कोई शक्ति नहीं है कोई परमात्मा नहीं है। तू प्रभुओं की निन्दा करके पाप का भागी मत हो। धर्मदास जी उस सन्त को आदरपूर्वक प्रणाम करके लौट-आता। इस प्रकार छः महीने बीत गए।

एक दिन धर्मदास जी को घर के एक कक्ष मैं अकेले बैठे थे रोते-2 कुछ वाणी उच्चारण करते देख आमिनी देवी उनके निकट गई तथा पीछे खड़ी होकर जो कुछ धर्मदास जी बोल रहे थे चुपके से सुनने लगी। धर्मदास जी कह रहे थे हे परमेश्वर! आप के ये वचन रह-2 कर याद आ रहे हैं तथा आप की याद ताजा कर रहे हैं। आप ने मुझ तुच्छ जीव को ''स्वामी'' कह कर सम्बोधित किया। मुझ से पूछाः-

कौन तुम्हारी जाति कहां से आए स्वामी। पुछैं पुरूष कबीर धनी साहिब निःकामी।।
राम कृष्ण कोट्यो गए धनी एक का एक। जिन्द कहै धर्मदास से पूछो ज्ञान विवेक।।
जठर अग्नि से राखै साख सुनौं धर्मदासा। तजि पत्थर की पूजा छोड़ यह बोदी आशा।।
जाका करो विचार सकल जिन सृष्टी रचाई। वार–पार नहीं कोय बोलत सब घट मांही।।
हम उतरे त्व काज शुन्य सैं किया पियाना। शब्द रूप धरि देह समझ बानी सुर ज्ञाना।।
बेद कतेब न जाको पावें, अठारह पुराण कथा नित गांवैं।
सनक सनन्दन ब्रह्म थाके, अनन्त कोटि शंकर पद भाखे।।
निर्णय किन्हें न किन्हा भाई, कोटि विष्णु गए दुनि रचाई।
चतुर्भुजि नहीं अष्ट–अनादं, संहज भुजा कोए जाने साधम।
शब्दै–शब्द रहगा भाई, दुनी सृष्टी सब प्रलय जाई।
संख भूजा पर संख स्थूलं, जाका उर्धव विमानं झूलं।
चलसी (नष्ट हो जाऐगें) स्वर्ग पाताल समूलं, चलसी चन्द्र सूर दो फूलं।
जो आरम्भ चलै धर्मदासा, पिण्ड प्राण चलसी घट श्वासा।
इन्द्र कुबेर वरूण, धर्मराजा, ब्रह्मा, विष्णु, शिव चलै सब साजा।
चले आदि माया ब्रह्म ज्ञानी, हम नहीं चलें जो पद प्रवानी।।
अक्षर रूप रहै नहीं कोई, जिन एती लीला समोई।
परम अक्षर है रूप हमारा, हम नहीं चलें चलै संसारा।

नोट :- धर्मदास सम्बन्धित अधिक वाणी पढें कृप्या इसी पुस्तक के पृष्ठ 394 से 400 पर।

भावार्थ :- उपरोक्त वाणी में परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को स्वामी (प्रभु) कह कर

मथुरा में सम्बोधित किया था। परमेश्वर की आधीनता तथा अपनी अज्ञानता को याद करके चिन्तित हो रहा था। परमेश्वर कबीर जी ने अपनी स्थिती स्पष्ट करते हुए। निम्न वाणी में कहा था कि हे धर्मदास! जिन से श्री राम तथा श्री कृष्ण जी की साधना करके आप आत्मकल्याण मान रहे हो ये नाशवान हैं। करोड़ों श्री राम व श्री कृष्ण जी मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं परन्तु अविनाशी परमात्मा मैं हूँ। मैं सनातन तथा सदा से एक हूँ, अन्य सब जन्मते मरते रहते हैं। जिस परमेश्वर ने यह सृष्टी की रचना की है। उसका विचार कर उसी परमात्मा की शक्ति से जीव गति कर रहा है। हे धर्मदास! मैं तेरे लिए सतलोक से चलकर यहाँ आया हूँ। मैं वही पूर्ण परमात्मा हूँ जिस को वेद ज्ञान अनुसार साधना करने वाले ब्रह्मा जी व उनके पुत्र सनकसन्नदन आदि भी मुझे प्राप्त नहीं कर सके। भगवान शंकर जी ने भी अपने अनुभव के ज्ञान की बहुत वाणी -श्लोक बोले हैं। जैसे योग वशिष्ठ आदि रचनाऐं भगवान शंकर जी के ज्ञान से सम्बन्धित हैं। किसी को भी निर्णायक ज्ञान प्राप्त नहीं है। अपने-२ अनुभव को ही उत्तम मानकर साधना करते हैं। करोड़ों विष्णु मर लिए संसार की स्थिती का पदभार संभाल कर। परन्तु अपने जन्म-मरण के छुटकारे अर्थात् मोक्ष के विषय में विचार नहीं किया। सत्यलोक तथा उससे ऊपर के लोक तथा उनके वासी अविनाशी हैं। उससे नीचे की सर्व रचना नष्ट हो जाएगी। अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म के सात संख ब्रह्मण्ड नष्ट हो जाएगें। परन्तु मैं परमअक्षर पुरूष हूँ। मैं तथा मेरा सतलोक आदि ऊपर के लोक व निवासी कभी नष्ट नहीं होते।

उपरोक्त विचारों को याद करके धर्मदास जी फिर रोने लगा। आमिनी देवी उपरोक्त विचारों को सुनकर समझ गई वह सन्त जो भक्त धर्मदास जी को मिला था। वह मनुष्य नहीं स्वयं परमेश्वर ही था। परमेश्वर ने आमिनी देवी में प्रेरणा की जिस कारण आमिनी देवी ने धर्मदास जी को रोने से चुप कराके कहा हे पति देव ! आप की यह दशा मुझसे नहीं देखी जा रही है। क्या उस सन्त ने कहीं अपने मिलने का स्थान या साधन बताया था? तब धर्मदास जी को याद आया कि अन्तर्धान होने से कुछ ही क्षणपूर्व जिन्दा महात्मा ने कहा था हे धर्मदास जी! रूष्ट ना हो मैं चलता हूँ। मैं वहाँ अवश्य जाता हूँ जहाँ पर पूर्ण श्रद्धा से धर्म भण्डारा (धर्म यज्ञ) किया जाता है।

धर्मदास जी ने अपनी पत्नी को वह सर्व वृतांत बताया जो परमेश्वर कबीर जी ने अन्तर्धान होने से पूर्व कहा था। भक्तमति आमिनी देवी ने कहा हे भक्त जी ! आप खुले दिल से धर्म भण्डारा (धर्मयज्ञ) करो। यदि आप नहीं रहे तो इस धन का हम क्या करेगें? यह मेरे किस काम का? आप की यह दशा मुझ से अब देखी नहीं जाती। अपनी पत्नी के मुख से धर्म यज्ञ करने की बात सुनकर धर्मदास जी में मानो करंट (शक्ति) आ गया हो। अति उमंग में भर कर तीन दिन का धर्म यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। दूर-2 तक निमन्त्रण पत्र साधु-सन्तों व भक्तों को भिजवाए। निश्चित तिथी को धर्मयज्ञ प्रारम्भ हुआ प्रथम दिन तथा दुसरे दिन भी परमेश्वर जिन्दा रूपधारी उन सन्तों में दिखाई नहीं दिए। धर्मदास जी बड़ी उत्सुक्ता से प्रत्येक साधु के चेहरे को देख रहा था परन्तु जिन्दा सन्त के दर्शन न होने के कारण रात्री भर जागा तथा रोता रहा। अपने मन में निर्णय कर लिया कि यदि कल भण्डारे के अन्त तक भी जिन्दा महात्मा दिखाई नहीं दिए तो सर्व साधु भक्तों को विदा करके एकान्त स्थान पर जाके आत्महत्या करूगां। जो साधना करता था वह पूर्ण रूप से व्यर्थ है। वास्तविक भक्ति विधि मुझे प्राप्त नहीं हुई। परमेश्वर की भक्ति के बिना यह शरीर पशु तुल्य है।

तीसरे अर्थात् धर्मयज्ञ के अन्तिम दिन दोपहर (दिन के 12 बजे) तक भी जिन्दा महात्मा दिखाई नहीं दिए। तब तक लगभग सर्व भक्त व सन्त भोजन ग्रहण करके जा चुके थे केवल 40 या 50 भक्त जनों व सन्त जनों की अन्तिम पंक्ति भोजन ग्रहण कर रही थी। उनमें भी जिन्दा महात्मा नहीं था।

धर्मदास जी की आँखों में आँसु तथा दिल में बेचैनी (अशान्ति) थी। धर्मदास आँखे फाड़-2 कर जिन्दा को देख (खोज) रहा था तथा मन-2 में कह रहा था। हे जिन्दा परमेश्वर! आज के बाद तेरा यह दास इस संसार में नहीं रहेगा, मैंने अपने पैर पर आप ही कुल्हाड़ी मारी है, आप का दोष नहीं दाता। इतना विचार कर ही रहा था अचानक धर्मदास जी की दृष्टि एक कदम के वृक्ष नीचे बैठे व्यक्ति पर पड़ी जो यज्ञ स्थल से लगभग 100 फुट की दूरी पर था। धर्मदास जी ने देखा कि वही जिन्दा महात्मा कदम के पेड़ के नीचे विराजमान है। धर्मदास जी अत्यन्त प्रसन्न हुआ दौड़ा-2 वृक्ष के निकट गया। फिर ध्यान से देखा वही जिन्दा सन्त जी हैं। धर्मदास जी चरणों में गिर कर फूट-2 कर रोने लगा तथा कहाः-

अवगुण किए तो बहुत किए, करत ना मानी हार। भावैं बन्दा बख्स दियो, भावें गर्दन तार।।
अवगुण मेरे बाप जी, बख्सो गरीब निवाज। जो मैं पूत कपूत हूँ, बहुर पिता कुँ लाज।।
मैं अपराधी जन्म का, नक शक भरे विकार। तुम दाता दुःख भंजना, मेरी करो सम्भार।।

हे परमेश्वर! मुझ अपराधी को क्षमा कर दो। मुझ से भारी भूल हुई है, आप दाता दुःख विनाशक हो। मैं आपके पुत्रवत हूँ, बच्चे गलती कर देते हैं, आप पिता रूप सन्त हो हमारे अवगुणों को क्षमा करने वाले हो। आपने मुझ दास को दर्शन देकर अति कृपा की है। आप कृप्या मेरे घर चलने का कष्ट करें। यह सामने आप के दास की झोंपड़ी है। परमेश्वर जिन्दा ने कहा धर्मदास! आप इन सर्व सन्तों व भक्तों को विदा करो। इनसे मेरे विषय में मत बताना। धर्मदास ने कहा हे परवरदीगार आप यहाँ से मत जाना अन्यथा मेरे प्राण चले जाऐंगे। यह कह कर फिर आँखें नम कर ली। परमेश्वर ने कहा नहीं धर्मदास अब नहीं जाऊँगा आप निश्चिन्त होकर अपना कार्य समाप्त करो। धर्मदास मायूस दृष्टि से देखने लगा, जैसे विश्वास न हो रहा हो कि मैं लौट कर आऊँगा तब जिन्दा सन्त जी मुझे मिलेगें भी या नहीं? जिन्दा ने धर्मदास के चेहरे को पढ़कर कहा जा प्यारी आत्मा मैं यहीं मिलुंगा। धर्मदास जी दो कदम आगे रखते थे, फिर मुड़ कर देख लेते। सर्व सन्तों व भक्तों को विदा करते-2 भी पचास बार जिन्दा की ओर देखा। फिर तुरन्त ही जिन्दा महात्मा के पास आकर घर चलने की प्रार्थना की जिन्दा वेशधारी कविर्देव अपनी प्रिय आत्मा धर्मदास जी के साथ घर गए तथा उचित आसन जो पहले दिन से लगा रखा था। उस पर परमेश्वर को बैठाया।

धर्मदास जी ने अपनी पत्नी आमिनी देवी से कहा यह मिल गया मेरा खोया हुआ धन आजा जल्दी देखले। दोनों (पति-पत्नी) परमेश्वर का एक-2 पैर पकड़ कर, श्रद्धा व प्रेम के आंसु बहाने लगे। धर्मदास जी बोले हे दीनदयाल! आज आपने मुझ दास को जीवन दान कर दिया। यदि आज आप नहीं आते तो; आज यह दास इस संसार में नहीं रहता। आमिनी देवी ने कहा हे दयालु सन्त जी! आपने अपने बच्चे को इतना कष्ट नहीं देना चाहिए था। यह तो बहुत कोमल हृदय का व्यक्ति है। यदि मैं इसे सान्तवना न देती तो यह कब का रो-2 कर मर गया होता। कबीर परमेश्वर (कविर्देव) बोले हे बेटी आमिनी देवी! मैंने भक्त धर्मदास को वियोग का दुःख इसलिए दिया क्योंकि

यह बहुत हठी स्वभाव से तत्वज्ञान का आँखों देखे प्रमाणों के पश्चात् भी विरोध कर रहा था। इसको इतना ताव (गर्मी) देना अति आवश्यक था। जैसे कारीगर लोहे को गर्म करता है फिर वह लोहे पर चोट लगाता है तथा वह ताव युक्त लोहा नर्म हो जाता है। जिस तरह भी कारीगर मोड़ना चाहता है मुड़ जाता है। उस गर्म लोहे के उत्तम बर्तन व औजार बना कर अधिक मुल्यवान बना देता है। ठण्डे लोहे पर कितनी ही चोटें लगाऐं वह टस से मस नहीं होता। ठीक इसी प्रकार भक्त धर्मदास जी शास्त्रविरूद्ध ज्ञान के आधार से इतने कठोर हो चुके थे कि यथार्थ ज्ञान को ग्रहण करने को भी तैयार नहीं थे। अब इस को वियोग रूपी अग्नि में छः महिने गर्म किया है। यह अब नर्म लोहा हो चुका है। अब इसको तत्व ज्ञान सुनाऊंगा तो यह सर्व ज्ञान को रूचि पूर्वक सुनेगा तथा जैसे मैं इसकी भक्ति विधि की दिशा मोड़ना चाहूँगा यह मुड़ जाएगा। इसलिए यह छः महीने का कष्ट इस पुण्यात्मा के लिए वरदान सिद्ध होगा।

इस छः महीने के समय में भक्त धर्मदास जी ने कई बार आत्महत्या करने की बात भी सोची परन्तु मैंने गुप्त प्रेरणा से इस का मन बदल कर इसके जीवन की रक्षा की। यदि मैं अन्दर से इस पुण्यात्मा को सहारा न देता तो काल भगवान (ब्रह्म) इस से आत्महत्या करा देता। क्योंकि वह नहीं चाहता कि किसी आत्मा को उसके काल जाल का पता चल जाए तथा वह काल के जाल से निकल जाए। मैंने इस पुण्यात्मा धर्मदास जी को ऐसे सुधारा है, जैसे कुम्हार कच्चे घड़े को तैयार करते समय एक हाथ घड़े के अन्दर डाल कर सहारा देता है। तत्पश्चात् ऊपर से दूसरे हाथ से चोटें लगाता है। इस विधि से उस कच्चे घड़े को सुन्दर आकार देता है। यदि अन्दर से हाथ का सहारा घड़े को न मिले तो ऊपर की चोट को कच्चा घड़ा सहन नहीं कर सकता वह नष्ट हो जाता है। नीचे हाथ का सहारा देकर ऊपर से चौंटे लगाकर उस घड़े की सर्व त्रुटियाँ समाप्त करता है। जिस कारण से वह घड़ा पूर्ण मूल्यवान हो जाता है। यदि थोड़ा सा भी टेढ़ापन घड़े में रह जाए तो उस की कीमत (मूल्य) नहीं होती। व्यर्थ में फैंकना पड़ता है। इसी प्रकार गुरूदेव अपने शिष्य की आपत्तियों से रक्षा भी करता है तथा मन को रोकता है तथा प्रवचनों की चोटें लगा कर सर्व त्रुटियों को निकालता है।

कबीर, गुरू कुम्हार शिष्य कुम्भ है, घड़ घड़ काढे खोट।अन्दर हाथ सहारा देकर, ऊपर मारै चोट।।

परमेश्वर ने धर्मदास जी को बताया हे धर्मदास! आप को काल जाल से निकालने के लिए सतयुग से ही तेरे पीछे पड़ा हूँ। परन्तु सर्व प्राणी इतने अबोध बच्चे हो मुझ अपने पिताजी का हाथ छोड़कर इस संसार रूपी मेले में लुप्त हो जाते हो। जो आपको कुछ भी सुविधा नहीं दे सकते। उनकी मीठी-2 बातों में आकर उनके पास चले जाते हो। मेले में बहुत सी दुकानें होती है। कोई आवाज लगा रहा होता है, ले लो गुब्बारे, कोई कहता है, ले लो खिलौने वाली कार, कोई कहता है ले लो केले, आम, सेब, सन्तरे आदि। कोई मिठाई लेने को कहता है।

एक छोटा बच्चा अपने पिता की ऊंगली पकड़े मेले में पहुँचा। उसने उपरोक्त आवाजें सुनी तो उन्हें प्राप्त करने के लिए अपने पिता की ऊंगली छोड़कर दूसरी ओर कुछ दूरी पर रखी वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए दौड़ गया। उस मेले में पिता से बिछुड़ गया। उसने सोचा था कि वे व्यक्ति कह रहे हैं आओ ले लो मिठाई, खिलौने, फल आदि वे निःशुल्क (मुफ्त) बांट रहे होंगे। वहाँ जाकर बच्चे

ने खिलौने वाली कार उठा ली तथा दूसरी दुकान पर फल उठाने के उद्देश्य से चलने लगा तो दुकानदार ने बच्चे के हाथ से कार छीन ली तथा कहा निकाल पचास रूपये। वह अबोध बच्चा रोने लगा। उसको बुरी तरह रोते देखकर एक व्यक्ति उसे अपने साथ ले गया तथा अपने होटल पर बर्तन साफ करने की ट्रेनिंग देकर नौकर बना लिया। वह मजदूरी करके वांछित वस्तुऐं भी प्राप्त नहीं कर पाता। यदि वह बच्चा अपने पिता के संग रहता तो पिता जी उस बच्चे को वे मेले वाली वस्तुऐं भी दिलाता तथा सीने से लगा कर प्यार भी करता तथा उसको अपनी सर्व सम्पति भी सौंप देता। इस उदाहरण से शिक्षा मिलती है कि जो पूर्ण परमात्मा का संग अर्थात् भक्ति त्याग कर अन्य देवताओं की पूजा (मजदूरी) करते हैं तो वे देवता उन साधकों को केवल किए कर्म का फल ही प्रदान करते हैं। अन्य देवताओं की साधना (मजदूरी) से साधक को बहुत ही कम लाभ होता है तथा दोनों कर्मों (पाप तथा पुण्य) का फल प्राप्त होता है।

एक पूर्ण परमात्मा के अतिरिक्त अन्य देवताओं (प्रभुओं) की साधना से पाप नष्ट (क्षमा) नहीं होते। केवल पूर्ण ब्रह्म की वास्तविक साधना को विधिवत् करने से ही साधक के पाप क्षमा होते हैं तथा केवल पुण्यों के फल स्वरूप ही सुख अर्थात पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है। जैसे किसान फसल उगाता है। उस फसल में खरपतवार भी बहू संख्या में उगता है। एक दवाई ऐसी विकसित हो चुकी है जो फसल में सिंचाई करते समय जल में मिलाई जाती है। वह केवल खरपतवार को नष्ट कर देती है परन्तु फसल को हानि नहीं करती। इस प्रकार स्वच्छ फसल तैयार होती है। जो अधिक उपजती है तथा अधिक मुल्य में बिकती है। जिनको उस औषधी का पता नहीं, उनकी फसल में खरपतवार सहित फसल पकती है जिस कारण से उपज भी कम होती है तथा कणक स्वच्छ न होने के कारण बहुत कम मूल्य में बिकती है।

इसी प्रकार जो सारनाम की साधना है। वह पाप नाशक औषधी जानो तथा सत्यनाम रूपी उत्तम बीज जानो, इस सत्यनाम रूपी बीज को बोकर, सारनाम रूपी पाप (खरपतवार) नाशक औषधी डाल कर भक्ति रूपी फसल से साधक अधिक मुल्य प्राप्त करता है तथा भक्ति रूपी धन से धनी होकर सत्यलोक में चला जाता है। जहाँ से बिछुड़ कर आया था। जहाँ पर पूर्व सृष्टी के साधन सम्पन्न प्राणी अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त हंस आत्माऐं रहती है। (यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 16 में है) वह सत्यनाम व सारनाम वाली पूर्ण मोक्षदायक साधना केवल मेरे पास है, मेरे (कबीर परमेश्वर) अतिरिक्त पूरे विश्व में किसी को ज्ञान नहीं है।

धर्मदास जी ने विनम्रता से कर बद्ध होकर प्रश्न किया। हे जिन्दा महात्मा जी! क्या आप सतयुग में भी आए थे?

कबीर देव (कबीर परमेश्वर) ने उत्तर दियाः-

सतयुग में सत्सुकृत अवतारा,त्रेता नाम मुनिन्द्र मेरा। द्वापर में करूणामय कहाया, कलयुग में कबीर कह टेरा।।
चारों युग में हम पुकारे, कूक कहा हम हेल रे। हीरे माणिक मोती बर्षे, यह जग चुगता ढेल रे।।
सतयुग में मनु समझाया,काल वश रहा मार्ग नहीं पाया। उल्टा दोष मोही पर लगाया, वामदेव मेरा नाम धराया।।
त्रेता में नल नील चेताया,लंका में चन्द्र विजय समझाया। सीख मन्दोदरी रानी मानी, समझा नहीं रावण अभिमानी।।
विभिषण किन्ही सेव हमारी, तातें हुआ लंका छत्तरधारी। हार गए थे जब त्रिभुवन राया, समुद्र पर सेतु मैं ही बनवाया।।
तीन दिवश राम अर्ज लगाई, समुद्र प्रकट्या युक्ति बताई। नल नील की शक्ति बताई, नल नील में मस्ती छाई।।

उन नहीं किन्हा याद गुरूदेव, तातें हम शक्ति छीन लेव। नल नील को लगी अंघाई, तातें पत्थर तिरे नहीं भाई।।
मैं किन्हें हल्के वे पत्थर भारी, सेतु बांध रघुवर सेना तारी।लीन्हें चरण राम जब मोरे, लक्ष्मण ने दोहों कर जोरे।।
दोनों बोले एक बिचार, ऋषिवर तुम्हरी शक्ति अपार। हनुमान नत मस्तक होया, अंगद सुग्रीव ने माना लोहा।।
सेतु बन्ध का भेद न जाने भाई, सुकी दीन्हीं राम बड़ाई। रामचन्द्र कह कोई शक्ति न्यारी, जिन्ह यह रचि सृष्टी सारी।।
अज्ञानी कहें रामचन्द्र रचनेहारा, जिने दशरथ घर लीन्हा अवतारा। ऐसी भूल पड़ी धर्मदासा,यथार्थ ज्ञान न किस ही पासा।।
ऊवाबाई बकें ब्रह्मज्ञानी, तत्वज्ञान की सार न जानी। द्वापर पाण्डव यज्ञ पूर्ण किन्हीं, हो गई थी सबन की हीनि।।
संहस अठासी बैठे ऋषि जन, सब ही खा लिया था भोजन।तेतीस कोटि देवता सारे,संख नहीं बजा रहे सब हारे।।
द्वादश करोड़ ब्राह्मण आए। बैठे सबी मुंह लटकाए। ब्रह्मा, विष्णु, शिव गुप्त यज्ञ मांहे, बजा न संख भोजन खाऐं।
छपन करोड़ यादव आरे, देख रहे तमासा सारे। कृष्ण चन्द्र पर लगी आशा भारी, नहीं बजा सके शंख बाल बिहारी।।
एक बाल्मीक साधक म्हारा, उन समझा ज्ञान तत् सारा। श्री कृष्ण जब ध्यान लगाया, निरंजन ने गुप्त भेद बताया।।
कृष्ण चन्द्र पाण्डव समझाया, एक सुदर्शन भक्त बताया। वह यज्ञ में आवै भाई, तब यह संख आवाज कराही।।
बाल्मीकी है साधक पूरा, पूर्ण प्रभु के चरण हजुरा। पांचों पाण्डव चले सुदर्शन पासा, मैं किन्हा एक अजब तमासा।।
भेज दिया सुदर्शन केही ठोरा,सुदर्शन रूपधरि बन बैठा मैंभोरा(भोला)।छः जनोंमोहे साष्टांग लगाई,तब मैं वाकेसंग यज्ञ महि आई।।
मोहे देख मन में सबन हंसी आई,यह शुद्र कैसे शंख बजाई।द्रोपदी भोजन धर लाई थारी,खीरसब्जी ओर हलवा पुरी न्यारी न्यारी।।
मैं किन्ही सब एकम्–एका, द्रोपदी ने यह सब देखा। अन्दर रोष किया द्रोपदी रानी, यह शुद्र महा अज्ञानी।।
जिने नहीं भोजन खाना आय, कैसे दे यह संख बजाय।घुवें आंख फुटि भोजन बनाया, अनाड़ी ने सर्व मिलाया।।
फूट गये हैं भाग हमारे, ऐसे मूर्ख घर पधारे। द्रोपदी के दिल की बातां, जान गए हम फिर खाई भातां।।
पांच ग्रास भोजन खाया,पांच बार की आवाज संख राया। कृष्ण को मैं प्रेरणा दिन्हीं,तब वह जाना मेरी माया झिनी।।
कृष्ण कहा यह पूर्ण करतारा, इनसे बाजे संख तुम्हारा। कृष्ण चन्द्र ने द्रोपदी को समझाया, तब मेरे चरण धोए चरणामृत बनाया।।
पीया द्रोपदी हो आधीन अपारा, शेष पिया श्री कृष्ण सारा। बाजा संख अखण्ड धुन लाई, पूरी पृथ्वी पर आवाज सुनाई।।
तीनों लोकों में सुनि संख आवाज, तुम सुदर्शन सन्तन सिर ताज।ताको सतभक्ति समझाई, अपनी महिमा आप बताई।।
मेरे गुरू करूणामय तत्वज्ञानी, ये सब ऋषि देव है अभिमानी।उनसे दिक्षा लो चल सब भाई, तातें तुमरा कल्याण ह्वजाई।।
माने नहीं मती के हीना, कृष्ण बोले बचन अधिना। हम पर कृपा तुम बहु किन्ही, हमरी लज्जा रख तुम लिन्हीं।।
कृष्ण कह तुझे स्थान पहुँचाऊँ, रथ–घोड़े जोड़ शिघ्र मंगाऊं। एता कष्ट ना करो सुजाना, तब हम हुए अन्तर्धाना।।
अब मैं कलयुग में लीन्हा अवतारा,काशी नगर है अस्थान हमारा। कबीर नाम है मेरा भाई,ऋषि रामानन्द से दिक्षा पाई।।
मात–पिता मेरे नहीं बालक रूप प्रकट्या, लहरतारा तालाब कमल पर तहाँ जुलाहे ने पाया।।
आया जगत् भव सागर तारण, साचि कहूं जग लागै मारन। जो कोई माने कहा हमारा, फिर नहीं होवे जन्म दुबारा।।
ऐसा ज्ञान सुना जब दोई, चरण पकड़ दम्पत्ति रोई। हमें ज्ञान सुनाओ जिन्दा, काटो जन्म मरण गल फंदा।।

उपरोक्त अद्वितीय ज्ञान का संकेत सुनकर दोनों (धर्मदास तथा आमिनी) ने परमेश्वर से पूर्ण ज्ञान सुनाने की प्रार्थना की। परमेश्वर कबीर जी ने सृष्टी रचना पुनः सुनाई :- (कृप्या पाठकजन पढ़े सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) तत्वज्ञान को परमेश्वर के मुख कमल से सुनकर दोनों श्रद्धालु (धर्मदास व आमिनी) अति प्रसन्न हुए व प्रत्येक प्रत्यक्ष प्रमाण को अपने ही सद्ग्रन्थों में देख कर निरूत्तर हो गए। दोनों ने परमेश्वर से उपदेश (दिक्षा) प्राप्त किया। परमेश्वर कबीर जी ने प्रथम मन्त्र दिया (जो मन्त्र यह दास अर्थात् रामपाल दास देता है) एक दिन ज्ञान चर्चा करते समय धर्म दास जी ने कहा हे परवरदीगार! आप का ज्ञान अद्वितीय है परन्तु आज तक किसी ने नहीं बताया कि श्री ब्रह्माजी, श्री विष्णु जी तथा शिवजी से भी अन्य परम ईश्वर है। यदि आप

अपने धाम (सतलोक) की एक झलक मुझ दास को दिखा दें तो मेरा मन मुझे भ्रमित नहीं करेगा।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा अच्छा भक्त आप को सतलोक लिए चलता हूँ। यह कह कर धर्मदास की आत्मा को शरीर से भिन्न करके परमेश्वर कबीर जी अपने साथ ले गए। धर्मदास जी अचेत हो गए अर्थात् धर्मदास जी का शरीर रह गया। जो अचेत अवस्था में नजर आ रहा था परन्तु मृतक नजर नहीं आ रहा था। पूर्ण परमात्मा ने भक्त धर्मदास जी को एक ब्रह्मण्ड की सर्व व्यवस्था दिखाई, तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु व शिवजी) के लोक तथा स्वर्ग-नरक तथा इन्द्र का लोक, धर्मराज का लोक उस के ऊपर ब्रह्मलोक तथा ब्रह्मलोक में बने नकली सतलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोक दिखाए जो काल रूपी ब्रह्म का माया जाल है। जो जीव को धोखा देने के लिए बनाया है । क्योंकि उस को पता है कि परमेश्वर अपनी आत्माओं को लेने के लिए अपने किसी पुत्र को भेजेगा तथा वह ऊपर की जानकारी देगा। उसके ज्ञान को जान कर जीवात्मा इस नकली सतलोक में आकर अपने आप को पूर्ण मुक्त समझेंगे तथा मेरे (काल के) जाल में फंसे रहेंगे।

इसके पश्चात् ब्रह्मलोक के सर्वोपरि स्थान पर इसी काल रूपी ब्रह्म ने तीन गुप्त स्थान बनाए है। जहाँ पर यह अपनी पत्नी दुर्गा के साथ साकार में रहता है। इसी ब्रह्मलोक में एक दुर्गा का लोक भिन्न भी है। इसके पश्चात् काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का भेद दिखा व बताकर परमेश्वर कबीर देव जी अपनी प्यारी आत्मा धर्मदास जी को परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों से पार अपने सतलोक में ले गए। भंवर गुफा के तुरन्त पश्चात् सतलोक प्रारम्भ हो जाता है। धर्मदास जी सतलोक में पहुँच कर अति प्रसन्न हुआ। वहाँ के हंस आत्माओं से मिला तथा काल जाल में फंसने के कारण से परिचित हुआ।

धर्मदास जी ने देखा कि एक बहुत बड़े गुबन्द में एक श्वेत आसन पर परमेश्वर विराजमान हैं। परमेश्वर के शरीर से अत्यधिक प्रकाश निकल रहा है। धर्मदास जी को साथ लेकर गया था वह जिन्दा सन्त गुबन्द में प्रविष्ट हुआ तथा परमेश्वर के सिर पर चंवर ढुराने लगा। धर्मदास जी ने सोचा कि सर्व सृष्टी रचनहार, पूर्ण परमात्मा तो सिंहासन पर विराजमान है तथा यह जिन्दा सन्त यहाँ का सेवक लगता है जो परमेश्वर पर चंवर कर रहा है। उसी समय धर्मदास ने देखा कि, तख्त (सिंहासन) पर बैठे तेजोमय शरीर युक्त परमेश्वर ने आसन छोड़ दिया तथा जिन्दा सन्त उस सिंहासन पर बैठ गया तथा परमेश्वर जिन्दा पर चंवर करने लगा। धर्मदास को अनोखा लगा कि एक सेवक पर परमेश्वर चंवर किसलिए कर रहे हैं ? देखते ही देखते तेजोमय शरीर युक्त परमेश्वर सिहांसन पर विराजमान जिन्दा सन्त के शरीर में समा गए अकेले जिन्दा सन्त तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। तब धर्मदास को ज्ञान हुआ कि यह जिन्दा कोई साधारण सेवक या सन्त नहीं है। ये तो पूर्ण परमात्मा है।

धर्मदास जी से कबीर परमेश्वर ने कहा धर्मदास मैं! वर्तमान में बनारस (काशी) शहर में कबीर जुलाहे की भूमिका करने गया हुआ हूँ। वहाँ पर काल द्वारा फैलाए अज्ञान को समाप्त करने के लिए तत्व ज्ञान प्रचार कर रहा हूँ। गुरु मर्यादा बनाए रखने के लिए मैंने स्वामी रामानन्द महाराज जी को गुरू बनाया है। उनको भी मैं यहीं (सतलोक में) लाया था तब स्वामी रामानन्द जी का संस्य नष्ट हुआ था तथा अब वे मेरे द्वारा बताए तत्वज्ञान के आधार से भक्ति कर रहे हैं तथा पूर्व वाली

साधना त्याग दी है। अब आप लौट कर अपने घर जाओ आप का परिवार आप को अचेत देख कर तीन दिन से दुःखी है। धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से विनय की हे परमेश्वर! मुझे यहीं अपने पास सत्यलोक में रख लो उस काल लोक में मत भेजो। वहां तो प्रत्येक प्राणी महाकष्ट भोग रहा है। सर्व प्राणी काल रूपी ब्रह्म को ही परमेश्वर मान कर उसी की साधना करके जन्म-मृत्यु-नरक व स्वर्ग में हरहट के कुएं की तरह चक्र लगा रहे हैं।

मोहे राख लियो महाराज हम से बीगड़ी है। टेक
बीगड़ी है महाराज हम से बीगड़ी है।।
हम जाने वह परिवार हमारा, वह तो सब काल का चारा।
मत भेजो महाराज काल की नगरी है (मोहे राख लियो---------)
धर्म–कर्म की सार न जानी, बना फिरूं था महा अभिमानी।
बचा लियो महाराज, आग सी लगरी है (मोहे राख लियो-----------)
सतलोक है निज घर हमारा, काल बली ने जाल पसारा।
भूल हुई महाराज हम से तगड़ी है (मोहे राख लियो-----------)
धर्मदास है दास तुम्हारा, मत धका दो हे करतार।
दया करो महाराज पाप की गठरी है (मोहे राख लियो-----------)

परमेश्वर ने कहा हे प्रिय आत्मा धर्मदास! जितनी भी आत्माऐं काल के लोक में गई हैं। वे स्वइच्छा से गऐ हैं। जितनी प्रबल इच्छा से काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) के साथ आत्माऐं गई हैं उतनी ही प्रबल इच्छा सतलोक आने की उत्पन्न होगी तब ही यहां सत्यलोक में प्रवेश हो सकेगा। उस से पूर्व आप सर्व आत्माओं ने सत्य साधना करके भक्ति के धनी होना है तथा काल के लोक का ऋण भी चुकाना है। वह तब ही तुम्हें मुक्त करेगा।

{विशेष :– यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 62 व 66 में है गीता ज्ञान दाता काल रूपी ब्रह्म ने श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन (भारत) तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा (जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है) उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा सनातन (सदा रहने वाले अर्थात सत्य) स्थान (लोक) को प्राप्त होगा। (गी.18/मं.62) गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ओम्–तत्–सत् मन्त्र के जाप को पूर्ण परमात्मा प्राप्ति का कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है कि ओम् यह एक अक्षर मुझ ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता) का नाम मन्त्र है जो अन्तिम स्वांस तक जाप करने का है। इसकी नाम जाप की कमाई करनी है। तत् मन्त्र यह सांकेतिक है। इसका जाप परब्रह्म की कमाई का है। सत मन्त्र यह भी सांकेतिक है। जो पूर्ण ब्रह्म की कमाई का है। जो साधक तीन मन्त्र (ओम्–तत्–सत्) का जाप आजीवन करता है तथा शरीर त्याग कर जाता है। तो ब्रह्म अर्थात् काल के ॐ नाम के जाप की कमाई तथा यज्ञ आदि सर्व धार्मिक पूजाऐं ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता) को त्याग देता है। इस ब्रह्म की धार्मिक पूजाओं का लाभ काल लोक में प्राप्त नहीं करता {ॐ नाम की साधना की कमाई से साधक ब्रह्मलोक में बने नकली सत्यलोक में चला जाता है। वहाँ अपने पुण्यों को समाप्त करके पाप कर्मों का फल नरक में भोगता है पश्चात् पूनर् जन्म पृथ्वी लोक पर कर्माधार से प्राप्त करके काल जाल में फंसकर रह जाता है परमशान्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। तत्वदर्शी सन्त के बताए मार्ग अनुसार साधक ॐ नाम के जाप की भक्ति कमाई का प्रतिफल प्राप्त नहीं करता} उसे ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म अर्थात् गीता व वेद ज्ञान दाता) को दे देता है। जिस कारण से साधक ब्रह्म काल के (पाप कर्मों रूपी) ऋण से मुक्त होकर आगे सत्यलोक को प्रस्थान कर देता है तथा तत् मन्त्र (जो सांकेतिक है अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का जाप है) की भक्ति कमाई को परब्रह्म को दे देता है जिस कारण से

परब्रह्म के लोक से पार जाने का ऋण उतर जाता है। सत् मन्त्र (जो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का नाम जाप है जिसके जाप की कमाई से सत्यलोक में स्थाई स्थान प्राप्त करता है) के जाप की कमाई को साथ लेकर त्री नाम साधक सत्यलोक में उस परमेश्वर (सत्य पुरूष) के पास चला जाता है तथा सनातन स्थान अर्थात् सत्यलोक प्राप्त करता है तथा परमशान्ति (पूर्ण मोक्ष) को प्राप्त करता है। उसके पश्चात् साधक लौटकर इस संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका पुनःजन्म नहीं होता। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में भी प्रमाण है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस अन्य उस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है उस की विधि है कि :—

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का हिन्दी अनुवादः—

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। ६६।
सर्वधर्मान् परित्यज्यमाम् एकम् शरणम् व्रज।
अहम् त्वा सर्व पापेभ्यः मोक्षिष्यामि मा शुचः।।

अनुवादः मेरी (सर्वधर्मान्) सर्व धार्मिक पुजाओं, अर्थात् ॐ नाम के जाप की कमाई व यज्ञादि को (माम्) मुझ गीता ज्ञान दाता में (परित्यज्य) त्यागकर (एकम्) उस एक सर्वशक्तिमान परमेश्वर की (शरणम्) शरण में (व्रज)जा (अहम्) मैं अर्थात् गीता ज्ञान दाता (त्वा) तुझे (सर्वपापेभ्यः) सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा (मा शुचः) तू शोक मत कर (गीता अ.18/मं.66)

नोट विशेष :— आज (सन् 2006) तक जितने भी गीता जी के अनुवाद कर्ताओं ने गीता जी के अनुवाद में व्रज शब्द का अर्थ आना किया है जबकि व्रज शब्द का अर्थ जाना, चले जाना, दूर जाना, गमन करना है। तत्व ज्ञान के अभाव से ही श्री मद् भगवत गीता जी के ज्ञान का अपने हिन्दी अनुवाद में अज्ञान किया है। जैसे अग्रेजी के शब्द go का अर्थ जाना होता है यदि go का अर्थ कहीं आना किया हो तो वह उचित नहीं है। उपरोक्त इस विशेष विवरण का भावार्थ है कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य ही है जिसका उल्लेख गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी है। जिस पूर्ण ब्रह्म की शरण में जाने से ही जीवात्मा पूर्ण मोक्ष (परमशान्ति) को प्राप्त करता है। उस के पास जाने का मार्ग तत्वदर्शी सन्त बताएगा (गीता अध्याय 4/मं.34 में तत्वदर्शी सन्त का उल्लेख है) तीन नाम की भक्ति करके प्रथम मन्त्र ओम् अक्षर के जाप की कमाई व यज्ञादि क्रियाओं का पुण्य ब्रह्मकाल (ज्योति निरंजन) में त्याग देने के पश्चात् ऋण मुक्त होकर जीवात्मा निष्पाप होकर सत्यलोक में उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म) के पास चला जाएगा उस परम अक्षर ब्रह्म (पूर्ण परमात्मा) की कृपा से ही प्राणी परमशान्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा। इसीलिए भक्त धर्मदास जी आप को काल के ऋण से मुक्त होना है उस की विधि उपरोक्त है।}

धर्मदास जी ने नम्रता से विनय पूर्वक कहा कि हे परमेश्वर! ब्रह्म (काल) के ऋण से मुक्त होने की विधि क्या है? कृपा मुझ अपराधी को बताईए। परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! में काशी शहर में (भारत वर्ष की पवित्र जमीं पर) ''कबीर'' नाम धारण करके जुलाहे का कार्य करने का अभिनय करके तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करने गया हुआ हूँ। मैंने काशी शहर के लहर तारा नामक जलास्य में एक कमल के फूल पर शिशु रूप धारण किया था। उस दिन नीरू नामक जुलाहा अपनी पत्नी नीमा के साथ उस तालाब में स्नान करने को आया था। वह निःसन्तान था। मुझे बालक रूप में प्राप्त करके उस की पत्नी नीमा का मेरे प्रति अति वात्सल्य हो गया। वे मुझे अपने घर ले गए तथा पुत्र रूप से मेरा पालन किया। मैंने कंवारी गाय का दुध बचपन में पीया था जो मेरी कृपा से ही सम्भव हो सका था। मै जब भी जिस युग में प्रकट होता हूँ तथा एक मानव जीवन जैसी पूर्ण लीला

करने जाता हूँ तो उस समय शिशु रूप ही धारण करता हूँ। तब मेरी परवरिश (पालन) लीला कंवारी गायों से ही होती है।

{विशेषः– यहि प्रमाण ''ऋग्वेद'' मण्डल 9 सुक्त 1 मन्त्र 9 तथा मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20 तक भी है। कृप्या पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 429 से 440 पर}

हे धर्मदास! काल ब्रह्म ने सर्व आत्माओं को जीवरूप प्रदान कर दिया है तथा तत्वज्ञान को छुपा कर लोकवेद (कहे–सुने ज्ञान) पर आरूढ़ किया हुआ है। इसलिए तत्वज्ञान बताने के लिए मैं (कविर्देव) वहाँ तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करके एक पूर्ण जीवन (जो मानव का होता है) पृथ्वी पर रहता हूँ। मुझे प्रसिद्ध कवि की उपाधी भी जनता द्वारा दी जाती है वे मुझ पर विश्वास नहीं करते। भोले श्रद्धालु मुझ परमेश्वर को जान नहीं पाते क्योंकि काल ब्रह्म के लोक वेद के आधार से सर्व काल के दूतों (सन्तों) ने परमेश्वर को निराकार बताया होता है तथा समाधी में उसका प्रकाश शरीर में देखना ही अन्तिम उपलब्धी अर्थात् प्रभु प्राप्ति बताई होती है। जब की चारों वेद साक्षी है कि परमेश्वर सशरीर है। मानव सदृश साकार है। यजुर्वेद अध्याय 5 श्लोक 1 में मेरी दोनों स्थिती में सशरीर साकार होने का प्रमाण है। फिर भी ज्ञानहीन ऋषिजन काल द्वारा हरि गई बुद्धि के कारण लोक वेद को ही उत्तम मानते रहते हैं तथा यही लोक वेद जनता में प्रचार करके दिगभ्रष्ट (गुमराह) करते रहते हैं।

यजुर्वेद अध्याय 5 मन्त्र 1 में लिखा है

अग्नेः तनुः असि। विष्णवे त्वा सोमस्य तनूः असि।

विष्णवे त्वा अतिथ्येः अतिथ्यम् असि विष्णवेत्वा श्येनाय त्वा सोम भृते विष्णवे त्वा अग्नये त्वा रायः पोषदे विष्णवे त्वा (1)

अनुवाद (हिन्दी में) :– (अग्नेः) हे परमेश्वर आपका (तनूः) शरीर (असि) हे अर्थात् हे परमेश्वर आप सशरीर हैं। (विष्णवे) सर्व का पालन करने के लिए (त्वा) आप (सोमस्य) अमर परमेश्वर का (तनूः) शरीर (असी) है। (त्वा) वह परमेश्वर (विष्णवे) तत्व ज्ञान से परिपूर्ण करने के लिए अर्थात् तत्व ज्ञान से आत्माओं का पोषण करने के लिए (अतिथ्ये) अतिथी रूप में आता है उस अतिथी रूप में आए परमेश्वर का (अतिथ्यम्) अतिथी सत्कार करना योग्य है अर्थात् वही तत्वदर्शी सन्त रूप में प्रकट परमेश्वर पुज्य है। (त्वा) वह परमेश्वर (विष्णवे) तत्व ज्ञान द्वारा आत्माओं को पोषण करने के लिए (श्येनाय) अलल पक्षी की तरह शिघ्र गामी होकर यहाँ आकर अज्ञान निन्द्रा में सोए हुओं को जगाने वाला है। (त्वा) वह परमेश्वर आप (सोमभृते) सतपुरूष की भक्तिरूपी अमृत से परिपूर्ण करने वाला (त्वा) आप (विष्णवे) पालन के लिए विष्णु रूप से प्रसिद्ध है। (अग्नेय) परमेश्वर के लिए कोई भी कार्य असम्भव नहीं है वह परमेश्वर (त्वा) आप(रायःपोषदे) भक्ति रूपी धन से परिपूर्ण करने वाला (विष्णवे) व पालन करने के लिए पालन कर्त्ता है।

भावार्थः–इस मन्त्र में वेद ज्ञान दाता ने पूर्ण परमात्मा की महिमा व स्थिति बताई है। इसमें दो बार साक्षी दी है कि परमेश्वर सशरीर है। उस परमेश्वर अर्थात् अमर पुरूष का अन्य शरीर भी है जिसको धारण करके इस लोक में अतिथी अर्थात् महमान रूप में आता है। अतिथी का अर्थ है जिस के आने की तिथी पूर्व निर्धारित न हो। बिना निरधारित तिथी को आने वाले को अतिथी कहते हैं। वह परमात्मा अतिथी रूप में सन्त रूप धारण करके तत्वज्ञान द्वारा सर्व आत्माओं को यर्थाथ भक्ति साधना बता कर भक्तिरूपी धन से धनी बनाता है। वह अलल पक्षी की तरह शीघ्र गामी है। वही पूजा के योग्य है।}

परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! आप काशी में आइए आप को द्वितीय मन्त्र अर्थात् सतनाम प्रदान करूंगा तत् पश्चात् आप की भक्ति कमाई देखकर सारनाम (जो तीन मन्त्र का होता है) प्रदान करके पूर्ण मोक्ष का अधिकारी बनाऊँगा। आप लौट जाओ। चिन्ता मत कर मैं तेरे साथ-2 रहूँगा। काल के द्वारा दी जाने वाली प्रत्येक पीड़ा से तेरी रक्षा करूंगा। तीसरे दिन धर्मदास जी

सचेत हुआ अर्थात होश में आया। अपने पास बैठे परिजनों को देखकर आश्चर्य हुआ कि वास्तव में मैं सतलोक की सैर करके आया हूँ। यदि धर्मदास जी को यह सर्व सतलोक की सैल एक रात्री में हो जाती तो वह इसे स्वपन मात्र मानता। धर्मदास जी के होश में आने से सर्व परिजनों के हृदय में खुशी की लहर दौड़ गई।

धर्मदास जी पृथ्वी पर आकर अति दुःखी हो गए। अपनी पत्नी आमिनी को बताया कि जो जिन्दा महात्मा रूप में अपने घर आए थे वे पूर्ण परमात्मा हैं। उनकी महिमा को मैं आँखों देखकर आया हूँ। वे मुझे अपने साथ सतलोक में लेकर गए थे। आज वापिस भेजा है। यह तो काल का भयंकर लोक है। वह परमेश्वर बनारस (काशी) में कबीर नाम से प्रकट है तथा जुलाहे का कार्य करते हैं। मैं काशी शहर में जाकर परमेश्वर के दर्शन करूंगा। दूसरे दिन धर्मदास जी ने काशी शहर को प्रस्थान किया। काशी शहर में कबीर परमेश्वर का वही रूप जो सत्यलोक में जिन्दा रूप में सिंहासन पर विराजमान देखा था बनारस में देखकर उनके चरणों में गिर गया तथा ध्यान पूर्व देखता रहा। तब परमेश्वर ने बिना नाम पूछे ही कहा आओ धर्मदास मैं आप ही की प्रतिक्षा कर रहा था। परमेश्वर के मुख से अपना नाम सुन कर निःसंस्य हो गया कि ये वही परमेश्वर हैं। धर्मदास जी ने आँखों में पानी भर कर रूंधेकण्ठ से कहा हे दीनदयाल! आप हम पापीयों के लिए अपना सुखदाई स्थान त्याग कर कष्ठ उठाने आए हो।

परमेश्वर बोले, हे प्रिय आत्मा धर्मदास! मैं सर्व प्राणियों का पिता हूँ पिता अपनी सन्तान को सुखी करने के लिए स्वयं अनेकों कष्ट उठाकर भी कष्ट महसूस नहीं करता। परन्तु इस काल ब्रह्म ने मेरी आत्माओं को विपरीत ज्ञान से भ्रमित कर रखा है। जिस कारण से ये मुझे पहचान नहीं पा रहे। आपको इसलिए सतलोक के दर्शन कराए हैं कि आप मेरे ज्ञान के गवाह (साक्षी) बन सको। आने वाले समय में आपको मेरा साक्षी माना जाएगा।

मैं रोवत हूँ सृष्टी को, सृष्टी रोवत मोहे, कहे कबीर इस वियोग को, जान न सकता कोए।।

भावार्थः-कबीर परमेश्वर ने कहा मैं अपनी आत्माओं के लिए रोता हूँ कि मुझे पहचानों और सतलोक चलो। आत्माऐं सुखदायक परमेश्वर को खोज रहे हैं परमशान्ति प्रदान करने वाले परमेश्वर के लिए रोते हैं। मैं कहता हूँ कि मैं पूर्ण परमात्मा हूँ। ये काल ब्रह्म द्वारा भ्रमित आत्माऐं कहती हैं कि तु जुलाहा कैसे पूर्ण परमात्मा हो सकता है। इस प्रकार हमारे वियोग को कोई नहीं समझ रहा। आप जैसे पुण्यात्माओं के द्वारा इनका भ्रम निवार्ण करके तत्वज्ञान प्रदान करूंगा तथा सत्य साधना बता करके भक्ति के धनी बनाऊंगा। जिससे ये सर्व साधक काल ब्रह्म के ऋण से मुक्त होकर पूर्ण मोक्ष प्राप्त करके मेरे पास सत्यलोक में आनन्द से रहेंगे।

''तप्त शिला पर जल रहे प्राणियों से वार्ता''

धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे परमेश्वर! हम आप के साथ विश्वास घात करके आए थे। आपको हम नीच आत्माओं पर फिर भी दया आ गई। आप का काल ब्रह्मके इस भयंकर लोक में कैसे तथा कब-कब आगमन हुआ।

उत्तर (कबीर देव का):- जिस समय सृष्टी रचना की तथा काल ब्रह्म ने इन आत्माओं को

आकर्षित किया। ये इस के साथ स्वःइच्छा से यहाँ आ गए। कुछ समय पश्चात् ही काल ब्रह्म इनको तप्तशीला पर गर्म करके तड़फाने लगा तथा अन्य कष्टमय प्राणियों के शरीर में डालकर कष्ट भोगने के लिए विवश करने लगा तब सर्व आत्माऐं परमश्ेवर को याद करके सुख की इच्छा करने लगी। तब अपनी आत्माओं का कष्ट मुझ से देखा नहीं गया। मैं प्रथम सत्ययुग में इस काल ब्रह्म के लोक में अन्य रूप धारण करके आया।

सर्व प्रथम उस स्थान पर पहुँचा जहाँ पर प्रतिदिन एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सुक्ष्म शरीर को तप्त शिला पर गर्म करके उनसे निकले मैल को खाता है। तप्तशिला, एक पत्थर की टुकड़ी है। जो तवे के आकार की है जो स्वतः गर्म रहती है। उस समय उस तप्तशिला पर एक लाख प्राणी तड़फ रहे थे, हा-2 कार मचा था। दिल दहलाने वाली चीखें मार रहे थे। जैसे चावलों से खील बनाते समय चटक-मटक होती है। ऐसे सर्व प्राणी उस तप्तशिला पर चटक रहे थे। मैं उस तप्त शिला के निकट जा के खड़ा हुआ। मेरे प्रताप से तप्तशिला की अग्नि की आंच ने उन प्राणियों को प्रभावित करना बन्द कर दिया। तप्तशिला उसी प्रकार जल रही थी परन्तु मेरी उपस्थिती के कारण अग्नि की आंच उन प्राणियों को जला नहीं रही थी। सर्व प्राणी अपने आप को कष्ट रहित जानकर शान्त होकर उस तप्तशिला पर बैठकर मेरी और देखने लगे। मुझ से पूछा हे परमेश्वर! यहाँ पर हम कौन से कर्म का दण्ड भोग रहे हैं? हे प्रभु! आप की कृपा से हमें अब कोई कष्ट नहीं है। हम अग्नि में बैठे हुए भी अपने आप को सामान्य से भी अधिक सुखी महसूस कर रहे हैं। आप कौन है? क्या आप ही काल ब्रह्म हैं? या कोई उनके अनुचर हो कृपा हमें सर्व भेद बताइऐ?

उत्तर (कविर्देव का):- मैंने उन दुःखी प्राणियों को बताया। हे जीवात्माओं! मैं काल ब्रह्म नहीं हूँ। मैं तत् ब्रह्म अर्थात् वह परमात्मा हूँ। जिसके विषय में वेद भी कहते हैं कि उस पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान हम नहीं जानते उस के विषय मैं तो तत्वदर्शी सन्त ही वास्तविक ज्ञान देते हैं। उन से पूछो। {यजुर्वेद अध्याय 40 श्लोक 10 व 13 में कहा है कि परमात्मा कैसा है? तथा विद्वान कौन है? यह ज्ञान धीराणाम् अर्थात् तत्वदर्शी सन्त ही बताते हैं उनसे सुनो। यही प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में लिखा है कि तत्वज्ञान को तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ जो परमात्मा के विषय में पूर्ण परिचित हैं। तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है। जो श्लोक 1 से 4 के विवरण से स्पष्ट रूप से समझी जा सकती है। गीता अध्याय 13 श्लोक 2 व 11 में भी गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो तत्व ज्ञान है, वही वास्तविक ज्ञान है। ऐसा मेरा मत है।

विचारणीय विषय है कि वेदों व गीता के ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो मेरे द्वारा दिया ज्ञान (वेदों व गीता का ज्ञान) पूर्ण नहीं है उस तत्वज्ञान को तो तत्वदर्शी सन्त ही जानते हैं। उनकी खोज करके अपना कल्याण कराओ।} *वेदों व गीता के ज्ञान के आधार से भक्ति करने वालों को जन्म-मृत्यु, स्वर्ग-नरक का चक्र तथा यह तप्तशिला का कष्ट सदा बना रहेगा। आप जिस काल ब्रह्म के विषय में जानते हो जो लोक वेद के आधार से पुरूषोत्तम प्रसिद्ध है। परन्तु वास्तव में पुरूषोत्तम तो अन्य ही है। प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 16 से 18 में गीता ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उत्तम पुरूषः अर्थात् पुरूषोतम् तो अन्य है। जो परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी प्रभु है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में) फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में अपने विषय में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे तो लोक वेद के आधार से पुरुषोत्तम*

मानते हैं मैं वास्तव में पुरूषोत्तम नहीं हूँ। जो गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में कहता है कि मैं काल हूँ सर्व को खाने के लिए आया हूँ। गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन ने आँखों देखा विवरण कहा कि हे भगवन् आप तो उन ऋषियों को भी खा रहे हो जो आप की वेद मन्त्रों द्वारा स्तुति कर रहे हैं। आप देवताओं तथा सिद्धों के समूह को भी खाने को तैयार हो वे आप से अपनी जान की रक्षा के लिए मंगल कामना कर रहे हैं। काल भगवान ने कहा है कि मैं सर्व को खाने के लिए प्रवृत हुआ हूँ।

हे धर्मदास! उस तप्तशिला पर ऋषि व महर्षि व अन्य वेद पाठ करने व पढ़ने वाले विद्वान भी कष्ट उठा रहे थे। जो वेदों के मन्त्रों से भी परिचित थे। वे सर्व एक स्वर में बोले हे पूर्ण परमात्मा! आप सत्य कह रहे हो यह ज्ञान वेदों में लिखा है। (वेदों का सार ज्ञान ही गीता जी में लिपी बद्ध है) सत्ययुग में सर्व मनुष्य साधनाऐं करते थे। कोई श्री विष्णु जी व श्री शिवजी की, कोई देवी की जो उस समय के गुरूओं ने प्रचलित कर रखी थी। जो वेदों को भी ठीक से न समझने वाले ऋषियों द्वारा बताई गई थी। कुछ गुरूजन व ऋषिजन भी उसी तप्तशिला पर कष्ट भोग रहे थे। जो अपनी-2 साधनाओं को श्रेष्ठ मान कर स्वयं कर रहे थे तथा अपने अनुयाईयों से भी करा रहे थे। वे भी कहने लगे हे परमेश्वर! हमारी भक्ति शास्त्रविरूद्ध थी। अब आप की कृपा से हमें ज्ञान हुआ है। हमारी वह शास्त्रविरूद्ध साधना कोई काम नहीं आई। हम यहाँ तप्तशिला पर महाकष्ट उठा रहे है।
{यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में कहा है कि जो शास्त्रविधि को त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करते हैं। उनको न तो कोई सुख होता है, न उनको कोई सिद्ध प्राप्त होती तथा न उनकी गति अर्थात् मोक्ष होता है अर्थात् शास्त्रविधि विरूद्ध भक्ति व्यर्थ है।}

तब मैने (कबीर देव ने) उन तप्त शिला पर विराजमान प्राणियों को सृष्टी रचना सुनाई(कृप्या पाठक पढ़े सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) जिस कारण से उनको ज्ञान हुआ कि वे कैसे अपने पैर पर कुल्हाड़ी मार कर काल ब्रह्म के जाल में फंसे थे। उन सर्व प्राणियों ने कहा हे परमेश्वर! हमें इस महादुःख दायक काल लोक से निकाल लो। हमें अपने सत्यलोक में ले चलो, तब मैंने उन सर्व प्राणियों से कहा ऐसे मैं आप को सत्यलोक नहीं ले जा सकता। क्योंकि आप स्वइच्छा से इस काल ब्रह्म के साथ आए थे। आप के पुण्य समाप्त हो चुके हैं। आप पर काल ब्रह्म का ऋण है। उस ऋण से मुक्त होकर ही आप सत्यलोक जा सकते हो। उसकी विधि है कि ''जब आप को पृथ्वी पर मानव जन्म प्राप्त हो तथा मैं किसी अन्य वेश में प्रकट होकर यह तत्वज्ञान बताने आऊं या अपने किसी अंश को भेजूं तब तुम हमारे सत्य शब्द (सार शब्द) तथा सारज्ञान अर्थात् तत्व ज्ञान को ग्रहण कर के मर्यादा में रहते हुए भक्ति करना तब आपका सत्यलोक जाना सम्भव होगा।

हे धर्मदास! मैंने (कबीर परमेश्वर ने) उन ऋषियों से प्रश्न किया जो तप्तशिला पर उपस्थित थे तथा वे पृथ्वी लोक में वेद के प्राकाण्ड विद्वान प्रसिद्ध थे। प्रश्न (कबीर जी का) :- आपने वेदों को पढ़ा है। कृपा बताईये वेदों में प्रभु को साकार लिखा है वा निराकार? उन ऋषियों ने एक स्वर में उत्तर दिया परमात्मा निराकार है। केवल उसका प्रकाश ही समाधी द्वारा शरीर में देखा जा सकता है। समाधी में परमात्मा प्रत्यक्ष होता है। मैंने (कबीर परमेश्वर ने) उन मतिहिनों से पूछा प्रत्यक्ष से आपका क्या तात्पर्य है? उन्होंने उत्तर दिया कि ''प्रत्यक्ष का तात्पर्य है'' समाधी में परमात्मा का साक्षात्कार होना। मैंने कहा ''प्रत्यक्ष'' तो साकार वस्तु का होता है। जैसे किसी ने किसी से कहा

जल लाना। उसने जल लाकर रख दिया। वह लाया गया पदार्थ अर्थात् जल साक्षात् वस्तु है ''जल'' शब्द नहीं। जिस किसी घड़े को देखा फिर समाधी दशा में घड़े का साक्षात्कार हुआ इस प्रकार जो साकार वस्तु बाहर है उसी का साक्षात्कार समाधी दशा में होता है। जिस वस्तु का आकार ही नहीं है। उस का साक्षात् होना असम्भव है। यह आप का मिथ्या ज्ञान है। आप को कभी भी परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हुआ है। आप व्यर्थ में महिमा बना कर अनुयाईयों को भ्रमित करके महापाप के भागी होकर यहाँ काल ब्रह्म के लोक में महा कष्ट भोग रहे हो।

(परमेश्वर कबीर जी ने कहा) हे ऋषि जनों ! आप ने कहा कि परमात्मा निराकार है केवल उसका प्रकाश ही देखा जा सकता है। हे भोले प्राणियों विचार करो जैसे कोई नेत्रहीन अन्य नेत्रहीन से सूर्य के विषय में मिथ्या ज्ञान प्राप्त करके आगे प्रचार कर रहा हो वह कह रहा हो कि ''सूर्य'' निराकार है। उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। उस नेत्रहीन से पूछे कि सूर्य के बिना प्रकाश किस का देखा! आप सूर्य को निराकार बता रहे हो उसके प्रकाश को देखने का प्रचार कर रहे हो क्यों मिथ्या भाषण कर रहे हो। ठीक इसी प्रकार वेद ज्ञान को तत्व से जानने का मिथ्या दावा करने वाले वेद ज्ञान हीन ऋषियों व महर्षियों की दशा है। आप को न वेद ज्ञान की पूर्ण जानकारी है तथा न आप की भक्ति विधि शास्त्र अनुकूल है। आप महादोष के पात्र बन गए हो तुम्हें घोर नरक में डाला जाएगा। पृथ्वी लोक में आप को एक परम ज्ञानी मान कर आप के सैकड़ों शिष्य आप द्वारा बताए मिथ्या ज्ञान का प्रचार करके लाखों भोली आत्माओं को काल जाल में फंसा रहे हैं। आप को ऋषि व महर्षि मान कर आप की मूर्तियाँ स्थापित की जाऐंगी। कुछ धुर्त व्यक्ति वहाँ मन्दिर आदि बना कर अपना स्वार्थ सिद्ध करेगें। यह सर्व दोष भी आप को कई वर्षों तक प्राप्त होता रहेगा। भोली जनता आप जैसे अज्ञानियों को महर्षि मान कर आप के नाम से कई संस्थाऐं चलाऐंगे तथा आप के द्वारा रची अपने अनुभव की पुस्तकों को भोली जनता में बेच कर धन कमा कर अपना परिवार पोषण करेगें तथा मौज-मस्ती में उस धन को खर्च करेगें। आप द्वारा रची वेद ज्ञान विरूद्ध पुस्तक द्वारा लाखों व्यक्ति व्यर्थ ज्ञान को ग्रहण करके नरक में गिरेगें। यह सर्व दोष भी आपके सिर पर ही रखा जाएगा। पृथ्वी पर आपकी जय-2 कार वे भोले प्राणी कर रहे होगें तथा आप उस घोर नरक में गिर कर चीखें मार रहे होंगे। महाकष्ट के कारण चिल्ला-2 कर रो रहे होंगे। पृथ्वी लोक पर बनी आप की महिमा आपके क्या काम आई?

हे धर्मदास! मेरे इस तत्वज्ञान रूपी कड़वी सच्चाई से परिचित होकर वे नकली गुरू व ऋषि-महर्षि अपने कृत्य को जानकर भय से कांपने लगे। क्योंकि वहाँ पर उनको हाथों-हाथ प्रमाण मिल रहा था। मैंने उनसे कहा भाई यह सच्चाई मैं या मेरा भेजा हुआ मेरा अंश आप को पृथ्वी पर आपके इन शिष्यों के समक्ष कहता तो आप तथा आपके शिष्य मुझे वा मेरे अंश संत को मारने को दौड़ते तथा हमें सन्तों व ऋषियों का निन्दक कह कर जनता में बदनाम करते हमारी एक बात भी नहीं सुनते। सर्व नकली ऋषि-महर्षियों तथा गुरूओं तथा उनके साथ वहीं पर उपस्थित उनके अनुयाईयों ने एक स्वर में कहा आप ! सत्य कह रहे हो वहाँ पर तो हम अपने ज्ञान को सर्वोच्च मान रहे थे। हे परमेश्वर! आपने हमारी आँखें खोल दी।

परमेश्वर कबीर देव ने कहा हे धर्मदास! मैंने उन नकली महर्षियों से कहा आप ने बताया कि

वेदों में परमेश्वर को निराकार बताया है। आप की यह बात भी मिथ्या है क्योंकि वेदों ने मेरे विषय में कहा है कि परमेश्वर सशरीर है वही परमात्मा अन्य शरीर धारण करके अतिथी की तरह कुछ समय इस काल ब्रह्म के लोक में आता है। उस समय अज्ञान निन्द्रा में सोए प्राणियों को तत्व ज्ञान प्रदान कराता है। प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 5 श्लोक 1 में तथा अध्याय 1 श्लोक 15 में तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 17 से 20 तक में भी है।

{परमेश्वर कबीर जी तप्तशिला पर हुई वार्ता द्वारा अपनी प्रिय आत्मा भक्त धर्मदास जी को भी तत्वज्ञान से परिचित करा रहे थे। यही तत्वज्ञान की अमृतवाणी धर्मदास जी ने लीपी बद्ध की जो पांचवा वेद अर्थात् कबीर सागर नाम से प्रसिद्ध है।}

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास! मेरे द्वारा बताए गए वेदों के मन्त्रों को सुनते ही उन नकली ऋषियों को याद आया कि आप सत्य कह रहे हो मालिक! वेदों में ऐसा ही लिखा है। हम पढ़ते थे परन्तु हमारी बुद्धि काल ब्रह्म ने बांध रखी थी। हम समझ ही नहीं सके। केवल लोक वेद (सुना सुनाया ज्ञान जो वेदों विरूद्ध था उसे) ही सुनाया करते थे। {गीता अध्याय 10 श्लोक 9 से 11 में प्रमाण है। जिस में कहा है कि जो मुझ काल ब्रह्म पर ही आश्रित हैं उनको में ऐसा ज्ञान देता हूँ। वे आपस मे विचार करके मेरे ही गुणों का ज्ञान ही करते कराते रहते हैं। जिस कारण वे मुझमें रमण करते रहते हैं। उन मेरे में ही आश्रित श्रद्धालुओं को मैं (काल ब्रह्म) वह ज्ञान देता हूँ जिससे वे मुझे ही प्राप्त होते हैं अर्थात् काल जाल में ही रह जाते हैं। उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिए मैं स्वयं ही उनको वह ज्ञान देता हूँ जिससे वे मुझे ही प्राप्त होते हैं।}

(कबीर सागर से वाणी) कबीर जी का जीवों से संवाद

बहु विधि जीवन कीन्ह पुकारा, काल देत है कष्ट अपारा।।
यम का कष्ट सहा नहीं जाई, हे सतगुरु होहुँ सहाई।।
आए जहाँ यम जीव सतावै, काल निरंजन जीव नचावै।।
चटक–पटक करे जीव तहँ भाई, ठाढे भया पुनि तहाँ मैं जाई।।
मोहि देख जीव कीन्ह पुकारा, हे साहिब हमों लेहु उबारा।।
तब हम सत्य शब्द गुहरावा, पुरुष शबद से जीव तपत बुझावा।।
यम ते छुड़ाव लेव तुम स्वामी, दया करो प्रभु अन्तर यामि।।

भावार्थ :- उपरोक्त वाणी में तप्तशिला पर कष्ट भोग रहे प्राणियों ने परम शक्ति से कष्ट निवारण की प्रार्थना की तब मैं (कबीर परमेश्वर) उस तप्तशिला के पास प्रकट हुआ। अपनी शक्ति से तप्तशिला की गर्मी को शांत किया। सर्व प्राणियों ने तत्वज्ञान से परिचित होकर मुझ से (कबीर परमेश्वर से) काल के जाल से निकालने की प्रार्थना की।

तब मैं कहा जीवन समझाई, जोर करूं तो वचन नसाई।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी बता रहे हैं कि तब मैंने उन प्राणियों से कहा मैं बलपूर्वक आपको काल से छुड़वा सकता हूँ। परन्तु मैंने इसको वचन दिया है कि मैं बलपूर्वक जीवों को नहीं ले जाऊगां क्योंकि मैंने ही तुम्हारी इच्छा से काल लोक में आने की आज्ञा दे रखी है तथा कहा था कि तुम यहाँ (सतलोक में) स्वइच्छा से आने की प्रार्थना करोगे तब तुम्हें भक्ति शक्तियुक्त करके सतलोक लाऊगां।

जब तुम जाय धरो जग देहा, तब तुम करिहौ शब्द स्नेहा।।

पुरुष नाम सुमिरन सहिदाना, बीरा सार गहो प्रवाना।।
देह धरो सत्य शब्द समाई, तब हम सतलोक ले जाई।।
जहाँ आशा तहाँ बासा होई, मन कर्म वचन सुमिरै जोई।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी कह रहे हैं कि हे प्राणियों जब तुम संसार में मानव शरीर प्राप्त करो उस समय मेरे पूर्ण सन्त से सम्पूर्ण मन्त्र (सतनाम व सारशब्द) प्राप्त करके सच्चे मन से भक्ति करना। जब तुम मानव शरीर प्राप्त करके सत्य साधना (तीनों मन्त्रों ओम्,तत्,सत्) की अन्तिम स्वांस तक करोगे तब मैं तुम्हें सतलोक ले जाऊँगा। आप अनन्य मन से कर्म वचन मन से मेरे (कबीर परमेश्वर) में सच्ची लगन लगाना उस सच्ची आशा जो सतलोक जाने की होगी उसी आधार से आप सतलोक में निवास करोगे। क्योंकि जहाँ जाने की सच्ची लगन होती है साधक अन्त समय में उसी प्रभु को प्राप्त करता है।

।।चौपाई।।

कहे जीव सुन पुरुष पुराना, देह धरी बिसरो नहीं ज्ञाना।।
पुरुष जानि सुमिरा जमराई, बेद पुरान कहे समुझाई।।
बेद पुरान कहे मति येहा, निराकार से किजै नेहा।।
सुर नर मुनिजन तैंतीस करोड़ि, बंधे सब निरंजन डोरि।।
ताके मते कीन्ह हम आशा, अब मोहि चीन्ह परा यम फांसा।।

भावार्थ :- सर्व प्राणियों ने कहा हे आदि पुरूष परमेश्वर ! जब भी मानव शरीर प्राप्त होगा आप के इस तत्वज्ञान को नहीं भूलेंगे। हमने तो काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) को परमेश्वर मानकर पूजा की थी। जैसा भी वेदों को हम समझ सके उस लोक वेद आधार से तथा पुराणों के ज्ञान के आधार से काल की पूजा पूर्ण परमात्मा जानकर की है। हम ही नहीं हे परमेश्वर तैतीस करोड़ देवताओं, अठ्ठासी हजार ऋषि आदि व अन्य सर्व साधक भी काल ब्रह्म को ही पूर्ण परमात्मा जानकर साधना करके काल ब्रह्म की ही डोरी से बंधें हैं अर्थात् वे भी सर्व काल में ही हैं। जन्म-मृत्यु का कुचक्र उन पर भी सदा चलेगा।

सुनो जीव यह छल यम केरा, यह यम फंदा कीन्ह घनेरा।।

।।छन्द।।

काल कला अनेक कीन्हो, जीव कारण ठाट हो।
बेद शास्त्र पुरान स्मृति, अन्त रोकै बाट हो।।
सोरठा – जीव पड़े बस कालके, काल कराल प्रचण्ड।
सतनाम चिन्हे बिना, जन्म जन्म भव दण्ड।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा हे प्राणियों! सुनों! यह सर्व छल काल ब्रह्म ने आप सर्व प्राणियों को अपने जाल में फांसे रखने के लिए किया है। जो चारों वेदों (ऋग्वेद,यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का ज्ञान अधूरा है। क्योंकि पूर्ण ज्ञान तत्वदर्शी सन्त बताते हैं जो पूर्ण मोक्षदायक है। पुराणों तथा अन्य समृति व छः शास्त्रों का ज्ञान उन देवताओं व ऋषियों का अनुभव है जो स्वयं वेद ज्ञान से परिचित नहीं हैं। इसलिए तत्वज्ञान के आधार से सतनाम के सुमरण से ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है। अन्यथा सदा जन्म-मरण का कष्ट बना रहेगा।

''परमेश्वर कबीर जी से काल ब्रह्म का विवाद करना''

हे धर्मदास् काल ब्रह्म आहार करने के लिए तप्तशिला की ओर चला। तब मैंने उन सर्व प्राणियों से कहा देखिए वह आ रहा है काल ब्रह्म साकार है, जिसे आप निराकार कहा करते। तेजोमय शरीर छोटा माथा लम्बे दांत डरावनी सूरत है। हे प्राणियों! अब आप जाओ। इतना कहते ही सर्व प्राणी जो तप्तशिला पर उपस्थित थे आकाश में उड़ गए तथा धर्मराज के दरबार में आ गए। वहाँ से कर्माधार से स्वर्ग-नरक या किसी प्राणी के शरीर में भेज दिया जाता है।

हे धर्मदास! जब काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप्त शिला के निकट आया। उस समय उसको मेरा स्वरूप मेरे उस पुत्र योगसन्तायन उर्फ योगजीत का दिखाई दिया जिस रूप में मैंने काल ब्रह्म को सतलोक से निष्काशित किया था तथा मुझे योगजीत जान कर क्रोधित होकर बोला हे योगजीत यहाँ मेरे लोक में मेरी आज्ञा के बिना किसलिए आया। आज मैं तुझे मारूंगा, तेरी जीवन लीला समाप्त करूंगा। तुने मुझे सत्यलोक से धक्के मार कर निकाला था। मैंने तेरे से बहुत विनय की थी सत्यलोक से न निकालने की परन्तु तूने एक नहीं सुनी थी। क्या आप पिता जी का (सत्यपुरूष का) कोई संदेश-आदेश लेकर आए हो वह मुझे बताइए तत्पश्चात् युद्ध के लिए तैयार हो जाइए। (मैंने जान लिया था धर्मदास कि यह मुझे योगजीत समझ रहा है इसलिए मैंने योगजीत की भूमिका करते हुए ये शब्द कहे) मैंने कहा हे काल निरंजन! मुझे पिता जी अर्थात् सत्यपुरूष ने भेजा है। तेरे लोक में सर्व आत्माऐं महाकष्ट उठा रही हैं। उनकी पुकार परमेश्वर ने सुन ली है। अब मैं तेरे नीचे के ब्रह्मण्डों में जाऊंगा। तेरे द्वारा बताए गए लोक वेद (व्यर्थ ज्ञान) का पर्दा फाश करूंगा तथा तत्वज्ञान द्वारा सर्व प्राणियों को पूर्ण परमात्मा का ज्ञान कराके सत्य साधना प्राप्त कराऊंगा। जिससे सर्व प्राणी मानव शरीर धारी सत्य साधना करके अपने पूर्व वाले स्थान सत्यलोक में चले जाऐंगे।

हे धर्मदास! मेरी बातें सुन कर काल ब्रह्म अत्यन्त क्रोधित हो गया तथा मुझे समाप्त् करने के उद्देश्य से मेरे ऊपर आक्रमण किया। मैंने सतनाम का सुमरण किया जिसके प्रभाव से काल ब्रह्म नीचे पाताल लोक में गिर गया। भयभीत होकर कांपने लगा उसकी स्थिति ऐसी हो गई जैसे पक्षी के पंख कट जाते हैं वह एक स्थान पर गिरा फड़फड़ाता है परन्तु उड़ नहीं पाता। मैं भी उसके साथ पाताल लोक में पहुँच गया। काल ब्रह्म ने जान लिया कि योगजीत के पास शक्तिशाली सिद्धि है ये मेरे से मारा नहीं जा सकता। तब उस (काल ब्रह्म) ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने की अन्य युक्ति सोची। उसने कहा हे योगजीत आप मेरे बड़े भाई हो मैं आप का छोटा भाई हूँ। छोटे तो उत्पात ही किया करते हैं परन्तु बड़ों का बडप्पन क्षमा करने में ही होता है। मुझे क्षमा करो यह कहते हुए काल ब्रह्म घिसड़ता हुआ मेरे अति निकट आया तथा मेरे चरण पकड़ कर गिड़गड़ाने लगा। मैं उसको लेकर फिर इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में तप्त शिला के पास ले आया। मैंने कहा हे काल निरंजन ! मैंने तुझे क्षमा कर दिया मेरे पैर छोड़ मैंने नीचे के लोकों में जाना है तथा सर्व आत्माओं को तेरे जाल से मुक्त कराना है।

काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने कहा हे बड़े भाई! मैं आप को पिता तुल्य मानता हूँ। आप मुझे कुछ वरदान दो जिस कारण से मेरे लोक की कुछ त्रुटियाँ दूर हो जाऐं। आप फिर भले ही नीचे के लोकों में चले जाना। मैंने कहा मांग क्या मांगता है। ब्रह्म काल ने कहा आप वचन बद्ध हो जाऐं तब

मांगूगा। मैंने कहा मैं वचन बद्ध होता हूँ मांग क्या मांगता है ?

काल ब्रह्म ने कहा (1) तीन युगों (सत्ययुग, त्रैता, द्वापर युगों) में थोड़े जीव ले जाना। चौथे युग कलयुग में आप अधिक जीव मुक्त कराना। पिता जी ने मुझे शाप दे रखा है, एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को नित्य खाने का यदि आप सर्व जीवों को एक ही युग में ले जाओगे तो मैं भूखा मर जाऊंगा। (2) मैं आप का रूप धारण कर सकूं। (3) जो आत्मा आप के ज्ञान को समझ कर आप के भक्तिमार्ग को ग्रहण करके आजीवन साधना करेगा। वह आप के लोक में जाये। जिस आत्मा का नाम खण्ड हो जाए अर्थात वह आपके भक्तिमार्ग को त्याग कर मेरी भक्ति करने लगे तथा आप के मार्ग को स्वीकार ही नहीं करे वे सर्व प्राणी मेरे लोक में ही रहें। (4) त्रेता युग में मेरे अंश विष्णु अवतार रामचन्द्र की समुद्र पर पुल बनाने में सहायता करना (5) द्वापर में मेरा अंश कृष्ण रूप में जाएगा। वह एक जगन्नाथ नाम से मन्दिर बनवाना चाहेगा समुन्द्र उसे तोड़ेगा। आप उस मंदिर कि समुद्र से रक्षा करना। उपरोक्त वर मुझे प्रदान करके आप नीचे जाईए तथा पिता जी की आज्ञा का पालन किजिए। मैंने काल ब्रह्म से कहा हे ज्योति निरंजन! जो उपरोक्त वर आपने मांगे वे सर्व मैंने आपको दे दिये (तथा अस्तु)

हे धर्मदास ! उस स्वार्थी ने तुरन्त मेरे पैर छोड़ दिए तथा कहा हे जोगजीत! आप किस नाम जाप से भक्ति कराओगे? वह मुझे बता दो ताकि मैं उन आत्माओं को सत्यलोक जाने दूँ जिनके पास आप का मन्त्र जाप होगा। मैं उनको छोड़ दूंगा। हे धर्मदास ! काल ने मेरे से छल करना चाहा कि सत्यनाम व सारनाम को जानकर वह अपने दूतों (संदेश वाहक गुरूओं) को बता देता। उनके द्वारा बताए गए इस सारनाम का साधक को कोई लाभ नहीं मिलता तथा जब मैं या मेरा अंश यही मन्त्र जाप देते तो सर्व प्राणी कहते यह तो हमारे गुरूदेव ने जाप मन्त्र दे रखा है तुम क्या नया बता रहे हो। हे धर्मदास ! यह महा धोखा हो जाता। इसलिए मैंने काल ब्रह्म से कहा कि मैं तेरी चाल को समझ गया हूँ। मैं तुझे वह सारनाम व सारज्ञान (तत्वज्ञान) नहीं बताऊंगा। जिस प्राणी के पास हमारे द्वारा बताया सारनाम होगा उसके निकट तू नहीं जा सकेगा उसे तू नहीं रोक सकेगा वह तेरे शीश पर पैर रखकर उस सारनाम की भक्ति की शक्ति से सत्यलोक चला जाएगा।

हे धर्मदास! तब काल ब्रह्म ने हंसते हुए कहा हे सहज दास! (हे धर्मदास काल ब्रह्म को मैं भिन्न–2 रूप अपने पुत्रों के दिखा रहा था वह कभी मुझे योगजीत समझ रहा था कभी उसे लगता था शायद यह सहज दास है कभी लगता था यह ज्ञानी है ये सर्व नाम उन 16 पुत्रों के हैं जो सत्यलोक सृष्टी की आदि में अपनी वचन शक्ति से उत्पन्न किए थे। कृप्या पढ़ें सृष्टी रचना में) ***आप जाओ नीचे संसार में मैंने सर्व जीवों को लोकवेद पर आधारित कर रखा है। मैंने अपने ऋषियों व महर्षियों को शास्त्रों (वेदों) के विपरीत ज्ञान प्रदान कर रखा है वे कहते हैं कि हम वेदों अनुसार ज्ञान बता रहे हैं परन्तु उनका लोकवेद शास्त्रों के ज्ञान के विपरीत है। उन ऋषियों को महाज्ञानी मानकर अन्य प्रजा उन्हीं के ज्ञान पर अति दृढ़ होकर लगी है। वे कहते है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति करो। वही मोक्ष दायक है परन्तु साधना विधि मेरे (काल ब्रह्म) जाल में फंसे रहने की ही बताते हैं जिस कारण से सर्व साधक व ऋषि जन मेरे ही फंदे में उलझे रहते हैं। कलयुग में कई धर्म बनवा दूंगा वे आपस में लड़ते मरते रहेगें। अन्य किसी भी सन्त या गुरू के ज्ञान को स्वीकार नहीं करेंगे। कलयुग में उत भूत की पूजा, भैंरौ, काली आदि की पूजा***

देवी व अन्य देवों की पूजा तथा तीर्थ, व्रत आदि करने में ही सर्व प्रजा अपना मोक्ष समझेगी। मन्दिर पूजा, समाध पूजा, मूर्ति पूजा या मृत्यु को प्राप्त हुए गुरूओं के धामों की पूजा तथा पितर पूजा (श्राद्ध-पिण्ड दान करना) पर ही सर्व साधक दृढ़ता से लगा दूंगा। श्री विष्णु अवतार राम व कृष्ण व श्री शिव जी को पूर्ण परमात्मा मान कर उन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी) की पूजा में ही अपना कल्याण मानेगें। इन तीनों में से विशेष कर विष्णु व शिव को सर्वेश्वर, महेश्वर, अजर, अमर इनके कोई माता पिता नहीं हैं। ये ही पूजा के योग्य हैं। इन से भिन्न कोई देव पूज्य नहीं हैं ऐसे ज्ञान पर सर्व हिन्दु समाज आश्रित कलयुग में कर दिया जाएगा।

जिस समय आप या आप का कोई संदेश वाहक कलयुग में सारज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान प्रदान करना चाहेगा वह उपरोक्त साधनाओं को व्यर्थ बताएगा तथा विष्णु व शिव से ऊपर कोई अन्य परमेश्वर का ज्ञान बताएगा तो आप या आप के अंश (सन्त) की बातों को कोई नहीं सुनेगा। इसके विपरीत निन्दा के पात्र कहलाओगे तथा आप से झगड़ा भी मेरे सन्त (दूत) करेगें तथा प्रजा को आप के विरूद्ध करके आपका शत्रु बना देगें। आप मेरे द्वारा रचे चक्रव्युह को तोड़ नहीं पाओगे। खाली हाथ लौट जाओगें। और सुन सहज दास! तुम एक पंथ चलाओगे परमेश्वर के नाम से मैं तुम्हारे पंथ जैसे बारह पंथ नकली परमेश्वर के चलाऊंगा। उन बारह पंथों में मेरे द्वारा भेजे गए दूतों से जो नाम उपदेश लेगा वे महिमा तो आप के ज्ञान अनुसार (कबीर सागर व अन्य सन्त द्वारा बोली मिलती जुलती वाणी अनुसार) बताऐंगे परन्तु नाम गलत प्रदान करेंगे। जिस से वे मेरे ही जाल में रह जाएगें। इस प्रकार मैं सर्व जीवों को भ्रमित करके मुक्त नहीं होने दुंगा।

उपरोक्त उल्लेख निम्न वाणियों का सारांश है।

।।कबीर वचन।।

चौपाई=धर्मदास जो पूछो मोहि, युग–2 कथा कहो मैं तोहि।
जबही पुरुष आज्ञा कीन्हा, जीवन काज पृथ्वी पग दीन्हा।।
करि प्रणाम तबही पगुधारा, पहुंचे जाय धर्म दरबारा।
प्रथम चले जीव के काजा, पुरुष प्रताप शीश पर छाजा।।
आवत मिले धर्म अन्याई, तिन पुनि हम से रार बढ़ाई।
मो कुँ देख धर्म ठीग आवा, महा क्रोध बोले अतुरावा।।

।।काल ब्रह्म वचन।।

योग जीत इहवां कस आवो, सो तुम हमसो वचन सुनाओ।
कै तुम हमको मारन आओ, पुरुष वचन सो मोहि सुनाओ।।

।।कबीर वचन।।

तासो कहयो सुनो धर्मराई, जीव काज संसार सिंधाई।
जीवन कह तुम बहुत भुलावा, बार–बार जीवन सतावा।।
पुरुष भेद तुम गुप्त राखा, अपनी महिमा प्रकट भाखा।
तपत शिला पर जीव जरावहु, जारि वारि निजस्वाद करावहु।।
तुम अस कष्ट जीवन कहै दीन्हा, ताते पुरुष मोहि आज्ञा दीन्हा।
जीव चिताय लोक ले जाऊँ, काल कष्ट से जीव बचाऊँ।।

ताते हम संसार ही जायब, दे प्रवाना लोक पठायब।
यह सुनी काल भयंकर भयऊ, हम कह त्रास दिखान लयऊ।।

।।धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन।।

सत्तर–2 युग हम सेवा कीन्ही, राज बड़ाई पुरुष मोहि दीन्ही।
फिर चौसठ युग सेवा ठयऊ, अष्ट खंड पुरुष महि दयऊ।।
तब तुम मारि निकारे मोहि, जोगजीत नहीं छोडु तोहि।

।।सतगुरु कबीर वचन।।

तब हम कहयो सुनो धर्मराया, हम तुम्हरे डर नहीं डराया।
हम कंह तेज पुरुष बल आही, अरे काल तव डर मोहि नाहि।।
पुरुष प्रताप सुमिरा तिहि बारा, शब्द अंगते कालहि सारा।
ततक्षण दृष्टि ताहि पर हेरा, श्याम ललाट भयो तिहि केरा।।
पंख घात जस होय पखेरु, ऐसे काल महि पर हेरु।
करे क्रोध कछु नाहीं बसाई, तब पुनि परेऊ चरणन तर आई।।

।।निरंजन (काल ब्रह्म) वचन।।

कह निरंजन सुनो ज्ञानी, करो विनती तोहि सो।
जान बंधु विरोध किन्हो, घाट भई अब मोहि सो।।
पुरुष सम अब तोहि जानो, नहीं दूजी भावना।
तुम बड़े सर्वज्ञ साहिब, क्षमा छत्र तनावना।।
तुम हुँ करो बखसीश, पुरुष दीन्ह जस राज हम।
षोढ़स में तुम ईश, ज्ञानी पुरुष सो एक सम।।

।।चौपाई।।

धर्मराय अस विनती ठानी, मैं सेवक द्वितिय नहीं जानी।
दयावंत तुम साहिब दाता, एतिक कृपा करो हे ताता।
पुरुष शाप मो कंह अस दीन्हा, लख जीव नित ग्रासन कीनहा।।
जो जीव सकल लोक तुम आवे, तो कैसे क्षुद्या मोरि बुतावे।
ज्ञानी विनती एक हमारा, सो न करहुँ जिहि मोर बिगाड़ा।।
पुरुष दीन्ह जस मो कहँ राजू, तुम भी देहु तो होय काजु।
अब हम वचन तुम्हारा मानी, लीजो हंसा हम सो ज्ञानी।।
विनती एक करो तो सो ताता, वचन बंध मानो हमरी बाता।
सतयुग त्रेता द्वापर माही, तीनों युग जीव थोड़े जाही।।
चौथा युग जब कलियुग आवै, तब–त्व शरण जीव बहु जावै।
ऐसा वचन हरि मोहि दीजै, तब संसार गमन तुम कीजै।।

।।कबीर वचन।।

विनती तोर लीन्ह मैं जानी, मोकह ठगे काल अभिमानी।
जस विनती तू मो संग कीन्ही, सो अब बकस तोहि मैं दीन्ही।।
चौथा युग जब कलियुग आवै, तब हम अपना अंश पठावैं।
जिहि परवाना देह है, सत्यशब्द दे हाथ।

सो जीव यम नहिं पाय है, सदा ताहि हम साथ।।

।।निरंजन (काल) वचन।।

संधि छाप मोहि दीजे ज्ञानी, जस देहो हंस हि सहिदानी।।
जो जीव मोकहु संधि बतावे, ताके निकट काल नहीं आवै।।
नाम निशानी मो कह दीजे, हे साहिब यह दाया कीजै।।

।।सतगुरु कबीर वचन।।

जो तोहि देहुं संधि लखाई, जीवन काज होई हो दुख दाई।
तव परपंच ज्ञान हम पावा, काल चलै नहीं तुम्हारा दावा।
धर्मराय तोहि प्रकट भाखा, गुप्त अंक बीड़ा हम राखा।
जो कोई लैह नाम हमारा, ताहि छोड़ तुम होहु नियारा।
जो तुम हंस ही रोको जाई, तो तुम काल रहन नहीं पाई।।

।।धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन।।

हे साहिब तुम पंथ चलाओ, जीव उबार लोक ले जाऊँ।
पंथ एक तुम आप चलओ, जीवन लै सतलोक पठाओ।।
द्वादस पंथ करो मैं साजा, नाम तुम्हारा ले करो अवाजा।
द्वादस यम संसार पठहो, नाम तुम्हारे पंथ चलैहो।।
प्रथम दूत मम प्रगटे जाई, पीछे अंश तुम्हारा आई।।
यही विधि जीवनको भ्रमाऊं, पुरुष नाम जीवन समझाऊं।।
द्वादस पंथ नाम जो लैहे, सो हमरे मुख आन समै है।।
कहा तुम्हारा जीव नहीं माने, हमारी ओर होय बाद बखानै।।
और अनेक पंथ चलाऊं, वासे भ्रमित ज्ञान फैलाऊं।।
मैं दृढ़ फंदा रची बनाई, जामें जीव रहे उरझाई।।
देवल देव पाषान पूजाई, तीर्थ व्रत जप–तप मन लाई।।
यज्ञ होम अरू नेम अचारा, और अनेक फंद में डारा।।
जो ज्ञानी जेहो संसारा, जीव न मानै कहा तुम्हारा।।

(सतगुरु कबीर वचन)

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई, काटों फंद जीव ले जाई।।
जेतिक फंद तुम रचे विचारी, तत्व ज्ञान तै सबै बिंडारी।।
जौन जीव हम शब्द दृढावै, फंद तुम्हारा सकल मुकावै।।
निश्चय कर प्रवाना पाई, पुरुष नाम तिहि देऊं चिन्हाई।।
ताके निकट काल नहीं आवै, संधि देखी ताकहं सिर नावै।।

।।छन्द।।

जो मेटि डारों तोहि को, अब पलटि कला दिखलाऊँ।
लै जीव बंद छोड़ाय यम सो, अमर लोक सिधावऊँ।।
यह सोच चित्त कीन्हेऊं, पुरुष वचन अस नाही।
सत्य शब्द दृढ़ जो गहे, ले पहुचाऊँ ताहि।।

।।धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन।।

कह धर्मराय जाओ संसारा, आनहु जीव नाम आधारा।
जो हंसा तुमरो गुण गाई, ताहि निकट तो हम नहीं आई।
जो कोई जै है शरण तुम्हारा, हम सिर पग दै होवे पारा।
हमतो तुम संग किन्ही ढिठाई, पिता जान कीन्ही लरिकाई।
कोटिन अवगुन बालक करई, पिता एक हृदय नहीं धरई।
जो पितु बालक देही निकारी, तब को रक्षा करै हमारी।

।।ज्ञानी वचन (कबीर वचन)।।

धर्मराय उठ शीश निवायो, तब हम संसार सिधायो। जब हम देखा धर्म सकाना, तब तहवां से कीन्ह पयाना।
कह कबीर सुनि धर्मनि नागर, तब मैं चली आयऊ भौसागर। आये चतुरानन के पासा, तासो कीन्हा शब्द प्रकाश।
वाको मैं अपना नाम जनाया, अग्नि ऋषि नाम बताया। ब्रह्मा चित्त दै सुनवे लीन्हा, पूछो बहुत पुरुष का चिन्हा।
ब्रह्मा मोहे सतगुरू कह टेरा, अग्नि ज्ञान अद्वित है तेरा। प्रथम मन्त्र ब्रह्मा लीन्हा, तब वहां ते गवन मैं किन्हा।
तब ही निरंजन कीन्ही उपाई, ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा मोर जाई। निरंजन मन घट आन विराजै, ब्रह्मा बुद्धि फेरि उपराजै।।

हे धर्मदास! काल ब्रह्म की उपरोक्त बातें सुनकर मैंने कहा हे ज्योतिनिरंजन! तू महा पापी है जो भोली आत्माओं के साथ महाधोखा कर रहा है। मैं तेरे सर्व दाव व्यर्थ कर दूंगा। मैं कलयुग में जब प्रकट होऊंगा तब ज्ञान तो प्रचार करके आऊंगा परन्तु सारनाम व सारज्ञान को गुप्त रखुंगा। वह सारज्ञान व सारनाम मेरे द्वारा दिए ज्ञान (पांचवें वेद) में ही होगा परन्तु वे बारह पंथ (जो कबीर नाम के पंथ कहलाऐगें वा तेरे द्वारा प्रेरित अन्य पंथ) उस ज्ञान को तथा सार नाम को नहीं समझ पाऐंगे। बारहवें पंथ में (गरीबदास पंथ में) मेरी महिमा की वाणी प्रकट होगी परन्तु बारहवें पंथ (गरीबदास पंथ) सहित सर्व पंथों के अनुयाईयों के पास सारज्ञान व सारनाम नहीं होगा। जिस कारण से वे उन बारह पंथों के अनुयाई असंख्य जन्मों तक भी सत्यलोक नहीं जा सकेंगे। क्योंकि वे अभिमानी होंगे। मेरे द्वारा भेजे वंश (अंश) की बातें नहीं मानेंगे। फिर बारहवें पंथ (गरीबदास पंथ) में आगे चलकर हम ही आऐंगे। वह तेरहवां अंश मेरा होगा तब सर्व पंथों को समाप्त करके एक पंथ चलाएगा।

विशेष विचार :- बारह पंथों के नाम- कबीर परमेश्वर जी के पंथ में काल द्वारा कबीर नाम से चलाए बारह पंथों का उल्लेख पुस्तक=कबीर सागर अध्याय=कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) पृष्ठ संख्या 1870 से

(1) नारायण दास पंथ (2) यागौदास (जागू) पंथ (3) सूरत गोपाल पंथ (4) मूल निरंजन पंथ (5) टकसार पंथ (6) भगवान दास (ब्रह्म) पंथ (7) सत्यनामी पंथ (8) कमालीय (कमाल का) पंथ (9) राम कबीर पंथ (10) प्रेम धाम (परम धाम) की वाणी पंथ (11) जीवा पंथ (12) गरीबदास पंथ।

अन्य प्रमाण पुस्तक ''कबीर सागर'' अध्याय=कबीर बानी पृष्ठ= 136-137 पर

द्वादश पंथ चलो सो भेद

द्वादश पंथ काल फुरमाना। भुले जीव न जाय ठिकाना।
ताते आगम कहि हम राखा। वंश हमार चूरामणि शाखा।।
प्रथम जगमें जागू भ्रमावै। बिना भेद ओ ग्रन्थ चुरावै।।
दुसरि सुरति गोपालहि होई। अक्षर जो जोग दृढ़ावे सोई।।

तिसरा मूल निरंजन बानी। लोकवेद की निर्णय ठानी।।
चौथे पंथ टकसार भेद लै आवै। नीर पवन को सन्धि बतावै।
सो ब्रह्म अभिमानी जानी। सो बहुत जीवन की करी है हानी।।
पांचौ पंथ बीज को लेखा। लोक प्रलोक कहें हममें देखा।।
पांच तत्व का मर्म दृढ़ावै। सो बीजक शुक्ल ले आवै।।
छठवां पंथ सत्यनामि प्रकाशा। घटके माहीं मार्ग निवासा।।
सातवां जीव पंथले बोले बानी। भयो प्रतीत मर्म नहिं जानी।।
आठवे राम कबीर कहावै। सतगुरु भ्रमलै जीव दृढावै।।
नौमे ज्ञानकी काल दिखावै। भई प्रतीत जीव सुख पावै।।
दसवें भेद परमधाम की बानी। साख हमारी निर्णय ठानी।।
साखी भाव प्रेम उपजावै। ब्रह्मज्ञान की राह चलावै।।
तिनमें वंश अंश अधिकारा। तिनमेंसो शब्द होय निरधारा।।
सम्वत् सत्रासै पचहतर होई, ता दिन प्रेम प्रकटै जग सोई।
साखी हमारी ले जीव समझावै, असंख्य जन्म ठोर नही पावै।
बारहवें पथ प्रकट है बानी, शब्द हमारे की निर्णय ठानी।।
अस्थिर घर का मरम न पावैं, ये बारा पंथ हमही को ध्यावैं।
बारहवें पथ हम ही चलि आवैं, सब पंथ मेटि एक ही पंथ चलावैं।

तेरहवें वंश (अंश) द्वारा सर्व पंथों को मिटा कर एक पंथ चलाने का प्रमाण :-

पुस्तक=कबीर सागर= अध्याय=कबीर बानी पृष्ठ=134

बारहवें वंश प्रकट होय उजियारा, तेरहवें वंश मिटे सकल अंधियारा

इसी अध्याय में पृष्ठ 136 पर भी प्रमाण है :-

''द्वादश पंथ काल फरमाना, भूले जीव न जाऐं ठिकाना''

कबीर सागर= अध्याय=कबीर बानी (बोध सागर) में पृष्ठ 136-137 पर प्रमाणः-

धर्म दास मेरी लाख दोहाई, मूल (सार) शब्द बाहर न जाई।।
सार शब्द बाहर जो परही, बिचली पीढ़ी हंस नहीं तरही।
तेतीस अर्ब ज्ञान हम भाखा, मूल ज्ञान गुप्त हम राखा।
मूल ज्ञान तब तक छुपाई, जब लग द्वादश पंथ मिट जाई।।

पुस्तक=कबीर सागर=अध्याय जीव धर्म बोध (बोध सागर) पृष्ठ 1937 पर प्रमाण :-

धर्मदास तोहि लाख दोहाई। सार शब्द बाहर नहिं जाई।।
सार शब्द बाहर जो परि है। बिचलै पीढी हंस नहीं तरि है।।
युगन–युगन तुम सेवा किन्ही। ता पीछे हम इहां पग दीनी।।
कोटिन जन्म भक्ति जब कीन्हा। सार शब्द तब ही पै चीन्हा।।
अंकूरी जीव होय जो कोई। सार शब्द अधिकारी सोई।।
सत्यकबीर प्रमाण बखाना। ऐसो कठिन है पद निर्वाना।।

विशेषः-कबीर सागर पुस्तक के अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 134 पर तो प्रथम पंथ का संचालक ''नारायण दास'' (धर्मदास जी का बड़ा पुत्र लिखा है। इसी अध्याय में पृष्ठ 136 पर प्रथम

पंथ का संचालक ''चूरामणी'' लिखा है। जो धर्मदास जी को छोटा पुत्र कबीर परमेश्वर जी की कृपा से उत्पन्न हुआ था।) वास्तव में बारह पंथों में प्रथम पंथ का संचालक ''चूरामणी'' ही है क्योंकि नारायण दास ने तो परमेश्वर कबीर जी की बात को स्वीकार ही नहीं किया था तथा चूरामणी से द्वेष रखता था। ''चूरामणी '' बान्धव गढ़ त्याग कर ''कुदरमाल'' नामक स्थान पर चला गया था। उसके कुछ दिन पश्चात् बान्धव गढ़ शहर पूरा नष्ट हो गया था। इसलिए पृष्ठ 134 (कबीर सागर=अध्याय= कबीर बानी) पर लिखा नारायण दास नाम ठीक नहीं है वहां पर ''चूरामणी'' होना उचित है। क्योंकि कबीर सागर अध्याय'' कबीर बानी''पृष्ठ 1870 पर लिखे बारह पंथों के विवरण में चूरामणी मिलाकर बारह पंथ बनते हैं। यह फेर बदल दामाखेड़ा वालों ने करने की चेष्टा की है। परन्तु सच्चाई को मिटा नहीं पाऐ।

कबीर सागर ''कबीर बानी'' नामक अध्याय (बोध सागर) पृष्ठ नं. 134 से 138 पर लिखे विवरण का भावार्थ है :-

पृष्ठ नं. 134 पर बारह वंशों (अंसों) के बाद तेरहवें वंश (अंस) में सब अज्ञान अंधेरा मिट जाएगा। बारह वंश काल के वश होकर अपनी-2 चतुरता दिखाएगें। पृष्ठ नं. 136-137 पर ''बारह पंथों'' का विवरण किया है तथा लिखा है कि संवत् 1775 में प्रभु का प्रेम प्रकट होगा तथा हमारी बानी प्रकट होवेगी। (संत गरीबदास जी महाराज छुड़ानी व हरियाणा वाले का जन्म 1774 में हुआ है उनको प्रभु कबीर 1784 में मिले थे। यहाँ पर इसी का वर्णन है तथा सम्वत् 1775 के स्थान पर 1774 होना चाहिए, गलती से 1775 लिखा है)। भावार्थ है कि बारहवां पंथ जो गरीबदास जी का चलेगा यह पंथ हमारी (कबीर जी की) साखी लेकर जीव को समझाएगें। परन्तु वास्तविक मन्त्र तथा सार ज्ञान से अपरिचित होने के कारण उन बारह पंथों के साधक असंख्य जन्म सतलोक नहीं जा सकेंगे। उपरोक्त बारह पंथ हमको ही प्रमाण करके भक्ति करेगें परन्तु स्थाई स्थान (सतलोक) अर्थात् मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकेंगे। बारहवें पंथ (गरीबदास वाले पंथ) में आगे चलकर हम (कबीर जी) स्वयं ही आऐगें तथा सब बारह पंथों को मिटा एक ही पंथ चलाऐगें। उस समय तक सार ज्ञान तथा सारशब्द छुपा कर रखना है। यही प्रमाण सन्त गरीबदास जी महाराज ने अपनी अमृतवाणी ''असुर निकंन्दन रमैणी'' में किया है कि ''सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी, सूती धरती सूम जगायसी'' पुराना रोहतक जिला दिल्ली मण्डल कहलाता है। जो पहले अंग्रेजों के शासन काल में केन्द्र के आधीन था।

''परमेश्वर कबीर जी द्वारा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव को शरण में लेना''

कबीर परमेश्वर जी ने कहा हे धर्मदास! मैं काल ब्रह्म के इक्कीसवें ब्रह्मण्ड से चलकर नीचे वाले ब्रह्मण्ड में आया। सर्व प्रथम ब्रह्मा के पास आया। मैंने विचार किया कि यदि ब्रह्मा मेरे ज्ञान से पूर्ण परिचित हो जाएगा तो यह एक ब्रह्मण्ड के सर्व विद्वानों को सही दिशा प्रदान कर देगा। इसकी महिमा से सर्व विद्वान प्रभावित हैं कि ब्रह्मा जी महाविद्वान तथा वेदों के प्रकांड ज्ञाता माने जाते हैं। मैंने ब्रह्मा से ज्ञान चर्चा की ब्रह्मा भी सर्व प्रमाणों को वेदों में देखकर चकित रह गया तथा मेरा शिष्य हुआ। ब्रह्मा को मैंने अपना नाम अग्नि ऋषि बताया। ब्रह्मा ने कहा हे अग्नि देव आप का ज्ञान अद्वितीय है। प्रथम मन्त्र प्राप्त किया। ब्रह्मा तथा सावित्री को मैंने ओम् मन्त्र दिया। यह देखने के

लिए कि यह कितना विश्वास करता है? इसके पश्चात् मैं श्री विष्णु के पास विष्णु लोक गया उससे भी ज्ञान चर्चा की तथा विष्णु भी मेरा शिष्य हुआ। उसको तथा लक्ष्मी को हरियं मन्त्र प्रथम मन्त्र रूप में दिया गया। यह देखने के लिए कि यह काल ब्रह्म के द्वारा डगमग तो नहीं हो जाएगा? इसके पश्चात् शिव शंकर के पास शंकर लोक में गया उसको तथा पार्वती को सोहं नाम दिया। यह देखने के लिए कहीं ये भी काल ब्रह्म द्वारा फिर तो भ्रमित नहीं कर दिए जाऐंगे। उसके पश्चात् अन्य ऋषियों मनु आदि से ज्ञान चर्चा की परन्तु मनु आदि ऋषियों ने काल प्रभाव के कारण मेरे ज्ञान पर विश्वास नहीं किया। मेरे को उल्टा ज्ञान देने वाला ''वामदेव'' उर्फ नाम से पुकारने लगे जबकि पृथ्वी पर मेरा नाम सत्ययुग में ''सत्यसुकृत'' था।

कुछ दिनों पश्चात् मैं फिर से ब्रह्मा के पास गया। ब्रह्मा से ज्ञान चर्चा करनी चाही तो ब्रह्मा जी ने अरूचि दिखाई। क्योंकि जब काल ब्रह्म ने देखा कि मेरे ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा को तत्वज्ञान से परिचित किया जा रहा है। उसने सोचा यदि मेरा पुत्र तत्वज्ञान से परिचित हो गया तो मेरे से घृणा करेगा तथा जीव उत्पति नहीं हो पाएगी। मेरा उदर कैसे भरेगा? क्योंकि काल ब्रह्म को एक लाख मानव शरीरधारी जीवों को प्रतिदिन खाने का शाप लगा है। इसलिए काल ब्रह्म ने अपने ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा की बुद्धि को परिवर्तित कर दिया। ब्रह्मा के मन में विचार भर दिए कि काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ही पूज्य है। वह निराकार है। इससे भिन्न कोई अन्य परमात्मा नहीं हैं। जो तुझे ज्ञान दिया जा रहा है वह मिथ्या है। यह अग्नि ऋषि जो तेरे पास आया था वह अज्ञानी है। इसकी बातों में नहीं आना है। हे धर्मदास! ब्रह्मा ने काल ब्रह्म के प्रभाव से प्रभावित होकर मेरे ज्ञान को ग्रहण नहीं किया तथा कहा हे ऋषिवर! जो ज्ञान आप बता रहे हो यह अप्रमाणित है। इसलिए विश्वास के योग्य नहीं है। वेदों में केवल एक परमात्मा की पूजा का विधान है। उसका केवल एक ओं (ॐ) ही जाप करने का है। मुझे पूर्ण ज्ञान है मुझे आप का ज्ञान अस्वीकारिय है।

हे धर्मदास! मैंने बहुत कोशिश की ब्रह्मा को समझाने की तथा बताया कि वेद ज्ञान दाता ब्रह्म किसी अन्य पूर्ण ब्रह्म के विषय में कह रहा है। उसकी प्राप्ति के लिए तथा उसके विषय में तत्व से जानने के लिए किसी तत्वदर्शी सन्त (धीराणाम्) की खोज करो फिर उनसे वह तत्वज्ञान सुनों।

प्रमाणः- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में स्पष्ट वर्णन है तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में भी स्पष्ट कहा है। प्रमाणों को देख कर भी काल ब्रह्म के अति प्रभाव के कारण ब्रह्मा ने मेरे विचारों में रूचि नहीं ली। मैंने जान लिया कि ब्रह्मा को काल ने भ्रमित कर दिया है। इसलिए विष्णु जी ने भी अरूचि की तो मैं वहाँ से शिव शंकर के पास गया। यही स्थिति शिव की देख कर मैं नीचे पृथ्वी लोक में आया।

''चारों युगों में प्रकट होने का विवरण सत्ययुग में प्राकाट्य''

वर्तमान में चल रही चतुर्युगी के प्रथम सत्ययुग में मैंने (परमेश्वर कबीर जी ने) एक सरोवर में कमल के फूल पर शिशु रूप धारण किया। एक ब्राह्मण दम्पति निःसन्तान था। वह विद्याधर नामक ब्राह्मण अपनी पत्नी दीपिका के साथ अपनी ससुराल से आ रहा था। वे सरोवर पर विश्राम हेतु रूके वहाँ एक नवजात् शिशु को फूल पर प्राप्त करके अति प्रसन्न हुए। उसे परमेश्वर शिव की कृपा से

प्राप्त जान कर घर ले आए। एक अन्य ब्राह्मण से नाम रखवाया उसने मेरा नाम सत्सुकृत रखा। मेरी प्रेरणा से कंवारी गायों ने दूध देना प्रारम्भ किया। उनके दूध से मेरी परवरिश लीला हुई। गुरूकुल में शिक्षा की लीला की। ऋषि जी जो वेद मन्त्र भूल जाते तो मैं खड़ा होकर पूरा करता। ऋषि जी वेद मन्त्रों का गलत अर्थ करते मैं विरोध करता। इस कारण से मुझे गुरूकुल से निकाल दिया। पृथ्वी पर घूम कर मैंने बहुत से ऋषियों से ज्ञान चर्चा की परन्तु शास्त्रविरूद्ध ज्ञान पर आधारित होने के कारण किसी भी ऋषि-महर्षि ने ज्ञान सुनने की चेष्टा ही नहीं की। महर्षि मनु से भी मेरी वेद ज्ञान पर भी चर्चा हुई। महर्षि मनु ने ब्रह्मा जी से ही ज्ञान ग्रहण किया था। महर्षि मनु जी ने मुझे उल्टा ज्ञान देने वाला बताया तथा मेरा उपनाम वाम देव रख दिया। मैंने महर्षि मनु व अन्य ऋषियों से यहाँ तक कहा कि वह पूर्ण परमात्मा मैं ही हूँ। उन्होंने मेरा उपहास किया तथा कहा आप यहाँ है तो आपका सतलोक तो आपके बिना सुनसान पड़ा होगा वहाँ सतलोक में जाने का क्या लाभ? वहाँ गये प्राणी तो अनाथ हैं। मैंने कहा मैं ऊपर भी विराजमान हूँ। तब मनु जी सहित सर्व ऋषियों ने ठहाका लगा कर कहा फिर तो आपका नाम वामदेव उचित है। वामदेव का अर्थ है कि दो स्थानों पर निवास करने वाला, भी है। वाम अक्षर दो का बोधक है। इस प्रकार उन ज्ञानहीन व्यक्तियों ने मेरे तत्वज्ञान को ग्रहण नहीं किया। (वामदेव का प्रमाण शिवपुराण पृष्ठ 606-607 कैलाश संहिता प्रथम अध्याय में है।) बहुत से प्रयत्न करने पर कुछ पुण्यात्माओं ने मेरा उपदेश ग्रहण किया। मैंने स्वस्म वेद (कविगिरः=कविर्वाणी) की रचना की जिसकी काल द्वारा प्रेरित ज्ञानहीन ऋषियों ने बहुत निन्दा की तथा जनता से इसे न पढ़ने का आग्रह किया। सतयुग के प्राणी मुझे केवल एक अच्छा कवि ही मानते थे। इस कारण से सतयुग में बहुत ही कम जीवों ने मेरी शरण् ग्रहण की। सतयुग में मानव की आयु एक लाख वर्ष से प्रारम्भ होती है तथा सतयुग के अन्त में दस हजार वर्ष रह जाती है। सत्ययुग में बहुत ही पुण्यकर्मी प्राणी जन्म लेते हैं। सतयुगमें स्त्री विधवा नहीं होती। पिता से पहले पुत्र की मृत्यु नहीं होती। आपसी भाई चारा बहुत अच्छा होता है। चोरी-जारी अन्य बुराईयाँ नाम मात्र में ही होती है। तथा शराब, मांस, तम्बाकु आदि का सेवन सत्ययुग के आदि में प्राणी नहीं करते। ब्राह्मण विद्याधर वाली आत्मा त्रेता युग में वेदविज्ञ ऋषि हुए तथा कलयुग में ऋषि रामानन्द हुए तथा दीपिका वाली आत्मा त्रेता में सूर्या हुई तथा कलयुग में कमाली हुई तथा सतयुग में बहुत ही कम प्राणियों ने मेरी शरण ली।

प्रश्न :- धर्मदास जी ने पूछा हे बन्दी छोड़ आप त्रेता युग में मुनिंद्र ऋषि के नाम से अवतरित हुए थे। कृप्या उस युग में किन-2 पुण्यात्माओं ने आप की शरण ग्रहण की?

उत्तरः- हे धर्मदास! त्रेता युग में मैं मुनिन्द्र ऋषि के नाम से प्रकट हुआ। त्रेता युग में भी मैं एक शिशु रूप धारण करके कमल के फूल पर प्रकट हुआ था। एक वेदविज्ञ नामक ऋषि तथा सूर्या नामक उसकी साधवी पत्नी थी। वे प्रतिदिन सरोवर पर स्नान करने जाते थे। वह निःसन्तान दम्पति मुझे अपने साथ ले गए तथा सन्तान रूप में पालन किया। प्रत्येक युग में जिस समय मैं एक पूरे जीवन रहने की लीला करने आता हूँ। मेरी परवरिश कंवारी गायों से होती है। शिशु काल से ही मैं तत्वज्ञान की वाणी उच्चारण करता हूँ। जिस कारण से मुझे प्रसिद्ध कवि की उपाधी प्राप्त होती है। परन्तु ज्ञानहीन ऋषियों द्वारा भ्रमित जनता मुझे न पहचान कर एक कवि की उपाधी प्रदान कर

देती है। केवल मुझ से परिचित श्रद्धालु ही मुझे समझ पाते हैं तथा वे अपना कल्याण करा लेते हैं।

''त्रेता युग में कविर्देव का ऋषि मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य'' लेखक के शब्दों में निम्न पढ़ें :-

"त्रेतायुग में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) का मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य"

"नल तथा नील को शरण में लेना"

त्रेतायुग में स्वयंभु कविर्देव(कबीर परमेश्वर) रूपान्तर करके मुनिन्द्र ऋषि के नाम से आए हुए थे। एक दिन अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील ने मुनिन्द्र साहेब का सत्संग सुना। दोनों भक्त आपस में मौसी के पुत्र थे। माता-पिता का देहान्त हो चुका था। नल तथा नील दोनों शारीरिक व मानसिक रोग से अत्यधिक पीड़ीत थे। सर्व ऋषियों व सन्तों से कष्ट निवारण की प्रार्थना कर चुके थे। सर्व ऋषियों व सन्तों ने बताया था कि यह आप का प्रारब्ध का पाप कर्म का दण्ड है, यह आपको भोगना ही पड़ेगा। इसका कोई समाधान नहीं है। दोनों दोस्त जीवन से निराश होकर मृत्यु की प्रतिक्षा कर रहे थे।

सत्संग के उपरांत ज्यों ही दोनों ने परमेश्वर कविर्देव (कबीर परमेश्वर) उर्फ मुनिन्द्र ऋषि जी के चरण छुए तथा परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने सिर पर हाथ रखा तो दोनों का असाध्य रोग छू मन्त्र हो गया अर्थात् दोनों नल तथा नील स्वस्थ हो गए। इस अद्भुत चमत्कार को देख कर प्रभु के चरणों में गिर कर घण्टों रोते रहे तथा कहा आज हमें प्रभु मिल गया। जिसकी हमें वर्षों से खोज थी उससे प्रभावित होकर ऋषि मुनिन्द्र जी से नाम (दीक्षा) ले लिया मुनिन्द्र साहेब जी के साथ ही सेवा में रहने लगे। पहले ऋषियों व संतों का समागम पानी की व्यवस्था देख कर नदी के किनारे होता था। नल और नील दोनों बहुत प्रभु प्रेमी तथा भोली आत्माएँ थी। परमात्मा में श्रद्धा बहुत हो गई थी। सेवा बहुत किया करते थे। समागमों में रोगी व वृद्ध व विकलांग भक्तजन आते तो उनके कपड़े धोते तथा बर्तन साफ करते। उनके लोटे और गिलास साफ कर देते थे। परंतु थे भोले से दिमाग के। कपड़े धोने लग जाते तो सत्संग में जो प्रभु की कथा सुनी होती उसकी चर्चा करने लग जाते। दोनों भक्त प्रभु चर्चा में बहुत मस्त हो जाते और वस्तुएँ दरिया के जल में कब डूब जाती उनको पता भी नहीं चलता। किसी की चार वस्तु ले कर जाते तो दो वस्तु वापिस ला कर देते थे। भक्तजन कहते कि भाई आप सेवा तो बहुत करते हो, परंतु हमारा तो बहुत काम बिगाड़ देते हो। अब ये खोई हुई वस्तुएँ हम कहाँ से ले कर आयें? आप हमारी सेवा ही करनी छोड़ दो। हम अपनी सेवा आप ही कर लेंगे। नल तथा नील रोने लग जाते थे कि हमारी सेवा न छीनों। अब की बार नहीं खोएँगे। परन्तु फिर वही काम करते। प्रभु की चर्चा में लग जाते और वस्तुएँ डूब जाती। भक्तजनों ने मुनिन्द्र जी से प्रार्थना की कि कृप्या आप नल तथा नील को समझाओ। ये न तो मानते हैं और कहते हैं तो रोने लग जाते हैं। हमारी तो आधी भी वस्तुएँ वापिस नहीं लाते। बर्तन व वस्त्र धोते समय वे दोनों भगवान की चर्चा में मस्त हो जाते हैं और वस्तुएँ डूब जाती हैं। मुनिन्द्र साहेब ने एक दो बार नल-नील को समझाया। वे रोने लग जाते थे कि साहेब हमारी ये सेवा न छीनों। सतगुरु मुनिन्द्र साहेब ने आशीर्वाद देते हुए कहा बेटा नल तथा नील खूब सेवा करो, आज के बाद आपके हाथ से कोई भी वस्तु चाहे पत्थर या लोहा भी क्यों न हो जल में नहीं डुबेगी।

''समुन्द्र पर रामचन्द्र के पुल के लिए पत्थर तैराना''

एक समय की बात है कि सीता जी को रावण उठा कर ले गया। भगवान राम को पता भी नहीं कि सीता जी को कौन उठा ले गया? श्री रामचन्द्र जी इधर उधर खोज करते हैं। हनुमान जी ने खोज करके बताया कि सीता माता लंकापति रावण की कैद में है। पता लगने के बाद भगवान राम ने रावण के पास शान्ति दूत भेजे तथा प्रार्थना की कि सीता लौटा दे। परन्तु रावण नहीं माना। युद्ध की तैयारी हुई। तब समस्या यह आई कि समुद्र से सेना कैसे पार करें?

भगवान श्री रामचन्द्र ने तीन दिन तक घुटनों पानी में खड़ा होकर हाथ जोड़कर समुद्र से प्रार्थना की कि रास्ता दे। परन्तु समुद्र टस से मस न हुआ। जब समुद्र नहीं माना तब श्री राम ने उसे अग्नि बाण से जलाना चाहा। भयभीत समुद्र एक ब्राह्मण का रूप बनाकर सामने आया और कहा कि भगवन् सबकी अपनी-अपनी मर्यादाएँ हैं। मुझे जलाओ मत। मेरे अंदर न जाने कितने जीव-जंतु वसे हैं। अगर आप मुझे जला भी दोगे तो भी आप मुझे पार नहीं कर सकते, क्योंकि यहाँ पर बहुत गहरा गड्डा बन जायेगा, जिसको आप कभी भी पार नहीं कर सकते।

समुद्र ने कहा भगवन ऐसा काम करो कि सर्प भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। मेरी मर्यादा भी रह जाए और आपका पुल भी बन जाए। तब भगवान श्री राम ने समुद्र से पूछा कि वह क्या है? ब्राह्मण रूप में खड़े समुद्र ने कहा कि आपकी सेना में नल और नील नाम के दो सैनिक हैं। उनके पास उनके गुरुदेव से प्राप्त एक ऐसी शक्ति है कि उनके हाथ से पत्थर भी तैर जाते हैं। हर वस्तु चाहे वह लोहे की हो, तैर जाती है। श्री रामचन्द्र ने नल तथा नील को बुलाया और उनसे पूछा कि क्या आपके पास कोई ऐसी शक्ति है? तो नल तथा नील ने कहा कि हाँ जी, हमारे हाथ से पत्थर भी नहीं डुबेंगे। तो श्रीराम ने कहा कि परिक्षण करवाओ।

उन नादानों(नल-नील) ने सोचा कि आज सब के सामने तुम्हारी बहुत महिमा होगी। उस दिन उन्होंने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी (कबीर परमेश्वर जी) को यह सोचकर याद नहीं किया कि अगर हम उनको याद करेंगे तो कहीं श्रीराम ये न सोच लें कि इनके पास शक्ति नहीं है, यह तो कहीं और से मांगते हैं। उन्होंने पत्थर उठाकर समुन्द के जल में डाला तो वह पत्थर डूब गया। नल तथा नील ने बहुत कोशिश की, परन्तु उनसे पत्थर नहीं तैरे। तब भगवान राम ने समुद्र की ओर देखा मानो कहना चाह रहे हों कि आप तो झूठ बोल रहे थे। इनमें तो कोई शक्ति नहीं है। समुद्र ने कहा कि नल-नील आज तुमने अपने गुरुदेव को याद नहीं किया। कृप्या अपने गुरुदेव को याद करो। वे दोनों समझ गए कि आज तो हमने गलती कर दी। उन्होंने सतगुरु मुनिन्द्र साहेब जी को याद किया। सतगुरु मुनिन्द्र (कबीर परमेश्वर) वहाँ पर पहुँच गए। भगवान रामचन्द्र जी ने कहा कि हे ऋषिवर! मेरा दुर्भाग्य है कि आपके सेवकों से पत्थर नहीं तैर रहे हैं। मुनिन्द्र साहेब ने कहा कि अब इनके हाथ से कभी तैरेंगे भी नहीं, क्योंकि इनको अभिमान हो गया है। सतगुरु की वाणी प्रमाण करती है कि:-

गरीब, जैसे माता गर्भ को, राखे जतन बनाय।
ठेस लगे तो क्षीण होवे, तेरी ऐसे भक्ति जाय।

उस दिन के बाद नल तथा नील की वह शक्ति समाप्त हो गई। श्री रामचन्द्र जी ने परमेश्वर

मुनिन्द्र साहेब जी से कहा कि हे ऋषिवर! मुझ पर बहुत आपत्ति पड़ी हुई है। दया करो किसी प्रकार सेना परले पार हो जाए। जब आप अपने सेवकों को शक्ति दे सकते हो तो प्रभु! मुझ पर भी कुछ रजा करो। मुनिन्द्र साहेब जी ने कहा कि यह जो सामने वाला पहाड़ है, मैंने उसके चारों तरफ एक रेखा खींच दी है। इसके बीच-बीच के पत्थर उठा लाओ, वे नहीं डूबेंगे। श्री राम ने परिक्षण के लिए पत्थर मंगवाया। उसको पानी पर रखा तो वह तैरने लग गया। नल तथा नील कारीगर(शिल्पकार) भी थे। हनुमान जी प्रतिदिन भगवान याद किया करते थे। उसने अपनी दैनिक क्रिया भी करते रहने के लिए राम राम भी लिखता रहा और पहाड़ के पहाड़ उठा कर ले आता था। नल नील उनको जोड़-तोड़ कर पुल में लगा देते थे। इस प्रकार पुल बना था। धर्मदास जी कहते हैं :-

रहे नल नील जतन कर हार, तब सतगुरू से करी पुकार।
जा सत रेखा लिखी अपार, सिन्धु पर शिला तिराने वाले।
धन–धन सतगुरु सत कबीर, भक्त की पीर मिटाने वाले।

कोई कहता था कि हनुमान जी ने पत्थर पर राम का नाम लिख दिया था इसलिए पत्थर तैर गये। कोई कहता था कि नल-नील ने पुल बनाया था। कोई कहता था कि श्रीराम ने पुल बनाया था। परन्तु यह सतकथा ऐसे है, जो ऊपर लिखी है।

(सत कबीर की साखी - पृष्ठ 179 से 182 तक)

-: पीव पिछान को अंग :-

कबीर– तीन देव को सब कोई ध्यावै, चौथे देव का मरम न पावै।
चौथा छाड़ पंचम को ध्यावै, कहै कबीर सो हम पर आवै।।3।।

कबीर– ओंकार निश्चय भया, यह कर्ता मत जान।
साचा शब्द कबीर का, परदे मांही पहचान।।5।।

कबीर– राम कृष्ण अवतार हैं, इनका नांही संसार।
जिन साहेब संसार किया, सो किन्हूं न जन्म्या नार।।17।।

कबीर – चार भुजा के भजन में, भूलि परे सब संत।
कबिरा सुमिरो तासु को, जाके भुजा अनंत।।23।।

कबीर – समुद्र पाट लंका गये, सीता को भरतार।
ताहि अगस्त मुनि पीय गयो, इनमें को करतार।।26।।

कबीर – गिरवर धारयो कृष्ण जी, द्रोणागिरि हनुमंत।
शेष नाग सब सृष्टी सहारी, इनमें को भगवंत।।27।।

कबीर – काटे बंधन विपति में, कठिन किया संग्राम।
चिन्हों रे नर प्राणियां, गरुड बड़ो की राम।।28।।

कबीर – कह कबीर चित चेतहूं, शब्द करौ निरूवार।
श्रीरामहि कर्ता कहत हैं, भूलि परयो संसार।।29।।

कबीर – जिन राम कृष्ण व निरंजन कियो, सो तो करता न्यार।
अंधा ज्ञान न बूझई, कहै कबीर विचार।।30।।

"कबीर परमेश्वर द्वारा विभीषण तथा मंदोदरी को शरण में लेना"

परमेश्वर मुनिन्द्र जी अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील को शरण में लेने के उपरान्त श्री लंका में गए। वहाँ पर एक परम भक्त चन्द्रविजय जी का सोलह सदस्यों का परिवार रहता था। वह भाट जाति में उत्पन्न पुण्यकर्मी प्राणी थे। परमेश्वर मुनिन्द्र(कविर्देव) जी का उपदेश सुन कर पूरे परिवार ने नाम दान प्राप्त किया। परम भक्त चन्द्रविजय जी की पत्नी भक्तमति कर्मवती लंका के राजा रावण की रानी मन्दोदरी के पास नौकरी(सेवा) करती थी। रानी मंदोदरी को हँसी-मजाक अच्छे-मंदे चुटकुले सुना कर उसका मनोरंजन कराती थी। भक्त चन्द्रविजय, राजा रावण के पास दरबार में नौकरी(सेवा) करता था। राजा की बड़ाई के गाने सुना कर उसे प्रसन्न करता था। भक्त चन्द्रविजय की पत्नी भक्तमति कर्मवती परमेश्वर से उपदेश प्राप्त करने के उपरान्त रानी मंदोदरी को प्रभु चर्चा जो सृष्टी रचना अपने सतगुरुदेव मुनिन्द्र जी से सुनी थी प्रतिदिन सुनाने लगी।

भक्तमति मंदोदरी रानी को अति आनन्द आने लगा। कई-कई घण्टों तक प्रभु की सत कथा को भक्तमति कर्मवती सुनाती रहती तथा मंदोदरी की आँखों से आंसु बहते रहते। एक दिन रानी मंदोदरी ने कर्मवती से पूछा आपने यह ज्ञान किससे सुना? आप तो बहुत अनाप-शनाप बातें किया करती थी। इतना बदलाव परमात्मा तुल्य संत बिना नहीं हो सकता। तब कर्मवती ने बताया कि हमने एक परम संत से अभी-अभी उपदेश लिया है। रानी मंदोदरी ने संत के दर्शन की अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहा, आप के गुरु अब की बार आयें तो उन्हें हमारे घर बुला कर लाना। अपनी मालकिन का आदेश प्राप्त करके शीश झुकाकर सत्कार पूर्वक कहा कि जो आप की आज्ञा, आप की नौकरानी वही करेगी। मेरी एक विनती है, कहते हैं कि संत को आदेश पूर्वक नहीं बुलाना चाहिए। स्वयं जा कर दर्शन करना श्रेयकर होता है और जैसे आप की आज्ञा वैसा ही होगा। महारानी मंदोदरी ने कहा कि अब के आपके गुरुदेव जी आयें तो मुझे बताना मैं स्वयं उनके पास जाकर दर्शन करूंगी। परमेश्वर ने फिर श्री लंका में कृपा की। मंदोदरी रानी ने उपदेश प्राप्त किया। कुछ समय उपरान्त अपने प्रिय देवर भक्त विभीषण जी को उपदेश दिलाया। भक्तमति मंदोदरी उपदेश प्राप्त करके अहर्निश प्रभु स्मरण में लीन रहने लगी। अपने पति रावण को भी सतगुरु मुनिन्द्र जी से उपदेश प्राप्त करने की कई बार प्रार्थना की परन्तु रावण नहीं माना तथा कहा करता था कि मैंने परम शक्ति महेश्वर मृत्युंज्य शिव जी की भक्ति की है। इसके तुल्य कोई शक्ति नहीं है। आपको किसी ने बहका लिया है।

कुछ ही समय उपरान्त वनवास प्राप्त श्री सीता जी का अपहरण करके रावण ने अपने नौ लखा बाग में कैद कर लिया। भक्तमति मंदोदरी के बार-बार प्रार्थना करने से भी रावण ने माता सीता जी को वापिस छोड़ कर आना स्वीकार नहीं किया। तब भक्तमति मंदोदरी जी ने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी से कहा महाराज जी, मेरे पति ने किसी की औरत का अपहरण कर लिया है। मुझ से सहन नहीं हो रहा है। वह उसे वापिस छोड़ कर आना किसी कीमत पर भी स्वीकार नहीं कर रहा है। आप दया करो मेरे प्रभु। आज तक जीवन में मैंने ऐसा दुःख नहीं देखा था।

परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने कहा कि बेटी मंदोदरी यह औरत कोई साधारण स्त्री नहीं है। श्री

विष्णु जी को शापवश पृथ्वी पर आना पड़ा है, वे अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र नाम से जन्में हैं। इनको 14 वर्ष का वनवास प्राप्त है तथा लक्ष्मी जी स्वयं सीता रूप में इनकी पत्नी रूप में वनवास में श्री राम के साथ थी। उसे रावण एक साधु वेश बना कर धोखा देकर उठा लाया है। यह स्वयं लक्ष्मी ही सीता जी है। इसे शीघ्र वापिस करके क्षमा याचना करके अपने जीवन की भिक्षा याचना रावण करें तो इसी में इसका शुभ है।

भक्तमति मंदोदरी के अनेकों बार प्रार्थना करने से रावण नहीं माना तथा कहा कि वे दो मस्करे जंगल में घुमने वाले मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं। मेरे पास अनगिन सेना है। मेरे एक लाख पुत्र तथा सवा लाख नाती हैं। मेरे पुत्र मेघनाद ने स्वर्ग राज इन्द्र को पराजित कर उसकी पुत्री से विवाह कर रखा है। तेतीस करोड़ देवताओं को हमने कैद कर रखा है। तू मुझे उन दो बेसहारा बन में बिचर रहे बनवासियों को भगवान बता कर डराना चाहती है। इस स्त्री को वापिस नहीं करूंगा। मंदोदरी ने भक्ति मार्ग का ज्ञान जो अपने पूज्य गुरुदेव से सुना था, रावण को बहुत समझाया। विभीषण ने भी अपने बड़े भाई को समझाया। रावण ने अपने भाई विभीषण को पीटा तथा कहा कि तू ज्यादा श्री रामचन्द्र का पक्षपात कर रहा है, उसी के पास चला जा।

एक दिन भक्तमति मंदोदरी ने अपने पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना की कि हे गुरुदेव मेरा सुहाग उजड़ रहा है। एक बार आप भी मेरे पति को समझा दो। यदि वह आप की बात को नहीं मानेगा तो मुझे विधवा होने का दुःख नहीं होगा।

अपनी बचन की बेटी मंदोदरी की प्रार्थना स्वीकार करके राजा रावण के दरबार के समक्ष खड़े होकर परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने द्वारपालों से राजा रावण से मिलने की प्रार्थना की। द्वारपालों ने कहा ऋषि जी इस समय हमारे राजा जी अपना दरबार लगाए हुए हैं। इस समय अन्दर का संदेश बाहर आ सकता है, बाहर का संदेश अन्दर नहीं जा सकता। हम विवश हैं। तब पूर्ण प्रभु अंतर्ध्यान हुए तथा राजा रावण के दरबार में प्रकट हो गए। रावण की दृष्टि ऋषि पर गई तो गरज कर पूछा कि इस ऋषि को मेरी आज्ञा बिना किसने अन्दर आने दिया है उन द्वारपालों को लाकर मेरे सामने कत्ल कर दो। तब परमेश्वर ने कहा राजन् आप के द्वारपालों ने स्पष्ट मना किया था। उन्हें पता नहीं कि मैं कैसे अन्दर आ गया। रावण ने पूछा कि तू अन्दर कैसे आया? तब पूर्ण प्रभु मुनिन्द्र वेश में अदृश होकर पुनर् प्रकट हो गए तथा कहा कि मैं ऐसे आ गया। रावण ने पूछा कि आने का कारण बताओ। तब प्रभु ने कहा कि आप योद्धा हो कर एक अबला का अपहरण कर लाए हो। यह आप की शान व शूरवीरता के विपरीत है। सीता कोई साधारण औरत नहीं है यह स्वयं लक्ष्मी जी का अवतार है। श्री रामचन्द्र जी जो इसके पति हैं वे स्वयं विष्णु हैं। इसे वापिस करके अपने जीवन की भिक्षा मांगो। इसी में आप का श्रेय है। इतना सुन कर तमोगुण (भगवान शिव) का उपासक रावण क्रोधित होकर नंगी तलवार लेकर सिंहासन से दहाड़ता हुआ कूदा तथा उस नादान प्राणी ने तलवार के अंधा धुंध सत्तर वार ऋषि जी को मारने के लिए किए। परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने एक झाडू की सींक हाथ में पकड़ी हुई थी। उसको ढाल की तरह आगे कर दिया। रावण के सत्तर वार उस नाजुक सींक पर लगे। ऐसे आवाज हुई जैसे लोहे के खम्बे (पीलर) पर तलवार लग रही हो। सिंक टस से मस नहीं हुई।

रावण को पसीने आ गए। फिर भी अपने अहंकारवश नहीं माना। यह तो जान लिया कि यह कोई साधारण ऋषि नहीं है। रावण ने अभिमान वश कहा कि मैंने आप की एक भी बात नहीं सुननी, आप जा सकते हैं। परमेश्वर अंतर्ध्यान हो गए तथा मंदोदरी को सर्व वृतान्त सुनाकर प्रस्थान किया। रानी मंदोदरी ने कहा गुरुदेव अब मुझे विधवा होने में कोई कष्ट नहीं होगा।

श्री रामचन्द्र व रावण का युद्ध हुआ। रावण का वध हुआ। जिस लंका के राज्य को रावण ने तमोगुण भगवान शिव की कठिन साधना करके, दस बार शीश न्यौछावर करके प्राप्त किया था। वह क्षणिक सुख भी रावण का चला गया तथा नरक का भागी हुआ। इसके विपरीत पूर्ण परमात्मा के सतनाम साधक विभीषण को बिना कठिन साधना किए पूर्ण प्रभु की सत्य साधना व कृपा से लंकादेश का राज्य भी प्राप्त हुआ। हजारों वर्षों तक विभीषण ने लंका का राज्य का सुख भोगा तथा प्रभु कृपा से राज्य में पूर्ण शान्ति रही। सभी राक्षस वृति के व्यक्ति विनाश को प्राप्त हो चुके थे। भक्तमति मंदोदरी तथा भक्त विभीषण तथा परम भक्त चन्द्रविजय जी के परिवार के पूरे सोलह सदस्य तथा अन्य जिन्होंने पूर्ण परमेश्वर का उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादावत् सतभक्ति की वे सर्व साधक यहाँ पृथ्वी पर भी सुखी रहे तथा अन्त समय में परमेश्वर के विमान में बैठ कर सतलोक (शाश्वतम् स्थानम्) में चले गए। इसीलिए पवित्र गीता अध्याय 7 मंत्र 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की साधना से मिलने वाली क्षणिक सुविधाओं के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव वाले, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ (काल-ब्रह्म) को भी नहीं भजते।

फिर गीता अध्याय 7 मंत्र 18 में गीता बोलने वाला (काल-ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि कोई एक उदार आत्मा मेरी (ब्रह्म की) ही साधना करता है क्योंकि उनको तत्वदर्शी संत नही मिला। वे भी नेक आत्माऐं मेरी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ (गतिम्) गति में आश्रित रह गए। वे भी पूर्ण मुक्त नहीं हैं। इसलिए पवित्र गीता अध्याय 18 मंत्र 62 में कहा है कि हे अर्जुन तू सर्व भाव से उस परमेश्वर (पूर्ण परमात्मा अर्थात् तत् ब्रह्म) की शरण में जा। उसकी कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सतलोक अर्थात् सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

इसलिए पुण्यात्माओं से निवेदन है कि आज इस दासन् के भी दास (रामपाल दास) के पास पूर्ण परमात्मा प्राप्ति की वास्तविक विधि प्राप्त है। निःशुल्क उपदेश लेकर लाभ उठाऐं।

प्रश्नः- धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे प्रभु कुछ श्रद्धालु श्री हनुमान जी की पूजा करते हैं। यह शास्त्रविरूद्ध है या अनुकूल।

उत्तरः- कबीर देव ने कहा हे धर्मदास! अर्जुन को काल ब्रह्म ने श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि हे अर्जुन! जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्याग कर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण (पूजा) करता है। वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न परमगति को न सुख को ही (गीता अ. 16/मं.23) इस से तेरे लिए कर्तव्य अर्थात् करने योग्य भक्ति कर्म तथा अकर्त्तव्य अर्थात् न करने योग्य जो त्यागने योग्य कर्म हैं उनकी व्यवस्था में शास्त्र में लिखा उल्लेख ही प्रमाण है। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत भक्ति कर्म अर्थात् साधना ही करने योग्य है। (गीता अ.16/ श्लोक 24)

हे धर्मदास जी! गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 व 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 20

से 23 तथा 25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की पूजा करना भी व्यर्थ कहा है, भूतों की पूजा, पितरों की पूजा व अन्य सर्व देवताओं की पूजा को भी अविधिपूर्वक (शास्त्रविधि विरूद्ध) बताया है। हनुमान तो रामभक्त थे। वे स्वयं भी भक्ति करते थे तथा अन्य को भी राम की भक्ति करने को ही कहते थे। यदि कोई भक्त दूसरे भक्त की पूजा करता है। वह शास्त्रविधि विरूद्ध होने से व्यर्थ है। त्रेता युग में मैंने हनुमान को भी शरण् में लिया था।

प्रश्नः- धर्मदास ने प्रश्न किया हे कबीर परमेश्वर! आपने तो मेरे आश्चर्य को अधिक बढ़ा दिया। श्री हनुमान जी को तो अपनी शक्ति तथा श्री राम की भक्ति पर अत्यधिक अभिमान था। हे दीनानाथ! आपने हनुमान जी की बुद्धि को कैसे बदला? मुझ किकंर पर कृपा करके बताईए?

उत्तरः- कबीर परमेश्वर जी ने बताया हे धर्मदास! हनुमान जी लंका से सीता जी की खोज करके लौटा उस के हाथ में सीता द्वारा दिया सोने का कंगन था जिसे सीता जी अपने हाथ में चूड़ियों के स्थान पर पहनती थी। प्रातः काल का समय था। जिस स्थान पर पवन पुत्र आकाश मार्ग से उड़कर इस ओर पृथ्वी पर उतरा वह एक पर्वत था। उस के आने से पूर्व मैंने उस स्थान पर एक लीला की। एक सुन्दर बाग स्वादिष्ट फलों से लदे वृक्षों वाला अपनी शक्ति से स्थापित किया। उसी के एक कोने में स्वच्छ जल का सरोवर बनाया। दूसरे कोने में मैंने अपनी कुटिया बनाई। कुटिया के साथ आंगन में एक बहुत बड़ा घड़ा रखा था। हनुमान को भुख लगी थी। प्रथम स्नान करने लगा। सीता द्वारा दिया कंगन एक पत्थर की शिला रख दिया। स्नान करते समय हनुमान जी की दृष्टि उस कंगन पर ऐसे टिकी हुई थी जैसे ओस चाटते समय मणीधर सर्प अपनी मणी को मुख से निकाल कर जमीन पर रख देता है। ओस चाटते समय एक नजर मणी पर रखता है। कोई उसे उठा न ले। जैसे गाय चारा चरते समय भी एक टक दृष्टि अपने बच्चे पर रखती है। यदि कोई अन्य पशु उस बच्चे की ओर जाता है तो गाय उसे मारने को लपकती है। ठीक इसी प्रकार हनुमान के लिए वह कंगन इतना अनिवार्य था। क्योंकि उस कंगन को पहचान कर ही श्री रामचन्द्र जी को विश्वास हुआ कि वास्तव में सीता लंका पति रावण के बाग में कैद है। इसीलिए लंका पर आक्रमण करने की सोची तथा समुद्र पर पुल का निर्माण किया। यदि कंगन खो जाता तो श्री रामचन्द्र जी कभी भी हनुमान जी की बात पर विश्वास नहीं करते तथा इतने बड़े समुद्र पर पुल बनाने का कठिन कार्य करने की नहीं सोचते।

कबीर परमात्मा बता रहे हैं कि हे धर्मदास! यह सर्व विचार हनुमान के मन में उठ रहे थे। यदि कंगन को किसी ने चुरा लिया तो मेरा सर्व प्रयत्न व्यर्थ हो जाएगा। इसलिए स्नान करते-2 पल-2 में उस कंगन की ओर पल-२ में देख रहे थे। एक बन्दर ने उस कंगन को उठा लिया तथा उसे ध्यान से देखने लगा। हनुमान की दृष्टि भी उस बन्दर पर पड़ी। हनुमान तुरन्त बन्दर की ओर दौड़ा, बन्दर भी दौड़ा, हनुमान ने सोचा यदि शरारती बन्दर ने यह कंगन समुद्र में फैंक दिया तो मेरा सर्वकार्य नष्ट हो जाएगा, देखते-देखते उस बन्दर ने मेरे आश्रम में प्रवेश किया तथा आंगन में रखे उस बड़े घड़े में वह कंगन डाल दिया तथा दौड़ गया। हनुमान ने देखा कि कंगन ऋषि के आश्रम में रखे घड़े में बन्दर ने डाल दिया तो सुख की सांस ली। हनुमान ने घड़े में झांक कर देखा

तो पाया कि उस घड़े में उसी कंगन जैसे ढेर सारे कंगन पड़े थे। हनुमान पहचान नहीं सके कि वह कंगन कौन सा है जो मैं लाया था? अति दुःखी मन से आश्रम में बनी कुटिया की ओर देखा। वहाँ मैं (कबीर परमेश्वर जी) एक ऋषि के रूप में विराजमान था। मेरे निकट आकर बजरंग बली ने प्रणाम किया राम-राम बोला मैंने भी उसे राम-राम बोला तथा कहा आओ अंजनी लाल मैं आपकी ही प्रतिक्षा कर रहा था। अपना परिचय मुझ से सुन कर हनुमान के आश्चर्य की सीमा नहीं रही तथा वह शब्द की ''मैं आपकी प्रतिक्षा कर रहा था'' और भी आश्चर्य में डाल रहा था। अपनी समस्या से परेशान हनुमान ने इस आश्चर्य के विषय में कुछ नहीं पूछा। उसने पूछा ऋषि वर श्री राम जी पर इस वक्त बहुत आपत्ति आई है। सीता माता जी का अपहरण लंका पति रावण ने कर रखा है मैं उसकी खोज करके आया हूँ। मैंने(कबीर परमेश्वर जी ने) प्रश्न किया हे बजरंग बली! आप कौन से श्री राम के विषय में कह रहे हो? हनुमान बोला! हे ऋषिवर आप कौन सी दुनिया में रहते हो। आपको यही नहीं पता कौन है श्री राम, क्या और भी श्री राम हैं? मैं राजा दशरथ के पुत्र श्री रामचन्द्र जी के विषय में कह रहा हूँ जिन्हें चौदह वर्ष का बनवास हुआ है। मैंने(कबीर परमेश्वर उर्फ मुनिन्द्र ऋषि ने) कहा हनुमान! मैं भी उसी अयोध्या के राजा, दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र श्री रामचन्द्र के विषय में ही आप से पूछ रहा हूँ? ऐसे श्री दशरथ पुत्र श्री रामचन्द्र करोड़ों, उत्पन्न होकर मर चुके हैं। इसी प्रकार श्री राम को बनवास होता है, इसी प्रकार श्री सीता का अपहरण होता है, इसी प्रकार आप जैसे हनुमान जी श्री सीता की खोज करके आते हैं।

इतनी बात मेरे मुख से सुनकर ब्रह्मचारी हनुमान कुपित होकर बोले ऋषि जी! यह समय मजाक(उपहास) करने का नहीं है। आप व्यर्थ में मिथ्या भाषण कर रहे हो, आप ऋषि के रूप में अज्ञानी विराजमान हो अन्यथा आप यह प्रश्न नहीं करते कि कौन से श्री राम के विषय में बातें कर रहे हो पूरे वन व देश में चर्चा चल रही है कि सीता जी का अपहरण होने से श्री रामचन्द्र जी अति व्याकुल हैं।

मैंने (कबीर परमेश्वर ने) प्रश्न किया हनुमान ! आप ने मेरे पास आने का कष्ट किसलिए किया?

हनुमान बोला ऋषि जी ! मैंने बताया है कि मैं सीता माता की खोज करके आया हूँ। माता ने अपने हाथ का कंगन (सोने का कड़ा) मुझे दिया था जिसे पहचान कर श्री रामचन्द्र जी मुझ पर विश्वास करेंगे कि वह वास्तव में सीता जी का ही कंगन है, अन्यथा वे मुझ पर विश्वास नहीं कर सकेंगे। वह कंगन स्नान करते समय सरोवर के निकट पत्थर शिला पर रख दिया था। उसे एक बन्दर उठाकर आप के आश्रम में रखे घड़े में डाल गया। मैं उसे लेने आया हूँ। धर्मदास ! मैंने हनुमान से कहा, आप आहार किजिए फिर अपना कंगन घड़े से निकाल कर ले जाईए।

हनुमान बोला हे ऋषि जी ! मुझे भूख बहुत लगी थी परन्तु अब सब समाप्त हो गई है। आप के घड़े में बहुत सारे कंगन हैं। मैं पहचान नहीं पा रहा हूँ कि मेरे वाला कंगन कौन सा है?

मैंने कहा आप पहचान भी नहीं सकोगे। क्योंकि ये सर्व कंगन आप जैसे हनुमानों द्वारा लाए गए उन सीताओं के ही हैं जो पहले वाले श्री रामों के साथ महान कष्ट भोग चुकी हैं। आप कोई एक कंगन उठा ले जाईए वही वर्तमान वाली सीता वाले कंगण से मेल करेगा कोई भिन्नता नहीं है।

वर्तमान वाले श्री रामचन्द्र जैसे करोड़ों मर कर अन्य योनियों में चले गए हैं। हनुमान को कोई भी रास्ता दिखाई नहीं दिया। उसने कंगन की वास्तविक्ता को पक्का करने के लिए प्रश्न पूछा हे ऋषि जी ! आपने कहा कि अन्य श्री राम भी हुए है। उनकी भी पत्नी सीता नाम से थी। इसी प्रकार लंका पति रावण ने अपहरण किया तथा मेरे जैसे हनुमान इसी प्रकार सीता माता का कंगन लेकर आते थे। वे ही कंगन इस घड़े में विद्यमान हैं। हे दीनदयाल! यह बात कैसे सत्य मानुं क्योंकि जो हनुमान कंगन लाता होगा वह कंगन लेकर भी जाता होगा। फिर इस घड़े में कंगन कैसे रहेगा?

मैंने (कबीर परमेश्वर उर्फ मुनिन्द्र जी ने) कहा, पवन पुत्र हनुमान ! प्रत्येक बार बन्दर, हनुमान द्वारा लाए कंगन को उठाकर इस घड़े में डालता है। इस घड़े में मेरी कृपा से ऐसी शक्ति है कि जो वस्तु इस में डाल दी जाती है। वह एक जैसी दो बन जाती है। ऐसा कह कर मैंने एक पीतल की कटोरी उस घड़े में डाली, डालते ही दो एक जैसी हो गई। यह देख कर हनुमान आश्चर्य चकित रह गया। दोनों कटोरियों का मिलान करने लगा। कुछ भी अन्तर नहीं था। तब मैंने कहा हनुमान! इसी प्रकार बन्दर द्वारा कंगन इस घड़े में डालते ही एक कंगन और वैसा ही तैयार हो जाता है। आप निःसंकोच ले जाईए तथा श्री रामचन्द्र से पहचान कराईए।

अब सुन तत्वज्ञान बजरंग बली! जिस दशरथ पुत्र श्री राम को आप सृष्टी रचनहार सर्वशक्तिमान मानते हो यह तो सतगुण विष्णु का अवतार है। ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव ये नाशवान प्रभु हैं। इनके पिता काल ब्रह्म हैं जो इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्रभु(स्वामी) हैं। ब्रह्म से अधिक ब्रह्मण्डों का प्रभु परब्रह्म है। जो सात संख ब्रह्मण्डों का स्वामी है। इन सर्व प्रभुओं का भी प्रभु(स्वामी) पूर्ण ब्रह्म (सत्पुरूष) है। उस की पूजा से जीव का जन्म-मृत्यु का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाता है। वह जीव सत्यलोक में चला जाता है। जहाँ जाने के पश्चात् लौट कर इस संसार में नहीं आता अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। धर्मदास! मेरी चमत्कारी शक्ति से प्रभावित हनुमान उपरोक्त ज्ञान सुनता रहा। फिर विनयपूर्वक कहा हे ऋषि जी! अब मेरे पास समय कम है। मेरे ऊपर बहुत बड़ी जिम्मेवारी है। मैं पहले उससे मुक्त होना चाहता हूँ। एक बार सीता माता जी का संदेश श्री राम जी को देकर सीता माता जी को लंका पति रावण के चुंगल से छुड़वाना है। आप के अमृतवचन फिर कभी सुनूंगा, मुझे आज्ञा दिजिए ऋषिवर् ।

इतना कह कर हनुमान ने मेरे चरण लिए तथा एक कंगन उठा कर चला गया। हनुमान के मन में फिर भी शंका थी, कहीं श्री राम यह न कह दें कि यह कंगन सीता जी का नहीं है। हनुमान ने दूर से अतिहर्षित होकर आवाज लगाई सीता माता का पता लगा कर आया हूँ। निकट आने पर हनुमान ने कहा हे प्रभु! सीता माता को लंका पति रावण ने अपने नौलखे बाग में कैद कर रखा है। मैंने उसका बाग भी उजाड़ दिया तथा लंका को भी आग के हवाले कर दिया। माता सीता ने कहा है हे हनुमान! आप श्री राम को कहना मुझे शीघ्र कैद मुक्त कराऐं, मैं यहाँ पर महाकष्ट उठा रही हूँ। यह सब हनुमान से सुन कर श्री राम बोले हे सन्त हनुमान! आप कोई निशानी बताओ जिस से मुझे विश्वास हो सके कि जिस स्त्री के विषय में आप कह रहे हो वह सीता ही है। श्री राम के ऐसा कहने पर हनुमान ने संकोच युक्त मन से कहा यह लो माता जी की निशानी वह कंगन (जो घड़े से निकाल कर लाया था) जो सीता जी द्वारा हनुमान को दिया था। श्री राम के हाथ में थमा दिया। श्री

राम ने ध्यान पूर्वक देखा कंगन सही है। श्री राम ने हनुमान को सीने से लगा कर कहा हे प्रिय आत्मा हनुमान! आपने मुझ पर महान् उपकार किया है। यह कंगन वास्तव में सीता का ही है। यदि आप कंगन नहीं लाते तो मुझे विश्वास नहीं होता। जब श्री राम ने कंगन को वास्तविक बताया तो हनुमान की खुशी का ठिकाना नहीं रहा तथा मेरा (ऋषि मुनिन्द्र का) चेहरा तथा उनसे हुई वार्ता आँखों के सामने चलचित्र की तरह घूमने लगी। हनुमान को लगा कि ऋषि परम सिद्धी युक्त है।

अरे बनचर क्या खबरां कपि ल्याये। कहु सीता की बात बिथा सब। क्या क्या भोजन पाये।।टेक।। कैसी प्रीति करी तुम सेती, बिंजन कहा जिमाये। कहौ हनवंत संतजन मेरे, भूखे रहें क धाये।।1।। कैसा बदन बिनोद सती का, बूझत हूं मन लाये। क्या पौंनीक पटंबर पहरे। हार डोरि गल छ्याये ।।2।। कहा सिंगार उचार करत है, रावण सिज्या जाये। सुरमा सिलकि सिज्या पैठी, ना तुम्ह बदन छिपाये।।3।। बोले पौंनी होय स हौंनी, सुनि हो रघुपति राये। सीता सती अती अति आतुर, आंसुपात चलि जाये।।4।। ढूंढत फिरा लंक चहूं औरा, नौलख बाग छिपाये। जाय बिरछ परि छुबकी लाई, मुदरा भेंट चढाये।।5।। तहां प्रणाम करी सीता सौं, माता दर्शन पाये। झरे परे का हुकम किया था, नौलख बाग अघाये।।6।। नाजुक बदन नाम तुम्हारे मैं, जैसी माता जाये। रावण सेती प्रीति न जाकी, चंद बदन मुख छाये।।7।। पनंग समेटि पदम आसन सैं, पौंना गगन चढाये। त्रिकुटी संजम ध्यान तास का, सूरज कमल उगाये।।8।। हार डोरि नहीं पाट पटंबर, सीता मन मुरझाये। अगर मालवै मूरति सूरति, गरीबदास पद गाये।।9।।

श्री राम के मन में विचार उठा, कि यदि सीता ने रावण को समर्पण कर दिया होगा तो मैं सीता के लिए युद्ध नहीं करूंगा, किसलिए दुनियाँ के लाल मरवाऊँ। अपनी शंका के समाधान के लिए श्री राम ने अपने भक्त हनुमान से घुमा फिरा कर बातें पूछी ताकि सीता के विषय में यथार्थ् जानकारी प्राप्त कर सके। श्री राम ने हनुमान से पूछा हे मेरे प्यारे सन्त ! आप सीता के विषय में बताऐं वह कैसी है? वह रावण के महल में रहती होगी ? हनुमान ने कहा नहीं भगवान माता सीता तो रावण के नौलखा बाग में रहती है। श्री राम ने पूछा आपने भोजन कहां खाया, सीता आपको रावण के महल में खिला कर लाई होगी? हनुमान ने कहा नहीं भगवन् रावण के महल तक सीता माता की पहुँच कहाँ, मैंने माता से कहा माता भूख लगी है। तब सीता माता ने कहा भाई हनुमान! इस बाग का कोई फल तोड़ कर नहीं खाना, कोई नीचे गिरा हो केवल वहीं खाना। यदि फल तोड़कर खा लिया और रावण के नौकरों को पता चल गया तो मुझे बहुत यातना देगें। मैं भी जमीन पर पड़े फलों को ही खाती हूँ। मुझे भी फल वृक्ष से तोड़कर खाने का आदेश नहीं। श्री राम ने पूछा हनुमान! सीता ने सिंगार कर रखा होगा सुन्दर कीमती साड़ी पहन रखी होगी? रावण की सेज पर सोती होगी ?

हनुमान ने कहा हे भगवन्! माता-सीता ने फटे-पुराने कपड़े पहन रखे थे। जमीन पर बिछौना बिछा कर सोती है। हे भगवन्! मैं वृक्ष पर छुप कर बैठा था। रावण अपने सैनिकों समेत आया तथा सीता से अपनी पत्नी बनने के लिए विवश करने तथा भिन्न-2 प्रकार के वचन कहे। भय दिखाया अति त्रासदी माता ने कहा रावण! मेरी जान जा सकती है इस तन को श्री राम अतिरिक्त कोई अन्य पुरूष छू नहीं सकता। तू जितना चाहे कष्ट मुझे दे। रावण झख मार कर चला गया। तब मैंने तोड़-2 कर फल खाए। रावण का बाग उखाड़ कर समुद्र में फैंक दिया। रावण की लंका में आग लगा दी। जो नौकर-माता जी को परेशान करते थे उनकी खूब खबर ली। सीता जी का चाँद जैसा चेहरा

मुरझाए फूल की तरह हो चुका है। वह तो आप की याद में खोई रहती है। आप की चर्चा के अतिरिक्त उसे कोई बात अच्छी नहीं लगती। मेरे से आप के विषय में पूछा ''श्रीराम कैसे हैं?'' मेरे वियोग में बहुत दुःखी होगें। हनुमान आप श्री राम के खाने पीने का ध्यान रखना। वे बहुत अच्छे हैं। मेरे वियोग में रो-2 कर अति दुःखी रहते होंगे। उन्हें मेरी राम-2 कहना तथा मेरी प्रार्थना करना की मुझे अति शीघ्र रावण की कैद से छुड़ा लें। मैं उनके बिना अति परेशान हूँ। हनुमान के श्री मुख से उपरोक्त वचन सुनकर श्री रामचन्द्र जी को विश्वास हो गया कि सीता का रावण से कोई सम्बन्ध नहीं है। वह अति व्याकुल है। तब रावण से युद्ध करने की तैयारी की तथा युद्ध जीत कर विभिषण को लंका का राज्य प्रदान किया। सीता की अग्नि परीक्षा लेकर श्री राम अपनी पत्नी सीता के साथ पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या आऐ साथ भाई लक्ष्मण भी था। श्री राम को अयोध्या का राज्य भरत ने सौंप दिया।

एक दिन सीता ने हनुमान को एक सच्चे मोतियों की बहुमुल्य माला दी। हनुमान जी ने उस माला के मणके फोड़-2 कर जमीन पर फैंक दिए। सीता को अच्छा नहीं लगा तथा क्रोधवश हनुमान के प्रति कटुवचन कहे। अरे हनुमान! तूने इतनी कीमती माला का विनाश कर दिया। तू रहा बन्दर का बन्दर! यह राजमहल वनचरों के लिए नहीं है। आज आप ने माला का नाश किया है। कल अन्य बहुमूल्य वस्तुओं को नाश कर डालेगा। तुम तो बन में ही रहने योग्य हो। हनुमान ने कहा हे माता! जिस वस्तु में राम नहीं वह वस्तु मेरे काम नहीं। मैंने मोती को फोड़ कर देखा, उनमें राम नहीं लिखा था। इसलिए मेरे लिए मिट्टी है और सुनों देवी आज आपने एक भक्त की आत्मा दुखाई है आप को इन महलों का अभिमान हो गया है। आप भी इन महलों में नहीं रह सकोगी। आप का भी सर्व जीवन जंगल में संतों के पास ही व्यतीत होगा। हनुमान जी ने सीता जी की इस बात से नाराज होकर अयोध्या त्याग दी तथा एकान्त वास किया। सीता जी भी अधिक समय अयोध्या नगरी में नहीं रह सकी। एक धोबी के व्यंग्य के कारण श्री राम ने सीता जी का त्याग कर दिया। सीता जी ने वन में ऋषि बाल्मीकी जी के आश्रम में शेष जीवन व्यतीत किया।

उस समय हनुमान जी अति विचलित थे। उसे संसार में कोई भी अपना दिखाई नहीं दे रहा था। धर्मदास! तब मैं (कबीर परमेश्वर) हनुमान जी के पास गया। मैंने राम-2 शब्द उच्चारण किया। हनुमान ने मेरी ओर देखा तथा उत्तर में जय राम जी कहा, हनुमान ने कहा आओ ऋषि जी आप का चेहरा पहले कभी मैंने देखा है, ध्यान नहीं आ रहा कहाँ देखा है? मैंने(कबीर परमेश्वर ने) कहा मैं बताता हूँ आपने मुझे कहाँ देखा था। हनुमान ने मुझे बैठने को कहा। मैंने उसके निकट बैठ कर वह कंगन वाली बात याद दिलाई तथा कहा मैं वही ऋषि हूँ। उस समय हनुमान आप के पास तत्वज्ञान सुनने का वक्त नहीं था। अब आप के पास पर्याप्त समय है। इसलिए मैं आपको पूर्ण परमात्मा के विषय में ज्ञान सुनाने के लिए आया हूँ। यदि आप की रूचि हो तो चर्चा की जाए। हनुमान ने कहा ऋषिवर! मैं आप का ज्ञान रूचि से सुनूंगा आप मुझे तत्वज्ञान सुनाओ।

मैंने हनुमान जी को सृष्टी रचना सुनाई (कृप्या पाठक पढ़े सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) हनुमान जी ने कहा ऋषि जी! आप के द्वारा सुनाया गया ज्ञान पहले कभी नहीं सुना इसलिए मन मानने को तैयार नहीं है। हनुमान के ऐसा कहते ही मैं अन्तर्धान हो गया। हनुमान मुझे

हर दिशा में खोजने लगा। जब ऊपर आकाश की ओर देखा तो मैंने उसे दिव्य दृष्टि प्रदान की जिसके द्वारा हनुमान ने मुझे सतलोक के सिंहासन पर बैठे देखा। मेरे शरीर व सतलोक के तेज(प्रकाश) को देखकर हनुमान बहुत प्रभावित हुआ। कुछ समय पश्चात् मैं फिर उससे पचास गज की दूरी पर एक वृक्ष के नीचे विराजमान हुआ। मुझे देखकर महावीर हनुमान मेरे पास आया तथा प्रार्थना कि हे ऋषि मुनिन्द्र! कृप्या मुझे आप के सतलोक के दर्शन कराईए। तब मैंने हनुमान को धर्मदास आप की तरह सतलोक की सैर कराई। तब पहलवान को तत्वज्ञान हुआ तथा मेरे चरण लिए, उपदेश के लिए प्रार्थना की कहा हे ऋषिवर! आप पूर्ण परमात्मा हो आपने स्वयं को छुपाया हुआ है। कृप्या मुझे उपदेश दिजिए तथा वह विधि बताईए जिससे सत्यलोक की प्राप्ति हो सके। हे धर्मदास! तब मैंने हनुमान को नामदान दिया तथा अपना शिष्य बनाया। अंजनी पुत्र ने नाशवान राम की भक्ति त्यागकर अविनाशी राम अर्थात् मुझ पूर्णब्रह्म की भक्ति की जिससे हनुमान का कल्याण हुआ।

''पूर्ण परमात्मा कबीर जी का द्वापर युग में प्रकट होना''

प्रश्नः- हे परमेश्वर! अपने दास धर्मदास पर कृपा करके द्वापर युग में प्रकट होने की कथा सुनाऐं जिस से तत्वज्ञान प्राप्त हो?

उत्तरः- कबीर परमेश्वर (कबिर्देव) ने कहा हे धर्मदास! द्वापर युग में भी मैं एक सरोवर में कमल के फूल पर शिशु रूप में प्रकट हुआ। एक निःसन्तान बाल्मीकि (कालु तथा गोदावरी) दम्पति अपने घर ले गया। एक ऋषि से मेरा नामकरण कराया। उसने भगवान विष्णु की कृपा से प्राप्त होने के आधार से मेरा नाम करूणामय रखा। मैंने 25 दिन तक कोई आहार नहीं किया मेरी पालक माता अति दुःखी हुई। पिता जी भी कई साधु सन्तों के पास गए मेरे ऊपर झाड़-फूंक भी कराई। वे विष्णु के पुजारी थे। उनको अति दुःखी देखकर मैंने विष्णु को प्रेरणा दी। विष्णु भगवान एक ऋषि रूप में वहाँ आए तथा पिता कालु से कुशल मंगल पूछा। पिता कालु तथा माता गोदावरी (कलयुग में समन तथा नेकी रूप में दिल्ली में जन्में) ने अपना दुःख ऋषि जी को बताया कि हमें वृद्ध अवस्था में एक पुत्र रत्न भगवान विष्णु की कृपा से सरोवर में कमल के फूल पर प्राप्त हुआ है। यह बच्चा 25 दिन से भूखा है कुछ भी नहीं खाया है। अब इसका अन्त निकट है। परमात्मा विष्णु ने हमें अपार खुशी प्रदान की है। अब उसे छीन रहे हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि हे विष्णु भगवान यह खिलौना दे कर मत छीनों। हम अपराधियों से ऐसा क्या अपराध हो गया? इस बच्चे में हमारा इतना मोह हो गया है कि यदि इसकी मृत्यु हो गई तो हम दोनों उसी सरोवर में डूब कर मरेंगे जहाँ पर यह बालक रत्न हमें मिला था।

हे धर्मदास! ऋषि रूप में उपस्थित विष्णु भगवान ने मेरी ओर देखा। मैं पालने में झूल रहा था। मेरे अति स्वस्थ शरीर को देखकर विष्णु भगवान आश्चर्य चकित हुए तथा बोले हे कालु भक्त! यह बच्चा तो पूर्ण रूप से स्वस्थ है। आप कह रहे हो यह कुछ भी आहार नहीं करता। यह बालक तो ऐसा स्वस्थ है जैसे एक सेर दूध प्रतिदिन पीता हो। यह नहीं मरने वाला। इतना कह कर विष्णु मेरे पास आया। मैंने विष्णु से बात की तथा कहा हे विष्णु भगवान! आप मेरे माता पिता से कहो एक कुँवारी गाय लाऐं उस गाय को आप आशीर्वाद देना व कंवारी गाय दूध देने लगेगी उस गाय का दूध

मैं पीऊंगा। मेरे द्वारा अपना परिचय जान कर विष्णु भगवान समझ गए यह कोई सिद्ध आत्मा है जिसने मुझे पहचान लिया है। मुझे ऋषि के साथ बातें करते हुए मेरे पालक माता-पिता हैरान रह गए। अन्दर ही अन्दर खुशी की लहर दौड़ गई। ऋषि ने कहा कालु एक कंवारी गाय लाओ। वह दूध देगी उस दूध को यह होनहार बच्चा पीएगा। कालु पिता तुरन्त एक गाय ले आया। भगवान विष्णु ने मेरी प्रार्थना पर उस कंवारी गाय की कमर पर हाथ रख दिया। उसी समय उस गाय की बच्छिया के थनों से दूध की धार बहने लगी तथा वह तीन सेर का पात्र भरने के पश्चात् रूक गई। वह दूध मैंने पीया।

मेरी तथा विष्णु जी की वार्ता की भाषा को कालु व गोदावरी समझ नही सके। वे मुझ पच्चीस दिन के बालक को बोलते देखकर उस ऋषि रूप विष्णु का ही चमत्कार मान रहे थे तथा कंवारी गाय द्वारा दूध देना भी उस ऋषि की कृपा जानकर दोनों ऋषि के चरणों में लिपट गए। मेरी पालक माता ने मुझे पालने से उठाया तथा उस ऋषि रूप में विराजमान विष्णु के चरणों में डाला। मैं जमीन पर नहीं गिरा। माता के हाथों से निकल कर जमीन से चार फुट ऊपर हवा में पालने की तरह स्थित हो गया। जब गोदावरी ने मुझे ऋषि के चरणों की ओर किया भगवान विष्णु तीन कदम पीछे हट गए तथा बोले माई! यह बालक परम शक्ति युक्त है, बड़ा होकर जनता का उपकार करेगा। इतना कह कर ऋषि रूप धारी विष्णु अपने लोक को चल दिए। मैं पुनः पालने में विराजमान हो गया।

उस बाल्मीकि दम्पति (कालु तथा गोदावरी) ने मेरा हवा में स्थित होना भी ऋषि का ही करिश्मा जाना इस कारण से मुझे कोई अवतारी पुरूष नहीं समझ सके मैं भी यही चाहता था, कि ये मुझे एक साधारण बालक ही समझें जिससे इनकी वृद्ध अवस्था का समय मेरे लालन पालन में बीत जाए। मैं शिशु काल में ही तत्वज्ञान की वाणी उच्चारण करने लगा। उस नगरी में अकाल गिर गया। मेरे माता पिता मुझे लेकर बनारस (काशी) आए तथा वहाँ रहने लगे।

उस नगरी में एक सुदर्शन नाम का बाल्मीकी जाति का पुण्यात्मा मेरी वाणी सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। मैंने सुदर्शन भक्त को सृष्टी रचना सुनाई। सुदर्शन मेरी हम उमर था। उस समय मेरी लीलामय आयु 12 वर्ष थी। जब काशी के विद्वानों से ज्ञान चर्चा होती थी, सुदर्शन भी मेरे साथ जाता था। एक दिन सुदर्शन ने कहा हे करूणामय! आप जो ज्ञान सुनाते हो इसका समर्थन कोई भी ऋषि नहीं करता। आप के ज्ञान पर कैसे विश्वास हो? हे करूणामय! आप ऐसी कृपा करो जिससे मेरा भ्रम दूर हो जाए। हे धर्मदास मैंने उस प्यासी आत्मा सुदर्शन को सत्यलोक के दर्शन कराए आप की तरह उसको भी तीन दिन तक ऊपर के सर्व लोकों में ले गया। सुदर्शन का पंच भौतिक शरीर अचेत हो गया। सुदर्शन भी अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र था। अपने इकलौते पुत्र को मृत तुल्य देखकर उसके माता-पिता विलाप करने लगे तथा हमारे घर आकर मेरे मात-पिता से झगड़ा करने लगे। कहा कि तुम्हारे करूण ने हमारे बच्चे को जादू-जन्त्र कर दिया। वह सेवड़ा है। हमारा पुत्र मर गया हम आप के विरूद्ध राजा को शिकायत करेगें। मेरे माता-पिता ने मेरे से उन्ही के सामने पूछा हे करूण ! सच्च बता तूने क्या कर दिया उस सुदर्शन को। मैंने कहा वह सतलोक देखना चाहता था। इसलिए उसे सतलोक दर्शन के लिए भेजा है। शीघ्र ही लौट आएगा। कई वैद्य बुलाएं कई झाड़-फौंक करने वाले बुलाए कोई लाभ नहीं हुआ। तीसरे दिन सुदर्शन के मात-पिता

रोते हुए मेरे पास आए बोले बेटा करूण! हमारे पुत्र को ठीक कर दे हम तेरे आगे हाथ जोड़ते हैं। मैंने कहा माई तुम्हारा पुत्र नहीं मरेगा।

मेरे (परमेश्वर कबीर साहेब) को अपने साथ अपने घर ले गए। मेरे मात-पिता भी साथ गए आस-पास के व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित थे। मैंने सुदर्शन के शीश को पकड़ कर हिलाया तथा कहा हे सुदर्शन! वापिस आ जा तेरे माता-पिता बहुत व्याकुल हैं। इतना कहते ही सुदर्शन ने आँखें खोली चारों ओर देखा अपने सिर की ओर मुझे नहीं देख सका। उठ-बैठ कर बोला परमेश्वर करूणामय कहाँ हैं। रोने लगा-कहाँ गए परमेश्वर करूणामय। उपस्थित व्यक्तियों ने पूछा क्या करूण को ढूढ़ं रहा है? देख यह बैठा तेरे पीछे। मुझे देखते ही चरणों में शीश रख कर विलाप करने लगा तथा रोता हुआ बोला हे काशी के रहने वालों। यह पूर्ण परमात्मा है। यह सर्व सृष्टी रचनहार अपने शहर में विराजमान है। आप इसे नहीं पहचान सके। यह मेरे साथ ऊपर के लोक में गया। ऊपर के लोक में यह पूर्ण परमात्मा के रूप में एक सफेद गुबन्द में विराजमान है। यह ही दोनों रूपों में लीला कर रहा है। सर्वव्यक्ति कहने लगे इस कालु के पुत्र ने भीखु के पुत्र पर जादू जन्त्र किया है। जिस कारण से इसका दिमाग चल गया है। इस करूण को ही परमात्मा कह रहा है। भला हो भगवान का भीखू का बेटा जीवित हो गया नहीं तो बेचारों का कोई और बूढ़ापे का सहारा भी नहीं था। यह कह कर सर्व अपने-2 घर चले गए।

भीखू तथा उसकी पत्नी सुखी (सुखवन्ती) अपने पुत्र को जीवित देखकर अति प्रसन्न हुए भगवान विष्णु का प्रसाद बनाया पूरे मौहल्ले (कालोनी) में प्रसाद बांटा। सुदर्शन ने मुझसे उपदेश लिया। अपने माता-पिता भीखू तथा सुखी को भी मेरे से उपदेश लेने को कहा। दोनों ने बहुत विरोध किया तथा कहा यह कालु का पुत्र पूर्ण परमात्मा नहीं है बेटा! इसने तेरे ऊपर जादू-जन्त्र करके मूर्ख बनाया हुआ है। भगवान विष्णु से बड़ा कोई नहीं है। सुदर्शन ने मुझ से कहा हे प्रभु! कृप्या मुझे अपनी शरण में रखना। मेरे माता-पिता का कोई दोष नहीं है सर्व मानव समाज इसी ज्ञान पर अटका है। जिस पर आपकी कृपा होगी केवल वही आप को जान व मान सकता है। इस काल-ब्रह्म ने तो पूरे विश्व (ब्रह्मा-विष्णु-शिव सहित) को भ्रमित किया हुआ है। हे धर्मदास! सुदर्शन भक्त ने काल के जाल को समझ कर सच्चे मन से मेरी भक्ति की तथा मेरा साक्षी बना कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य है जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से भिन्न तथा अधिक शक्तिशाली है। हे धर्मदास! पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को जिस सुदर्शन द्वारा सम्पूर्ण की गई आप सुनते हो यह वही सुदर्शन बाल्मीकि मेरा शिष्य था। द्वापर युग में मैं 404 वर्ष तक करूणामय शरीर में लीला करता रहा तथा सशरीर सतलोक चला गया।

प्रश्नः- धर्मदास ने प्रश्न किया हे प्रभु आपकी कृपा द्वापर युग में और किस पुण्यात्मा पर हुई?

उत्तरः- कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा द्वापर युग में एक चन्द्रविजय नामक राजा की रानी इन्द्रमति को पार किया तथा राजा चन्द्रविजय पर भी कृपा की। परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताई ''रानी इन्द्रमति को पार करने वाली कथा'' लेखक (संत रामपाल दास जी महाराज) के शब्दों में :-

"द्वापर युग में इन्द्रमति को शरण में लेना"

द्वापरयुग में चन्द्रविजय नाम का एक राजा था। उसकी पत्नी इन्द्रमति बहुत ही धार्मिक प्रवृति की औरत थी। संत-महात्माओं का बहुत आदर किया करती थी। उसने एक गुरुदेव भी बना रखा था। उनके गुरुदेव ने बताया था कि बेटी साधु-संतों की सेवा करनी चाहिए। संतों को भोजन खिलाने से बहुत लाभ होता है। एकादशी का व्रत, मन्त्र के जाप आदि साधनायें जो गुरुदेव ने बताई थी। उस भगवत् भक्ति में रानी बहुत दृढ़ता से लगी हुई थी। गुरुदेव ने बताया था कि संतों को भोजन खिलाया करेगी तो तू आगे भी रानी बन जाएगी और तुझे स्वर्ग प्राप्ति होगी। रानी ने सोचा कि प्रतिदिन एक संत को भोजन अवश्य खिलाया करूँगी। उसने यह प्रतिज्ञा मन में ठान ली कि मैं खाना बाद में खाया करूँगी, पहले संत को खिलाया करूँगी। इससे मुझे याद बनी रहेगी, कहीं मुझे भूल न पड़ जाये। रानी प्रतिदिन पहले एक संत को भोजन खिलाती फिर स्वयं खाती। वर्षों तक ये क्रम चलता रहा।

एक समय हरिद्वार में कुम्भ के मेले का संयोग हुआ। जितने भी त्रिगुण माया के उपासक संत थे सभी गंगा में स्नान के लिए (परभी लेने के लिए) प्रस्थान कर गये। इस कारण से कई दिन रानी को भोजन कराने के लिए कोई संत नहीं मिला। रानी इन्द्रमति ने स्वयं भी भोजन नहीं किया। चौथे दिन अपनी बांदी से कहा कि बांदी देख ले कोई संत मिल जाए तो, नहीं तो आज तेरी रानी जीवित नहीं रहेगी। चाहे मेरे प्राण निकल जाएँगे परन्तु मैं खाना नहीं खाऊँगी। वह दीन दयाल कबीर परमेश्वर अपने पूर्व वाले भक्त को शरण में लेने के लिए न जाने क्या कारण बना देता है ? बांदी ने ऊपर अटारी पर चढ़कर देखा कि सामने से सफेद कपड़े पहने एक संत आ रहा था। द्वापर युग में परमेश्वर कबीर करूणामय नाम से आये थे। बांदी नीचे आई और रानी से कहा कि एक व्यक्ति है जो साधु जैसा नजर आता है। रानी ने कहा कि जल्दी से बुला ला। बांदी महल से बाहर गई तथा प्रार्थना की कि साहेब आपको हमारी रानी ने याद किया है। करूणामय साहेब ने कहा कि रानी ने मुझे क्यों याद किया है, मेरा और रानी का क्या सम्बन्ध? नौकरानी ने सारी बात बताई।

करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि रानी को आवश्यकता पड़े तो यहाँ आ जाए, मैं यहाँ खड़ा हूँ। तू बांदी और वह रानी। मैं वहाँ जाऊँ और यदि वह कह दे कि तुझे किसने बुलाया था या उसका राजा ही कुछ कह दे और बेटी संतों का अनादर बहुत पापदायक होता है। बांदी फिर वापिस आई और रानी से सब वार्ता कह सुनाई। तब रानी ने कहा कि बांदी मेरा हाथ पकड़ और चल। जाते ही रानी ने दण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना की कि हे परवरदिगार! चाहती तो ये हूँ कि आपको कंधे पर बैठा लूं। करूणामय साहेब ने कहा बेटी! मैं यही देखना चाहता था कि तेरे में कोई श्रद्धा भी है या वैसे ही भूखी मर रही है। रानी ने अपने हाथों खाना बनाया। करूणामय रूप में आए कविर्देव ने कहा कि मैं खाना नहीं खाता। मेरा शरीर खाना खाने का नहीं है। तो रानी ने कहा कि मैं भी खाना नहीं खाऊँगी। करूणामय साहेब जी ने कहा कि ठीक है बेटी लाओ खाना खाते हैं, क्योंकि समर्थ उसी को कहते हैं जो, जो चाहे, सो करे। करूणामय साहेब ने खाना खा लिया, फिर रानी से पूछा कि जो यह तू साधना कर रही है यह तेरे को किसने बताई है? रानी ने कहा कि मेरे गुरुदेव ने आदेश दिया है? कबीर साहेब ने पूछा क्या आदेश दिया है तेरे गुरुदेव ने? इन्द्रमती ने कहा कि

विष्णु-महेश की पूजा, एकादशी का व्रत, तीर्थ भ्रमण, देवी पूजा, श्राद्ध निकालना, मन्दिर में जाना, संतों की सेवा करना। करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि जो साधना तेरे गुरुदेव ने दी है तेरे को जन्म और मृत्यु तथा स्वर्ग-नरक व चौरासी लाख योनियों के कष्ट से मुक्ति प्रदान नहीं करा सकती। रानी ने कहा कि महाराज जी जितने भी संत हैं, अपनी-अपनी प्रभुता आप ही बनाने आते हैं। मेरे गुरुदेव के बारे में कुछ नहीं कहोगे। मैं चाहे मुक्त होऊँ या न होऊँ।

करूणामय (कबीर) साहेब ने सोचा कि इस भोले जीव को कैसे समझाऐं? इन्होंने जो पूंछ पकड़ ली उसको छोड़ नहीं सकते, मर सकते हैं। करूणामय साहेब ने कहा कि बेटी वैसे तो तेरी ईच्छा है, मैं निंदा नहीं कर रहा। क्या मैंने आपके गुरुदेव को गाली दी है या कोई बुरा कहा है? मैं तो भक्तिमार्ग बता रहा हूँ कि यह भक्ति शास्त्र विरूद्ध है। तुझे पार नहीं होने देगी और न ही तेरा कोई आने वाला कर्म दण्ड कटेगा और सुन ले आज से तीसरे दिन तेरी मृत्यु हो जाएगी। न तेरा गुरु बचा सकेगा और न तेरी यह नकली साधना बचा सकेगी। (जब मरने की बारी आती है फिर जीव को डर लगता है। वैसे तो नहीं मानता) रानी ने सोचा कि संत झूठ नहीं बोलते। कहीं ऐसा न हो कि मैं तीसरे दिन ही मर जाऊँ। इस डर से करूणामय साहेब से पूछा कि साहेब क्या मेरी जान बच सकती है? कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि बच सकती है। अगर तू मेरे से उपदेश लेगी, मेरी शिष्या बनेगी, पिछली पूजाएँ त्यागेगी, तब तेरी जान बचेगी। इन्द्रमति ने कहा मैंने सुना है कि गुरुदेव नहीं बदलना चाहिए, पाप लगता है।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि नहीं पुत्री यह भी तेरा भ्रम है। एक वैद्य (डाक्टर) से औषधी न लगे तो क्या दूसरे से नहीं लेते? एक पाँचवीं कक्षा का अध्यापक होता है। फिर एक उच्च कक्षा का अध्यापक होता है। बेटी अगली कक्षा में जाना होगा। क्या सारी उम्र पाँचवीं कक्षा में ही लगी रहेगी ? इसको छोड़ना पड़ेगा। तू अब आगे की पड़ाई पढ़, मैं पढ़ाने आया हूँ। वैसे तो नहीं मानती परन्तु मृत्यु दिखने लगी कि संत कह रहा है तो कहीं बात न बिगड़ जाए। ऐसा विचार करके इन्द्रमति ने कहा कि जैसे आप कहोगे मैं वैसे ही करूँगी। करूणामय (कबीर) साहेब ने उपदेश दिया। कहा कि तीसरे दिन मेरे रूप में काल आयेगा, तू उससे बोलना मत। जो मैंने नाम दिया है दो मिनट तक इसका जाप करना। दो मिनट के बाद उसको देखना है। उसके बाद सत्कार करना है। वैसे तो गुरुदेव आए तो अति शीघ्र चरणों में गिर जाना चाहिए। ये मेरा केवल इस बार आदेश है। रानी ने कहा ठीक है जी।

रानी को तो चिंता बनी हुई थी। श्रद्धा से जाप कर रही थी। (कबीर साहेब) करूणामय साहेब का रूप बना कर गुरुदेव रूप में काल आया, आवाज लगाई इन्द्रमति, इन्द्रमति। उसको तो पहले ही डर था, स्मरण करती रही। काल की तरफ नहीं देखा। दो मिनट के बाद जब देखा तो काल का स्वरूप बदल गया। काल का ज्यों का त्यों चेहरा दिखाई देने लगा। करूणामय साहेब का स्वरूप नहीं रहा। जब काल ने देखा कि तेरा तो स्वरूप बदल गया। वह जान गया कि इसके पास कोई शक्ति युक्त मंत्र है। यह कहकर चला गया कि तुझे फिर देखूँगा। अब तो बच गई। रानी बहुत खुश हुई, फूली नहीं समाई। कभी अपनी बांदियों को कहने लगी कि मेरी मृत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने मुझे बचा दिया। राजा के पास गई तथा कहा कि आज मेरी मृत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने रक्षा कर

दी। मुझे लेने के लिए काल आया था। राजा ने कहा कि तू ऐसे ही ड्रामें करती रहती है, काल आता तो क्या तुझे छोड़ जाता? ये संत वैसे बहका देते हैं। अब इस बात को वह कैसे माने? खुशी-खुशी में रानी लेट गई। कुछ देर के बाद सर्प बनकर काल फिर आया और रानी को डस लिया। ज्यों ही सर्प ने डसा रानी को पता चल गया। रानी जोर से चिल्लाई। मुझे साँप ने डंस लिया। नौकर भागे। देखते ही देखते एक मोरी (पानी निकलने का छोटा छिद्र) में से वह सर्प घर से बाहर निकल गया। अपने गुरुदेव को पुकार कर रानी बेहोश हो गई।

करूणामय (कबीर) साहेब वहाँ प्रकट हो गए। लोगों को दिखाने के लिए मंत्र बोला और (वे तो बिना मंत्र भी जीवित कर सकते हैं, किसी जंत्र-मंत्र की आवश्यकता नहीं) इन्द्रमती को जीवित कर दिया। रानी ने बड़ा शुक्र मनाया कि हे बंदी छोड़ ! यदि आज आपकी शरण में नहीं होती तो मेरी मृत्यु हो जाती। साहेब ने कहा कि ईन्द्रमति इस काल को मैं तेरे घर में घुसने भी नहीं देता और यह तेरे ऊपर यह हमला भी नहीं करता। परन्तु तुझे विश्वास नहीं होता। तू यह सोचती कि मेरे ऊपर कोई आपत्ति नहीं आनी थी। गुरुजी ने मुझे बहका कर नाम दे दिया। इसलिए तेरे को थोड़ा-सा झटका दिखाया है, नहीं तो बेटी तेरे को विश्वास नहीं होता।

धर्मदास यहाँ घना अंधेरा, बिन परचय (शक्ति प्रदर्शन) जीव जम का चेरा।।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि अब जब मैं चाहूँगा, तब तेरी मृत्यु होगी। गरीबदास जी कहते हैं कि :-

गरीब, काल डरै करतार से, जय जय जय जगदीश।
जौरा जौरी झाड़ती, पग रज डारे शीश।।

यह काल, कबीर परमेश्वर से डरता है और यह मौत कबीर साहेब के जूते झाड़ती है अर्थात् नौकर तुल्य है। फिर उस धूल को अपने सिर पर लगाती है कि आप जिसको मारने का आदेश दोगे उसके पास जाऊँगी, नहीं मैं नहीं जाऊँगी।

गरीब, काल जो पीसै पीसना, जौरा है पनिहार ।
ये दो असल मजूर हैं, मेरे साहेब के दरबार।।

यह काल जो यहाँ का 21 ब्रह्मण्ड का भगवान (ब्रह्म) है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश का पिता है। ये तो मेरे कबीर साहेब का आटा पीसता है अर्थात पक्का नौकर है और जौरा (मौत) मेरे कबीर साहेब का पानी भरती है अर्थात् एक विशेष नौकरानी है। यह दो असल मजूर मेरे साहेब के दरबार में हैं।

कुछ दिनों के बाद करूणामय (कबीर जी) साहेब फिर आए। रानी इन्द्रमति को सतनाम प्रदान किया। फिर कुछ समय के उपरान्त करूणामय साहेब ने रानी इन्द्रमति की अति श्रद्धा देखकर सारनाम दिया। शब्द की उपलब्धि करवाई। परमेश्वर करूणामय रूप से रानी के घर दर्शन देने जाते रहते थे तो इन्द्रमति प्रार्थना किया करती थी कि मेरे पति राजा को समझाओ मालिक, यह भी मान जाये। आपके चरणों में आ जाये तो मेरा जीवन सफल हो जाये। चन्द्रविजय से कबीर साहेब ने प्रार्थना की कि चन्द्रविजय आप भी नाम लो, यह दो दिन का राज और ठाठ है। फिर चौरासी लाख योनियों में प्राणी चला जाएगा। चन्द्रविजय ने कहा कि भगवन मैं तो नाम लूं नहीं और आपकी शिष्या को मना करूँ नहीं, चाहे सारे खजाने को ही दान करो, चाहे किसी प्रकार का

सत्संग करवाओ, मैं मना नहीं करूँगा। कबीर साहेब (करूणामय) ने पूछा आप नाम क्यों नहीं लोगे ? चन्द्रविजय राजा ने कहा कि मैंने तो बड़े-बड़े राजाओं की पार्टियों में जाना पड़ता है। करूणामय (कबीर साहेब) ने कहा कि पार्टियों में जाने में नाम क्या बाधा करेगा? सभा में जाओ, वहाँ काजू खाओ, दूध पी लो, शरबत (जूस) पी लो, शराब मत प्रयोग करो। शराब पीना महापाप है। परन्तु राजा नहीं माना।

रानी की प्रार्थना पर करूणामय (कबीर) साहेब ने राजा को फिर समझाया कि नाम के बिना ये जीवन ऐसे ही व्यर्थ हो जायेगा। आप नाम ले लो। राजा ने फिर कहा कि गुरू जी मुझे नाम के लिए मत कहना। आपकी शिष्या को मैं मना नहीं करूँगा। चाहे कितना दान करे, कितना सत्संग करवाए। साहेब ने कहा कि बेटी इस दो दिन के झूठे सुख को देखकर इसकी बुद्धि भ्रष्ट हो चुकि है। तू प्रभु के चरणों में लगी रह। अपना आत्मकल्याण करवा। मृत्यु के उपरान्त कोई किसी का पति नहीं, कोई किसी की पत्नी नहीं। दो दिन का सम्बन्ध है। अपना कर्म बना बेटी। जब इन्द्रमति 80 वर्ष की वृद्धा हुई (कहाँ 40 साल की उम्र में मर जाना था)। जब शरीर भी हिलने लगा, तब करूणामय साहेब बोले अब बोल इन्द्रमति क्या चाहती है? चलना चाहती है सतलोक? इन्द्रमति ने कहा कि प्रभु तैयार हूँ, बिल्कुल तैयार हूँ दाता! करूणामय साहेब ने कहा कि तेरी पोते या पोती या किसी अन्य सदस्य में कोई ममता तो नहीं है? रानी ने कहा बिल्कुल नहीं साहेब। आपने ज्ञान ही ऐसा निर्मल दे दिया। इस गंदे लोक की क्या इच्छा करूँ ? कबीर साहेब (करूणामय) जी ने कहा कि चल बेटी। रानी प्राण त्याग गई।

परमेश्वर कबीर जी (करूणामय) रानी इन्द्रमती की आत्मा को ऊपर ले गए। इसी ब्रह्मण्ड में एक मानसरोवर है। उस मान सरोवर में इस आत्मा को स्नान कराना होता है। इन्द्रमति को वहाँ पर कुछ समय तक रखा। करूणामय रूप में कबीर परमेश्वर जी ने रानी से पूछा की तेरी कुछ इच्छा तो नहीं यदि इच्छा रही तो दुबारा जन्म लेना पड़ेगा। यदि मन में सन्तान व सम्पत्ति या पति, पत्नी आदि की इच्छा थोड़ी सी भी रह गई तो आत्मा सतलोक नहीं जा सकती। इन्द्रमति ने कहा साहेब आप तो अंतर्यामी हो, कोई इच्छा नहीं है। आपके चरणों की इच्छा है। लेकिन एक मन में शंका बनी हुई है कि मेरा जो पति था, उसने मुझे किसी भी धार्मिक कर्म के लिए कभी मना नहीं किया। नहीं तो आजकल के पति अपनी पत्नियों को बाधा कर देते हैं। यदि वह मुझे मना कर देता तो मैं आपके चरणों में नहीं लग पाती। मेरा कल्याण नहीं होता। उसका इस शुभ कर्म में सहयोग का कुछ लाभ मिलता हो तो कभी उस पर भी दया करना दाता। करूणामय जी ने देखा कि यह नादान इसके पीछे फिर अटक गई। साहेब बोले ठीक है बेटी, अभी तू दो चार वर्ष यहाँ रह।

अब दो वर्ष के बाद राजा भी मरने लगा। क्योंकि नाम ले नहीं रखा था। यम के दूत आए। राजा चौक में चक्कर खाकर गिर गया। यम के दूतों ने उसकी गर्दन को दबाया। राजा की टट्टी और पेशाब निकल गया। करूणायम (कबीर) परमेश्वर ने रानी को कहा कि देख तेरे राजा की क्या हालत हो रही है? वहाँ से कबीर परमेश्वर दिखा रहे हैं। तब रानी ने कहा कि देख लो दाता यदि उसका भक्ति में सहयोग का कोई फल बनता हो तो दया कर लो। रानी को फिर भी थोड़ी-सी ममता बनी थी। परमेश्वर कबीर (करूणामय) ने सोचा की यह फिर काल जाल में फंसेगी। यह

सोचकर मानसरोवर से वहाँ गए जहाँ राजा चन्द्रविजय अपने महल में अचेत पड़ा था। यमदूत उसके प्राण निकाल रहे थे। कबीर परमेश्वर जी के आते ही यमदूत ऐसे आकाश में उड़ गए जैसे मुर्दे से गिद्ध उड़ जाते हैं। चन्द्रविजय होश में आ गया। सामने करूणामय रूप में परमेश्वर कबीर जी खड़े थे। केवल चन्द्रविजय को दिखाई दे रहे थे, किसी अन्य को दिखाई नहीं दे रहे थे। चन्द्रविजय चरणों में गिर कर याचना करने लगा मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचाओ। क्योंकि उसने देखा कि तेरी जान जाने वाली है। (जब इस जीव की आँख खुलती है कि अब तो बात बिगड़ गई) राजा चन्द्र विजय गिड़गिड़ाता हुआ बोला मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचा लो मालिक। कबीर परमेश्वर ने कहा राजा आज भी वही बात है, उस दिन भी वही बात थी, नाम लेना होगा। राजा ने कहा मैं नाम ले लूँगा जी, अभी ले लूँगा नाम। कबीर परमेश्वर ने नाम उपदेश दिया तथा कहा कि अब मैं तुझे दो वर्ष की आयु दूँगा, यदि इसमें एक स्वांस भी खाली चला गया तो फिर कर्मदण्ड रह जाएगा।

कबीर, जीवन तो थोड़ा भला, जै सत सुमरण हो। लाख वर्ष का जीवना, लेखे धरे ना को।।

शुभ कर्म में सहयोग दिया हुआ पिछला कर्म और साथ में श्रद्धा से दो वर्ष के स्मरण से तथा तीनों नाम प्रदान करके कबीर साहेब चन्द्रविजय को भी पार कर ले गये। बोलो सतगुरु देव की जय ''जय बन्दी छोड़।''

प्रश्नः- धर्मदास जी ने कहा हे कबीर परमेश्वर! हमारे को तो ब्राह्मणों (विद्वानों) ने यही बताया था कि पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को श्री कृष्ण भक्त सुदर्शन सुपच ने सफल की थी तथा भगवान कृष्ण जी ने गीता में कहा है कि अर्जुन! युद्ध कर तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले से मार दिए गए हैं। तू निमित्त मात्र बन जा। यदि तू युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग जाएगा, यदि युद्ध में जीत गया तो पृथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा।

उत्तरः- कबीर परमेश्वर ने कहा धर्मदास! श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं कहा। श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा था (कृप्या पाठक जन पढ़े ''गीता का ज्ञान किसने कहा?'' इसी पुस्तक (अध्यात्मिक ज्ञान गंगा) के पृष्ठ 3 से 10)

सुदर्शन सुपच श्री कृष्ण भक्त नहीं था वह पूर्ण ब्रह्म का उपासक था। सुन पाण्डवों के यज्ञ के सम्पूर्ण होने की कथा। कृप्या निम्न पढ़ें पाठक जन परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताया पाण्डव यज्ञ का प्रकरण जो धर्मदास जी ने स्वसम वेद के पद्य भाग में लिखा है (लेखक के शब्दों में निम्नः-)

।। पाण्डवों की यज्ञ में सुपच सुदर्शन द्वारा शंख बजाना।।

जैसा कि सर्व विदित है कि महाभारत के युद्ध में अर्जुन ने युद्ध करने से मना कर दिया था तथा शस्त्र त्याग कर युद्ध के मैदान में दोनों सेनाओं के बीच में खड़े रथ के पिछले हिस्से में आंखों से आँसू बहाता हुआ बैठ गया था। तब भगवान कृष्ण के अन्दर प्रवेश काल शक्ति (ब्रह्म) अर्जुन को युद्ध करने की राय देने लगा था। तब अर्जुन ने कहा था कि भगवान यह घोर पाप मैं नहीं करूंगा। इससे अच्छा तो भिक्षा का अन्न भी खा कर गुजारा कर लेंगे। तब भगवान काल श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोला था कि अर्जुन युद्ध कर। तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। देखें गीता जी के अध्याय 11

के श्लोक 33, अध्याय 2 के श्लोक 37, 38 में।

महाभारत में लेख (प्रकरण) आता है कि कृष्ण जी के कहने से अर्जुन ने युद्ध करना स्वीकार कर लिया। घमासान युद्ध हुआ। करोड़ों व्यक्ति व सर्व कौरव युद्ध में मारे गए और पाण्डव विजयी हुए। तब पाण्डव प्रमुख युधिष्ठिर को राज्य सिंहासन पर बैठाने के लिए स्वयं भगवान कृष्ण ने कहा तो युधिष्ठिर ने यह कहते हुए गद्दी पर बैठने से मना कर दिया कि मैं ऐसे पाप युक्त राज्य को नहीं करूंगा। जिसमें करोड़ों व्यक्ति मारे गए थे। उनकी पत्नियाँ विधवा हो गई, करोड़ों बच्चे अनाथ हो गए, अभी तक उनके आँसू भी नहीं सूखे हैं। किसी प्रकार भी बात बनती न देख कर श्री कृष्ण जी ने कहा कि आप भीष्म जी से राय लो। क्योंकि जब व्यक्ति स्वयं फैसला लेने में असफल रहे तब किसी स्वजन से विचार कर लेना चाहिए। युधिष्ठिर ने यह बात स्वीकार कर ली। तब श्री कृष्ण जी युधिष्ठिर को साथ ले कर वहाँ पहुँचे जहाँ पर श्री भीष्म शर (तीरों की) सैय्या (चारपाई) पर अंतिम स्वांस गिन रहे थे, वहाँ जा कर श्री कृष्ण जी ने भीष्म से कहा कि युधिष्ठिर राज्य गद्दी पर बैठने से मना कर रहे हैं। कृपा आप इन्हें राजनीति की शिक्षा दें।

भीष्म जी ने बहुत समझाया परंतु युधिष्ठिर अपने उद्देश्य ये विचलित नहीं हुआ। यही कहता रहा कि इस पाप से युक्त रूधिर से सने राज्य को भोग कर मैं नरक प्राप्ति नहीं चाहूँगा। श्री कृष्ण जी ने कहा कि आप एक धर्म यज्ञ करो। जिससे आपको युद्ध में हुई हत्याओं का पाप नहीं लगेगा। इस बात पर युधिष्ठिर सहमत हो गया और एक धर्म यज्ञ की। फिर राज गद्दी पर बैठ गया। हस्तिनापुर का राजा बन गया।

प्रमाण सुखसागर के पहले स्कन्ध के आठवें तथा नौवें अध्याय से सहाभार पृष्ठ नं. 48 से 53)

कुछ वर्षो प्रयान्त युधिष्ठिर को भयानक स्वपन आने शुरु हो गए। जैसे बहुत सी औरतें रोती-बिलखती हुई अपनी चूड़ियाँ फोड़ रहीं हैं तथा उनके मासूम बच्चे अपनी मां के पास खड़े कुछ बैठे पिता-पिता कह कर रो रहे हैं मानों कह रहे हो हे राजन्! हमें भी मरवा दे, भेज दे हमारे पिता के पास। कई बार बिना शीश के धड़ दिखाई देते है। किसी की गर्दन कहीं पड़ी है, धड़ कहीं पड़ा है, हा-हा कार मची हुई है। युधिष्ठिर की नींद उचट जाती, घबरा कर बिस्तर पर बैठ कर हाँफने लग जाता। सारी-2 रात बैठ कर या महल में घूम कर व्यतीत करता है। एक दिन द्रौपदी ने बड़े पति की यह दशा देखी परेशानी का कारण पूछा तो युधिष्ठिर कुछ नहीं- कुछ नहीं कह कर टाल गए। जब द्रौपदी ने कई रात्रियों में युधिष्ठिर की यह दुर्दशा देखी तो एक दिन चारों (अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव) को बताया कि आपका बड़ा भाई बहुत परेशान है। कारण पूछो। तब चारों भाईयों ने बड़े भईया से प्रार्थना करके पूछा कि कृप्या परेशानी का कारण बताओ। ज्यादा आग्रह करने पर अपनी सर्व कहानी सुनाई। पाँचों भाई इस परेशानी का कारण जानने के लिए भगवान श्रीकृष्णजी के पास गए तथा बताया कि बड़े भईया युधिष्ठिर जी को भयानक स्वपन आ रहे हैं। जिनके कारण उनकी रात्री की नींद व दिन का चैन व भूख समाप्त हो गई। कृप्या कारण व समाधान बताएँ। सारी बात सुनकर श्री कृष्ण जी बोले युद्ध में किए हुए पाप परेशान कर रहे हैं। इन पापों का निवारण यज्ञ से होता है।

गीता जी के अध्याय 3 के श्लोक 13 का हिन्दी अनुवाद : यज्ञ में प्रतिष्ठित ईष्ट (पूर्ण

परमात्मा) को भोग लगाने के बाद बने प्रसाद को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाते हैं जो पापी लोग अपना शरीर पोषण करने के लिये ही अन्न पकाते हैं वे तो पाप को ही खाते हैं अर्थात् यज्ञ करके सर्व पापों से मुक्त हो जाते हैं। और कोई चारा न देख कर पाण्डवों ने श्री कृष्ण जी की सलाह स्वीकार कर ली। यज्ञ की तैयारी की गई। सर्व पृथ्वी के मानव, ऋषि, सिद्ध, साधु व स्वर्ग लोक के देव भी आमन्त्रित करने को, श्री कृष्ण जी ने कहा कि जितने अधिक व्यक्ति भोजन पाएंगें उतना ही अधिक पुण्य होगा। परंतु संतों व भक्तों से विशेष लाभ होता है उनमें भी कोई परम शक्ति युक्त संत होगा वह पूर्ण लाभ दे सकता है तथा यज्ञ पूर्ण होने का साक्षी एक पांच मुख वाला (पंचजन्य) शंख एक सुसज्जित ऊँचे आसन पर रख दिया जाएगा तथा जब इस यज्ञ में कोई परम शक्ति युक्त संत भोजन खाएगा तो यह शंख स्वयं आवाज करेगा। इतनी गूँज होगी की पूरी पृथ्वी पर तथा स्वर्ग लोक तक आवाज सुनाई देगी।

यज्ञ की तैयारी हुई। निश्चित दिन को सर्व आदरणीय आमन्त्रित भक्तगण, अठासी हजार ऋषि, तेतीस करोड़ देवता, नौ नाथ, चौरासी सिद्ध, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि पहुँच गए। यज्ञ कार्य शुरु हुआ। बाद में सब ने यज्ञ का बचा प्रसाद (भण्डारा) सर्व उपस्थित महानुभावों व भक्तों तथा जनसाधारण को बरताया (खिलाया)। स्वयं भगवान कृष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। शंख नहीं बजा तो यज्ञ सम्पूर्ण नहीं हुई। उस समय युधिष्ठिर ने श्री कृष्ण जी से पूछा - हे मधुसुदन! शंख नहीं बजा। सर्व महापुरुषों व आगन्तुकों ने भोजन पा लिया। कारण क्या है? श्री कृष्ण जी ने कहा कि इनमें कोई पूर्ण सन्त (सतनाम व सारनाम उपासक) नहीं है। तब युधिष्ठिर को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने महा मण्डलेश्वर जिसमें वशिष्ट मुनि, मार्कण्डे, लोमष ऋषि, नौ नाथ (गोरखनाथ जैसे), चौरासी सिद्ध आदि-2 व स्वयं भगवान श्री कृष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। इस पर कृष्ण जी ने कहा ये सर्व मान बड़ाई के भूखे हैं। परमात्मा चाहने वाला कोई नहीं तथा अपनी मनमुखी साधना करके सिद्धि दिखा कर दुनियाँ को आकर्षित करते हैं। भोले लोग इनकी वाह-2 करते हैं तथा इनके इर्द-गिर्द मण्डराते हैं। ये स्वयं भी पशु जूनी में जाएंगे तथा अपने अनुयाईयों को नरक ले जाएंगे।

गरीब, साहिब के दरबार में, गाहक कोटि अनन्त। चार चीज चाहै हैं, रिद्धि सिद्धि मान महंत।।
गरीब, ब्रह्म रन्द्र के घाट को, खोलत है कोई एक। द्वारे से फिर जाते हैं, ऐसे बहुत अनेक।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं हाथ। पृथ्वी डोबन उतरे, कह–कह मीठी बात।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं पास। ओरों को प्रमोदही, अपन चले निरास।।

।।प्रमाण के लिए गीता जी के कुछ श्लोक।।

अध्याय 9 का श्लोक 20

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा-
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्। २०।

त्रैविद्याः, माम्, सोमपाः, पूतपापाः, पूतपापाः, यज्ञैः, इष्टवा, स्वर्गतिम्, प्रार्थयन्ते,

ते, पुण्यम्, आसाद्य, सुरेन्द्रलोकम्, अश्नन्ति, दिव्यान्, दिवि, देवभोगान् ।।20।।

अनुवाद : (त्रैविद्याः) तीनों वेदोंमें विधान (सोमपाः) सोमरसको पीनेवाले (पूतपापाः) पापरहित पुरुष (माम्) मुझको (यज्ञैः) यज्ञोंके द्वारा (इष्टवा) पूज्य देव के रूप में पूज कर (स्वर्गतिम्) स्वर्गकी प्राप्ति (प्रार्थयन्ते) चाहते हैं (ते) वे पुरुष (पुण्यम्) अपने पुण्योंके फलरूप (सुरेन्द्रलोकम्) स्वर्गलोकको (आसाद्य) प्राप्त होकर (दिवि) स्वर्गमें (दिव्यान्) दिव्य (देवभोगान्) देवताओंके भोगोंको (अश्नन्ति) भोगते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : तीनों वेदोंमें विधान सोमरसको पीनेवाले पापरहित पुरुष मुझको यज्ञोंके द्वारा पूज्य देव के रूप में पूज कर स्वर्गकी प्राप्ति चाहते हैं वे पुरुष अपने पुण्योंके फलरूप स्वर्गलोकको प्राप्त होकर स्वर्गमें दिव्य देवताओंके भोगोंको भोगते हैं।

अध्याय 9 का श्लोक 21

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं-
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना-
गतागतं कामकामा लभन्ते। २१।

ते, तम्, भुक्त्वा, स्वर्गलोकम्, विशालम्, क्षीणे, पुण्ये, मर्त्यलोकम्, विशन्ति,
एवम्, त्रयीधर्मम्, अनुप्रपन्नाः, गतागतम्, कामकामाः, लभन्ते ।।21।।

अनुवाद : (ते) वे (तम्) उस (विशालम्) विशाल (स्वर्गलोकम्) स्वर्गलोकको (भुक्त्वा) भोगकर (पुण्ये) पुण्य (क्षीणे) क्षीण होनेपर (मर्त्यलोकम्) मृत्युलोकको (विशन्ति) प्राप्त होते हैं। (एवम्) इस प्रकार (त्रयीधर्मम्) तीनों वेदोंमें कहे हुए पूजा कर्मों का (अनुप्रपन्नाः) आश्रय लेनेवाले और (कामकामाः) भोगोंकी कामनावस (गतागतम्) बार-बार आवागमनको (लभन्ते) प्राप्त होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : वे उस विशाल स्वर्गलोकको भोगकर पुण्य क्षीण होनेपर मृत्युलोकको प्राप्त होते हैं। इस प्रकार तीनों वेदोंमें कहे हुए पूजा कर्मों का आश्रय लेनेवाले और भोगोंकी कामनावस बार-बार आवागमन को प्राप्त होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 17

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्। १७।

आत्सम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः,
यजन्ते, नामयज्ञैः, ते, दम्भेन, अविधिपूर्वकम् ।।17।।

अनुवाद : (ते) वे (आत्मसम्भाविताः) अपनेआपको ही श्रेष्ठ माननेवाले (स्तब्धाः) घमण्डी पुरुष (धनमानमदान्विताः) धन और मानके मदसे युक्त होकर (नामयज्ञैः) केवल नाममात्रके यज्ञोंद्वारा (दम्भेन) पाखण्डसे (अविधिपूर्वकम्) शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : वे अपनेआपको ही श्रेष्ठ माननेवाले घमण्डी पुरुष धन और मानके मदसे युक्त होकर केवल नाममात्रके यज्ञोंद्वारा पाखण्डसे शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 18

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः। १८।

अहंकारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, च, संश्रिताः,

माम्, आत्मपरदेहेषु, प्रद्विषन्तः, अभ्यसूयकाः।।18।।

अनुवाद : (अहंकारम्) अहंकार (बलम्) बल (दर्पम्) घमण्ड (कामम्) कामना और (क्रोधम्) क्रोधादिके (संश्रिताः) परायण (च) और (अभ्यसूयकाः) दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष (आत्मपरदेहेषु) प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा (माम्) मुझसे (प्रद्विषन्तः) द्वेष करनेवाले होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : अहंकार बल घमण्ड कामना और क्रोधादिके परायण और दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा मुझसे द्वेष करनेवाले होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 19

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान्।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु।१९।

तान् अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,
क्षिपामि, अजस्त्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु।।19।।

अनुवाद : (तान्) उन (द्विषतः) द्वेष करनेवाले (अशुभान्) पापाचारी और (क्रूरान्) क्रूरकर्मी (नराधमान्) नराधमोंको (अहम्) मैं (संसारेषु) संसारमें (अजस्त्रम्) बार–बार (आसुरीषु) आसुरी (योनिषु) योनियोंमें (एव) ही (क्षिपामि) डालता हूँ।

केवल हिन्दी अनुवाद : उन द्वेष करनेवाले पापाचारी और क्रूरकर्मी नराधमोंको मैं संसारमें बार-बार आसुरी योनियोंमें ही डालता हूँ।

अध्याय 16 का श्लोक 20

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्।२०।

आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,
माम् अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम्।।20।।

अनुवाद : (कौन्तेय) हे अर्जुन! (मूढाः) वे मूर्ख (माम्) मुझको (अप्राप्य) न प्राप्त होकर (एव) ही (जन्मनि) जन्म (जन्मनि) जन्ममें (आसुरीम्) आसुरी (योनिम्) योनिको (आपन्नाः) प्राप्त होते हैं फिर (ततः) उससे भी (अधमाम्) अति नीच (गतिम्) गतिको (यान्ति) प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकोंमें पड़ते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! वे मूर्ख मुझको न प्राप्त होकर ही जन्म जन्ममें आसुरी योनिको प्राप्त होते हैं फिर उससे भी अति नीच गतिको प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकोंमें पड़ते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 23

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।२३।

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्रोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्।।23।।

अनुवाद : (यः) जो पुरुष (शास्त्रविधिम्) शास्त्रविधिको (उत्सृज्य) त्यागकर (कामकारतः) अपनी इच्छासे मनमाना (वर्तते) आचरण करता है (सः) वह (न) न (सिद्धिम्) सिद्धिको (अवाप्नोति) प्राप्त होता है (न)न (पराम्)परम (गतिम्)गतिको और(न) न (सुखम्) सुखको ही।

केवल हिन्दी अनुवाद : जो पुरुष शास्त्रविधिको त्यागकर अपनी इच्छासे मनमाना आचरण करता है वह न सिद्धिको प्राप्त होता है न परम गतिको और न सुखको ही।

''शेष कथा''

श्री कृष्ण भगवान ने अपनी शक्ति से युधिष्ठिर को उन सर्व महा मण्डलेश्वरों के आगे होने वाले जन्म दिखाए जिसमें किसी ने कैंचवे का, किसी ने भेड़-बकरी, भैंस व शेर आदि के रूप धारण किए थे।

यह सब देख कर युधिष्ठिर ने कहा - हे भगवन! फिर तो पृथ्वी संत रहित हो गई है।। भगवान कृष्ण जी ने कहा जब पृथ्वी संत रहित हो जाएगी तो यहाँ आग लग जाएगी। सर्व जीव-जन्तु आपस में लड़ मरेंगे। यह तो पूरे संत की शक्ति से सन्तुलन बना रहता है। समय-समय पर मैं (भगवान विष्णु) पृथ्वी पर आ कर राक्षस वृत्ति के लोगों को समाप्त करता हूँ जिससे संत सुखी हो जाते है। जिस प्रकार जमींदार अपनी फसल से हानि पहुँचने वाले अन्य पौधों को जो झाड़-खरपतवार आदि को काट-काट कर बाहर डाल देता है तब वह फसल स्वतन्त्रता पूर्वक फलती-फूलती है। यानी ये संत उस फसल में सिचांई का सुख प्रदान करते हैं। पूर्ण संत सबको समान सुख देते हैं। जिस प्रकार वर्षा व सिंचाई का जल दोनों प्रकार के पौधों (फसल व खरपतवार) का पोषण करते हैं। उनमें सर्व जीव के प्रति दया भाव होता है। अब मैं आपको पूर्ण संत के दर्शन करवाता हूँ। एक महात्मा काशी में रहते हैं। उसको बुलवाना है। तब युधिष्ठिर ने कहा कि उस ओर संतों को आमन्त्रित करने का कार्य भीमसैन को सौंपा था। पूछते हैं कि वह उन महात्मा तक पहुँचा या नहीं। भीमसैन को बुलाकर पूछा तो उसने बताया कि मैं उस से मिला था। उनका नाम स्वपच सुदर्शन है। बाल्मिकी जाति में गृहस्थी संत हैं। एक झौंपड़ी में रहता है। उन्होंने यज्ञ में आने से मना कर दिया। इस पर श्री कृष्ण जी ने कहा कि संत मना नहीं किया करते। सर्व वार्ता जो उनके साथ हुई है वह बताओ।

तब भीम सैन ने आगे बताया कि मैंने उनको आमन्त्रित करते हुए कहा कि हे संत परवर ! हमारी यज्ञ में आने का कष्ट करना। उनको पूरा पता बताया। उसी समय वे (सुदर्शन संत जी) कहने लगे भीम सैन आप के पाप के अन्न को खाने से संतों को दोष लगेगा। करोड़ों सैनिकों की हत्या करके आपने तो घोर पाप कर रखा है। आज आप राज्य का आनन्द ले रहे हो। युद्ध में वीरगति को प्राप्त सैनिकों की विधवा पत्नी व अनाथ बच्चे रह-रह कर अपने पति व पिता को याद करके फूट-फूट कर घंटों रोते हैं। बच्चे अपनी माँ से लिपट कर पूछ रहे हैं - माँ, पापा छुट्टी नहीं आए? कब आएंगे? हमारे लिए नए वस्त्र लाएंगे। दूसरी लड़की कहती है कि मेरे लिए नई साड़ी लाएंगे। बड़ी होने पर जब मेरी शादी होगी तब मैं उसे बाँधकर ससुराल जाऊँगी। वह लड़का (जो दस वर्ष की आयु का है) कहता है कि मैं अब की बार पापा (पिता जी) से कहूँगा कि आप नौकरी पर मत जाना। मेरी माँ तथा भाई-बहन आपके बिना बहुत दुःख पाते हैं। माँ तो सारा दिन-रात आपकी याद करके जब देखो एकांत स्थान पर रो रही होती है। या तो हम सबको अपने पास बुला लो या आप हमारे पास रहो। छोड़ दो नौकरी को। मैं जवान हो गया हूँ। आपकी जगह मैं फौज में जा कर देश सेवा करूंगा। आप अपने परिवार में रहो। आने दो पिता जी को, बिल्कुल नहीं जाने दूँगा। (उन बच्चों को दुःखी होने से बचाने के लिए उनकी माँ ने उन्हें यह नहीं बताया कि आपके पिता जी युद्ध में मर चुके हैं क्योंकि उस समय वे बच्चे अपने मामा के घर गए हुए थे। केवल छोटा बच्चा जो डेढ़ वर्ष की आयु का था वही घर पर था। अन्य बच्चों को जान बूझ कर नहीं बुलाया था।)

इस प्रकार उन मासूम बच्चों की आपसी वार्ता से दुःखी होकर उनकी माता का हृदय पति की याद के दुःख से भर आया। उसे हल्का करने के लिए (रोने के लिए) दूसरे कमरे में जा कर फूट-फूट कर रोने लगी। तब सारे बच्चे माँ के ऊपर गिरकर रोने लगे। सम्बन्धियों ने आकर शांत करवाया। कहा कि बच्चों को स्पष्ट बताओ कि आपके पिता जी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गए। जब बच्चों को पता चला कि हमारे पापा (पिता जी) अब कभी नहीं आएंगे तब उस स्वार्थी राजा को कोसने लगे जिसने अपने भाई बटवारे के लिए दुनियाँ के लालों का खून पी लिया। यह कोई देश रक्षा की लड़ाई भी नहीं थी जिसमें हम संतोष कर लेते कि देश के हित में प्राण त्याग दिए हैं। इस खूनी राजा ने अपने ऐशो-आराम के लिए खून की नदी बहा दी। अब उस पर मौज कर रहा है। आगे संत सुदर्शन (स्वपच) बता रहे हैं कि भीम ऐसे-2 करोड़ों प्राणी युद्ध की पीड़ा से पीड़ित हैं। उनकी हाय आपको चैन नहीं लेने देगी चाहे करोड़ यज्ञ करो। ऐसे दुष्ट अन्न को कौन खाए ? यदि मुझे बुलाना चाहते हो तो मुझे पहले किए हुए सौ (100) यज्ञों का फल देने का संकल्प करो अर्थात् एक सौ यज्ञों का फल मुझे दो तब मैं आपके भोजन पाऊँ।

सुदर्शन जी के मुख से इस बात को सुन कर भीम ने बताया कि मैं बोला आप तो कमाल के व्यक्ति हो, सौ यज्ञों का फल मांग रहे हो। यह हमारी दूसरी यज्ञ है। आपको सौ का फल कैसे दें? इससे अच्छा तो आप मत आना। आपके बिना कौन सी यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होगी। जब स्वयं भगवान कृष्ण जी हमारे साथ हैं। तो तेरे न आने से क्या यज्ञ पूर्ण नहीं होगा। सर्व वार्ता सुन कर श्री कृष्ण जी ने कहा भीम संतों के साथ ऐसा आपत्तिजनक व्यवहार नहीं करना चाहिए। सात समुद्रों का अंत पाया जा सकता है परंतु सतगुरु (कबीर साहेब) के संत का पार नहीं पा सकते। उस महात्मा सुदर्शन बाल्मीकी के एक बाल के समान तीन लोक भी नहीं हैं। मेरे साथ चलो, उस परमपिता परमात्मा के प्यारे हंस को लाने के लिए। तब पाँचों पाण्डव व श्री कृष्ण भगवान स्वपच सुदर्शन की झोंपड़ी की ओर रथ में बैठकर चले। एक योजन अर्थात् 12 किलोमीटर पहले रथ से उतर कर नंगे पैरों चले तथा रथ को खाली रथवान पीछे-2 चला।

उस समय स्वयं कबीर साहेब सुदर्शन स्वपच का रूप बना कर झोपड़ी में बैठ गए व सुदर्शन को अपनी गुप्त प्रेरणा से मन में संकल्प उठा कर कहीं दूर के संत या भक्त से मिलने भेज दिया जिसमें आने व जाने में कई रोज लगने थे। तब सुदर्शन के रूप में सतगुरु की चमक व शक्ति देख कर सर्व पाण्डव बहुत प्रभावित हुए। स्वयं श्रीकृष्णजी ने लम्बी दण्डवत् प्रणाम की। तब देखा देखी सर्व पाण्डवों ने भी ऐसा ही किया। कृष्ण जी की तरफ नजर करके सुपच सुदर्शन ने आदर पूर्वक कहा कि - हे त्रिभुवननाथ! आज इस दीन के द्वार पर कैसे? मेरा अहोभाग्य है कि आज दीनानाथ विश्वम्भरनाथ मुझ तुच्छ को दर्शन देने स्वयं चल कर आए हैं। सबको आदर पूर्वक बैठना दिया तथा आने का कारण पूछा। उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे जानी-जान! आप सर्व गति (स्थिति) से परिचित हैं। पाण्डवों ने यज्ञ की है। वह आपके बिना सम्पूर्ण नहीं हो रही है। कृपा इन्हें कृतार्थ करें। उसी समय वहां उपस्थित भीम की ओर संकेत करते हुए सुदर्शन रूप धारी परमेश्वर जी ने कहा कि यह वीर मेरे पास आया था तथा अपनी मजबूरी से इसे अवगत करवाया था। उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा कि - हे पूर्णब्रह्म! आपने स्वयं अपनी वाणी में कहा है कि -

"संत मिलन को चालिए, तज माया अभिमान। जो–जो पग आगे धरै, सो–सो यज्ञ समान।।"

आज पांचों पाण्डव राजा हैं तथा मैं स्वयं द्वारिकाधीश आपके दरबार में राजा होते हुए भी नंगे पैरों उपस्थित हूँ। अभिमान का नामों निशान भी नहीं है तथा स्वयं भीम ने भी खड़ा हो कर उस दिन कहे हुए अपशब्दों की चरणों में पड़ कर क्षमा याचना की। श्री कृष्ण जी ने कहा हे नाथ! आज यहाँ आपके दर्शनार्थ आए आपके छः सेवकों के कदमों के यज्ञ समान फल को स्वीकार करते हुए सौ आप रखो तथा शेष हम भिक्षुकों को दान दिजिए ताकि हमारा भी कल्याण हो। इतना आधीन भाव सर्व उपस्थित जनों में देख कर जगतगुरु साहेब करूणामय सुदर्शन रूप में अति प्रसन्न हुए।

कबीर, साधू भूखा भाव का, धन का भूखा नाहिं।जो कोई धन का भूखा, वो तो साधू नाहिं।।

उठ कर उनके साथ चल पड़े। जब सुदर्शन जी यज्ञशाला में पहुँचे तो चारों ओर एक से एक ऊँचे सुसज्जित आसनों पर विराजमान महा मण्डलेश्वर सुदर्शन जी के रूप व वेश (दोहरी धोती घुटनों से थोड़ी नीचे तक, छोटी-2 दाड़ी, सिर के बिखरे केश न बड़े न छोटे, टूटी-फूटी जूती। मैले से कपड़े, तेजोमय शरीर) को देखकर अपने मन में सोच रहे हैं कि ऐसे अपवित्र व्यक्ति से शंख सात जन्म भी नहीं बज सकता है। यह तो हमारे सामने ऐसे है जैसे सूर्य के सामने दीपक। श्रीकृष्ण जी ने स्वयं उस महात्मा का आसन अपने हाथों लगाया (बिछाया) क्योंकि श्री कृष्ण जी श्रेष्ठ आत्मा हैं, (परमात्मा है) उन्होंने सुदामा व भिलनी को भी हृदय से चाहा। यहाँ तो स्वयं परमेश्वर पूर्णब्रह्म सतपुरुष, अकाल मूर्ति आए हैं। फिर द्रौपदी से कहा कि हे बहन! सुदर्शन महात्मा जी आए हैं, भोजन तैयार करो। बहुत पहुँचे हुए संत हैं। द्रौपदी देख रही है कि संत लक्षण तो एक भी नहीं दिखाई देते हैं। यह तो एक द्ररिद्र गृहस्थी व्यक्ति है। न तो वस्त्र भगवां, न गले में माला, न तिलक, न सिर पर बड़ी जटा, न मुण्ड ही मुण्डवा रखा और न ही कोई चिमटा, झोली, करमण्डल लिए हुए था। श्री कृष्ण जी के कहते ही स्वादिष्ट भोजन कई प्रकार का बनाकर एक सुन्दर थाल (चांदी का) में परोस कर सुदर्शन जी के सामने रख कर द्रोपदी ने मन में विचार किया कि आज तो यह भक्त भोजन को खाएगा तो ऊँगली चाटता रह जाएगा। जिन्दगी में ऐसा भोजन कभी नहीं खाया होगा।

सुदर्शन जी ने नाना प्रकार के भोजन को थाली में इक्ट्ठा किया तथा खिचड़ी सी बनाई। उस समय द्रौपदी ने देखा कि इसने तो सारा भोजन (खीर, खांड, हलुवा, सब्जी, दही, दही-बड़े आदि) घोल कर एक कर लिया। तब मन में दुर्भावना पूर्वक विचार किया कि इस मूर्ख हब्शी ने तो खाना खाने का भी ज्ञान नहीं। यह काहे का संत? कैसा शंख बजाएगा। (क्योंकि खाना बनाने वाली स्त्री की यह भावना होती है कि मैं ऐसा स्वादिष्ट भोजन बनाऊँ कि खाने वाला मेरे भोजन की प्रशंसा कई जगह करे)। प्रत्येक बहन की यही आशा होती है।

{वह बेचारी एक घंटे तक धुएँ से आँखें खराब करे और मेरे जैसा कह दे कि नमक तो है ही नहीं, तब उसका मन बहुत दुःखी होता है। इसलिए संत जैसा मिल जाए उसे खा कर सराहना ही करते हैं। यदि कोई न खा सके तो नमक कह कर 'संत' नहीं मांगता। संतों ने नमक का नाम राम–रस रखा हुआ है। कोई ज्यादा नमक खाने का अभ्यस्त हो तो कहेगा कि भईया– रामरस लाना। घर वालों को पता ही न चले कि क्या मांग रहा है? क्योंकि सतसंग में सेवा में अन्य सेवक ही होते हैं। न ही भोजन बनाने वालों को दुःख हो। एक समय एक नया भक्त किसी सतसंग में पहली बार गया। उसमें किसी ने कहा कि भक्त जी रामरस लाना। दूसरे ने भी कहा कि रामरस लाना तथा थोड़ा रामरस अपनी हथेली पर रखवा लिया। उस नए भक्त ने खाना खा लिया था। परंतु पंक्ति में बैठा अन्य

भक्तों के भोजन पाने का इंतजार कर रहा था कि इकट्ठे ही उठेंगे। यह भी एक औपचारिकता सतसंग में होती है। उसने सोचा रामरस कोई खास मीठा खाद्य पदार्थ होगा। यह सोच कर कहा मुझे भी रामरस देना। तब सेवक ने थोड़ा सा रामरस (नमक) उसके हाथ पर रख दिया। तब वह नया भक्त बोला – ये के कान कै लाना है, चौखा सा (ज्यादा) रखदे। तब उस सेवक ने दो तीन चमच्च रख दिया। उस नए भक्त ने उस बारीक नमक को कोई खास मीठा खाद्य प्रसाद समझ कर फांका मारा। तब चुपचाप उठा तथा बाहर जा कर कुल्ला किया। फिर किसी भक्त से पूछा रामरस किसे कहते हैं? तब उस भक्त ने बताया कि नमक को रामरस कहते हैं। तब वह नया भक्त कहने लगा कि मैं भी सोच रहा था कि कहें तो रामरस परंतु है बहुत खारा। फिर विचार आया कि हो सकता है नए भक्तों पर परमात्मा प्रसन्न नहीं हुए हों। इसलिए खारा लगता हो। मैं एक बार फिर कोशिश करता, अच्छा हुआ जो मैंने आपसे स्पष्ट कर लिया। फिर उसे बताया गया कि नमक को रामरस किस लिए कहते हैं ?}

स्वपच सुदर्शन जी ने थाली वाले मिले हुए उस सारे भोजन को पाँच ग्रास बना कर खा लिया। पाँच बार शंख ने आवाज की। उसके पश्चात् शंख ने आवाज नहीं की।

व्यंजन छतीसों परोसिया जहाँ द्रौपदी रानी।
बिन आदर सतकार के, कही शंख न बानी।।
पंच गिरासी बालमीक, पंचै बर बोले।
आगे शंख पंचायन, कपाट न खोले।।
बोले कृष्ण महाबली, त्रिभुवन के साजा।
बाल्मिक प्रसाद से, कण कण क्यों न बाजा।।
द्रोपदी सेती कृष्ण देव, जब ऐसे भाखा।
बाल्मिक के चरणों की, तेरे न अभिलाषा।।
प्रेम पंचायन भूख है, अन्न जग का खाजा।
ऊँच नीच द्रोपदी कहा, शंख कण कण यूँ नहीं बाजा।।
बाल्मिक के चरणों की, लई द्रोपदी धारा।
शंख पंचायन बाजीया, कण–कण झनकारा।।

युधिष्ठर जी श्री कृष्ण जी के पास आए तथा कहा हे भगवन्! आप की कृपा से शंख ने आवाज की है हमारा कार्य पूर्ण हुआ। श्री कृष्ण जी ने सोचा कि इन महात्मा सुदर्शन के भोजन खा लेने से भी शंख अखण्ड क्यों नहीं बजा? फिर अपनी दिव्य दृष्टि से देखा ? तो पाया की द्रोपदी के मन में दोष है जिस कारण से शंख ने अखण्ड आवाज नहीं की केवल पांच बार आवाज करके मौन हो गया है। श्री कृष्ण जी ने कहा युधिष्ठर यह शंख बहुत देर तक बजना चाहिए तब यज्ञ पूर्ण होगी। युधिष्ठर ने कहा भगवन्! अब कौन संत शेष है जिसे लाना होगा। श्री कृष्ण जी ने कहा युधिष्ठर इस सुदर्शन संत से बढ़कर कोई भी सत्यभक्ति युक्त संत नहीं है। इसके एक बाल समान तीनों लोक भी नहीं हैं। अपने घर में ही दोष है उसे शुद्ध करते हैं। श्री कृष्ण जी ने द्रौपदी से कहा - द्रौपदी, भोजन सब प्राणी अपने-2 घर पर रूखा-सूखा खा कर ही सोते हैं। आपने बढ़िया भोजन बना कर अपने मन में अभिमान पैदा कर लिया। बिना आदर सतकार के किया हुआ धार्मिक अनुष्ठान (यज्ञ, हवन, पाठ) सफल नहीं होता। आपने इस साधारण से व्यक्ति को क्या समझ रखा है? यह पूर्णब्रह्म हैं। इसके एक बाल के समान तीनों लोक भी नहीं हैं। आपने अपने मन में इस महापुरुष के बारे में गलत विचार किए हैं उनसे आपका अन्तःकरण मैला (मलीन) हो गया है। इनके भोजन ग्रहण कर लेने से तो यह

शंख की स्वर्ग तक आवाज जाती तथा सारा ब्रह्मण्ड गूंज उठता। यह केवल पांच बार बोला है। इसलिए कि आपका भ्रम दूर हो जाए क्योंकि और किसी ऋषि के भोजन पाने से तो यह टस से मस भी नहीं हुआ। आप अपना मन साफ करके इन्हें पूर्ण परमात्मा समझकर इनके चरणों को धो कर पीओ, ताकी तेरे हृदय का मैल (पाप) साफ हो जाए।

उसी समय द्रौपदी ने अपनी गलती को स्वीकार करते हुए संत से क्षमा याचना की और सुपच सुदर्शन के चरण अपने हाथों धो कर चरणामृत बनाया। रज भरे (धूलि युक्त) जल को पीने लगी। जब आधा पी लिया तब भगवान कृष्ण जी ने कहा द्रौपदी कुछ अमृत मुझे भी दे दो ताकि मेरा भी कल्याण हो। यह कह कर कृष्ण जी ने द्रौपदी से आधा बचा हुआ चरणामृत पीया। उसी समय वही पंचायन शंख इतने जोरदार आवाज से बजा कि स्वर्ग तक ध्वनि सुनि। तब पाण्डवों की वह यज्ञ सफल हुई।

प्रमाण के लिए अमृत वाणी(पारख का अंग)

गरीब, सुपच शंक सब करत हैं, नीच जाति बिश चूक।
पौहमी बिगसी स्वर्ग सब, खिले जो पर्वत रूंख।
गरीब, करि द्रौपदी दिलमंजना, सुपच चरण पी धोय।
बाजे शंख सर्व कला, रहे अवाजं गोय।।
गरीब, द्रौपदी चरणामृत लिये, सुपच शंक नहीं कीन।
बाज्या शंख अखंड धुनि, गण गंधर्व ल्यौलीन।।
गरीब, फिर पंडौं की यज्ञ में, संख पचायन टेर।
द्वादश कोटि पंडित जहां, पड़ी सभन की मेर।।
गरीब, करी कृष्ण भगवान कूं, चरणामृत स्यौं प्रीत।
शंख पंचायन जब बज्या, लिया द्रोपदी सीत।।
गरीब, द्वादश कोटि पंडित जहां, और ब्रह्मा विष्णु महेश।
चरण लिये जगदीश कूं, जिस कूं रटता शेष।।
गरीब, बालमीक के बाल समि, नाहीं तीनौं लोक।
सुर नर मुनि जन कृष्ण सुधि, पंडौं पाई पोष।।
गरीब, बाल्मीक बैंकुठ परि, स्वर्ग लगाई लात।
संख पचायन घुरत हैं, गण गंर्धव ऋषि मात।।
गरीब, स्वर्ग लोक के देवता, किन्हैं न पूरया नाद।
सुपच सिंहासन बैठतैं, बाज्या अगम अगाध।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि थे, सहिदे से सुर बीन।
संहस अठासी देव में, कोई न पद में लीन।
गरीब, बाज्या संख स्वर्ग सुन्या, चौदह भवन उचार।
तेतीसौं तत्त न लह्या, किन्हैं न पाया पार।।

।। अचला का अंग।।

गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सतगुरु पुरुष कबीर।
तीन लोक की मेदनी, सुर नर मुनिजन भीर।।97।।

गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सब देवन का देव।
कृष्णचन्द्र पग धोईया, करी तास की सेव।।98।।
गरीब, पांचौं पंडौं संग हैं, छठ्ठे कृष्ण मुरारि।
चलिये हमरी यज्ञ में, समर्थ सिरजनहार।।99।।
गरीब, सहंस अठासी ऋषि जहां, देवा तेतीस कोटि।
शंख न बाज्या तास तैं, रहे चरण में लोटि।।100।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि हैं, और चौरासी सिद्ध।
शंख न बाज्या तास तैं, पिये मान का मध।।101।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, सतगुरु किया पियान।
पांचौं पंडौं संग चलैं, और छठा भगवान।।102।।
गरीब, सुपच रूप को देखि करि, द्रौपदी मानी शंक।
जानि गये जगदीश गुरु, बाजत नाहीं शंख।।103।।
गरीब, छप्पन भोग संजोग करि, कीनें पांच गिरास।
द्रौपदी के दिल दुई हैं, नाहीं दृढ़ विश्वास।।104।।
गरीब, पांचौं पंडौं यज्ञ करी, कल्पवृक्ष की छांहिं।
द्रौपदी दिल बंक हैं, कण कण बाज्या नांहि।।105।।
गरीब, छप्पन भोग न भोगिया, कीन्हें पंच गिरास।
खड़ी द्रौपदी उनमुनी, हरदम घालत श्वास।।107।।
गरीब, बोलै कृष्ण महाबली, क्यूं बाज्या नहीं शंख।
जानराय जगदीश गुरु, काढत है मन बंक।।108।।
गरीब, द्रौपदी दिल कूं साफ करि, चरण कमल ल्यौ लाय।
बालमीक के बाल सम, त्रिलोकी नहीं पाय।।109।।
गरीब, चरण कमल कूं धोय करि, ले द्रौपदी प्रसाद।
अंतर सीना साफ होय, जरैं सकल अपराध।।110।।
गरीब, बाज्या शंख सुभान गति, कण कण भई अवाज।
स्वर्ग लोक बानी सुनी, त्रिलोकी में गाज।।111।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, आये नजर निहाल।
जम राजा की बंधि में, खल हल पर्‌या कमाल।।113।।

''अन्य वाणी सतग्रन्थ से''

तेतीस कोटि यज्ञ में आए सहंस अठासी सारे, द्वादश कोटि वेद के वक्ता, सुपच का शंख बज्या रे।।

''अर्जुन सहित पाण्डवों को युद्ध में की गई हिंसा के पाप लगे''

परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताया कि उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि पाण्डवों को युद्ध की हत्याओं का पाप लगा। आगे सुन और सुनाता हूँ :-

दुर्वासा ऋषि के शाप वश यादव कुल आपस में लड़कर प्रभास क्षेत्र में यमुना नदी के किनारे नष्ट हो गया। श्री कृष्ण जी भगवान को एक शिकारी ने पैर में विषाक्त तीर मार कर घायल कर दिया था। उस समय श्री कृष्ण जी ने उस शिकारी को बताया कि आप त्रेता युग में सुग्रीव के बड़े

भाई बाली थे तथा मैं रामचन्द्र था। आप को मैंने धोखा करके वृक्ष की ओट लेकर मारा था। आज आपने वह बदला (प्रतिशोध) चुकाया है। पाँचों पाण्डवों को पता चला कि यादव आपस में लड़ मरे हैं वे द्वारिका पहुँचे। वहाँ गए जहाँ पर श्री कृष्ण जी तीर से घायल तड़फ रहे थे। पाँचों पाण्डवों के धार्मिक गुरू श्री कृष्ण जी थे। श्री कृष्ण जी ने पाण्डवों से कहा! आप मेरे अतिप्रिय हो। मेरा अन्त समय आ चुका है। मैं कुछ ही समय का मेहमान हूँ। मैं आपको अन्तिम उपदेश देना चाहता हूँ कृप्या ध्यान पूर्वक सुनों। यह कह कर श्री कृष्ण जी ने कहा (1) आप द्वारिका की स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ ले जाना। यहाँ कोई नर यादव शेष नहीं बचा है (2) आप अति शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय चले जाओ वहाँ अपने शरीर के नष्ट होने तक तपस्या करते रहो। इस प्रकार हिमालय की बर्फ में गल कर नष्ट हो जाओ। युद्धिष्ठर ने पूछा हे भगवन्! हे गुरूदेव श्री कृष्ण! क्या हम हिमालय में गल कर मरने का कारण जान सकते हैं? यदि आप उचित समझें तो बताने की कृपा करें। श्री कृष्ण ने कहा युद्धिष्ठर! आप ने युद्ध में जो प्राणियों की हिंसा करके पाप किया है। उस पाप का प्रायश्चित् करने के लिए ऐसा करना अनिवार्य है। इस प्रकार तपस्या करके प्राण त्यागने से आप के महाभारत युद्ध में किए पाप नष्ट हो जाऐंगे।

कबीर जी बोले हे धर्मदास! श्री कृष्ण जी के श्री मुख से उपरोक्त वचन सुन कर अर्जुन आश्चर्य में पड़ गया। सोचने लगा श्री कृष्ण जी आज फिर कह रहे हैं कि युद्ध में किए पाप नष्ट इस विधि से होगें। अर्जुन अपने आपको नहीं रोक सका। उसने श्री कृष्ण जी से कहा हे भगवन्! क्या मैं आप से अपनी शंका का समाधान करा सकता हूँ। वैसे तो गुरूदेव! यह मेरी गुस्ताखी है, क्षमा करना क्योंकि आप ऐसी स्थिती में हैं कि आप से ऐसी-वैसी बातें करना उचित नहीं जान पड़ता। यदि प्रभु! मेरी शंका का समाधान नहीं हुआ तो यह शंका रूपी कांटा आयु पर्यान्त खटकता रहेगा। मैं चैन से जी नहीं सकुंगा। श्री कुष्ण ने कहा हे अर्जून! तू जो पूछना चाहता है निःशंकोच होकर पूछ। मैं अन्तिम स्वांस गिन रहा हूँ जो कहूंगा सत्य कहूंगा। अर्जुन बोला हे श्री कृष्ण! आपने श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान देते समय कहा था कि अर्जुन! तू युद्ध कर तुझे युद्ध में मारे जाने वालों का पाप नहीं लगेगा तू केवल निमित्त मात्र बन जा ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं (प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 32-33) आपने यह भी कहा कि अर्जुन युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को चला जाएगा, यदि युद्ध जीत गया तो पृथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा। तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। (प्रमाण श्री मदभगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 37) तू युद्ध के लिए खड़ा हो जो जय-पराजय की चिन्ता छोड़कर युद्ध कर इस प्रकार तू पाप को प्राप्त नहीं होगा (गीता अध्याय 2 श्लोक 38)

जिस समय बड़े भईया को बुरे-2 स्वपन आने लगे हम आप के पास कष्ट निवारण के लिए विधि जानने गए तो आपने बताया कि जो युद्ध में बन्धुघात अर्थात् अपने नातियों (राजाओं, सैनिकों, चाचा, भतीजा आदि) की हत्या का पाप दुःखी कर रहा है। मैं (अर्जुन) उस समय भी आश्चर्य में पड़ गया था कि भगवन् गीता ज्ञान में कह रहे थे कि तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा युद्ध करो। आज कह रहे है कि युद्ध में की गई हिंसा का पाप दुःखी कर रहा है। आपने पाप नाश होने का समाधान बताया ''अश्वमेघ यज्ञ'' करना जिसमें करोड़ों रूपये का खर्च हुआ। उस समय मैं अपने मन को मार कर यह सोच कर चुप रहा कि यदि मैं आप (श्री कृष्ण जी) से वाद-विवाद करूंगा

कि आप तो कह रहे थे तुम्हें युद्ध में होने वाली हत्याओं का कोई पाप नहीं लगेगा। आज कह रहे हो तुम्हें महाभारत युद्ध में की हत्याओं का पाप दुःख दे रहा है। कहाँ गया आप का वह गीता वाला ज्ञान। किसलिए हमारे साथ धोखा किया, गुरु होकर विश्वासघात किया। तो बड़े भईया (युद्धिष्ठर जी) यह न सोच लें कि मेरी चिकित्सा में धन लगना है। इस कारण अर्जुन वाद-विवाद कर रहा है। यह (अर्जुन) मेरे कष्ट निवारण में होने वाले खर्च के कारण विवाद कर रहा है यह नहीं चाहता कि मैं (युद्धिष्ठर) कष्ट मुक्त हो जाऊं। अर्जुन को भाई के जीवन से धन अधिक प्रिय है। उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखकर मैंने सोचा था कि यदि युद्धिष्ठर भईया को थोड़ा सा भी यह आभास हो गया कि अर्जुन! इस दृष्टि कोण से विवाद कर रहा है तो भईया! अपना समाधान नहीं कराएगा। आजीवन कष्ट को गले लगाए रहेगा। हे कृष्ण! आप के कहे अनुसार हमने यज्ञ किया। आज फिर आप कह रहे हो कि तुम्हें युद्ध की हत्याओं का पाप लगा है उसे नष्ट करने के लिए शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय में तपस्या करके गल मरो। आपने हमारे साथ यह विश्वास घात किसलिए किया? यदि आप जैसे सम्बन्धी व गुरू हों तो शत्रुओं की आवश्यकता ही नहीं। हे कृष्ण हमारे हाथ में तो एक भी लड्डू नहीं रहा न तो युद्ध में मर कर स्वर्ग गए न पृथ्वी के राज्य का सुख भोग सके। क्योंकि आप कह रहे हो कि राज्य त्याग कर हिमालय में गल मरो।

आंसु टपकाते हुए अर्जुन के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर युद्धिष्ठर बोला, अर्जुन! जिस परिस्थिति में भगवान है। इस समय ये शब्द बोलना शोभा नहीं देता। श्री कृष्ण जी बोले हे अर्जुन! सुन मैं आप को सत्य-2 बताता हूँ। गीता के ज्ञान में मैंने क्या कहा था मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं। यह जो कुछ भी हुआ है यह होना था इसे टालना मेरे वश नहीं था। कोई अन्य शक्ति है जो आप और हम को कठपुतली की तरह नचा रही है। वह तेरे वश न मेरे वश। परन्तु जो मैं आपको हिमालय में तपस्या करके शरीर अन्त करने की राय दे रहा हूँ। यह आप को लाभदायक है। आप मेरे इस वचन का पालन अवश्य करना। यह कह कर श्री कृष्ण जी शरीर त्याग गए। जहाँ पर उनका अन्तिम संस्कार किया गया। उस स्थान पर यादगार रूप में श्री कृष्ण जी के नाम पर द्वारिका में द्वारिकाधीश मन्दिर बना है।

धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर जी ने बताया। हे धर्मदास! सर्व (छप्पन करोड) यादव का जो आपस में लड़कर मर गए थे, अन्तिम संस्कार करके अर्जुन को द्वारिका में छोड़ कर चारों भाई इन्द्रप्रस्थ चले गए। अकेला अर्जुन द्वारिका की स्त्रियों तथा श्री कृष्ण जी की गोपियों को लेकर आ रहे थे। रास्ते में जंगली लोगों ने अर्जुन को पकड़ कर पीटा। अर्जुन के पास अपना गांडीव धनुष भी था जिस से महाभारत का युद्ध जीता था। परन्तु उस समय अर्जुन से वही धनुष नहीं चला। अपने आप को शक्तिहीन जानकर अर्जुन कायरों की तरह सब देखता रहा। वे जंगली व्यक्ति स्त्रियों के गहने लूट ले गए तथा कुछ स्त्रियों को भी अपने साथ ले गए। शेष स्त्रियों को साथ लेकर अर्जुन ने इन्द्रप्रस्थ को प्रस्थान किया तथा मन में विचार किया कि श्री कृष्ण जी महाधोखेबाज (विश्वासघाती) था। जिस समय मेरे से युद्ध कराना था तो शक्ति प्रदान कर दी। उसी धनुष से मैंने लाखों व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया। आज मेरा बल छीन लिया, मैं कायरों की तरह पिटता रहा मेरे से वही धनुष नहीं चला। कबीर परमेश्वर जी ने बताया धर्मदास! श्री कृष्ण जी छलिया नहीं था। वह सर्व

कपट काल ब्रह्म ने किया है जो ब्रह्मा-विष्णु व शिव का पिता है। जिसके समक्ष श्री विष्णु (कृष्ण) तथा श्री शिव आदि की कुछ पेश नहीं चलती।

उपरोक्त कथा सुनकर धर्मदास जी ने प्रश्न किया :- धर्मदास ने कहा हे परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी! आप ने तो मेरी आँखे खोल दी हे प्रभु! हिमालय में तपस्या कर युद्धिष्ठर का तो केवल एक पैर का पंजा ही बर्फ से नष्ट हुआ तथा अन्य के शरीर गल गए थे। सुना है वे सर्व पाप मुक्त होकर स्वर्ग चले गए?

उत्तरः- परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास! हिमालय में जो तप पाण्डवों ने किया वह शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) होने के कारण व्यर्थ प्रयत्न था। (प्रमाण-गीता अध्याय 16 श्लोक 23 तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल कल्पित घोर तप को तपते हैं वे शरीरस्थ परमात्मा को कृश करने वाले हैं उन अज्ञानियों को नष्ट हुए जान।) क्योंकि जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह गीता जी व वेदों में वर्णित नहीं है अपितु ऐसे शरीर को पीड़ा देकर साधना करना व्यर्थ बताया है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में कहा है ओम् (ॐ) नाम का जाप कार्य करते-2 कर, विशेष कसक के साथ कर मनुष्य जन्म का मुख्य कर्त्तव्य जान के कर। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 7 व 13 में कहा है कि मेरा तो केवल ॐ नाम है इस का जाप अन्तिम सांस तक करने से लाभ होता है इसलिए अर्जुन! तू युद्ध भी कर तथा स्मरण (भक्ति जाप) भी कर अतः हे धर्मदास ! जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह व्यर्थ सिद्ध हुई।

गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 में कहा है कि जो मूढ़ बुद्धि मनुष्य समस्त कर्म इन्द्रयों को रोककर अर्थात् हठ योग द्वारा एक स्थान पर बैठ कर या खड़ा होकर साधना करता है। वह मन से इन्द्रियों का चिन्तन करता रहता है। जैसे सर्दी लगी तो शरीर की चिन्ता, सर्दी का चिन्तन, भूख लगी तो भूख का चिन्तन आदि होता रहता है। वह हठ से तप करने वाला मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी कहा जाता है। कार्य न करने अर्थात् एक स्थान पर बैठ या खड़ा होकर साधना करने की अपेक्षा कर्म करना तथा भक्ति भी करना श्रेष्ठ है। यदि कर्म नहीं करेगा तो तेरा शरीर निर्वाह भी नहीं सिद्ध होगा।

विशेष विचार :- श्री मद्भगवत गीता में ज्ञान दो प्रकार का है। एक तो वेदों वाला तथा दूसरा काल ब्रह्म द्वारा सुनाया लोक वेद वाला। यह ज्ञान (गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 वाला ज्ञान) वेदों वाला ज्ञान ब्रह्म काल ने बताया है। श्री कृष्ण जी द्वारा भी काल ब्रह्म ने पाण्डवों को लोक वेद सुनाया जिस से तप हो जाता है। तप से फिर कभी राजा बन जाता है कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। मोक्ष नहीं होता तथा न पाप ही नष्ट होते हैं।

हे धर्मदास! पाँचों पाण्डवों ने विचार करके अभिमन्यु पुत्र परिक्षित को राज तिलक कर दिया। द्रोपदी, कुन्ती (अर्जुन, भीम व युद्धिष्ठर की माता) तथा पाँचों पाण्डव श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार हिमालय पर्वत पर जाकर तप करने लगे कुछ ही दिनों में आहार अभाव से उनके शरीर समाप्त हो गए। केवल युद्धिष्ठर का शरीर शेष रहा। उसके पैर का एक पंजा बर्फ में गल पाया था। युद्धिष्ठर ने देखा कि उस के परिजन मर चुके है। उनके शरीर की आत्माऐं निकल चुकी हैं सुक्ष्म शरीर युक्त आकाश को जाने लगी। तब युद्धिष्ठर ने भी अपना शरीर त्याग दिया तथा सुक्ष्म शरीर युक्त

युद्धिष्ठर कर्मों के संस्कार वश अपने पिता धर्मराज के लोक में गया। धर्मराज ने अपने पुत्र को बहुत प्यार किया तथा उसको रहने का मकान बताया। कुछ समय पश्चात् काल ब्रह्म ने युद्धिष्ठर में प्रेरणा की। उसे अपने भाईयों व पत्नी द्रोपदी तथा माता कुन्ती की याद सताने लगी। युद्धिष्ठर ने अपने पिता धर्मराज से कहा हे धर्मराज! मुझे मेरे परिजनों से मिलाईए मुझे उनकी बहुत याद सता रही है। धर्मराज ने कहा युद्धिष्ठर! वह तेरा परिवार नहीं था। तेरा परिवार तो यह है। तू मेरा पुत्र है। अर्जुन-स्वर्ग के राजा इन्द्र का पुत्र है, भीम-पवन देव का पुत्र है, नकुल-नासत्य का पुत्र है तथा सहदेव-दस्र का पुत्र है। {नासत्य तथा दस्र ये दोनों अश्वनी कुमार हैं जो अश्व रूप धारी सूर्य तथा अश्वी (घोड़ी) रूप धारी सूर्य की पत्नी संज्ञा के सम्भोग से उत्पन्न हुए थे। सूर्य को घोड़े रूप में न पहचान कर सूर्य पत्नी जो घोड़ी रूप धार कर जंगल में तप कर रही थी अपने धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूपधारी सूर्य को पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया वह उस घोड़े से अभिमुख रही। कामवासना वश घोड़ा रूपधारी सूर्य घोड़ी रूपधारी अपनी पत्नी (विश्वकर्मा की पुत्री) के मुख की ओर चढ़कर सम्भोग करने के कारण वीर्य का कुछ अंश घोड़ी रूपधारी सूर्य की पत्नी के पेट में मुख द्वारा प्रवेश कर गया जिससे दो लड़कों (नासत्य तथा दस्र) का जन्म घोड़ी रूपी सूर्य पत्नी के मुख से हुआ जिस कारण ये दोनों बच्चे अश्विनी कुमार कहलाए। यह पुराण कथा है।}

धर्मराज ने अपने पुत्र युद्धिष्ठर को बताया कि आप सब का वहाँ पृथ्वी लोक में इतना ही संयोग था। वह समाप्त हो चुका है। वे सर्व युद्ध में किए पाप कर्मों तथा अन्य जीवन में किए पाप कर्मों का फल भोगने के लिए नरक में डाल रखे हैं। आप के पुण्य अधिक है इसलिए आप नरक में नहीं डाल रखे हैं। अतः आप उन से नहीं मिल सकते काल ब्रह्म कि प्रबल प्रेरणा वश होकर युद्धिष्ठर ने उन सर्व (भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) को मिलने का हठ किया। धर्मराज ने एक यमदूत से कहा आप युद्धिष्ठर को इसके परिवार से मिला कर शीघ्र लौटा लाना। यमदूत युद्धिष्ठर को लेकर नरक में प्रवेश हुआ। वहाँ पर आत्माऐं हा-हाकार मचा रहे थे, कह रहे थे, हे युद्धिष्ठर हमें नरक से निकलवा दो। मैं अर्जुन हूँ ,कोई कह रहा था, मैं भीम हूँ, मैं नकुल, मैं सहदेव हूँ, मैं कुन्ती, मैं द्रोपदी हूँ। इतने में यमदूत ने कहा हे युद्धिष्ठर अब आप लौट चलिए। युद्धिष्ठर ने कहा मैं भी अपने परिवार जनों के साथ यहीं नरक में ही रहूँगा। तब धर्मराज ने आवाज लगाई युद्धिष्ठर यहाँ आओ मैं तेरे को एक युक्ति बताता हूँ। यह आवाज सुन कर युद्धिष्ठर अपने पिता धर्मराज के पास लौट आया।

धर्मराज ने युद्धिष्ठर को समझाया कि बेटा आपने एक झूठ बोला था कि अश्वथामा मर गया फिर दबी आवाज में कहा था पता नहीं मनुष्य था वा हाथी। जबकि आप को पता था कि हाथी मरा है। उस झूठ बोलने के पाप का कर्मदण्ड देने के लिए आप को कुछ समय इसी बहाने नरक में रखना पड़ा नहीं तो वह युक्ति मैं पहले ही आप को बता देता। युद्धिष्ठर ने कहा कृप्या आप वह विधि बताईए जिस से मेरे परिजन नरक से निकल सकें। धर्मराज ने कहा उनको एक शर्त पर नरक से निकाला जा सकता है कि आप अपने कुछ पुण्य उनको संकल्प कर दो। युद्धिष्ठर ने कहा मुझे स्वीकार है। यह कह कर युद्धिष्ठर अपने आधे पुण्य उन छः के निमित्त संकल्प कर दिए। वे छःओं नरक से बाहर आकर धर्मराज के पास जहाँ युद्धिष्ठर खड़ा था उपस्थित हो गए। उसी समय इन्द्र देव आया अपने पुत्र अर्जुन को साथ लेकर चला गया, पवन देवता आया अपने पुत्र भीम को साथ लेकर चला गया। इसी प्रकार अश्विनी कुमार (नासत्य, दस्र) आए नकुल व सहदेव को लेकर चले

गए। कुन्ती स्वर्ग में चली गई तथा देखते-2 द्रोपदी ने दुर्गा रूप धारण किया तथा आकाश को उड़ चली कुछ ही समय में सर्व की आँखों से ओझल हो गई। वहाँ अकेला युद्धिष्ठर अपने पिता धर्मराज के पास रह गया। परमेश्वर कबीर जी ने अपने शिष्य धर्मदास जी को उपरोक्त कथा सुनाई तत्पश्चात् इस सर्व काल के जाल को समझाया।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया हे धर्मदास! काल ब्रह्मकी प्रेरणा से इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्राणी कर्म करते हैं। जैसा आपने सुना युद्धिष्ठर पुत्र धर्मराज, अर्जुन पुत्र इन्द्र, भीम पुत्र पवन देव, नकुल पुत्र नासत्य तथा सहदेव पुत्र दस्र थे। द्रोपदी शापवश दुर्गा ही अवतार थी जो अपना कर्म भोगने आई थी तथा कुन्ती भी दुर्गा लोक की पुण्यात्मा थी। ये सर्व काल प्रेरणा से पृथ्वी पर एक फिल्म (चलचित्र) बनाने गए थे। जैसे एक करोड़पति का पुत्र किसी फिल्म में रिक्शा चालक का अभिनय करता है। फिल्म निर्माण के पश्चात् अपनी 20 लाख की कार गाड़ी में बैठ कर आनन्द करता है। भोले-भाले सिनेमा दर्शक उसे रिक्शा चालक मान कर उस पर दया करते हैं। उसके बनावटी अभिनय को देखने के लिए अपना बहुमल्य समय तथा धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार उपरोक्त पात्रों (युद्धिष्ठर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) द्वारा बनाई फिल्म महाभारत के इतिहास को पढ़-2 कर पृथ्वी लोक के प्राणी अपना समय व्यर्थ करते हैं। तत्वज्ञान को न सुनकर मानव शरीर को व्यर्थ कर जाते हैं। काल ब्रह्म यही चाहता है कि मेरे अन्तर्गत जितने भी जीव हैं। वे तत्वज्ञान से अपरिचित रहे तथा मेरी प्रेरणा से मेरे द्वारा भेजे गुरूओं द्वारा शास्त्रविधि विरुद्ध साधना प्राप्त करके जन्म-मृत्यु के चक्र में पड़े रहे। काल ब्रह्म की प्रेरणा से तत्वज्ञान हीन सन्तजन व ऋषिजन कुछ वेद ज्ञान अधिक लोक वेद के आधार से ही सत्संग वचन श्रद्धालुओं को सुनाते हैं। जिस कारण से साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त न करके काल के जाल में ही रह जाते हैं।

हे धर्मदास! मैं पूर्ण परमात्मा की आज्ञा लेकर तत्वज्ञान बताने काल लोक में कलयुग में आया हूँ।

''क्या पाण्डव सदा स्वर्ग में ही रहेंगे?''

धर्मदास जी ने बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी के चरण पकड़ कर कहा हे परमेश्वर! आप स्वयं सत्यपुरूष हो धर्मदास जी ने अति विनम्र होकर आधीन भाव से प्रश्न किया।

प्रश्नः- हे बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी! क्या पाण्डव अब सदा स्वर्ग में ही रहेगें?

उत्तरः- नहीं धर्मदास! जो पुण्य युद्धिष्ठर ने उनको प्रदान किए हैं। उन पुण्यों का तथा स्वयं किए यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठानों का पुण्य जब स्वर्ग में समाप्त हो जाएगा तब सर्व पुनः नरक में डाले जाऐंगे। युद्ध में किए पाप कर्म तथा उस जीवन में किए पाप कर्म तथा संचित पाप कर्मों के फल को भोगने के लिए नरक में अवश्य गिरना होगा। युद्धिष्ठर भी अपने आधे पुण्य दान करके पुण्यहीन हो गया है। वह भी शेष पुण्यों को स्वर्ग में समाप्त करके संचित पाप कर्मों के आधार से अवश्य नरक में डाला जाएगा भले ही पाप कर्म कम होने के कारण नरक समय थोड़ा ही भोगना पड़े परन्तु नरक में अवश्य जाना पड़ेगा। जैसे युद्धिष्ठर ने अश्वथामा मरने की झूठ बोली थी उसका भी पाप कर्मदण्ड भोगने के लिए नरक में कुछ समय के लिए उसी समय ही जाना पड़ा।

इसी प्रकार पूर्व जन्मों के संचित पाप कर्मों का दण्ड नरक में भोगना पड़ेगा। पश्चात् पृथ्वी पर सर्व को अन्य प्राणियों की योनियों में भी जाना होगा। यह काल ब्रह्म का अटल विधान है। परन्तु हे धर्मदास! जो साधक पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरु से उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रह कर करता है उसके सर्व पाप कर्म ऐसे नष्ट हो जाते है जैसे सुखे घास के बहुत बड़े ढेर को अग्नि की छोटी सी चिंगारी जला कर भस्म कर देती है। उसकी राख को हवा उड़ा कर इधर-उधर कर देती है ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा की भक्ति का सत्यनाम मन्त्र रूपी अग्नि घास के ढेर रूपी पाप कर्मों को भस्म कर देता है।

कबीर, जब ही सत्यनाम हृदय धरा, भयो पाप का नाश।
मानो चिंगारी अग्नि की, पड़ी पुराने घास।।

''क्या द्रोपदी भी नरक जाएगी तथा अन्य प्राणियों के शरीर धारण करेगी?''

प्रश्न :- हे सद्गुरू! क्या द्रोपदी भी पुनः नरक व अन्य योनियों में जाएगी (धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से प्रश्न किया)?

उत्तर :- हाँ धर्मदास! द्रोपदी, दुर्गा का अंश है। अंश का अर्थ है की दुर्गा के शब्द से शरीर धारण करने वाली आत्मा, द्रोपदी, दुर्गा से अन्य आत्मा है परन्तु जो कष्ट द्रोपदी को होता है उसका प्रभाव दुर्गा को भी होता है। जैसे किसी की बेटी दुःखी होती है तो माता अत्यधिक दुःखी होती है। इस प्रकार द्रोपदी अब दुर्गा लोक में विशेष स्थान पर है। पुण्य समाप्त होने पर फिर नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर अवश्य धारण करेगी। यही दशा कुन्ती वाली आत्मा की होगी।

''क्या श्री कृष्ण जी ने ताम्रध्वज को जीवित किया परन्तु अभिमन्यु को क्यों नहीं कर सके?''

प्रश्न :- धर्मदास जी ने प्रश्न किया, हे परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी! श्री कृष्ण जी ने राजा मोरध्वज के पुत्र ताम्रध्वज को आरे से बीचों-बीच चिरवाया। मृत्यु हो गई। तुरन्त ही जीवित कर दिया तथा आरे का निशान (चिन्ह) भी नहीं था। यह भगवान भी परमशक्ति युक्त सिद्ध हुए। इस विषय में मेरी शंका का समाधान किजिए।

उत्तर :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा हे धर्मदास! राजा मोरध्वज के पुत्र ताम्रध्वज को तो भगवान श्री कृष्ण जी ने जीवित कर दिया। परन्तु अपने सगे भान्जे सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु को जीवित नहीं कर सके। श्री कृष्ण जी की आँखों में आँसू थे, सुभद्रा रो रही थी पाण्डवों का वंश नष्ट हो रहा था।

कारण :- कबीर परमेश्वर जी ने बताया हे धर्मदास ताम्रध्वज के स्वांस (आयु) शेष थे इसलिए श्री कृष्ण जी ने ताम्रध्वज को जीवित कर दिया। अभिमन्यु को इसलिए जीवित नहीं कर सके कि अभिमन्यु के स्वांस शेष नहीं थे। उसकी आयु शेष नहीं थी। ये भगवान कर्म लेख को परिवर्तित नहीं कर सकते। शरीर को काट के जोड़ देना तो इन भगवानों (ब्रह्मा,विष्णु तथा शिव) के बाएं हाथ का काम है। यह लीला जो एक जादूगर कर देता है। किसी व्यक्ति को बीच से काटा दिखा देता है।

उसे फिर से जीवित कर देता है। परन्तु पूर्ण परमात्मा आयु भी बढ़ा देता है।

''क्या श्री विष्णु अर्थात् श्री कृष्ण जी कर्मदण्ड को क्षमा कर सकते हैं?''

प्रश्नः- क्या श्री विष्णु उर्फ श्री कृष्ण जी तीन ताप को समाप्त कर सकते हैं। यदि नहीं कर सकते हैं तो कोई उदाहरण बताईए हे कबीर परमेश्वर! जिससे मेरी शंका समाप्त हो सके।

उत्तरः- हे धर्मदास! श्री विष्णु उर्फ श्री कृष्ण जी तीन ताप को समाप्त नहीं कर सकते।

उदाहरण-1 :- जिस समय श्री विष्णु जी ने नारद ऋषि को बन्दर का मुख लगाया तो नारद जी ने शाप दिया था कि हे विष्णु तू भी एक जीवन में मेरे की तरह पृथ्वी पर स्त्री वियोग में भटकेगा। नारद जी के शापवश श्री विष्णु का जन्म श्री रामचन्द्र रूप मे अयोध्या के राजा दशरथ के घर जन्म हुआ। फिर बनवास हुआ, सीता का अपहरण हुआ। श्री राम अपनी पत्नी के वियोग में व्याकुल हुए। फिर रावण को मारकर अयोध्या आए। वहाँ से फिर सीता जी को एक धोबी के व्यंग्य के कारण घर से निकाल दिया। अन्त तक राम और सीता का मिलन दोबारा नहीं हो सका। अन्त समय में सीता पृथ्वी में समाई तथा उसी के वियोग में श्री रामचन्द्र ने सरयू नदी में जल समाधी ली अर्थात् जल में शरीर त्यागा।

उदाहरण-2 :- एक समय दुर्वासा ऋषि द्वारिका के पास जंगल में कुछ समय के लिए ठहरे। द्वारिका वासी भगवान कृष्ण के अतिरिक्त किसी भी ऋषि या सन्त को महत्व नहीं देते थे। सर्व को हेय समझते थे। एक दिन कुछ द्वारिका वासियों ने शरारत सूझी विचार किया की दुर्वासा ऋषि की परीक्षा लेते हैं। कहते है यह त्रिकालदर्शी है। यह विचार करके श्री कृष्ण जी के पुत्र प्रद्यूमन के पेट पर लोहे की छोटी कड़ाही बांध कर उसके ऊपर रूई लगा कर कपड़ा बांध दिया तथा स्त्री के कपड़े पहना कर गर्भवती स्त्री का स्वांग बनाया। एक व्यक्ति उसका पति बनाया तथा दस-बीस व्यक्तियों के साथ दुर्वासा ऋषि के पास गए। ऋषि जी को प्रणाम करके बोले हे ऋषि जी! ये दोनों पति-पत्नी हैं। इनके विवाह को कई वर्ष हो गए थे। अब प्रभु ने इनकी आशा पूर्ण की है। ये उतावले हो रहे हैं जानना चाहते हैं कि इस गर्भ से लड़का होगा या लड़की? आप की महिमा सुनकर हम यहाँ आए हैं। दुर्वासा ऋषि उनके उद्देश्य को समझ गए तथा ध्यान द्वारा देखा तो सर्व रहस्य जान लिया तथा कहा इस गर्भ से यादव कुल का नाश होगा। यह कहते समय ऋषि दुर्वासा के नेत्र लाल हो गए चेहरा गम्भीर हो गया।

सर्व व्यक्ति जो उनके साथ गए थे भयभीत होकर द्वारिका लौट आए। द्वारिका वासी बड़े-बुढ़ों को पता चला कि बच्चों ने दुर्वासा ऋषि से उपहास किया है। जिस कारण से ऋषि ने यादव कुल नष्ट होने का श्राप दे दिया है। ऋषि का वचन टल नहीं सकता। कुछेक बुद्धिमान व्यक्ति बोले अपने राजा श्री कृष्ण जी भगवान जो अपने साथ हैं। उनके सामने ऋषि दुर्वासा जैसे क्या वस्तु हैं? चलो श्री कृष्ण भगवान को सर्व कथा सुनाते हैं तथा ऋषि के श्राप से बचाने की प्रार्थना करते हैं। द्वारिका के गणमान्य व्यक्ति भगवान कृष्ण के पास गए तथा सर्व वृतान्त सुनाया। द्वारिका वासियों को अति व्याकुल जान कर श्री कृष्ण जी ने कहा आप चिन्ता क्यों कर रहे हो। सर्व व्यक्तियों ने कहा ऋषि ने शाप दिया है कि इस गर्भ से यादव कुल का नाश होगा। श्री कृष्ण जी बोले इसका समाधान है कि

जो लोहे की कड़ाही व कपड़ों व रूई का गर्भ स्वांग किया था उन कपड़ों व रूई को जला कर भस्म कर दिया जाए तथा लोहे की कड़ाही को घिसा कर चूर्ण बना कर प्रभास क्षेत्र में यमुना नदी के जल में बहा दिया जाए। न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी। जब गर्भ का सामान ही नहीं रहेगा तो यादव कुल का नाश कैसे होगा? सर्व उपस्थित प्रजा जनों ने भगवान कृष्ण द्वारा बताई विधि का स्वागत किया तथा राहत की सांस ली। अपने धार्मिक गुरू श्री कृष्ण जी द्वारा बताई विधि के अनुसार गर्भ स्वांग में प्रयोग रूई तथा वस्त्र अग्नि में जला दिए लोहे की कड़ाही को घिसने का कार्य प्रभास क्षेत्र में यमुना दरिया के किनारे प्रारम्भ किया। कुछ व्यक्तियों को कार्य सौंपा गया।

एक व्यक्ति को लोहे की कड़ाही के कड़ों (बराबर में ऊपर के हिस्से में लगे गोलाकार छल्ले) को घिसने का कार्य सौंपा। उसने एक कड़ा पूरा घिस दिया दूसरा कुछ ही घिसा था तब तक अन्य व्यक्तियों ने पूरी कड़ाही को घिस कर अपना कार्य समाप्त कर दिया। कड़े घिसने वाले व्यक्ति के मन में आया कि मैं पीछे रह गया हूँ ये लोग मेरा उपहास करेगें इसलिए उसने दूसरा कड़ा जो चारों ओर से थोड़ा-2 घिसा था जल में फैंक दिया। घिसने के कारण कड़ा चमकीला बन गया था। एक बड़ी मछली ने उसे खाद्य वस्तु जान कर खा लिया। एक बालिया नामक शिकारी ने उस मछली को पकड लिया तथा काटने पर उसमें से एक चमकीली धातु का कड़ा मिला। उस कड़े को लेकर लुहार कारीगर के पास ले गया। अपने धनुष के लिए उस कड़े के लोहे का विषाक्त तीर बनावाया। जो कड़ाही के घिसने से लोह चूर्ण बना था उसे यमुना में डाला गया था। उस लोह चूर्ण का धारदार तीखे पत्तों वाला पठेरे जैसा घास उग गया। उस सरकण्डे जैसे घास के पते इतने नुकीले थे यदि उस से ऊंगली छू जाए तो कट के भिन्न हो जाए। अपने आप को श्राप मुक्त जान कर द्वारिका वासी आनन्द से निशचिन्त होकर रहने लगे।

कुछ वर्षों उपरान्त द्वारिका के व्यक्ति छोटी से छोटी बात पर लड़ मरने लगे। शत्रुता बढ़ने लगी। परस्पर ईर्ष्या रखने लगे। प्रतिदिन दो-चार हत्याऐं आपसी झगड़े के कारण होने लगी। द्वारिका पुरी में पूर्ण रूप में अशान्ति का वातावरण हो गया। कोई भी बड़ें-बूढ़ों की बातों को महत्व नहीं देता था। अपनी धुन में प्रतिशोध लेने की ताक में रहने लगे। कुछ बड़े-बुजुर्ग मिलकर अपने गुरू श्री कृष्ण प्रभु के पास गए तथा बताया कि हे प्रभु! पता नहीं नगरी का कौन सा पाप उदय हो गया है। आपसी झगड़े होने लगे हैं। कोई भी न्याय की बात सुनने को तैयार नहीं है। एक दूसरे पर घात लगाए घूम रहे हैं। सम्पूर्ण नगरी में उपद्रव होने लगे हैं। कृप्या कारण तथा शान्ति का समाधान बताईए।

श्री कृष्ण प्रभु ने कुछ देर विचार करके ध्यान द्वारा देखा तो पता चला कि ऋषि दुर्वासा द्वारा दिया गया श्राप फली भूत हो रहा है। श्री कृष्ण जी ने उन उपस्थित द्वारिका वासियों को बताया हे द्वारिका वासियों ! आप सर्व यादवों पर ऋषि दुर्वासा द्वारा दिया श्राप (श्राप भी तीनों तापों में से एक होता है) अपना प्रभाव दिखा रहा है। इससे बचने का उपाय एक ही है सर्व द्वारिका वासी नर प्रभास क्षेत्र में जाकर यमुना नदी में स्नान करो। आप सर्व दुर्वासा ऋषि के श्राप से पूर्ण रूप से मुक्त हो जाओगे। उन व्यक्तियों ने भगवान श्री कृष्ण का धन्यवाद किया तथा प्रणाम करके लौट आए। श्री कृष्ण जी द्वारा बताया उपाय सर्व द्वारिका वासियों को बताया श्री कृष्ण प्रभु का आदेश सुनते ही सर्व

नर यादव अपने नवजात शिशुओं को भी साथ लेकर प्रभास क्षेत्र की ओर चल पड़े। कहीं उन बच्चों (लड़कों) पर श्राप न रह जाए इस उद्देश्य से अपने उसी दिन के उत्पन्न लड़कों को भी स्नान कराने के लिए श्राप मुक्त कराने के लिए संग ले गए। यमुना में स्नान करके बाहर आकर आपस में युद्ध करने लगे। प्रथम श्राप मुक्त होने के उद्देश्य से यमुना नीर में स्नान करते थे। बाहर आते ही वहीं पर एक दुसरे को युद्ध करता देखकर अपने परिजनों के पक्ष में झगड़ा करने लगे। गर्भ स्वांग में प्रयुक्त लोहे की कड़ाही के चूर्ण से उत्पन्न सरकण्डों (जो तेज धार युक्त पतों वाले थे) को उखाड़ कर एक-दूसरे को मारने लगे। श्राप प्रभाव से सरकण्डों ने तेग का कार्य किया। घास के पत्तों से एक दूसरे की गर्दन काट डाली। श्री विष्णु पुराण पांचवा अंश अध्याय 37 पृष्ठ 413 पर लिखा है कि कड़ाहे के लोह चूर्ण से उत्पन्न सरकण्डों को श्री कृष्ण जी ने उखाड़ा वे मूसल बन गए। श्री कृष्ण जी ने भी उन मूसलों से यादवों को मारा। इस प्रकार छप्पन करोड़ यादव विनाश को प्राप्त हुए।

श्री कृष्ण भगवान प्रभास क्षेत्र में जाकर एक वृक्ष के नीचे दोपहर के समय विश्राम कर रहे थे। लेटे हुए श्री कृष्ण जी ने अपने एक पैर को दूसरे पैर के घुटने पर रखा हुआ था। जिस कारण से दाँऐ पैर का तलवा स्पष्ट दिखाई दे रहा था। दाँऐ पैर के तलवे में पदम था। जो बहुत चमकीला था। उस से रोशनी निकलती थी। (पद्यम, आंख के आकार का चमकीला चिन्ह तलवे की चमड़ी के अन्दर, मुस की तरह जन्मजात लगा हुआ था) जिस वृक्ष के नीचे भगवान कृष्ण लेटे हुए थे, उस वृक्ष की टहनियाँ तीन ओर से जमीन को छू रही थी। बालिया नामक शिकारी अपने उद्देश्य से शिकार की खोज में सुबह से धूम रहा था। उस दिन उसे कोई शिकार हाथ नहीं लगा। बालिया शिकारी ने उस दिन वह तीर ले रखा था। जो गर्भ स्वांग में प्रयुक्त लोहे की कड़ाही के उस कड़े से बनवाया था। जो मछली से प्राप्त किया था। वह तीर विषयुक्त बनवा रखा था। शिकार की खोज में बालिया शिकारी देव योग से उस वृक्ष के निकट आकर ध्यान पूर्वक शिकार को खोजने लगा। उसे श्री कृष्ण जी के तलवे में लगे पद्यम की चमक दिखाई दी। शिकारी ने सोचा कि यह मृग की आँख चमक रही है। सारा दिन से शिकार न मिलने के कारण हुए परेशान शिकारी ने उसे हिरण की आँख जान कर उसी पद्यम को निशाना बना कर वह विषाक्त तीर मारा। तीर श्री कृष्ण जी के पैर के तलवे में लगा। पीड़ा से श्री कृष्ण जी के मुख से निकला हे भगवान् ! मर गया। मनुष्य की चीख भरी आवाज सुनकर शिकारी समझ गया कि मेरा विषैला तीर किसी व्यक्ति को लगा है। दूसरी ओर जा कर देखा तो द्वारिका के राजा श्री कृष्ण पैर को पकड़ कर दर्द से व्याकुल थे। शिकारी ने कहा हे राजन्! मुझे क्षमा कर दिजिए। मैंने आपके इस पैर के तलवे की चमक को मृग की आँख जाना। प्रभु मैंने जानबूझ कर आप की हत्या नहीं की है। मुझ से धोखा हुआ है, प्रभु मुझ अपराधी को क्षमा कर दो दीनानाथ। अपने कुकृत्य से दुःखी शिकारी को अति व्याकुल देखकर श्री कृष्ण जी बोले हे बालिया ! आप से कोई अपराध नहीं हुआ है। यह तो तेरा और मेरा पूर्व जन्म का लेने-देन था, आज समाप्त हो गया। त्रेता युग में तू सुग्रीव का भाई बाली था मैं रामचन्द्र रूप में राजा दशरथ के घर जन्मा था। उस समय मैंने तुझे एक वृक्ष की ओट लेकर धोखा करके मारा था। वही प्रतिशोध आज तूने मेरे से लिया है। आप जाईए!

उस शिकारी ने द्वारिका में जाकर श्री कृष्ण जी के घायल होने की सूचना दी। पाँण्डव आए

तथा श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार सर्व यादवों के मृतक शरीरों का अन्तिम संस्कार किया। द्वारिका की स्त्रियों को अपने साथ ले जाने तथा राज्य त्यागकर हिमालय में तपस्या करके प्राण त्यागने का आदेश श्री कृष्ण जी ने पाण्डवों को दिया था। श्री कृष्ण जी का भी अंतिम संस्कार पाण्डवों ने किया। जहाँ श्री कृष्ण जी का शरीर जमीन में समाधिस्थ किया वहाँ पर श्री कृष्ण जी का मन्दिर बना है। जिसे द्वारिकाधीश मन्दिर कहा जाता है।

निष्कर्ष :-उपरोक्त उल्लेख से निष्कर्ष निकला (1) श्री विष्णु अर्थात् अवतार गण श्री रामचन्द्र तथा श्री कृष्णचन्द्र तीन ताप (श्राप आदि) को समाप्त नहीं कर सकते। श्री कृष्ण जी के समक्ष दुर्वासा ऋषि के श्राप से पूरा यादव कुल (श्री कृष्ण जी के पुत्र, पौत्र आदि सर्व) आपस में लड़ कर मर गये। श्री कृष्ण जी कोई बचाव नही कर सके। (2) किए कर्म का भोग विष्णु भगवान को भोगना पड़ता है पाप कर्म दण्ड को नाश नहीं कर सकते। क्योंकि ये भगवान पूर्ण परमात्मा नहीं हैं। सर्व शक्तिमान नहीं हैं। इन भगवानों (श्री विष्णु, श्री शिव, श्री ब्रह्मा) की उपासना करने वालों को भी पाप कर्म का दण्ड भोगना ही पड़ता है। पाप कर्म दण्ड नाश नहीं होता। केवल पूर्ण परमात्मा की भक्ति से ही साधक का पाप क्षमा होता है। प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 8 मन्त्र 13 में है (3) पाप नाश या श्राप नाश करने की विधि स्वयं श्री कृष्ण जी ने बताई जो व्यर्थ सिद्ध हुई। जो सन्त व ऋषि व गुरूजन श्री विष्णु व श्री शिव के साधक हैं उन द्वारा बताई गई कष्ट निवारक विधि कैसे लाभदायक हो सकती है? जैसे श्री कृष्ण जी ने यादवों को कहा कि तुम यमुना नदी के जल में स्नान करो जिससे दुर्वासा ऋषि के श्राप से मुक्त हो जाओगे। श्री कृष्ण जी द्वारा बताई विधि से श्राप नाश तो नहीं हुआ परन्तु यादवों का नाश अवश्य हो गया। विचार करें जो भ्रमित करने वाले गुरूजन गंगा, यमुना या किसी तीर्थ के जल में स्नान करने से पाप नाश होने तथा मोक्ष प्राप्त होने की बात कहते हैं वह कहाँ तक उचित है। अर्थात् व्यर्थ है। बहकावा मात्र है। शास्त्रविधि रहित साधना करा कर अनुयाईयों का जीवन व्यर्थ करना है तथा स्वयं महापाप के भागी होकर घोर नरक में गिरने की तैयारी मात्र है। (4) श्री विष्णु को नारद ऋषि ने श्राप दिया वह श्राप श्री विष्णु जी ने श्री रामचन्द्र रूप में राजा दशरथ के घर अयोध्या में जन्म लेकर भोगना पड़ा। नारद के शाप अर्थात् तीन ताप को श्री विष्णु नाश नहीं कर सके।

''क्या श्री कृष्ण जी तत्वज्ञान से परिचित थे?''

प्रश्नः-धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ से विनय पूर्वक प्रश्न किया हे दीनदयाल ! हे बन्दी छोड़ आप के द्वारा दिया उपरोक्त तत्वज्ञान अद्वितीय है। मेरे ज्ञान चक्षु खुल गए हैं। जो प्रभु स्वयं को तथा अपने कुल को कर्मदण्ड से आनेवाली आपत्ति से नहीं बचा सकते तो हम साधकों द्वारा की गई इन भगवानों (श्री विष्णु, श्री शिव तथा श्री ब्रह्मा जी) की उपासना व्यर्थ थी। हे परमेश्वर! श्री कृष्ण जी ने भी किस कारण से शास्त्रविधि विरूद्ध साधना करने की प्रेरणा अपने अनुयाईयों को की। क्या इन्हें सत्य साधना का ज्ञान ही नहीं है? या किसी अन्य कारण से नहीं बताई?

उत्तरः-हे धर्मदास! जो काल ब्रह्म अर्थात् ज्योतिनिरंजन है वह इक्कीस ब्रह्मण्डों का प्रभु है वह एक हजार कलाओं तथा एक हजार भुजाओं युक्त है। श्री विष्णु, श्री शिव व श्री ब्रह्मा जी सोलह-सोलह कलाओं युक्त हैं तथा केवल चार-2 भूजा युक्त हैं। काल ब्रह्म नहीं चाहता कि मेरे

इक्कीस ब्रह्मण्डों का कोई भी जीव तत्वज्ञान से परिचित होकर मेरे समान शक्तिशाली हो जाए तथा मेरे जाल से निकल जाए। इसी कारण से यह वेद ज्ञान की अपेक्षा स्वयं आकाशवाणी करके ऋषियों द्वारा स्वयं बनाए लोकवेद अर्थात् कहे सुने भक्ति ज्ञान के आधार से ही श्रद्धालुओं को भक्ति मार्ग प्रदान कराता है। अपनी गुप्त प्रेरणा या आकाश वाणी से ऋषियों को हठयोग करने के लिए प्रेरित करता है। वर्षों हठ योग से तप साधना करने से ऋषि जन सिद्धियाँ प्राप्त करके परमाणु बम्ब तुल्य बन जाते हैं।

जिस कारण से थोड़ी सी कहा सुनी होते ही एक दूसरे को श्राप देकर कष्ट भोगते रहते हैं। यर्थाथ् उद्देश्य पूर्ण मोक्ष को भूल कर एक दूसरे से बढ़-चढ़ कर सिद्धियाँ प्राप्त करने की स्पर्धा में मानव जीवन नष्ट कर जाते हैं। जिस के पास अधिक सिद्धियाँ होती हैं वह अन्य ऋषियों को मात दे देता है। जिस कारण भोली जनता में प्रसंशा का पात्र बन कर पूज्य बन जाता है। भोले श्रद्धालु उसे परम शक्तियुक्त ऋषि, महर्षि मान कर उस के आदेशनुसार भक्ति क्रियाऐं करते रहते हैं तथा अपने गुरूदेव के करिशमों का गुण-गान करते रहते हैं। जिस कठिन तप अर्थात् हठयोग से साधना गुरूजी ने की थी वैसी साधना अनुयाई नहीं कर सकते क्योंकि अनुयाई गृहस्थी होते हैं अपना मेहनत-मजदूरी करके परिवार पालते हैं। जबकि ऋषि या तो कुंवारे ही साधना करते हैं। यदि गृहस्थी होते हैं तो उनके बच्चों का निर्वाह अनुयाई के द्वारा दी गई दक्षिणा से चलता है। जिस कारण से ऋषि एक स्थान पर हठयोग कई वर्षों तक करके सिद्धियाँ प्राप्त कर लेता है ऐसा अनुयाईयों के लिए सम्भव नहीं हैं। यदि ऋषि गुरूजी वाली साधना से मोक्ष प्राप्ति मानी जाए जो अनुयाई उस मोक्ष से वंचित ही रह जाऐंगे। परन्तु दोनों (गुरू व अनुयाईयों) की भक्ति विधि शास्त्रों के विरुद्ध होने से व्यर्थ है।

इसी प्रकार श्री कृष्ण जी के अध्यात्मिक गुरूदेव श्री दुर्वासा ऋषि थे (अक्षर ज्ञान अर्थात् शिक्षा के गुरु श्री संदीपनी ऋषि थे) दुर्वासा जी ने हठ योग करके हजारों वर्ष साधना की जिससे सिद्धियाँ प्राप्त करके प्रसंशा का पात्र बन गया। श्री कृष्ण जी गृहस्थी थे उनको दुर्वासा ने अन्य साधना करने को कहा। श्री कृष्ण जी ने फिर अपने शिष्यों (पाण्डवों तथा यादवों) को वही शास्त्र विधि विरूद्ध भक्ति विधि बताई जो बुरे समय पर बचाव नहीं कर सकी। जो आप ने पूर्वोक्त उल्लेख में पढ़ी व सुनी।

यही दशा श्री रामचन्द्र जी की जानों। उनके गुरूदेव श्री वशिष्ठ मुनि थे। श्री वशिष्ठ ऋषि जी ने भी शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) किया। वशिष्ठ मुनि ने हजारों वर्ष तपस्या (हठयोग) की ततपश्चात् सिद्धि युक्त होकर अनुयाई बनाए। श्री रामचन्द्र जी गृहस्थी व राजा थे। वे तपस्या अर्थात् वशिष्ठ ऋषि जी वाली हठयोग साधना नहीं कर सकते थे। इसलिए श्री रामचन्द्र जी भक्ति भी जो श्री वशिष्ठ जी द्वारा बताई गई थी करते थे परन्तु कर्म लेख भोगने ही पड़े। श्री रामचन्द्र जी का पूरा जीवन कष्टमय दुःखों से परिपूर्ण रहा। जिस व्यक्ति की पत्नी व बच्चे अन्यत्र कही पर रह रहे हों। वह व्यक्ति चाहे पृथ्वी पति हो उसे स्वपन में भी सुख नहीं हो सकता। भगवान श्री राम का सर्व जीवन ऋषि नारद के श्राप से नरकमय रहा। थोड़े कहे को अधिक समझ धर्मदास।

हे धर्मदास! काल ब्रह्मका भयंकर जाल है। आपने देवी पुराण तीसरे स्कंद अध्याय 6-7 में पढ़ा

कि जिस समय ब्रह्मा कमल के फूल पर चेत हुआ था वह युवा था। तब काल ब्रह्म ने आकाशवाणी की थी ब्रह्मा तप करो, तप करो। ब्रह्मा ने एक हजार वर्ष तक तप किया फिर आकाशवाणी हुई सृष्टी करो। हे धर्मदास! ब्रह्मा को वेद बहुत बाद में प्राप्त हुए। शास्त्रविधि रहित साधना करने को प्रेरित काल ब्रह्म ने बहुत पूर्व ही कर दिया। इस प्रकार वेदों के ज्ञान को पढ़ कर भी तपस्या (हठयोग) करना उचित जाना। क्योंकि ब्रह्मा ने माना कि तप करना भी प्रभु का आदेश है। इसलिए इस शास्त्रविरूद्ध हानिकारक साधना को ब्रह्मा ने स्वयं भी किया तथा विष्णु और शिव व अपने वंशजों को भी इसी को करने की राय दी तथा कहा यह प्रभु की आकाशवाणी है जो उन्हीं का आदेश है जो मुझे स्पष्ट सुना है।

हे धर्मदास! तपस्या से सिद्धियों युक्त करके काल ब्रह्म अपना कार्यसिद्ध करता है। ऋषियों व ब्रह्मा, विष्णु, महेश को भी सिद्धी युक्त करके अन्य प्राणियों को सुख व दुःख दिलाता है तथा सर्व प्राणियों को यथार्थ भक्ति मार्ग से कोसों दूर रखता है। तप से कुछ समय राज्य मिलता है। पाप कर्म से दुःखमय योनियों में शरीर तथा नरक प्राप्ति होती, तप से कुछ समय स्वर्ग का सुख मिलता है, पश्चात् वह साधक चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों की योनियों में महाकष्ट भोगता है। इस प्रकार काल ब्रह्म ने सर्व जीवात्माओं को दो तरफा ज्ञान से भ्रमित कर रखा है। जैसे गीता अध्याय 3 श्लोक 1-2 में अर्जुन ने पूछा हे जनार्दन! आप कभी कहते हो कर्म श्रेष्ठ है अर्थात् कर्मयोग श्रेष्ठ है, कभी कहते हो कर्मयोग की अपेक्षा ज्ञानयोग श्रेष्ठ है, यदि ज्ञान योग श्रेष्ठ है तो मुझे युद्ध करने वाले भयंकर कर्म में क्यों लगाना चाहते हो। आप के मिले जुले से वचन मुझे भ्रमित कर रहे हैं। जो एक बात निश्चित् करके कहिए जिससे मैं कल्याण को प्राप्त होऊँ।

गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में कहा है कि कर्म सन्यास अर्थात हठयोग करके एक स्थान पर बैठ कर साधना करने वाले दम्भी हैं। वे शरीर से तो साधना करते दिखाई देते हैं परन्तु उनका मन चंचल रहता है (जैसे सर्दी लगी तो सर्दी का चिन्तन, गर्मी लगी तो गर्मी का चिन्तन, भूख का चिन्तन मन से करते रहते है) यह साधना व्यर्थ है। एक स्थान पर बैठ कर साधना करेगा अर्थात् कर्मसन्यास करके भक्ति करेगा तो तेरा निर्वाह कैसे होगा।

यही प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 7 में कहा है कि युद्ध भी कर मेरा स्मरण भी कर मुझे प्राप्त होगा। हे धर्मदास! उपरोक्त विचार वेद ज्ञान के है जो श्रेष्ठ है। फिर गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में अपने शास्त्रविरुद्ध विचार (लोक वेद) बताए हैं। जिससे स्पष्ट है कि यदि गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 वाला ठीक है। तो यह अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 वाला उसके विपरीत होने के कारण व्यर्थ हुआ। अधिकतर श्रद्धालु हठयोग को रूची से करते हैं क्योंकि मन रूपी काल उसी साधना से खुश रहता है जो जीव को हानि करे।

काल जाल का अन्य प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 17 श्लोक 1 से 44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1 से 36 में पृष्ठ 125 से 221 पर लिखा है की देवता तथा दैत्य दोनों ही वैदिक धर्म अनुसार साधना करते थे। एक समय दोनों का सौ दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ। देवता पराजित हो गए। देवताओं ने क्षीर समुद्र के उत्तरीय तट पर जाकर तपस्या की और भगवान विष्णु की आराधना के लिए इस स्तव का गान किया, देवगण बोले- हम लोग लोक नाथ भगवन् विष्णु की

आराधना के लिए जिस वाणी का उच्चारण करते हैं उस से वे आद्य-पुरूष श्री विष्णु भगवान प्रसन्न हों। (17/मन्त्र 11) उस ब्रह्मस्वरूप को जो निराकार है। उस ब्रह्मस्वरूप को नमस्कार है। हे पुरूषोतम्! आप का जो क्रूरता ओर माया से युक्त घोर तमोमय रूप हैं उस राक्षस स्वरूप को नमस्कार है (20) जो कल्पान्त में समस्त भूतों अर्थात प्राणियों का भक्षण कर जाता है आपके उस काल स्वरूप को नमस्कार है (25) जो प्रलय काल में देवता आदि समस्त प्राणियों का भक्षण करके नृत्य करता है आपके उस रूद्रस्वरूप को नमस्कार है (17/मन्त्र 26) विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 17 के श्लोक 11 से 34 तक स्त्रोत के समाप्त हो जाने पर देवताओं ने श्री हरि को हाथ में शंख चक्र, गदा लिए गरूड़ पर आरूढ़ समुख विराजमान देखा (35) देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु ने अपने शरीर से (वचन शक्ति से) एक मायामोह को उत्पन्न किया तथा कहा कि वह माया मोह दैत्यों को वेद मार्ग की साधना से हटा कर मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर देगा। जिस कारण से दैत्य भक्तिहीन हो जाऐंगें तब, तुम देवता उन्हें मार डालना। ऐसा ही हुआ माया मोह ने सर्व दैत्यों (राक्षसों) को वैदिक मार्ग से विचलित करके मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर दिया। कुछ पश्चात् देवता तपस्या करके (बैट्री चार्ज करके) दैत्यों के साथ युद्ध करने के लिए उपस्थित हुए। दैत्यों ने तपस्या करनी त्याग दी थी जिससे उनमें सिद्धी शक्ति नहीं रही। (उनकी बैट्री चार्ज नहीं हुई) इस कारण से देवताओं ने दैत्यों को मार डाला।

उपरोक्त विष्णु पुराण के उल्लेख का निष्कर्ष :-

काल ब्रह्म ने सर्व प्राणियों (देवताओं, ऋषियों, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तथा अन्य प्राणियों) को भ्रमित किया हुआ है। यह स्वयं ही अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) का रूप धारण कर लेता है। उपरोक्त स्तोत्र में देवताओं ने श्री विष्णु की स्तुती करनी चाही है, कर रहे हैं काल ब्रह्म की। वह काल ब्रह्म ही विष्णु रूप धारण करके गरूड़ पर बैठ कर आश्वासन दे गया। अपने वचन से एक व्यक्ति उत्पन्न कर के माया मोह नाम रख कर राक्षसों के पास भेज दिया। जो दैत्यगण तपस्या अर्थात् हठयोग करते थे उससे सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती थी। माया मोह ने वह साधना भी छुड़वा दी जिस से असुर गण सिद्धियों से रहित हो गए। देवता गण भी पहले दैत्यों से युद्ध करने के कारण सिद्धियाँ समाप्त कर चुके थे तथा हार कर जान बचाकर चले गए थें फिर तपस्या की तथा सिद्धियाँ प्राप्त करके असुरों से युद्ध किया तथा विजय पाई। जब देवता गण राक्षसों से हारे थे उस समय दैत्य भी वही साधना (तपस्या अर्थात् हठ योग) करते थे जो देवता करते थे। इससे सिद्ध हुआ कि भक्ति करने से भी देवता, दैत्यों से रद्दी (पिछड़े हुए) थे। क्योंकि राक्षस वही साधना करके देवताओं पर विजय पाए थे जो देवतागण करते थे।

वास्तव में शास्त्रविधि अनुसार साधना न देवता करते थे न दैत्य। केवल काल द्वारा बताई गई तपस्या (जो ब्रह्मा को जन्म के समय आकाश वाणी द्वारा काल ब्रह्म द्वारा कमल के फूल पर बताई थी उस तपस्या) अर्थात् हठ योग को दोनों करते थे। दोनों ही सिद्धियाँ प्राप्त करते थे। जैसे शराब को देवता पीऐ चाहे दैत्य दोनों को ही सरूर होगा। सिद्धियाँ प्राप्त होने पर प्राणी को अभिमान का नशा हो जाता है। फिर आपस में एक दूसरे पर सिद्धियों का प्रयोग करके स्वयं के जीवन को नष्ट कर जाते हैं। यह सर्व काल ब्रह्म द्वारा फैलाया भयंकर जाल है जिसे तत्वज्ञान से ही समझा जा

सकता है तथा इस जाल से निकला जा सकता है।

वर्तमान में कुछ पंथ हैं जो न तो देशी घी की ज्योति लगाने देते हैं न गीता, वेद या स्वसम वेद वाणी का पाठ करने को बताते हैं न वास्तविक नाम जाप को देते हैं। कहते है सन्त कुछ नाम जाप करने को दे दे वही मोक्षदायक है। अढ़ाई घण्टे सुबह तथा कम से कम अढ़ाई घण्टे शाम को हठयोग करने को कहते हैं यह मोक्ष मार्ग नहीं है। ये सन्त काल ब्रह्म द्वारा माया मोह की तरह भेजे गए है। जिन्होंने वह साधना भी छुड़ा दी जिससे स्वर्ग तक जाने की भक्ति तो बनती थी। जैसे प्रतिदिन गीता, वेद या स्वसम वेद (कबीर वाणी या कबीर जी से परिचित सन्तों की वाणी) वाणी के पाठ से ज्ञान यज्ञ का फल मिलता है, तथा देशी घी की ज्योति से हवन यज्ञ का फल मिलता है। दण्डवत् प्रणाम से प्रणाम यज्ञ का फल मिलता है। वे नकली पंथ सुना-सुनाया सतलोक-2 तो कहते है परन्तु सतलोक में सतपुरूष निराकार बताते है। वहां प्रकाश ही प्रकाश है आनन्द ही आनन्द है। आत्मा भी उस प्रकाश में ऐसे समा जाती है जैसे समुन्द्र में बून्द समा जाती है। ऐसा व्यर्थ ज्ञान अनुयाईयों को बता कर कहते हैं चलो सतलोक में वहाँ आनन्द ही आनन्द है। विचार करें किसी लड़की को कोई मूर्ख कहे तेरी सगाई अमूक गाँव में कर दी है। वहाँ तेरा पति निराकार है। तेरे पति के घर में प्रकाश ही प्रकाश है, पति साकार नहीं है, वहाँ विवाह कराके जा, लड़की वहां आनन्द ही आनन्द है। उस मूर्ख से पूछे पति साकार नहीं है तो उस कन्या का क्या उत्साह होगा विवाह करने व बिना पति वाले घर जाने का? कोई उमंग नहीं हो सकती।

ठीक इसी प्रकार जो गुरू जन सतपुरूष अर्थात् परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा कहते है कि केवल प्रभु का प्रकाश ही देखा जा सकता है। वे भ्रमित कर रहे हैं उनको कोई ज्ञान नहीं है उनको परमात्मा प्राप्ति भी नहीं हुई है। उनसे कोई पूछे तुम कहते हो कि सतपुरूष (अविनाशी परमेश्वर) का केवल प्रकाश देखा जा सकता है क्योंकि सतपुरूष (सच्चा परमेश्वर) तो निराकार है। जैसे कोई अन्धा कहे कि सूर्य तो निराकार है उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है । सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा? जब सूर्य निराकार है तो प्रकाश काहेका? इसी प्रकार जो ज्ञान नेत्रहीन सन्त, ऋषि, महर्षि परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा परमात्मा को सूर्य तुल्य प्रकाशमान कहते हैं तथा परमात्मा का प्रकाश देखा कहते है। वे सनीपात के ज्वर के रोगी की तरह बरड़ा रहे हैं उन्हें यही नहीं पता वे क्या बोल रहे हैं। वे सर्व काल ब्रह्म के द्वारा भेजे गए मोहमाया जैसे भ्रमित करने वाले दूत है। जिन्होंने भोली आत्माओं को उल्टा पाठ पढ़ा कर दिशाभ्रष्ट कर दिया है।

➡ प्रश्न :- धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वरजी! ऋषि वशिष्ठ जी के विषय में सुना है वे बड़े सहनशील व ज्ञानी महापुरूष थे। सुना है कि विश्वामित्र ने उनके सौ पुत्रों को मार डाला था। फिर भी उन्होंने श्राप नहीं दिया?

उत्तरः-कबीर परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! वशिष्ठ ऋषि ने ऋषि विश्वामित्र को श्राप इसलिए नहीं दिया यदि वशिष्ठ जी श्राप देते तो विश्वामित्र जी भी श्राप देते। दोनों ही सिद्धी प्राप्त (विषैले सर्प तुल्य) थे। विश्वामित्र राजा भी थे इस कारण से वशिष्ट जी ने झगड़ा करने के लिए भी अपने को असमर्थ समझा। इस कारण संयम व आधीनी से काम लिया।

✣ श्री विष्णु पुराण चतुर्थ अंश के अध्याय 5 श्लोक 1 से 10 पृष्ठ 252 पर लिखा है कि राजा

इक्ष्वाकु के निमि नामक पुत्र ने एक हजार वर्ष तक चलने वाला यज्ञ करने के विचार से सर्व सामान तैयार कर लिया। ऋषि वशिष्ठ कुल गुरू से यज्ञ में ऋत्वक् होने की प्रार्थना की। ऋषि वशिष्ठ ने कहा मैं पहले पांच सौ वर्षो तक चलने वाला यज्ञ इन्द्र का करूगां पश्चात् आपका यज्ञ करूंगा। यह कह कर वशिष्ठ ऋषि इन्द्र का यज्ञ करने चले गए। राजा निमि ने गौतम ऋषि को होता वरण करके यज्ञ प्रारम्भ किया। वशिष्ठ जी इन्द्र का यज्ञ करके राजा निमि के घर लौटा तो गौतम ऋषि को होता का कार्य करते देख अपना अपमान जान कर ऋषि वशिष्ठ ने राजा निमि को श्राप दे दिया कि तेरी देह नष्ट हो जाए अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हो। उस समय राजा निमि सोए हुए थे। राजा सोकर उठा तो पता चला कि ऋषि वशिष्ठ ने मृत्यु का श्राप दिया है। मुझ से कारण जाने बिना ही शाप दिया है मैं भी इस दुष्ट गुरू को शाप देता हूँ ऋषि वशिष्ठ की देह नष्ट हो जाए। इस प्रकार गुरू और शिष्य दोनों एक दूसरे को शाप देकर नष्ट हो गए।

हे धर्मदास! तत्वज्ञान हीन व्यक्ति चाहे ऋषि है चाहे राजा या देवता बना है। वह स्वार्थवश कुछ भी उपद्रव कर सकता है। जो व्यक्ति काल ब्रह्म प्रेरणा से शास्त्रविधि विरूद्ध तपस्या आदि करते हैं वे सिद्धियाँ (चमत्कारी शक्तियाँ) प्राप्त कर लेते हैं। सिद्धी प्राप्त प्राणी विषैले सर्प तुल्य होता है। थोड़े से ही कारण से शाप रूपी डंक मार देता है। राजा निमि पूर्व जन्म की भक्ति तपस्या से सिद्धी लिए था। ऋषि वशिष्ठ पूर्व जन्म तथा इस जन्म की भक्ति तपस्या से सिद्ध प्राप्त था। ऋषि वशिष्ट की आत्मा मित्रा वरूण के शरीर में वीर्य में प्रवेश कर गई। एक दिन एक उर्वशी को देखने से उसका (मित्रावरूण) का वीर्य स्खलित हो गया। उससे वशिष्ठ ऋषि को पुनः शरीर प्राप्त हुआ।

नोटः- देवी पुराण में मित्रा-वरूण दो ऋषि लिखे हैं। एक उर्वशी को देखकर दोनों का वीर्य स्खलित हो गया दोनों ने बारी-2 उठ कर एक घड़े में वीर्य त्याग किया। वहाँ दो लड़के उत्पन्न हुए एक अगस्त ऋषि हुए तथा दुसरे वशिष्ठ हुए दोबारा मानव शरीर प्राप्त हुआ।

इसलिए हे धर्मदास ! पूर्ण सन्त का मिलना अति दुर्लभ है।

गरीब, गोरख से ज्ञानी घने, सुखदेव जति जिहान।
सीता सी बहु भार्या, सन्त दूर अस्थान।
कोट्यों मध्य कोई नहीं रै झूमकरा, अरबों मैं कोई गरक सुनों राई झूमकरा।

भावार्थ :- गोरख नाथ जैसे ज्ञानी बहुत मिल जाऐंगे, (कबीर परमेश्वर जी की शरण में आने के पश्चात् श्री गोरखनाथ जी को कुछ ज्ञान प्राप्त हो गया था) सुखदेव ऋषि जैसे जति (यति पुरूष) भी बहुत संख्या में मिल जाऐंगे, सीता जैसी सुशील पत्नी भी बहुत संख्या में मिल जाऐंगी परन्तु पूर्ण सन्त का मिलना अति दुर्लभ है।

पूर्ण सन्त करोड़ों सन्तों में नहीं मिलेगा। अन्य को भोली जनता सन्त कहती है परन्तु उन नकली अरबों सन्तों में कोई पूर्ण सन्त मिलेगा। धर्मदास ने कहा हे बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर! आपने तो मेरे अज्ञान रूप मोतिया बिन्द को समाप्त कर दिया। आपका दास महा अज्ञानी था आपने मुझ दास की आँखे खोल दी। हे प्रभु सर्व संसार को अज्ञान रूपी मोतिया बिन्द हुआ है। आप के अतिरिक्त ऐसा निर्णायक ज्ञान किसी ने नहीं बताया। परमेश्वर कबीर जी बोले हे धर्मदास! किसी को पता ही नहीं, बताएगा कौन? अपनी महिमा बताने मैं आप ही आता हूँ।

शब्द:- मेरे साधो भाई मोहे सब जग भूला पाया (टेक)
इसी भूल में ब्रह्मा भूला जिसने बेद सरसाया।
बेद पढ़ कर पंड़ित भूला, मरम भेद ना पाया।(1)
इसी भूल में विष्णु भूला, जिसने वैष्णव धर्म चलाया।
तीर्थ व्रत का बाँध महातम, बहुविध जीव फंसाया। (2)
इसी भूल में शंकर भूले जिसने भिक्षुक पंथ बनाया।
सिर पर जटा हाथ में खप्पर घर–2 अलख जगाया। (3)
इसी भूल में भूले मुहम्मद जिसने न्यारा धर्म चलाया।
परत्रिया संग फिरा भटकता लिंग और मूछ कटाया। (4)
इसी भूल में भूले मच्छन्द्र, जिसने सिंगल द्वीप बसाया।
विषय वासना के वश होकर अपना योग नशाया। (5)
कह कबीर सुनो धर्मदासा इस भूल का भेद हाथ ना आया।
जिसको मिल गया भेद भूल का वह गर्भवास ना आया। (6)

उपरोक्त शब्द का भावार्थ:-

परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने अपने प्यारे भक्त धर्मदास को बताया हे धर्मदास! जिस समय मैं इस काल ब्रह्म के लोक में आया तो सर्व संसार तत्वज्ञान से अपरिचित मिला। तत्वज्ञान के अभाव से विष्णु ने अपने आप को सर्वोच्च परमात्मा मान कर अपने मत अनुसार साधना का प्रचार करा दिया। जैसे सुखदेव ऋषि ने स्वर्ग से आकर दिल्ली में एक चरण दास नामक सन्त को ज्ञान दिया जिसने वैष्णव पंथ का प्रचार किया। चरण दास परम्परा में एक गुमानी दास सन्त हुए हैं। उस गुमानी दास वैष्णव सन्त का शिष्य नितानन्द (नन्दलाल तहसीलदार) हुए है जिनका गाँव माजरा, बिगोवा, बास की सीमा पर जटैला जोहड़ नामक आश्रम प्रसिद्ध है। इसी प्रकार ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ाया परन्तु तत्व ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ केवल मनमुखी साधना करते-कराते रहे। इसी प्रकार शिव ने अपने संदेश वाहक संसार में भेज कर गिरी, पुरी, नाथ आदि भिक्षा मांग कर खाने वाले पंथ प्रारम्भ कर दिए।

हजरत मुहम्मद ने भी काल ब्रह्म प्रेरणा से भिन्न धर्म की स्थापना कर दी। गोरखनाथ के गुरू मच्छंद्र नाथ ने अपना शरीर त्याग कर एक मृत राजा के शरीर में प्रवेश किया। उसकी पत्नी से संभोग किया। उससे सिंगल द्वीप में मच्छंद्र के जीव द्वारा राजा के शरीर से उत्पन्न बच्चों की परम्परा चली। परन्तु तत्वज्ञान उपरोक्त किसी का नहीं है। सर्व काल ब्रह्म की प्रेरणा से ही भक्ति क्रियाऐं कर रहे हैं। जिस व्यक्ति को सम्पूर्ण तत्वज्ञान हो गया जो पूर्ण परमात्मा से परिचित हो गया वह तो केवल जन्म-मरण से छूटने का ही प्रयत्न करता है। वह इस संसार की किसी वस्तु की इच्छा नहीं करता। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में है।

''परमेश्वर का तीन युगों में थोड़े जीव पार करने का वचन देना''

प्रश्न :-परमात्मा का काल लोक में आना तथा काल ब्रह्म द्वारा वचन बद्ध करके तीन युगों (सत्ययुग, त्रेतायुग तथा द्वापर युग) में थोड़े ही जीव काल जाल से निकालने तथा कलयुग में

जितने चाहे जीव मुक्त कराने का वर प्राप्त किया। क्या परमेश्वर को पता नहीं था कि काल ब्रह्म क्या मांगने जा रहा है। यदि परमेश्वर को ज्ञान नहीं था तो सर्वज्ञ नहीं हुए। यदि ज्ञान था तो वर किस लिए दिए?

उत्तर :- (लेखक द्वारा) सतयुग में महापुण्यात्माओं का जन्म होता है। पृथ्वी पूर्ण रूप से प्रदूषण मुक्त होती है। फलदार वृक्षों की भरमार होती है। अत्यधिक वन होने के कारण आक्सिजन की अधिकता वाली वायु चलती है। मानव शरीर अति स्वस्थ रहता है। मानव की आयु, लाखों वर्ष की सत्ययुग के प्रारम्भ में होती है। आपसी भाई चारा, प्रेम, दूसरे के दुःख को अपना दुःख मानना। उस समय के मानव का स्वभाव होता है। चोर, डाकू, परस्त्रीगमन करने वाले नाम मात्र ही सत्ययुग के अन्त में होते हैं। स्त्री से पहले पति की मृत्यु सत्ययुग में नहीं होती। पिता से पहले पुत्र की मृत्यु नहीं होती। सर्व मानव समाज परमात्मा से डरने वाला, पाप-पुण्य पर गहन विचार करके कार्य करने वाला होता है तथा अधिक समय परमात्मा के भजन-स्मरण व वेदों के अध्ययन में ही व्यतीत करता है। पूर्वजन्म में किए भक्ति अभ्यास से प्रत्येक व्यक्ति (स्त्री व पुरूष) समाधिस्थ होता है। कई वर्षों तक बिना खाए-पीए ही समाधी द्वारा ऊपर के लोकों के दृश्य यहाँ बैठे देखते रहते हैं। नाम का जाप न करके अधिक समय समाधी में व्यतीत करते हैं। जिस कारण से उनको तपस्या का फल प्राप्त होता है। तप से राज्य प्राप्त होता है। राज्य भोग कर फिर नरक को वह व्यक्ति प्राप्त होता है। यह काल ब्रह्म के जाल का सुनियोजित चक्र है। जो व्यक्ति पृथ्वी पर बैठा स्वर्ग लोक के नृत्य देख लेता है जो धर्मराज के दरबार से भी अन्य सूचना प्राप्त कर लेता है तो वह व्यक्ति अपनी साधना को सर्वोत्तम मान बैठता है। ऐसी स्थिती सत्ययुग के प्रारम्भ में प्रत्येक मानव की होती है। उनमें सिद्धियाँ भी अन्य युगों के प्राणियों से अधिक होती हैं। इस कारण से तत्वज्ञान को ग्रहण नहीं करते।

त्रेता युग में उत्पन्न प्राणी सत्ययुग के प्राणियों से कम पुण्य वान होते हैं। त्रेता युग में भी सर्व मानव समाज परमात्मा से डरने वाला भक्ति करने वाला होता है। भक्ति शक्ति व सिद्धियाँ भी बहुत व्यक्तियों में होती हैं। त्रैतायुग के प्रारम्भ में मानव की आयु दस हजार वर्ष होती है। परमात्मा की भक्ति करने में पूर्ण विश्वास करते हैं। इस युग में भी प्राणी अधिक दुःखी नहीं होते परन्तु त्रेतायुग में मानवता में कुछ गिरावट आ जाती है अपनी साधना पर अतिदृढ़ रहते हैं। जो साधना करते हैं उसी से मानते हैं हमें लाभ हो रहा है। वास्तव में वह लाभ पूर्व जन्म के पुण्यों के संयोग से होता है वे मान लेते हैं कि जो साधना हम कर रहे हैं यह सुख इसी का प्रतिफल है।

उदाहरण :-यह दास (लेखक रामपाल दास) सर्व साधना शास्त्रविधि के विपरीत किया करता था। परन्तु जो लाभ होता तो मानता था कि इसी भक्ति के प्रतिफल से हो रहा है। जैसे परीक्षा में उत्तीर्ण होना, लड़का उत्पन्न होना, नौकरी मिलना आदि को अपनी भक्ति साधना के प्रतिफल ही मानता था। अब तत्व ज्ञान की प्राप्ति होने के पश्चात् पता चला कि जो भक्ति करता था। उससे कोई लाभ होने वाला नहीं था। इस कारण से त्रेता युग के प्राणी भी तत्वज्ञान ग्रहण नहीं करते हैं। फिर भी कुल संख्या तत्वज्ञान ग्रहण करने वालों की बहुत कम होती है। द्वापर युग में मानव त्रेता से भी कम पुण्यों युक्त होते हैं। विकारी भी अधिक हो जाते हैं। परमात्मा की भक्ति करने में विश्वास तो रखते हैं परन्तु विलास के भी सर्व साधनों का प्रयोग करते है। जैसे बहुपत्नी, जुआ खेलना,

मदीरा पीना आदि विकार कुछ व्यक्ति प्रारम्भ कर देते हैं।

उपरोक्त युगों की तरह इस द्वापर युग में भी साधक अपनी साधना जो शास्त्रविरूद्ध होती है को लाभदायक मानकर करते रहते हैं परन्तु वास्तव में वह पाप विनाशक, कष्ट निवारक नहीं होती। जैसे आप ने पूर्वोक्त उल्लेख में पढा कि श्री कृष्ण जी ने पाण्डवों को जो कष्ट निवारक (पाप कर्म नाशक) भक्ति विधि बताई थी वह कोई काम नहीं आई। द्वापर युग में भी व्यक्ति तत्वज्ञान को बहुत ही कम ग्रहण करते हैं। परन्तु उपरोक्त दोनों युगों से अधिक मात्रा में तत्वज्ञान ग्रहण करते हैं। फिर भी बीच में विचलित हो जाते हैं क्योंकि शास्त्रविरूध साधना करने वाले अधिक मात्रा में होते हैं। इस कारण से सत्य साधना करने वाले अपना विश्वास खो बैठते हैं। सत्य साधना कुछ वर्ष करके त्याग देते हैं। दो-चार प्राणी ही पूर्ण आयु विश्वास के साथ लगे रहते हैं तथा मोक्ष प्राप्त करते हैं। द्वापर युग के प्रारम्भ में मानव की आयु एक हजार वर्ष होती है। कलयुग में भी सर्व परमात्मा को मानने वाले होते हैं। काल ब्रह्म अपने भक्ति ज्ञान दूत भेज कर कई प्रकार के धर्मों का उत्थान करा देता है।

सर्व धर्मों के श्रद्धालु अपने-2 धर्म के धार्मिक कार्यों को उत्तम मानकर दूसरों के धार्मिक कार्यों में दोष निकालते रहते है। आपसी झगड़े भी धर्म के कारण करके समाज में अशान्ति फैलाते रहते हैं। कलयुग में जिन प्राणियों का जन्म होता है वे सतयुग, त्रेता, द्वापर युग में अपनी पुण्य कमाई को समाप्त करके पुण्यहीन हो जाते हैं। आपत्तियाँ पग-पग पर आती रहती है। शरीर भी किसी न किसी रोग से युक्त होता है। सर्व मानव समाज किसी न किसी रोग की चपेट में अवश्य रहता है। जो साधना कलयुग के साधक कर रहे होते हैं उससे उन्हें कोई लाभ नहीं होता। उनके पूर्व जन्म के पुण्य शेष नहीं होते तथा जो साधना वे कलयुग के श्रद्धालु करते हैं। वह शास्त्र विधि विरूद्ध होती है। जिस कारण उनका कोई कष्ट निवारण नहीं होता। न वांच्छित कार्य ही सिद्ध होता है। कुछ समय उपरान्त साधक का परमात्मा से विश्वास उठ जाता है। वह विकार करने लग जाता है। चोरी, डाके या ठगी का सहारा लेकर धनी बनना चाहता है। अवैध विधि से धन इक्टठा करता है तो पाप का भागी हो जाता है। अवैध विधि से जोड़ा धन स्थाई नहीं होता। भाग्य से अधिक प्राणी रख नहीं सकता। वह धन या तो रोग की चिकित्सा में खर्च होगा या चोरी हो जाएगा या कोई मित्र लेकर वापिस नहीं देगा शत्रुता को जन्म देगा या कन्या के विवाह में अधिक खर्च करके प्रतिष्ठा बनाएगा। कई बार देखा है विवाह के कुछ समय पश्चात् लड़की की मृत्यु हो जाती है वह धन किसी काम नहीं आता।

इस प्रकार वह अवैध विधि से जोड़ा धन तो रहा नहीं जो उस धन को प्राप्त करने में अपराध हुए वे शेष रह जाते हैं। उनको भोगने के लिए कुत्ते-गधे की योनी प्राप्त होती है। कुत्तों को देखा है खाज लगी होती है। सिर में चोट लगने से घाव में कीड़े चल रहे होते हैं। पिछले पैरों को अधरंग हो जाता है। अगले पैरों के सहारे वह अपराधी चलता है पिछले पैर घीसड़ रहे होते हैं।

कलयुग में पूर्ण परमात्मा अन्य युगों की भाँति तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करने आता है। वह शास्त्रविधि अनुसार सत्य साधना का ज्ञान देता है। जो श्रद्धालु अपनी परमपरागत साधना से लाभ प्राप्त नहीं कर पाता है। जब वह पूर्ण परमात्मा की भक्ति तत्वदर्शी सन्त के बताए अनुसार करता है तो तुरन्त लाभ होता है। वह श्रद्धालु तुरन्त पूर्ण परमात्मा के तत्वज्ञान को ग्रहण कर लेता है। इस

कारण से कलयुग में परमेश्वर के मार्ग को अधिक प्राणी ग्रहण करते हैं तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते है। इसलिए कबीर परमेश्वर ने काल ब्रह्म को वर दिया था कालब्रह्म ने प्रार्थना की थी कि तीनों युगों, सत्ययुग, त्रैता युग, द्वापर युग में थोड़े जीव पूर्ण प्रभु की शरण में जाऐं कलयुग में जितने चाहे उतने प्राणी आपकी (पूर्ण परमात्मा की) शरण में जाऐं मुझे कोई विरोध नहीं। काल ब्रह्म ने सोचा था कि कलयुग तक सर्व मानव को शास्त्रविधि त्याग कर मनमाने आचरण (पूजा) पर अति आरूढ़ कर दूंगा। देवी-देवों की पूजा व मन्दिर, मसजिद, चर्च, गुरुद्वारों तथा मूर्ति पूजा व तीर्थ स्नान पितर व भूत पूजा आदि पर ही आधारित कर दूँगा।

जिस समय कलयुग में पूर्ण परमात्मा का भेजा हुआ तत्वदर्शी सन्त आएगा वह शास्त्रविधि अनुसार साधना करने को कहेगा। पूर्व वाली पूजा को बन्द करने को कहेगा तो भ्रमित भक्त समाज उस तत्वदर्शी सन्त के साथ झगड़ा करेगा। इस कारण से कलयुग में किसी भी प्राणी को पूर्ण परमात्मा के तत्वज्ञान की प्राप्ति नहीं हो पाएगी। वह तत्वदर्शी सन्त झखमार कर रह जाएगा। परन्तु पूर्ण परमात्मा को ज्ञान था कि कलयुग में प्राणी महादुःखी हो जाऐंगे। जो साधना वे कर रहे होगें वह शास्त्रविधि के विरूद्ध होने के कारण लाभदायक नहीं होगी। मेरे द्वारा या मेरे अंश (वंश) तत्वदर्शी सन्त द्वारा बताई जाने वाली साधना से वे दुःखी प्राणी महासुख प्राप्त करेंगे। उनके सुखों को देखकर अन्य व्यक्ति भी खिंचे चले आऐंगे। यह तत्वज्ञान विशेषकर उस समय कलयुग में प्रकट किया जाएगा जिस समय सर्व मानव (स्त्री-पुरूष) शिक्षित होगा। जिन शास्त्रों को आधार बताकर उस समय के काल ब्रह्म के प्रचारक उन्हीं शास्त्रों में लिखे उल्लेख के विपरित दन्तकथा (लोकवेद) सुना रहे होंगे तो तत्वज्ञान को जानने वाले शिक्षित व्यक्ति उन ग्रन्थों (पुराणों, वेदों व गीता आदि ग्रन्थों) को स्वयं पढ़कर निर्णय लेगें। जो तत्वदर्शी सन्त द्वारा बताया ज्ञान सर्व सद्ग्रन्थों से मेल करेगा तथा उन काल ब्रह्म के प्रचारकों का लोक वेद सद्ग्रन्थों के विपरित पाएगा तो सर्व बुद्धिमान व्यक्ति तत्परता के साथ शास्त्र विधि विरूद्ध साधना को त्याग कर हमारी शरण में आऐंगे तथा शास्त्र विधि अनुसार भक्ति ग्रहण करके मोक्ष को प्राप्त होंगे। इस प्रकार पूरे विश्व में तत्वज्ञान (कबीर परमेश्वर का ज्ञान) ही कलयुग में रहेगा अन्य लोकवेद अर्थात् अज्ञान नष्ट हो जाएगा।

कबीर, और ज्ञान सब ज्ञानड़ी, कबीर ज्ञान सो ज्ञान।
जैसे गोला तोब का, करता चले मैदान।।

वह समय वर्तमान में (सन् 2006 में) चल रहा है तत्व ज्ञान का सूर्य उदय होने वाला है। सूर्य उदय होने से कुछ ही समय पूर्व जो प्रकाश होता है। तत्वज्ञान प्रचार रूपी प्रकाश हो चुका है। शीघ्र ही यह तत्वज्ञान रूपी सूरज का प्रकाश विश्व में फैलेगा। सर्व मानव समाज सुखी होगा। आपसी प्रेम बढ़ेगा। धन जोड़ने की हाय तौबा नहीं रहेगी। सर्व मानव समाज विकार रहित होगा। पूर्ण परमात्मा की आजीवन भक्ति करने वाले पूर्ण मोक्ष प्राप्त करके सत्यलोक में चले जाऐंगे। धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ ने बताया हे धर्मदास ! वैसे तो मैं पृथ्वी पर अनेकों बार प्रकट होता हूँ। परन्तु एक मानव सदृश जीवन पृथ्वी पर निवास करके प्रत्येक युग में तत्व ज्ञान (स्वसम वेद) को प्रकट करता हूँ। वर्तमान में (सन् 1398 से सन् 1518 तक) में तत्व ज्ञान को लीपीबद्ध कराने तथा समर्थ की समर्थता का प्रमाण देने के लिए निवास कलयुग में कर रहा हूँ। यह तत्वज्ञान उस समय

तक छुपा कर रखना है जिस समय बिचली पीढ़ी प्रारम्भ होगी (बीसवीं सदी के मध्य सन् 1950 से तथा संवत् अनुसार इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ से होगी) उस समय मेरा ज्ञान प्रचारक हमारा अंश (वंश) उत्पन्न होगा। उसका जन्म बीसवीं शदी के मध्यम में (सितम्बर सन् 1951 में) होगा उसमें और मुझ में कोई भिन्नता नहीं होगी। मैं सर्वदा उस अपने दास के साथ रहूँगा। वह मेरा ही स्वरूप होगा। जो बारहवें पंथ अर्थात् गरीबदास पंथ का अनुयाई होगा। वह तेरहवां अंश (वंश) होगा। जो सर्व पंथों को समाप्त करके एक परमेश्वर (मेरा) पंथ चलाएगा। बारहवें पंथ के प्रवर्तक सन्त गरीबदास द्वारा मेरी महिमा की वाणी प्रकट होगी परन्तु निर्णायक ज्ञान नहीं होगा। वे बारह पंथों के अनुयाई मेरा ही गुणगान करेगें परन्तु तत्वज्ञान के अभाव से असंख्य जन्म में भी स्थाई स्थान अर्थात् सत्यलोक में वास नहीं कर सकेगें वे काल प्रेरित होगें।

धर्मदास तोहे लाख दुहाई, सार ज्ञान कहीं बाहर न जाई।
सार ज्ञान तब तक छिपाई, जब तक द्वादश पंथ न मिट जाई।।

{कबीर सागर, कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) पृष्ठ 1870}

उपरोक्त चौपाईयों का भावार्थ है कि कबीर परमेश्वर जी अपने प्रिय भक्त धर्मदास जी को विशेष निर्देश दे रहे हैं कि हे धर्मदास। तुझे लाख सौगंध है कि आप इस तत्व ज्ञान को तेरे और मेरे अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं समझाना। इसे लीपीबद्ध कर ले। आप के वंश में तथा अन्य बारह पंथ काल ब्रह्म इसी ज्ञान के आधार से चलाएगा। परन्तु मेरी कृपा से कोई भी इस तत्वज्ञान को यथार्थ रूप से न समझ पाऐंगे। वे अपनी-2 समझ से इसका विपरीत अर्थ लगा कर एक दुसरे से वाद-विवाद करते रहेगें अपना-2 मत चलाकर भ्रमित रहेगें। यदि आप किसी को यह तत्वज्ञान बताओगे वह तुरन्त समझ जाएगा तथा यह तत्व भेद को समय से पूर्व काल ब्रह्म के दूतों के हाथ लग जाएगा। जिस समय बिचली पीढ़ी प्रारम्भ होगी तब ज्ञान भी भिन्न न होने के कारण काल ब्रह्म का दाव लग जाएगा। कोई जीव हमारी शरण न आ पावेगा। इसलिए यह तत्वज्ञान तब तक गुप्त रखना है। मेरा तत्वज्ञान अन्य लोक वेद अर्थात् अज्ञान को ऐसे नष्ट कर देगा जैसे तोप यन्त्र का गोला जहाँ भी गिरता है। वहाँ की सर्व भवनों व किलों को ढहाकर मैदान कर देता है।

वर्तमान समय (सन् 2006) तक काल के सर्व पंथ चल चुके हैं। वे पंथ प्रवर्तक क्या ज्ञान बताते हैं? वह उनके द्वारा लिखी पुस्तकों में विद्यमान है। बुद्धिमान वा शिक्षित व्यक्ति तुरन्त तत्वज्ञान की तुला में तोल कर देख लेगा तथा उस काल ब्रह्म के हानिकारक पंथ को त्याग कर परमेश्वर की शरण में अविलम्ब आएगा तथा अपने सम्पर्क के सर्व श्रद्धालुओं का भी काल ब्रह्म के जाल से मुक्त कराने हेतु परमेश्वर का यथार्थ भक्ति मार्ग प्राप्त कराएगा। इस प्रकार मानव सत्यभक्ति करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा तथा अपने पूर्व वाले स्थान सत्यलोक में अमर जीवन प्राप्त करेगा।

भक्त धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर जी ने बान्धवगढ़ भेज दिया तथा कहा मैं आप के पास आऊंगा कुछ दिन वहाँ रहकर ज्ञान प्रचार करूंगा कुछ दिन पश्चात् बान्धवगढ़ में प्रकट हुए।

''धर्मदास के पुत्र नारायण दास का कालदूत का रूप दिखाना''

धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी को अपने घर पर आया देख अति श्रद्धा से सत्कार किया। अपने पुत्र नारायण दास से कबीर देव से नाम दिक्षा लेने की प्रार्थना की। नारायण दास ने धर्मदास

जी से कहा हे पिता जी! आप कैसी बातें कर रहे हो? श्री कृष्ण जी से ऊपर कोई परमात्मा नहीं है। आप को इस साधु ने भ्रमित कर रखा है। कोई सतपुरूष अन्य परमात्मा नहीं, श्री विष्णुलोक को ही सेत (श्वेत) लोक कहते हैं। श्री विष्णु ही अविनाशी परमात्मा हैं। इनके कोई माता-पिता नहीं है। धर्मदास जी ने देखा मेरा पुत्र काल के मुख में जाएगा पुत्र मोह वश बार-2 अपने पुत्र नारायण दास को समझाने की कोशिश की। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ से भी प्रार्थना की है प्रभु! कृप्या आप ही कुछ समझाओ यह तो बहुत ही हठ कर रहा है। परमात्मा कबीर जी के समझाने से भी नारायण दास नहीं माना तो धर्मदास ने अति प्यार से नारायण दास को मनाना चाहा परन्तु नारायण दास टस से मस नहीं हुआ तथा कहा कि यह सन्त मुझे अच्छा नहीं लगता। इसने मेरे पिता को यथार्थ ज्ञान से विचलित करके मनमुखी कथाओं पर आरूढ़ कर दिया है। धर्मदास जी को अति परेशान देख कर परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को अपने पास बुलाया तथा कहा हे धर्मदास! नारायण दास की ओर ध्यानपूर्वक देख। ऐसा कहकर कबीर प्रभु ने अपना दायाँ हाथ आर्शीवाद देने की स्थिति में नारायण दास की ओर किया। उसी समय नारायण दास का चेहरा भयंकर दिखाई दिया। फिर वैसा ही हो गया जो नारायण दास का था। धर्मदास ने परमेश्वर से विनयपूर्वक पूछा हे परमेश्वर मेरे पुत्र का यह ऐसा भयंकर स्वरूप कैसे दिखाई दिया। परमेश्वर कबीर जी ने बताया हे धर्मदास! आप मेरे अंश हो काल ब्रह्म ने अपना दूत आप के घर पहले ही पुत्र रूप में भेज रखा है। आप को पुत्र मोह में फंसा कर अपने जाल में ही रखना चाहता है। धर्मदास जी अपने पुत्र को काल दूत देखकर अति व्याकुल हो गए। नारायण दास से कहा ठीक है बेटा जैसे तेरी इच्छा, करले काम ! धर्मदास जी को अपना वंश नष्ट होने की चिन्ता सताने लगी। धर्मदास जी को चिन्तित देखकर कबीर परमेश्वर ने पूछा धर्मदास! किस कारण से चिन्तित हो? धर्मदास जी ने बताया हे परमेश्वर ! मेरा तो वंश काल का कुल होगा। मेरा वंश नष्ट हो जाएगा। कबीर परमेश्वर ने कहा धर्मदास। आप चिन्ता मत करो। तेरा वंश ब्यालीस पीढ़ी तक चलेगा जो मेरा गुणगान करेगा। तब धर्मदास ने पूछा हे बन्दी छोड़! मेरा तो इकलौता पुत्र है नारायण दास। यह काल का दूत है। मेरी बियालिस पीढ़ी कैसे होंगी, तब कबीर परमेश्वर जी ने कहा आपको एक पुत्र मेरी कृपा से प्राप्त होगा जिससे तेरा बियालिस पीढ़ी तक वंश रहेगा। धर्मदास जी ने विनम्र होकर पूछा हे दीनदयाल! आप के दास की आयु 60 वर्ष हो चुकी है। नारायण दास के पश्चात् कोई सन्तान नहीं हुई। आपकी शिष्या आमनी देवी का मासिक धर्म भी वर्षो से बन्द है। इस स्थिती में बच्चा उत्पन्न होना अति असम्भव है।

परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी के भ्रम को निवारण करने के लिए अपनी शक्ति से एक नवजात शिशु आंगन में लेटा हुआ दिखाया तथा कहा कि यह लड़का दसवें महिने तेरी पत्नी के गर्भ से उत्पन्न होगा। इसका नाम चूरामणी (चूड़ामणी) रखना। वह बच्चा अन्तर्धान हो गया। आमिनी देवी को गर्भ रहा तथा दसवें महीने एक सुन्दर लड़का उत्पन्न हुआ। जिसका नाम चूड़ामणी रखा। नारायण दास अपने छोटे भाई चूड़ामणी से द्वेष रखने लगा। चूड़ामणी बान्धव गढ़ छोड़ कर कुदरमाल गाँव में रहने लगा। कुछ समय पश्चात् बांधवगढ़ पूरा नगर नष्ट हो गया। नारायण दास ने बांधवगढ़ में श्री कृष्ण मन्दिर बनवा रखा था। नारायण दास का सर्व कुल व पंथ नष्ट हो गया। चूड़ामणी जी से धर्मदास का वंश चला जो बियालिस पीढ़ी तक चलेगा।

विशेष विचार :- उसी वंश की शाखा दामाखेड़ा (मध्यप्रदेश) में है। जो झूठा दावा करते हैं कि कबीर परमेश्वर जी ने कहा था कि केवल धर्मदास जी के वंश द्वारा उपदेश प्राप्त करके कलयुग में मोक्ष प्राप्त कर सकेंगे। जब तक धर्मदास का वंश चलेगा। तब तक मैं (कबीर जी) पृथ्वी पर पग (पैर) नहीं रखूंगा। यह दामाखेड़ा वाले महन्तों की मिथ्या भ्रमित करने वाली कहानी है। परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी के अन्तर की चिन्ता को जाना था कि धर्मदास कुल नष्ट होने के कारण अति चिन्तित हो गया है। इसलिए परमेश्वर बन्दी छोड़ जी ने धर्मदास जी का बियालीस (42) पीढ़ी तक वंश चलने का आशीर्वाद दिया था। नाम दान के लिए तो परमेश्वर कबीर जी ने कहा था :-

कबीर, धर्मदास तोहे लाख दोहाई, सार शब्द कभी बाहर न जाई।।
सार शब्द बाहर जो पड़ही। बिचली पीढ़ी हंस न तरही।

फिर कहा है कि :- धर्मदास तोहे लाख दुहाई। सार ज्ञान कभी बाहर ना जाई।
सार ज्ञान बाहर जो परही। बिचली पीढी हंस नहीं तिरही।
तेतीस अरब ज्ञान हम भाषा, सार ज्ञान गुप्त ही राखा।
मूल (सार) ज्ञान तब तक छुपाई। जब तक द्वादश पंथ न मिट जाई।

(प्रमाणः- कबीर सागर अध्याय कबीर चरित्र बोध पृष्ठ 1870 तथा अध्याय कबीर बानी पृष्ठ 136-137 पर तथा अध्याय जीव धर्म बोध में बोध सागर पृष्ठ 1937 पर)

कबीर सागर कबीर बाणी पृष्ठ 134 पर=बारहवें वंश प्रगट हो उजियारा, तेरहवें वंश मिटे सकल अंधियारा।

उपरोक्त वाणी से स्पष्ट होता है कि बीसवीं सदी के मध्य सन् 1950 से प्रारम्भ होने वाली बिचली (मध्यवाली) पीढ़ी से पहले यह सार नाम तथा सारज्ञान (तत्वज्ञान) भी गुप्त रखना है। धर्मदास! तेरे अतिरिक्त इस सारशब्द का जिस से पूर्ण मोक्ष सम्भव है बाहर अर्थात् अन्य को पता नहीं चलना चाहिए। इस सारशब्द तथा सारज्ञान को तब तक छुपा कर रखना है जब तक बारह (द्वादश) पंथ समाप्त न हो जाऐं। जब धर्मदास जी ने सारशब्द अपने वंशजों को भी नहीं बताया तो उनके द्वारा दिए उपदेश से मोक्ष प्राप्त होने का प्रश्न ही नहीं उठता। वे केवल जनता को भ्रमित करके काल जाल में फांस रहे हैं। कबीर सागर में चूड़ामणी जी साहब के पंथ (दामा खेड़ा में चल रहा है) महिमा तो कबीर परमेश्वर की कहते हैं नाम मन्त्र गलत देते हैं। जिसका प्रमाण है उनके द्वारा दिए जाने वाले पाँच नाम (आदि नाम, अजर नाम, अमीनाम, पाताले सप्त सिंधु नाम, आकाशे अदली निज नाम- - - - - - - - - - - - - - -) है।

(वैसे तो सर्व कथित कबीर पंथी एक पूरी कविता नाम दिक्षा में देते हैं जिसमें पांचनामों का वर्णन है जो इस प्रकार है :- सत सुकृत की रहनी रहो अजर अमर गहो सत्य नाम कहे कबीर मूल दिक्षा सत्य शब्द प्रमाण। आदि नाम, अजर नाम, अमीनाम, पाताले सप्त सिंधु नाम यही नाम हंस का काम खुले कपाट पाँजी चढ मूल के घाट भर्म भूत का बांधों गोला। कहे कबीर यही प्रमाण पांच नाम ले हंसा सत्यलोक समान)

जिस से स्पष्ट है कि धर्मदास जी के वंशज गलत नाम दान करते है। कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी से कहा था कि धर्मदास आप अपने बेटे चूड़ामणी को केवल पांच नाम का उपदेश देना (वे पाँच नाम उन नाम मन्त्रों से भिन्न तथा वास्तविक हैं जो दामाखेड़ा वाले महन्त देते हैं वे वास्तविक नाम

यह दास अर्थात लेखक रामपाल दास देता है) ***जिन से तेरे वंशजों में भक्ति भाव बना रहेगा तथा मेरी महिमा सन् 1951 अर्थात् बिचली पिढ़ी (मध्यवाली पीढ़ी जो शब्द वंश होगा) के प्रारम्भ तक संसार में बनी रहेगी। संवत् 1774 में अर्थात् संत गरीब दास गाँव छुड़ानी जि. झज्जर हरियाणा के उत्पन्न होने पर उनके द्वारा मेरी महिमा की वाणी प्रकट की जाएगी। उस वाणी से श्रद्धालुओं को विशेष लगन मुझ (कबीर जी) में होगी। सन्त गरीबदास जी वाला पंथ काल का बारहवां पंथ होगा। बारहवें पंथ तक सर्व बारह पंथों के अनुयाई मेरी महिमा की वाणी के आधार पर अपने अनुयाईयों को प्रवचन किया करेगें परन्तु वे मेरी वाणी को यथार्थ रूप से नहीं समझ सकेंगे क्योंकि उन्हें सार ज्ञान (तत्वज्ञान) नहीं होगा। बारहवें पंथ अर्थात् गरीब दास जी वाले पंथ में आगे चल कर हम ही चल कर आऐंगे अर्थात् कोई मेरा परम सन्त उत्पन्न होगा जो सन्त गरीब दास जी वाले पंथ का अनुयाई होगा तथा मेरी वाणी को यथार्थ रूप में समझेगा। फिर सर्व पंथों को ज्ञान आधार से समाप्त करके केवल एक पंथ ही चलाऐंगे। पूरे विश्व में एक तत्वज्ञान ही चलेगा। कबीर परमेश्वर जी ने कहा था धर्मदास उस समय पृथ्वी पर केवल मेरा ही ज्ञान रह जाएगा अन्य लोक वेद समाप्त हो जाएगा।***

यदि दामाखेड़ा (मध्यप्रदेश) वाले महन्तों की यह बात सत्य नहीं है कि कबीर साहेब जी ने धर्मदास जी से कहा था कि जब तक तेरा वंश पृथ्वी पर रहेगा मैं पृथ्वी पर पग (पैर) नहीं रखूंगा। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी सन् 1518 में मगहर स्थान से सशरीर सतलोक जाने के पश्चात् (1) सन्त दादू साहेब जी को पृथ्वी पर आकर मिले थे सतलोक दर्शन करा कर नाम उपदेश दिया, (2) सन्त घीसा सन्त जी को मिले, (3) सन्त गरीब दास जी को सन् 1727 में मिले तथा उपदेश दिया उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि दामाखेड़ा (मध्यप्रदेश) वाले महन्तों का वह दावा मिथ्या है जिसमें कहा है कि कबीर जी ने कहा था कि जब तक धर्मदास जी का पंथ चलेगा वे (कबीर परमेश्वर जी) पृथ्वी पर प्रकट नहीं होंगे न किसी को नाम दान करेंगे केवल धर्मदास के वंश से ही नाम दान लेना होगा वही मोक्ष मन्त्र देगा। यह सर्वथा गलत और मनघड़ंत कहानी दामाखेड़ा वाले महन्तों ने काल प्रेरणा से श्रद्धालुओं को भ्रमित करने तथा काल जाल में फांसने के उद्देश्य से बनाई है।

परमेश्वर कबीर जी ने तो कहा है कि :-

द्वादश पंथ काल फरमाना, भूले जीव न जायें ठिकाना

(प्रमाणः- कबीर सागर अध्याय कबीर वाणी पृष्ठ 136) उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि उन बारह पंथों में काल का उपदेश अर्थात् नाम दान चलेगा, उन बारह पंथों के जीव वास्तविक भक्ति विधि से अपरिचित होंगे जिस कारण से वे अपने ठिकाने अर्थात् सत्यलोक में नहीं जा सकेंगे।

विशेष विवरणः- पुस्तक ''कबीर सागर'' अध्याय=कबीर चरित्र बोध पृष्ठ स. 1862 से 1865 तक लिखा है कि कलयुग में कबीर साहेब ने चार गुरु नियत किए हैं (1) धर्मदास जी जिसके बियालीस वंश हैं, उत्तर में गुरूवाई सौंपी है। (2) दूसरे चतुर्भज जी दक्षिण में गुरूवाई करेंगे। (3) तीसरे बंके जी पूर्व में गुरूवाई करेंगे। (4) चौथे सहती जी पश्चिम में गुरूवाई करेंगे।

विमर्श :- जिस समय कबीर सागर लिखा गया संवत् 1562 से 1578 (सन् 1505 से 1521 तक) में, उस समय तक केवल एक धर्मदास जी ही प्रकट हुए थे। जब शेष तीन गुरू भी प्रकट हो

जाऐंगे अर्थात् अपने-2 अनुयाईयों को नाम दान देकर भक्ति पर लगाऐंगे तब पूरी पृथ्वी पर केवल कबीर साहेब जी का ही ज्ञान चलेगा। यही प्रमाण कबीर सागर अध्याय ''अनुराग सागर'' में पृष्ठ सं. 104-105 पर है। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि धर्मदास जी के पश्चात् पृथ्वी पर नाम दान देने के लिए तीन अन्य सन्त भी नाम दान देंगे उनके कार्य क्षेत्र भी भिन्न-2 विभाजित किए गए थे। इस से स्पष्ट हुआ कि धर्मदास जी के अतिरिक्त अन्य तीन सन्तों को भी कबीर जी ने कलयुग में नाम दान करने का आदेश दिया था जिनके द्वारा भी जीव उद्धार होगा। उपरोक्त विवरण से भी दामाखेड़ा वाले महन्तों द्वारा बनाई मनघड़ंत कथा गलत सिद्ध हुई कि कलयुग में केवल धर्मदास जी के वंशजों द्वारा ही जीव उद्धार सम्भव है, अन्य कोई अधिकारी परमेश्वर कबीर जी ने कलयुग में नहीं बनाया है।

प्रश्नः- धर्मदास जी ने अपने पुत्र चूड़ामणी जी को वास्तविक पाँच नाम दान किए थे तथा आगे चूड़ामणी जी ने वे ही पाँच नाम दान किस लिए नहीं दिए?

उत्तरः- चूड़ामणी जी के वंशजों अर्थात् दामाखेड़ा वालों द्वारा लिखी पुस्तक ''सुमरण शरण् गह बयालिस वंश'' लेखकः- महंत हरिसिंह राठौर के पृष्ठ 52 पर लिखा है।

वाणी :- सुन धर्मनि जो वंश नशाई, जिनकी कथा कहुँ समझाई (93) काल चपेटा देवे आई, मम सिर नहीं दोष कछु भाई (94) सप्त, एकादश, त्रयोदश अंशा, अरू सत्रह ये चारों वंशा(95) इनको काल छलेगा भाई, मिथ्या वचन हमरा न जाई (96) सब अपनी बुद्धि कहें भाई, अंश वंश सब गए नशाई (101)

भावार्थ :- उपरोक्त वाणी में कबीर परमेश्वर जी ने स्पष्ट किया है की धर्मदास तेरे सातवें वंश को काल छलेगा। उस सातवें वंश के पश्चात् ये पाँच वास्तविक नाम दान करना भी बन्द कर दिए जाऐंगे। शेष ग्यारहवें तेरहवें तथा सत्रहवें वंश के पश्चात् पूर्ण रूप से ज्ञान नष्ट हो जाएगा सर्व अपनी-2 बुद्धि के अनुसार प्रवचन किया करेंगे। इस प्रकार आप के वंशजों से भक्ति तो नष्ट हो जाएगी परन्तु तेरा वंश पूरा बियालिस पीढ़ी तक चलेगा।

"चौदहवीं महंत गद्दी का परिचय" पुस्तक "धनी धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय" पृष्ठ 49 पर तेरहवें महंत दयानाम के बाद कबीर पंथ में उथल–पुथल मची। काल का चक्र चलने लगा। क्योंकि इस परम्परा में कोई पुत्र नहीं था। तब तक व्यवस्था बनाए रखने के लिए महंत काशीदास जी को चादर दिया गया। कुछ समय पश्चात् काशी दास ने स्वयं को कबीर पंथ का आचार्य घोषित कर दिया तथा खरसीया शहर में अलग गद्दी की स्थापना कर दी। यह देख तीनों माताऐं रोने लगी कि काल का चक्र चलने लगा। बाद में कबीर पंथ के हित में ढाई वर्ष के बालक चतुर्भुज साहेब को बड़ी माता साहिब ने गद्दी सौंप दी जो "गृन्धमुनि नाम साहेब" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

विचार करें : एक ढाई वर्ष का बालक क्या नाम व ज्ञान देगा ?

माता जी ने गद्दी पर बैठा दिया। बेटा महंत बन गया। जिसे भक्ति का क-ख का भी ज्ञान नहीं। इस प्रकार भोले श्रद्धालुओं को दंत कथाओं (लोकवेद) के आधार से स्वार्थी सन्त व महंत भ्रमित करके गुमराह कर रहे हैं।

महंत काशी दास जी ने खरसिया शहर में नकली कबीर पंथी गद्दी प्रारम्भ कर दी। उसी खरसिया से एक उदीतनाम साहेब ने मनमुखी गद्दी लहर तारा तालाब पर काशी (बनारस) में चालु कर रखी है। कबीर चौरा काशी में एक गंगाशरण शास्त्री जी भी महंत पद पर विराजमान है। परंतु भक्ति का क-ख भी ज्ञान नहीं है।

उपरोक्त विवरण से प्रभु प्रेमी पाठक स्वयं निर्णय करें कि दामा खेड़ा वाले महंतों के पास वास्तविक भक्ति है या नहीं?

श्री चुड़ामणी जी के कुदरमाल चले जाने के पश्चात् बांधवगढ़ पूरा नष्ट हो गया। आज भी प्रमाण है।

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी को बताया हे धर्मदास! वर्तमान में मैं तत्व ज्ञान को लिपीबद्ध कराने आया हूँ। यह ज्ञान पद्य भाग में लोकोक्तियों, दोहों में वाणी रूप में प्रकट करूंगा। जब बिचली (मध्यावाली) पीढ़ी प्रारम्भ होगी उस समय बारहवें पंथ (सन्त गरीबदास) का अनुयाई बन कर जो मेरा तेरहवाँ वंश (अंश) तत्वज्ञान प्रचार करेगा। वह इस पद्य भाग का गद्य भाग में यथार्थ अनुवाद करेगा। उस तत्वदर्शी सन्त को मुझे समझना (मम सन्त मुझे ही जान, मेरा ही स्वरूपम्) तब तक मेरे इस तत्व ज्ञान को अपनी -2 बुद्धि से यथार्थ न समझ कर उल्टा अर्थ लगाकर अनुयाईयों को भ्रमित करते रहेंगे। उस समय उन सर्व पंथों के अज्ञान का पर्दाफाश उस तेरहवें वंश (मेरे सन्त) द्वारा किया जाएगा। उस समय सर्व मानव शिक्षित होगा। अन्य सन्तों द्वारा लिखी भ्रमित ज्ञान युक्त पुस्तकों को पढ़कर तत्वज्ञान से तुलना करेंगे। दोनों की भिन्नता को जान कर तुरन्त मेरे तत्वदर्शी सन्त की शरण ग्रहण करेंगे। इस प्रकार सर्व सद्ग्रन्थों का यथार्थ अनुवाद भी मेरा वह तेरहवां वंश (सन्त) करेगा। अन्य सन्तों व ऋषियों द्वारा किया अनुवाद भी उस समय सर्व के समक्ष होगा जो वर्षों पूर्व किया गया होगा।

जिसे सत्य अनुवाद मानकर बहुत बड़ा जनसमूह उस सन्तों व ऋषियों से जुड़ चुका होगा अर्थात् उनके मिथ्या ज्ञान को तत्वज्ञान मानकर उन ऋषियों व सन्तों के ढेर सारे अनुयाई बन चुके होंगे। वे बुद्धिमान शिक्षित अनुयाई मेरे अंश सन्त द्वारा किए गए सद्ग्रन्थों के अनुवाद से अपने-2 गुरूओं द्वारा किए गए अनुवाद का मेल करेंगे तो तुरन्त भिन्नता समझ जाऐंगे तथा उन अज्ञानी ऋषियों व सन्तों को त्याग कर ऐसे मेरे सन्त की शरण ग्रहण करेंगे जैसे कोई हड़बड़ा कर जागा हो। इस प्रकार धीरे-2 पूरी पृथ्वी पर मेरा ही ज्ञान प्रकाश हो जाएगा। अज्ञान पूर्ण रूप से नष्ट हो जाएगा।

❑❑❑

''कबीर परमेश्वर जी का कलयुग में अवतरण''

लेखक के शब्दों में :- बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने द्वापर युग में अपने प्रिय शिष्य सुदर्शन बाल्मीकि जी को शरण में लिया था। भक्त सुदर्शन जी के माता-पिता ने परमेश्वर कबीर जी के ज्ञान को स्वीकार नहीं किया था जिनके नाम थे पिता जी का नाम ''भीखू राम'' तथा माता जी का नाम ''सुखवन्ती''। जिस समय दोनों (माता तथा पिता) शरीर त्याग गए तो भक्त सुदर्शन जी अत्यन्त व्याकुल रहने लगे। भक्ति भी कम करते थे। अर्न्तयामी करूणामय जी (द्वापर युग में कबीर परमेश्वर करूणामय नाम से लीला कर रहे थे) ने अपने भक्त के मन की बात जान कर पूछा हे भक्त सुदर्शन! आप को कौन सी चिन्ता सता रही है। क्या माता-पिता का वियोग सता रहा है? या कोई अन्य पारिवारिक परेशानी है ? मुझे बताईए।

भक्त सुदर्शन जी ने कहा हे बन्दी छोड़! हे अन्तर्यामी! आप सर्वज्ञ हैं आप बाहर-भीतर की सर्व स्थिती से परिचित है। हे प्रभु! मुझे मेरे माता-पिता के निधन का दुःख नहीं है क्योंकि वे बहुत वृद्ध हो चुके थे। आप ने बताया है कि यह पाँच तत्व का पूतला एक दिन नष्ट होना है। मुझे चिन्ता सता रही है कि मेरे माता-पिता अत्यन्त पुण्यात्मा, दयालु तथा धर्मात्मा थे। उन्होंने अपनी भक्ति लोकवेद अनुसार की थी। जो शास्त्रविधि के विरूद्ध थी। जिस कारण से उनका मानव जीवन व्यर्थ गया। अब पता नहीं किस प्राणी की योनी में कष्ट उठा रहे होंगे? आप से नम्र निवेदन आप का दास करता है कि कभी मेरे माता-पिता मानव शरीर प्राप्त करें तो उन्हें अपनी शरण में लेना परमेश्वर तथा उन्हें भी भवसागर से (काल ब्रह्म के लोक से) पार करना मेरे दाता ! मुझे यही चिन्ता सता रही है। परमेश्वर कबीर जी ने सोचा कि यह भोला भक्त सुदर्शन माता-पिता के मोह में फंस कर काल जाल में ही रहेगा। काल ब्रह्म ने मोह रूपी पाश बहुत दृढ़ बना रखा है। यह विचार कर परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे भक्त सुदर्शन ! आप चिन्ता मत करो मैं आप के माता-पिता को अवश्य शरण में लूंगा तथा पार करके ही दम लूंगा। आप सत्य लोक जाओ। यह चिन्ता छोड़ो। परमेश्वर कबीर जी के आश्वासन के पश्चात् भक्त सुदर्शन जी सत्य साधना करके सत्यलोक को गया। पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया।

भक्त सुदर्शन बाल्मीकी के माता-पिता वाले जीवों ने कलयुग में मानव शरीर प्राप्त हुआ। भारत वर्ष के काशी शहर में सुदर्शन के पिता वाले जीव ने एक ब्राह्मण के घर जन्म लिया तथा गौरीशंकर नाम रखा गया तथा सुदर्शन जी की माता वाले जीव ने भी एक ब्राह्मण के घर कन्या रूप में जन्म लिया तथा सरस्वती नाम रखा। युवा होने पर दोनों का विवाह हुआ। गौरी शंकर ब्राह्मण भगवान शिव का उपासक था तथा शिव पुराण की कथा करके भगवान शिव की महिमा का गुणगान किया करता। गौरीशंकर निर्लोभी था। कथा करने से जो धन प्राप्त होता था उसे धर्म में ही लगाया करता था। जो व्यक्ति कथा कराते थे तथा सुनते थे सर्व गौरी शंकर ब्राह्मण के त्याग की प्रसंशा करते थे।

जिस कारण से पूरी काशी में गौरी शंकर की प्रसिद्धी हो रही थी। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों का कथा करके धन इकत्रीत करने का धंधा बन्द हो गया। इस कारण से वे ब्राह्मण उस गौरीशंकर

ब्राह्मण से ईर्षा रखते थे। इस बात का पता मुस्लमानों को लगा कि एक गौरीशंकर ब्राह्मण काशी में हिन्दुधर्म के प्रचार को जोर-शोर से कर रहा है। इसको किस तरह बन्द करें। मुस्लमानों को पता चला कि काशी के सर्व ब्राह्मण गौरीशंकर से ईर्षा रखते हैं। इस बात का लाभ मुस्लमानों ने उठाया। गौरीशंकर व सरस्वती के घर के अन्दर अपना पानी छिड़क दिया। अपना झूठा पानी उनके मुख पर लगा दिया। कपड़ों पर भी छिड़क दिया तथा आवाज लगा दी कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुस्लमान बन गए हैं। पुरूष का नाम नूरअली उर्फ नीरू तथा स्त्री का नाम नियामत उर्फ नीमा रखा। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों को पता चला तो उनका दाव लग गया। उन्होंने तुरन्त ही ब्राह्मणों की पंचायत बुलाई तथा फैसला कर दिया कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुसलमान बन गए हैं अब इनका ब्राह्मण समाज से कोई नाता नहीं रहा है। इनका गंगा में स्नान करने, मन्दिर में जाने तथा हिन्दु ग्रन्थों को पढ़ने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

गौरीशंकर (नीरू) जी कुछ दिन तो बहुत परेशान रहे। जो कथा करके धन आता था उसी से घर का निर्वाह चलता था। उसके बन्द होने से रोटी के भी लाले पड़ गए। नीरू ने विचार करके अपने निर्वाह के लिए कपड़ा बुनने का कार्य प्रारम्भ किया। जिस कारण से जुलाहा कहलाया। कपड़ा बुनने से जो मजदूरी मिलती थी उसे अपना तथा अपनी पत्नी का पेट पालता था। जिस समय धन अधिक आ जाता तो उसको धर्म में लगा देता था। विवाह को कई वर्ष बीत गए थे। उनको कोई सन्तान नहीं हुई। दोनों पति-पत्नी ने बच्चे होने के लिए बहुत अनुष्ठान किए। साधु सन्तों का आशीर्वाद भी लिया परन्तु कोई सन्तान नहीं हुई। हिन्दुओं द्वारा उन दोनों का गंगा नदी में स्नान करना बन्द कर दिया गया था। उनके निवास स्थान से लगभग चार कि.मी. दूर एक लहर तारा नामक सरोवर था जिस में गंगा नदी का ही जल लहरों के द्वारा नीची पटरी के ऊपर से उछल कर आता था। इसलिए उस सरोवर का नाम लहरतारा पड़ा। उस तालाब में बड़े-2 कमल के फूल उगे हुए थे। मुस्लमानों ने गौरीशंकर का नाम नूर अल्ली रखा जो उर्फ नाम से नीरू कहलाया तथा पत्नी का नाम नियामत रखा जो उर्फ नाम से नीमा कहलाई। नीरू-नीमा भले ही मुस्लमान बन गए थे परन्तु अपने हृदय से साधना भगवान शंकर जी की ही करते थे तथा प्रतिदिन सवेरे सुर्योदय से पूर्व लहरतारा तालाब में स्नान करने जाते थे।

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (सन् 1398) मंगलवार को भी ब्रह्म मुहूर्त (ब्रह्म महूर्त का समय सूर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पहले होता है) में स्नान करने के लिए जा रहे थे। नीमा रास्ते में भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही थी कि हे दीनानाथ! आप अपने दासों को भी एक बच्चा-बालक दे दो आप के घर में क्या कमी है प्रभु ! हमारा भी जीवन सफल हो जाएगा। दुनिया के व्यंग्य सुन-2 कर आत्मा दुःखी हो जाती है। मुझ पापीनी से ऐसी कौन सी गलती किस जन्म में हुई है जिस कारण मुझे बच्चे का मुख देखने को तरसना पड़ रहा है। हमारे पापों को क्षमा करो प्रभु! हमें भी एक बालक दे दो।

यह कह कर नीमा फूट-2 कर रोने लगी तब नीरू ने धैर्य दिलाते हुए कहा हे नीमा! हमारे भाग्य में सन्तान नहीं है यदि भाग्य में सन्तान होती तो प्रभु शिव अवश्य प्रदान कर देते। आप रो-2 कर आँखे खराब कर लोगी। बालक भाग्य में है नहीं जो वृद्ध अवस्था में ऊंगली पकड़ लेता। आप

मत रोओ आप का बार-2 रोना मेरे से देखा नहीं जाता। यह कह कर नीरू की आँखे भी भर आई। इसी तरह प्रभु की चर्चा व बालक प्राप्ति की याचना करते हुए उसी लहरतारा तालाब पर पहुँच गए। प्रथम नीमा ने प्रवेश किया, पश्चात् नीरू ने स्नान करने को तालाब में प्रवेश किया। सुबह का अंधेरा शीघ्र ही उजाले में बदल जाता है। जिस समय नीमा ने स्नान किया था उस समय तक तो अंधेरा था। जब कपड़े बदल कर पुनः तालाब पर उस कपड़े को धोने के लिए गई, जिसे पहन कर स्नान किया था, उस समय नीरू तालाब में प्रवेश करके गोते लगा-2 कर मल मल कर स्नान कर रहा था।

नीमा की दृष्टि एक कमल के फूल पर पड़ी जिस पर कोई वस्तु हिल रही थी। प्रथम नीमा ने जाना कोई सर्प है जो कमल के फूल पर बैठा अपने फन को उठा कर हिला रहा है। उसने सोचा कहीं यह सर्प मेरे पति को न डस ले नीमा ने उसको ध्यानपूर्वक देखा वह सर्प नहीं है कोई बालक था। जिसने एक पैर अपने मुख में ले रखा था तथा दूसरे को हिला रहा था। नीमा ने अपने पति से ऊँची आवाज में कहा देखियो जी! एक छोटा बच्चा कमल के फूल पर लेटा है। वह जल में डूब न जाए। नीरू स्नान करते-2 उस की ओर न देख कर बोला नीमा! बच्चों की चाह ने तूझे पागल बना दिया है। अब तूझे जल में भी बच्चे दिखाई देने लगे हैं। नीमा ने अधिक तेज आवाज में कहा मैं सच कह रही हूँ, देखो सचमुच एक बच्चा कमल के फूल पर, वह रहा, देखो! देखो--- नीमा की आवाज में परिवर्तन व अधिक कसक देखकर नीरू ने उस ओर देखा जिस ओर नीमा हाथ से संकेत कर रही थी। कमल के फूल पर नवजात शिशु को देखकर नीरू ने आव देखा न ताव झपट कर कमल के फूल सहित बच्चा उठाकर अपनी पत्नी को दे दिया।

नीमा ने परमेश्वर कबीर जी को सीने से लगाया, मुख चूमा, पुत्रवत् प्यार किया जिस परमेश्वर की खोज में ऋषि-मुनियों ने जीवन भर शास्त्रविधि विरूद्ध साधना की उन्हें नहीं मिला। वही परमेश्वर भक्तमति नीमा की गोद में खेल रहा था। जिस शान्तिदायक परमेश्वर को आन्नद की प्राप्ति के लिए प्राप्त करने की इच्छा से साधना की जाती है वही परमेश्वर नीमा के हाथों में सीने से लगा हुआ था। उस समय जो शीतलता व आनन्द का अनुभव भक्तमति नीमा को हो रहा होगा उस की कल्पना ही की जा सकती है। नीरू स्नान करके जल से बाहर आया। नीरू ने सोचा यदि हम इस बच्चे को नगर में ले जाऐंगे तो शहर वासी हम पर शक करेंगे सोचेंगे कि ये किसी के बच्चे को चुरा कर लाए हैं। कहीं हमें नगर से निकाल दें। इस डर से नीरू ने अपनी पत्नी से कहा नीमा! इस बच्चे को यहीं छोड़ दे इसी में अपना हित है। नीमा बोली हे पति देव ! यह भगवान शंकर का दिया खिलौना है। इस बच्चे ने पता नहीं मुझ पर क्या जादू कर दिया है कि मेरा मन इस बच्चे के वश हो गया है। मैं इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। नीरू ने नीमा को अपने मन की बात से अवगत कराया। बताया कि यह बच्चा नगर वासी हम से छीन लेगें, पूछेंगे कहाँ से लाए हो? हम कहेंगे लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर मिला है। हमारी बात पर कोई भी विश्वास नहीं करेगा। हो सकता है वे हमें नगर से भी निकाल दें। तब नीमा ने कहा मैं इस बालक के साथ देश निकाला भी स्वीकार कर लूंगी। परन्तु इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। मैं अपनी मृत्यु को भी स्वीकार कर लूंगी। परन्तु इस बच्चे से भिन्न नहीं रह सकूंगी।

नीमा का हठ देख कर नीरू को क्रोध आ गया तथा अपने हाथ को थप्पड़ मारने की स्थिती में उठा कर आँखों में आंसू भर कर करूणाभरी आवाज में बोला नीमा मैंने आज तक तेरी किसी भी बात को नहीं ठुकराया। यह जान कर कि हमारे कोई बच्चा नहीं है मैंने तुझे पति तथा पिता दोनों का प्यार दिया है। तू मेरे नम्र स्वभाव का अनुचित लाभ उठा रही है। आज मेरी स्थिति को न समझ कर अपने हठी स्वभाव से मुझे कष्ट दे रही है। विवाहित जीवन में नीरू ने प्रथम बार अपनी पत्नी की और थप्पड़ मारने के लिए हाथ उठाया था तथा कहा कि या तो इस बच्चे को यहीं रख दे वरना आज मैं तेरी बहुत पिटाई करूंगा।

उसी समय नीमा के सीने से चिपके बालक रूपधारी परमेश्वर बोले हे नीरू! आप मुझे अपने घर ले चलो आप पर कोई आपत्ति नहीं आएगी। मैं सतलोक से चलकर तुम्हारे हित के लिए यहाँ आया हूँ। नवजात शिशु के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर नीरू (नूर अल्ली) डर गया कहीं यह कोई देव या पितर या कोई सिद्ध पुरूष न हो और मुझे शाप ने दे दे। इस डर से नीरू कुछ नहीं बोला घर की ओर चल पड़ा। पीछे-2 उसकी पत्नी परमेश्वर को प्यार करती हुई चल पड़ी।

प्रतिदिन की तरह जेष्ट मास की पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (1398ई.) मंगलवार को भी एक अष्टानन्द नामक ऋषि, जो स्वामी रामानन्द ऋषि जी के शिष्य थे काशी शहर से बाहर बने लहरतारा तालाब के स्वच्छ जल में स्नान करने के लिए प्रतिदिन की तरह गए। ब्रह्म महूर्त का समय था (ब्रह्म मुहूर्त का समय सुर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पूर्व का होता है) ऋषि अष्टानन्द जी ने लहरतारा तालाब में स्नान किया। वे प्रतिदिन वहीं बैठ कर कुछ समय अपनी पाठ पूजा किया करते थे। ऋषि अष्टानन्द जी ध्यान मग्न होने की चेष्टा कर ही रहे थे उसी समय उन्होंने देखा कि आकाश से एक प्रकाश पुंज नीचे की ओर आता दिखाई दिया। वह इतना तेज प्रकाश था उसे ऋषि जी की चर्म दृष्टि सहन नहीं कर सकी। जिस प्रकार आँखे सूर्य की रोशनी को सहन नहीं कर पाती। सूर्य के प्रकाश को देखने के पश्चात् आँखे बन्द करने पर सूर्य का आकार दिखाई देता है उसमें प्रकाश अधिक नहीं होता।

इसी प्रकार प्रथम बार परमेश्वर के प्रकाश को देखने से ऋषि जी की आँखे बन्द हो गई बन्द आँखों में शिशु को देख कर फिर से आँखे खोली। ऋषि अष्टानन्द जी ने देखा कि वह प्रकाश लहरतारा तालाब पर उतर गया। जिससे पूरा सरोवर प्रकाश मान हो गया तथा देखते ही देखते वह प्रकाश जलास्य के एक कोने में सिमट गया। ऋषि अष्टानन्द जी ने सोचा यह कैसा दृश्य मैंने देखा। यह मेरी भक्ति की उपलब्धी है या मेरा दृष्टिदोष है। इस के विषय में गुरूदेव, स्वामी रामानन्द जी से पूछंगा। यह विचार करके ऋषि अष्टानन्द जी अपनी शेष साधना को छोड़ कर अपने पूज्य गुरूदेव के पास गए। स्वामी रामानन्द जी को सर्व घटनाक्रम बताकर पूछा हे गुरूदेव! यह मेरी भक्ति की उपलब्धी है या मेरी भ्रमणा है। मैंने प्रकाश आकाश से नीचे की ओर आते देखा जिसे मेरी आँखे सहन नहीं कर सकी। आँखे बन्द हुई तो नवजात शिशु दिखाई दिया। पुनः आँखें खोली तो उस प्रकाश से पूरा जलास्य ही जगमगा गया, पश्चात् वह प्रकाश उस तालाब के एक कोने में सिमट गया। मैं आप से कारण जानने की इच्छा से अपनी साधना बीच में ही छोड़ कर आया हूँ। कृप्या मेरी शंका का समाधान किजिए।

ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द से कहा हे ब्राह्मण! यह न तो तेरी भक्ति की उपलब्धी है न आप का दृष्टिदोष ही है। इस प्रकार की घटनाऐं उस समय होती हैं। जिस समय ऊपर के लोकों से कोई देव पृथ्वी पर अवतार धारण करने के लिए आते हैं। वह किस स्त्री के गर्भ में निवास करता है। फिर बालक रूप धारण करके नर लीला करके अपना अपेक्षित कार्य पूर्ण करता है। कोई देव ऊपर के लोकों से आया है। वह काशी नगर में किसी के घर जन्म लेकर अपना प्रारब्ध पूरा करेगा। उपरोक्त वचनों द्वारा ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द की शंका का समाधान किया। उन ऋषियों की यही धारणा थी की सर्व अवतार गण माता के गर्भ से ही जन्म लेते हैं।

बालक को लेकर नीरू तथा नीमा अपने घर जुलाहा मौहल्ला (कालोनी) में आए। जिस भी नर व नारी ने नवजात शिशु रूप में परमेश्वर कबीर जी को देखा वह देखता ही रह गया। परमेश्वर का शरीर अति सुन्दर था। आँख जैसे कमल का फूल हो, घुंघराले बाल, लम्बे हाथ। लम्बी-2 अंगुलियाँ शरीर से मानो नूर झलक रहा हो। जैसे अंग्रेज गोरे होते हैं इनसे भी अधिक गोरा शरीर परमेश्वर का था। अग्रेंज सफेद होते हैं परमेश्वर कबीर जी का उन से भी अधिक सफेद वर्ण का शरीर था। पूरी काशी नगरी में ऐसा अद्भुत बालक नहीं था। जो भी देखता वहीं अन्य को बताता कि नूर अली को एक बालक तालाब पर मिला है आज ही उत्पन्न हुआ शिशु है। डर के मारे लोक लाज के कारण किसी विधवा ने डाला होगा। बालक को देखने के पश्चात् उसके चेहरे से दृष्टि हटाने को दिल नहीं करता, आत्मा अपने आप खिंची जाती है। पता नहीं कैसा जादू है बालक के मुख में? पूरी काशी परमेश्वर के बालक रूप को देखने को उमड़ पड़ी। स्त्री-पुरूष झुण्ड के झुण्ड बना कर मंगल गान गाते हुए, नीरू के घर बच्चे को देखने को आए।

बच्चे (कबीर परमेश्वर) को देखकर कोई कह रहा था, यह बालक तो कोई देवता का अवतार है, कोई कह रहा था। यह तो साक्षात् विष्णु जी ही आए लगते हैं। कोई कह रहा था यह भगवान शिव ही अपनी काशी नगरी को कृत्तार्थ करने को उत्पन्न हुए हैं। कोई कह रहा था। यह तो किन्नर का अवतार है, कोई कह रहा था। यह पितर नगरी से आया है। यह सर्व वार्ता सुनकर नीमा अप्रसन्न हो कर कहती थी कि मेरे बच्चे के विषय में कुछ मत कहो। हे अल्लाह ! मेरे बच्चे की इनकी नजर से रक्षा करना। तुमने कभी बच्चा देखा भी है कि नहीं। ऐसे समूह के समूह मेरे बालक को देखने आ रहे हो। आने वाले स्त्री-पुरूष बोले हे नीमा। हमने बालक तो बहुत देखे हैं परन्तु आप के बालक जैसा नहीं देखा। इसीलिए हम इसे देखने आए हैं। ऊपर अपने-2 लोकों से श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी भी झांक कर देखने लगे। काशी के वासियों के मुख से अपने में से (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा शिव में से) एक यह बालक होने की बात सुनकर बोले कि यह बालक तो किसी अन्य लोक से आया है। इस के मूल स्थान से हम भी अपरिचित हैं परन्तु है बहुत शक्ति युक्त कोई सिद्ध पुरूष होगा।

''शिशु कबीर परमेश्वर का नामांकन''

नीरू (नूर अल्ली) तथा नीमा पहले हिन्दु ब्राह्मण-ब्राह्मणी थे। इस कारण लालच वश ब्राह्मण लड़के का नाम रखने आए। उसी समय काजी मुस्लमान अपनी पुस्तक कुर्रान शरीफ को लेकर

लड़के का नाम रखने के लिए आ गए। उस समय दिल्ली में मुगल बादशाहों का शासन था जो पूरे भारतवर्ष पर शासन करते थे। जिस कारण हिन्दु समाज मुस्लमानों से दबता था। काजियों ने कहा लड़के का नाम करण हम मुस्लमान विधि से करेंगे अब ये मुस्लमान हो चुके हैं। यह कह कर काजियों में मुख्य काजी ने कुर्रान शरीफ पुस्तक को कहीं से खोला। उस पृष्ठ पर प्रथम पंक्ति में प्रथम नाम ''कबीरन्'' लिखा था। काजियों ने सोचा ''कबीर'' नाम का अर्थ बड़ा होता है। इस छोटे जाति (जुलाहे अर्थात् धाणक) के बालक का नाम कबीर रखना शोभा नहीं देगा। यह तो उच्च घरानों के बच्चों के नाम रखने योग्य है। शिशु रूपधारी परमेश्वर काजियों के मन के दोष को जानते थे। काजियों ने पुनः पवित्र कुरान शरीफ को नाम रखने के उद्देश्य से खोला। उन दोनों पृष्ठों पर कबीर-कबीर-कबीर अखर लिखे थे अन्य लेख नहीं था। काजियोंने फिर कुर्रान शरीफ को खोला उन पृष्ठों पर भी कबीर-कबीर-कबीर अक्षर ही लिखा था। काजियों ने पूरी कुर्रान का निरीक्षण किया तो उनके द्वारा लाई गई कुर्रान शरीफ में सर्व अक्षर कबीर-कबीर-कबीर-कबीर हो गए काजी बोले इस बालक ने कोई जादू मन्त्र करके हमारी कुर्रान शरीफ को ही बदल डाला। तब कबीर परमेश्वर शिशु रूप में बोले हे काशी के काजियों। मैं कबीर अल्ला अर्थात् अल्लाहुअकबर, हूँ। मेरा नाम ''कबीर'' ही रखो। काजियों ने अपने साथ लाई कुरान को वहीं पटक दिया तथा चले गए। बोले इस बच्चे में कोई प्रेत आत्मा बोलती है।

''शिशु कबीर देव द्वारा कंवारी गाय का दूध पीना''

बालक कबीर को दूध पिलाने की कोशिश नीमा ने की तो परमेश्वर ने मुख बन्द कर लिया। सर्व प्रयत्न करने पर भी नीमा तथा नीरू बालक को दूध पिलाने में असफल रहे। 25 दिन जब बालक को निराहार बीत गए तो माता-पिता अति चिन्तित हो गए। 24 दिन से नीमा तो रो-2 कर विलाप कर रही थी। सोच रही थी यह बच्चा कुछ भी नहीं खा रहा है। यह मरेगा, मेरे बेटे को किसी की नजर लगी है। 24 दिन से लगातार नजर उतारने की विधि भिन्न भिन्न-2 स्त्री-पुरूषों द्वारा बताई प्रयोग करके थक गई। कोई लाभ नहीं हुआ। आज पच्चीसवां दिन उदय हुआ। माता नीमा रात्री भर जागती रही तथा रोती रही कि पता नहीं यह बच्चा कब मर जाएगा। मैं भी साथ ही फांसी पर लटक जाऊंगी। मैं इस बच्चे के बिना जीवित नहीं रह सकती बालक कबीर का शरीर पूर्ण रूप से स्वस्थ था तथा ऐसे लग रहा था जैसे बच्चा प्रतिदिन एक किलो ग्राम (एक सेर) दूध पीता हो। परन्तु नीमा को डर था कि बिना कुछ खाए पीए यह बालक जीवित रह ही नहीं सकता। यह कभी भी मृत्यु को प्राप्त हो सकता है। यह सोच कर फूट-2 कर रो रही थी। भगवान शंकर के साथ-साथ निराकार प्रभु की भी उपासना तथा उससे की गई प्रार्थना जब व्यर्थ रही तो अति व्याकुल होकर रोने लगी।

भगवान शिव, एक ब्राह्मण का रूप बना कर नीरू की झोंपड़ी के सामने खड़े हुए तथा नीमा से रोने का कारण जानना चाहा। नीमा रोती रही हिचकियाँ लेती रही। ब्राह्मण रूप में खड़े भगवान शिव जी के अति आग्रह करने पर नीमा रोती-2 कहने लगी हे ब्राह्मण ! मेरे दुःख से परिचित होकर आप भी दुःखी हो जाओगे। ब्राह्मण वेशधारी शिव भगवान बोले हे माई! कहते है अपने मन का दुःख दूसरे के समक्ष कहने से मन हल्का हो जाता है। हो सकता है आप के कष्ट को निवारण करने की

विधि भी प्राप्त हो जाए। आँखों में आंसू जिव्हा लड़खड़ाते हुए गहरे साँस लेते हुए नीमा ने बताया हे विप्र जी! हम निःसन्तान थे। पच्चीस दिन पूर्व हम दोनों प्रतिदिन की तरह काशी में लहरतारा तालाब पर स्नान करने जा रहे थे। उस दिन जेष्ट मास की शुक्ल पूर्णमासी की सुबह थी। रास्ते में मैंने अपने इष्ट भगवान शंकर से पुत्र प्राप्ति की हृदय से प्रार्थना की थी मेरी पुकार सुनकर दीनदयाल भगवान शंकर जी ने उसी दिन एक बालक लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर हमें दिया। बच्चे को प्राप्त करके हमारे हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहा। यह हर्ष अधिक समय तक नहीं रहा। इस बच्चे ने दूध नहीं पीया। सर्व प्रयत्न करके हम थक चुके हैं। आज इस बच्चे को पच्चीसवां दिन है कुछ भी आहार नहीं किया है। यह बालक मरेगा। इसके साथ ही मैं आत्महत्या करूंगी। मैं इसकी मृत्यु की प्रतिक्षा कर रही हूँ। सर्व रात्री बैठ कर तथा रो-2 व्यतीत की है। मैं भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही हूँ कि हे भगवन्! इससे अच्छा तो यह बालक न देते। अब इस बच्चे में इतनी ममता हो गई है कि मैं इसके बिना जीवित नहीं रह सकूंगी।

नीमा के मुख से सर्वकथा सुनकर विप्र रूपधारी भगवान शंकर ने कहा। आप का बालक मुझे दिखाईए। नीमा ने बालक को पालने से उठाकर ब्राह्मण के समक्ष प्रस्तुत किया। दोनों प्रभुओं की आपस में दृष्टि मिली। भगवान शंकर जी ने शिशु कबीर जी को अपने हाथों में ग्रहण किया तथा मस्तिष्क की रेखाऐं व हस्थ रेखाऐं देख कर बोले नीमा! आप के बेटे की लम्बी आयु है यह मरने वाला नहीं है। देख कितना स्वस्थ है। कमल जैसा चेहरा खिला है। नीमा ने कहा हे विप्रवर! बनावटी सान्तवना से मुझे सन्तोष होने वाला नहीं है। बच्चा दूध पीएगा तो मुझे सुख की सांस आएगी। पच्चीस दिन के बालक का रूप धारण किए परमेश्वर कबीर जी ने भगवान शिव जी से कहा हे भगवन्! आप इन्हें कहो एक कंवारी गाय लाऐं। आप उस कंवारी गाय पर अपना आशीर्वाद भरा हस्थ रखना वह दूध देना प्रारम्भ कर देगी। मैं उस कंवारी गाय का दूध पीऊँगा। वह गाय आजीवन बिना ब्याए (अर्थात् कंवारी रह कर ही) दूध दिया करेगी उस दूध से मेरी परवरिश होगी। परमेश्वर कबीर जी तथा भगवान शंकर (शिव) जी की सात बार चर्चा हुई।

शिवजी ने नीमा से कहा आप का पति कहाँ है? नीमा ने अपने पति को पुकारा वह भीगी आँखों से उपस्थित हुआ तथा ब्राह्मण को प्रणाम किया। ब्राह्मण ने कहा नीरू! आप एक कंवारी गाय लाओं वह दूध देवेगी। उस दूध को यह बालक पीएगा। नीरू कंवारी गाय ले आया तथा साथ में कुम्हार के घर से एक ताजा छोटा घड़ा (चार कि.ग्रा. क्षमता का मिट्टी का पात्र) भी ले आया। परमेश्वर कबीर जी के आदेशानुसार विप्ररूपधारी शिव जी ने उस कंवारी गाय की पीठ पर हाथ मारा जैसे थपकी लगाते हैं। गऊ माता के थन लम्बे-2 हो गए तथा थनों से दूध की धार बह चली। नीरू को पहले ही वह पात्र थनों के नीचे रखने का आदेश दे रखा था। दूध का पात्र भरते ही थनों से दूध निकलना बन्द हो गया। वह दूध शिशु रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने पीया। नीरू नीमा ने ब्रह्माण रूपधारी भगवान शिव के चरण लिए तथा कहा आप तो साक्षात् भगवान शिव के रूप हो। आपको भगवान शिव ने ही हमारी पुकार सुनकर भेजा है। हम निर्धन व्यक्ति आपको क्या दक्षिणा दे सकते हैं? हे विप्र! 24 दिनों से हमने कोई कपड़ा भी नहीं बुना है। विप्र रूपधारी भगवान शंकर बोले! साधु भूखा भाव का, धन का भूखा नाहीं। जो है भूखा धन का, वह तो साधू नाहीं। यह कह कर विप्र रूपधारी शिवजी ने वहाँ से प्रस्थान किया।

1.ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

(उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुखदायक सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर की (पातवे) वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हों अर्थात् कुँवारी गायों द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है सुख-सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति कुँवारी गायों द्वारा की जाती है अर्थात् उस समय (अध्नि धेनु) कुँवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

''नीरू को धन की प्राप्ति''

बालक की प्राप्ति से पूर्व दोनों जने (पति-पत्नी) मिलकर कपड़ा बुनते थे। 25 दिन बच्चे की चिन्ता में कपड़ा बुनने का कोई कार्य न कर सके। जिस कारण से कुछ कर्ज नीरू को हो गया। कर्ज मांगने वाले भी उसी पच्चीसवें दिन आ गए तथा बुरी भली कह कर चले गए। कुछ दिन तक कर्ज न चुकाने पर यातना देने की धमकी सेठ ने दे डाली। दोनों पति -पत्नी अति चिन्तित हो गए। अपने बुरे कर्मों को कोसने लगे। एक चिन्ता का समाधान होता है, दूसरी तैयार हो जाती है। माता-पिता को चिन्तित देख बालक बोला हे माता-पिता! आप चिन्ता न करो। आपको प्रतिदिन एक सोने की मोहर (दस ग्राम स्वर्ण) पालने के बिछोने के नीचे मिलेगी। आप अपना कर्ज उतार कर अपना तथा गऊ का खर्च निकाल कर शेष बचे धन को धर्म कर्म में लगाना। उस दिन के पश्चात् दस ग्राम स्वर्ण प्रतिदिन नीरू के घर परमेश्वर कबीर जी की कृपा से मिलने लगा। यह क्रिया एक वर्ष तक चलती रही।

परमेश्वर कबीर जी ने मुहर (सोने का सिक्का) मिलने वाली लीला को गुप्त रखने को कहा था एक दिन नीमा की प्रिय सखी उसी समय नीरू के घर पर आई जिस समय वह कबीर जी को जगाने का प्रयत्न कर रही थी। नीमा की सखी ने वह स्वर्ण मुहर देख ली तथा बोली इतना सोना आपके पास कैसे आया। नीमा ने अपनी प्रिय सखी से सर्व गुप्त भेद कह सुनाया कि हमें तो एक वर्ष से यह मुहर प्रतिदिन प्राप्त हो रही है। हमारे घर पर भाग्यशाली लड़का कबीर जब से आया है। हम तो आनन्द से रहते हैं। अगले दिन ही सोना मिलना बंद हो गया। नीरू तथा नीमा दोनों मिलकर कपड़ा बुनकर अपने परिवार का पालन पोषण करने लगे। बड़ा होकर बालक कबीर भी पिता के काम में हाथ बटाने लगा। थोड़े ही समय में अधिक बुनाई करने लगा।

''ऋषि रामानन्द, सेऊ, समन तथा नेकी व कमाली के पूर्व जन्मों का ज्ञान''

ऋषि रामानन्द जी का जीव सत्ययुग में विद्याधर ब्राह्मण था जिसे परमेश्वर सत्य सुकृत नाम से मिले थे। त्रेता युग में वह वेदविज्ञ नामक ऋषि था जिसको परमेश्वर मुनिन्द्र नाम से शिशु रूप में

प्राप्त हुए थे तथा कमाली वाली आत्मा सत्य युग में विद्याधर की पत्नि दीपिका थी त्रेता युग में सूर्या नाम की वेदविज्ञ ऋषि की पत्नी थी। उस समय इन्होने परमेश्वर को पुत्रवत् पाला तथा प्यार किया था। उसी पुण्य के कारण ये आत्माऐं परमात्मा को चाहने वाली थी। कलयुग में भी इनका परमेश्वर के प्रति अटूट विश्वास था। ऋषि रामानन्द व कमाली वाली आत्माऐं ही सत्ययुग में ब्राह्मण विद्याधर तथा ब्राह्मणी दीपीका वाली आत्माऐं थी जिन्हें ससुराल से आते समय कबीर परमेश्वर एक तालाब में कमल के फूल पर शिशु रूप में मिले थे। यही आत्माऐं त्रेता युग में (वेदविज्ञ तथा सूर्या) ऋषि दम्पति थे। जिन्हें परमेश्वर शिशु रूप में प्राप्त हुए थे। समन तथा नेकी वाली आत्माऐं द्वापर युग में कालु बाल्मीकि तथा उसकी पत्नी गोदावरी थी। जिन्होंने द्वापर युग में परमेश्वर कबीर जी का शिशु रूप में लालन पालन किया था। उसी पुण्य के फल स्वरूप परमेश्वर ने उन्हें अपनी शरण में लिया था। सेऊ (शिव) वाली आत्मा द्वापर में ही एक गंगेश्वर नामक ब्राह्मण का पुत्र गणेश था। जिसने अपने पिता के घोर विरोध के पश्चात् भी मेरे उपदेश को नहीं त्यागा था तथा गंगेश्वर ब्राह्मण वाली आत्मा कलयुग में शेख तकी बना। वह द्वापर युग से ही परमेश्वर का विरोधी था। गंगेश्वर वाली आत्मा शेख तकी को काल ब्रह्म ने फिर से प्रेरित किया। जिस कारण से शेख तकी (गंगेश्वर) परमेश्वर कबीर जी का शत्रु बना। भक्त श्री कालु तथा गोदावरी का गणेश माता-पिता तुल्य सम्मान करता था। रो-2 कर कहता था काश आज मेरा जन्म आप (बाल्मीकि) के घर होता। मेरे (पालक) माता-पिता (कालु तथा गोदावरी) भी गणेश से पुत्रवत् प्यार करते थे। उनका मोह भी उस बालक में अत्यधिक हो गया था। इसी कारण से वे फिर से उसी गणेश वाली आत्मा अर्थात् सेऊ के माता-पिता (नेकी तथा समन) बने। समन की आत्मा ही नौशेरवाँ शहर में नौशेरखाँ राजा बना फिर बलख बुखारे का बादशाह अब्राहिम अधम सुलतान हुआ तब उसको पुनः भक्ति पर लगाया।

''शिशु कबीर की सुन्नत करने का असफल प्रयत्न''

शिशु रूपधारी कबीर देव की सुन्नत करने का समय आया तो पूरा जन समूह सम्बन्धीयों का इकट्ठा हो गया। नाई जब शिशु कबीर जी के लिंग को सुन्नत करने के लिए कैंची लेकर गया तो परमेश्वर ने अपने लिंग के साथ एक लिंग और बना लिया। फिर उस सुन्नत करने को तैयार व्यक्ति की आँखों के सामने तीन लिंग और बढ़ते दिखाए कुल पाँच लिंग एक बालक के देखकर वह सुन्नत करने वाला आश्चर्य में पड़ गया। तब कबीर जी शिशु रूप में बोले भईया एक ही लिंग की सुन्नत करने का विधान है ना मुस्लमान धर्म में। बोल शेष चार की सुन्नत कहा करानी है। जल्दी बोल! शिशु को ऐसे बोलते सुनकर तथा पाँच लिंग बालक के देख कर नाई ने अन्य उपस्थित व्यक्तियों को बुलाकर व अद्भुत दृश्य दिखाया।

सर्व उपस्थित जन समूह यह देखकर अचम्भित हो गया। आपस में चर्चा करने लगे यह अल्लाह का कैसा कमाल है एक बच्चे को पाँच पुरूष लिंग। यह देखकर बिना सुन्नत किए ही चला गया। बच्चे के पाँच लिंग होने की बात जब नीरू व नीमा को पता चला तो कहने लगे आप क्या कह रहे हो। यह नहीं हो सकता। दोनों बालक के पास गए तो शिशु को केवल एक ही पुरूष लिंग था पाँच नहीं थे। तब उन दोनों ने उन उपस्थित व्यक्तियों से कहा आप क्या कह रहे थे देखो कहाँ हैं बच्चे के पाँच लिंग केवल एक ही है। उपस्थित सर्व व्यक्तियों ने पहले आँखों देखे थे पांच पुरूष लिंग

तथा उस समय केवल एक ही लिंग (पेशाब इन्द्री) को देखकर आश्चर्य चकित हो गए। तब शिशु रूप धारी परमेश्वर बोले है भोले लोगों! आप लड़के का लिंग किसलिए काटते हो? क्या लड़के को बनाने में अल्लाह (परमेश्वर) से चूक रह गई जिसे आप ठीक करते हो। क्या आप परमेश्वर से भी बढ़कर हो? यदि आप लड़के के लिंग की चमड़ी आगे से काट कर (सुन्नत करके) उसे मुस्लमान बनाते हो तो लड़की को मुस्लमान कैसे बनाओगे। यदि मुस्लमान धर्म के व्यक्ति अन्य धर्मों के व्यक्तियों से भिन्न होते तो परमात्मा ही सुन्नत करके लड़के को जन्म देता। हे भोले इन्सानों! परमेश्वर के सर्व प्राणी हैं। कोई वर्तमान में मुस्लमान समुदाय में जन्मा है तो वह मृत्यु उपरान्त हिन्दु या ईसाई धर्म में भी जन्म ले सकता है। इसी प्रकार अन्य धर्मों में जन्में व्यक्ति भी मुस्लमान धर्म व अन्य धर्म में जन्म लेते हैं। ये धर्म की दिवारे खड़ी करके आपसी भाई चारा नष्ट मत करो। यह सर्व काल ब्रह्म की चाल है। कलयुग से पहले अन्य धर्म नहीं थे। केवल एक मानव धर्म (मानवता धर्म) ही था। अब कलयुग में काल ब्रह्म ने भिन्न-2 धर्मों में बांट कर मानव की शान्ति समाप्त कर दी है। सुन्नत के समय उपस्थित व्यक्ति बालक मुख से सद्उपदेश सुनकर सर्व दंग रह गए। माता-नीमा ने बालक के मुख पर कपड़ा ढक दिया तथा बोली घना मत बोल। काजी सुन लेंगे तो तुझे मार डालेंगे वो बेरहम हैं बेटा। परमेश्वर कबीर जी माता के हृदय के कष्ट से परिचित होकर सोने का बहाना बना कर खराटे भरने लगे। तब नीमा ने सुख की सांस ली तथा अपने सर्व सम्बन्धियों से प्रार्थना की आप किसी को मत बताना कि कबीर ने कुछ बोला है। कहीं मुझे बेटे से हाथ धोने पड़ें। छः महीने की आयु में परमेश्वर पैरों चलने लगे।

❑❑❑

(ड़) ''ऋषि रामानन्द का उद्धार करना''
''ऋषि रामानन्द स्वामी को गुरु बना कर शरण में लेना''

स्वामी रामानन्द जी अपने समय में सुप्रसिद्ध विद्वान कहे जाते थे। वे द्राविड़ से काशी नगर में वेद व गीता ज्ञान के प्रचार हेतु आए थे। उस समय काशी में अधिकतर ब्राह्मण जनता को शास्त्रविरूद्ध भक्तिविधि के आधार से जनता को दिशा भ्रष्ट कर रहे थे। भूत-प्रेतों के झाड़े जन्त्र करके वे काशी शहर के ब्राह्मण अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे थे। स्वामी रामानन्द जी ने काशी शहर में वेद ज्ञान व गीता जी तथा पुराणों के ज्ञान को अधिक महत्व दिया तथा वह भूत-प्रेत उतारने वाली पूजा का अन्त किया अपने ज्ञान के प्रचार के लिए चौदह सौ ऋषि बना रखे थे। {स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की शरण में आने के पश्चात् चौरासी शिष्य और बनाए थे जिनमें रविदास जी नीरू-नीमा, गीगनौर (राजस्थान) के राजा पीपा ठाकुर आदि थे कुल शिष्यों की संख्या चौदह सौ चौरासी कही जाती है } जो विष्णु पुराण, शिव पुराण तथा देवी पुराण आदि मुख्य-2 पुराणों की कथा करते थे। प्रतिदिन बावन (52) सभाऐं ऋषि जन किया करते थे। काशी के क्षेत्र विभाजित करके मुख्य वक्ताओं को प्रवचन करने को स्वामी रामानन्द जी ने कह रखा था। स्वयं भी उन सभाओं में प्रवचन करने जाते थे। स्वामी रामानन्द जी का बोल बाला आस-पास के क्षेत्र में भी था। सर्व जनता कहती थी कि वर्तमान में महर्षि रामानन्द स्वामी तुल्य विद्वान वेदों व गीता जी तथा पुराणों का सार ज्ञाता पृथ्वी पर नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने अपने स्वभाव अनुसार अर्थात् नियमानुसार रामानन्द स्वामी को शरण में लेना था। कबीर जी ने सन्त गरीबदास जी को अपना सिद्धान्त बताया है जो सन्त गरीबदास जी (बारहवें पंथ प्रवर्तक, छुड़ानी धाम, हरियाणा वाले) ने अपनी वाणी में लिखा है:-

गरीब जो हमरी शरण है, उसका हूँ मैं दास।
गेल–गेल लाग्या फिरूं जब तक धरती आकाश।।
गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठू पाताल।
गरीबदास ढूढत फिरूं अपने हीरे माणिक लाल।
हरदम संगी बिछुड़त नाहीं है महबूब सल्लौना वो।
एक पलक में साहेब मेरा फिरता चौदह भवना वो।
ज्यों बच्छा गऊ की नजर में यूं साई कूँ सन्त।
भक्तों के पीछे फिरै भक्त वच्छल भगवन्त।
कबीर कमाई आपनी कबहूँ न निष्फल जायें।
सात समुन्दर आढे पड़ैं मिले अगाऊ आय।।

सतयुग में विद्याधर नामक ब्राह्मण के रूप में तथा त्रेतायुग में वेदविज्ञ ऋषि के रूप में जन्में स्वामी रामानन्द जी वाले जीव ने परमेश्वर कबीर जी को बालक रूप में प्राप्त किया था। भक्तमति कमाली वाला जीव उस समय दीपिका नाम की विद्याधर ब्राह्मण की पत्नी थी। वही दीपिका वाली आत्मा वेदविज्ञ ब्राह्मण की पत्नी सूर्या थी। जो कलयुग में कमाली बनी। यही दोनों आत्माऐं त्रेता युग में ऋषि दम्पति (वेदविज्ञ तथा सूर्या) था। उस समय भी परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी शिशु

रूप में इन्हें मिले थे। इस के पश्चात् भी इन दोनों जीवों को अनेकों जन्म व स्वर्ग प्राप्ति भी हुई थी। वही आत्माऐं कलयुग में परमेश्वर कबीर जी के समकालीन हुई थी। पूर्व जन्म के सन्त सेवा के पुण्य अनुसार परमेश्वर कबीर जी ने उन पुण्यात्माओं को शरण में लेने के लिए लीला की।

स्वामी रामानन्द जी की आयु 104 वर्ष थी उस समय कबीर देव जी के लीलामय शरीर की आयु 5 (पाँच) वर्ष थी। स्वामी रामानन्द जी महाराज का आश्रम गंगा दरिया के आधा किलो मीटर दूर स्थित था। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व गंगा नदी के तट पर बने पंचगंगा घाट पर स्नान करने जाते थे। पाँच वर्षीय कबीर देव ने अढ़ाई (दो वर्ष छः महिने) वर्ष के बच्चे का रूप धारण किया तथा पंच गंगा घाट की पौड़ियों (सिढ़ियों) में लेट गए। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन की भांति स्नान करने गंगा दरिया के घाट पर गए। अंधेरा होने के कारण स्वामी रामानन्द जी बालक कबीर देव को नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी के पैर की खड़ाऊ (लकड़ी का जूता) सीढियों में लेटे बालक कबीर देव के सिर में लगी। बालक कबीर देव लीला करते हुए रोने लगे जैसे बच्चा रोता है। स्वामी रामानन्द जी को ज्ञान हुआ कि उनका पैर किसी बच्चे को लगा है जिस कारण से बच्चा पीड़ा से रोने लगा है। स्वामी जी बालक को उठाने तथा चुप करने के लिए शीघ्रता से झुके तो उनके गले की माला (एक रूद्राक्ष की कण्ठी माला) बालक कबीर देव के गले में डल गई। जिसे स्वामी रामानन्द जी नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी ने बच्चे को प्यार से कहा बेटा राम-राम बोल राम नाम से सर्व कष्ट दूर हो जाता है। ऐसा कह कर बच्चे के सिर को सहलाया। आर्शीवाद देते हुए सिर पर हाथ रखा। बालक कबीर परमेश्वर अपना उद्देश्य पूरा होने पर चुप होकर पौड़ियों पर बैठ गए।

स्वामी रामानन्द जी ने विचार किया कि वह बच्चा रात्री में रास्ता भूल जाने के कारण यहाँ आकर सो गया होगा। इसे अपने आश्रम में ले जाऊँगा। वहाँ से इसे इनके घर भिजवा दूँगा। ऐसा विचार करके स्नान करने लगे। परमेश्वर कबीर जी वहाँ से अन्तर्धान हुए तथा अपनी झौपड़ी में सो गए। कबीर परमेश्वर ने इस प्रकार स्वामी रामानन्द जी को गुरु धारण किया।

''ऋषि विवेकानन्द जी से ज्ञान चर्चा''

स्वामी रामानन्द जी का एक शिष्य ऋषि विवेकानन्द जी बहुत ही अच्छे प्रवचन कर्त्ता रूप में प्रसिद्ध था। ऋषि विवेकानन्द जी को काशी शहर के एक क्षेत्र का उपदेशक नियुक्त किया हुआ था। उस क्षेत्र के व्यक्ति ऋषि विवेकानन्द जी के धारा प्रवाह प्रवचनों को सुनकर उनकी प्रसंशा किये बिना नहीं रहते थे। उसकी कालोनी में बहुत प्रतिष्ठा बनी थी। प्रतिदिन की तरह ऋषि विवेकानन्द जी विष्णु पुराण से कथा सुना रहे थे। कह रहे थे, भगवान विष्णु सर्वेश्वर हैं, अविनाशी, अजन्मा हैं। सर्व सृष्टी रचनहार तथा पालन हार हैं। इनके कोई जन्मदाता माता-पिता नहीं है। ये स्वयंभू हैं। ये ही त्रेतायुग में अयोध्या के राजा दशरथ जी के घर माता कौशल्या देवी की पवित्र कोख से उत्पन्न हुए थे तथा श्री रामचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुए। समुद्र पर सेतु बनाया, जल पर पत्थर तैराए। लंकापति रावण का वध किया। श्री विष्णु भगवान ही ने द्वापर युग में श्री कृष्णचन्द्र भगवान का अवतार धार कर वासुदेव जी के रूप में माता देवकी के गर्भ से जन्म लिया तथा कंस,

केशि,शिशुपाल, जरासंध आदि दुष्टों का संहार किया। पांच वर्षीय बालक कबीर देव जी भी उस ऋषि विवेकानन्द जी का प्रवचन सुन रहे थे तथा सैंकड़ों की संख्या में अन्य श्रोता गण भी उपस्थित थे। ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रवचनों को विराम दिया तथा उपस्थित श्रोताओं से कहा यदि किसी को कोई प्रश्न करना है तो वह निःसंकोच अपनी शंका का समाधान करा सकता है।

बालक कबीर परमेश्वर खड़े हुए तथा ऋषि विवेकानन्द जी से करबद्ध होकर प्रार्थना कि हे ऋषि जी ! आपने भगवान विष्णु जी के विषय में बताया कि ये अजन्मा हैं, अविनाशी है। इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। एक दिन एक ब्राह्मण श्री शिव पुराण के रूद्र संहिता अध्याय 6,7 को पढ़ कर श्रोताओं को सुना रहे थे, यह दास भी उस सत्संग में उपस्थित था। शिव पुराण में लिखा है कि निराकार परमात्मा आकार में आया वह सदाशिव, काल रूपी ब्रह्म कहलाया। उसने अपने अन्दर से एक स्त्री प्रकट की जो प्रकृति देवी, अष्टांगी, त्रिदेव जननी, शिवा आदि नामों से जानी जाती है। काल रूपी ब्रह्म ने एक काशी नामक सुन्दर स्थान बनाया वहाँ दोनों शिव तथा शिवा अर्थात् काल रूपी ब्रह्म तथा दुर्गा पति-पत्नी रूप में निवास करने लगे। कुछ समय पश्चात् दोनों के सम्भोग से एक लड़का उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा। इसी प्रकार दोनों के रमण करने से एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम ब्रह्मा रखा तथा कमल के फूल पर डाल कर अचेत कर दिया। फिर अध्याय 9 के अन्त में लिखा है कि ''ब्रह्मा रजगुण है, विष्णु सतगुण है तथा शंकर तमगुण है परन्तु सदा शिव इनसे भिन्न है वह गुणातीत है। यहाँ पर सदाशिव के अतिरिक्त तीन देव श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी भी है। इससे सिद्ध हुआ कि इन त्रिदेवों की जननी दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी है तथा पिता काल ब्रह्म है। इन तीनों प्रभुओं विष्णु आदि का जन्म हुआ है इनके माता-पिता भी है।

एक दिन मैंने एक ब्राह्मण द्वारा श्री देवी पुराण के तीसरे स्कंद में अध्याय 4-5 में सुना था कि जिसमें भगवान विष्णु ने कहा है ''इन प्रकृति देवी अर्थात् दुर्गा को मैंने पहले भी देखा था मुझे अपने बचपन की याद आई है। मैं एक वट वृक्ष के नीचे पालने में लेटा हुआ था। यह मुझे पालने में झूला रही थी। उस समय में बालक रूप में था। प्रकृति देवी के निकट जाकर तीनों देव (त्रिदेव) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी करबद्ध होकर खड़े हो गए। भगवान विष्णु ने देवी की स्तुती की ''तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह संसार तुम ही से उद्भाशित हो रहा है। हमारा अविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु होती है। हम अविनाशी नहीं है। तुम अविनाशी हो। प्रकृति देवी हो। भगवान शंकर बोले, हे माता! यदि आप ही के गर्भ से भगवान विष्णु तथा भगवान ब्रह्मा का जन्म हुआ है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर आपका पुत्र नहीं हुआ? अर्थात् मुझे भी जन्म देने वाली तुम ही हो।

हे ऋषि विवेकानन्द जी! आप कह रहे हो कि पुराणों में लिखा है कि भगवान विष्णु के तो कोई माता-पिता नहीं। ये अविनाशी हैं। इन पुराणों का ज्ञान दाता एक श्री ब्रह्मा जी हैं तथा लेखक भी एक ही श्री व्यास जी हैं। जबकि पुराणों में तो भगवान विष्णु नाशवान लिखे हैं। इनके माता-पिता का नाम भी लिखा है। क्यों जनता को भ्रमित कर रहे हो।

कबीर, बेद पढे पर भेद ना जाने, बाचें पुराण अठारा।
जड़ को अंधा पान खिलावें, भूले सिर्जन हारा।।

कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से उपरोक्त पुराणों में लिखा उल्लेख सुनकर ऋषि विवेकानन्द अति क्रोधित हो गया तथा उपस्थित श्रोताओं से बोले यह बालक झूठ बोल रहा है। पुराणों में ऐसा नहीं लिखा है। उपस्थित श्रोताओं ने भी सहमति व्यक्त की कि हे ऋषि जी आप सत्य कह रहे हो यह बालक क्या जाने पुराणों के गुढ़ रहस्य को? आप विद्वान पुरूष परम विवेकशील हो। आप इस बच्चे की बातों पर ध्यान न दो। ऋषि विवेकानन्द जी ने पुराणों को उसी समय देखा जिसमें सर्व विवरण विद्यमान था। परन्तु मान हानि के भय से अपने झूठे व्यक्तव्य पर ही दृढ़ रहते हुए कहा हे बालक तेरा क्या नाम है? तू किस जाति में जन्मा है। तूने तिलक लगाया है। क्या तुने कोई गुरु धारण किया है? शीघ्र बताईए।

कबीर परमेश्वर जी ने बोलने से पहले ही श्रोता बोले हे ऋषि जी! इसका नाम कबीर है, यह नीरू जुलाहे का पुत्र है। कबीर जी बोले ऋषि जी मेरा यही परिचय है जो श्रोताओं ने आपको बताया। मैंने गुरु धारण कर रखा है। ऋषि विवेकानन्द जी ने पूछा क्या नाम है तेरे गुरुदेव का? परमेश्वर कबीर जी ने कहा मेरे पुज्य गुरुदेव वही हैं जो आपके गुरुदेव हैं। उनका नाम है पंडित रामानन्द स्वामी। जुलाहे के बालक कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी बताने से ऋषि विवेकानन्द जी ने ज्ञान चर्चा का विषय बदल कर परमेश्वर कबीर जी को बहुत बुरा-भला कहा तथा श्रोताओं को भड़काने व वास्तविक विषय भूलाने के उद्देश्य से कहा देखो रे भाईया। यह कितना झूठा बालक है। यह मेरे पुज्य गुरुदेव श्री 1008 स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी कह रहा है। मेरे गुरु जी तो इन अछूतों के दर्शन भी नहीं करते। शुद्रों का अंग भी नहीं छूते। अभी जाता हूँ गुरु जी को बताता हूँ। भाई श्रोताओं! आप सर्व कल स्वामी जी के आश्रम पर आना सुबह-2। इस झूठे की कितनी पिटाई स्वामी रामानन्द जी करेगें? इसने हमारे गुरुदेव का नाम मिट्टी में मिलाया है। सर्व श्रोता बोले यह बालक मूर्ख, झूठा, गंवार है आप विद्वान हो। कबीर जी ने कहाः-

निरंजन धन तेरा दरबार–निरंजन धन तेरा दरबार।
जहां पर तनिक ना न्याय विचार। (टेक)
वैश्या ओढे मल–मल खासा गल मोतियों का हार।
पतिव्रता को मिले न खादी सूखा निरस आहार।।
पाखण्डी की पूजा जग में सन्त को कहे लबार।
अज्ञानी को परम विवेकी, ज्ञानी को मूढ गंवार।।
कह कबीर सुनो भाई साधो सब उल्टा व्यवहार,
सच्चों को तो झूठ बतावें, इन झूठों का एतबार।।
निरंजन धन तेरा दरबार।।

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी अपने घर चले गए। वह ऋषि विवेकानन्द अपने गुरु रामानन्द स्वामी जी के आश्रम में गया तथा सर्व घटना की जानकारी बताई। हे स्वामी जी! एक छोटी जाति का जुलाहे का लड़का कबीर अपने आप को बड़ा विद्वान् सिद्ध करने के लिए भगवान् विष्णु जी को नाशवान बताता है। हे ऋषि जी! उसने तो हम ब्रह्मणों का घर से निकलना भी दूभर कर दिया है। हमारी नाक काट डाली अर्थात् हमें महा शर्मिन्दा (लज्जित) होना पड़ रहा है। उसने कल भरी सभा

में कहा है कि पंड़ित रामानन्द स्वामी मेरे गुरु जी हैं। मैंने उनसे दिक्षा ले रखी है। उस कबीर ने तिलक भी लगा रखा था जैसा हम वैष्णव सन्त लगाते है। अपने शिष्य विवेकानन्द की बात सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्रोधित होकर बोले हे विवेकानन्द कल सुबह उसे मेरे सामने उपस्थित करो। देखना सर्व के समक्ष उसकी झूठ का पर्दाफाश करूंगा।

''कबीर जी द्वारा स्वामी रामानन्द के मन की बात बताना''

दूसरे दिन विवेकानन्द ऋषि अपने साथ नौ व्यक्तियों को लेकर जुलाहा कालोनी में नीरू के मकान के विषय में पूछने लगा कि नीरू का मकान कौन सा है? कालोनी के एक व्यक्ति को उनके आव-भाव से लगा कि ये कोई अप्रिय घटना करने के उद्देश्य से आए हैं। उसने शीघ्रता से नीरू को जाकर बताया कि कुछ ब्राह्मण आप के घर आ रहे हैं। उनकी नीयत झगड़ा करने की है। नीमा भी वहीं खड़ी उस व्यक्ति की बातें सुन रही थी उसी समय वे ब्राह्मण गली में नीरू के मकान की ओर आते दिखाई दिए। नीमा समझ गई कि अवश्य कबीर ने इन ब्राह्मणों से ज्ञान चर्चा की है। वे ईर्षालु व्यक्ति मेरे बेटे को मार डालेगें। इतना विचार करके सोए हुए बालक कबीर को जगाया तथा अपनी झोंपड़ी के पीछे ले गई वहाँ लेटा कर रजाई डाल दी तथा कहा बेटा बोलना नहीं है। कुछ व्यक्ति झगड़ा करने के उद्देश्य से अपने घर आ रहे हैं। नीमा अपने घर के द्वार पर गली में खड़ी हो गई। तब तक वे ब्राह्मण घर के निकट आ चुके थे। उन्होंने पूछा क्या नीरू का घर यही है ? नीमा ने उत्तर दिया हाँ ऋषि जी! यही है कहो कैसे आना हुआ। ऋषि विवेकानन्द बोला कहाँ है तुम्हारा शरारती बच्चा कबीर? कल उसने भरी सभा में मेरे गुरुदेव का अपमान किया है। आज उस की पिटाई गुरु जी सर्व के समक्ष करेंगे। इसको सबक सिखाऐंगे। नीमा बोली मेरा बेटा निर्दोष है वह किसी का अपमान नहीं कर सकता। आप मेरे बेटे से ईर्ष्या रखते हो। कभी कोई ब्राह्मण उलहाने (शिकायत) लेकर आता है कभी कोई। आप मेरे बेटे की जान के शत्रु क्यों बने हो? लौट जाईए।

सर्व ब्राह्मण बलपूर्वक नीरू की झोंपड़ी में प्रवेश करके कपड़ों को उठा-2 कर बालक को खोजने लगे। चारपाईयों को भी उल्ट कर पटक दिया। जोर-2 से ऊंची आवाज में बोलने लगे। मात-पिता को दुःखी जानकर बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी रजाई से निकल कर खड़े हो गए तथा कहा ऋषि जी मैं झोपड़ी के पीछे छुपा हूँ। बच्चे की आवाज सुनकर सर्व ब्राह्मण पीछे गए। वहाँ खड़े कबीर जी को पकड़ कर अपने साथ ले जाने लगे। नीमा तथा नीरू ने विरोध किया। नीमा ने बालक कबीर जी को सीने से लगाकर कहा मेरे बच्चे को मत ले जावो। मत ले जावो----- ऐसे कह कर रोने लगी। निर्दयइयों ने नीमा को धक्का मार कर जमीन पर गिरा दिया। नीमा फिर उठ कर पीछे दौड़ी तथा बालक कबीर जी का हाथ उनसे छुटवाने का प्रयत्न किया। एक व्यक्ति ने ऐसा थप्पड़ मारा नीमा के मुख व नाक से रक्त टपकने लगा। नीमा रोती हुई गली में अचेत हो गई। नीरू ने भी बच्चे को छुड़वाने की कोशिश की तो उसे भी पीट-2 कर मृत सम कर दिया। कालोनी वाले उठा कर उनके घर ले गए। बहुत समय पश्चात् दोनों सचेत हुए। बच्चे के वियोग में रो-2 कर दोनों का बुरा हाल था। नीरू चोट के कारण चल फिरने में असमर्थ जमीन पर गिर कर विलाप कर रहा था। कभी चुप होकर भयभीत हुआ गली की ओर देख रहा था। मन में सोच रहा था कि कहीं वे लौट

कर ना आ जाऐं तथा मुझे जान से न मार डालें। फिर बच्चे को याद करके विलाप करने लगता। मेरे बेटे को मत मारो-मत मारो इसने क्या बिगाड़ा है तुम्हारा। ऐसे पागल जैसी स्थिती नीरू की हो गई थी। नीमा होश में आती थी फिर अपने बच्चे के साथ हो रहे अत्याचार की कल्पना कर बेहोश (अचेत) हो जाती थी। मुहल्ले (कालोनी) के स्त्री पुरूष उनकी दशा देखकर अति दुःखी थे।

प्रातःकाल का समय था। स्वामी रामानन्द जी गंगा नदी पर स्नान करके लौटे ही थे। अपनी कुटिया (Hut) में बैठे थे। जब उन्हें पता चला कि उस बालक कबीर को पकड़ कर ऋषि विवेकानन्द जी की टीम ला रही है तो स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर कपड़े का पर्दा लगा लिया। यह दिखाने के लिए कि मैं पवित्र जाति का ब्राह्मण हूँ तथा शुद्रों को दिक्षा देना तो दूर की बात है, सुबह-2 तो दर्शन भी नहीं करता।

ऋषि विवेकानन्द जी ने बालक कबीर देव जी को कुटिया के समक्ष खड़ा करके कहा हे गुरुदेव। यह रहा वह झूठा बच्चा कबीर जुलाहा। उस समय ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रचार क्षेत्र के व्यक्तियों को विशेष कर बुला रखा था। यह दिखाने के लिए कि यह कबीर झूठ बोलता है। स्वामी रामानन्द जी कहेंगे मैंने इसको कभी दिक्षा नहीं दी। जिस से सर्व उपस्थित व्यक्तियों को यह बात जचेगी कि कबीर पुराणों के विषय में भी झूठ बोल रहा था जिन के बारे में कबीर जी ने लिखा बताया था कि श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्मा जी नाशवान हैं। इनका जन्म होता है तथा मृत्यु भी होती है तथा इनकी माता का नाम प्रकृति देवी (दुर्गा) है तथा पिता का नाम सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्म है। जिन हाथों से कबीर परमेश्वर को पकड़ कर लाए थे। उन सर्व व्यक्तियों ने अपने हाथ मिट्टी से रगड़-रगड़ कर धोए तथा सर्व उपस्थित व्यक्तियों के समक्ष बाल्टी में जल भर कर स्नान किया सर्व वस्त्र जो शरीर पर पहन रखे थे वे भी कूट-2 कर धोए।

स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर खड़े पाँच वर्षीय बालक कबीर से ऊँची आवाज में प्रश्न किया। हे बालक ! आपका क्या नाम है? कौन जाति में जन्म है? आपका भक्ति पंथ (मार्ग) कौन है? उस समय लगभग हजार की संख्या में दर्शक उपस्थित थे। बालक कबीर जी ने भी आधीनीपूर्वक ऊँची आवाज में उत्तर दियाः-

जाति है मेरी जगत्गुरु, परमेश्वर है पंथ। गरीबदास लिखित पढे, मेरा नाम निरंजन कंत।।

हे स्वामी सृष्टा मैं सृष्टी मेरे तीर, दास गरीब अधर बसूँ अविगत सत् कबीर।

गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठूं पाताल, गरीब दास ढूंढत फिरू हीरे माणिक लाल।

भावार्थ :- कबीर जी ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी! परमेश्वर के घर कोई जाति नहीं है। आप विद्वान पुरूष होते हुए वर्ण भेद को महत्व दे रहे हो। धिक्कार है ऐसी विद्वता को। मेरी जाति व नाम तथा भक्ति पंथ जानना चाहते हो तो सुनों। मेरा नाम वही कविर्देव है जो वेदों में लिखा है जिसे आप जी पढ़ते हो। मैं वह निरंजन (माया रहित) कंत (सर्व का पति) अर्थात् सबका स्वामी हूँ। मैं ही सर्व सृष्टी रचनहार (सृष्टा) हूँ। यह सृष्टी मेरे ही आश्रित (तीर) है। मैं ऊपर सतलोक में निवास करता हूँ। मैं वह अमर अव्यक्त (अविगत सत्) कबीर हूँ। जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक सं.20 से 22 में है। हे स्वामी जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में गीता ज्ञान दाता अर्थात् काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) अपने विषय में बताता है कि! यह मूर्ख मनुष्य समुदाय मुझ अव्यक्त को कृष्ण रूप में व्यक्ति मान रहे

हैं। मैं सबके समक्ष प्रकट नहीं होता, यह मनुष्य मेरे इस अश्रेष्ठ अटल नियम से अपरिचित हैं (24) गीता अ. 7 श्लोक 25 में कहा है कि मैं (गीता ज्ञान दाता) अपनी योगमाया (सिद्धिशक्ति) से छिपा हुआ अपने वास्तविक रूप में सब के समक्ष प्रत्यक्ष नहीं होता। यह अज्ञानि जन समुदाय मुझ कृष्ण व राम आदि की तरह माता से जन्म न लेने वाले प्रभु को तथा अविनाशी (जो अन्य अव्यक्त परमेश्वर है) को नहीं जानते।

हे स्वामी रामानन्द जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म (क्षर पुरुष) ने अपने को अव्यक्त कहा है यह प्रथम अव्यक्त प्रभु हुआ। अब सुनों दूसरे तथा तीसरे अव्यक्त प्रभुओं के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अव्यक्त परमात्मा का वर्णन किया है कहा है :- यह सर्व चराचर प्राणी दिन समय अव्यक्त परमात्मा से उत्पन्न होते है रात्री समय उसी में लीन हो जाते हैं। यह जानकारी काल ब्रह्म ने अपने से अन्य अव्यक्त प्रभु (परब्रह्म) अर्थात् अक्षर ब्रह्म के विषय में दी है। यह दूसरा अव्यक्त (अविगत) प्रभु हुआ तीसरे अव्यक्त (अविगत) परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में कहा है कि जिस अव्यक्त प्रभु का गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में वर्णन किया है वह पूर्ण प्रभु नहीं है। वह भी वास्तव में अविनाशी प्रभु नहीं है। परन्तु उस अव्यक्त (जिसका विवरण उपरोक्त श्लोक 18-19 में है) से भी अति परे दूसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य परमेश्वर सब भूतों (प्राणियों) के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। वह अक्षर अव्यक्त अविनाशी अविगत अर्थात् वास्तव में अविनाशी अव्यक्त प्रभु इस नाम से कहा गया है। उसी अक्षर अव्यक्त की प्राप्ति को परमगति कहते हैं। जिस दिव्य परम परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस लौट कर इस संसार में नहीं आते (इसी का विवरण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में भी है) वह धाम अर्थात् जिस लोक (धाम) में वह अविनाशी (अव्यक्त) परमात्मा रहता है वह धाम (स्थान) मेरे वाले लोक (ब्रह्मलोक) से श्रेष्ठ है। हे पार्थ! जिस अविनाशी परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी हैं। जिस सच्चिदानन्द घन परमात्मा से यह समस्त जगत परिपूर्ण है, वह सनातन अव्यक्त परमेश्वर तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है (गीता अ. 8/मं.20,21,22) हे स्वामी रामानन्द जी मैं वही तीसरी श्रेणी वाला अविगत (अव्यक्त) सत् (सनातन अविनाशी भाव वाला परमेश्वर) कबीर हूँ। जिसे वेदों में कविर्देव कहा है वही कबीर देव मैं कहलाता हूँ।

हे स्वामी रामानन्द जी! सर्व सृष्टी को रचने वाला (सृष्टा) मैं ही हूँ। मैं ही आत्मा का आधार जगतगुरु जगत् पिता, बन्धु तथा जो सत्य साधना करके सत्यलोक जा चुके हैं उनको सत्यलोक ले जाने वाला काल ब्रह्म की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव वाला कबीर देव (कर्विदेव) मैं ही हूँ। जिसका प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 7 में लिखा है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बृहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः अथर्वाणम् पित्तरम् देवबन्धुम् बृहस्पतिम् नमसा अव च गच्छात् त्वम् विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्

अनुवाद :— (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का

वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बृहस्पतिम्) बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु (च) तथा (नमसाव) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्‌देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद :- जो अचल अर्थात् अविनाशी जगत पिता भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु तथा विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ सतलोक गए हुओं को सतलोक ले जाने वाला सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त काल की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव अर्थात् गुणों वाला ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही वह आप कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, परमेश्वर आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

पाँच वर्षीय बालक के मुख से वेदो व गीता जी के गूढ़ रहस्य को सुनकर ऋषि रामानन्द जी आश्चर्य चकित रह गए तथा क्रोधित होकर अपशब्द कहने लगे। वाणीः-

रामानंद अधिकार सुनि, जुलहा अक जगदीश। दास गरीब बिलंब ना, ताहि नवावत शीश।।407।।
रामानंद कूं गुरु कहै, तनसैं नहीं मिलात। दास गरीब दर्शन भये, पैडे लगी जुं लात।।408।।
पंथ चलत ठोकर लगी, रामनाम कहि दीन। दास गरीब कसर नहीं, सीख लई प्रबीन।।409।।
आडा पड़दा लाय करि, रामानंद बूझंत। दास गरीब कुलंग छबि, अधर डांक कूदंत।।410।।
कौन जाति कुल पंथ है, कौन तुम्हारा नाम। दास गरीब अधीन गति, बोलत है बलि जांव।।411।।
जाति हमारी जगतगुरु, परमेश्वर पद पंथ। दास गरीब लिखति परै, नाम निंरजन कंत।।412।।
रे बालक सुन दुर्बद्धि, घट मठ तन आकार। दास गरीब दरद लग्या, हो बोले सिरजनहार।।413।।
तुम मोमन के पालवा, जुलहै के घर बास। दास गरीब अज्ञान गति, एता दृढ़ विश्वास।।414।।
मान बड़ाई छाड़ि करि, बोलौ बालक बैंन। दास गरीब अधम मुखी, एता तुम घट फैंन।।415।।
तर्क तलूसैं बोलतै, रामानंद सुर ज्ञान। दास गरीब कुजाति है, आखर नीच निदान।।423।।

परमेश्वर कबीर जी (कविर्देव) ने प्रेमपूर्वक उत्तर दिया -

महके बदन खुलास कर, सुनि स्वामी प्रबीन। दास गरीब मनी मरै, मैं आजिज आधीन।।428।।

मैं अविगत गति सैं परै, च्यारि बेद सैं दूर। दास गरीब दशौं दिशा, सकल सिंध भरपूर।।429।।
सकल सिंध भरपूर हूँ, खालिक हमरा नाम। दासगरीब अजाति हूँ, तैं जो कह्या बलि जांव।।430।।
जाति पाति मेरे नहीं, नहीं बस्ती नहीं गाम। दासगरीब अनिन गति, नहीं हमारै चाम।।431।।
नाद बिंद मेरे नहीं, नहीं गुदा नहीं गात। दासगरीब शब्द सजा, नहीं किसी का साथ।।432।।
सब संगी बिछरू नहीं, आदि अंत बहु जांहि। दासगरीब सकल वंसु, बाहर भीतर माँहि।।433।।
ए स्वामी सृष्टा मैं, सृष्टी हमारै तीर। दास गरीब अधर बसूं, अविगत सत्य कबीर।।434।।
पौहमी धरणि आकाश में, मैं व्यापक सब ठौर। दास गरीब न दूसरा, हम समतुल नहीं और।।436।।
हम दासन के दास हैं, करता पुरुष करीम। दासगरीब अवधूत हम, हम ब्रह्मचारी सीम।।439।।
सुनि रामानंद राम हम, मैं बावन नरसिंह। दास गरीब कली कली, हमहीं से कृष्ण अभंग।।440।।
हमहीं से इंद्र कुबेर हैं, ब्रह्मा बिष्णु महेश। दास गरीब धर्म ध्वजा, धरणि रसातल शेष।।447।।
सुनि स्वामी सति भाखहूँ, झूठ न हमरै रिंच। दास गरीब हम रूप बिन, और सकल प्रपंच।।453।।
गोता लाऊं स्वर्ग सैं, फिरि पैठूं पाताल। गरीबदास ढूंढत फिरूं, हीरे माणिक लाल।।476।।
इस दरिया कंकर बहुत, लाल कहीं कहीं ठाव। गरीबदास माणिक चुगैं, हम मुरजीवा नांव।।477।।
मुरजीवा माणिक चुगैं, कंकर पत्थर डारि। दास गरीब डोरी अगम, उतरो शब्द अधार।।478।।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा:- अरे कुजात! अर्थात् शुद्र! छोटा मुंह बड़ी बात, तू अपने आप को परमात्मा कहता है। तेरा शरीर हाड़-मांस व रक्त निर्मित है। तू अपने आपको अविनाशी परमात्मा कहता है तेरा जुलाहे के घर जन्म है फिर भी अपने आप को अजन्मा अविनाशी कहता है तू कपटी बालक है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा:-

ना मैं जन्मु ना मरूँ ना मैं आऊँ जाऊँ, गरीबदास सतगुरु भेद से लखो हमारा ढांव।।
सुन रामानन्द राम मैं, मुझसे ही बावन नृसिंह। दास गरीब युग–2 हम से ही हुए कृष्ण अभंग।।

भावार्थ:- कबीर जी ने उत्तर दिया हे रामानन्द जी, मैं न तो जन्म लेता हूँ ? न मृत्यु को प्राप्त होता हूँ। मैं चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों में आने (जन्म लेने) व जाने (मृत्यु होने) के चक्र से भी रहित हूँ। मेरी विशेष जानकारी किसी तत्वदर्शी सन्त (सतगुरु) के ज्ञान को सुनकर प्राप्त करो। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10-13 में वेद ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण परमात्मा के तत्व (वास्तविक) ज्ञान से मैं अपरिचित हूँ। उस तत्वज्ञान को तत्वदर्शी सन्तों से सुनों उन्हें दण्डवत् प्रणाम करो, अति विनम्र भाव से परमात्मा के पूर्ण मोक्ष मार्ग के विषय में ज्ञान प्राप्त करो, जैसी भक्ति विधि से तत्वदृष्टा सन्त बताऐं वैसे साधना करो। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में लिखा है कि श्लोक 16 में जिन दो पुरूषों (भगवानों) क्षर पुरूष अर्थात् काल ब्रह्म तथा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का उल्लेख है, वास्तव में अविनाशी परमेश्वर तथा सर्व का पालन पोषण व धारण करने वाला परमात्मा तो उन उपरोक्त दोनों से अन्य ही है। हे स्वामी रामानन्द जी! वह उत्तम पुरूष अर्थात् सर्व श्रेष्ठ प्रभु मैं ही हूँ।

इस बात को सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्षुब्ध हो गए तथा कहा कि रे बालक! तू निम्न जाति का और छोटा मुँह बड़ी बात। तू अपने आप भगवान बन बैठा। बुरी गालियाँ भी दी। कबीर साहेब बोले कि गुरुदेव! आप मेरे गुरुजी हैं। आप मुझे गाली दे रहे हो तो भी मुझे आनन्द आ रहा है। लेकिन मैं जो आपको कह रहा हूँ, मैं ज्यों का त्यों पूर्णब्रह्म ही हूँ, इसमें कोई संशय नहीं है। इस बात

को सुनकर रामानन्द जी ने कहा कि ठहर जा तेरी तो लम्बी कहानी बनेगी, तू ऐसे नहीं मानेगा। मैं पहले अपनी पूजा कर लेता हूँ। रामानन्द जी ने कहा कि इसको बैठाओ। मैं पहले अपनी कुछ क्रिया रहती है वह कर लेता हूँ, बाद में इससे निपटूंगा। स्वामी रामानन्द जी क्या क्रिया करते थे? भगवान विष्णु जी की एक काल्पनिक मूर्ति बनाते थे। सामने मूर्ति दिखाई देने लग जाती थी (जैसे कर्मकाण्ड करते हैं, भगवान की मूर्ति के पहले वाले सारे कपड़े उतार कर, उनको जल से स्नान करवा कर, फिर स्वच्छ कपड़े भगवान ठाकुर को पहना कर गले में माला डालकर, तिलक लगा कर मुकुट रख देते थे।) रामानन्द जी कल्पना कर रहे थे। कल्पना करके भगवान की काल्पनिक मूर्ति बनाई। श्रद्धा से जैसे नंगे पैरों जाकर आप ही गंगा जल लाए हों, ऐसी अपनी भावना बना कर ठाकुर जी की मूर्ति के कपड़े उतारे, फिर स्नान करवाया तथा नए वस्त्र पहना दिए। तिलक लगा दिया, मुकुट रख दिया और माला (कण्ठी) डालनी भूल गए। कण्ठी न डाले तो पूजा अधूरी और मुकुट रख दिया तो उस दिन मुकुट उतारा नहीं जा सकता। उस दिन मुकुट उतार दे तो पूजा खण्डित। स्वामी रामानन्द जी अपने आप को कोस रहे हैं कि इतना जीवन हो गया मेरा कभी, भी ऐसी गलती जिन्दगी में नहीं बनी थी। प्रभु आज क्या गलती बन गई मुझ पापी से? यदि मुकुट उतारूँ तो पूजा खण्डित। उसने सोचा कि मुकुट के ऊपर से कण्ठी (माला) डाल कर देखता हूँ (कल्पना से कर रहे हैं कोई सामने मूर्ति नहीं है और पर्दा लगा है कबीर साहेब दूसरी ओर बैठे हैं)। मुकुट में माला फँस गई है आगे नहीं जा रही थी। रामानन्द जी ने सोचा अब क्या करूं? हे भगवन्! आज तो मेरा सारा दिन ही व्यर्थ गया। आज की मेरी भक्ति कमाई व्यर्थ गई (क्योंकि जिसको परमात्मा की कसक होती है उसका एक नित्य नियम भी रह जाए तो उसको दर्द बहुत होता है। जैसे इंसान की जेब कट जाए और फिर बहुत पश्चाताप करता है। प्रभु के सच्चे भक्तों को इतनी लगन होती है।) इतने में बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने कहा कि स्वामी जी माला की घुण्डी खोलो और माला गले में डाल दो। फिर गाँठ लगा दो, मुकुट उतारना नहीं पड़ेगा। रामानन्द जी काहे का मुकुट उतारे था, काहे की गाँठ खोले था। कुटिया के सामने लगा पर्दा भी स्वामी रामानन्द जी ने अपने हाथ से फैंक दिया और ब्राह्मण समाज के सामने उस कबीर परमेश्वर को सीने से लगा लिया। रामानन्द जी ने कहा कि हे भगवन् ! आपका तो इतना कोमल शरीर है जैसे रूई हो आप के शरीर की तुलना में मेरा तो पत्थर जैसा शरीर है। एक तरफ तो प्रभु खड़े हैं और एक तरफ जाति व धर्म की दीवार है। प्रभु चाहने वाली पुण्यात्माऐं धर्म की बनावटी दीवार को तोड़ना श्रेयकर समझते हैं। वैसा ही स्वामी रामानन्द जी ने किया। सामने पूर्ण परमात्मा को पा कर न जाति देखी न धर्म देखा, न छुआ-छात, केवल आत्म कल्याण देखा। इसे ब्राह्मण कहते हैं।

बोलत रामानंदजी, हम घर बड़ा सुकाल। गरीबदास पूजा करैं, मुकुट फही जदि माल।।479।।
सेवा करौं संभाल करि, सुनि स्वामी सुर ज्ञान। गरीबदास शिर मुकुट धरि,माला अटकी जान।।480।।
स्वामी घुंडी खोलि करि, फिरि माला गल डार। गरीबदास इस भजन कूं, जानत है करतार।।481।।
ड्यौढी पड़दा दूरि करि, लीया कंठ लगाय। गरीबदास गुजरी बौहत, बदनैं बदन मिलाय।।482।।

नोट :- ऋषि रामानन्द सम्बन्धित अधिक वाणी कृप्या पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 403 से 405पर

''कबीर देव द्वारा ऋषि रामानन्द के आश्रम में दो रूप धारण करना''

स्वामी रामानन्द जी ने परमेश्वर कबीर जी से कहा कि ''आपने झूठ क्यों बोला ?'' कबीर परमेश्वर जी बोले! कैसा झूठ स्वामी जी? स्वामी रामानन्द जी ने कहा कि आप कह रहे थे कि आपने मेरे से नाम ले रखा है। आपने मेरे से उपदेश कब लिया? बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी बोले एक समय आप स्नान करने के लिए पँचगंगा घाट पर गए थे। मैं वहाँ लेटा हुआ था। आपके पैरों की खड़ाऊ मेरे सिर में लगी थी! आपने कहा था कि बेटा राम नाम बोलो। रामानन्द जी बोले-हाँ, अब कुछ याद आया। परन्तु वह तो बहुत छोटा बच्चा था (क्योंकि उस समय पाँच वर्ष की आयु के बच्चे बहुत बड़े हो जाया करते थे तथा पाँच वर्ष के बच्चे के शरीर तथा ढ़ाई वर्ष के बच्चे के शरीर में दुगूना अन्तर हो जाता है)। *कबीर परमेश्वर जी ने कहा स्वामी जी देखो, मैं ऐसा था। स्वामी रामानन्द जी के सामने भी खड़े हैं और एक ढाई वर्षीय बच्चे का दूसरा रूप बना कर किसी सेवक की वहाँ पर चारपाई बिछी थी उसके ऊपर विराजमान हो गए। रामानन्द जी ने छः बार तो इधर देखा और छः बार उधर देखा। फिर आँखें मलमल कर देखा कि कहीं तेरी आँखें धोखा तो नहीं खा रही हैं। इस प्रकार देख ही रहे थे कि इतने में कबीर परमेश्वर जी का छोटे वाला रूप हवा में उड़ा और कबीर परमेश्वर जी के बड़े पाँच वर्ष वाले स्वरूप में समा गया। पाँच वर्ष वाले स्वरूप में कबीर परमेश्वर जी रह गए।*

मनकी पूजा तुम लखी, मुकुट माल परबेश। गरीबदास गति को लखै, कौन वरण क्या भेष।।483।।
यह तौ तुम शिक्षा दई, मानि लई मनमोर। गरीबदास कोमल पुरूष, हमरा बदन कठोर।।484।।

रामानन्द जी बोले कि मेरा संशय मिट गया कि आप ही पूर्ण ब्रह्म हो। हे परमेश्वर! आप को कैसे पहचान सकते हैं। आप किस जाति में उत्पन्न तथा कैसी वेश भूषा में खड़े हो। हम नादान प्राणी आप के साथ वाद-विवाद करके दोषी हो गए, क्षमा करना परमेश्वर कविर्देव, मैं आप का अनजान बच्चा हूँ। रामानन्द जी ने फिर अपनी अन्य शंकाओं का निवारण कराया।

शंकाः- हे कविर्देव ! मैं राम-राम कोई मन्त्र शिष्यों को जाप करने को नहीं देता। यदि आपने मुझसे दिक्षा ली है तो वह मन्त्र बताईए जो मैं शिष्य को जाप करने को देता हूँ।

उत्तर कबीर देव का :- हे स्वामी जी! आप ओम् नाम जाप करने को देते हो तथा ओ३म् नमों भगवते वासुदेवाय का जाप तथा विष्णु सतोत्र की आवर्ती की भी आज्ञा देते हो।

शंकाः- आपने जो मन्त्र बताया यह तो सही है। एक शंका और है उसका भी निवारण किजिए। मैं जिसे शिष्य बनाता हूँ उसे एक चिन्ह देता हूँ। वह आप के पास नहीं है।

उत्तरः- बन्दी छोड़ कबीर देव बोले हे गुरुदेव! आप एक रूद्राक्ष की कण्ठी (माला) देते हो गले में पहनने के लिए। यह देखो गुरु जी उसी दिन आपने अपनी कण्ठी गले से निकाल कर मेरे गले में पहनाई थी। यह कहते हुए कविर्देव ने अपने कुर्ते के नीचे गले में पहनी वही कण्ठी (माला) सार्वजनिक कर दी। रामानन्द जी समझ गए यह कोई साधारण बच्चा नहीं है। यह प्रभु का भेजा हुआ कोई तत्वदर्शी आत्मा है। इस से ज्ञान चर्चा करनी चाहिए। चर्चा के विषय को आगे बढाते हुए स्वामी रामानन्द जी बोले हे बालक कबीर! आप अपने आप को परमेश्वर कहते हो परमात्मा ऐसा अर्थात् मनुष्य जैसा थोड़े ही है।

''परमात्मा साकार है या निराकार ?''

प्रश्नः- कविर्देव ने पूछा हे स्वामी जी! कृप्या आप बताईए परमात्मा साकार है या निराकार?

उत्तरः- ऋषि रामानन्द स्वामी बोले? परमात्मा निराकार है। सर्वव्यापक, ध्यान समाधी द्वारा शरीर में परमात्मा का केवल प्रकाश देखा जा सकता है। परमात्मा सूर्य के समान स्वयं प्रकाशमान् अर्थात् स्वप्रकाशित है।

विवेचनः- परमेश्वर कबीर जी ने तर्क दिया हे स्वामी जी! आपने कहा परमेश्वर निराकार है। वह सूर्य के समान स्वप्रकाशित है। समाधी अवस्था में केवल उसका प्रकाश ही देखा जा सकता है। यदि कोई कहे कि सूर्य निराकार है केवल उसका प्रकाश ही देखा जा सकता है। सूर्य स्वप्रकाशित है। क्या यह विचार आँखों वाले व्यक्ति के हो सकते हैं ? अर्थात् नहीं ये विचार तो अन्धे के हो सकते है जो अन्य अन्धों में ही रहता है जिसे कोई आँखों वाला जीवन में मिला ही नही हो! उस नेत्रहीन से कोई पूछे आपने सूर्य के बिना प्रकाश किसका देखा। सूर्य साकार है। उसी से प्रकाश निकलता है।

यही दशा आप जी द्वारा बताए अनुभव की है। आप जी ने कहा है कि परमात्मा का केवल प्रकाश देखा जा सकता है। परमात्मा स्वप्रकाशित है। यदि परमात्मा निराकार है तो प्रकाश किसका देखा। सूर्य की तरह स्वप्रकाशित है तो सूर्य को निराकार नहीं कहा जा सकता। आप जी का अनुभव उस नेत्रहीन जैसा है जिसने कभी सूर्य न देखा हो तथा न आँखों वाला व्यक्ति यह बताने वाला मिला हो कि सूर्य निराकार नहीं साकार है। वर्तमान तक जितने भी ऋषि, महर्षि, ब्रह्मा-विष्णु व महेश तक अनुभव ऐसा ही है जैसा आप जी ने बताया है। क्योंकि आप जी को तथा अन्य को आज तक तत्वदर्शी सन्त (आँखों वाला) नहीं मिला है। ब्रह्मा जी ने चार युगों तक ध्यान लगाया परमात्मा के दर्शन नहीं हुए। भगवान विष्णु जी ने बारह हजार (12000) वर्षों तक ध्यान लगाया परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हुआ। भगवान शिवजी ने 88000 (अठासी हजार) वर्षों तक ध्यान लगाया (मैडिटेशन किया) परमात्मा नहीं मिला। इसी प्रकार उसी विधि से अन्य ऋषियों ने भी ध्यान लगाया परन्तु परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हुआ। सर्व ने अपना-2 अनुभव लिख दिया तथा अन्य को कह सुनाया कि परमात्मा निराकार है। जो आपजी व अन्य ऋषियों ने कहा है कि परमात्मा स्वप्रकाशित है सूर्य सदृश प्रकाशमान है। यह विचार वेदों में पढ़कर केवल कहने को अपने अनुभव में लिख डाले तथा कह सुनाए सर्व साधक इसी घीसे पीटे सिद्धान्त को एक दूसरे को सुनाते आ रहे है जो अपने आप गलत सिद्ध हो रहा है।

यह सर्व शास्त्रविरूद्ध साधना का परिणाम है। आप जी व सर्व महर्षि जी कहते है कि समाधी दशा में परमात्मा साधक को साक्षात् होता है (प्रत्यक्ष होता है)। यह विचार ही आप के उस सिद्धान्त के विरूद्ध है जिस में आप परमात्मा को निराकार कहते हो। निराकार परमात्मा प्रत्यक्ष ही नहीं हो सकता उसका साक्षात् ही नहीं हो सकता। जो कहते हैं कि उपासना से परब्रह्म से मेल व उसका साक्षात्कार होना उपासना का लाभ है तथा वे परमात्मा को निराकार भी कहते हैं वे अनुभव हीन तथा वेद ज्ञान हीन कोरे अज्ञानी हैं। हे स्वामी जी! यजुर्वेद अध्याय 5 मन्त्र 1 में स्पष्ट है कि परमात्मा सशरीर है। मन्त्र भाषा=अग्ने तनूः असि। विष्णवे त्वा सोमस्य तनूः असि।

स्वामी रामानन्द जी को तेज झटका सा लगा मानों नींद से जागे हों तथा कहा हे बालक

कबीर! आपने मेरे ज्ञान नेत्र खोल दिए। इस यजुर्वेद अध्याय 5 मन्त्र 1 में स्पष्ट है कि (अग्नेः) हे परमेश्वर आपका तेजोमय (तनूः) शरीर (असि) है। अर्थात् हे परमेश्वर आप का स्वप्रकाशित शरीर है। (त्वा) आप (सोमस्य) अमर परमेश्वर का (विष्णवे) सर्व के पालने पोषण के लिए भी (तनूः) शरीर (असी) है।

प्रश्न :- हे कबीर जी! मैं ध्यान समाधी (मैडिटेश्न) बहुत लगाता हूँ। मैं समाधी दशा में बहुत ऊपर तक चला जाता हूँ। परन्तु परमात्मा का साक्षात्कार कभी नहीं हुआ। मुझे कुछ प्रकाश अवश्य दिखाई देता है। वह प्रकाश क्या है? कृपा मेरी शंका का समाधान किजिए।

उत्तर कबीर जी का :- हे स्वामी जी वह ब्रह्मण्डीय प्रकाश है जो परमेश्वर के प्रकाश का ही प्रतिबिम्ब है यह प्रकाश परमात्मा नहीं है।

उदाहरण :- जैसे तालाब के जल में सूर्य का प्रकाश है, उसका प्रतिबिम्ब किसी मकान के कक्ष में चमक रहा हो उस प्रकाश को सूर्य का प्रकाश कहें तो ठीक है। फिर यह कहें कि सूर्य निराकार है। वह दिखाई थोड़ें ही देता है। यह गलत है। उस व्यक्ति ने सूर्य देखा ही नहीं है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा सत्यलोक (ऋतधाम) में स्थाई रूप से रहता है। उसके एक रोम कूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले जुले प्रकाश से भी अधिक है। वह प्रकाश जल में सूर्य के प्रकाश के समान प्रतिबिम्बित हो कर ब्रह्माण्डों को प्रकाशित कर रहा है। यह मानव शरीर भी एक ब्रह्मण्ड का छोटा रूप है। जैसे टेलीविजन में बहुत बड़े शहर का चित्र स्पष्ट दिखाई देता है। इस प्रकार एक मानव शरीर में परमात्मा का बहुत धूमिल प्रतिबिम्ब प्रकाश साधक को दिखाई देता है। वह प्रकाश परमात्मा नहीं है तथा न इस शरीर में उस परमात्मा का निवास स्थान है केवल प्रतिबिम्ब है जैसे भिन्न -2 घड़ों के जल में सूर्य दिखाई देता है जिस शरीर में आप उस मन्द प्रकाश को देखकर साधना सफल मान बैठते हो।

हे स्वामी जी! सर्व प्रभु स्वप्रकाशित तेजपुँज के शरीर युक्त हैं। परन्तु उनके शरीरों के प्रकाश में अन्तर है। जैसे एक साठ वाट का बल्ब होता है, दूसरा सौ वाट का, तीसरा हजार वाट का, चौथा सूर्य का प्रकाश, सर्व स्वप्रकाशित हैं परन्तु प्रकाश में अन्तर है। इसी प्रकार भगवान ब्रह्मा रजगुण व भगवान विष्णु सतगुण तथा भगवान शिव तमगुण के शरीर भी स्वप्रकाशित हैं अर्थात् इनके शरीरों का भी प्रकाश हैं परन्तु इनके शरीरों का प्रकाश काल ब्रह्म के शरीर के प्रकाश से बहुत कम है। जैसे इन तीनों के शरीर सौ-सौ वाट के बल्ब जानों तथा काल ब्रह्म के शरीर के प्रकाश को एक हजार वाट के बल्ब का जानों तथा परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के शरीर को दस हजार वाट के बल्ब के प्रकाश तुल्य जानों तथा पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) के प्रकाश को सूर्य के तुल्य जानो। इस प्रकार सर्व प्रभुओं की स्थिती है। अन्य प्रभु भी अपने-2 लोक में साकार रूप में विद्यमान हैं। पूर्ण परमात्मा भी अपने तेजोमय मानव सदृश शरीर युक्त सतलोक में स्थाई रहता है तथा वही परमात्मा अन्य शरीर हल्के तेज का भी धारण करके यहाँ पृथ्वी लोक पर या अन्य लोकों में भी आता-जाता रहता है।

इसलिए यजुर्वेद अध्याय 5 मन्त्र 1 में परमेश्वर के शरीर युक्त होने की दो स्थिति लिखी हैं। उपरोक्त यथार्थ व्याख्या अर्थात् तत्वज्ञान परमेश्वर कबीर जी से सुनकर स्वामी रामानन्द ऋषि जी आश्चर्य चकित हो गए तथा हाथों हाथ सच्चाई को प्राप्त करके निरुत्तर होकर मूर्ति समान निर्जीव

से हो गए तथा सोचने लगे हम तो पूर्ण रूप से अज्ञानी हैं। आज तक ऐसा ज्ञान कलयुग में बताने वाला नहीं है। यह तो कोई परम विद्वान आत्मा है जो पूर्व जन्म में वेदवित् रहा होगा। इसीलिए तो इसे इतनी छोटी आयु में वेदों के मन्त्र भी याद है। अभी भी स्वामी रामानन्द जी नहीं समझ सके कि यह साधारण व्यक्ति नहीं परमेश्वर है। केवल इतना ही समझे कि यह किसी जन्म में अवश्य महाविद्वान् रहा होगा अधिक जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रश्न किया।

प्रश्नः- हे बालक कबीर! मैं तो भगवान विष्णु जी को इष्ट रूप में पूजता हूँ। मैं चारो वेदों, श्री मद्भगवत् गीता, सर्व पुराणों को आधार मानकर ज्ञान प्रचार करता हूँ। मैंने यही निष्कर्ष निकाला है कि श्री विष्णु जी सतगुण युक्त पूर्ण परमात्मा है। ये ही लीला करने के लिए श्री राम व श्री कृष्ण रूप में अवतरित हुए अन्य अवतार भी विष्णु भगवान के ही अंश थे। श्री विष्णु जी स्वयंभू हैं। अपनी सृष्टी (उत्पति) आप ही करते हैं। यह ही अन्य तीन रूप धारण करते हैं। श्री ब्रह्मा रजगुण रूप धार कर प्राणियों की उत्पत्ति करते हैं तथा सत्गुण विष्णु रूप धार कर सर्व प्राणियों की स्थिति करते है तथा तमगुण शिव रूपधार कर सर्व का संहार करते हैं। यह उपरोक्त उल्लेख श्री विष्णु पुराण में है।

उत्तर :- कबिर देव बोले, हे स्वामी जी! आप सर्व पुराणों को सत्य मानते हो तो पहले श्री शिव पुराण के रूद्र संहिता अध्याय 6 से 9 तक से ज्ञान ग्रहण करते है। (श्री शिव पुराण प्रकाशक-गीता प्रैस गोरखपुर, लेखक-व्यास जी, अनुवादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ 100 से 102 पर अध्याय 6 में तथा शिव पुराण जो (विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 अनुवादक दीन दयाल शर्मा, प्रकाशक रामायण प्रैस मुम्बई, पृष्ठ 67 तथा सम्पादक पंडित रामलग्न पाण्डेय ''विशारद'' प्रकाशक सावित्र ठाकुर, प्रकाशन रथयात्रा वाराणसी, ब्रांच - नाटी इमली वाराणसी के विद्येश्वर संहिता अध्याय 6, पृष्ठ 54 तथा टीकाकार डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी साहित्य आयुर्वेद ज्योतिष आचार्य, एम.ए.,पी.एच.डी.,डी. एस,सी.ए.। प्रकाशक चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 38 यू.ए., जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, संस्कृत सहित शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 पृष्ठ 45 पर लिखा है) निराकार परमात्मा ने अपनी साकार मूर्ति बनाई जो सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म है। उस सदाशिव ने अपने शरीर से एक स्त्री की उत्पति की उस देवी को प्रकृति, प्रधान, अम्बिका, त्रिदेव जननी (ब्रह्मा,विष्णु व महेश की माता) कहा जाता है। जिसकी आठ भुजाऐं हैं।

''श्री विष्णु जी की माता दुर्गा तथा पिता काल ब्रह्म''

जो वे सदा शिव है उन्हें काल रूपी ब्रह्म, परमपुरूष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्मने प्रकृति (दुर्गा) को साथ लेकर एक गुप्त स्थान काशी बनाया। उस शिव (काल ब्रह्म) तथा शिवा (दुर्गा) ने पति-पत्नी रूप में रह कर एक पुत्र उत्पन्न किया। उसका नाम विष्णु रखा (अध्याय 7 रूद्र संहिता पृष्ठ 103-104 श्री शिव पुराण)

''श्री ब्रह्मा तथा श्री शिव का पिता काल ब्रह्म (शिव) तथा माता शिवा (दुर्गा)''

अध्याय 7, 8, 9(पृष्ठ 105-110) श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि श्री शिव तथा शिवा (काल रूपी ब्रह्म तथा प्रकृति/दुर्गा/अष्टंगी) ने पति-पत्नी व्यवहार से मेरी भी उत्पति की तथा फिर मुझे अचेत करके कमल पर डाल दिया। (यही काल महाविष्णु रूप धारकर अपनी नाभि से एक कमल

उत्पन्न कर लेता है) ब्रह्मा जी आगे कहता है कि फिर मैं होश में आया। कमल की मूल को ढूंढना चाहा, परन्तु असफल रहा। फिर तप करने की आकाशवाणी हुई। तप किया। फिर मेरी तथा विष्णु की किसी बात पर लड़ाई हो गई। (कृप्या देखें विवरण इसी पुस्तक के पृष्ठ 496 पर) तब हमारे बीच में एक तेजोमय लिंग प्रकट हो गया तथा ओ३म्-ओ३म् का नाद प्रकट हुआ तथा उस लिंग पर अ-उ-म तीनों अक्षर भी लिखे थे। फिर रूद्र रूप धारण करके सदाशिव पाँच मुख वाले मानव रूप में प्रकट हुए, उनके साथ शिवा (दुर्गा) भी थी।

फिर शंकर को अचानक प्रकट किया (क्योंकि यह पहले अचेत था, फिर सचेत करके तीनों को इक्कठे कर दिया) तथा कहा कि तुम तीनों सृष्टी-स्थिति तथा संहार का कार्य संभालो।

रजगुण प्रधान ब्रह्मा जी, सतगुण प्रधान विष्णु जी तथा तमगुण प्रधान शिव जी हैं। इस प्रकार तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल रूपी ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं (पृष्ठ 110 पर)।

श्री शिव महापुराण (अनुवाद कर्ता= पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र प्रकाशक, मुद्रक :- खेमराज, श्री कृष्णदास प्रकाशन मुम्बइ, अध्यक्षः श्री वैंकटेश्वर प्रैस खेमराज कृष्ण दास मार्ग, मुम्बई) के विद्येश्वर संहिता के अध्याय 9 व 10 पृष्ठ 14 से 18 पर लिखा है कि युद्ध कर रहे ब्रह्मा तथा विष्णु के मध्य में जो प्रकाशमय स्तम्भ प्रकट हुआ था। उस के अन्त को न पा कर दोनों थक चुके तब उस स्तम्भ से वह ईश्वर साकार हुआ। उसको देखते ही विष्णु ने कांपते हुए हाथों से उनके चरण पकड़ लिए। कहा मुझे स्तम्भ का अन्त नहीं पाया। ईश्वर बोले वत्स विष्णु आपने सत्य कहा है। इस प्रकार सत्य कहने से शिव विष्णु पर बहुत खुश हुए। अपनी समानता विष्णु को दी। (विद्येश्वर संहिता अध्याय 7 पृष्ठ 14)

ब्रह्मा ने झूठ बोला कि मैंने स्तम्भ का अन्त पा लिया है। इसलिए शिव ने (जो स्तम्भ से प्रकट हुआ था) भैरो की उत्पति की उस से कह कर ब्रह्मा का पांचवा मुख काट दिया। जिससे ब्रह्मा ने झूठ बोला था। तब उस शिव ने ब्रह्मा तथा विष्णु को कहा कि तुमने अज्ञान से अपने को ईश (प्रभु) माना यह बड़ा अद्भुत हुआ अर्थात् तुम प्रभु नहीं हो। इसी को दूर करने को ही मैं रण स्थान में आया हूँ। मैं इस सब का ईश्वर हूँ यह संसार मेरा है। (विद्येश्वर संहिता अध्याय9 पृष्ठ 7) फिर विद्येश्वर संहिता अध्याय 10 पृष्ठ 18 पर लिखा है कि शिव बोला हे पुत्रों (ब्रह्मा-विष्णु) आपने यह कृत्य (सृष्टी-स्थिति) अपने तप से प्राप्त किया है। मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है। इसी प्रकार दूसरे दो कृत्य रूद्र तथा महेश को दिए हैं। परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पाने को समर्थ नहीं है।रूद्र संहिता अध्याय 6 पृष्ठ 17 पर लिखा है कि विष्णु ने बारह हजार दिव्य वर्षों तक तप किया। फिर बहुत समय तक दारूण तप किया परन्तु अपने पिता शिव अर्थात् काल ब्रह्म की प्राप्ति नहीं हुई।

सार विचार :- उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि काल रूपी ब्रह्म अर्थात् सदाशिव तथा प्रकृति (दुर्गा) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव के माता पिता हैं। दुर्गा इसे प्रकृति तथा प्रधान भी कहते हैं, इसकी आठ भुजाऐं हैं। यह सदाशिव अर्थात् ज्योति निरंजन काल के शरीर अर्थात् पेट से निकली है। ब्रह्म अर्थात् काल तथा प्रकृति (दुर्गा) सर्व प्राणियों को भ्रमित रखते हैं। अपने पुत्रों को भी वास्तविकता नहीं बताते। कारण है कि कहीं काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्मण्ड के

प्राणियों को पता लग जाए कि हमें तप्तशिला पर भून कर काल (ब्रह्म-ज्योति निरंजन) खाता है। इसीलिए जन्म-मृत्यु तथा अन्य दुःखदाई योनियों में पीड़ित करता है तथा अपने तीनों पुत्रों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी से उत्पत्ति, स्थिति, पालन तथा संहार करवा कर अपना आहार तैयार करवाता है। क्योंकि काल को एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है, कृपया श्रीमद् भगवत् गीता जी अध्याय 14 श्लोक 5 में भी देखें काल (ब्रह्म) तथा प्रकृति (दुर्गा) के पति-पत्नी कर्म से रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की उत्पत्ति। लिखा है :- प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण जीवात्मा को शरीर में बांध कर रखते हैं।

उपरोक्त पुराण के उल्लेख से यह भी सिद्ध हुआ कि (1) ब्रह्मा-विष्णु तथा महेश ईश (प्रभु) नहीं हैं। (2) यह भी सिद्ध हुआ कि ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश से भिन्न चौथा काल ब्रह्म है। ये तीनों उस काल ब्रह्म अर्थात् सदा शिव के पुत्र हैं। (3) यह भी सिद्ध हुआ कि काल ब्रह्म पहले तप कराता है फिर उन्हीं के तप के प्रतिफल में इन्हें सृष्टी-स्थिति, संहार का कार्य भार सौंपता है।

''तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु सदाशिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टी-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् इश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा (42)।

हिन्दी अनुवाद :- विष्णु जी ने कहा हे माता ! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान

हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो। (42)

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः। (8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे माता! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

''निष्कर्ष''

श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान भी इसी काल रूपी ब्रह्म ने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके बोला है। उपरोक्त पवित्र पुराणों ने प्रमाणित कर दिया कि प्रकृति, दुर्गा को कहते हैं तथा सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म तथा प्रकृति से रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी की उत्पत्ति पति-पत्नी व्यवहार से हुई है। इसी की साक्षी श्रीमद्भगवत गीता जी भी है। श्री गीता जी सर्व शास्त्रों का सार है, इसलिए इसमें संक्षिप्त विवरण सांकेतिक शब्दों (कोड वर्डस) में है। जिसे तत्वदर्शी संत ही समझा सकता है।

अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में पवित्र श्रीमद्भगवत गीता बोलने वाले काल ब्रह्म ने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके कहा है कि प्रकृति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म इसकी योनी में बीज स्थापना करता हूँ, जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। मैं सर्व का पिता तथा प्रकृति (दुर्गा) सर्व की माता कहलाती है। प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) जीवात्मा को कर्माधार से शरीरों में बांधते हैं अर्थात् ये तीनों ही सर्व प्राणियों को संस्कार के आधार से उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार करके फंसा कर रखते हैं।

अध्याय 11 श्लोक 32 में कहा है कि मैं काल हूँ, सर्व को खाने के लिए प्रकट हुआ हूँ। अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन कह रहा है कि आप तो ऋषियों को भी खा रहे हो, देवताओं तथा सिद्ध भी आपसे मंगल अर्थात् रक्षा की याचना कर रहे हैं। वेदों के स्त्रोतों द्वारा आप की स्तुति कर रहे हैं। परन्तु आप सर्व को खा रहे हो। कुछ आपकी दाढ़ी में लटके दिखाई देते हैं। कुछ आप में प्रवेश कर रहे हैं।

परमेश्वर कबीर जी से उपरोक्त विवरण सुन कर श्री शिवपुराण को स्वामी रामानन्द जी ने पढ़ा जो सत्य पाया। श्री मदभगवत् गीता तो महर्षि रामानन्द स्वामी जी को कण्ठस्थ थी तुरन्त समझ गए। इस तथ्य को प्रत्यक्ष देखकर स्वामी रामानन्द जी हैरान थे। मन ही मन में विचार कर रहे थे कि दीपक के नीचे अन्धेरा। हम प्रति दिन इन्हीं पुराणों तथा गीता जी को पढ़ते थे कभी समझ नहीं सके। हमारी बुद्धि को काल द्वारा हरा गया था।

कवीर परमेश्वर जी ने कहा हे स्वामी जी! कृप्या श्री देवी पुराण में लिखा उल्लेख भी पढ़िए

जिस के तीसरे स्कन्द में तीनों (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी) स्वयं को नाशवान बताते हैं।

''श्री देवी महापुराण से ज्ञान ग्रहण करें''

''श्री देवी महापुराण से आंशिक लेख तथा सार विचार''
(संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत, सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी, सम्पादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार,
चिम्मनलाल गोस्वामी, प्रकाशक-गोबिन्दभवन-कार्यालय, गीताप्रेस, गोरखपुर)

।।श्री जगदम्बिकायै नमः।।

श्री मद्देवी मद्भागवत

तीसरा स्कन्ध अध्याय-----

राजा परीक्षित ने श्री व्यास जी से ब्रह्मण्ड की रचना के विषय में पूछा। श्री व्यास जी ने कहा कि राजन मैंने यही प्रश्न ऋषिवर नारद जी से पूछा था, वह वर्णन आपसे बताता हूँ। मैंने (श्री व्यास जी ने) श्री नारद जी से पूछा एक ब्रह्मण्ड के रचियता कौन हैं? कोई तो श्री शंकर भगवान को इसका रचियता मानते हैं। कुछ श्री विष्णु जी को तथा कुछ श्री ब्रह्मा जी को तथा बहुत से आचार्य भवानी को सर्व मनोरथ पूर्ण करने वाली बतलाते हैं। वे आदि माया महाशक्ति हैं तथा परमपुरुष के साथ रहकर कार्य सम्पादन करने वाली प्रकृति हैं। ब्रह्म के साथ उनका अभेद सम्बन्ध है। (पृष्ठ 114)

नारद जी ने कहा – व्यास जी! प्रचीन समय की बात है – यही संदेह मेरे हृदय में भी उत्पन्न हो गया था। तब मैं अपने पिता अमित तेजस्वी ब्रह्मा जी के स्थानपर गया और उनसे इस समय जिस विषय में तुम मुझसे पूछ रहे हो, उसी विषय में मैंने पूछा। मैंने कहा – पिताजी! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ? इसकी रचना आपने की है या श्री विष्णु जी ने या श्री शंकर जी ने–कृपया सत–सत बताना।

ब्रह्मा जी ने कहा – (पृष्ठ 115 से 120 तथा 123, 125, 128, 129) बेटा! मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। पूर्वकाल में सर्वत्र जल–ही–जल था। तब कमल से मेरी उत्पत्ति हुई। मैं कमल की कर्णिकापर बैठकर विचार करने लगा – 'इस अगाध जल में मैं कैसे उत्पन्न हो गया? कौन मेरा रक्षक है? कमलका डंठल पकड़कर जल में उतरा। वहाँ मुझे शेषशायी भगवान् विष्णु का दर्शन हुआ। वे योगनिद्रा के वशीभूत होकर गाढ़ी नींद में सोये हुए थे। इतने में भगवती योगनिद्रा याद आ गयीं। मैंने उनका स्तवन किया। तब वे कल्याणमयी भगवती श्रीविष्णु के विग्रहसे निकलकर अचिन्त्य रूप धारण करके आकाश में विराजमान हो गयीं। दिव्य आभूषण उनकी छवि बढ़ा रहे थे। जब योगनिद्रा भगवान् विष्णुके शरीर से अलग होकर आकाश में विराजने लगी, तब तुरंत ही श्रीहरि उठ बैठे। अब वहाँ मैं और भगवान् विष्णु – दो थे। वहीं रूद्र भी प्रकट हो गये। हम तीनों को देवी ने कहा – ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर! तुम भलीभांति सावधान होकर अपने–अपने कार्यमें संलग्न हो जाओ। सृष्टी, स्थिति और संहार – ये तुम्हारे कार्य हैं। इतनेमें एक सुन्दर विमान आकाश से उतर आया। तब उन देवी नें हमें आज्ञा दी – 'देवताओं! निर्भीक होकर इच्छापूर्वक इस विमान में प्रवेश कर जाओ। ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र! आज मैं तुम्हें एक अद्भुत दृश्य दिखलाती हूँ।'

हम तीनों देवताओं को उस पर बैठे देखकर देवी ने अपने सामर्थ्य से विमान को आकाश में उड़ा दिया

इतने में हमारा विमान तेजी से चल पड़ा और वह दिव्यधाम– ब्रह्मलोक में जा पहुंचा। वहाँ एक दूसरे ब्रह्मा विराजमान थे। उन्हें देखकर भगवान् शंकर और विष्णु को बड़ा आश्चर्य हुआ। भगवान् शंकर और विष्णुने मुझसे पूछा–'चतुरानन! ये अविनाशी ब्रह्मा कौन हैं?' मैंने उत्तर दिया–'मुझे कुछ पता नहीं, सृष्टीके अधिष्ठाता

ये कौन हैं। भगवन्! मैं कौन हूँ और हमारा उद्देश्य क्या है – इस उलझन में मेरा मन चक्कर काट रहा है।'

इतने में मनके समान तीव्रगामी वह विमान तुरंत वहाँ से चल पड़ा और कैलास के सुरम्य शिखर पर जा पहुंचा। वहाँ विमान के पहुंचते ही एक भव्य भवन से त्रिनेत्रधारी भगवान् शंकर निकले। वे नन्दी वृषभ पर बैठे थे। क्षणभर के बाद ही वह विमान उस शिखर से भी पवन के समान तेज चाल से उड़ा और वैकुण्ठ लोकमें पहुंच गया, जहां भगवती लक्ष्मीका विलास–भवन था। बेटा नारद! वहाँ मैंने जो सम्पति देखी, उसका वर्णन करना मेरे लिए असम्भव है। उस उत्तम पुरी को देखकर विष्णु का मन आश्चर्य के समुद्र में गोता खाने लगा। वहाँ कमललोचन श्रीहरि विराजमान थे। चार भुजाएं थीं।

इतने में ही पवन से बातें करता हुआ वह विमान तुरंत उड़ गया। आगे अमृत के समान मीठे जल वाला समुद्र मिला। वहीं एक मनोहर द्वीप था। उसी द्वीपमें एक मंगलमय मनोहर पलंग बिछा था। उस उत्तम पलंगपर एक दिव्य रमणी बैठी थीं। हम आपसमें कहने लगे – 'यह सुन्दरी कौन है और इसका क्या नाम है, हम इसके विषय में बिलकुल अनभिज्ञ हैं।

नारद! यों संदेहग्रस्त होकर हमलोग वहाँ रूके रहे। तब भगवान् विष्णु ने उन चारुसाहिनी भगवती को देखकर विवेकपूर्वक निश्चय कर लिया कि वे भगवती जगदम्बिका हैं। तब उन्होंने कहा कि ये भगवती हम सभीकी आदि कारण हैं। महाविद्या और महामाया इनके नाम हैं। ये पूर्ण प्रकृति हैं। ये 'विश्वेश्वरी', 'वेदगर्भा' एवं 'शिवा' कहलाती हैं।

ये वे ही दिव्यांगना हैं, जिनके प्रलयार्णवमें मुझे दर्शन हुए थे। उस समय मैं बालकरूपमें था। मुझे पालनेपर ये झुला रही थीं। वटवृक्षके पत्रपर एक सुदृढ़ शैय्या बिछी थी। उसपर लेटकर मैं पैरके अंगूठेको अपने कमल–जैसे मुख में लेकर चूस रहा था तथा खेल रहा था। ये देवी गा–गाकर मुझे झुलाती थीं। वे ही ये देवी हैं। इसमें कोई संदेहकी बात नहीं रही। इन्हें देखकर मुझे पहले की बात याद आ गयी। ये हम सबकी जननी हैं।

श्रीविष्णु ने समयानुसार उन भगवती भुवनेश्वरी की स्तुति आरम्भ कर दी।

भगवान विष्णु बोले – प्रकृति देवीको नमस्कार है। भगवती विधात्रीको निरन्तर नमस्कार है। तुम शुद्धस्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हींसे उद्‌भासित हो रहा है। मैं, ब्रह्मा और शंकर – हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है। केवल तुम्हीं नित्य हो, जगतजननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो।

भगवान शंकर बोले – 'देवी ! यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ – अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो। इस संसार की सृष्टी, स्थिति और संहार में तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नियमानुसार कार्यमें तत्पर रहते हैं। मैं, ब्रह्मा और शिव विमान पर चढ़कर जा रहे थे। हमें रास्तेमें नये–नये जगत् दिखायी पड़े। भवानी ! भला, कहिये तो उन्हें किसने बनाया है?

कृप्या यही प्रमाण देखें श्री मद्‌देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा – अहम् महेश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा(42)।

हिन्दी अनुवाद :– श्री विष्णु बोले हे माता! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात्

हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो।(42)

पृष्ठ 11–12, अध्याय 5, श्लोक 8 :– यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :– भगवान शंकर बोले :–हे माता! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म–मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :– रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी – अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग–विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

ब्रह्मा जी कहते हैं – मैं भी महामाया जगदम्बिकाके चरणों पर गिर पड़ा और मैंने उनसे कहा माता ! वेद कहते हैं **'एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म'** है तो क्या वह आत्मस्वरूपा तुम्हीं हो अथवा वह कोई और ही पुरुष है ?

देवी ने कहा – मैं और ब्रह्म एक ही हैं। मुझमें और इन ब्रह्ममें कभी किंचितमात्र भी भेद नहीं है। गौरी, ब्राह्मी, रौद्री, वाराही, वैष्णवी, शिवा, वारुणी, कौबेरी, नारसिंही और वासबी – सभी मेरे रूप हैं। ब्रह्मा जी ! इस शक्तिको तुम अपनी स्त्री बनाओ। 'महासरस्वती' नाम से विख्यात यह सुन्दरी अब सदा तुम्हारी स्त्री होकर रहेगी। भगवती जगदम्बा ने भगवान् विष्णु से कहा – ''विष्णो! मनको मुग्ध करनेवाली इस 'महालक्ष्मी को लेकर अब तुम भी पधारो। यह सदा तुम्हारे वक्षःस्थल में विराजमान रहेगी।

देवी ने कहा–शंकर! मन को मुग्ध करने वाली यह 'महाकाली' गौरी–नाम से विख्यात है। तुम इसे पत्नीरूप से स्वीकार करो।

अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिये विमान पर बैठकर तुम लोग शीघ्र पधारो। कोई कठिन कार्य उपस्थित होनेपर जब तुम मुझे स्मरण करोगे, तब मैं सामने आ जाऊंगी। देवताओ ! मेरा तथा सनातन परमात्मा का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिये। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में किंचितमात्र भी संदेह नहीं रहेगा।

ब्रह्मा जी बोले – इस प्रकार कहकर भगवती जगदम्बिका ने हमें विदा कर दिया। उन्होंने शुद्ध आचारवाली शक्तियों में से भगवान् विष्णु के लिये महालक्ष्मी को, शंकर के लिये महाकाली को और मेरे लिये महासरस्वती को पत्नी बनने की आज्ञा दे दी। अब उस स्थान से हम चल पडे।

सार विचार :- एक ब्रह्मण्ड की वास्तविक स्थिति से महर्षि व्यास जी, महर्षि नारद जी तथा श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी भी अनभिज्ञ हैं। यह भी स्पष्ट है कि श्री दुर्गा को प्रकृति भी कहते हैं तथा दुर्गा तथा ब्रह्म (ज्योति निरंजन-काल) का पति पत्नी का सम्बन्ध भी है। इसलिए लिखा है कि ब्रह्म के साथ प्रकृति का अभेद सम्बन्ध है, जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं। श्री ब्रह्मा जी को स्वयं नहीं पता मैं कहां से उत्पन्न हुआ। हजार वर्ष तक जल में पृथ्वी की खोज की, परन्तु नहीं मिली। तब आकाशवाणी के आधार पर हजार वर्ष तक तप किया। कमल का डंठल पकड कर नीचे उतरा तो वहाँ शेष नाग की शैय्या पर भगवान विष्णु बेहोश पड़े थे। श्री विष्णु के शरीर विग्रह से एक देवी निकली (प्रेतनी की तरह) जो सुन्दर आभूषण पहने आकाश में विराजमान हो गई। तब श्री विष्णु जी होश में आए। इतने में शंकर

जी भी वहीं आ गए।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध है कि तीनों भगवान बेहोश (अचेत) कर रखे थे। फिर सचेत किए। आकाश से विमान आया। देवी ने तीनों प्रभुओं को विमान में बैठने का आदेश दिया। विमान को आकाश में उड़ाया। ऊपर एक ब्रह्मा, एक शिव तथा एक विष्णु और देखे जो ब्रह्मलोक में थे।

विचार करें - ब्रह्मलोक में दूसरे ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव दिखाई दिए थे, यह ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की ही कलाबाजी है, वही अन्य तीन रूप धारण करके ब्रह्मलोक में तीन गुप्त स्थान (एक रजोगुण प्रधान क्षेत्र, एक सतोगुण प्रधान क्षेत्र, एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र) बनाकर रहता है तथा प्रकृति (दुर्गा/अष्टंगी) को अपनी पत्नी रूप में रखता है। जब ये दोनों रजोगुण प्रधान क्षेत्र में होते हैं तब यह महाब्रह्मा तथा दुर्गा महासावित्री कहलाते हैं। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस रजोगुण प्रधान क्षेत्र में उत्पन्न होता है वह रजोगुण प्रधान होता है, उसका नाम ब्रह्मा रख देते हैं तथा जवान होने तक अचेत करके परवरिश करते रहते हैं। कमल के फूल पर रखकर सचेत कर देते हैं। जब ये दोनों (काल-ब्रह्म तथा दुर्गा) महाविष्णु तथा महालक्ष्मी रूप में सतोगुण प्रधान क्षेत्र में रहते हैं तब दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है वह सतोगुण प्रधान होता है, उसका नाम विष्णु रख देते हैं। कुछ दिन के पश्चात् बालक को अचेत करके जवान होने तक परवरिश करते रहते हैं। फिर शेष नाग की शैय्या पर सुला कर सचेत कर देते हैं। इसी प्रकार जब ये दोनों तमोगुण प्रधान क्षेत्र में रहते हैं तब शिवा अर्थात् दुर्गा तथा महाशिव अर्थात् सदाशिव के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र इस क्षेत्र में उत्पन्न होता है, वह तमोगुण प्रधान होता है। इसका नाम शिव रख देते हैं, इसे भी जवान होने तक अचेत रखते हैं, फिर जवान होने पर सचेत करते हैं। फिर तीनों को इक्कठा करके विमान में बैठा कर ऊपर के लोकों का दृश्य दिखाते हैं। कहीं ये अपने आप को सर्वेस्वा न मान बैठें।

गुण प्रधान क्षेत्र को समझने के लिए एक उदाहरण है - किसी मकान में तीन कमरे हैं। एक कमरे में देश भक्त शहीदों के चित्र लगे हों, जब व्यक्ति उस कमरे में जाता है तो उसके विचार भी देश भक्तों जैसे हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-संतों, ऋषियों आदि के चित्र लगे हों। उस कमरे में प्रवेश करते ही मन शान्त तथा प्रभु भक्ति की तरफ लग जाता है। तीसरे कमरे में अश्लील, अर्धनग्न स्त्री-पुरुषों के चित्र लगे हो तो मन में स्वतः बकवास घर करने लग जाती हैं। इसी प्रकार ऊपर ब्रह्मलोक में काल रूपी ब्रह्म ने तीन स्थान एक-एक गुण प्रधान बनाऐं हैं। तीनों प्रभु (रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णुजी तथा तमगुण शिव जी) अपने गुणों का प्रभाव कैसे डालते हैं। उदाहरण - जैसे रसोईघर में मिर्चों का छोंक सब्जी में लगाया। मिर्च के गुण से सभी कमरों के व्यक्तियों को छींके आने लगी। जैसे साकार वस्तु मिर्च तो रसोई में थी, परन्तु उसकी निराकार शक्ति अर्थात् गुण ने दूर बैठे व्यक्तियों को भी प्रभावित कर दिया। ठीक इसी प्रकार तीनों प्रभु (श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण) अपने-अपने लोक में रहते हुए तीन लोक (पृथ्वी लोक, पाताल लोक तथा स्वर्ग लोक) के प्राणियों को प्रभावित रखते हैं। जैसे मोबाईल फोन की रेंज से फोन कार्य करता है। इस प्रकार अदृश

शक्ति रूपी गुणों से तीनों देवता अपने पिता काल की सृष्टी उसके आहार के लिए चला रहे हैं। दुर्गा का अपना अलग लोक भी है, जिसमें यह अपने वास्तविक रूप में दर्शन देती है।

फिर इनका विमान दुर्गा के द्वीप में पहुंचा। तब ज्योति निरंजन अर्थात् कालरूपी ब्रह्म ने विष्णु जी को बचपन की याद प्रदान कर दी। तब श्री विष्णु जी ने बताया कि यह दुर्गा अपनी तीनों की माता है। मैं बालक रूप में पालने में लेटा था, यह मुझे लोरी देकर झुला रही थी। तब श्री विष्णु जी ने कहा कि हे दुर्गा! आप हमारी माता हो। मैं (विष्णु) ब्रह्मा तथा शंकर तो जन्मवान हैं। हमारा तो आविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु होती है, हम अविनाशी नहीं हैं। आप प्रकृति देवी हो। यह बात श्री शंकर जी ने भी स्वीकार की तथा कहा कि मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर भी आपका ही पुत्र हूँ। श्री विष्णु जी तथा श्री ब्रह्मा जी भी आप से ही उत्पन्न हुए हैं।

फिर इन तीनों देवताओं का विवाह दुर्गा ने किया। प्रकृति देवी (दुर्गा) ने अपनी शब्द शक्ति से अपने ही अन्य तीन रूप धारण किए। श्री ब्रह्मा जी की शादी सावित्री से, श्री विष्णु जी की शादी लक्ष्मी से तथा श्री शिव जी की शादी उमा अर्थात् काली से करके विमान में बैठाकर इन को अलग-अलग द्वीपों (लोकों) में भेज दिया।

ज्योति निरंजन (काल-ब्रह्म) ने अपने स्वांसों द्वारा समुद्र में चार वेद छुपा दिए। प्रथम सागर मंथन के समय ऊपर प्रकट कर दिए। ज्योति निरंजन (काल) के आदेश से दुर्गा ने चारों वेद श्री ब्रह्मा जी को दिए। ब्रह्मा ने दुर्गा (अपनी माता) से पूछा कि वेदों में जो ब्रह्म (प्रभु) कहा है वे आप ही हो या कोई अन्य पुरुष है।

दुर्गा ने काल के डर से वास्तविकता छुपाने की चेष्टा करते हुए कहा कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं, कोई भेद नहीं। फिर भी वास्तविकता नहीं छुपी। दुर्गा ने फिर कहा कि तुम तीनों मेरा तथा ब्रह्म का सदा स्मरण करते रहना। हम दोनों का स्मरण करते रहने से यदि कोई कठिन कार्य होगा तो मैं तुरन्त सामने आ जाऊंगी।

विशेष - क्योंकि काल ने दुर्गा से कह रखा है कि मेरा भेद किसी को नहीं कहना है। इस डर से दुर्गा सर्व जगत् को वास्तविकता से अपरिचित रखती है। ये अपने पुत्रों को भी धोखे में रखते हैं। इसका कारण है कि काल को शाप लगा है एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों का आहार नित्य करने का। इसलिए अपने तीनों पुत्रों से अपना आहार तैयार करवाता है। श्री ब्रह्मा जी के रजगुण से प्रभावित करके सर्व प्राणियों से संतान उत्पति करवाता है। श्री विष्णु जी के सतोगुण से एक दूसरे में मोह उत्पन्न करके स्थिति अर्थात् काल जाल में रोके रखता है तथा श्री शंकर जी के तमोगुण से संहार करवा कर अपना आहार तैयार करवाता है।

तीनों प्रभुओं (ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव) को भी मार कर खाता है तथा नए पुण्य कर्मी प्राणियों में से तीन पुत्र उत्पन्न करके अपना कार्य जारी रखता है तथा पूर्व वाले तीनों ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव चौरासी लाख योनियों तथा स्वर्ग-नरक में कर्म आधार से चक्र लगाते रहते हैं।

*बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने महर्षि रामानन्द स्वामी जी से कहा हे स्वामी जी! कृप्या पढ़िए श्री देवी पुराण तीसरा स्कन्ध अध्याय 7 **पृष्ठ 130-131 पर*** श्री ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद

जी से परमात्मा के स्थूल व सूक्ष्म स्थिति का ज्ञान कहा है। ब्रह्मा जी बोले—मुने! निगुर्ण रूप को इन आँखों से नहीं देखा जा सकता, क्योंकि निर्गुण में कोई रूप है ही नहीं, फिर वह दृष्टिगोचर कैसे हो? निर्गुण शक्ति और निगुर्ण परम पुरूष सुगमता पूर्वक नहीं दिख पड़ते मुनिजन ज्ञान रूपी नेत्रों से उनका अनुभव करते हैं। इन दोनों प्रकृति और पुरूष को अजन्मा समझना चाहिए। विश्वास पूर्वक चिन्तन करने से इनकी झलक मिल सकती है। विश्वास की कमी हो तो ये कभी भी नहीं मिल सकते। भला, कोई सगुण प्राणी निगुर्ण ब्रह्म का साक्षात्कार कैसे कर सकता है? अतः तुम्हें सगुण परमात्मा की ही आराधना करनी चाहिए! स्थूल और सूक्ष्म भेद से परमात्मा के दो रूप हैं। भगवान् के निराकार ज्ञान रूप को सबका उत्पादन कारण कहा जाता है। साधकों को ध्यान में स्थूल रूप की झांकी मिलती है। परम पुरूष परमात्मा का यही सूक्ष्म शरीर है, जिस की व्याख्या की गई है। यह मेरा शरीर भी सूत्र रूप से उन्हीं का स्थूल रूप कहा जाता है। (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

उपरोक्त लेख का सारांश :- श्री ब्रह्मा जी ने वेदों में पढ़ा है कि अग्नेः तनुः असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनुः असि। (यजुर्वेद अध्याय 5 मन्त्र 1) भावार्थ है परमात्मा सशरीर है। उस अमर पुरूष अर्थात् अविनाशी परमेश्वर का सर्व के पालन पोषण के लिए अन्य शरीर भी है। परन्तु श्री ब्रह्मा जी ने चार युग तक परमात्मा प्राप्ति के लिए ध्यान साधना की। उन्हें परमात्मा के दर्शन नहीं हुए। फिर गायत्री व पोहपवती से मिल कर माता दुर्गा के समक्ष झूठ बोला कि ब्रह्मा को परमात्मा के दर्शन हमारे समक्ष हुए हैं। काल ब्रह्म ने आकाशवाणी करके दुर्गा को बताया कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब दुर्गा ने तीनों को शाप दिया था (कृप्या देखें सृष्टी रचना पृष्ठ 84 से 159 पर) वेदों में ठीक लिखा है कि परमात्मा तेजोमय शरीर युक्त है। उसका स्थूल प्रकाश पुंज का बना है। परमात्मा का विग्रह (शरीर) मनुष्य जैसा है। जो साधना काल ब्रह्म के लोक में प्रचलित है। यह लोक वेद के आधार से है। वेद ज्ञान नहीं है। इसलिए परमात्मा का साक्षात्कार नहीं होता उस साधना से रिद्धि-सिद्धि साधक को प्राप्त हो जाती हैं। काल ब्रह्म ने प्रतिज्ञा की हुई है कि मैं कभी भी किसी को किसी भी वेद वर्णित साधना से तथा तप से अपने वास्तविक काल ब्रह्म रूप के दर्शन नहीं दूंगा। वह श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का रूप धारण करके दर्शन देता है। इसलिए साधक इसी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव को ही परमात्मा मान बैठते हैं। वास्तव में वह काल ब्रह्म ही तीनों रूपों में दर्शन देता हैं इसी कारण श्री ब्रह्मा जी अपने पुत्र नारद को कह रहे हैं कि मेरा शरीर भी परमात्मा का ही शरीर कहा जाता है।

उपरोक्त श्री देवी पुराण के लेख में श्री ब्रह्मा जी द्वारा बताया परमात्मा का स्थूल व सुक्ष्म विवरण स्पष्ट करता है कि श्री ब्रह्मा जी को परमात्मा की स्थिति का कोई ज्ञान नहीं है। जैसे कहा है कि ''निर्गुण रूप इन आँखों से नहीं देखा जा सकता, क्योंकि निर्गुण में कोई रूप है ही नहीं फिर वह दृष्टिगोचर कैसे हो?'' इस विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी को निर्णायक ज्ञान नहीं है। तत्वज्ञान के अभाव से दो तरफा ज्ञान कह रहे हैं। एक ओर तो कह रहे हैं कि उस परमात्मा के निर्गुण रूप को इन आँखों से नहीं देखा जा सकता। इस से सिद्ध होता है कि निर्गुण परमात्मा का रूप तो है वह साकर तो है परन्तु चर्म दृष्टि से दिखाई नहीं दे सकता। वे अन्य आँखें हैं (दिव्य दृष्टि है) जिस से निर्गुण परमात्मा के रूप को देखा जा सकता है। श्री

ब्रह्मा जी ने यह भी कहा है कि निर्गुण में कोई रूप है ही नहीं फिर वह दृष्टिगोचर कैसे हो? फिर श्री ब्रह्मा जी ने यह भी कहा है कि ''निर्गुण शक्ति अर्थात् दुर्गा और निर्गुण परम पुरूष अर्थात् काल ब्रह्म को सुगमता पूर्वक नहीं देखा जा सकता। विश्वास पूर्वक चिन्तन करने से इनकी झलक मिल सकती है'' श्री ब्रह्मा जी इस ज्ञान के अनुसार भी परमात्मा दिखाई दे सकता है अर्थात् वह साकार है। फिर अन्त में कहा है कि सगुण प्राणी निर्गुण ब्रह्म का साक्षात्कार कैसे कर सकता है। अतः तुम्हें सगुण परमात्मा की आराधना करनी चाहिए। उपरोक्त ज्ञान जो श्री ब्रह्मा जी ने श्री देवी पुराण में कहा यह कोरा अज्ञान भरा है। लोकवेद (सुना-सुनाया क्षेत्रीय ज्ञान) है। एक अनुभवहीन व्यक्ति ही ऐसा भ्रमित ज्ञान प्रदान करता है। फिर पृष्ठ 131 पर लिखा है कि ''स्थूल और सुक्ष्म भेद से परमात्मा के दो रूप है साधकों को ध्यान में स्थूल रूप की झाँकी मिलती है। परम पुरूष परमात्मा का यह सूक्ष्म शरीर है। ये मेरा शरीर अर्थात् ब्रह्मा का रूप भी उन्हीं का स्थूल रूप कहा जाता है। श्री ब्रह्मा जी के श्री देवी पुराण के उपरोक्त ज्ञान का कहीं सिर पैर नहीं है। परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ ने महर्षि रामानन्द जी को बताया कि हे स्वामी जी! सत्ययुग से लेकर वर्तमान तक सर्व महर्षि, ब्राह्मण तथा श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी भी इस अज्ञान को ग्रहण करके वक्ता बने हुए हैं। जिस से मानव जीवन नष्ट हो जाता है। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता।

बन्दी छोड़ कबीर देव जी द्वारा बताए तीसरे स्कंद अध्याय 1 से 7 को श्री देवी पुराण में देखकर ऋषि रामानन्द जी को पूर्व वाला ज्ञान ऐसा लगा जैसा सूर्य के समक्ष दीपक। परन्तु काल ब्रह्म के द्वारा मान बड़ाई की बेड़ियों में जकड़ा प्राणी आसानी से मुक्त नहीं होता। स्वामी रामानन्द जी की विद्वता का ढोल बज रहा था। चौदह सौ शिष्य ऋषि बना रखे थे। (चौरासी शिष्य बाद में बनाए थे कुल चौदह सौ चौरासी शिष्य थे रामानन्द जी के) स्वामी रामानन्द जी ने सोचा कि अब क्या करूं यदि अपना पूर्व वाला भक्ति मार्ग त्यागुं तो शिष्य मेरा उपहास करेंगे तथा कहेंगे आपने पहले विपरीत ज्ञान किसलिए दिया? फिर भी अपनी जिज्ञासा की प्यास बुझाने हेतु प्रश्न किया। हे बालक! फिर कौन तथा कैसा है पूर्ण परमात्मा ? इसके उत्तर में कबिर्देव ने अपने द्वारा रची सम्पूर्ण सृष्टी की कथा स्वामी रामानन्द जी को सुनाई (कृप्या पाठक जन पढ़े सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) परमेश्वर कबीर जी द्वारा सृष्टी रचना की कथा को सुनकर स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे कबीर जी! मेरी आयु 104 वर्ष हो चुकी है। अब किसी दिन भी मेरी मृत्यु हो सकती है। कहीं मैं घर का रहूं न घाट का आप द्वारा बताई साधना मैं कर ना सकूँ तथा पूर्ववाली भी ना रहे। तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी ! जीवन तो थोड़ा ही भला जो सत्य सुमरण हो। लाख वर्ष का जीवना लेखे धरे ना कोय। फिर भी आप निश्चिन्त होकर पूर्ण परमेश्वर की भक्ति किजिए। आप की मृत्यु मेरी आज्ञा बिन नहीं होगी। स्वामी रामानन्द ने कहा हे बच्चा! मेरी इच्छा है कि मैं स्वर्ग में जाऊँ तथा भगवान विष्णु जी के लोक में देव शरीर प्राप्त करूं तथा वहाँ के भोगों को भोगुं। वहाँ स्वर्ग में दूध की नदियाँ बहती हैं, क्षीर समुद्र (दूध का समुद्र) है। कल्प वृक्ष तथा कामधेनु सर्व मनोकामना पूर्ण करते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तथा 20 से 23 तथा अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 तक में आप द्वारा की जा रहीं साधना करने वालों

को मूर्ख लिखा है। वे अपनी पुण्य कमाई को स्वर्ग में समाप्त करके बार-2 जन्म ग्रहण करते हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक तक सर्व लोकों के प्राणी जन्म मृत्यु के चक्र में रहते हैं ब्रह्मलोक तक के सर्व लोक नाशवान हैं। जब आपके विष्णु भगवान ही मृत्यु को प्राप्त होंगे तो आप जैसे उनके पुजारी कहाँ रहेंगे? यह साधना तो आप जी ने अनेकों बार की है तथा अनेकों बार राजा भी बने, स्वर्ग में देवता भी बने तथा मानव जन्म भी प्राप्त किए व अन्य प्राणियों के शरीर में भी अनेकों बार महाकष्ट उठाया। यह तो हरहट जैसा चक्र है केवल पूर्ण परमात्मा की भक्ति से ही समाप्त होगा। जिसका प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61, 62, 64, 66 में है। उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति से साधक फिर लौट कर इस संसार में नहीं आता। वह उस परमेश्वर की शरण में जाकर परम शान्ति अर्थात् जन्म-मृत्यु से सदा के लिए छूट जाता है तथा सनातन परम धाम अर्थात् पहले वाले अमर स्थान (सत्यलोक) में चला जाता है।

शब्द

मन तू बस रे सुख के सागर, जहाँ शब्द सिधुं रतनागर (टेक)
कोटि जन्म तोह भ्रमत हो गए, कुछ ना हाथ लग्या रे।
कुकर शुकर खर भया बौरे, कवआ हंस बुगा रे।
कोटि जन्म तूं राजा किन्हा, मिटि न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–2 हाँडया, मिला नही निर्गुण रासा।।
इन्द्र, कुबेर,ईश की पदवी, ब्रह्मा वरूण धर्मराया।
विष्णु नाथ के पुर कूँ जाके, फेर अपुठा आया।।
असंख्य जन्म तोहे मरते हो गए, जीवित क्यों न मरे रे।
द्वादश मध्य महल मठ बौरे, बहुर ना देह धरै रे।
दोजख भीसत सभी ते देखे, राज पाट के रसिया।
तीन लोक से तृप्त नाहीं, यह मन भोगी खसिया।।
सतगुरु मिले तो इच्छा मेटे, पद मिल पदे समाना।
चल हंसा उस देश पठाऊँ, जहाँ आदि अमर अस्थाना।।
चार मुक्ति जहाँ चम्पि करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिले राम अविनाशी।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताए तत्वज्ञान को उनके शिष्य गरीबदास ने ज्ञान अपनी वाणी में लिखा है कबीर जी ने कहा :- हे प्राणी उस सुख सागर में अर्थात् सत्यलोक में चल जहाँ पर सुख रूप सागर है। तू स्वर्ग रूपी छोटे जलास्य की आस में बैठा है जिसका जल वर्षा के अभाव से समाप्त हो जाता है। तो उसके अन्दर के जल जीव तड़फ-2 कर मर जाते हैं। समुद्र के प्राणियों को जल अभाव कभी नहीं होता। हे स्वामी रामानन्द जी! जो साधना आप जी कर रहे हो इस साधना के आधार से आप करोड़ों बार मृत्यु को प्राप्त हो चुके हो अभी तक आप को कुछ भी स्थाई वस्तु प्राप्त नहीं हुई है। कुत्ते, सूअर, गधे, कोवै, हंस, बुगले आदि प्राणियों की योनियाँ में भी आपने कष्ट भोगा है। करोड़ो जन्म आप राजा भी बने। राज्य भोग का पुण्य समाप्त होते ही किसी अन्य राजा आक्रमण कर देता है या तो युद्ध में मारा जाता है या पश्चात् मेहनत-मजदूरी करके

परिवार पोषण करता है। करोड़ों जन्म में राजा बन कर भी इस मन की संतुष्टि नहीं होती। जब कभी मानव शरीर पुनः प्राप्त होता है इसी साधना को फिर करता है। ऐसी कठिन साधना करता है कि नगरी से भिक्षा मांग कर लाता है उसे वन में बनी कुटिया में बैठ कर खाता है। शाम के समय भी उसी को जल में भिगो कर खाता है। इस प्रकार साधना करने वाला तप कर लेता है। तप से राज्य प्राप्त होता है। राज्य सुख भोगकर पुनः नरक में गिरता है। क्योंकि शास्त्रविधि अनुसार पूर्ण मोक्ष मार्ग प्राप्त नहीं हुआ। वेदों में जो साधना लिखी है उसके आधार से स्वर्ग-महास्वर्ग तथा नरक पुनः अन्य प्राणियों के शरीर प्राप्त होते हैं।

यह तीनों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद) में वर्णित विधि का परिणाम है। गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 में प्रमाण है जिसमें लिखा है कि ''तीनों वेदों में विद्यान किए हुए भक्ति कर्म करने वाले, सोमरस अर्थात् भक्ति रस पीने वाले, शास्त्र विरुद्ध साधना रूपी पाप से रहित अर्थात् वेदों अनुसार साधना न करना पाप है उस पाप से रहित व्यक्ति, मुझको यज्ञों द्वारा इष्ट रूप में पूजकर स्वर्ग प्राप्ति चाहते हैं। वे साधक अपने पुण्यों के फल रूप स्वर्ग लोक को प्राप्त होकर स्वर्ग में दिव्य देवताओं के भोगों को भोगते हैं। (गीता अ.9/मं.20) वे उस विशाल स्वर्ग लोक को भोग कर पुण्य क्षीण होने पर मृत्यु लोक (पृथ्वी लोक) को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद) में वर्णित साधना का आश्रय लेने वाले साधक बार-2 आवागमन अर्थात् जन्म-मृत्यु (स्वर्ग-नरक) को प्राप्त होते हैं अर्थात् पुण्यों के प्रभाव से स्वर्ग में जाते हैं और पुनः क्षीण होने पर मृत्यु लोक में आते हैं। (गीता अ.9/मं.21) जो अन्नय भाव से अर्थात् अन्य किसी देव (ब्रह्मा रजगुण, विष्णु सत् गुण तथा शिव तमगुण की) भी भक्ति न करके केवल एक मुझ काल ब्रह्म की साधना करता है।वह मेरा अन्नय भक्त है वह अन्नय मेरा भक्त मुझ काल ब्रह्म को ही चिन्तन करता हुआ पूर्ण रूप से भजता है। उन नित्य भक्ति में लीन साधकों की भक्ति की रक्षा में ब्रह्मकाल वहन करता हूँ अर्थात् उनकी रक्षा मैं करता हूँ। (गीता अ.9/मं.22) हे अर्जुन ! यद्यपि श्रद्धा से युक्त वेदों अनुसार साधना करने वाले भक्त मेरी पूजा करते हैं। परन्तु वे अन्य देवताओं (ब्रह्मा रजगुण, विष्णु सतगुण तथा शिव तमगुण) को इष्ट मानते हैं। किन्तु उनका वह पूजन अविधि पूर्वक अर्थात् अज्ञान पूर्वक है।

भावार्थ है कि उन्हें तो कुछ भी लाभ नहीं होता। (गीता अ.9/मं.23)

सारांश :- उपरोक्त गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 का सारांश है कि गीता व वेदों के ज्ञानदाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो मुझ काल ब्रह्म को इष्ट मान कर तीनों वेदों, ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद (अथर्ववेद जो चौथा वेद है उसमें उपासना विधि कम परन्तु सृष्टी रचना का अधिक ज्ञान है इसलिए उपासना का ज्ञान उपरोक्त तीनों वेदों में है। इसलिए चौथे वेद का विवरण नहीं दिया गया है) में वर्णित विधि अनुसार साधना करते है वे शास्त्रविधि अनुसार साधना करते हैं। जो शास्त्र विधि को त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा कर्म) करते हैं। उनको कोई लाभ नहीं होता। (प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में) वे शास्त्रविरूद्ध साधना करके दोषी होते हैं। जो शास्त्रविधि अनुसार साधना करते है वे उस (शास्त्रविधि रहित साधना करने रूपी) दोष से मुक्त अर्थात् पाप रहित साधक मुझ काल ब्रह्म को यज्ञों द्वारा पूजकर स्वर्गलोक व महास्वर्ग लोक (ब्रह्मलोक) को प्राप्त

होते हैं। अपने पुण्य को स्वर्ग लोक व महास्वर्ग लोक अर्थात् ब्रह्मलोक दिव्य देवताओं की पदवी प्राप्त करके उन पुण्यों के भोगों को भोगकर पुण्य समाप्त होने पर पुनः इस पृथ्वी लोक पर जन्म लेते हैं। उपरोक्त शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले साधकों की साधना रक्षा मैं (काल ब्रह्म) करता हूँ। इसके विपरीत जो साधक साधना तो करते हैं वेदों में वर्णित विधि अनुसार परन्तु इष्ट मानते हैं अन्य देवताओं को जैसे श्री विष्णु सतगुण को इष्ट मान कर मन्त्र जाप करते हैं ओइम् नमों भगवते वासुदेवाय। ॐ नाम मन्त्र तो काल ब्रह्म का है जो गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में प्रमाण है जिस में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक ओं् अक्षर है उच्चारण करके जाप करने का जो अन्तिम स्वांस तक मुझे (काल ब्रह्म को) इष्ट मानकर स्मरण करता है। वह मृत्यु के पश्चात् मेरे ब्रह्म लोक को प्राप्त करता है। यही प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में भी है कि मेरे ओं् नाम का जाप कार्य करते-2 कर विशेष कसक के साथ कर मानव जीवन का मूल कर्त्तव्य जानकर कर इस प्रकार साधना करने से साधक मृत्यु के पश्चात् ब्रह्मलोक के सुख को प्राप्त होगा। जो इसी ओं् नाम का जाप करने के लिए जितना समय किसी स्थान पर बैठ कर हठ योग करते हैं उस बैठे रहने से हठयोग तप का लाभ मिलता है। तप से कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। उन सिद्धियों से साधक अन्य व्यक्तियों को थोड़े से विरोध या अन्य कारण से शाप दे डालता है। अपना तप नष्ट करता है तथा अन्य को पीड़ा देने के कारण दोषी हो जाता है। अधिक हठ योग करने वाले का हठ तप अधिक हो जाता है। उस से अधिक समय तक राज्य भोग भी प्राप्त कर सकता है। परन्तु मनुष्य जीवन के वास्तविक लाभ से वंचित रह जाता है। इससे अधिक लाभ वेदों (तीनों वेदों) अनुसार ब्रह्म काल को इष्ट मान कर केवल एक नाम ''ॐ'' (ओं्) का जाप करने वाले साधक को होता है परन्तु वह भी ब्रह्म लोक में देव उपाधी प्राप्त करके अपने पुण्य को समाप्त करके पुनः पृथ्वी लोक पर जन्म धारण करता है। इसलिए गीता अध्याय 9 श्लोक 23 में अन्य देवताओं को इष्ट मानकर वेदों में वर्णित पूजा करना अविधि पूर्वक होने से व्यर्थ है। गीता अध्याय 7 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने कहा है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्म, सतगुण विष्णु तथा तम्गुण शिव) से जो कुछ (सृष्टी, स्थिति व संहार) हो रहा है उसका मुख्य कारण मैं (गीता ज्ञान दाता=काल ब्रह्म) हूँ। (क्योंकि काल ब्रह्म को शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाना पड़ता है। इसलिए अपने तीनों पुत्रों रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव से सृष्टी, स्थिति तथा संहार कराता है। इसलिए कह रहा है कि जो इन तीनों गुणों युक्त तीनों देवताओं से जो कुछ भी हो रहा है उस का निमित्त कारण मैं अर्थात् काल ब्रह्म ही हूँ) *परन्तु मैं इनमें नहीं ये मुझ में नहीं। भावार्थ है कि काल ब्रह्म सर्व से भिन्न गुप्त ब्रह्म लोक के ऊपरी भाग में रहता है तथा अपनी प्रेरणा से इन तीनों देवताओं से अपना स्वार्थ सिद्ध करता है। तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) को एक-2 गुण युक्त कर दिया। ये अपने लोकों में रहते है या कही भी भ्रमण करते हैं तो भी इनके शरीरों से उन गुणों का प्रभाव तीनों लोकों के प्राणियों को प्रभावित करता रहता है।*

उदाहरण :- जैसे रसोई (भोजनालय) में सब्जी में मिर्चों का छौंक लगाया जाता है। उस छौंक का प्रभाव पूरे मकान के अन्य कक्षों में भी होता है। दूर बैठे परिजन भी उससे प्रभावित होते हैं। मूल वस्तु (मिर्च) भोजनालय में एक देशिय है परन्तु उस का गुण दूर देश मे अपना प्रभाव डाल रहा है।

इसी प्रकार तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तम्गुण शिव जी) की स्थिति जाने तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 12 का भावार्थ समझें। (गीता अ.7/मं.12)

गीता अध्याय 7 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता (काल रूपी ब्रह्म) ने कहा है कि उपरोक्त इन तीनों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) गुणों से प्रभावित सर्व संसार इन्हीं की साधना में मोहित हो रहा है। इन तीनों देवताओं से परे मुझे तथा उस अविनाशी परमात्मा को नहीं जानता (गीता अ.7/मं.13) {''तीनों गुण क्या हैं प्रमाण सहित कृप्या पढ़े इसी पुस्तक के पृष्ठ 93-94 पर}

गीता अध्याय 7 श्लोक 14 में काल ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता) ने कहा है कि ''क्योंकि यह अलोकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी माया अर्थात् काल ब्रह्म द्वारा उत्पन्न रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तम्गुण शिव तथा इन द्वारा गुप्त रूप से फैलाया त्रिगुणात्मक माया जाल बड़ा दुस्तर (भयंकर) है। परन्तु जो साधक मुझ (काल ब्रह्म) को भजते हैं वे इस माया अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की पूजा नहीं करते। इस जाल से निकल जाते हैं। (गीता अ.7/मं.14)

गीता अध्याया 7 श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने स्पष्ट किया है कि इस त्रिगुणात्मक माया अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की साधना से मिलने वाले क्षणिक सुख लाभ के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, ऐसे आसुर (राक्षस) स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख जन मुझको नहीं भजते। (गीता अ.7/मं.15)

इसी विषय में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने इसी गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में स्पष्ट किया है कि जिन व्यक्तियों की आस्था अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा देव, सतगुण विष्णु देव तथा तमगुण महादेव) में है। जिनका ज्ञान उन्हीं द्वारा मिलने वाले भोगों की कामना द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे साधक अपने स्वभाव से प्रेरित होकर उस-उस नियम को धारण करके अन्य देवताओं (ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव) को भजते हैं अर्थात पूजते हैं। (गीता अ.7/मं.20)

गीता अध्याय 7 श्लोक 21 में कहा है :-जो जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप अर्थात साकार स्वरूप को इष्ट मान कर श्रद्धा से पूजना चाहता है, उस-उस भक्त की श्रद्धा को मैं (गीता ज्ञान दाता) उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (गीता अ.7/मं.21)

गीता अध्याय 7 श्लोक 22 में कहा है कि :-

वह साधक श्रद्धा से युक्त होकर उस देवता का पूजन करता है और उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किए हुए उन इच्छित भोगों को निःसंदेह प्राप्त करता है। (गीता अ.7/मं.22)

गीता अध्याय 7 श्लोक 23 में कहा है कि :-

परन्तु उन अल्प बुद्धिवालों (मुर्खों) का वह फल नाशवान है तथा वे देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं अर्थात् उनके लोकों में चले जाते हैं। मेरे भक्त मुझको प्राप्त होते हैं। (गीता अ.7/मं.23)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि जो ब्रह्म काल (गीता ज्ञान दाता) के अतिरिक्त अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की भक्ति करते हैं वे आसुर स्वभाव को

धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म अर्थात् शास्त्रविधि विरूद्ध कर्म करने वाले मूर्ख जन हैं। गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में कहा है कि :- जो साधक शास्त्रविधि को त्याग कर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण (पूजा कर्म) करता है वह न सिद्धी को अर्थात् जिस उद्देश्य के लिए भक्ति करता है उस कार्य को सिद्ध नहीं कर पाता, न परमगति को और न सुख को ही प्राप्त होता है अर्थात् शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा कर्म) अर्थात् अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सत्गुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की पूजा करते हैं उनकी भक्ति व्यर्थ है। (गीता अ.16/मं.23)

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि :- इस से तेरे लिए इस कर्त्तव्य अर्थात जो साधना करनी चाहिए तथा अकर्तव्य अर्थात् जो साधना नहीं करनी चाहिए। उसकी व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण है। ऐसा जान कर तू शास्त्रविधि से नियम अर्थात् शास्त्र अनुकूल भक्ति कर्म करने योग्य है। (गीता अ.16/मं.24) गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा :- हे कृष्ण {क्योंकि अर्जुन समझ रहा था कि श्री कृष्ण जी ही गीता ज्ञान कह रहे हैं क्योंकि काल ब्रह्म, श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् (भूत की तरह) प्रवेश करके बोल रहा था ऐसा लगता था कि श्री कृष्ण जी ही बोल रहा है।} ***जो मनुष्य शास्त्रविधि को त्यागकर*** *श्रद्धा से युक्त हुए देवादि का पूजन करते है, उनकी स्थिती फिर कौन सी है! सात्विक अथवा राजसी या तामसी?*

गीता अध्याय 17 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने उत्तर दिया कि :- शास्त्रविधि को त्याग कर जो देवताओं को पूजते है उन मनुष्यों कि वह स्वभाव जनित श्रद्धा अर्थात् पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण उसी स्वभाव से उत्पन्न श्रद्धा सात्विक, राजसी तथा तामसी ऐसे तीनों प्रकार की ही होती है। उस को तू विस्तार से सुन (गीता अ.17/मं.2)

गीता अध्याय 17 श्लोक 3 व 4 में कहा है कि सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके अन्तकरण के अनुरूप होती है। वह पूर्व जन्म में जिस भी देव की पूजा करता था इस जन्म में भी वह उसी स्वभाव का होता है तथा जैसी श्रद्धा वाला है वह स्वयं भी वही है। (गीता अ.17/मं.3) शास्त्रविधि को त्याग कर मनमाना आचरण करने वाले सात्विक पुरूष देवों को पूजते हैं। राजस पुरूष जो पूर्वजन्म में रजगुण ब्रह्मा की पूजा करते थे वे यक्ष और राक्षसों को अन्य तामस मनुष्य जन प्रेत और भूतगणों की पूजा करते हैं। (गीता अ.17/मं.4) गीता अध्याय 17 श्लोक 5 व 6 में कहा है कि :-

जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल मनः कल्पित घोर तप को तपते हैं तथा दम्भ (पाखण्ड) और अहंकार से युक्त और कामना, आसक्ति और बल के अभिमान से युक्त है। (गीता अ.17/मं.5) वे शरीर में स्थित भूत समुदाय अर्थात् सर्व कमलों में स्थित सर्व देवों, मुझे तथा पूर्ण परमात्मा जो सर्व प्राणियों के हृदय में विशेष रूप से स्थित है को कृश (दुःखी) करने वाले ही हैं। उन अज्ञानियों को असुर स्वभाव वाले जान (गीता अ.17/मं.6)

उपरोक्त प्रमाणों का उल्लेख करके बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी! आप भी सत्गुण भगवान विष्णु जी को इष्ट मान कर उसके साकार स्वरूप का चिन्तन करते हो यह शास्त्रविधि रहित पूजा व्यर्थ है। जैसा गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो शास्त्र विधि को त्याग कर केवल मनःकल्पित घोर तप को तपते हैं। वे शरीर के कमलों में स्थित देवों तथा सर्व प्राणियों के हृदय में स्थिति पूर्ण परमात्मा तथा मुझे भी कृश (दुःखी) करने वाले आसुर स्वभाव

के जान।

हे स्वामी रामानन्द जी! घोर तप ब्रह्मा जी ने किया एक हजार वर्ष तो कमल के फूल पर बैठे-2 तथा चार युगों तक दूसरी बार किया।

श्री विष्णु जी ने भी बारह हजार वर्षों तक घोर तप किया।

श्री शिव जी ने अठासी हजार वर्षो तक घोर तप किया।

श्री मार्कण्डय ऋषि ने हजारों वर्षों तक घोर तप किया।

श्री वशिष्ठ मुनि ने हजारो वर्षों तक घोर तप किया।

श्री विश्वामित्र ऋषि ने वर्षों तक घोर तप किया।

श्री चुणक ऋषि ने हजारों वर्षों तक घोर तप किया।

श्री कपिल मुनी जी ने हजारो वर्षों तक घोर तप किया।

भावार्थ है कि उपरोक्त देवों व ऋषियों ने तथा अन्य साधकों ने भी तत्वज्ञान के अभाव से शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण किया अर्थात् शास्त्रविधि रहित साधना की जिस कारण से पूर्ण मोक्ष से वंचित रह गए।

कबीर जी ने कहाः- सुर नर मुनि जन तेतीस करोड़ी। बन्धे सभी निरंजन डोरी।।

भावार्थ है किः- देवता जन तथा मुनि गण व तैतीस करोड़ देवता सर्व शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा कर्म) करके ज्योति निरंजन (काल ब्रह्म) की डोरी से बंधे है। अर्थात् काल जाल में ही हैं।

''गीता तथा वेद ज्ञान दाता काल ब्रह्म का अपनी साधना के विषय में ज्ञान बताना''

परमेश्वर कबीर जी ने कहा है स्वामी रामानन्द जी ! अब कृप्या सुनों काल ब्रह्म की पूजा का लाभः-

(1) गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 में गीता ज्ञान दाता ने अपने विषय में कहा है। गीता अध्याय 7 श्लोक 16 में कहा है किः- शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले अर्थात् उत्तम भक्ति कर्म करने वाले अर्थार्थी धन सम्पत्ति आदि सांसारिक सुख चाहने वाले वेद मन्त्रों से ही अनुष्ठान करते हैं।

(2) आर्त-अर्थात् संकट निवारण हेतु साधना करने वाले आर्त कहे जाते हैं। वे वेदों के मन्त्रों से ही संकट निवारण करते हैं अन्य कोई उपाय नहीं करते।

(3) जिज्ञासु-अर्थात् परमात्मा के विषय में ज्ञान जानने का इच्छुक जिज्ञासु कहलाता है वह वेदों को सत्य ज्ञान युक्त मान कर वेद मन्त्रों को कण्ठस्थ करके वक्ता बन जाता है। उपरोक्त तीन प्रकार के साधक भले ही वेदों को आधार मान कर भक्ति कर्म करने वाले हैं। परन्तु इनका प्रयत्न भी व्यर्थ है।

(4) ज्ञानी-ज्ञानी व्यक्ति वह होता है जिसे ज्ञान हो गया कि मनुष्य जीवन बार-2 नहीं मिलता इस मनुष्य शरीर को प्राप्त करके परमात्मा प्राप्ति करना है। इसको सफल करना है। यह भी ज्ञान हुआ कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति से ही मोक्ष सम्भव है। अन्य किसी देवता की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। केवल जन्म-मृत्यु, स्वर्ग व नरक का चक्र सदा बना रहेगा। वेदों को पढ़ने से ज्ञानी

आत्मा को ज्ञान हुआ कि ॐ नाम का जाप करने का निर्देश वेदों में किया है। तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण स्वयं ही निष्कर्ष निकाल लिया कि ॐ नाम का जाप करना चाहिए यह पूर्ण मोक्ष दायक मन्त्र है। अन्य देवता की पूजा करना व्यर्थ है। वेद ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) ने गीता अध्याय 7 श्लोक 17 में कहा है कि उन चार प्रकार के भक्तों में से केवल ज्ञानी भक्त मुझे प्रिय है क्योंकि उसने तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्म, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की भक्ति को भी त्याग कर केवल एक मुझ ब्रह्म को ही पूज्य माना है। उनको मैं प्रिय हूँ। (गीता अ.7/मं.17) फिर गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने अपनी साधना को भी अनुत्तम अर्थात् अति अश्रेष्ठ कहा है :- ये सभी ज्ञानी आत्मा उदार हैं परन्तु तत्वदर्शी सन्त के अभाव से वह ज्ञानी आत्मा मेरी अनुत्तम गति अर्थात् अश्रेष्ठ मोक्ष मार्ग पर मेरे मतानुसार अच्छी प्रकार स्थित है।

भावार्थ है कि :- गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णित तत्वदर्शी सन्त के अभाव से उस ज्ञानी आत्मा को पूर्ण मोक्ष मार्ग नहीं मिला। वह मेरे मत अनुसार साधना करके मेरी अश्रेष्ठ गति (मोक्ष) में अच्छी प्रकार स्थित रहा। वे चारों प्रकार के साधक उदार हैं परन्तु ज्ञानी का प्रयत्न मुझे प्रिय है परन्तु वह ज्ञानी आत्मा भी पूर्ण मोक्ष मार्ग के अभाव से मेरे मत अनुसार साधना करके भी अश्रेष्ठ मोक्ष पर ही आश्रित रहा (गीता अ.7/मं.18)

गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है किः-

बहुत जन्मों के अन्त के जन्म में अर्थात् अनेक जन्मों के उपरान्त कोई ज्ञानी आत्मा की बुद्धि मुझ ब्रह्म की साधना करने को तत्पर होती है। अन्य तो अन्य देवताओं की साधना में ही व्यस्त रहते हैं परन्तु वह बताने वाला कि वासुदेव अर्थात् सर्व ब्रह्मण्डों पर जिस पूर्ण परमात्मा का वास अर्थात् अधिकार है वह वासुदेव है। वही सर्व शक्तिमान है उसी की पूजा से पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है वह महात्मा तो अति दुर्लभ है।

''वासुदेव की परिभाषा''

वासुदेव का अर्थ है सर्व स्थानों पर वास अर्थात् अधिकार रखने वाला देव (परमेश्वर) वासुदेव कहा जाता है अर्थात् जो सर्व का मालिक है वह वासुदेव है।

- *जैसे श्री विष्णु जी, एक ब्रह्मण्ड में केवल सत्गुण विभाग के मालिक हैं। कुल का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं हैं।*
- *इसी प्रकार श्री ब्रह्मा तथा श्री शिव भी एक ब्रह्मण्ड में रजगुण व तमगुण विभाग के मालिक है सर्व ब्रह्मण्डों के कुल मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं हैं।*
- *ब्रह्मकाल जो ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव का पिता है यह केवल 21 ब्रह्मण्डों का मालिक है। कुल का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है।*
- *परब्रह्म (अक्षर पुरूष) यह केवल सात संख ब्रह्मण्डों का मालिक है कुल का मालिक अर्थात् वासुदेव नहीं है।*
- *पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) यह असंख्य ब्रहाण्डों अर्थात् सर्व ब्रह्मण्डों का मालिक है यह कुल का मालिक अर्थात् वासुदेव है। यह पूजा के योग्य है, पूर्ण मोक्षदायक है। इसीलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कृपा से ही*

तू परमशान्ति तथा सनातन परमधाम अर्थात् सत्य लोक को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई है कि जो संसार रूपी वृक्ष के सर्व भागों जड़ अर्थात् कुल का मालिक कौन है = (परम अक्षर ब्रह्म) तथा तना कौन है = (अक्षर ब्रह्म अर्थात् परब्रह्म) व डार कौन है (काल ब्रह्म) तीनों शाखाएँ कौन है (तीनों देव, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) तथा पत्ते (अन्य प्राणी है) आदि के विषय में बताए वह वेद के जानने वाला अर्थात् तत्वदर्शी सन्त है। तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान रूपी शत्रु को काट कर अर्थात् यथार्थ ज्ञान समझ कर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि उसके पश्चात् उस परमेश्वर के उस परमपद अर्थात् सनातन परमधाम की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक पुनर् लौटकर इस संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते है। जिस परमेश्वर से पुरातन संसार रूपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है। उसी आदि पुरूष नारायण अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की मैं (गीता ज्ञान दाता) शरण हूँ। उसी का स्मरण करना चाहिए। (गीता गीता अ.15/मं.4) फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 6 में कहा है कि :- जिस परमपद अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होकर लौटकर संसार में नहीं आते उस स्वयं प्रकाशित धाम को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है न चन्द्रमा तथा न अग्नि ही प्रकाशित कर सकती है। वह धाम मेरे धाम अर्थात् ब्रह्म लोक से श्रेष्ठ है। (गीता अ.15/मं.6)

गीता ज्ञान दाता से अन्य परमेश्वर का प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में है कहा है कि :-

जिस अव्यक्त प्रभु के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में कहा है उस अव्यक्त से भी अति परे दूसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य पुरूष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म (जिस का विवरण गीता अध्याय 8 श्लोक 1 के उत्तर में श्लोक 3 में कहा है) सर्व भूतों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। (गीता अ.8/मं.20) वह अव्यक्त अक्षर इस नाम से कहा गया है उसी परमात्मा की प्राप्ति को परमगति कहते हैं। जिस परमेश्वर को प्राप्त होकर लौट कर इस संसार में नहीं आते वह धाम मेरे धाम से परम अर्थात् श्रेष्ठ है। नोट :- गीता जी के अनुवाद कर्त्ताओ ने लिखा है कि गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि वह मेरा परमधाम है। यह अनुवाद ठीक नहीं है क्योंकि गीता ज्ञान दाता (काल ब्रह्म) अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा की स्थिती बता रहा है (अध्याय 8 श्लोक 21) उसी की स्थिती का उल्लेख निम्न श्लोक (अध्याय 8 श्लोक 22) में भी किया है कहा है कि गीता अध्याय 8 श्लोक 22

हे पार्थ! जिस परमात्मा के अन्तर्गत सर्व भूत हैं और जिस सच्चिदानन्द परमेश्वर से यह समस्त जगत परिपूर्ण है वह सनातन अव्यक्त परम पुरूष अर्थात् परमेश्वर तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है। (गीता अध्याय 8 श्लोक 22) उपरोक्त परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् सत्यपुरूष ही वासुदेव है वह सर्वशक्तिमान है उसी की पूजा करनी चाहिए वह पूर्ण मोक्ष दायक है यह बताने वाला महात्मा बहुत ही दुर्लभ है।

उपरोक्त तत्वज्ञान को सुन, देख और समझ कर स्वामी रामानन्द जी माथा पकड़ कर गहरी चिन्ता में हो गया। सोचने लगा इस बालक को इन्सान कहूँ या विद्वान कहूँ या भगवान कहूँ। ऐसा तत्व ज्ञान बताया है दूध और पानी भिन्न-2 कर दिया। कुछ देर मौन रह कर स्वामी रामानन्द जी

बोले विद्वान बच्चा मेरी एक शंका है कृपा उसका समाधान किजिए।

प्रश्नः- गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति अर्थात् भक्ति लाभ को अनुत्तम (अश्रेष्ठ) किस दृष्टिकोण से कहा तथा तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा,सतगुण विष्णु तथा तम्गुण शिवजी) के उपासकों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, मूर्ख तथा दुष्कर्मी किस कारण कहा है? कृप्या संस्य का निवारण कीजिए। आप का तत्वज्ञान अद्वितीय है।

उत्तरः- कबीर परमेश्वर ने बताया (लेखक अर्थात् सन्त रामपाल जी महाराज के शब्दों में) :-

प्रमाण (1) :- रावण ने भगवान शिव जी को मृत्युंजय, अजर-अमर, सर्वेश्वर मान कर भक्ति की, दस बार शीश काट कर समर्पित कर दिया, जिसके बदले में युद्ध के दौरान दस शीश रावण को प्राप्त हुए, परन्तु मुक्ति नहीं हुई, राक्षस कहलाया। यह दोष रावण के गुरुदेव का है। जिस नादान (नीम -हकीम) ने वेदों को ठीक से न समझ कर अपनी सोच से तमोगुण युक्त भगवान शिव को ही पूर्ण परमात्मा बताया तथा भोली आत्मा रावण ने झूठे गुरुदेव पर विश्वास करके अपने जीवन व कुल का नाश किया।

प्रमाण (2) :- एक भस्मागिरी नाम का साधक था, जिसने शिव जी (तमोगुण) को ही ईष्ट मान कर शीर्षासन (ऊपर को पैर नीचे को शीश) करके 12 वर्ष तक साधना की, फिर वचन बद्ध करके भस्मकण्डा ले लिया। भगवान शिव जी को ही मारने लगा। उद्देश्य यह था कि भस्मकण्डा प्राप्त करके भगवान शिव जी को मार कर पार्वती जी को पत्नी बनाऊँगा। भगवान श्री शिव जी डर के मारे भाग गए, फिर श्री विष्णु जी ने उस भस्मासुर को गंडहथ नाच नचा कर उसी भस्मकण्डे से भस्म किया। वह शिव जी (तमोगुण) का साधक राक्षस कहलाया। हरिण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा जी (रजोगुण) की साधना की तथा राक्षस कहलाया।

प्रमाण (3) :- एक समय (2006) आज से लगभग 325 वर्ष पूर्व हरिद्वार में हर की पैड़ियों पर (शास्त्र विधि रहित साधना करने वालों के) कुम्भ पर्व की प्रभी का संयोग हुआ। वहाँ पर सर्व (त्रिगुण उपासक) महात्मा जन स्नानार्थ पहुँचे। गिरी, पुरी, नाथ, नागा आदि भगवान श्री शिव जी (तमोगुण) के उपासक तथा वैष्णों भगवान श्री विष्णु जी (सतोगुण) के उपासक हैं। प्रथम स्नान करने के कारण नागा तथा वैष्णों साधुओं में घोर युद्ध हो गया। लगभग 25000 (पच्चीस हजार) त्रिगुण उपासक मृत्यु को प्राप्त हुए। जो व्यक्ति जरा-सी बात पर कत्ले आम कर देता है। वह साधु है या राक्षस स्वयं विचार करें। आम व्यक्ति भी कहीं स्नान कर रहे हों और कोई व्यक्ति आ कर कहे कि मुझे भी कुछ स्थान स्नान के लिए देने की कृपा करें। शिष्टाचार के नाते कहते हैं कि आओ आप भी स्नान कर लो। इधर- उधर हो कर आने वाले को स्थान दे देते हैं। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि जिनका मेरी त्रिगुणमई माया (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की पूजा के द्वारा ज्ञान हरा जा चुका है, वे केवल मान बड़ाई के भूखे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच अर्थात् आम व्यक्ति से भी पतित स्वभाव वाले, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते।

प्रमाण (4) :- गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक पवित्र गीता जी के बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि मेरी भक्ति (ब्रह्म साधना) भी चार प्रकार के साधक करते हैं। एक तो अर्थार्थी

(धन लाभ चाहने वाले) जो वेद मंत्रों से ही जंत्र-मंत्र, हवन आदि करते रहते हैं। दूसरे आर्त्त (संकट निवार्ण के लिए वेदों के मंत्रों का जन्त्र-मंत्र हवन आदि करते रहते हैं) तीसरे जिज्ञासु जो परमात्मा के ज्ञान को जानने की इच्छा रखने वाले केवल ज्ञान संग्रह करके वक्ता बन जाते हैं तथा दूसरों में ज्ञान श्रेष्ठता के आधार पर उत्तम बन कर ज्ञानवान बनकर अभिमानवश भक्ति हीन हो जाते हैं, चौथे ज्ञानी। वे साधक जिनको यह ज्ञान हो गया कि मानव शरीर बार-बार नहीं मिलता, इससे प्रभु साधना नहीं बन पाई तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। फिर वेदों को पढ़ा, जिनसे ज्ञान हुआ कि (ब्रह्मा-विष्णु-शिवजी) तीनों गुणों व ब्रह्म (क्षर पुरुष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) से ऊपर पूर्ण ब्रह्म की ही भक्ति करनी चाहिए, अन्य देवताओं की नहीं। उन ज्ञानी उदार आत्माओं को मैं अच्छा लगता हूँ तथा मुझे वे इसलिए अच्छे लगते हैं कि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) से ऊपर उठ कर मेरी (ब्रह्म) साधना तो करने लगे जो अन्य देवताओं से अच्छी है परन्तु वेदों में 'ओ३म्' नाम जो केवल ब्रह्म की साधना का मंत्र है उसी को आप ही विचार - विमर्श करके पूर्ण ब्रह्म का मंत्र जान कर वर्षों तक साधना करते रहे। प्रभु प्राप्ति हुई नहीं। अन्य सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। क्योंकि पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में वर्णित तत्वदर्शी संत नहीं मिला, जो पूर्ण ब्रह्म की साधना तीन मंत्र से बताता है, इसलिए ज्ञानी भी ब्रह्म (काल) साधना करके जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए।

एक ज्ञानी उदारात्मा महर्षि चुणक जी ने वेदों को पढ़ा तथा एक पूर्ण प्रभु की भक्ति का मंत्र ओ३म् जान कर इसी नाम के जाप से वर्षों तक साधना की। एक मानधाता चक्रवर्ती राजा था। (चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका पूरी पृथ्वी पर शासन हो।) उसने अपने अन्तर्गत राजाओं को युद्ध के लिए ललकारा, एक घोड़े के गले में पत्र बांध कर सारे राज्य में घुमाया। शर्त थी कि जिसे राजा मानधाता की गुलामी (आधीनता) स्वीकार नहीं है। वह इस घोड़े को पकड़ कर बांध ले तथा युद्ध के लिए तैयार रहे। किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। महर्षि चुणक जी को इस बात का पता चला कि राजा बहुत अभिमानी हो गया है। कहा कि मैं इस राजा के युद्ध को स्वीकार करता हूँ युद्ध शुरू हुआ। मान्धाता राजा के पास 72 करोड़ सेना थी। उसके चार भाग करके एक भाग (18 करोड़) सेना से महर्षि चुणक पर आक्रमण कर दिया। दूसरी ओर महर्षि चुणक जी ने अपनी साधना की कमाई से चार पूतलियाँ (बम्ब) बनाई तथा राजा की चारों भाग सेना का विनाश कर दिया।

विशेष विवेचन :- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म की भक्ति से पाप तथा पुण्य दोनों का फल भोगना पड़ता है, पुण्य स्वर्ग में तथा पाप नरक में व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में भिन्न-2 यातनाऐं भोगनी पड़ती हैं। जैसे ज्ञानी आत्मा श्री चुणक जी ने जो ओ३म् नाम के जाप की कमाई की तथा हठ योग कर के घोर तप किया उससे कुछ तो सिद्धि शक्ति (चार पुतलियाँ बनाकर) में समाप्त कर दिया जिससे महर्षि कहलाया। कुछ साधना फल को महास्वर्ग में भोग कर फिर नरक में जाएगा तथा फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर धारण करके कष्ट पर कष्ट सहन करेगा। जो 72 करोड़ प्राणियों (सैनिकों) का संहार वचन से तैयार की गई पुतलियों से किया था, उसका भोग भी भोगना होगा। चाहे कोई हथियार से हत्या करे, चाहे वचन रूपी तलवार से उन दोनों को समान दण्ड प्रभु देता है। जब उस महर्षि चुणक जी का जीव कुत्ते के

शरीर में होगा उसके सिर में जख्म होगा, उसमें कीड़े बनकर उन सैनिकों के जीव अपना प्रतिशोध लेंगे। कभी टांग टूटेगी, कभी पिछले पैरों से अर्धंग हो कर केवल अगले पैरों से घिसड़ कर चलेगा तथा गर्मी-सर्दी का कष्ट असहनीय पीड़ा नाना प्रकार से भोगनी ही पड़ेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) गीता अ. 7 श्लोक 18 में स्वयं कह रहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्माऐं हैं तो उदार (नेक)। परन्तु पूर्ण परमात्मा की वास्तविक साधना बताने वाला तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण ये सब मेरी ही (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ मुक्ति (गती) की आस में ही आश्रित रहे अर्थात् गीता ज्ञान दाता की साधना भी अश्रेष्ठ है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 1 का उत्तर श्लोक 3 में दिया है कि जिस तत् ब्रह्म के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में विवरण है वह परम अक्षर ब्रह्म है। गीता अध्याय 8 श्लोक 6 में कहा है कि यह नियम कि जो अन्त समय में जिस भी प्रभु का स्मरण करता हुआ। प्राण त्याग कर जाता है वह उसी को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 7 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना करने को कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8 से 10 में उस परम अक्षर ब्रह्म के विषय में कहा है कि जो साधक उस परम दिव्य पुरूष अर्थात् परमेश्वर का स्मरण करता हुआ प्राण त्याग कर जाता है वह उसी को प्राप्त होता है। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्व भाव से उस पूर्ण परमात्मा की शरण में चला जा। जिसकी कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा।

उपरोक्त विवरण को कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से सुनकर स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे महात्मा ! जिस पूर्ण परमात्मा के विषय में गीता व वेद कह रहे हैं उस पूर्ण प्रभु के विषय में आज तक किसी भी सन्त या ऋषि ने नहीं बताया। सद्ग्रन्थों में प्रत्यक्ष देख कर भी मन स्वीकार करने को तैयार नहीं है। क्योंकि हम लोक वेद (दन्तकथा) पर वर्षो से आधारित हैं। हमारे रक्त में वह झूठा ज्ञान समा चुका है। वे महर्षि जिनकों हम भगवान समझते थे इन सद्ग्रन्थों को जैसे आप ने समझाया है नहीं बता सके। उन्होंने स्वयं भी लोक वेद का ज्ञान ग्रहण कर रखा था तथा साधना भी शास्त्रविधि विरूद्ध करते थे। हे कबीर जी! उस स्थान (परम धाम) को यदि एक बार दिखा दे तो मन शान्त हो जाएगा। मैं वर्षो से ध्यान योग अर्थात् हठयोग करता हूँ। मैं आकाश में बहुत ऊपर तक सैर कर आता हूँ। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है स्वामी जी! आप समाधिस्थ होईए।

स्वामी रामानन्द जी का हठयोग ध्यान करना (मैडिटेशन करना) नित्य का अभ्यास था तुरन्त ही समाधिस्थ हो गए। समाधी दशा में स्वामी जी की सूरति (ध्यान) त्रिवेणी तक जाती थी। त्रिवेणी पर तीन रास्ते हो जाते हैं। बाँया रास्ता धर्मराज के लोक तथा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के लोकों तथा स्वर्ग लोक आदि को जाता है। दायाँ रास्ता अठासी हजार खेड़ों (नगरियों) की ओर जाता है। सामने वाला रास्ता ब्रह्म लोक को जाता है। वह ब्रह्मरंद्र भी कहा जाता है। स्वामी रामानन्द जी कई जन्मों से साधना करते हुए आ रहे थे। इस कारण से इनका ध्यान तुरन्त लग जाता था। बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी को ध्यान में आगे मिले तथा वहाँ का सर्व भेद रामानन्द जी को बताया। हे स्वामी जी! आप की भक्ति साधना कई जन्मों की संचित है। जिस समय आप शरीर त्याग कर जाओगे इस बाऐं रास्ते से जाओगे इस रास्ते में स्वचालित द्वार

(एटोमैटिक खुलने वाले गेट) लगे है। जिस साधक की जिस भी लोक की साधना होती है वह धर्मराय के पास जाकर इसी रास्ते से आगे चलता है उसी लोक का द्वार अपने आप खुल जाता है वह द्वार तुरन्त बन्द हो जाता है। वह प्राणी पुनः उस रास्ते से लौट नहीं सकता।

*धर्मराय लोक भी उसी बाई और जाने वाले रास्ते में सर्व प्रथम है। उस धर्मराज के लोक में प्रत्येक की भक्ति अनुसार स्थान तय होता है। आप (स्वामी रामानन्द) जी की भक्ति का आधार विष्णु जी का लोक है। आप अपने पुण्यों को इस लोक में समाप्त करके पुनः पृथ्वी लोक पर शरीर धारण करोगे। यह हरहट के कुएं जैसा चक्र आपकी साधना से कभी समाप्त नहीं होगा। यह जन्म मृत्यु का चक्र तो केवल मेरे द्वारा बताए तत्वज्ञान द्वारा ही समाप्त होना सम्भव है। परमेश्वर कबीर जी ने फिर कहा हे स्वामी जी! जो सामने वाला द्वार है यह ब्रह्मरन्द्र है। यह वेदों में लिखे किसी भी मन्त्र जाप से नहीं खुलता यह तो मेरे द्वारा बताए सत्यनाम (जो दो मन्त्र का होता है एक ॐ मन्त्र तथा दूसरा तत् यह तत् सांकेतिक है वास्तविक नाम मन्त्र तो उपदेश लेने वाले को बताया जाएगा) के जाप से खुलता है। ऐसा कह कर परमेश्वर कबीर जी ने सत्यनाम (दो मन्त्रों के नाम) का जाप किया। तुरन्त ही सामने वाला द्वार (ब्रह्मरन्द्र) खुल गया। परमेश्वर कबीर जी अपने साथ स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को लेकर उस ब्रह्मरन्द्र में प्रवेश कर गए। पश्चात् वह द्वार तुरन्त बन्द हो गया। उस द्वार से निकल कर लम्बा रास्ता तय किया ब्रह्मलोक में गए आगे फिर तीन रास्ते हैं। बाई ओर एक रास्ता महास्वर्ग में जाता है। उस महास्वर्ग में नकली (**Duplicate**) सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोकों की रचना काल ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा से करा रखी है। प्राणियों को धोखा देने के लिए। उन सर्व नकली लोकों को दिखा कर वापस आए। दाई और सप्तपुरी, ध्रुव लोक आदि हैं। सामने वाला द्वारा वहाँ जाता है जहाँ पर गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म अपनी योग माया से छुपा रहता है। वह तीन स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान क्षेत्र है। जिसमें काल ब्रह्म तथा दुर्गा (प्रकृति) देवी पति-पत्नी रूप में साकार रूप में रहते हैं। उस समय जिस पुत्र का जन्म होता है वह रजोगुण युक्त होता है। उसका नाम ब्रह्मा रख देता है उस बालक को युवा होने तक अचेत रखकर परवरिश करते हैं। युवा होने पर काल ब्रह्म स्वयं विष्णु रूप धारण करके अपनी नाभी से कमल का फूल प्रकट करता है। उस कमल के फूल पर युवा अवस्था प्राप्त होने पर ब्रह्मा जी को रख कर सचेत कर देता है। इसी प्रकार एक सतोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें दोनों (दुर्गा व काल ब्रह्म) पति-पत्नी रूप में रह कर अन्य पुत्र सतोगुण प्रधान उत्पन्न करते हैं। उसका नाम विष्णु रखते हैं। उसे भी युवा होने तक अचेत रखते हैं। शेष शय्या पर सचेत करते हैं। अन्य शेषनाग ब्रह्म ही अपनी शक्ति से उत्पन्न करता है। इसी प्रकार एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उस में वे दोनों (दुर्गा तथा काल ब्रह्म) पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण प्रधान पुत्र उत्पन्न करते हैं। उसका नाम शिव रखते हैं। उसे भी युवा अवस्था प्राप्त होने तक अचेत रखते हैं। युवा होने पर तीनों को सचेत करके इनका विवाह, प्रकृति (दुर्गा) द्वारा उत्पन्न तीनों लड़कियों से करते हैं। इस प्रकार यह काल ब्रह्म अपना सृष्टी चक्र चलाता है।*

परमेश्वर कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी को वह रास्ता दिखाया तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में फिर तीन रास्ते है बाई ओर फिर नकली सतलोक अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोक की

रचना की हुई है। दाई ओर बारह भक्तों का निवास स्थान बनाया है, जिनको अपना ज्ञान प्रचारक बनाकर जनता को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान पर आधारित कराता है। सामने वाला द्वार तप्त शिला की ओर जाता है। जहाँ पर यह काल ब्रह्म एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सुक्षम शरीरों को तपाकर उनसे मैल निकाल कर खाता है। उस काल ब्रह्म के उस लोक के ऊपर एक द्वार है जो परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सात संख ब्रह्मण्डों में खुलता है। परब्रह्म के ब्रह्मण्डों के अन्तिम सिरे पर एक द्वार है जो सत्यपुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) के लोक सत्यलोक की भंवर गुफा में खुलता है। फिर आगे सत्यलोक है जो वास्तविक सत्यलोक है। सत्यलोक में पूर्ण परमात्मा कबीर जी अन्य तेजोमय मानव सदृश शरीर में एक गुबन्द (गुम्मज) में एक ऊँचे सिंहासन पर विराजमान हैं। वहाँ सत्यलोक की सर्व वस्तुऐं तथा सत्यलोक वासी सफेद प्रकाश युक्त हैं। सत्यपुरूष के शरीर का प्रकाश अत्यधिक सफेद है। सत्यपुरूष के एक रोम कूप का प्रकाश एक लाख सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले जुले प्रकाश से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को साथ लेकर सत्यलोक में गए। वहाँ सर्व आत्माओं का भी मानव सदृश शरीर है। उनके शरीर का भी सफेद प्रकाश है। परन्तु सत्यलोक निवासियों के शरीर का प्रकाश सोलह सूर्यों के प्रकाश के समान है। बालक रूपधारी कविर्देव ने अपने ही अन्य स्वरूप पर चंवर किया। जो स्वरूप अत्यधिक तेजोमय था तथा सिंहासन पर एक सफेद गुबन्द में विराज मान था। स्वामी रामानन्द जी ने सोचा कि पूर्ण परमात्मा तो यह है जो तेजोमय शरीर युक्त है। यह बाल रूपधारी आत्मा कबीर यहाँ का अनुचर अर्थात् सेवक होगा। स्वामी रामानन्द जी ने इतना विचार ही किया था। उसी समय सिंहासन पर विराजमान तेजोमय शरीर युक्त परमात्मा सिंहासन त्यागकर खड़ा हो गया तथा बालक कबीर जी को सिंहासन पर बैठने के लिए प्रार्थना की नीचे से रामानन्द जी के साथ गया बालक कबीर जी उस सिंहासन पर विराजमान हो गए तथा वह तेजोमय शरीर धारी प्रभु बालक के सिर पर श्रद्धा से चंवर करने लगा। रामानन्द जी ने सोचा यह परमात्मा इस बच्चे पर चंवर करने लगा। यह बालक यहां का नौकर (सेवक) नहीं हो सकता। इतने में तेजोमय शरीर वाला परमात्मा उस बालक कबीर जी के शरीर में समा गया। बालक कबीर जी का शरीर उसी प्रकार उतने ही प्रकाश युक्त हो गया जितना पहले सिंहासन पर बैठे पुरूष (परमेश्वर) का था।

इतनी लीला करके स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को वापस शरीर में भेज दिया। महर्षि रामानन्द जी ने आँखे खोल कर देखा तो बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी को सामने भी बैठा पाया। महर्षि रामानन्द जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि यह बालक कबीर जी ही परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् वासुदेव (कुल का मालिक) है। दोनों स्थानों (ऊपर सत्यलोक में तथा नीचे पृथ्वी लोक में) पर स्वयं ही लीला कर रहा है। यही परम दिव्य पुरूष अर्थात् आदि पुरूष है। सत्यलोक में जहाँ पर यह परमात्मा मूल रूप में निवास करता है वह सनातन परमधाम है। परमेश्वर कबीर जी ने इसी प्रकार सन्त गरीबदास जी महाराज छुड़ानी (हरयाणा) वाले को सर्व ब्रह्मण्डों को प्रत्यक्ष दिखाया था। उनका ज्ञान योग खोल दिया था तथा परमेश्वर ने गरीबदास जी महाराज को स्वामी रामानन्द जी के विषय में बताया था कि किस प्रकार मैंने स्वामी जी को शरण में लिया था। महाराज

गरीबदास जी ने अपनी अमृतवाणी में उल्लेख किया है।

तहाँ वहाँ चित चक्रित भया, देखि फजल दरबार।
गरीबदास सिजदा किया, हम पाये दीदार।।
बोलत रामानन्द जी सुन कबिर करतार।
गरीबदास सब रूप में तुमही बोलनहार।।
दोहु ठोर है एक तू, भया एक से दोय।
गरीबदास हम कारणें उतरे हो मग जोय।।
तुम साहेब तुम सन्त हो तुम सतगुरु तुम हंस।
गरीबदास तुम रूप बिन और न दूजा अंस।।
तुम स्वामी मैं बाल बुद्धि भर्म कर्म किये नाश।
गरीबदास निज ब्रह्म तुम, हमरै दृढ विश्वास।।
सुन बे सुन से तुम परे, ऊरै से हमरे तीर।
गरीबदास सरबंग में, अविगत पुरूष कबीर।।
कोटि–2 सिजदा किए, कोटि–2 प्रणाम।
गरीबदास अनहद अधर, हम परसे तुम धाम।।
बोले रामानन्द जी, सुनों कबीर सुभान।
गरीबदास मुक्ता भये, उधरे पिण्ड अरू प्राण।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- सत्यलोक में तथा काशी नगर में पृथ्वी पर दोनों स्थानों पर परमात्मा कबीर जी को देख कर स्वामी रामानन्द जी ने कहा है कबीर परमात्मा आप दोनों स्थानों पर लीला कर रहे हो। आप ही निज ब्रह्म अर्थात् गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरुष अर्थात् वास्तविक परमेश्वर तो क्षर पुरुष (काल ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) से अन्य ही है। वही परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है वह परम अक्षर ब्रह्म आप ही हैं। आप ही की शक्ति से सर्व प्राणी गति कर रहे हैं। मैंने आप का वह सनातन परम धाम आँखों देखा है तथा वास्तविक अनहद धुन तो ऊपर सत्यलोक में है। ऐसा कह कर स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर के चरणों में कोटि-2 प्रणाम किया तथा कहा आप परमेश्वर हो, आप ही सतगुरु तथा आप ही तत्वदर्शी सन्त हो आप ही हंस अर्थात् नीर-क्षीर को भिन्न-2 करने वाले सच्चे भक्त के गुणों युक्त हो। कबीर भक्त नाम से यहाँ पर प्रसिद्ध हो वास्तव में आप परमात्मा हो। मैं आप का भक्त आप मेरे गुरु जी। कृप्या पाठक जन पढ़ें सम्पूर्ण वाणी इसी पुस्तक के पृष्ठ 403 से 405 पर

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी जी ! गुरु जी तो आप ही रहो। मैं आप का शिष्य हुँ। यह गुरु परम्परा बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है। यदि आप मेरे गुरु जी रूप में नहीं रहोगे तो भविष्य में सन्त व भक्त कहा करेंगे कि गुरु बनाने की कोई अवश्यकता नहीं है। सीधा ही परमात्मा से ही सम्पर्क करो। ''कबीर'' ने भी गुरु नहीं बनाया था।

हे स्वामी जी! काल प्रेरित व्यक्ति ऐसी-2 बातें बना कर श्रद्धालुओं को भक्ति की दिशा से भ्रष्ट किया करेंगे तथा काल के जाल में फाँसे रखेंगे। इसलिए संसार की दृष्टि में आप मेरे गुरु जी की

भुमिका किजिये तथा वास्तव में जो साधना की विधि मैं बताऊँ आप वैसे भक्ति किजिए। स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की बात को स्वीकार किया। कबीर परमेश्वर जी एक रूप में स्वामी रामानन्द जी को तत्वज्ञान सुना रहे थे तथा अन्य रूप धारण करके कुछ ही समय उपरान्त अपने घर पर आ गए। क्योंकि वहाँ नीरू तथा नीमा अति चिन्तित थे। बच्चे को सकुशल घर लौट आने पर नीरू तथा नीमा ने परमेश्वर का शुक्रिया किया। अपने बच्चे कबीर को सीने से लगा कर नीमा रोने लगी तथा बच्चे को अपने पति नीरू के पास ले गई। नीरू ने भी बच्चे कबीर से प्यार किया। नीरू ने पूछा बेटा! आप को उन ब्राह्मणों ने मारा तो नहीं? कबीर जी बोले नहीं पिता जी! स्वामी रामानन्द जी बहुत अच्छे हैं। मैंने उनको गुरु बना लिया है। उन्होंने मुझको सर्व ब्राह्मण समाज के समक्ष सीने से लगा कर कहा यह मेरा शिष्य है। आज से मैं सर्व हिन्दु समाज के सर्व जातियों के व्यक्तियों को शिष्य बनाया करूँगा। माता-पिता (नीरू तथा नीमा) अति प्रसन्न हुए तथा घर के कार्य में व्यस्त हो गए।

दूसरे रूप में कबीर परमेश्वर जी ने रामानन्द जी को तत्वज्ञान समझाते हुए कहा हे स्वामी रामानन्द जी! वेदों में वर्णित भक्ति विधि अनुसार तथा काल ब्रह्म की प्रेरणा से हठ योग करके तप करके साधक देव पद प्राप्त कर लेता है। स्वर्ग का राज्य अर्थात् इन्द्र की पदवी भी प्राप्त कर लेता है। वरूण देव- जल का देवता, कुबेर देव- धन का देवता, ईश अर्थात् प्रभु पद (ब्रह्मा भगवान, विष्णु भगवान तथा शिव भगवान आदि की पदवी) भी बहुत बार प्राप्त किया है। विष्णु जी की भक्ति करके विष्णु जी के लोक में भी देव पद प्राप्त किया परन्तु अपने पुण्यों के समाप्त होने पर पुनः जन्म-मृत्यु व अन्य प्राणियों की योनियों में आना-जाना प्रारम्भ हो जाता है। (कबिर्देव कह रहे हैं) हे स्वामी जी! वेदों में वर्णित भक्ति विधि से पूर्ण मोक्ष नहीं होता जैसे गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में कहा है कि हे अर्जुन! तू-मैं (गीता ज्ञान दाता) तथा ये सर्व सैनिक पहले भी थे अर्थात् अपना सर्व का पहले भी जन्म हुआ था, वर्तमान में भी हैं तथा आगे भी अपना सर्व का जन्म होगा। (गीता अ.2/मं.12) फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता मैं जानता हूँ। (गीता अ.4/मं.5) हे अर्जुन! मेरे जन्म और कर्म अलौकिक हैं। इस प्रकार के जन्म-कर्म को जो तत्वज्ञान द्वारा जान लेता है वह सत्य साधना तत्वदर्शी सन्त के बताए अनुसार अन्तिम स्वांस तक करके फिर शरीर त्याग फिर जन्म नहीं लेता न मुझे प्राप्त होता है (4/मं.9) गीता ज्ञान दाता के जन्म होते है यह प्रमाण गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में भी है कहा है।

हे अर्जुन! मेरी उत्पत्ति अर्थात् मेरे जन्म के विषय में न देवता जन जानते हैं, न महर्षिजन ही जानते हैं क्योंकि में सब प्रकार से महर्षियों का तथा देवताओं का आदि कारण हूँ। (गीता अ.10/मं. 2) इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि मेरी उत्पत्ति (जन्म) तो होता है परन्तु मेरे जन्म के विषय में महर्षि जन तथा देवता लोग नहीं जानते क्योंकि वे मेरे से ही उत्पन्न हुए हैं। जैसे पिता जी के जन्म के विषय में बच्चे नहीं जानते दादा जी (पिता के पिता जी) जानते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी से बताया कि आप ने सृष्टी रचना में सुना। (कृप्या पढ़े पाठक जन सृष्टी रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर) उसमें काल ब्रह्म अर्थात् गीता ज्ञान दाता के जन्म के विषय में बताया गया है। वह काल ब्रह्म मेरा बागी पुत्र है। यही कारण है कि ब्रह्म काल (सदाशिव

जिसे महाविष्णु, महाशिव भी कहते हैं) को महर्षियों व देवताओं ने अजन्मा कहा है तथा निराकार कहा है क्योंकि यह अपने वास्तविक काल ब्रह्म स्वरूप में किसी को प्राप्त नहीं होता। यदि किसी वेदों अनुसार साधक को दर्शन भी देता है तो उन्हें भ्रमित करने के लिए श्री विष्णु जी या श्री शिवजी या श्री ब्रह्म जी में से किसी एक का रूप धारण कर लेता है। इस कारण से वे साधक समझ लेते हैं कि भगवान विष्णु ही परमात्मा है यही ब्रह्म है, जिसको श्री शिव रूप में प्राप्त होता है वह जान लेता है कि श्री शिव जी ही परमात्मा है यही ब्रह्म है। फिर उनके लोकों में जाकर उन भगवानों से कहते हैं कि आप ही वेदों के कर्ता हो। आप ही ब्रह्म हो आप ही सर्वस्वा हो। आपने स्वयं को छुपा रखा है। श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी कहते भी रहते है कि पूर्ण परमात्मा तो कोई अन्य ही है। परन्तु काल द्वारा भ्रमित साधक अपनी साधना द्वारा देखे विष्णु रूप में काल ब्रह्म को ही विष्णु सतगुण ही मानकर अपने अनुयाईयों को ज्ञान प्रचार कर रहे हैं। यही कारण है कि सर्व महर्षिजन व देवता जन व अन्य मुनिजन व मनुष्यगण भ्रमित ज्ञानयुक्त हैं। यथार्थ ज्ञान से अपरिचित हैं।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी! न विष्णु न ब्रह्मा न शिव अविनाशी है तथा न गीता व वेदों का ज्ञान दाता ब्रह्मकाल (क्षर पुरूष) अविनाशी है न परब्रह्म (अक्षर पुरूष) अविनाशी है तो उन के उपासक कैसे अमर हो सकते हैं तथा जो चार मुक्तियों (सारूप, सालोक, सायुज, सामिप्य) को प्राप्त होकर भी साधक पुण्य क्षीण होने के पश्चात् जन्म-मृत्यु के चक्र में गिर कर अन्य प्राणियों के शरीरों को भी धारण करके कष्ट उठाता है। हे स्वामी जी! जो सत्यलोक आपको दिखाया है उस लोक में उपरोक्त चार मुक्तियों वाला सुख तो सदा बना रहता है तथा वह अविनाशी राम (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जिसके विषय में कहा है कि उत्तम पुरूष जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है जो परमात्मा कहा जाता है वह तो गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहे क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से भी अन्य ही है।) अर्थात् परम अक्षर पुरूष भी प्राप्त होता है।

वाणी :- सतगुरु मिले तो इच्छा मेटै, पद मिल पदे समाना।
चल हंसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।।
चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिले राम अविनाशी।।

भावार्थ :- जिस ज्ञान के आधार से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवजी की व काल ब्रह्म की साधना करके साधक जन्म मृत्यु के महाकष्ट को भोग रहा है तथा देव बन कर देव लोक में सुख भोगने की इच्छा, इन्द्र बन कर इन्द्र लोक में सुख भोगने की इच्छा, तप करके राज्य भोगने की इच्छा करता है। वह प्राणी अपने भक्ति कर्मों के पुण्यों के समाप्त होने के पश्चात् अन्य प्राणियों के शरीरों में भयंकर कष्ट भोगता है। इच्छा को केवल सतगुरु अर्थात् तत्वदर्शी सन्त ही समाप्त कर सकता है तथा यथार्थ भक्ति मार्ग पर लगा कर अमर पद अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त कराता है।

''स्वर्ग के राजा इन्द्र की पदवी को प्राप्त करके भी प्राणी पुनः जन्म प्राप्त करता है''

इन्द्र (स्वर्ग के राजा) की पदवी दो प्रकार से प्राप्त होती है (1) हठयोग द्वारा किए तप से (2) सौ मन देशी घी (एक मन लगभग 40 किलो ग्राम का होता है) द्वारा सम्पन्न यज्ञ सौ करे वह भी

इन्द्र की पदवी को प्राप्त करता है। इन्द्र का शासन काल 72 चतुर्युग हैं {सत्ययुग त्रेता, द्वापर तथा कलयुग चारों के योग) को एक चतुर्युग कहते है। जिसमें 4320000 (तैतालीस लाख बीस हजार) वर्ष होते है}। इन्द्र की पदवी को प्राप्त करने की इच्छा से किए जाने वाले अनुष्ठान के कुछ नियम होते है। यदि वे नियम पालन नहीं हो पाते तो भी वह साधना खण्डित हो जाती है। जिस कारण से सफल नहीं होती। जो साधक सर्व नियमों का पूर्ण पालन करता हुआ साधना में सफलता प्राप्त कर लेता है तो उसे इन्द्र की पदवी प्राप्त होती है तथा तत्कालीन इन्द्र को वह इन्द्र की पदवी बीच में ही त्यागनी पड़ती है। इसलिए इन्द्र के पद को प्राप्त प्राणी को यह भी विशेष चिन्ता बनी रहती है कि कोई साधक इन्द्र की पदवी प्राप्त करने हेतु तप या यज्ञ सफल न कर ले। उस साधक के अनुष्ठान में विघन डलवाने के लिए इन्द्र हर सम्भव प्रयत्न करता है। उस साधक का व्रत भंग करने के लिए इन्द्र अपनी मुख्य पत्नी को भी साधक के पास भोग विलास (सैक्स) करने के लिए भेज देता है।

कथा :- एक समय ऋषि मार्कण्डेय बंगाल की खाड़ी में तप कर रहा था। इन्द्र को पता चला तो सोचा कही मेरी इन्द्र की पदवी को प्राप्त ने कर ले। इसका व्रत भंग कराना चाहिए। इन्द्र ने एक ऊर्वशी को भेजा। वह सुन्दर ऊवर्शी सर्व श्रृंगार (आभूषण आदि पहन कर) करके ऋषि मार्कण्डेय जी के सामने जाकर नाचने लगी। इन्द्र ने अपनी सिद्धी शक्ति से उस क्षेत्र का वातावरण सुहावना बसन्त ऋतु जैसा कर दिया तथा गुप्त बाजे बजा दिए। ऊर्वशी ने सर्व राग गाए बहुत प्रकार के नाच नाचे। मार्कण्डेय ऋषि आधी आँखों को खोले हुए सर्व कौतुक देखते रहे। कोई गति विधि नहीं की। हार कर ऊर्वशी निःवस्त्र हो गई। तब मार्कण्डेय ऋषि बोले हे बेटी! हे माई! तू किस उद्देश्य से यह सब कर रही है। तब ऊर्वशी बोली हे मार्कण्डेय ऋषि पता नही आप की योग समाधी किस स्थान पर है आप मेरे ऊपर आसक्त नहीं हुए। इस बनखण्ड (वन के इस भाग) के सर्व तपस्वी तो मेरे रूप को देखते ही जैसे दीपक पर पतंग गिर कर नष्ट हो जाते हैं ऐसे अपनी साधना नष्ट कर बैठे।

तब मार्कण्डेय ऋषि बोले मैं जिस ब्रह्म लोक में समाधी दशा में ऊर्वशीयों के नाच देख रहा था वहाँ पर नाचने वाली स्त्रियाँ इतनी सुन्दर हैं कि तेरे जैसी स्त्रियाँ तो उनके पैर धोने अर्थात् सेवा करने वाली सात सात नौकरानीयाँ हैं। तूझे क्या देखूं। तेरे से कोई और सुन्दर हो तो उसे भेज। तब ऊर्वशी बोली हे मार्कण्डेय ऋषि! इन्द्र की पटरानी (मुख्य स्त्री) मैं ही हूँ। मेरे से सुन्दर स्त्री स्वर्ग लोक में नहीं है। आप एक बार मेरे साथ इन्द्र लोक में चलो। नहीं तो मुझे सजा मिलेगी। मार्कण्डेय ऋषि बोले, इन्द्र मरेगा तब किसे पति बनाएगी। ऊर्वशी बोली मैंने ऐसी भक्ति कमाई की है कि मैं चौदह इन्द्रों के शासन काल तक इन्द्र की मुख्य स्त्री के रूप में सुख भोगती रहूँगी। भावार्थ है कि इन्द्र अपना 72 चतुर्युग का समय पूरा करके मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा। अन्य इन्द्र पदभार सम्भालेगा। उस की मुख्य स्त्री मैं ही रहूँगी मेरा नाम शची है। इस प्रकार मैं चौदह इन्द्र भोगूंगी।

मार्कण्डेय ऋषि बोले वे चौदह इन्द्र भी मरेगें तब तू क्या करेगी? ऊर्वशी बोली जितने इन्द्र मुझे भोगेंगे वे मृत्यु के पश्चात् पृथ्वी लोक में गधे बनेंगे तथा मैं गधी बनूंगी। ऐसा विधाता का विधान है।

मार्कण्डेय ऋषि बोले! मुझे किसलिए उस लोक में ले जाना चाहती है जिस लोक का राजा भी गधों का शरीर धारण करता है? उर्वशी ने कहा! मैं अपनी इज्जत रखने के लिए आप को इन्द्रलोक

में चलने के लिए कह रही थी। इन्द्रलोक में कहेंगे तू हार कर आई है? मार्कण्डेय ऋषि बोले! तू चौदह इन्द्रों से भोग विलास (सैक्स) करेगी तो तेरी इज्जत कहाँ है। प्रतिव्रता अर्थात् इज्जतदार स्त्री तो एक पति तक ही सीमित रहती है। मरने के पश्चात् तू गधी बनेगी फिर भी अपनी इज्जत से डरती है। चौदह खसम करेगी तो तू आज भी गधी है। इतनी बात सुनकर शर्म के मारे ऊर्वशी का चेहरा फीका पड़ गया तथा वहाँ से चली गई। उसी समय इन्द्र आया। इन्द्र बोला हे महर्षि मार्कण्डेय जी! आप जीते हम हारे। चलिए आप मेरे वाली इन्द्र की गद्दी प्राप्त किजिए। मार्कण्डेय ऋषि बोले! रे रे इन्द्र क्या कह रहा है? मेरे लिए तो इन्द्र की पदवी कोवै (काग) की बीठ (टटी) के समान है। एक समय मैं ब्रह्म लोक (महास्वर्ग) में जा रहा था। वहाँ पर अनेकों इन्द्रों ने मेरे चरण लिए। हे इन्द्र! तू इस पदवी को त्याग दे। मैं तुझे ऐसी भक्ति विधि बताऊँगा जिससे तू ब्रह्म लोक (महास्वर्ग) में चला जाएगा। इन्द्र बोला हे ऋषि जी! अब तो मुझे इन्द्र का राज्य करने दो फिर कभी देखुंगा आप वाली भक्ति को। यह कह कर इन्द्र चला गया।

कथा का निष्कर्ष :- तत्वज्ञान के अभाव से साधक जन कठिन से कठिन साधना करते हैं तो भी पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होता। शची (इन्द्र की मुख्य स्त्री) का स्वर्ग समय 1008 चतुर्युग का है। इस पुण्यात्मा ने अज्ञानी मार्गदर्शन के आधार से साधना करके स्वर्ग की महारानी एक कल्प तक के समय तक बनी है। इसके पश्चात् मृत्यु को प्राप्त होगी तथा गधी की योनि प्राप्त करेगी। उसके पश्चात् अन्य प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाएगी। यदि तत्वदर्शी सन्त के बताए अनुसार साधना करती तो पूर्ण मोक्ष को प्राप्त करती। मार्कण्डेय ऋषि ने इन्द्र से कहा कि इन्द्र मैं तुझे ब्रह्मलोक प्राप्ति का भक्ति मार्ग बता दूंगा। महास्वर्ग (ब्रह्मलोक) को प्राप्त प्राणी का स्वर्ग समय अधिक से अधिक एक महाकल्प होता है (एक कल्प=1000 चतुर्युग जो ब्रह्मा जी का एक दिन भी कहा जाता है इतनी ही रात्री, 30 दिन रात का एक महीना, 12 महीने का एक वर्ष, 100 वर्ष की ब्रह्मा की आयु होती है ब्रह्मा की आयु एक महाकल्प की होती है।) फिर भी जन्म मृत्यु तथा अन्य प्राणियों के शरीरों का कष्ट उठाना पड़ता है तथा पाप कर्म के आधार से नरक भी जाना पड़ता है। ब्रह्मलोक में गए प्राणी भी लौट कर संसार में आते हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा कि ब्रह्मलोक तक सर्व पुनःआवृति अर्थात् बार-2 जन्म मृत्यु के आवागमन में हैं अर्थात् पूर्ण मोक्ष नहीं है। महर्षि मार्कण्डेय जी को इतने मोक्ष का ही ज्ञान था वे उसे ही उत्तम मान कर साधना करते थे तथा अन्य को भी उसी साधना को करने के लिए प्रेरित करते थे। पूर्ण मोक्ष अर्थात् सदा के लिए जन्म-मरण से छुटकारा पाकर सतलोक में सदा रहने वाला सुख प्राप्त करने के लिए तत्वदर्शी सन्त से मोक्ष मार्ग की भक्ति प्राप्त करें।

एक दिन मार्कण्डेय ऋषि एक चिट्टियों की पंक्ति का निरीक्षण कर रहे थे। इन्द्र उनके पीछे खड़ा हो गया । बहुत देर तक मार्कण्डेय ऋषि बैठे-2 चिट्टियों की पंक्ति को देखते रहे तब इन्द्र ने पूछा हे ऋषि जी इन चिट्टियों को इतने ध्यानपूर्वक किस लिए देख रहे हो? मार्कण्डेय ऋषि बोले! हे इन्द्र! मैं यह देख रहा था कि कौन सी चिट्टी कितने बार इन्द्र की पदवी पर रही है। इन्द्र को आश्चर्य हुआ तथा पूछा हे ऋषि जी ! क्या ये चिट्टियाँ भी कभी इन्द्र रही हैं? मार्कण्डेय ऋषि बोले ! हाँ इन चिट्टियों में एक चिंट्टी ऐसी है जो केवल एक बार इन्द्र बनी है शेष तो कई-2 बार इन्द्र की

पदवी को प्राप्त हो चुकी है। इन्द्र को बहुत आश्चर्य हुआ। मार्कण्डेय ऋषि बोले इन्द्र अब भी कर ले ब्रह्मलोक की भक्ति। इन्द्र ने फिर वही शब्द दोहराए कि फिर कभी देखुंगा अभी तो स्वर्ग का राज्य करने दो। जबकि इन्द्र को पता है कि इन्द्र की पदवी का समय पूरा होने के पश्चात् गधे की योनि में जाएगा। परन्तु विषयों का आनन्द छोड़ने को मन नही करता।

इसी प्रकार पृथ्वी पर भी यदि किसी व्यक्ति को थोड़ा सा भी सुख है, वह कुछ व्यसन करता है। शराब पीता है अन्य नशीली वस्तुओं का प्रयोग करता है। यदि व्यसन नहीं करता है उसके घर में वर्तमान पुण्यों के प्रभाव से सुख है। यदि वह परमात्मा की भक्ति नहीं करता है। उसे कोई सन्त, भक्त कहे कि आप परमात्मा का नाम जाप किया करो। गुरु धारण करो। वह कहता है कि फिर कभी देखेंगे। उसे फिर कहा जाता है कि जो परमात्मा का भजन नहीं करते मृत्यु के पश्चात् पशु-पक्षी की योनियों में शरीर धारण करना पड़ता है। स्वर्ग का राजा इन्द्र भी अपना स्वर्ग का समय पूरा होने के पश्चात् गधा बनाया जाता है। वह वर्तमान में सुखी व्यक्ति कहता है देखा जाएगा। बन जाऐंगे जो बनता है। कोई उस भोली आत्मा से पूछे गधा बनने के पश्चात् तू क्या देखेगा। फिर तो कुम्हार देखेगा तुझे। एक क्विंटल का थैला कमर पर होगा डण्डों की मार पड़ेगी। कमर पर घाव होंगे। कौआ चोंच मार कर मांस काट-2 कर खाएगा। तेरी आँखों में आँसु होंगे तब तुझे कौन बचाएगा ? इसलिए शब्द में कहा है :-

मन तू चल रे सुख के सागर। जहाँ शब्द सिन्धु रत्नागर।
कोटि जन्म तोहे भ्रमत हो गए कुछ ना हाथ लगा रे।
कुकर शुकर खर भया बौरे कवुआ हंस बुगा रे।
कोटि जन्म तू राजा किन्हा मिटी न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–2 हांडया मिला न निर्गुण राशा।
इन्द्र कुबेर इश की पदवी ब्रह्म वरूण धर्मराया।
विष्णु नाथ के पुर को जाकर फेर अपूठा आया।
असंख्य जन्म तोहे मर तयाँ होगे जीवित क्यों ना मरै रे।
द्वादश मध्य महल मठ बौरे बहुर ना देह धरै रे।
दोजख भीस्त सभी तैं देखे राज पाठ के रसिया।
तीन लोक से तृप्त नाहीं यह मन भोगी खसिया।
सतगुरु मिले तो इच्छा मेटे पद मिल पदे समाना।
चल हंसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।
चार मुक्ति जहाँ चम्पि करती माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै मिले राम अविनाशी।

अन्य प्रमाण :- तत्वज्ञान के अभाव से केवल तीनों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद) में वर्णितविधि से साधना करने से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। अन्य देवताओं की पूजा से अधिक स्वर्ग समय प्राप्त होता है। पूर्ण मोक्ष नहीं होता। जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर राजा ऋषभदेव जी इक्ष्वाकु वंश में राजा नाभी राज के पुत्र थे। श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 1 से 3 में गीता ज्ञान दाता ने वेदों वाला ज्ञान अपने भक्त अर्जुन को श्री गीता जी में सुनाया है, कहा है हे अर्जुन! मैंने इस अविनाशी

योग को अर्थात भक्ति मार्ग को सूर्य से कहा था, सुर्य ने अपने पुत्र वैवस्त अर्थात् मनु से कहा और मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु से कहा! इस प्रकार परम्परा से प्राप्त इस योग को राजर्षियों ने जाना किंतु उसके बाद वह योग बहुत काल से इस पृथ्वी लोक में लुप्त प्राय हो गया। तू मेरा भक्त और प्रिय मित्र है इसलिए वही यह पुरातन योग आज मैंने तुझ को कहा है; क्योंकि यह बड़ा ही उत्तम रहस्य है अर्थात् गुप्त रखने योग्य विषय है।

''चारों वेदों अनुसार साधना करने वालों की दुर्गति''

➽ *विचारणीय विषय यह है कि राजा ऋषभदेव जी इक्ष्वाकु वंशज थे, यही वेदों वाला ज्ञान उन्हें परम्परागत प्राप्त था। राज्य करते-2 भी वे भक्ति साधना किया करते थे। एक दिन उन्हें पूर्ण परमात्मा एक ऋषि के वेश में मिला तथा अपना नाम कविराचार्य बताया। ऋषभ देव जी को ऋषि कविराचार्य ने बताया कि जो भक्ति आप कर रहे हो यह पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है। पूर्ण सृष्टी रचना का ज्ञान दिया। ऋषभदेव को संसार से पूर्ण वैराग्य हो गया। पूर्ण परमात्मा ने बताया कि मैं सर्व सृष्टी रचनहार हूँ। जो वेदों में कविर्देव व कविः (कविर्) शब्द है वह मेरा वास्तविक नाम है। उसे चाहे ''कवि'' चाहे ''कविर्'' कहो। ऋषभदेव जी बहुत प्रभावित हुए तथा अपने कुल गुरु व अन्य ऋषियों से ''कवि'' ऋषि अर्थात् कविर्देव द्वारा बताए तत्वज्ञान के विषय में जानना चाहा कि यह सत्य है या व्यर्थ है? उन तत्वज्ञान हीन ऋषियों ने ऋषभ देव जी को भ्रमित कर दिया तथा कहा कि वह ऋषि ''कविः (कविर्)'' झूठ बोलता है। उसे वेदों का कोई ज्ञान नहीं है, ऋषभदेव जी ने उन ऋषियों द्वारा भिन्न-2 प्रकार का भ्रांतियुक्त ज्ञान स्वीकार कर लिया तथा पूर्ण परमात्मा के तत्वज्ञान को स्वीकार नहीं किया। अपने सर्व पुत्रों को भिन्न-2 राज्य देकर स्वयं गृह त्याग कर जंगल में साधना करने लगा। एक वर्ष तक निराहार रह कर साधना की फिर एक हजार वर्ष तक घोर तप किया। एक हजार वर्ष की तपस्या के पश्चात् काल ब्रह्म की प्रेरणा से स्वयं ही दिक्षा देने लगे।*

प्रथम दिक्षा अपने पौत्र अर्थात् भरत के पुत्र ''मारीचि'' को दी। मारीचि ने अपने दादा जी के द्वारा बताई वेदों अनुसार साधना की। उसके परिणाम स्वरूप ब्रह्मस्वर्ग (ब्रह्मलोक में बने स्वर्ग में) देव उपाधी प्राप्त की। फिर मनुष्य जन्म प्राप्त किया। कुछ समय स्वर्ग को प्राप्त हुआ तथा करोड़ों जन्म, गधे, कुत्ते, बिल्ली, वृक्षों आदि के जीवन प्राप्त होकर नरक में भी गया। वही मारीचि वाली आत्मा आगे चलकर श्री महाबीर जैन हुआ जो जैन धर्म का चौबीसवां तीर्थकर हैं। ऋषभ देव जी वाला जीव ही बाबा आदम रूप में उत्पन्न हुआ जो कि पवित्र इसाई व मुस्लमान धर्म का प्रमुख माना जाता है। (यह प्रमाण पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने'' पृष्ठ 154 पर है) पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने '' के पृष्ठ 294 से 296 तक लिखा है कि महाबीर जैन जी का जीव पहले ''मारीचि'' था जो ऋषभ देव जी के पुत्र भरत का बेटा था। मारीचि अर्थात् महाबीर जैन के जीव ने कौन -2 से जन्म धारण किए?

कृप्या निम्न पढ़े :-

निम्न विवरण पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने'', लेखक - प्रवीण चन्द्र जैन (एम.ए. शास्त्री), प्रकाशक - श्रीमति सुनीता जैन, जम्बूद्वीप हस्तिनापुर, मेरठ, (उत्तर प्रदेश) तथा "जैन संस्कृति कोश" तीनों भागों से मिला कर निष्कर्ष रूप से लिया है।

श्री ऋषभदेव के पौत्र (भरत के पुत्र) श्री मारीचि (महाबीर जैन) के जीव के पहले के कुछ जन्मों की जानकारी -

1. मारीचि अर्थात् महाबीर जैन वाला जीव पहले एक नगरी में भीलों का राजा था, जिसका नाम पुरुरवा था, जो अगले मानव जन्म में (ऋषभ देव का पौत्र तथा भरत का पुत्र) मारीचि हुआ।

2. मारीचि (महावीर जैन) वाले जीव ने श्री ऋषभदेव से जैन धर्म वाली पद्धति से दीक्षा लेकर साधना की थी, उसके आधार से उसे क्या-क्या लाभ व हानि हुई - श्री महावीर जैन का जीव ब्रह्मस्वर्ग में देव हुआ, फिर मनुष्य हुआ, फिर देव हुआ, फिर मनुष्य हुआ, फिर स्वर्ग गया, फिर मनुष्य हुआ, फिर स्वर्ग गया, फिर भारद्वाज नामक व्यक्ति हुआ, फिर महेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ। फिर नगोदिया जीव हुआ, फिर महाबीर जैन वाला अर्थात् मारीचि वाला जीव निम्न महाकष्टदायक योनियों को प्राप्त हुआ -

एक हजार बार आक का वृक्ष बना, अस्सी हजार बार सीप बना, बीस हजार बार चन्दन का वृक्ष, पाँच करोड़ बार कनेर का वृक्ष, साठ हजार बार वैश्या, पाँच करोड़ बार शिकारी, बीस करोड़ बार हाथी, साठ करोड़ बार गधा, तीस करोड़ बार कुत्ता, साठ करोड़ बार नपुंसक (हीजड़ा), बीस करोड़ बार स्त्री, नब्बे लाख बार धोबी, आठ करोड़ बार घोड़ा, बीस करोड़ बार बिल्ली तथा साठ लाख बार गर्भ पात से मरण तथा अस्सी लाख बार देव पर्याय को भी प्राप्त हुआ।

उपरोक्त कर्म भोग को भोगने के पश्चात् पाप तथा पुण्य को भोगता हुआ मारीचि अर्थात् महाबीर वर्धमान (जैन) वाला जीव एक व्यक्ति बना, फिर महेन्द्र स्वर्ग में देव बना, फिर एक व्यक्ति बना, फिर महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ। फिर त्रिपृष्ट नामक नारायण हुआ। इसके पश्चात सातवें नरक में गया। नरक भोग कर फिर एक सिंह (शेर) हुआ, फिर प्रथम नरक में गया। नरक भोग कर फिर सिंह (शेर) बना, फिर उस सिंह को एक मुनि ने ज्ञान दिया। फिर यह सिंह अर्थात् महाबीर जैन का जीव सौधर्म स्वर्ग में सिंह केतु नामक देव हुआ। फिर एक व्यक्ति हुआ। फिर सातवें स्वर्ग में देव हुआ, फिर एक व्यक्ति हुआ। फिर महाशुक्र स्वर्ग में देव हुआ। फिर व्यक्ति हुआ जो चक्रवर्ती राजा बना, फिर सहस्त्रार स्वर्ग में देव हुआ। फिर जम्बूद्वीप के छत्रपुर नगर में राजा का पुत्र हुआ। फिर पुष्पोतर विमान में देव हुआ। इसके पश्चात् वही मारीचि वाला जीव चौबीसवां तीर्थकर श्री महावीर भगवान हुआ।

महावीर भगवान अर्थात् महावीर जैन ने तीन सौ तरेसठ पाखण्ड मत चलाये।

उपरोक्त विवरण पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जानें'' पृष्ठ 294 से 296 तक लिखा है तथा जैन संस्कृति कोश प्रथम भाग पृष्ठ 189 से 192, 207 से 209 तक है।

विचार करें - जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर श्री ऋषभदेव जी से उपदेश प्राप्त करके पवित्र जैन धर्म वाली भक्ति विधि से साधना करके श्री मारीचि के जीव को (जो आगे चलकर श्री महाबीर जैन बना) क्या मिला ? पुण्य व ॐ (ओंकार) मंत्र के जाप आदि के आधार से केवल अस्सी लाख बार स्वर्ग प्राप्ति तथा पाप आधार से करोड़ों बार वृक्षों के भव (जीवन) तथा साठ

हजार बार वैश्या, पाँच करोड़ बार शिकारी, बीस करोड़ बार हाथी, साठ करोड़ बार गधा, तीस करोड़ बार कुत्ता, करोड़ों बार नपुंसक, करोड़ों बार स्त्री, लाखों बार धोबी, आठ करोड़ बार घोड़ा, बीस करोड़ बार बिल्ली आदि की योनियों में महाकष्ट भोगा तथा साठ लाख बार गर्भ पात से मृत्यु का महाकष्ट भोगना पड़ा। फिर नरक में भी पाप दण्ड को भोगा। उसके पश्चात् कुछ मानव तथा सिंह आदि पशु के जीवन को भोग कर पुष्पोत्तर विमान में देव हुआ।

उस पुष्पोत्तर स्वर्ग से निकल कर वर्धमान उर्फ महावीर जैन का जन्म बिहार राज्य के वैशाली (वसाढ) नगर के समीपवर्ती कुण्ड ग्राम में 599 ई. पू. (सन् 2006 से 2605 वर्ष पूर्व) राजा सिद्धार्थ की पत्नी त्रिशला की पवित्र कोख से हुआ तथा उनका नाम वर्धमान रखा गया। एक बहुत बड़े सर्प को बालक वर्धमान ने खेलते-खेलते पूंछ पकड़ कर दूर फेंक दिया, जिस कारण से उन्हें 'महावीर' कहा जाने लगा। युवा होने पर समरवीर राजा की पुत्री यशोदा से शादी हुई, एक प्रिय दर्शना नाम की पुत्री का पिता हुआ। प्रियदर्शना का विवाह जमाली के साथ हुआ। फिर गृह त्याग कर बिना किसी गुरु से दीक्षा लिए भावुकता वश होकर श्री महाबीर जैन जी ने बारह वर्ष घोर तप किया। फिर नगर-नगर में पैदल भ्रमण किया। अंत में राजगृह के पास ऋजुकुला नदी के तटवर्ती शालवृक्ष के नीचे तपस्या करके केवल ज्ञान की प्राप्ति की। उसके बाद स्वानुभूति से प्राप्त ज्ञान को (गुरु से भक्ति मार्ग न लेकर मनमाना आचरण अर्थात् स्वयं साधना करके जो ज्ञान प्राप्त हुआ उसको) अपने शिष्यों द्वारा (जिन्हें 'गणधर' कहा जाता था) तथा स्वयं देश-विदेश में तीन सौ तरेसठ पाखण्ड मत चलाये। महाबीर जैन ने अपने तीस वर्ष के धर्म प्रचार काल में बहतर वर्ष की आयु तक पैदल भ्रमण अधिक किया। श्री महाबीर जैन की मृत्यु 72 वर्ष की आयु में 527 ई. पू. हुई। (सन् 2006 से 2533 वर्ष पूर्व श्री महावीर जैन जी की मृत्यु हुई) आगे चल कर यह पाखण्ड मत दो भागों में बंट गया, एक दिगम्बर, दूसरे श्वेताम्बर कहे जाते हैं।

दिगम्बर मत पूर्ण निःवस्त्र अवस्था में मुक्ति मानता है तथा श्वेताम्बर सम्प्रदाय सवस्त्र अवस्था में मुक्ति मानता है।

उपरोक्त विवरण पुस्तक ''जैन संस्कृति कोश'' प्रथम खण्ड, पृष्ठ 188 से 192, 208, 209 तक तथा ''आओ जैन धर्म को जानें'' पृष्ठ 294 से 296 तक से यथार्थ सार रूप से लिया गया है।

''जैन संस्कृति कोश'' प्रथम खण्ड पृष्ठ 15 पर लिखा है कि जैन धर्म की साधना से शाश्वत सुख रूप मोक्ष प्राप्त होता है।

जरा सोचें :- शाश्वत सुख रूपी मोक्ष का भावार्थ है कि जो सुख कभी समाप्त न हो उसे शाश्वत सुख अर्थात् पूर्ण मोक्ष कहा जाता है। परन्तु जैन धर्म की साधना अनुसार साधक श्री मारीचि उर्फ महाबीर जैन की दुर्गति पढ़कर कलेजा मुंह को आता है। ऐसे नेक साधक के करोड़ों जन्म कुत्ते के हुए, करोड़ों जन्म गधे के, करोड़ों बिल्ली के जन्म, करोड़ों बार घोड़े के जन्म, साठ हजार बार वैश्या के जन्म, करोड़ों बार वृक्षों के जीवन, लाखों बार गर्भपात में मृत्यु कष्ट भोगे, केवल अस्सी लाख बार स्वर्ग में देव के जीवन भोगे। क्या इसी का नाम ''शाश्वत सुख

रूपी मोक्ष'' है? यह दुर्गति तो उस साधक (मारीचि) के जीव की हुई है जो मर्यादा से श्री ऋषभदेव जी को गुरु बनाकर वेदों अनुसार साधना करता था, ॐ (ओ३म्) नाम का जाप करता था। जिसे वर्तमान में णोंकार मन्त्र कहते हैं। वही मारीचि वाला जीव ही महाबीर जैन बना जिसने बिना गुरु धारण किए ही साधना प्रारम्भ की तथा जिसने 363 (तीन सौ तरेसठ) पाखण्ड मत चलाए। इसलिए विचारणीय विषय है कि श्री महाबीर जैन जी के जीव का मृत्यु पश्चात् क्या हाल हुआ होगा जो शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा/साधना) करता था तथा वर्तमान के रीसले (नकलची) जैन मुनियों तथा अनुयाईयों का क्या होगा? जिसके विषय में गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में वर्णन है कि जो साधक शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण करता है उसे न तो सुख होता है, न कोई सिद्धि तथा न उसकी गति होती है अर्थात् व्यर्थ है।

उपरोक्त प्रमाण से भी सिद्ध हुआ कि तत्वज्ञान के अभाव से केवल तीनों वेदों के आधार से की गई साधना पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है। (गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 में भी यही प्रमाण है) इसीलिए वेद ज्ञान दाता व गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो ज्ञान तीनों वेदों (चौथा वेद अथर्ववेद सृष्टी रचना का है भक्ति मार्ग केवल तीन वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद में ही है। इसलिए तीन वेदों का विवरण किया जाता है) का भक्ति ज्ञान है उस में पूर्ण ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान नहीं कहा है। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि श्लोक 24 से 30 तक जो यज्ञों का ज्ञान है वह जन साधारण का है जो अपने-2 मतानुसार साधना करते हैं। परन्तु यथार्थ यज्ञों का ज्ञान पूर्ण परमात्मा के मुख्य ज्ञान में (ब्रह्मण मुखे) अर्थात् तत्वज्ञान में बहुत प्रकार के यज्ञ विस्तार से कहे गये हैं। उनको जानकर पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में कहा कि ज्ञान यज्ञ, द्रव्य यज्ञ से श्रेष्ठ है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 श्लोक 10 व 12 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा के विषय में तत्वज्ञान (वास्तविक ज्ञान) को तत्वज्ञानियों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत् प्रणाम कर, कपट छोड़ कर विनम्र भाव से प्रार्थना करने पर वे तत्वज्ञान से पूर्ण परिचित तत्वदर्शी सन्त आपको पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होने की भक्ति विधि बताऐंगे।

तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य है। इसकी मूल अर्थात् जड़े ऊपर को हैं, वह तो आदि पुरूष है अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म है। नीचे को तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी) रूपी शाखाऐं तथा अन्य पत्ते जान। इस संसार रूपी वृक्ष के विषय में सम्पूर्ण जानकारी जो बताएगा वह वेद के तात्पर्य को जानता है अर्थात् वह तत्वदर्शी सन्त है। गीता अध्याय 15 श्लोक 3 से 4 में भी स्पष्ट किया है कहा है कि उस तत्वदर्शी सन्त के मिल जाने पर उस तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान रूपी वृक्ष को काट कर अर्थात् तत्वज्ञान को समझ कर उसके पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद अर्थात् सत्य लोक को प्राप्त करना चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौट कर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से (जो गीता ज्ञान दाता प्रभु से अन्य है) पुरातन संसार वृक्ष की प्रवृति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर से सृष्टी की रचना हुई है। उसी आदि पुरूष अर्थात् दिव्य परमेश्वर के मैं शरण हूँ। इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके उस परमेश्वर का मनन और निदिध्यासन करना चाहिए।

श्री ऋषभदेव जी इक्ष्वाकु वंशी थे। जिन्होंने वेदों अनुसार विधि विधान से साधना की थी, वही

साधना श्री मारीचि (अपने पोते) को दी थी। जिस साधना से श्री मारीचि जी की क्या दशा हुई, उसे पाठक ऊपर पढ़ चुके हैं। श्री ऋषभदेव जी जो पवित्र जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर अर्थात् जैन धर्म के प्रवर्तक हैं वे ही आगे चलकर बाबा आदम हुए। बाबा आदम जी को पवित्र ईसाई धर्म तथा पवित्र मुस्लमान धर्म का प्रमुख कहा जाता है। बाबा आदम जी की पत्नी हव्वा थी। जिसने दो पुत्रों (काईन तथा हाबिल) को जन्म दिया। युवा होने पर काईन ने अपने छोटे भ्राता हाबिल का ईर्ष्यावश वध कर दिया तथा स्वयं शापवश भ्रमता भटकता रहा।

मुस्लमान धर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद जी ने बताया कि ऊपर स्वर्ग में मुझे बाबा आदम मिले। वह बाँई ओर मुख करके रो रहा था तथा दाँई ओर मुख करके हंस रहा था। कारण पूछने पर जिबरील नाम के फरिश्ते ने बताया कि यह बाबा आदम है। बाँई ओर नरक में इनकी पाप कर्मी संतान कष्ट भोग रही हैं। उन्हें देखकर रो रहा है तथा दांई ओर स्वर्ग में इनकी पुण्य कर्मी संतान सुखी हैं, उन्हें देख कर हंस रहा है। (जीवनी हजरत मुहम्मद पृष्ठ 164-165, लेखक मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी, प्रकाशक :- मर्कजी मक्तबा इस्लामी पब्लिसर्ज, दिल्ली)

विचारणीय विषय है कि पवित्र जैन धर्म तथा पवित्र मुस्लमान व पवित्र ईसाई धर्म के मुखिया श्री ऋषभदेव जी को भी जन्म-मृत्यु का कष्ट है तथा जिसे स्वर्ग में भी शान्ति नहीं। इसलिए वेद व गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि पूर्ण मोक्ष के लिए तत्वदर्शी सन्त के बताए मार्ग से उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति करो। श्री ऋषभदेव जी की कुटका चल वन में आग लगने से भस्म होकर अकाल मौत हुई।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि चारों वेदो में वर्णित विधि अनुसार साधना करने से पूर्ण मोक्ष नहीं है केवल स्वर्ग-महास्वर्ग तथा नरक व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर प्राप्ति का क्रम सदा बना रहेगा। परन्तु स्वसमवेद अर्थात् तत्वज्ञान के आधार से भक्ति साधना करने से प्राणी पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होते है। वे उस सत्यलोक (शाश्वत् स्थान) में चले जाते हैं जहाँ जाने के पश्चात् फिर लौट कर संसार में कभी नहीं आते।

ऋषि रामानन्द जी उपरोक्त ज्ञान को सुनकर अति प्रसन्न हुए तथा तत्वज्ञान को जानने की अधिक रूची हुई तथा परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ से गीता ज्ञान के विषय में शंका निवारण हेतु प्रश्न किया।

प्रश्नः- हे कर्विदेव ! गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में कहा है कि मन और इन्द्रियों सहित शरीर को वश में रखने वाला योगी अकेला ही एकान्त स्थान में स्थित होकर आत्मा को निरन्तर साधना में लगावे (गीता अ.6/मं.10) शुद्ध भूमि में जिसके ऊपर क्रमशः कुशा, मृगछाला और वस्त्र बिछे हैं जो न बहुत ऊँचा है और न बहुत नीचा ऐसे अपने आसन को स्थिर स्थापन करके (गीता अ. 6/मं.11) उस आसन पर बैठ कर चित और इन्द्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए मन को एकाग्र करके अन्तःकरण की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करे (गीता अ.6/मं.12) काया सिर और गले को समान अचल धारण करके और स्थिर होकर अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमाकर अन्य दिशाओं को न देखता हुआ। (गीता अ.6/मं.13) ब्रह्मचारी के व्रत में स्थित भयरहित तथा भली भाँति शान्ति अन्तःकरणवाला सावधान योगी मन को रोककर मुझ में चितवाला और मेरे

परायण होकर स्थित होवे। (गीता अ.6/मं.14) वश में किये हुए मन वाला योगी इस प्रकार आत्मा को निरन्तर भक्ति में लगाता हुआ मुझ में रहने वाली परमानन्द की पराकाष्ठा रूप शान्ति को प्राप्त होता है। (गीता अ.6/मं.15)

हे कबीर जी! यह विधि भगवान ने बताई है। मैं इसी के आधार से साधना करता था क्या यह साधना उचित नहीं है?

उत्तर :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ ने उत्तर दिया। हे स्वामी जी! यह भक्तिविधि जो गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में बताई है यह गीता ज्ञान दाता ने अपना मत बताया है जिस साधना को करके साधक काल के लोक में ही रह जाता है यह साधना मोक्षदायक नहीं है। गीता ज्ञान में दो प्रकार का ज्ञान कहा है। (1) एक तो वेद ज्ञान दूसरा (2) गीता ज्ञान दाता ने अपना मत बताया है। जो गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में साधना की विधि बताई है वह गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म का अपना मत है जो काल जाल में फांसने वाला है। यही प्रमाण गीता अध्याय 10 श्लोक 1 से 11 तक स्पष्ट है कहा है कि हे महाबाहो अर्जुन! (मम्) मेरे (एव) ही (परमम् वचः मूय श्रृणु) परम वचनों अर्थात् मत को पुनः सुन, (यत्) जो (अहम्) मैं (ते प्रीसाणाय) तुझे अतिशय प्रेम रखने वाले के लिए (हितकाम्यया वक्ष्यामि) हित की इच्छा से कहूँगा (गीता अ.10/मं.1) मेरी उत्पत्ति अर्थात् जन्म को न देवता लोग जानते न महर्षिजन ही जानते है। क्योंकि मैं सब प्रकार से देवताओं और महर्षियों का आदि कारण हूँ अर्थात् देवताओं और महर्षियों को उत्पन्न करने वाला हूँ। (गीता अ.10/मं.2) {जैसे पिता के जन्म के विषय में पुत्र–पुत्रियाँ नहीं जानते इस श्लोक से यह भी सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता का भी जन्म हुआ है। जिस के जन्म को देवता (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी) तथा आगे इनकी सन्तान महर्षि जन भी नहीं जानते।} ***जो मुझ को और अजन्मा, अनादी और लोकों के महान् ईश्वर को तत्व से जानता है*** *वह मनुष्यों में ज्ञानवान व्यक्ति अर्थात् तत्वदर्शी सन्त सर्व पापों से मुक्त हो जाता है। (गीता अ. 10/मं.3) मेरे अन्तर्गत तथा मेरे द्वारा बताए ज्ञान के आधार से साधना करने वालों को सर्व प्रेरणा मुझे ही होती है। उन की उत्पत्ति व नाश, भय-अभय निश्चय करने की शक्ति, व ज्ञान, क्षमा, सत्य, इन्द्रियों को वश में करना, मन का निग्रह तथा सुख-दुःख आदि-आदि नाना प्रकार के भाव मुझ से ही होते हैं। (गीता अ.10/मं.4-5) सात महर्षिजन, चार उनसे भी पूर्व होने वाले, सनकादि तथा स्वायम्भुव आदि चौदह मनु ये मुझ में भाव वाले अर्थात् मेरे मत अनुसार साधना करने वाले मेरी प्रेरणा से ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न हुए हैं। जिनकी संसार में यह सम्पूर्ण प्रजा है (गीता अ.10/मं.6) जो ज्ञानवान पुरूष जिस के विषय में गीता अध्याय 10 श्लोक 3 में कहा है, मेरी इस विभूति को तत्व से जानता है। वह निश्चल भक्ति योग से युक्त हो जाता है इस में कुछ भी शंस्य नहीं है अर्थात् तत्वज्ञान के आधार से यर्थाथ साधना करता है। (गीता अ.10/मं.7) उस मेरे अर्न्तगत सम्पूर्ण जगत् की उत्पति का कारण मैं ही हूँ यह सर्व जगत् मुझ से ही चेष्टा करता है। जो तत्वज्ञान से परिचित नहीं है वह जन समुह मुझे ही सर्वेश्वर समझकर इस प्रकार की धारणा से श्रद्धा भाव से युक्त मेरे मत को जाने वाले भक्त जन मुझे ही भजते हैं। (गीता अ.10/मं.8) मेरे मत पर आधारित होकर मुझ काल ब्रह्म में मन लगाने वाले, मुझ में ही प्राणों को अर्पण करने वाले भक्त जन मेरे मत वाले ज्ञान को समझने के लिए आपस में विचार विमर्श करते हैं और उसी अपनी बुद्धि द्वारा निकाले निष्कर्ष के*

आधार से मेरी महिमा का गुणगान सदा करते रहते हैं और उसी से संतुष्ट रहते है और मुझ में लीन रहते हैं। (गीता अ.10/मं.9) उन निरन्तर मेरे में लीन हुए प्रेमपूर्वक भजने वालों को वह भक्ति ज्ञान देता हूँ जिससे वे मुझ काल ब्रह्म को ही प्राप्त होते हैं। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं करते। (गीता अ.10/मं. 10) उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिए मैं उनके अन्दर (आत्मआवस्थः) आत्मा की तरह स्थित होकर अर्थात् प्रेतवत् प्रवेश करके स्वयं उस मेरे मत वाले ज्ञान द्वारा उत्पन्न अज्ञान रूपी अन्धकार को वेद ज्ञान रूपी दीपक के द्वारा नष्ट कर देता हूँ अर्थात् फिर उनको वेद ज्ञान देता हूँ। (गीता अ. 10/ मं.11) बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने कहा हे स्वामी जी ! इस प्रकार यह काल ब्रह्म सर्व प्राणियों को दो तरफा भ्रमित ज्ञान देकर भ्रमित रखता है। काल ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता) ने गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में बताए अपने मत वाले ज्ञान के विपरित वेद ज्ञान गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 9 में तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 40 से 56 तथा श्लोक 62-66 में बताया है। गीता अध्याय 3 श्लोक 1-2 में अर्जुन ने कहा हे जनार्दन यदि आप को कर्म की अपेक्षा ज्ञान श्रेष्ठ मान्य है तो फिर हे केशव! मुझे किसलिए कर्मयोग अर्थात् युद्ध भी कर तथा स्मरण भी करने वाले भयंकर कर्म में क्यों लगाते हो। मुझे भी भक्ति के लिए एकान्त स्थान पर बैठ कर अर्थात् कर्म सन्यास लेकर भक्ति करने को भी कहते है। आपके ये मिले हुए से (दो तरफा) वचनों से मेरी बुद्धि मानों भ्रमित हो रही है। आप उस एक बात को निश्चित करके कहिए जिससे मैं कल्याण को प्राप्त होऊँ। (गीता अ. 3/ मं.1-2) हे निष्पाप अर्जुन! इस लोक में मेरे द्वारा दो प्रकार की निष्ठा अर्थात् मेरा विश्वसनीय ज्ञान व भक्ति विधि पहले कही गई है कि एक ज्ञान योग और दूसरा कर्म योग है। जिस को भी जो भक्तिविधि अच्छी लगती है वह उसी को चुन लेता है। (गीता अ.10/ मं.3) परन्तु मनुष्य न तो कर्मो का आरम्भ किये बिना निष्कर्मता को अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होता है और न कर्मों के केवल त्यागने मात्र से सिद्धी अर्थात् मोक्ष मार्ग में सहयोगी शक्ति को प्राप्त होता है (गीता अ.3/ मं.4) निःसन्देह कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण मात्र भी बिना कर्म किये नहीं रहता। क्योंकि सारा मनुष्य समुदाय प्रकृति जनित गुणों द्वारा अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव द्वारा परवश हुआ कर्म करने के लिए बाध्य किया जाता है। (गीता अ.3/ मं.5) जो मूर्ख मनुष्य कर्म इन्द्रियों को हठ पूर्वक रोक कर अर्थात् एक स्थान पर बैठ कर मन से इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन करता रहता है, वह मिथ्याचारी अर्थात् पाखण्डी कहा जाता है (गीता अ.3 / मं.6) परन्तु हे अर्जुन! जो साधक मन से इन्द्रियों को वश में करके अनासक्त हुआ समस्त इन्द्रियों द्वारा कर्मयोग का आचरण करता है अर्थात् कर्त्तव्य कर्म करता हुआ भक्ति करता है वह श्रेष्ठ है। (गीता अ.3/ मं.7) तू शास्त्रविहित अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार भक्ति कर्म करते-2 कर क्योंकि कर्म न करने अर्थात् एक स्थान पर बैठकर भक्ति करने से तेरा शरीर निर्वाह भी सिद्ध नहीं होगा। (गीता अ.3/ मं.8) कर्मों के विषय में बताया है कि धार्मिक अनुष्ठान व भक्ति के लिए किए जाने वाले कर्म तथा अपनी जीविका के लिए नेक नीति से किए जाने वाले कर्मों के अतिरिक्त दूसरे कर्मों में लगा हुआ। अर्थात् नाचना, गाना, गप-शप लगाना, ताश खेलना अन्य नशीली वस्तुओं के प्रयोग के लिए कर्म करना, चोरी-जारी (परपुरूष व परस्त्रीगमन) करना हिंसा आदि कर्मों में लगा हुआ मनुष्य समुदाय कर्मों से बन्धता है इसलिए हे अर्जुन! तू आसक्ति रहित होकर उस भक्ति व जीविका के लिए नेक कर्म कर

(गीता अ.3 /मं.9)

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने स्वामी रामानन्द की शंका का निवारण करने हेतु बताया कि काल ब्रह्म ने दो तरफा (दोगला) ज्ञान गीता जी में दिया है ताकि यह मानव भ्रमित ज्ञान के आधार पर अपनी साधना करके काल के जाल में ही फंसा रहे। परमेश्वर कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी से कहा, हे स्वामी जी! काल ब्रह्म ने गीता अध्याय 6 श्लोक 15 में जो कहा है उसको आप ठीक से नहीं समझ सके इसलिए उस के अनुवाद में आप जी ने कहा है संयमी योगी मेरे द्वारा बताए ज्ञान अर्थात् मत् अनुसार साधना में लगा हुआ मुझ में रहने वाली (निर्वाण परमाम् शान्तिम् अधिगच्छति) परमानन्द की पराकाष्ठ रूप शान्ति को प्राप्त होता है। परन्तु स्वामी रामानन्द जी इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि अध्याय 6 श्लोक 10 से 14 में वर्णित विधि को अर्थात् मेरे मत अनुसार साधना में मन लगाकर करने वाले मुझ में रहने वाली अर्थात् काल जाल में फंसे रहने वाली (निर्वाण परमाम्) शान्त प्राय अर्थात् बिल्कुल मृत प्राय/नाम मात्र (शान्तिम् अधिगच्छति) शान्ति को प्राप्त होता है। भावार्थ है कि काल ब्रह्म के मत अनुसार साधना करने वाले को पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होता। स्वर्ग-महास्वर्ग को प्राप्त होकर साधक पुण्यों के क्षीण होने पर पुनः नरक लोक तथा पृथ्वी लोक पर कष्ट भोगने को आता-जाता रहेगा।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे कबीर करतार! मेरी बुद्धि पर पत्थर पड़ा हुआ था। इस गीता अध्याय 6 श्लोक 15 का अर्थ जो आपने बताया यही है। कबीर जी ने फिर कहा हे स्वामी जी वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद तथा पाँचवां स्वसम वेद) का ज्ञान पूर्ण परमात्मा अर्थात् मैंने काल ब्रह्म की आत्मा में प्रवेश किया था। काल ब्रह्म ने केवल चार वेद को ही प्रकट किया पाँचवां वेद स्वसम वेद छुपा दिया। चारों वेदों के ज्ञान के साथ-2 इसने अपना मत भी अपने लोक में फैला दिया। जिसे लोक वेद कहते हैं। उस लोक वेद के आधार से ऋषिजन इसी ब्रह्म को ही पूर्ण परमात्मा मानकर इसी के भ्रमित ज्ञान के आधार से साधना करते रहे। जिस कारण से स्वर्ग, महास्वर्ग, नरक तथा चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में यातना सहन कर रहे हैं। पूर्ण परमात्मा के ज्ञान के लिए किसी तत्वदर्शी सन्त की खोज करने को कहा है। यह ज्ञान काल ब्रह्म ने हमारे डर से बताया है तथा उसका संकेत किया है। शेष ज्ञान अर्थात् चारों वेदों से आगे का स्वसम वेद वाला ज्ञान मैं स्वयं इस काल ब्रह्म के लोक में आकर बताता हूँ। परन्तु काल ब्रह्म के भ्रमित ज्ञान को ग्रहण किए हुए प्राणी इस तत्व ज्ञान को स्वीकार नहीं करते। इस तत्व ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं हो सकता। हे स्वामी जी! गीता अध्याय 18 श्लोक 40 से 49 तक कहा है कि चारों वर्णो (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य तथा शुद्र) के व्यक्तियों को चाहिए की अपने अपने कर्मो को करते हुए भक्ति करें जिस कारण से अपने-2 स्वभाविक कर्मों में लगा हुआ व्यक्ति परमात्मा की साधना में तत्परता से लगा हुआ परम सिद्धी को प्राप्त हो जाता है।

अब उस विधि को सुन जिस विधि द्वारा परम सिद्धी अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होता है। (गीता अ.18/ मं.40 से 45) जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है उस परमेश्वर की अपने स्वभाविक कर्मों को करता हुआ भक्ति करके मनुष्य परम सिद्धि को अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। (गीता अ.18/ मं.46) अपने आप विचार

विमर्श किए हुए अर्थात् स्वयं मनमाना आचरण किए हुए गुण रहित दूसरे के धर्म अर्थात् धार्मिक भक्ति कर्म अपना शास्त्रनुकूल धर्म अर्थात् भक्ति कर्म श्रेष्ठ हैं। (गीता अध्याय 18 मन्त्र 47) अपने-2 कर्मों को करता हुआ साधक भजन करके पाप को प्राप्त नहीं होता वह कर्म सन्यास से श्रेष्ठ है तथा जैसे अग्नि में धुंआ है ऐसे प्रत्येक कर्म दोष युक्त है फिर भी (अपने-2 वर्ण के कर्मों) सहज कर्मों को नही त्यागना चाहिए गीता अध्याय 18 मन्त्र 48 तत्वज्ञान के आधार से सांसारिक सम्पति व सन्तान को अपना न मान कर परमेश्वर की जाने, इस प्रकार के मन से किए सन्यास द्वारा उस पूर्ण मोक्ष को प्राप्त करता है। जहाँ जाने के पश्चात् आत्मा को कोई कर्म नहीं करना पड़ता (गीता अ.18/ मं. 49) जो तत्वज्ञान की जो परा निष्ठा अर्थात् विशेषता है जिस कारण भक्ति की कमाई से सिद्धी को प्राप्त होकर पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होता है जिस कारण से उपरोक्त श्लोक 49 में कहि गई नैष्कम्य सिद्धी को प्राप्त होता है अर्थात् (शाश्वतम् स्थानम् प्राप्स्यसि) सत्यलोक को प्राप्त होगा। जहाँ जाने के पश्चात् आत्मा को कोई कर्म नहीं करना होता। उस ज्ञान को मुझ से संक्षेप में सुन (गीता अ.18/ मं.50) तत्व ज्ञान से शुद्ध हुई बुद्धि से युक्त आहार व विकारों को संयम कर के सदा सहज ध्यान में लगा शान्त साधक पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होने की भक्ति करने का पात्र होता है अर्थात् उसे सत्यनाम दिया जा सकता है। (गीता अ.18/ मं.51 से 53) पूर्ण परमात्मा की भक्ति अर्थात् सत्य नाम प्राप्त प्रसन्न मन वाला भक्त इच्छाओं व शोक आदि से रहित सर्व प्राणियों में प्रेम रखने वाला मेरी भक्ति को तथा फिर पूर्ण परमात्मा की भक्ति को प्राप्त होता है (गीता अ.18/ मं.54) क्योंकि काल ब्रह्म के ॐ नाम के जाप से साधक त्रिवेणी से आगे नहीं जा सकता यह ज्ञान होने पर मेरी भक्ति द्वारा मुझे समझ कर कि मैं जो हूँ जितना हूँ ठीक वैसा का वैसा तत्वज्ञान से जान लेता हूँ उस के पश्चात् तुरन्त ही पूर्ण परमात्मा के परम स्थान (सतलोक) में प्रविष्ट हो जाता है। (गीता अ.18/मं.55) गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी भक्ति साधना करता हुआ अर्थात् ओउम नाम का जाप सहित सत्यनाम की साधना करता हुआ सर्व कर्म करता हुआ भी मेरी कृपा से उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होगा। (गीता अ.18/ मं.56) हे अर्जुन तू मेरी सर्व पूजाओं को मुझ में त्याग कर उस एक अर्थात् अद्वितीय परमेश्वर की शरण् में जा फिर मैं तुझे सर्व पापों से मुक्त कर दूंगा तू शोक मत कर (गीता अ.18/ मं.66) हे अर्जुन तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। (गीता अ.18/ मं.62) बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने महर्षि रामानन्द जी को बताया हे स्वामी जी! श्री मद्भगवत् गीता में पूर्ण परमात्मा के विषय में उनेकों स्थानों पर विवरण हैं जो गीता ज्ञान दाता से अन्य ही है।

प्रमाण :- गीता अध्याय 2 का मन्त्र नं. 17, अध्याय 3 का मन्त्र नं. 15, अध्याय 4 का मन्त्र नं. 31 से 32 , अध्याय 5 का मन्त्र नं. 6, 10, 13 से 21 तथा 24 से 26, अध्याय 6 का मन्त्र नं. 7, 19 से 20, 25 से 27, अध्याय 7 का मन्त्र नं. 19 तथा 29, अध्याय 8 का मन्त्र नं. 1, 3, 8 से 10 तथा 20 से 22, अध्याय 13 का मन्त्र नं. 12 से 17, 22 से 24, 27 से 28, 30, 31 तथा 34, अध्याय 17 का मन्त्र नं. 23 से 25, 27, अध्याय 18 का मन्त्र नं. 46, 61, 62, 64, 66

स्वामी रामानन्द जी का मन उपरोक्त ज्ञान को सुन तथा समझ कर शान्त हो गया तथा काल

जाल को समझ कर रामानन्द जी ने परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ के पुनः चरण लिए तथा कहा हे परमेश्वर मैं तो शिक्षित मूर्ख था। आप के तत्वज्ञान ने मेरे ज्ञान नेत्रखोल दिए। आप केवल मेरे लिए आए हो।

परमेश्वर कबीर जी तथा महर्षि रामानन्द जी का ज्ञान संवाद कई दिनों तक चला। एक दिन स्वामी रामानन्द जी के पास एक व्यक्ति आया। उसने स्वामी रामानन्द जी से कहा हे स्वामी जी! मुझे किसी भी कार्य में सफलता नहीं मिलती, हानि ही हानि होती है। मुझे क्षय रोग हो गया है। सर्व औषधी प्रयोग कर ली है। बड़े-2 वैद्यों से उपचार करा चुका हूँ, परन्तु रोग बढ़ता ही जा रहा है। आप के द्वारा बताई सर्व आध्यात्मिक क्रियाएं तथा मन्त्र जाप भी कर लिये हैं परन्तु स्थिती यथावत् है आपके सम्पर्क में आने से पूर्व मैं अन्य सन्तों व सिद्ध पुरूषों द्वारा बताए अध्यात्मिक जन्त्र मन्त्र कर चुका था। मैं ब्राह्मण कुल में जन्मा हूँ। बचपन से ही गीता जी का पाठ, गंगा स्नान तथा भगवान विष्णु व शिव जी की पूजाऐं करता रहा हूँ। फिर भी मुझे महान् कष्ट भोगना पड़ रहा है। आप परम विद्वान हैं वेदों तथा गीता सहित अठारह पुराणों के मर्मज्ञ हैं। कृप्या कारण बताईए मेरा कौन सा पाप कर्म है जो किसी भी साधना से नष्ट नहीं हो रहा।

उत्तर (स्वामी रामानन्द जी का) :- महर्षि रामानन्द जी ने उस व्यक्ति के प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया। स्वामी रामानन्द जी बोले हे ब्राह्मण! श्री देवी पुराण चौथा स्कन्ध अध्याय 14 (पृष्ठ 243) में लिखा है कि शुक्राचार्य जी ने प्रह्लाद को बताया कि जो आपत्तियाँ आप पर आई हैं। ये सब आप के प्रारब्ध कर्म का भोग है जो सर्व को भोग कर समाप्त करना होता है। शुक्राचार्य ने कहा प्राचीन समय में मैंने श्री ब्रह्मा जी के मुख से जो बात सुनी हैं उसे बता रहा हूँ। सुनों! यह वचन बड़ा ही हितकर है सत्य और अटल है। उन्होंने कहा था–''होने वाली बातें अवश्य होकर रहती हैं' धरातल पर कोई भी ऐसा सुयोग्य पुरूष नहीं है, जो प्रारब्ध को विफल बनाने में सफल हो सके'' हे प्रह्लाद! विपरित समय के कारण तुम्हारी शक्ति क्षीण हो गई है। अतः एक बार तो तुम्हें देवताओं से परास्त होकर पाताल में जाना ही पड़ेगा। समय बदलता रहता है; कुछ समय पूर्व तुम सम्राट रह चुके हो। वर्तमान में आप साधारण व्यक्ति की तरह जीवन जी रहे हो।

स्वामी रामानन्द जी ने अपने शिष्य ब्राह्मण को अन्य उदाहरण दिया कहा हे ब्राह्मण! इसी प्रकार देवताओं के गुरु बृहस्पति ने देवराज इन्द्र को श्री देवी पुराण पांचवा स्कन्ध अध्याय 4-5 (पृष्ठ 283-284) में समझाते हुए कहा था। ''हे इन्द्र! प्रारब्ध कर्मों का अभाव बिना भोगे नहीं हो सकता। यह स्पष्ट है।''

अन्य उदाहरण और सुन श्री देवी पुराण छठा स्कन्ध अध्याय 10 (पृष्ठ 412-413) में व्यास जी ने राजा जनमेजय के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा' शरीर धारण कर लेने पर काल की प्रेरणा से कर्म के क्रम चालू हो जाते हैं। प्रारब्ध कर्म उसे समझना चाहिए। जिस का फल भोग लेने पर फिर कुछ शेष नहीं रहता। प्राणियों को प्रारब्ध कर्म अवश्य भोगना पड़ता है इसमें कोई संशय नहीं। राजेन्द्र! बिल्कुल निश्चित है कि पूर्व जन्म में किए गए जितने अच्छे और बुरे कर्म हैं, उनके फल वर्तमान जन्म में सामने आते हैं। उन्हें भोगना प्राणियों के लिए अनिवार्य हो जाता है। महाराजा, मनुष्य, देवता आदि सब के सब कर्म भोग में परवश हैं। राजन्! इन्द्रादि देवता, दानव, यक्ष और गन्धर्व सर्व कर्म के आधीन हैं। इसमें पूर्व जन्मकृत कर्मजनित प्रारब्ध ही कारण है। यही नियम देवताओं के लिए भी है। प्रारब्ध के इसी नियम के अनुसार इन्द्र को कष्ट भोगने पड़े। राजन्! नर और नारायण दोनों अर्जुन और श्री कृष्ण रूप में जन्म ले चुके हैं। यही बात पाण्डवों के विषय में भी कही गई है। केवल दुःख और सुख भोगने के लिए प्राणियों को देह धारण करना पड़ता है। शरीर पाकर दुःख और सुख के पचड़े से प्राणी कभी बच नहीं सकते''।

स्वामी रामानन्द जी को उपरोक्त पुराणों का ज्ञान कण्ठस्थ था। इस लिए अपने शिष्य ब्राह्मण

को सुना कर कहा विप्र! जो कष्ट आपको भोगना पड़ रहा है। यह आपका पूर्वजन्म कृत कर्मजनित प्रारब्ध कर्म है जो आप को भोग कर ही समाप्त करना पड़ेगा। क्योंकि पाप कर्म से दुःख होता है। प्राणी के पाप किसी भी साधन से नाश (क्षमा) नहीं हो सकते। वेदों वे सर्व पुराणों आदि सद्ग्रन्थों का यही कथन है। भगवान विष्णु जी ने भी कर्म का फल भोगना पड़ा। त्रेता युग में श्री रामचन्द्र रूप में अवतरित हुए थे। उस समय राजा बाली का वध वृक्ष की ओट लेकर धोखे से किया था उस पाप कर्म का दण्ड भी भोगना पड़ा। द्वापर युग में वह श्री रामचन्द्र जी वाली आत्मा श्री कृष्णचन्द्र रूप में अवतरित हुई। उस समय एक बालिया नामक शिकारी ने श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मारा जिससे श्री कृष्ण जी मृत्यु को प्राप्त हुए। वह शिकारी वाली आत्मा त्रेतायुग में बाली था। उस वध का प्रतिशोध द्वापर में लिया। इसलिए हे विप्र! आप प्रभु के सिद्धान्त से परिचित होकर भक्ति करते रहो। भविष्य में कोई कष्ट न आ जाए।

स्वामी रामानन्द सरस्वती जी का उत्तर सुनकर वह ब्राह्मण बोला हे स्वामी जी! आप के पास आने से पूर्व कई ऋषियों के पास गया,ज्योतिष विद्या के जानने वालों के पास भी गया। पहले तो उन्होंने समाधान बताया दान-धर्म करने को कहा, कुछ अनुष्ठान भी कष्ट निवारण के लिए बताए। जो मैंने सर्व क्रियाऐं तथा मन्त्र जाप किए। जब कोई लाभ नहीं हुआ तो उन्होंने कहा यह आपका प्रारब्ध का पाप है। यह नाश (क्षमा) नहीं हो सकता। उसके पश्चात् यह दुःखी प्राणी। आप जी की शरण में आया। आप जी ने जो भी दान-धर्म अनुष्ठान करने को मुझे कहे वे भी सर्व किए। मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। अब आपने भी वही बात कह दी जिसका मुझे डर था। जो अन्य ऋषियों वे सन्तों ने कही थी कि यह तो तेरा प्रारब्ध का पाप कर्म है भोगने से ही समाप्त होगा। हे स्वामी जी! इतने कष्टमय जीवन से अच्छा तो मृत्यु ही उचित है। कष्ट निवारण के लिए तो धार्मिक कर्म करने में उत्साह रहता था। परन्तु यह बात सुनकर कि पाप जनय कष्ट प्रारब्ध का भोग है। यह समाप्त ही नहीं होगा। अब तो स्वामी जी! भक्ति में पूर्ण रूप से अरूचि हो गई है।

दोनों गुरु-शिष्य की वार्तालाप सुनकर परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी। यदि आप क्षुब्ध न हों तो यह दास एक प्रार्थना करना चाहता है। महर्षि रामानन्द जी ने कहा हे कबीर प्रभु! आप निःसंकोच होकर कहिए क्या कहना चाहते हो?

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी बोले हे स्वामी जी! आप वेद ज्ञान को पुराण की तुलना में उत्तम मानते हो या न्यून?

महर्षि रामानन्द जी ने कहा, मैं वेद ज्ञान को सर्वश्रेष्ठ मानता हूँ। यदि वेद ज्ञान के विपरीत किसी के भी विचार हैं वे मुझे मान्य नहीं हैं।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा स्वामी जी! यजुर्वेद अध्याय 8 मन्त्र 13 में छः बार प्रमाणित किया है कि परमात्मा अपने साधक के सर्व अपराधों (संचित तथा प्रारब्ध आदि) को नाश (क्षमा) कर देता है। घोर अपराध को भी परमेश्वर नाश कर देता है। सत्य साधना चाहे देवता, ऋषि व सन्त या साधारण व्यक्ति कोई भी करे। उन सर्व के पाप को परमेश्वर नाश कर देता है।

यजुर्वेद अध्याय 8 मन्त्र 13

यजुर्वेद अध्याय नं. 8 मंत्र नं. 13

देवकतस्येनसोवयजनमसि मनुष्यकृतस्यैनसोवयजनमसिपितृ–
कृतस्यैनसोवयजनमस्यात्मकृतस्यैनसोवयजनमस्येनसएनसोव–
यजनमसि। यच्चाहमेनो विद्वाँश्चकार यच्चाविद्वाँस्तस्य सर्वस्यैन–
सोवयजनमसि।।13।।

अनुवाद :– वेदों को बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि हे पूर्ण ब्रह्म आप सत्यभक्ति करने वाले (देव कृतस्य) भद्र पुरूष सन्त/ऋषि द्वारा किए हुए(एनसः) पाप के (अवयजनम्) क्षमा अर्थात् विनाश करने वाले (असि) हो। (मनुष्य कृतस्य) साधारण व्यक्ति के किए हुए (एनसः) पाप के (अवयजनम्) विनाश करने वाले (असि) हो। सत्यभक्ति चाहे पिता करे उस (पितृकृतस्य) पिता के किये हुए (एनसः) पाप के (अवयजनम्) विनाश करने वाले (असि) हो। शास्त्र अनुकूल साधना चाहे कोई स्वयं करें उसके (आत्म कृतस्य) अपने किये हुए (एनसः) पाप के (अवयजनम्) विनाश करने वाले (असि) हो और तो और आप (एनसः एनसः) पाप के पाप अर्थात् घोर पाप के (अवयजनम्) विनाश अर्थात् क्षमा करने वाले (असि) हो। (यत्) जो सत्यभक्ति करने वाला (एनः) पाप चाहे (विद्वान्) शिक्षित अर्थात् पंडित या (अविद्वान्) अशिक्षित (चकार) करे (तस्य) उसके (च) तथा (सर्वस्य) सर्व सत्यभक्ति स्तुति करने वालों के (एनसः) पाप के (अवयजनम्) विनाश करने वाले (असि) हो।(13)

उपरोक्त प्रमाण को स्वामी रामानन्द जी ने तुरन्त यजुर्वेद में देखा। जो स्वामी जी के आश्रम में ही रखा था। महर्षि रामानन्द जी की आँखें खुलि की खुलि रह गई सिर चकराने लगा। सोचा मैंने 90 वर्ष हो गये इन वेदों का अध्ययन करते हुए। मेरी बुद्धि में कभी ये मन्त्र चढा ही नहीं। सचमुच हमारी बुद्धि काल ब्रह्म ने बांध रखी थी। हे कबीर जी! आप मानव नहीं वास्तव में परमेश्वर हैं। आप अशिक्षित होते हुए भी विद्वान हैं। हम महर्षि की पदवी के योग्य नहीं हैं। सर्व ऋषि जो पूर्व हुए हैं तथा वर्तमान में जितने भी ऋषि-महर्षि कहलाते हैं। सर्व वेद ज्ञानहीन हैं। वे इस पदवी के योग्य ही नहीं हैं। यह अज्ञान अंधकार तो युगों से ही छाया है। आपने ही आकर वेदों के ज्ञान को ठीक-ठीक समझाया है। बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने पुनः कहा हे स्वामी जी! ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 161 मन्त्र 2 में स्पष्ट लिखा है कि 'परमेश्वर अपने भक्त के क्षय रोग (असाध्य जीवन नाशक रोग) को भी ठीक करके साधक को पूर्ण स्वस्थ कर देता है। यदि उस साधक के जीवन स्वांस भी समाप्त हो चुके हों अर्थात् आयु भी शेष न रही हो जो प्रारब्ध में लिखी है, तो भी परमेश्वर अपने सत्य साधक को सौ वर्ष तक आयु प्रदान कर देता है।

कृप्या पढ़ें ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 161 मन्त्र 2

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव।
तमा हरामि निऋतेरूपस्थादस्पार्षमेनं शतशारदाय।।2।।

पदार्थ :- (यदि क्षितायुः) यदि किसी रोगी की जीवन शक्ति समाप्त हो, (यदि वा परेतः) यदि वह सीमा से भी परे हो गया है, अर्थात् परलोक चला गया है(यदि मृत्योः अन्तिकं) यदि वह मृत्यु के सन्निकट (नीतः एव) चला गया है, तो भी (तम्) उसे मैं (निकृतेः उपस्यात् आ हरामि) भारी कष्टप्रद रोग के पंजे से मुक्त कराऊं तथा (एनम्) उसे (शत-शारदाय) शत वर्ष के जीवन हेतु (अस्पार्षम्) बल-सम्पन्न करूं।।2।।

भावार्थ :- यदि रोगी की जीवन शक्ति समाप्त हो रही है और उसका रोग सीमा को पार कर गया है तब भी परमात्मा उसे इस कष्टप्रद रोग से मुक्त कर शत वर्ष का जीवन दे सकता है।।2।।

उपरोक्त प्रमाण को देखकर स्वामी रामानन्द जी ने दांतों तले ऊंगली दबाई तथा उस बालक रूप में विराजमान कबीर परमेश्वर के चरणों में शीश रख दिया। वह ब्राह्मण भी यह सर्व वार्ता सुन रहा था तथा अति प्रभावित हो रहा था। परमेश्वर कबीर जी ने अपना उपदेश प्रारम्भ रखते हुए कहा हे स्वामी जी! यदि किसी के पैर में कांटा लगा है। जिस कारण से उसे पीड़ा हो रही है वह किसी व्यक्ति से प्रश्न करे कि मेरे पैर में पीड़ा किस कारण से है? वह व्यक्ति कहे कि आपके पैर में कांटा लगा है जो आपको दिखाई नहीं देता। इसी कारण से आप को पीड़ा हो रही है। वह कुछ प्रयत्न भी करता है परन्तु उसके उपकरण कांटा निकालने योग्य नहीं हैं। वह कहे कि आपका कांटा तो नहीं निकल सकता यह पीड़ा तो तुझे झेलनी ही पड़ेगी। आप जूता पहन लो भविष्य में कांटा नहीं लगेगा। हे स्वामी जी! क्या उस व्यक्ति के विचार श्रेष्ठ हैं? पैर में पीड़ा कांटे से है। कांटा लगे पैर में जूता पहना ही नहीं जा सकता। कांटा निकलने से पीड़ा समाप्त होगी। फिर वह व्यक्ति इस भय से जूता पहनेगा कहीं फिर कांटा न लग जाए। इसी प्रकार जिस व्यक्ति को प्रारब्ध के पापकर्म रूपी कांटें से पीड़ा हो रहीं है। उसका वह प्रारब्ध का पाप नाश हो अर्थात् वह प्रारब्ध का पापकर्म रूपी कांटा निकले तब उस व्यक्ति का कष्ट समाप्त हो। फिर वह व्यक्ति प्रभु भक्ति रूपी जूता इस भय से पहने अर्थात् परमात्मा की भक्ति मर्यादा में रहते हुए करेगा कि कहीं फिर से वह पाप कर्म रूपी कांटा न लग जाए अर्थात् वह भयंकर कष्ट पुनः दुखदाई न हो जाए।

कबीर परमेश्वर जी ने अपने उपदेश का क्रम चालू रखते हुए कहा हे स्वामी जी! आप व अन्य ऋषियों तथा देवताओं को यथार्थ भक्ति विधि का ज्ञान नहीं है। जिस कारण से आप सर्व द्वारा बताए भक्ति मार्ग से साधक को कोई लाभ नहीं होता। उसका पाप नाश न होने से वह सुखी नहीं होता या तो आत्महत्या कर लेता है या नास्तिक हो जाता है। यह कारण है कि दिन-प्रतिदिन मानव समाज में बुराईयाँ बढ़ रही हैं। यह धारणा प्रत्येक व्यक्ति की है कि परमात्मा निर्धन को धनी बना देता है। दुःखी का सुखी कर देता है। असम्भव से असम्भव कार्य को सम्भव कर सकता है। जिस समय राजा व धनी व्यक्ति अपने सामने समस्याएं देखता है तो परमात्मा की शरण में जाता है। वह साधु संतों ऋषियों की खोज करके उनसे अपनी समस्याओं के समाधान कराना चाहता है। भले ही उन्हें भी उस साधना विधि से जो तत्वज्ञान हीन ऋषिजन समाधान के लिए बताते हैं कोई लाभ नहीं होता। अन्त में उनको भी यह उत्तर मिलता है कि यह कष्ट आपके प्रारब्ध कर्म हैं। आप को भोग कर समाप्त करना पड़ेगा। फिर वे व्यक्ति भक्ति त्याग कर दुराचार का आश्रय लेते हैं। अन्य अनुचित विधि से धनी बनने का प्रयत्न करते हैं जिससे एक बार तो धन आता दिखाई देता है परन्तु कुछ ही समय उपरान्त अन्य कारण से वह दुराचारपूर्वक इक्ट्ठा किया धन समाप्त हो जाता है। किसी का बच्चा रोगी हो जाता है लाखों रूपये खर्च होने के पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। किसी का व्यवसाय में अत्यधिक हानि हो जाती है। किसी के घर चोरी हो जाती है। वह अनुचित विधि से जोड़ा गया धन तो रहा नहीं। परन्तु उस धन को जोड़ने में किए गये पाप शेष रह गये। उनको भोगने के

लिए किसान का बैल बनेगा। उसका कर्ज उतारने के लिए जिस से वह धन हेरा-फेरी करके प्राप्त किया था। किसी का गधा बनकर उसका वह धन लौटाएगा। कोई दामाद बनकर वह धन अगले जन्म में वापिस लेगा। परन्तु पाप कर्मों का दण्ड नर्क में तथा पशु-पक्षियों की योनियों में ही भोगना पड़ता है।

परमेश्वर कबीर जी ने बताया हे स्वामी जी! जो सत्य साधना मैं प्रदान करूंगा उससे वेदों में प्रमाणित सर्व लाभ प्राप्त होंगे। सर्व पापों का नाश हो जाएगा। प्रारब्ध के पापकर्म को नहीं भोगना पड़ेगा। असाध्य रोग भी नष्ट हो जाएगा तथा साधक लम्बी आयु जीएगा।

कबीर, जब ही सत्यनाम हृदय धरो, भयो पाप को नाश।
मानो चिन्गारी अग्नि की, पड़ी पुराणे घास।। (1)
कबीर, सतगुरु शरण में आने से, आई टले बलाय।
जै मस्तिक में सूली हो वह कांटे में टल जाय।। (2)

वाणी 1 का भावार्थ :- यथार्थ साधना पूर्ण सन्त से प्राप्त करके सतनाम का स्मरण हृदय से करने से सर्व पाप (संचित तथा प्रारब्ध के पाप) ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे पुराने सूखे घास को अग्नि की एक चिंगारी जलाकर भस्म कर देती है।

वाणी 2 का भावार्थ :- सतगुरु अर्थात् तत्वदर्शी सन्त से उपदेश लेकर मर्यादा में रहकर भक्ति करने से प्रारब्ध कर्म के पाप अनुसार यदि भाग्य में सजाए मौत हो तो वह पाप कर्म हल्का होकर सामने आएगा। उस साधक को कांटा लगकर मौत की सजा टल जाएगी।

उपरोक्त तथ्यों से परिचित होकर स्वामी रामानन्द जी को आश्चर्य हुआ तथा प्रश्न किया।

प्रश्न :- हे कबीर जी! हे तत्व दृष्टा! हे परमेश्वर! श्री ब्रह्मा जी वेदों के मर्मज्ञ माने जाते हैं। श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी व श्री मनु जी तथा अन्य ऋषियों को ज्ञान श्री ब्रह्मा जी से ही प्राप्त हुआ। वही ज्ञान आज हमें ग्रहण है। श्री ब्रह्मा जी भी इस तत्वज्ञान से वंचित किस कारण से रहे?

उत्तर :- बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने कहा। हे स्वामी जी! पाँचों वेदों को मैंने (सतपुरूष रूप में) काल ब्रह्म की आत्मा में (कम्पयूटर की तरह फीड किया था) प्रवेश किया था। काल ब्रह्म ने चार वेद समुन्द्र में छुपाए थे। जो पाँचवा वेद गुप्त रखा था। समुन्द्र मंथन में चारों वेद निकले थे जो ब्रह्मा ने पढ़े। परन्तु वेदों के प्राप्त होने से पूर्व ही काल ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर सचेत करके आकाशवाणी द्वारा वेद ज्ञान विरूद्ध तप करने को कहा। ब्रह्मा ने एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टी करने की आकाशवाणी हुई थी। इसके पश्चात् श्री ब्रह्मा जी ने वेदों को पढ़ा उसमें ओम् नाम जाप करने को कहा है। श्री ब्रह्मा जी ने कुछ वेद ज्ञान तथा कुछ आकाशवाणीयों द्वारा ब्रह्म काल को वेद विरूद्ध ज्ञान ग्रहण करके आगे सर्व ऋषियों तथा देवताओं को सुनाया। जब वे साधना करते थे फिर भी देवताओं तथा ऋषियों पर आपतियाँ आती रहती थी । उनके निवारण के लिए आकाशवाणी काल ब्रह्म करता था। उस साधना से लाभ न होने पर कहा जाता है कि यह प्रारब्ध कर्म का पाप है, भोगना ही पड़ेगा इसका कोई उपाय नहीं है। इस प्रकार यह लोक वेद (प्रचलित ज्ञान) बन गया तथा इसी की व्याख्या आगे से आगे होती रही। तत्वज्ञान के अभाव से यथार्थ पाप नाशक भक्ति विधि किसी को ज्ञान नहीं थी। काल ब्रह्म यही चाहता है कि सर्व प्राणी शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (लोकवेद के आधार से पूजा कर्म) करें। जिससे ये सर्व प्राणी

काल जाल में ही रह जाऐं तथा जिस समय पूर्ण परमात्मा का भेजा हुआ तत्वदर्शी सन्त आए तो कोई भी ऋषि,महर्षि व देव तथा ब्राह्मण उसकी बातों पर विश्वास न करें। आज सर्व प्रमाण वेदों में विद्यमान हैं। सर्व व्यक्ति (विश्व के) यही कहते हैं कि वेद ज्ञान श्रेष्ठ है। परन्तु सन्त जन व महर्षि जन वेद ज्ञान के विपरीत ज्ञान का जनता में प्रचार कर रहे हैं। हे स्वामी जी! वेदों को छोड़ों पुराणों के ज्ञान के विपरीत ज्ञान आप जी तथा अन्य सर्व ऋषिजन व सन्त जन प्रचार कर रहे हैं। पुराणों में लिखा है कि श्री ब्रह्मा जी रजगुण तथा श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण नाशवान हैं। इनकी माता जी का नाम प्रकृति (दुर्गा) है तथा पिता जी का नाम काल ब्रह्म है। ये स्वयं भी कहते हैं कि हम नाशवान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मृत्यु) होता है। हे स्वामी जी! गीता में काल ब्रह्म कहता है कि अर्जुन सर्व प्राणियों की बुद्धि मेरे आधीन है। मैं इनको ऐसा ज्ञान प्रदान करता हूँ जिससे ये मेरे ही को प्राप्त होते हैं अर्थात् काल जाल में ही रह जाते हैं। पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं करते।

सर्व प्रचारक कहते हैं कि श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा श्री शिव जी अजर-अमर हैं अविनाशी हैं। इनके माता-पिता नहीं हैं, ये अजन्मा हैं। क्या यह ज्ञान पुराणों वाला है? स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे कबीर जी! हम सर्व की बुद्धि पर पत्थर पड़े थे आपने ही अज्ञान रूपी पत्थरों को हटाया है। बड़ें पुण्यकर्मों से आपका दर्शन सुलभ हुआ है।

“पवित्र श्रीमद्भगवत् गीता जी का ज्ञान किसने कहा?”

(कृप्या पढें इसी पुस्तक के पृष्ठ 3 से 10 तक)

❑❑❑

।।श्री मद्भगवत गीता अध्याय - 7 ।।

अध्याय 7 का श्लोक 1(भगवान उवाच)

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु। १।

मयि, आसक्तमनाः, पार्थ, योगम्, युजन्, मदाश्रयः,
असंशयम्, समग्रम्, माम्, यथा, ज्ञास्यसि, तत्, श्रृणु ।।1 ।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! (मयि,आसक्तमनाः) मुझमें आसक्तचित भावसे (मदाश्रयः) मतके परायण होकर (योगम्) योगमें (युजन्) लगा हुआ तू (यथा) जिस प्रकारसे (समग्रम्) सम्पूर्ण रूपसे (माम्) मुझको (असंशयम्) संश्यरहित (ज्ञास्यसि) जानेगा (तत्) उसको (श्रृणु) सुन। (1)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! मुझमें आसक्तचित भाव से मेरे मत के परायण होकर योगमें लगा हुआ तू जिस प्रकारसे सम्पूर्ण रूपसे मुझको संश्यरहित जानेगा उसको सुन। (1)

अध्याय 7 का श्लोक 2

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते। २।

ज्ञानम्, ते, अहम्, सविज्ञानम्, इदम्, वक्ष्यामि, अशेषतः,
यत्, ज्ञात्वा, न, इह, भूयः, अन्यत्, ज्ञातव्यम्, अवशिष्यते ।।2 ।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (ते) तेरे लिये (इदम्) इस (सविज्ञानम्) विज्ञानसहित (ज्ञानम्) तत्वज्ञानको (अशेषतः) सम्पूर्णतया (वक्ष्यामि) कहूँगा (यत्) जिसको (ज्ञात्वा) जानकर (इह) संसारमें (भूयः) फिर (अन्यत्) और कुछ भी (ज्ञातव्यम्) जानने योग्य (न,अवशिष्यते) शेष नहीं रह जाता। (2)

केवल हिन्दी अनुवाद : मैं तेरे लिये इस विज्ञानसहित तत्वज्ञानको सम्पूर्णतया कहूँगा जिसको जानकर संसार में फिर और कुछ भी जानने योग्य शेष नहीं रह जाता। (2)

अध्याय 7 का श्लोक 3

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः। ३।

मनुष्याणाम्, सहस्त्रेषु, कश्चित्, यतति, सिद्धये,
यतताम्, अपि, सिद्धानाम्, कश्चित्, माम्, वेत्ति, तत्त्वतः ।।3 ।।

अनुवाद : (सहस्त्रेषु) हजारों (मनुष्याणाम्) मनुष्योंमें (कश्चित्) कोई एक (सिद्धये) प्रभु प्राप्तिके लिये (यतति) यत्न करता है (यतताम्) यत्न करनेवाले (सिद्धानाम्) योगियोंमें (अपि) भी (कश्चित्) कोई एक (माम्) मुझको (तत्त्वतः) तत्वसे अर्थात् यथार्थरूपसे (वेत्ति) जानता है। (3)

केवल हिन्दी अनुवाद :हजारों मनुष्योंमें कोई एक प्रभु प्राप्तिके लिये यत्न करता है यत्न करनेवाले योगियोंमें भी कोई एक मुझको तत्वसे अर्थात् यथार्थरूपसे जानता है।

भावार्थ :- इस श्लोक 3 का भावार्थ यह है कि वेद ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि हजार व्यक्तियों में कोई एक परमात्मा की साधना करता है। उन साधना करने वालों में कोई एक ही मुझे

तत्व से जानता है। काल भगवान कह रहा है कि परमात्मा को भजने वाले बहुत कम है। जो साधना कर रहे हैं वे मनमाना आचरण(पूजा) अर्थात् शास्त्रविधि रहित पूजा करते है जो व्यर्थ है। (गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में) जो मुझे भजते हैं उन में भी कोई एक ही वेदों अनुसार अर्थात् वेदों को अपनी बुद्धि से समझ कर मेरी साधना करता है। वह अन्य देवी-देवता आदि की पूजा नहीं करता केवल एक मुझ ब्रह्म की पूजा करता है वह ज्ञानी आत्मा है। इस श्लोक 3 का सम्बन्ध अध्याय 7 श्लोक 17 से 19 तक से है।

अध्याय 7 का श्लोक 4,5

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।४।

भूमिः, आपः, अनलः, वायुः, खम्, मनः, बुद्धिः, एव, च,
अहंकारः, इति, इयम्, मे, भिन्ना, प्रकृतिः, अष्टधा ।।4।।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।५।

अपरा, इयम्, इतः, तु, अन्याम्, प्रकृतिम्, विद्धि, मे, पराम्,
जीवभूताम्, महाबाहो, यया, इदम्, धार्यते, जगत् ।।5।।

अनुवाद : (भूमिः) पृथ्वी (आपः) जल (अनलः) अग्नि (वायुः) वायु (खम्) आकाश आदि से स्थूल शरीर बनता है (एव) इसी प्रकार (मनः) मन (बुद्धिः) बुद्धि (च) और (अहंकारः) अहंकार आदि से सूक्ष्म शरीर बनता है (इति) इस प्रकार (इयम्) यह (अष्टधा) आठ प्रकारसे अर्थात् अष्टंगी ही (भिन्ना) विभाजित (मे) मेरी (प्रकृतिः) प्रकृति अर्थात् दुर्गा है (इयम्) ये (तु) तो (अपरा) अपरा अर्थात् इसके तुल्य दूसरी देवी नहीं है तथा उपरोक्त दोनों शरीरों में इसी का परम योगदान है और (महाबाहो) हे महाबाहो! (इतः) इससे (अन्याम्) दूसरीको (यया) जिससे (इदम्) यह सम्पूर्ण (जगत्) जगत् (धार्यते) संभाला जाता है। (मे) मेरी (जीवभूताम्) जीवरूपा चेतन (पराम्) दूसरी अर्थात् साकार चेतन (प्रकृतिम्) प्रकृति अर्थात् दुर्गा (विद्धि) जान। क्योंकि दुर्गा ही अन्य रूप बनाकर सागर में छूपी तथा लक्ष्मी—सावित्री व उमा रूप बनाकर तीनों देवों से विवाह करके जीव उत्पत्ति की। (4-5)

केवल हिन्दी अनुवाद : पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश आदि से स्थूल शरीर बनता है इसी प्रकार मन बुद्धि और अहंकार आदि से सूक्ष्म शरीर बनता है इस प्रकार यह आठ प्रकारसे अर्थात् अष्टंगी ही विभाजित मेरी प्रकृति अर्थात् दुर्गा है ये तो अपरा अर्थात् इसके तुल्य दूसरी देवी नहीं है तथा उपरोक्त दोनों शरीरों में इसी का परम योगदान है और हे महाबाहो! इससे दूसरीको जिससे यह सम्पूर्ण जगत् संभाला जाता है। मेरी जीवरूपा चेतन दूसरी साकार चेतन प्रकृति अर्थात् दुर्गा जान। क्योंकि दुर्गा ही अन्य रूप बनाकर सागर में छूपी तथा लक्ष्मी-सावित्री व उमा रूप बनाकर तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) से विवाह करके जीवों की उत्पत्ति की। (4-5)

अध्याय 7 का श्लोक 6

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।६।

एतद्योनीनि, भूतानि, सर्वाणि, इति, उपधारय,

अहम्, कृत्स्नस्य, जगतः, प्रभवः, प्रलयः, तथा।।6।।

अनुवाद : (इति) इस प्रकार (उपधारय) भूल भूलईयां करके (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणी (एतद्योनीनि) इन दोनों प्रकृतियोंसे ही उत्पन्न होते हैं और (अहम्) मैं (कृत्स्नस्य) सम्पूर्ण (जगतः) जगत्का (प्रभवः) उत्पन्न (तथा) तथा (प्रलयः) नाश हूँ। (6)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस प्रकार भूल भूलईयां करके सम्पूर्ण प्राणी इन दोनों प्रकृतियोंसे ही उत्पन्न होते हैं और मैं सम्पूर्ण जगत्का उत्पन्न तथा नाश हूँ। (6)

अध्याय 7 का श्लोक 7

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।७।

मत्तः, परतरम्, न, अन्यत्, किचित्, अस्ति, धनजय,

मयि, सर्वम्, इदम्, प्रोतम्, सूत्रे, मणिगणाः, इव।।7।।

अनुवाद : (धनजय) हे धनजय! उपरोक्त (मत्तः) अर्थात् सिद्धान्त से (अन्यत्) दूसरा (किचित्) कोई भी (परतरम्) परम कारण (न) नहीं (अस्ति) है। (इदम्) यह (सर्वम्) सम्पूर्ण जगत् (सूत्रे) सूत्रमें (मणिगणाः) मणियोंके (इव) सदृश (मयी) मुझ में (प्रोतम्) गुँथा हुआ है। (7)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे धनजय! उपरोक्त अर्थात् सिद्धान्त से दूसरा कोई भी परम कारण नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत् सूत्रमें मणियोंके सदृश मुझ में गुँथा हुआ है। (7)

अध्याय 7 का श्लोक 8

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।

प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु।८।

रसः, अहम्, अप्सु, कौन्तेय, प्रभा, अस्मि, शशिसूर्ययोः,

प्रणवः, सर्ववेदेषु, शब्दः, खे, पौरुषम्, नृषु।।8।।

अनुवाद : (कौन्तेय) हे अर्जुन! (अहम्) मैं (अप्सु) जलमें (रसः) रस हूँ (शशिसूर्ययोः) चन्द्रमा और सूर्यमें (प्रभा) प्रकाश (अस्मि) हूँ (सर्ववेदेषु) सम्पूर्ण वेदोंमें (प्रणवः) ओंकार हूँ (खे) आकाशमें (शब्दः) शब्द और (नृषु) मनुष्योंमें (पौरुषम्) पुरुषत्व हूँ। (8)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! मैं जलमें रस हूँ चन्द्रमा और सूर्यमें प्रकाश हूँ सम्पूर्ण वेदोंमें ओंकार हूँ आकाशमें शब्द और मनुष्योंमें पुरुषत्व हूँ। (8)

अध्याय 7 का श्लोक 9

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।

जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु। ९ ।

पुण्यः, गन्धः, पृथिव्याम्, च, तेजः, च, अस्मि, विभावसौ,

जीवनम्, सर्वभूतेषु, तपः, च, अस्मि, तपस्विषु।।9।।

अनुवाद : (पृथिव्याम्) पृथ्वीमें (पुण्यः) पवित्र (गन्धः) गन्ध (च) और (विभावसौ) अग्निमें (तेजः) तेज (अस्मि) हूँ (च) तथा (सर्वभूतेषु) सम्पूर्ण प्राणीयों में उनका (जीवनम्) जीवन हूँ (च) और (तपस्विषु)

तपस्वियोंमें (तपः) तप (अस्मि) हूँ। (9)

केवल हिन्दी अनुवाद : पृथ्वीमें पवित्र गन्ध और अग्निमें तेज हूँ तथा सम्पूर्ण प्राणीयों में उनका जीवन हूँ और तपस्वियोंमें तप हूँ। (9)

अध्याय 7 का श्लोक 10

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।१०।

बीजम्, माम्, सर्वभूतानाम्, विद्धि पार्थ, सनातनम्,
बुद्धिः, बुद्धिमताम्, अस्मि, तेजः, तेजस्विनाम्, अहम्।।10।।

अनुवाद : (पार्थ) हे अर्जुन! तू (सर्वभूतानाम्) सम्पूर्ण प्राणियोंका (सनातनम्) आदि (बीजम्) कारण (माम्) मुझको ही (विद्धि) जान (अहम्) मैं (बुद्धिमताम्) बुद्धिमानोंकी (बुद्धिः) बुद्धि और (तेजस्विनाम्) तेजस्वियोंका (तेजः) तेज (अस्मि) हूँ। (10)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! तू सम्पूर्ण प्राणियोंका आदि कारण मुझको ही जान मैं बुद्धिमानोंकी बुद्धि और तेजस्वियोंका तेज हूँ। (10)

अध्याय 7 का श्लोक 11

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।११।

बलम्, बलवताम्, च, अहम्, कामरागविवर्जितम्,
धर्माविरुद्धः, भूतेषु, कामः अस्मि, भरतर्षभ।।11।।

अनुवाद : (भरतर्षभ) हे भरतश्रेष्ठ! (अहम्) मैं (बलवताम्) बलवानोंका (कामरागविवर्जितम्) आसक्ति और कामनाओंसे रहित (बलम्) सामर्थ्य हूँ (च) और (भूतेषु) मेरे अन्तर्गत सर्व प्राणियों में (धर्माविरुद्धः) धर्म के अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल (कामः) कर्म (अस्मि) हूँ। (11)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे भरतश्रेष्ठ! मैं बलवानोंका आसक्ति और कामनाओंसे रहित सामर्थ्य हूँ और मेरे अन्तर्गत सर्व प्राणियों में धर्म के अनुकूल अर्थात् शास्त्रके अनुकूल कर्म हूँ। (11)

अध्याय 7 का श्लोक 12

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि।१२।

ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्त्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मत्तः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं। (12)

केवल हिन्दी अनुवाद : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही

होने वाले हैं ऐसा जान (तु) परंतु वास्तवमें उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं। (12)

अध्याय 7 का श्लोक 13

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्। १३।

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,
मोहितम्, न अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम् ।।13।।

अनुवाद : (एभिः) इन (गुणमयैः) गुणोंके कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से (त्रिभिः) तीनों प्रकारके (भावैः) भावोंसे (इदम्) यह (सर्वम्) सारा (जगत्) संसार – प्राणिसमुदाय (माम्) मुझ काल के ही जाल में (मोहितम्) मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है (एभ्यः) इसलिए (परम् अव्ययम्) पूर्ण अविनाशीको (न) नहीं (अभिजानाति) जानता। (13)

केवल हिन्दी अनुवाद : इन गुणोंके कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से तीनों प्रकारके भावोंसे यह सारा संसार - प्राणिसमुदाय मुझ काल के ही जाल में मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है इसलिए पूर्ण अविनाशी को नहीं जानता। (13)

{परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी की महिमा सन्त गरीबदास जी ने कही है तथा काल का जाल समझाया है :- गरीब, ब्रह्मा विष्णु महेश, माया और धर्मराया(काल) कहिए। इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया वाणी हमरी लहिए।।}

अध्याय 7 का श्लोक 14

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते। १४।

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया, माम्,
एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्,तरन्ति,ते ।।14।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (एषा) यह (दैवी) अलौकिक अर्थात् अति अद्भूत (गुणमयी) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी त्रिगुणमयी (मम) मेरी (माया) माया (दुरत्यया) बड़ी दुस्तर है परंतु (ये) जो पुरुष केवल (माम्) मुझको (एव) ही निरंन्तर (प्रपद्यन्ते) भजते हैं (ते) वे (एताम्) इस (मायाम्) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण रूपी मायाका (तरन्ति) उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी से ऊपर उठ कर काल ब्रह्म की साधना में लग जाते हैं। (14)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भूत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है परंतु जो पुरुष केवल मुझको ही निरंन्तर भजते हैं वे इस मायाका उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी से ऊपर उठ जाते हैं। (14)

अध्याय 7 का श्लोक 15

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः। १५।

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,

मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ।।15।।

अनुवाद : (मायया) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाला क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं अन्य साधना नहीं करना चाहते अर्थात् इसी त्रिगुणमई माया के द्वारा (अपहृतज्ञानाः) जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं ऐसे (आसुरम् भावम्) आसुर स्वभावको (आश्रिताः) धारण किये हुए (नराधमाः) मनुष्यों में नीच (दुष्कृतिनः) दूषित कर्म करनेवाले (मूढाः) मूर्ख (माम्) मुझको (न) नहीं (प्रपद्यन्ते) भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण–ब्रह्मा, सतगुण–विष्णु, तमगुण–शिव) की साधना ही करते रहते हैं। (15)

केवल हिन्दी अनुवाद : मायाके द्वारा अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाला क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं ऐसे आसुर स्वभावको धारण किये हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करनेवाले मूर्ख मुझको नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं। (15)

भावार्थ - गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 का भावार्थ है कि जो साधक स्वभाव वश तीनों गुणों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी तक की साधना से मिलने वाले लाभ पर ही आश्रित रहकर इन्हीं तीनों प्रभुओं की भक्ति से जिन का ज्ञान हरा जा चुका है वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, शास्त्र विधि विरुद्ध भक्ति रूपी दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ ब्रह्म को भी नहीं भजते गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 का भी इन्हीं से लगातार सम्बन्ध है।

अध्याय 7 का श्लोक 16

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ। १६।

चतुर्विधाः, भजन्ते, माम्, जनाः, सुकृतिनः, अर्जुन,

आर्तः, जिज्ञासुः, अर्थार्थी, ज्ञानी,च,भरतर्षभ ।।16।।

अनुवाद : (भरतर्षभ अर्जुन) हे भरत वंशियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन! (सुकृतिनः) उत्तम कर्म करनेवाले (अर्थार्थी) वेद मन्त्रों द्वारा धन लाभ के लिए अनुष्ठान करने वाला अर्थार्थी (आर्तः) वेद मन्त्रों द्वारा संकट निवार्ण के लिए अनुष्ठान करने वाले आर्त (जिज्ञासुः) परमात्मा के विषय में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा से ज्ञान ग्रहण करके वेदों के आधार से ज्ञानवान बनकर वक्ता बन जाता है वह जिज्ञासु (च) और (ज्ञानी) जिसे यह ज्ञान हो गया कि मनुष्य जन्म केवल परमात्मा प्राप्ति के लिए ही है। परमात्मा प्राप्ति भी केवल एक सर्वशक्तिमान परमात्मा की साधना अनन्य मन से करने से होती है वह ज्ञानी ऐसे (चतुर्विधाः) चार प्रकार के (जनाः) भक्तजन (माम्) मुझको (भजन्ते) भजते हैं। (16)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे भरत वंशियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन! उत्तम कर्म करनेवाले वेद मन्त्रों द्वारा धन लाभ के लिए अनुष्ठान करने वाला अर्थार्थी वेद मन्त्रों द्वारा संकट निवार्ण के लिए अनुष्ठान

करने वाले आर्त परमात्मा के विषय में जानकारी प्राप्त करने की इच्छा से ज्ञान ग्रहण करके वेदों के आधार से ज्ञानवान बनकर वक्ता बन जाता है वह जिज्ञासु और जिसे यह ज्ञान हो गया कि मनुष्य जन्म केवल परमात्मा प्राप्ति के लिए ही है। परमात्मा प्राप्ति भी केवल एक सर्वशक्तिमान परमात्मा की साधना अनन्य मन से करने से होती है वह ज्ञानी ऐसे चार प्रकार के भक्तजन मुझको भजते हैं। (16)

अध्याय 7 का श्लोक 17

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः। १७।

तेषाम्, ज्ञानी, नित्ययुक्तः, एकभक्तिः, विशिष्यते,
प्रियः, हि, ज्ञानिनः, अत्यर्थम्, अहम्, सः, च, मम, प्रियः।।17।।

अनुवाद : (तेषाम्) उनमें (नित्ययुक्तः) नित्य स्थित (एकभक्तिः) एक परमात्मा की भक्तिवाला (ज्ञानी) विद्वान (विशिष्यते) अति उत्तम है (हि) क्योंकि (ज्ञानिनः) ज्ञानीको (अहम्) मैं (अत्यर्थम्) अत्यन्त (प्रियः) प्रिय हूँ (च) और (सः) वह ज्ञानी (मम्) मुझे अत्यन्त (प्रियः) प्रिय है। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : उनमें नित्य स्थित एक परमात्मा की भक्तिवाला विद्वान अति उत्तम है क्योंकि ज्ञानीको मैं अत्यन्त प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मुझे अत्यन्त प्रिय है। (17)

अध्याय 7 का श्लोक 18

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्। १८।

उदाराः, सर्वे, एव, एते, ज्ञानी, तु, आत्मा, एव, मे, मतम्,
आस्थितः, सः, हि, युक्तात्मा, माम्, एव, अनुत्तमाम्, गतिम्।।18।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (मे) मेरे (मतम्) विचार में (एते) ये (सर्वे,एव) सभी ही (ज्ञानी) ज्ञानी (आत्मा) आत्मा (उदाराः) उदार हैं (तु) परंतु (सः) वह (माम्) मुझमें (एव) ही (युक्तात्मा) लीन आत्मा (अनुत्तमाम्) मेरी अति घटिया (गतिम्) मुक्तिमें (एव) ही (आस्थितः) आश्रित हैं। (18)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि मेरे विचार में ये सभी ही ज्ञानी आत्मा उदार हैं परंतु वह मुझमें ही लीन आत्मा मेरी अति घटिया मुक्तिमें ही आश्रित हैं। (18)

गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 का भावार्थ है कि मेरी अर्थात् ब्रह्म की भक्ति भी चार प्रकार के भक्त करते हैं 1. आर्त : जो संकट निवार्ण के लिए वेद मंत्रों से ही अनुष्ठान करते हैं 2. अर्थार्थी : जो धन लाभ के लिए वेद मंत्रों से ही अनुष्ठान आदि करता है 3. जिज्ञासु : जो ज्ञान प्राप्ति की इच्छा से वेदों का पठन-पाठन करके ज्ञान संग्रह कर लेता है फिर वक्ता बनकर जीवन व्यर्थ कर जाता है 4. ज्ञानी : जिस साधक ने वेदों को पढ़ा तथा जाना कि मनुष्य जीवन केवल प्रभु प्राप्ति के लिए ही मिला है तथा एक पूर्ण परमात्मा की भक्ति से ही पूर्ण होगा। तत्वदर्शी संत जो गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णित है न मिलने से ब्रह्म को ही पूर्ण परमात्मा मान कर काल (ब्रह्म) साधना करते रहे जो अति अनुत्तम कही है अर्थात् ब्रह्म साधना भी अश्रेष्ठ है।

प्रश्न :- आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 के अनुवाद में अर्थ का अनर्थ किया है ''अनुत्तमाम्''

का अर्थ अश्रेष्ठ किया है। जब कि समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है जिस से उत्तम कोई और न हो उस के विषय में समास में अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम होता है। अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने सही अर्थ किया है अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम किया है।

उत्तर :- मैं आप की इस बात को सत्य मानकर आप से प्रार्थना करता हूँ कि ''गीता ज्ञान दाता अपनी साधना के विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 में बता रहे हैं। यदि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना व गति को अनुत्तम कह रहे हैं। जिस का भावार्थ आप के समास के अनुसार यह हुआ कि गीता ज्ञान दाता की गति से उत्तम अन्य कोई गति नहीं अर्थात् मोक्ष लाभ नहीं।

गीता ज्ञान दाता स्वयं गीता अध्याय 18 श्लोक 62 व अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहे हैं। उसी की कृपा से परम शान्ति व शाश्वत स्थान सदा रहने वाला मोक्ष स्थल अर्थात् सत्यलोक प्राप्त होगा। अपने विषय में भी कहा है कि मैं भी उसी की शरण हूँ। उसी पूर्ण परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए तथा कहा है कि उस परमेश्वर के परमपद (सत्यलोक) को प्राप्त करना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर इस संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म मृत्यु सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा के विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 46,61-62,64,66 अध्याय 15 श्लोक 4,16-17, अध्याय 13 श्लोक 12 से 17, 22 से 24, 27-28,30-31,34 अध्याय 5 श्लोक 6-10,13 से 21 तथा 24-25-26 अध्याय 6 श्लोक 7,19,20,25,26-27 अध्याय 4 श्लोक 31-32, अध्याय 8 श्लोक 3,8 से 10,17 से 22, अध्याय 7 श्लोक 19 से 29, अध्याय 14 श्लोक 19 आदि-2 श्लोकों में कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ अर्थात् उत्तम परमात्मा तो अन्य है जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तम पुरूषः तु अन्यः जिसका अर्थ है उत्तम परमात्मा तो अन्य ही है। इसलिए उस उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ परमात्मा की गति अर्थात् उस से मिलने वाला मोक्ष भी अति उत्तम हुआ। इस से यह भी सिद्ध हुआ कि उस परमेश्वर अर्थात् पूर्ण परमात्मा की गति गीता ज्ञान दाता वाली गति से उत्तम हुई। इसलिए गीता ज्ञान दाता वाली गति सर्व श्रेष्ठ नहीं है। अर्थात् जिस से श्रेष्ठ कोई न हो। यह विशेषण भी गलत सिद्ध हुआ। क्योंकि जब गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ कोई और परमेश्वर है तो उस की गति भी गीता ज्ञान दाता से श्रेष्ठ है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम का अर्थ अश्रेष्ठ ही न्याय संगत है अर्थात् उचित है। आप तथा अन्य गीता अनुवाद कर्त्ताओं ने अर्थ का अनर्थ किया है। जो अनुत्तम का अर्थ अति उत्तम कहा तथा किया है।

अध्याय 7 का श्लोक 19

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।१९।

बहूनाम्, जन्मनाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते,
वासुदेवः, सर्वम्, इति, सः, महात्मा,सुदुर्लभः।।19।।

अनुवाद : (बहूनाम्) बहुत (जन्मनाम्) जन्मोंके (अन्ते) अन्तके जन्ममें (ज्ञानवान्) तत्वज्ञानको प्राप्त

(माम्) मुझको (प्रपद्यते) भजता है (वासुदेवः) वासुदेव अर्थात् सर्वव्यापक पूर्ण ब्रह्म ही (सर्वम्) सब कुछ है (इति) इस प्रकार जो यह जानता है (सः) वह (महात्मा) महात्मा (सुदुर्लभः) अत्यन्त दुर्लभ है। (19) श्री मदभागवत् के दशवें स्कंद के 51 वें अध्याय में स्वयं श्री कृष्ण ने कहा है कि श्री वासुदेव का पुत्र होने के कारण मुझे वासुदेव कहते हैं, न की सर्व का मालिक या सर्व व्यापक होने के कारण अर्थात् वासुदेव पूर्ण परमात्मा है।

केवल हिन्दी अनुवाद : बहुत जन्मोंके अन्तके जन्ममें तत्वज्ञानको प्राप्त मुझको भजता है वासुदेव अर्थात् सर्वव्यापक पूर्ण ब्रह्म ही सब कुछ है इस प्रकार जो यह जानता है वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है। (19) श्री मदभागवत् के दशवें स्कंद के 51 वें अध्याय में स्वयं श्री कृष्ण ने कहा है कि श्री वासुदेव का पुत्र होने के कारण मुझे वासुदेव कहते हैं, न की सर्व का मालिक या सर्व व्यापक होने के कारण, अर्थात् वासुदेव पूर्ण परमात्मा है।

भावार्थ - गीता अध्याय 7 श्लोक 19 का भावार्थ है कि मुझ ब्रह्म की साधना भी बहुत जन्मों के बाद कोई-कोई करता है, नहीं तो अन्य देवताओं की पूजा ही करते रहते हैं तथा यह बताने वाला संत बहुत दुर्लभ है कि पूर्ण ब्रह्म ही सब कुछ है, ब्रह्म व परब्रह्म से पूर्ण मोक्ष नहीं होता।

अध्याय 7 का श्लोक 20

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया। २०।

कामैः, तैः, तैः, हृतज्ञानाः, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवताः,
तम्, तम् नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियताः, स्वया।।20।।

अनुवाद : (तैः,तैः) उन–उन (कामैः) भोगोंकी कामनाद्वारा (हृतज्ञानाः) जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे लोग (स्वया) अपने (प्रकृत्या) स्वभावसे (नियताः) प्रेरित होकर (तम्–तम्) उस उस अज्ञान रूप अंधकार वाले (नियमम्) नियमके (आस्थाय) आश्रयसे (अन्यदेवताः) अन्य देवताओंको (प्रपद्यन्ते) भजते हैं अर्थात् पूजते हैं। (20)

केवल हिन्दी अनुवाद : उन-उन भोगोंकी कामनाद्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे लोग अपने स्वभावसे प्रेरित होकर उस उस अज्ञान रूप अंधकार वाले नियमके आश्रयसे अन्य देवताओंको भजते हैं अर्थात् पूजते हैं। (20)

अध्याय 7 का श्लोक 21

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्। २१।

यः, यः, याम्, याम्, तनुम्, भक्तः, श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति,
तस्य, तस्य अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम्।।21।।

अनुवाद : (यः, यः) जो–जो (भक्तः) भक्त (याम्, याम्) जिस–जिस (तनुम्)देवताके स्वरूपको (श्रद्धया) श्रद्धासे (अर्चितुम्) पूजना (इच्छति) चाहता है, (तस्य) उस (तस्य) उस भक्तकी (श्रद्धाम्) श्रद्धाको (अहम्) मैं (ताम्, एव) उसी देवता के प्रति (अचलाम्) स्थिर (विदधामि) करता हूँ। (21)

केवल हिन्दी अनुवाद : जो-जो भक्त जिस-जिस देवताके स्वरूपको श्रद्धासे पूजना चाहता है,

उस उस भक्तकी श्रद्धाको मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (21)

अध्याय 7 का श्लोक 22

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान्। २२।

सः, तया, श्रद्धया, युक्तः, तस्य, आराधनम्, ईहते,
लभते, च, ततः, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्।।22।।

अनुवाद : (सः) वह भक्त (तया) उस (श्रद्धया) श्रद्धा से (युक्तः) युक्त होकर (तस्य) उस देवताका (आराधनम्) पूजन (ईहते) करता है (च) और (हि) क्योंकि (ततः) उस देवतासे (मया) मेरे द्वारा (एव) ही (विहितान्) विधान किये हुए (तान्) उन (कामान्) इच्छित भोगोंको (लभते) प्राप्त करता है। (22)

केवल हिन्दी अनुवाद : वह भक्त उस श्रद्धा से युक्त होकर उस देवताका पूजन करता है और क्योंकि उस देवतासे मेरे द्वारा ही विधान किये हुए उन इच्छित भोगोंको प्राप्त करता है। (22)

अध्याय 7 का श्लोक 23

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि। २३।

अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
देवान्, देवयजः, यान्ति, मद्भक्ताः, यान्ति, माम्, अपि।।23।।

अनुवाद : (तु) परंतु (तेषाम्) उन (अल्पमेधसाम्) अल्प बुद्धिवालोंका (तत्) वह (फलम्) फल (अन्तवत्) नाशवान् (भवति) होता है (देवयजः) देवताओंको पूजनेवाले (देवान्) देवताओंको (यान्ति) प्राप्त होते है। और (मद्भक्ताः) मतावलम्बी (अपि) भी (माम्) मुझको (यान्ति) प्राप्त होते हैं। (23)

केवल हिन्दी अनुवाद : परंतु उन अल्प बुद्धिवालोंका वह फल नाशवान् होता है देवताओंको पूजनेवाले देवताओंको प्राप्त होते है। और मतावलम्बी अर्थात् मेरे द्वारा बताए भक्ति मार्ग से भी मुझको प्राप्त होते हैं। (23)

भावार्थ :- गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 तक का भावार्थ है कि जो गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुण(रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी, तम् गुण श्री शिव जी) रूपी माया द्वारा जिन का ज्ञान हरा जा चुका है अर्थात् जो तीनों देवताओं की साधना करते हैं वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ ब्रह्म की पूजा नहीं करते। इसी के सम्बन्ध में गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में कहा है कि जिनका ज्ञान उपरोक्त तीनों देवताओं द्वारा हरा जा चुका है वे अपने स्वभाव वश उन्हीं देवताओं की पूजा मनोंकामना पूर्ण करने के उद्देश्य से करते हैं अर्थात् गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि मेरे से अन्य देवताओं की पूजा करते है। जो भक्त जिस देवता की पूजा करता है उसकी श्रद्धा मैं ही उस देवता के प्रतिदृढ़ करता हूँ। उस देवताओं के पुजारी को भी मेरे द्वारा उस देवता को दी गई शक्ति से ही प्राप्त होता है। परन्तु उन मंद बुद्धि वालों अर्थात् मूर्खों का वह फल नाश्वान है। देवताओं के पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं। भावार्थ है कि जो ब्रह्मा विष्णु तथा शिव की पूजा या अन्य किसी देव की पूजा करते हैं उन देवताओं की पूजा का फल नाश्वान है अर्थात् वह पूजा व्यर्थ

है।

अध्याय 7 का श्लोक 24

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्।२४।

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम) मेरे (अनुत्तमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) छिपे हुए अर्थात् परोक्ष (माम्) मुझ कालको (व्यक्तिम्) मनुष्य की तरह आकार में कृष्ण अवतार (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (24)

केवल हिन्दी अनुवाद : बुद्धिहीन लोग मेरे अश्रेष्ठ अटल परम भावको न जानते हुए छिपे हुए अर्थात् परोक्ष मुझ कालको मनुष्य की तरह आकार में कृष्ण अवतार प्राप्त हुआ मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (24)

अध्याय 7 का श्लोक 25

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्।२५।

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।।25।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये(माम्) मुझ (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस श्लोक में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता। (25)

केवल हिन्दी अनुवाद : मैं योगमायासे छिपा हुआ सबके प्रत्यक्ष नहीं होता अर्थात् अदृश्य रहता हूँ इसलिये मुझ जन्म न लेने वाले अविनाशी अटल भावको यह अज्ञानी जनसमुदाय संसार नहीं जानता अर्थात् मुझको अवतार रूप में आया समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस श्लोक में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता। (25)

विशेष :- गीता अध्याय 7 श्लोक संख्या 24-25 में गीता ज्ञान दाता प्रभु अपने विषय में कह रहा है कि मैं अव्यक्त रहता हूँ अर्थात् मैं अपनी योग माया अर्थात् सिद्धी शक्ति से छिपा रहता हूँ। सर्व के समक्ष अपने वास्तविक काल रूप में नहीं आता। यह प्रथम अव्यक्त हुआ। फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 18 में कहा है कि ये सर्व प्राणी प्रलय के समय अव्यक्त में लीन हो जाते हैं। विचार करें यह दूसरा अव्यक्त हुआ। फिर गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में कहा है कि उस अव्यक्त प्रभु से अर्थात्

परब्रह्म से दूसरा अव्यक्त अर्थात् गुप्त परमात्मा तो सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता वह सनातन अव्यक्त अर्थात् वह आदि परोक्ष प्रभु तीसरा अव्यक्त परमात्मा है। गीता अध्याय 8 श्लोक 21 में कहा है कि उस गुप्त परमात्मा को अविनाशी अव्यक्त कहा जाता है। जिस परमात्मा के पास जाने के पश्चात् प्राणी फिर लौटकर संसार में नहीं आते वह स्थान वास्तव में पूर्ण मोक्ष स्थल है। वह स्थान मेरे अर्थात् गीता ज्ञान दाता के स्थान अर्थात् ब्रह्म लोक से श्रेष्ठ है। विचार करें यह तीसरा अव्यक्त अर्थात् गुप्त प्रभु सिद्ध हुआ जो वास्तव में अविनाशी है। यह प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 व 16-17 में है। जिसमें तीन परमात्माओं का वर्णन स्पष्ट है। एक क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म दूसरा अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म तथा तीसरा परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परम अक्षर ब्रह्म का प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 1 तथा 3 में है।

अध्याय 7 का श्लोक 26

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन। २६।

वेद्, अहम्, समतीतानि, वर्तमानानि, च, अर्जुन,
भविष्याणि, च, भूतानि, माम्, तु, वेद,न,कश्चन।।26।।

अनुवाद : (अर्जुन) हे अर्जुन! (समतीतानि) पूर्वमें व्यतीत हुए (च) और (वर्तमानानि) वर्तमानमें स्थित (च) तथा (भविष्याणि) आगे होनेवाले (भूतानि) सब भूतोंको (अहम्) मैं (वेद) जानता हूँ (तु) परंतु (माम्) मुझको (कश्चन) कोई (न) नहीं (वेद) जानता। (26)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! पूर्वमें व्यतीत हुए और वर्तमानमें स्थित तथा आगे होनेवाले सब प्राणियों को मैं जानता हूँ परंतु मुझको कोई नहीं जानता। (26)

अध्याय 7 का श्लोक 27

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप। २७।

इच्छाद्वेषसमुत्थेन, द्वन्द्वमोहेन, भारत,
सर्वभूतानि, सम्मोहम्, सर्गे, यान्ति, परन्तप।।27।।

अनुवाद : (भारत) हे भरतवंशी (परन्तप) अर्जुन! (सर्गे) संसारमें (इच्छाद्वेषसमुत्थेन) इच्छा और द्वेषसे उत्पन्न (द्वन्द्वमोहेन) सुख-दुःखादि द्वन्द्वरूप मोहसे (सर्वभूतानि) सम्पूर्ण प्राणी (सम्मोहम्) अत्यन्त अज्ञानताको (यान्ति) प्राप्त हो रहे हैं। (27)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे भरतवंशी अर्जुन! संसारमें इच्छा और द्वेषसे उत्पन्न सुख-दुःखादि द्वन्द्वरूप मोहसे सम्पूर्ण प्राणी अत्यन्त अज्ञानताको प्राप्त हो रहे हैं। (27)

अध्याय 7 का श्लोक 28

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः। २८।

येषाम्, तु, अन्तगतम्, पापम्, जनानाम्, पुण्यकर्मणाम्,
ते, द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः, भजन्ते, माम्, दृढव्रताः।।28।।

अनुवाद : (तु) परंतु निष्कामभावसे (पुण्यकर्मणाम्) श्रेष्ठ कर्मोंका आचरण करनेवाले (येषाम्) जिन (जनानाम्) पुरुषोंका (पापम्) पाप (अन्तगतम्) नष्ट हो गया है (ते) वे (द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः) राग–द्वेषजनित द्वन्द्वरूप मोहसे मुक्त (दृढव्रताः) दृढ़निश्चयी भक्त (माम्) मुझको सब प्रकारसे (भजन्ते) भजते हैं। (28)

केवल हिन्दी अनुवाद : परंतु निष्कामभावसे श्रेष्ठ कर्मोंका आचरण करनेवाले जिन पुरुषोंका पाप नष्ट हो गया है वे राग-द्वेषजनित द्वन्द्वरूप मोहसे मुक्त दृढ़निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकारसे भजते हैं। (28)

अध्याय 7 का श्लोक 29

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम्। २९।

जरामरणमोक्षाय, माम्, आश्रित्य, यतन्ति, ये, ।
ते, ब्रह्म, तत् विदुः, कृत्स्नम्, अध्यात्मम्, कर्म, च, अखिलम् । ।29 । ।

अनुवाद : (ये) जो (माम्) मेरे (कृत्स्नम्) सम्पूर्ण (अध्यात्मम्) अध्यात्मको (च) तथा (अखिलम्) सम्पूर्ण (कर्म) कर्मको (विदुः) जानते हैं (ते) वे पुरुष (तत्) उस (ब्रह्म) ब्रह्मके (आश्रित्य) आश्रित होकर (जरामरणमोक्षाय) जरा और मरणसे छूटनेके लिये (यतन्ति) यत्न करते हैं। (29)

केवल हिन्दी अनुवाद : जो मेरे सम्पूर्ण अध्यात्मको तथा सम्पूर्ण कर्मको जानते हैं वे पुरुष उस ब्रह्मके आश्रित होकर जरा और मरणसे छूटनेके लिये यत्न करते हैं। (29)

अध्याय 7 का श्लोक 30

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः। ३०।

साधिभूताधिदैवम्, माम्, साधियज्ञम्, च, ये, विदुः।
प्रयाणकाले,अपि,च,माम्,ते,विदुः,युक्तचेतसः। ।30 । ।

अनुवाद : (ये) जो साधक (माम्) मुझे (च) तथा (साधिभूताधिदैवम्) अधिभूत अधिदैवके सहित (च) और (साधियज्ञम्) अधियज्ञ के सहित (विदुः) सही जानते हैं (ते) वे (माम्) मुझे (विदुः) जानते हैं (प्रयाणकाले) अंत काल में (अपि) भी (युक्तचेतसः) युक्तचितवाले हैं अर्थात् मेरे द्वारा दिए जा रहे कष्ट को जानते हुए एक पूर्ण परमात्मा में मन को स्थाई रखते हैं। (30)

केवल हिन्दी अनुवाद : जो साधक मुझे तथा अधिभूत अधिदैवके सहित और अधियज्ञ के सहित सही जानते हैं वे मुझे जानते हैं अंत काल में भी युक्तचितवाले हैं अर्थात् मेरे द्वारा दिए जा रहे कष्ट को जानते हुए उस एक पूर्ण परमात्मा में मन को स्थाई रखते हैं। (30)

(इति अध्याय सातवाँ)

❑❑❑

।। श्री मद्भगवत गीता अध्याय - 8 ।।

अध्याय 8 का श्लोक 1

(अर्जुन उवाच)

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते।१।

किम्, तत्, ब्रह्म, किम्, अध्यात्मम्, किम्, कर्म, पुरुषोत्तम,
अधिभूतम्, च, किम्, प्रोक्तम्, अधिदैवम्, किम्, उच्यते ।।1।।

अनुवाद : (पुरुषोत्तम) हे पुरुषोत्तम! (तत्) वह (ब्रह्म) ब्रह्म (किम्) क्या है (अध्यात्मम्) अध्यात्म (किम्) क्या है? (कर्म) कर्म (किम्) क्या है? (अधिभूतम्) अधिभूत नामसे (किम्) क्या (प्रोक्तम्) कहा गया है (च) और (अधिदैवम्) अधिदैव (किम्) किसको (उच्यते) कहते हैं?(1)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पुरुषोत्तम! वह ब्रह्म क्या है अध्यात्म क्या है? कर्म क्या है? अधिभूत नामसे क्या कहा गया है और अधिदैव किसको कहते हैं?(1)

अध्याय 8 का श्लोक 2

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः।२।

अधियज्ञः, कथम्, कः, अत्र, देहे, अस्मिन्, मधुसूदन,
प्रयाणकाले, च, कथम्, ज्ञेयः, असि, नियतात्मभिः ।।2।।

अनुवाद : (मधुसूदन) हे मधुसूदन! (अत्र) यहाँ (अधियज्ञः) अधियज्ञ (कः) कौन है और वह (अस्मिन्) इस (देहे) शरीरमें (कथम्) कैसे है? (च) तथा (नियतात्मभिः) युक्त चितवाले पुरुषोंद्वारा (प्रयाणकाले) अन्त समयमें (कथम्) किस प्रकार (ज्ञेयः) जाननेमें आते (असि) हैं। (2)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे मधुसूदन! यहाँ अधियज्ञ कौन है और वह इस शरीरमें कैसे है? तथा युक्त चितवाले पुरुषोंद्वारा अन्त समयमें किस प्रकार जाननेमें आते हैं। (2)

(श्री भगवान उवाच)

अध्याय 8 का श्लोक 3

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसञ्ज्ञितः।३।

अक्षरम्, ब्रह्म, परमम्, स्वभावः, अध्यात्मम्, उच्यते,
भूतभावोद्भवकरः, विसर्गः, कर्मसज्ञितः ।। 3 ।।

अनुवाद : ब्रह्म भगवान ने उत्तर दिया वह (परमम्) परम (अक्षरम्) अक्षर (ब्रह्म) 'ब्रह्म' है जो जीवात्मा के साथ सदा रहने वाला है (स्वभावः) उसीका स्वरूप अर्थात् परमात्मा जैसे गुणों वाली जीवात्मा (अध्यात्मम्) 'अध्यात्म' नामसे (उच्यते) कहा जाता है तथा (भूतभावोद्भवकरः) जीव भावको उत्पन्न करनेवाला जो (विसर्गः) त्याग है वह (कर्मसजितः) 'कर्म' नामसे कहा गया है। (3)

केवल हिन्दी अनुवाद : गीता ज्ञान दाता ब्रह्म भगवान ने उत्तर दिया वह परम अक्षर 'ब्रह्म' है जो जीवात्मा के साथ सदा रहने वाला है उसीका स्वरूप अर्थात् परमात्मा जैसे गुणों वाली जीवात्मा

'अध्यात्म' नामसे कहा जाता है तथा जीव भावको उत्पन्न करनेवाला जो त्याग है वह 'कर्म' नामसे कहा गया है। (3)

अध्याय 8 का श्लोक 4

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर।४।

अधिभूतम्, क्षरः, भावः, पुरुषः, च, अधिदैवतम्,
अधियज्ञः, अहम्, एव, अत्र, देहे, देहभृताम्, वर ।।4।।

अनुवाद : (अत्र) इस (देहभृताम् वर) देह धारियों में श्रेष्ठ अर्थात् मानव (देहे) शरीर में (क्षरः भावः) नाशवान स्वभाव वाले (अधिभूतम्) अधिभूत जीव का स्वामी (च) और (अधिदैवतम्) अधिदैव दैवी शक्ति का स्वामी (अधियज्ञः) यज्ञ का स्वामी अर्थात् यज्ञ में प्रतिष्ठित अधियज्ञ (पुरुषः) पूर्ण परमात्मा है(एव) इसी प्रकार इस मानव शरीर में (अहम्) मैं हूँ। (4)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस देह धारियों में श्रेष्ठ अर्थात् मानव शरीर में नाशवान स्वभाव वाले अधिभूत जीव का स्वामी और अधिदैव दैवी शक्ति का स्वामी यज्ञ का स्वामी अर्थात् यज्ञ में प्रतिष्ठित अधियज्ञ पूर्ण परमात्मा है इसी प्रकार इस मानव शरीर में मैं हूँ। (4)

भावार्थ :- सर्व देहधारी प्राणियों में श्रेष्ठ शरीर मानव शरीर है। इस मानव शरीर में सर्व प्रभुओं का वास है। जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 15 में गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि मैं सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित हूँ। गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में कहा है कि वह पूर्ण ब्रह्म ज्योतियों का ज्योति माया से अति परे कहा जाता है। वह तत्वज्ञान से जानने योग्य है और सब के हृदय में विशेष रूप से स्थित है। इसी प्रकार गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में कहा है शरीर रूपी यन्त्र में अर्न्तयामी परमेश्वर अपनी माया से भ्रमण कराता हुआ (सर्वभूतानाम्) सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है। {इससे सिद्ध हुआ कि शरीर में दोनों प्रभुओं (ब्रह्म तथा पूर्ण ब्रह्म) का वास है}

नोट :- गीता अ. 3 के श्लोक 14,15 में स्पष्ट है कि सर्वव्यापक परमात्मा पूर्णब्रह्म ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् अधियज्ञ है।

अध्याय 8 का श्लोक 5

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ।५।

अन्तकाले, च, माम्, एव, स्मरन्, मुक्त्वा, कलेवरम्,
यः, प्रयाति, सः, मद्भावम्, याति, न, अस्ति, अत्र, संशयः ।।5।।

अनुवाद : (यः) जो (अन्तकाले,च) अन्तकालमें भी (माम्) मुझको (एव) ही (स्मरन्) सुमरण करता हुआ (कलेवरम्) शरीरको (मुक्त्वा) त्यागकर (प्रयाति) जाता है (सः) वह (मद्भावम्) शास्त्रानुकूल भक्ति ब्रह्म तक की साधना के भाव को अर्थात् स्वभाव को (याति) प्राप्त होता है (अत्र) इसमें कुछ भी (संशयः) संश्य (न) नहीं (अस्ति) है। (5)

केवल हिन्दी अनुवाद : जो अन्तकालमें भी मुझको ही सुमरण करता हुआ शरीरको त्यागकर जाता है वह शास्त्रानुकूल भक्ति ब्रह्म तक की साधना के भाव को अर्थात् स्वभाव को प्राप्त होता है

इसमें कुछ भी संश्य नहीं है। (5)

अध्याय 8 का श्लोक 6

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।६।

यम्, यम्, वा, अपि, स्मरन्, भावम्, त्यजति, अन्ते, कलेवरम्,
तम्, तम्, एव, एति, कौन्तेय, सदा, तद्भावभावितः ।।6।।

अनुवाद : (कौन्तेय) हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! यह मनुष्य (अन्ते) अन्तकालमें (यम् यम्) जिस–जिस (वा, अपि) भी (भावम्) भावको (स्मरन्) सुमरण करता हुआ अर्थात् जिस भी देव की उपासना करता हुआ (कलेवरम्) शरीरका (त्यजति) त्याग करता है (तम् तम्) उस–उसको (एव) ही (एति) प्राप्त होता है क्योंकि वह (सदा) सदा (तद्भावभावितः) उसी भक्ति भाव को अर्थात् स्वभाव को प्राप्त होता है। (6)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको सुमरण करता हुआ अर्थात् जिस भी देव की उपासना करता हुआ शरीरका त्याग करता है उस-उसको ही प्राप्त होता है क्योंकि वह सदा उसी भक्ति भाव को अर्थात् स्वभाव को प्राप्त होता है। (6)

(श्लोक 7 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति करने को कहा है)

अध्याय 8 का श्लोक 7

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ।७।

तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, माम्, अनुस्मर, युध्य, च,
मयि, अर्पितमनोबुद्धिः, माम्, एव, एष्यसि, असंशयम् ।।7।।

अनुवाद : (तस्मात्) इसलिये हे अर्जुन! तू (सर्वेषु) सब (कालेषु) समयमें निरन्तर (माम्) मेरा (अनुस्मर) सुमरण कर (च) और (युध्य) युद्ध भी कर इस प्रकार (मयि) मुझमें (अर्पितमनोबुद्धिः) अर्पण किये हुए मन–बुद्धिसे युक्त होकर तू (असंशयम्) निःसन्देह (माम्) मुझको (एव) ही (एष्यसि) प्राप्त होगा अर्थात् जब कभी तेरा मनुष्य का जन्म होगा मेरी साधना पर लगेगा तथा मेरे पास ही रहेगा। (7)

केवल हिन्दी अनुवाद : इसलिये हे अर्जुन! तू सब समयमें निरन्तर मेरा सुमरण कर और युद्ध भी कर इस प्रकार मुझमें अर्पण किये हुए मन-बुद्धिसे युक्त होकर तू निःसन्देह मुझको ही प्राप्त होगा अर्थात् जब कभी तेरा मनुष्य का जन्म होगा मेरी साधना पर लगेगा तथा मेरे पास ही रहेगा। (7)

(निम्न 8,9,10 श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है)

अध्याय 8 का श्लोक 8

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्।८।

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा, नान्यगामिना।
परमम्, पुरुषम्, दिव्यम्, याति, पार्थ, अनुचिन्तयन् ।।8।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! (अभ्यासयोगयुक्तेन) परमेश्वरके नाम जाप के अभ्यासरूप योगसे युक्त

अर्थात् उस पूर्ण परमात्मा की पूजा में लीन (नान्यगामिना) दूसरी ओर न जानेवाले (चेतसा) चित्तसे (अनुचिन्तयन्) निरन्तर चिन्तन करता हुआ भक्त (परमम्) परम (दिव्यम्) दिव्य (पुरुषम्) परमात्माको अर्थात् परमेश्वरको ही (याति) प्राप्त होता है। (8)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! परमेश्वरके नाम जाप के अभ्यासरूप योगसे युक्त अर्थात् उस पूर्ण परमात्मा की पूजा में लीन दूसरी ओर न जानेवाले चित्तसे निरन्तर चिन्तन करता हुआ भक्त परम दिव्य परमात्माको अर्थात् परमेश्वरको ही प्राप्त होता है। (8)

अध्याय 8 का श्लोक 9

कविं पुराणमनुशासितार-
मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।९।

कविम्, पुराणम् अनुशासितारम्, अणोः, अणीयांसम्, अनुस्मरेत्,
यः, सर्वस्य, धातारम्, अचिन्त्यरूपम्, आदित्यवर्णम्, तमसः, परस्तात् ।।9।।

अनुवाद : (कविम्) कविर्देव, अर्थात् कबीर परमेश्वर जो कवि रूप में प्रसिद्ध होता है वह (पुराणम्) अनादि, (अनुशासितारम्) सबके नियन्ता (अणोः, अणीयांसम्) सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म, (सर्वस्य) सबके (धातारम्) धारण–पोषण करने वाला (अचिन्त्यरूपम्) अचिन्त्य–स्वरूप (आदित्यवर्णम्) सूर्यके सदृश नित्य प्रकाशमान है (यः) जो साधक (तमसः) उस अज्ञानरूप अंधकारसे (परस्तात्) अति परे सच्चिदानन्दघन परमेश्वरका (अनुस्मरेत्) सुमरण करता है। (9)

केवल हिन्दी अनुवाद : कविर्देव, अर्थात् कबीर परमेश्वर जो कवि रूप से प्रसिद्ध होता है वह अनादि, सबके नियन्ता सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म, सबके धारण-पोषण करनेवाले अचिन्त्य-स्वरूप सूर्यके सदृश नित्य प्रकाशमान है। जो उस अज्ञानरूप अंधकारसे अति परे सच्चिदानन्दघन परमेश्वरका सुमरण करता है। (9)

अध्याय 8 का श्लोक 10

प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्-
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्। १०।

प्रयाणकाले, मनसा, अचलेन, भक्त्या, युक्तः, योगबलेन, च, एव, भ्रुवोः,
मध्ये, प्राणम्, आवेश्य, सम्यक्, सः, तम्, परम् पुरुषम्, उपैति, दिव्यम् ।।10।।

अनुवाद : (सः) वह (भक्त्या, युक्तः) भक्तियुक्त साधक (प्र याणकाले) अन्तकालमें (योगबलेन) नाम के जाप की भक्ति के प्रभावसे (भ्रुवोः) भृकुटी के (मध्ये) मध्यमें (प्राणम्) प्राणको (सम्यक्) अच्छी प्रकार (आवेश्य) स्थापित करके (च) फिर (अचलेन) निश्चल (मनसा) मनसे (तम्) अज्ञात (दिव्यम्) दिव्यरूप (परम्) परम (पुरुषम्) भगवानको (एव) ही (उपैति) प्राप्त होता है। (10)

केवल हिन्दी अनुवाद : वह भक्तियुक्त साधक अन्तकालमें नाम के जाप की भक्ति के प्रभावसे

भृकुटीके मध्यमें प्राणको अच्छी प्रकार स्थापित करके फिर निश्चल मनसे अज्ञात दिव्यरूप परम भगवानको ही प्राप्त होता है। (10)

अध्याय 8 का श्लोक 11

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये।११।

यत्, अक्षरम्, वेदविदः, वदन्ति, विशन्ति, यत्, यतयः, वीतरागाः,
यत्, इच्छन्तः, ब्रह्मचर्यम्, चरन्ति, तत्, ते, पदम्, सङ्ग्रहेण, प्रवक्ष्ये।।11।।

अनुवाद : उपरोक्त श्लोक 8 से 10 में वर्णित (यत्) जिस सच्चिदानन्द घन परमेश्वर को (वेदविदः) वेद के जानने वाले अर्थात् तत्वदर्शी सन्त (अक्षरम्) वास्तव में अविनाशी (वदन्ति) कहते हैं। (यत्) जिसमें (यतयः) यत्नशील (वितरागाः) रागरहित साधक जन (विशन्ति) प्रवेश करते हैं अर्थात् प्राप्त करते हैं (यत्) जिसे (इच्छन्तः) चाहने वाले (ब्रह्मचर्यम्) ब्रह्मचर्य का (चरन्ति) आचरण करते हैं अर्थात् ब्रह्मचारी रह कर भी उस परमात्मा को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। (तत्) उस (पदम्) पद अर्थात् पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने वाले भक्ति पद्धती को उस पूजा विधि को (ते) तेरे लिए (सङ्ग्रेहण) संक्षेप से अर्थात् सांकेतिक रूप से (प्रवक्ष्ये) कहूँगा। (11)

केवल हिन्दी अनुवादः उपरोक्त श्लोक 8 से 10 में वर्णित जिस सच्चिदानन्द घन परमेश्वर को वेद के जानने वाले अर्थात् तत्वदर्शी सन्त वास्तव में अविनाशी कहते हैं। जिसमें यत्नशील रागरहित साधक जन प्रवेश करते हैं अर्थात् प्राप्त करते हैं जिसे चाहने वाले ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं अर्थात् ब्रह्मचारी रह कर भी उस परमात्मा को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। उस पद अर्थात् पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने वाले भक्ति पद्धती को उस पूजा विधि को तेरे लिए संक्षेप में अर्थात् सांकेतिक रूप से कहूँगा।

भावार्थ : इस अध्याय में गीता ज्ञान दाता भिन्न-2 साधनाओं का ज्ञान कराते हुए कह रहा है कि जो तत्वदर्शी संत नाम (मन्त्र) जाप के लिए बताता है जिससे मोक्ष प्राप्त करते हैं। वह मार्ग बताऊँगा जिसका वर्णन गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में किया है कि पूर्ण परमात्मा की साधना का तो केवल ओम्-तत्-सत् यह तीन अक्षर का मन्त्र है, अन्य नहीं।

अध्याय 8 का श्लोक 12

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।१२।

सर्वद्वाराणि, संयम्य, मनः, हृदि, निरुध्य, च,
मूर्ध्नि, आधाय, आत्मनः, प्राणम्, आस्थितः, योगधारणाम्।।12।।

अनुवाद : जो भक्ति पद अर्थात् पद्यति बताने जा रहा हूँ उस में साधक (सर्वद्धाराणि) सर्व इन्द्रियों के द्वारों को (संयम्य) नियमित करके (मनः) मन को (हृदय) हृदय देश में (च) तथा (प्राणम्) स्वासों को (मूर्ध्नि) मस्तिक में (निरुध्य) स्थिर करके (आत्मनः) परमात्मा के ध्यान में (अधाय) स्थापित करके (योग धारणाम्)

योग धारण अर्थात् साधना में (आस्थितः) स्थित होता है। (12)

केवल हिन्दी अनुवाद :--जो भक्ति पद अर्थात् पद्यति बताने जा रहा हूँ उस में साधक सर्व इन्द्रियों के द्वारों को नियमित करके मन को हृदय देश में तथा स्वासों को मस्तिक में स्थिर करके परमात्मा के ध्यान में स्थापित करके योग धारण अर्थात् साधना में स्थित होता है।

भावार्थ : गीता ज्ञान दाता काल भगवान केवल संक्षेप में संकेत द्वारा कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने वाली भक्ति पद्धती में साधक स्वासों द्वारा साधना करता है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ओं-तत्-सत् जो तीन मन्त्र का जाप है उसका मन-पवन अर्थात् स्वासों व सुरति व निरति को सम करके मस्तिक तथा हृदय में अभ्यास करता है। जैसे सतनाम के जाप को स्वासों द्वारा किया जाता है। सत्यनाम में दो अक्षर होते हैं एक अक्षर ओं (ॐ) तथा दूसरा तत् जो गुप्त है। ओं (ॐ) नाम ब्रह्म का जाप है। ब्रह्म का स्थान संहस्त्र कमल है जो मस्तिक के पीछे है तथा पूर्ण परमात्मा विशेष रूप से हृदय में (जल में सूर्य की तरह) निवास करता है। इसलिए सत्यनाम के सुमरण में स्वांस पर ध्यान एकाग्र करके मस्तिक व हृदय में स्वांस के साथ ध्यान से नामों का जाप किया जाता है। काल भगवान को पूर्ण भक्ति विधि का ज्ञान नहीं है। अगले श्लोक 13 में केवल अपनी साधना की विधि बताई है।

अध्याय 8 का श्लोक 13

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्। १३।

ओम्, इति, एकाक्षरम्, ब्रह्म, व्याहरन्, माम्, अनुस्मरन्,
यः, प्रयाति, त्यजन्, देहम्, सः, याति, परमाम्, गतिम्।।13।।

अनुवाद : गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि उपरोक्त श्लोक 11-12 में जिस गीता अध्याय 17 के श्लोक 23 में जो मन्त्र को पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का कहा है उस पूर्ण मोक्ष मार्ग के नाम में तीन अक्षर का जाप ओं–तत–सत् है उस में (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का तो (इति) यह (ओम्) ओम्/ॐ (एकाक्षरम) एक अक्षर है (व्यवाहरन्) उच्चारण करते हुए (अनुस्मरन्) स्मरन करने अर्थात् साधना करने का (यः) जो (त्यजन् देहम्) शरीर त्याग कर जाता हुआ स्मरण करता है अर्थात् अंतिम समय में (प्रयाति) साधना स्मरण करता हुआ मर जाता है (सः) वह (परमाम् गतिम्) परम गति पूर्ण मोक्ष को (याति) प्राप्त होता है। अपनी गति को तो गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम कहा है। इसलिए यहाँ पर पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष रूपी परम गति का वर्णन है(13)

केवल हिन्दी अनुवाद : गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि उपरोक्त श्लोक 11-12 में जिस पूर्ण मोक्ष मार्ग के नाम जाप में तीन अक्षर का जाप कहा है उस में मुझ ब्रह्म का तो यह ओं/ॐ एक अक्षर है उच्चारण करते हुए स्मरन करने अर्थात् साधना करने का जो शरीर त्याग कर जाता हुआ स्मरण करता है अर्थात् अंतिम समय में स्मरण करता हुआ मर जाता है वह परम गति पूर्ण मोक्ष को प्राप्त होता है। {अपनी गति को तो गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम कहा है। इसलिए यहाँ पर पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति अर्थात् पूर्ण मोक्ष रूपी परम गति का वर्णन है (13)}

भावार्थ : काल भगवान कह रहा है कि उस तीन अक्षरों (ओं,तत्,सत्) वाले मन्त्र में मुझ ब्रह्म

का केवल एक ओम/ऊँ (ओं) अक्षर है। उच्चारण करके स्मरण करने का जो साधक अंतिम स्वांस तक स्मरण साधना करता हुआ शरीर त्याग जाता है वह परम गति अर्थात् मोक्ष को प्राप्त होता है। {अपनी गति को अध्याय 7 श्लोक 18 में (अनुतमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है।}

अध्याय 8 का श्लोक 14

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।१४।

अनन्यचेताः, सततम्, यः, माम्, स्मरति, नित्यशः,
तस्य, अहम्, सुलभः, पार्थ, नित्ययुक्तस्य, योगिनः।।14।।

अनुवाद : (पार्थ) हे अर्जुन! (यः) जो (अनन्यचेताः) अनन्यचित होकर (नित्यशः) सदा ही (सततम्) निरन्तर (माम्) मुझको (स्मरति) सुमरण करता है (तस्य) उस (नित्ययुक्तस्य) नित्य निरन्तर युक्त हुए (योगिनः) योगीके लिये (अहम्) मैं (सुलभः) सुलभ हूँ। (14)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! जो अनन्यचित होकर सदा ही निरन्तर मुझको सुमरण करता है उस नित्य निरन्तर युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ। (14)

अध्याय 8 का श्लोक 15

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः।१५।

माम्, उपेत्य, पुनर्जन्म, दुःखालयम्, अशाश्वतम्,
न, आप्नुवन्ति, महात्मानः, संसिद्धिम्, परमाम्, गताः।।15।।

अनुवाद : (माम्) मुझको (उपेत्य) प्राप्त साधकतो(अशाश्वतम्) क्षणभंगुर (दुःखालयम्) दुःख के घर (पुनर्जन्म) बार–बार जन्म–मरण में हैं (परमाम्) परम अर्थात् पूर्ण परमात्मा की साधना से होने वाली (संसिद्धिम्) सिद्धिको (गताः) प्राप्त (महात्मानः) महात्माजन (न) नहीं (आप्नुवन्ति) प्राप्त होते। यही प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 12 , अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 अध्याय 18 श्लोक 62 में है जिनमें कहा है कि मेरे तथा तेरे अनेकों जन्म व मृत्यु हो चुके हैं परन्तु उस परमेश्वर को प्राप्त करके ही साधक सदा के लिए जन्म मरण से मुक्त हो जाता है वह फिर लौट कर इस क्षण भंगुर लोक में नहीं आता(15)

केवल हिन्दी अनुवाद : मुझको प्राप्त साधकतो क्षणभंगुर दुःख के घर बार-बार जन्म-मरण में हैं परम अर्थात् पूर्ण परमात्मा की साधना से होने वाली सिद्धिको प्राप्त महात्माजन नहीं प्राप्त होते। यही प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 12 , अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 अध्याय 18 श्लोक 62 में है जिनमें कहा है कि मेरे तथा तेरे अनेकों जन्म व मृत्यु हो चुके हैं परन्तु उस परमेश्वर को प्राप्त करके ही साधक सदा के लिए जन्म मरण से मुक्त हो जाता है वह फिर लौट कर इस क्षण भंगुर लोक में नहीं आता(15)

अध्याय 8 का श्लोक 16

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।१६।

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते।।16।।

अनुवाद : (अर्जुन) हे अर्जुन! (आब्रह्मभुवनात्) ब्रह्मलोक से लेकर (लोकाः) सब लोक (पुनरावर्तिनः) बारम्बार उत्पत्ति नाश वाले हैं (तु) परन्तु (कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (न, विद्यते) जो यह नहीं जानते वे (माम्) मुझे (उपेत्य) प्राप्त होकर भी (पुनः) फिर (जन्मः) जन्मते हैं। (16)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! ब्रह्मलोक से लेकर सब लोक बारम्बार उत्पत्ति नाश वाले हैं परन्तु हे कुन्ती पुत्र जो यह नहीं जानते वे मुझे प्राप्त होकर भी फिर जन्मते हैं। (16)

विशेष :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता अध्याय 10 श्लोक 17 में विद्याम का अर्थ जानूँ किया है, गीता अध्याय 6 श्लोक 23 तथा अध्याय 14 श्लोक 11 में विद्यात का अर्थ जानना चाहिए किया है तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 15 में तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 17 में वेद्यः तथा वेद्यम् का अर्थ जानने योग्य तथा जानना चाहिए किया है। इसलिए विद्यते का अर्थ 'जानते' सही है।

यदि इन श्लोकों 15-16 का अर्थ अन्य अनुवाद कर्ताओं वाला सही माना जाए कि ब्रह्म (गीता ज्ञान दाता को) को प्राप्त होने के पश्चात् पुर्नजन्म नहीं होता तो गीता अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5 व 9 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 तथा अध्याय 18 श्लोक 62 का अर्थ सही नहीं लगेगा। इसलिए यही उपरोक्त अनुवाद जो मुझ दास(संत रामपाल जी महाराज) द्वारा किया गया है वह उचित है।

अध्याय 8 का श्लोक 17

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्त्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः।१७।

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः,यत्,ब्रह्मणः, विदुः,रात्रिम्,
युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः।।17।।

अनुवाद : (ब्रह्मणः) परब्रह्म का (यत्) जो (अहः) एक दिन है उसको (सहस्त्रयुगपर्यन्तम्) एक हजार युग की अवधिवाला और (रात्रिम्) रात्रिको भी (युगसहस्त्रान्ताम्) एक हजार युगतकको अवधिवाली (विदुः) तत्वसे जानते हैं (ते) वे (जनाः) तत्वदर्शी संत (अहोरात्रविदः) दिन–रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : परब्रह्म का जो एक दिन है उसको एक हजार युग की अवधिवाला और रात्रिको भी एक हजार युगतकको अवधिवाली तत्वसे जानते हैं वे तत्वदर्शी संत दिन-रात्री के तत्वको जाननेवाले हैं। (17)

विशेषः- सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म-काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग अर्थात् एक हजार ब्रह्मलोकिय शिव (ब्रह्मलोक में स्वयं काल ही महाशिव रूप में रहता है) की मृत्यु के बाद काल के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है।

इसलिए यहाँ पर परब्रह्म के एक दिन जो एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री होती है। लिखा है।

''सर्व प्रभुओं की आयु''

(1) रजगुण ब्रह्मा की आयु:- *ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का है तथा इतनी ही रात्री है। (एक चतुर्युग में 43,20,000 मनुष्यों वाले वर्ष होते हैं) एक महिना तीस दिन रात का है, एक वर्ष बारह महिनों का है तथा सौ वर्ष की ब्रह्मा जी की आयु है। जो सात करोड़ बीस लाख चतुर्युग की है।*

(2) सतगुण विष्णु की आयु:- *श्री ब्रह्मा जी की आयु से सात गुणा अधिक श्री विष्णु जी की आयु है अर्थात् पचास करोड़ चालीस लाख चतुर्युग की श्री विष्णु जी की आयु है।*

(3) तमगुण शिव की आयु:- *श्री विष्णु जी की आयु से श्री शिव जी की आयु सात गुणा अधिक है अर्थात् तीन अरब बावन करोड़ अस्सी लाख चतुर्युग की श्री शिव की आयु है।*

(4) काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की आयु:- *सात त्रिलोकिय ब्रह्मा (काल के रजगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय विष्णु जी की मृत्यु होती है तथा सात त्रिलोकिय विष्णु (काल के सतगुण पुत्र) की मृत्यु के बाद एक त्रिलोकिय शिव (ब्रह्म/काल के तमोगुण पुत्र) की मृत्यु होती है। (प्रमाण :- कबीर सागर अध्याय ''ज्ञान सागर'' पृष्ठ 43) ऐसे 70000 (सतर हजार अर्थात् 0.7 लाख) त्रिलोकिय शिव की मृत्यु के उपरान्त एक ब्रह्मलोकिय महा शिव (सदाशिव अर्थात् काल) की मृत्यु होती है। एक ब्रह्मलोकिय महाशिव की आयु जितना एक युग परब्रह्म (अक्षर पुरूष) का हुआ। ऐसे एक हजार युग का परब्रह्म का एक दिन होता है। परब्रह्म के एक दिन के समापन के पश्चात् काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों का विनाश हो जाता है तथा काल व प्रकृति देवी(दुर्गा) की मृत्यु होती है। परब्रह्म की रात्री (जो एक हजार युग की होती है) के समाप्त होने पर दिन के प्रारम्भ में काल व दुर्गा का पुनर् जन्म होता है फिर ये एक ब्रह्मण्ड में पहले की भांति सृष्टी प्रारम्भ करते हैं। इस प्रकार परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष का एक दिन एक हजार युग का होता है तथा इतनी ही रात्री है।*

अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म की आयु :- *ब्रह्मलोकिय महाशिव अर्थात् काल ब्रह्म की आयु के समान अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म का एक युग होता है। परब्रह्म का एक दिन एक हजार युग का तथा इतनी ही रात्री होती है। इस प्रकार परब्रह्म का एक दिन-रात दो हजार युग का हुआ। एक महिना 30 दिन का एक वर्ष 12 महिनों का तथा परब्रह्म की आयु सौ वर्ष की है। इस से सिद्ध है कि परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष भी नाशवान है। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 तथा अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में किसी अन्य पूर्ण परमात्मा के विषय में कहा है जो वास्तव में अविनाशी है।*

नोट :- गीता जी के अन्य अनुवाद कर्ताओं ने ब्रह्मा का एक दिन एक हजार चतुर्युग का लिखा है जो उचित नहीं है। क्योंकि मूल संस्कृत में सहंसर युग लिखा है न की चतुर्युग। तथा ब्रह्मणः लिखा है न कि ब्रह्मा। तत्वज्ञान के अभाव से अर्थों का अनर्थ किया है।

अध्याय 8 का श्लोक 18

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसञ्ज्ञके। १८।

अव्यक्तात्, व्यक्तयः, सर्वाः, प्रभवन्ति, अहरागमे,
रात्र्यागमे, प्रलीयन्ते, तत्र, एव, अव्यक्तसञ्ज्ञके ।। 18 ।।

अनुवाद : (सर्वाः) सम्पूर्ण (व्यक्तयः) प्रत्यक्ष आकार में आया संसार (अहरागमे) परब्रह्म के दिनके प्रवेशकालमें (अव्यक्तात्) अव्यक्तसे अर्थात् अदृश परब्रह्म से (प्रभवन्ति) उत्पन्न होते हैं और (रात्र्यागमे) रात्रि आने पर (तत्र) उस (अव्यक्तसञ्ज्ञके) अद्‌ृश अर्थात् परोक्ष परब्रह्म में (एव) ही (प्रलीयन्ते) लीन हो जाते हैं। (18)

केवल हिन्द अनुवाद : सम्पूर्ण प्रत्यक्ष आकार में आया संसार परब्रह्म के दिन के प्रवेशकालमें अव्यक्तसे अर्थात् अदृश परब्रह्म से उत्पन्न होते हैं और रात्रि आने पर उस अदृश अर्थात् परोक्ष परब्रह्म में ही लीन हो जाते हैं। (18)

अध्याय 8 का श्लोक 19

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे। १९।

भूतग्रामः, सः, एव, अयम्, भूत्वा, भूत्वा, प्रलीयते,
रात्र्यागमे, अवशः, पार्थ, प्रभवति, अहरागमे ।।19 ।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! (सः,एव) वही (अयम्) यह (भूतग्रामः) प्राणी समुदाय (भूत्वा, भूत्वा) उत्पन्न हो होकर (अवशः) संस्कार वश होकर (रात्र्यागमे) रात्रिके प्रवेशकालमें (प्रलीयते) लीन होता है और (अहरागमे) दिनके प्रवेशकालमें फिर (प्रभवति) उत्पन्न होता है। (19)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! वही यह प्राणी समुदाय उत्पन्न हो होकर संस्कार वश होकर रात्रिके प्रवेशकालमें लीन होता है और दिन के प्रवेशकालमें फिर उत्पन्न होता है। (19)

अध्याय 8 का श्लोक 20

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति। २०।

परः, तस्मात्, तु, भावः, अन्यः, अव्यक्तः,, अव्यक्तात्, सनातनः ।
यः सः, सर्वेषु, भूतेषु, नश्यत्सु, न, विनश्यति ।।20 ।।

अनुवाद : (तु) परंतु (तस्मात्) उस (अव्यक्तात्) अव्यक्त अर्थात् गुप्त परब्रह्म से भी अति (परः) परे (अन्यः) दूसरा (यः) जो (सनातनः) आदि (अव्यक्तः) अव्यक्त अर्थात् परोक्ष (भावः) भाव है (सः) वह परम दिव्य पुरुष (सर्वेषु) सब (भूतेषु) प्राणियों के (नश्यत्सु) नष्ट होने पर भी (न, विनश्यति) नष्ट नहीं होता। (20)

केवल हिन्दी अनुवाद : परंतु उस अव्यक्त अर्थात् गुप्त परब्रह्म से भी अति परे दूसरा जो आदि अव्यक्त अर्थात् परोक्ष भाव है वह परम दिव्य पुरुष सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता। (20)

अध्याय 8 का श्लोक 21

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम्।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम। २१।

अव्यक्तः, अक्षरः, इति, उक्तः, तम्, आहुः, परमाम्, गतिम्।
यम्, प्राप्य, न, निवर्तन्ते, तत् धाम, परमम्, मम् ।।21 ।।

अनुवाद : (अव्यक्तः) अदृश अर्थात् परोक्ष (अक्षरः) अविनाशी (इति) इस नामसे (उक्तः) कहा गया है (तम्) अज्ञान के अंधकार में छुपे गुप्त स्थान को (परमाम्, गतिम्) परमगति (आहुः) कहते हैं (यम्) जिसे (प्राप्य) प्राप्त होकर मनुष्य (न, निवर्तन्ते) वापस नहीं आते (तत् धाम) वह लोक (परमम् मम्) मुझ से व मेरे लोक से श्रेष्ठ है। (21)

केवल हिन्दी अनुवाद : अदृश अर्थात् परोक्ष अविनाशी इस नामसे कहा गया है अज्ञान के अंधकार में छुपे गुप्त स्थान को परमगति कहते हैं जिसे प्राप्त होकर मनुष्य वापस नहीं आते वह लोक मुझ से व मेरे लोक से श्रेष्ठ है। (21)

क्योंकि काल (ब्रह्म) सत्यलोक से निष्कासित है, इसलिए कह रहा है कि मेरा भी वास्तविक स्थान सत्यलोक है। मैं भी पहले वहीं रहता था तथा मेरे लोक से श्रेष्ठ है। जहाँ जाने के पश्चात् वापिस जन्म-मृत्यु में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं।

गीता अध्याय 8 श्लोक 18,20,21,22 अध्याय 8 के श्लोकों में दो परमात्माओं का वर्णन है। श्लोक 18 में कहा है कि सर्व प्राणी इस अव्यक्त परमात्मा अर्थात् परब्रह्म में प्रलय समय लीन हो जाते है। फिर उत्पत्ति समय उत्पन्न हो जाते हैं। श्लोक 20-21 में कहा है कि उस अव्यक्त अर्थात् परब्रह्म से दूसरा अव्यक्त परमात्मा अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जहाँ जाने के पश्चात् प्राणी फिर लौट कर संसार में नहीं आते। अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। एक अव्यक्त गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में है। इस प्रकार तीन परमात्मा सिद्ध हुए। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16 व 17 में है।

अध्याय 8 का श्लोक 22

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्। २२।

पुरुषः, सः, परः, पार्थ, भक्त्या, लभ्यः, तु, अनन्यया।
यस्य, अन्तःस्थानि, भूतानि, येन, सर्वम्, इदम्, ततम्।।22।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! (यस्य) जिस परमात्माके (अन्तःस्थानि) अन्तर्गत (भूतानि) सर्वप्राणी हैं और (येन) जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मासे (इदम्) यह (सर्वम्) समस्त जगत् (ततम्) परिपूर्ण है जिस के विषय में उपरोक्त श्लोक 20,21 में तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 17 में व अध्याय 18 श्लोक 46,61,62, तथा 65,66 में कहा है। (सः) वह (परः) परम (पुरुषः) परमात्मा (तु) तो (अनन्यया) अनन्य (भक्त्या) भक्तिसे ही (लभ्यः) प्राप्त होने योग्य है। (22)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! जिस परमात्माके अन्तर्गत सर्वप्राणी हैं और जिस सच्चिदानन्दघन परमात्मासे यह समस्त जगत् परिपूर्ण है जिस के विषय में उपरोक्त श्लोक 20,21 में तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 17 में व अध्याय 18 श्लोक 46,61,62, तथा 65,66 में कहा है। वह श्रेष्ठ परमात्मा तो अनन्य भक्तिसे ही प्राप्त होने योग्य है। (22)

अध्याय 8 का श्लोक 23

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ। २३।

यत्र, काले, तु, अनावृत्तिम्, आवृत्तिम्, च, एव, योगिनः,

प्रयाताः यान्ति, तम्, कालम्, वक्ष्यामि, भरतर्षभ ।।23।।

अनुवाद : (भरतर्षभ) हे अर्जुन! (यत्र) जिस (काले) कालमें (प्रयाताः) शरीर त्यागकर गये हुए (योगिनः) योगीजन (तु) तो (अनावृत्तिम्) वापस न लौटने वाली गतिको (च) और जिस कालमें गये हुए (आवृत्तिम्) वापस लौटनेवाली गतिको (एव) ही (यान्ति) प्राप्त होते हैं (तम्) उस गुप्त (कालम्) कालको अर्थात् दोनों मार्गोंको (वक्ष्यामि) कहूँगा। (23)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! जिस कालमें शरीर त्यागकर गये हुए योगीजन तो वापस न लौटने वाली गतिको और जिस कालमें गये हुए वापस लौटनेवाली गतिको ही प्राप्त होते हैं उस गुप्त कालको अर्थात् दोनों मार्गोंको कहूँगा। (23)

अध्याय 8 का श्लोक 24

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः। २४।

अग्निः, ज्योतिः, अहः, शुक्लः, षण्मासाः, उत्तरायणम्,
तत्र, प्रयाताः, गच्छन्ति, ब्रह्म, ब्रह्मविदः, जनाः ।।24।।

अनुवाद : (ज्योतिः) प्रकाश (अग्निः) अग्नि है (अहः) दिन का कर्ता है (शुक्लः) शुक्लपक्ष कहा है और (उत्तरायणम्) उतरायणके (षण्मासाः) छः महीनोंका अभिमानी देवता है (तत्र) उस मार्गमें (प्रयाताः) मरकर गये हुए (ब्रह्मविदः) परमात्मा को तत्व से जानने वाले (जनाः) योगीजन (ब्रह्म) परमात्मा को (गच्छन्ति) प्राप्त होते हैं। (24)

केवल हिन्दी अनुवाद : प्रकाश अग्नि दिनका कर्ता है शुक्लपक्ष कहा है और उतरायणके छः महीनोंका है उस मार्गमें मरकर गये हुए परमात्मा को तत्व से जानने वाले योगीजन परमात्मा को प्राप्त होते हैं। (24)

अध्याय 8 का श्लोक 25

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते। २५।

धूमः, रात्रिः, तथा, कृष्णः, षण्मासाः, दक्षिणायनम्,
तत्र, चान्द्रमसम्, ज्योतिः, योगी, प्राप्य, निवर्तते ।।25।।

अनुवाद : (धूमः) अन्धकार (रात्रिः) रात्रि–का कर्ता है (तथा) तथा (कृष्णः) कृष्णपक्ष (दक्षिणायनम्) दक्षिणायनके (षण्मासाः) छः महीनोंका है (तत्र) उस मार्गमें मरकर गया हुआ (योगी) योगी (चान्द्रमसम्) चन्द्रमाकी (ज्योतिः) ज्योतिको (प्राप्य) प्राप्त होकर स्वर्ग में अपने शुभ कर्मोंका फल भोगकर (निवर्तते) वापस आता है। (25)

केवल हिन्दी अनुवाद : अन्धकार रात्रि-का कर्ता है तथा कृष्णपक्ष है और दक्षिणायनके छः महीनोंका है उस मार्गमें मरकर गया हुआ योगी चन्द्रमाकी ज्योतिको प्राप्त होकर स्वर्ग में अपने शुभ कर्मोंका फल भोगकर वापस आता है। (25)

विशेषः- उपरोक्त दोनों श्लोकों का भावार्थ परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने अपनी अमृतवाणी स्वसम वेद में कहा है कि ''तारा मण्डल बैठ कर चाँद बड़ाई खाय। उदय हुआ जब

सूरज का स्यों तारों छिप जाय''

वाणी का अर्थः- जैसे रात्री के समय चन्द्रमा तारों की रोशनी से अधिक चमकदार होता है। परन्तु सूर्य के प्रकाश के समक्ष उस का प्रकाश समाप्त हो जाता है। यहाँ चांद तो ब्रह्म तथा परब्रह्म तथा तारे ब्रह्मा-विष्णु व शिव जाने तथा सूर्य पूर्ण परमात्मा का लाभ जाने।

अध्याय 8 का श्लोक 26

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययावर्तते पुनः।२६।

शुक्लकृष्णे, गती, हि, एते, जगतः, शाश्वते, मते,
एकया,याति,अनावृत्तिम्,अन्यया,आवर्तते,पुनः।।26।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (जगतः) जगत्के (एते) ये दो प्रकारके (शुक्लकृष्णे) शुक्ल और कृष्ण (गती) मोक्ष मार्ग (शाश्वते) सनातन (मते) माने गये हैं इनमें (एकया) एकके द्वारा गया हुआ (अनावृत्तिम्) जिससे वापस नहीं लौटना पड़ता उस परमगतिको (याति) प्राप्त होता है और (अन्यया) दूसरे मार्ग द्वारा गया हुआ (पुनः) फिर (आवर्तते) वापस आता है अर्थात् जन्म—मरणको प्राप्त होता है। (26)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि जगत्के ये दो प्रकारके शुक्ल और कृष्ण मोक्ष मार्ग सनातन माने गये हैं इनमें एकके द्वारा गया हुआ जिससे वापस नहीं लौटना पड़ता उस परमगतिको प्राप्त होता है और दूसरे मार्ग द्वारा गया हुआ फिर वापस आता है अर्थात् जन्म-मरणको प्राप्त होता है। (26)

विशेष :- गीता अध्याय 8 श्लोक 27-28 का भावार्थ है कि जिन प्रभुओं (ब्रह्म-परब्रह्म तथा पूर्ण ब्रह्म) के विषय में पूर्वोक्त श्लोक 1 से 26 में ज्ञान कहा है। उन दोनों प्रभुओं से होने वाले मोक्ष लाभ से परिचित होकर बुद्धिमान व्यक्ति मोहित नहीं होता अर्थात् काल उपासना करके धोखा नहीं खाता। इसलिए कहा है कि उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने का मन बना।

तत्वज्ञान को समझ कर उपरोक्त ज्ञान के रहस्य को जानकर साधक पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का ही प्रयत्न करता है तथा वेदों में वर्णित साधना से होने वाले लाभ पर ही आश्रित नहीं रहता वह चारों वेदों (ऋग्वेद, सामवेद, यर्जुवेद तथा अथर्ववेद) से आगे का लाभ (जो स्वसम वेद में वर्णित है) प्राप्त करता है। उस के लिए वेदों वाली साधना से {दान, तप (तप गीता अध्याय 17 श्लोक 14 से 16 में तीन प्रकार का कहा है)तथा यज्ञ द्वारा} जो पुण्य होता है उस से होने वाला संसारिक लाभ प्राप्त न करके पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए इसे ब्रह्म में त्याग कर पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। क्योंकि वेदों में वर्णित विधि से पुण्य के आधार से स्वर्ग प्राप्ति होती है। पुण्य क्षीण होने के पश्चात् पुनः पाप के आधार से कष्ट भोगने पड़ते हैं।

गीता अध्याय 9 श्लोक 20-21 में वेदों में वर्णित साधना से भी जन्म-मृत्यु तथा स्वर्ग-नरक का चक्र समाप्त नहीं होता। गीता अध्याय 11 श्लोक 48 व 53 में कहा है कि वेदों में वर्णित साधना से मेरी प्राप्ति नहीं है। अध्याय 11 श्लोक 54 में कहा कि मेरे में प्रवेश होने के लिए ही कहा है मोक्ष-मुक्ति के लिए नहीं जैसे गीता ज्ञान दाता प्रतिदिन एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को काल रूप में खाता है।

जैसा विवरण अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन आँखों देखा बता रहा है कि जो ऋषियों वे देवताओं का समूह आप का वेद मन्त्र द्वारा गुणगान कर रहा है आप उन्हें भी खा रहे हो। वे सर्व आप में प्रवेश कर रहे हैं। कोई आपकी दाड़ों में लटक रहे हैं इसी के विषय में श्लोक 54 में कहा है। श्लोक 55 का भी यह भावार्थ है कि मेरे साधक मेरे को प्राप्त होते है। मेरे ही जाल में रह जाते हैं। उसके लिए गीता अध्याय 8 श्लोक 28 में कहा है कि पूर्ण सन्त (तत्वदर्शी सन्त) के बताए भक्ति मार्ग से साधक वेदों में वर्णित साधना का फल स्वर्ग आदि में जाकर नष्ट नहीं करता अपितु पूर्ण परमात्मा को पाने के लिए प्रयुक्त करता है। उस वेदों वाली कमाई (ओं नाम का जाप पाँचों यज्ञों का फल) को ब्रह्म में त्यागकर पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करता है जिस कारण से पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है। यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में है कहा है कि हे अर्जुन मेरे सत्र की सर्व धाार्मिक पूजाऐं मेरे में त्याग कर तू उस एक (अद्वितीय) सर्वशक्तिमान परमश्वेर की शरण में (व्रज) जा। फिर मैं तूझे सर्व पापों से मुक्त कर दूंगा। क्योंकि जिन पापों को भोगना था उस के प्रतिफल में सर्व पूण्य व नाम जाप की कमाई छोड़ देने से काल का ऋण समाप्त हो जाता है। इसलिए काल जाल से मुक्ति मिलती है।

अध्याय 8 का श्लोक 27

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन। २७।

न,एते,सृती, पार्थ, जानन्,योगी, मुह्यति,कश्चन,
तस्मात्,सर्वेषु, कालेषु, योगयुक्तः, भव, अर्जुन।।27।।

अनुवाद : (पार्थ) हे पार्थ! इस प्रकार (एते) इन दोनों (सृती) मार्गों की भिन्नता को (जानन्) तत्वसे जानकर (कश्चन) कोई भी (योगी) योगी (न, मुह्यति) मोहित नहीं होता (तस्मात्) इस कारण (अर्जुन) हे अर्जुन! तू (सर्वेषु) सब (कालेषु) कालमें (योगयुक्तः) समबुद्धिरूप योगसे युक्त (भव) हो अर्थात् निरन्तर पूर्ण परमात्मा प्राप्तिके लिये साधन करनेवाला हो। (27)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे पार्थ! इस प्रकार इन दोनों मार्गों की भिन्नता को तत्वसे जानकर कोई भी योगी मोहित नहीं होता इस कारण हे अर्जुन! तू सब कालमें समबुद्धिरूप योगसे युक्त हो अर्थात् निरन्तर पूर्ण परमात्मा प्राप्तिके लिये साधन करनेवाला हो। (27)

अध्याय 8 का श्लोक 28

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम्। २८।

वेदेषु, यज्ञेषु, तपःसु, च, एव, दानेषु, यत्, पुण्यफलम्, प्रदिष्टम्, अत्येति,
तत्, सर्वम्, इदम्, विदित्वा, योगी, परम्, स्थानम्, उपैति, च, आद्यम्।।28।।

अनुवाद : (योगी) साधक (इदम्) इस पूर्वोक्त रहस्य को (विदित्वा) तत्वसे जानकर (वेदेषु) वेदोंके पढ़नेंमें (च) तथा (यज्ञेषु) यज्ञ (तपःसु) तप और (दानेषु) दानादिके करनेमें (यत्) जो (पुण्यफलम्) पुण्यफल

(प्रदिष्टम्) कहा है (तत्) उस (सर्वम्) सबको (एव) निःसन्देह मुझ में (अत्येति) त्याग कर वेदों से आगे वाला ज्ञान जानकर शस्त्र विधि अनुसार साधना करता है (च) तथा (आद्यम्) अन्त समय में पूर्ण परमात्मा के (परम्,स्थानम्) उत्तम लोक–सतलोक को (उपैति) प्राप्त होता है। (28)

केवल हिन्दी अनुवाद : साधक इस पूर्वोक्त रहस्य को तत्वसे जानकर वेदोंके पढ़नेंमें तथा यज्ञ तप और दानादिके करनेमें जो पुण्यफल कहा है उस सबको निःसन्देह मुझ में त्याग कर वेदों से आगे वाला ज्ञान जानकर शास्त्र विधि अनुसार साधना करता है तथा अन्त समय में पूर्ण परमात्मा के उत्तम लोक-सतलोक को प्राप्त होता है। (28)

(इति अध्याय आठवाँ)

❑❑❑

''श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 18 के कुछ श्लोक''

अध्याय 18 का श्लोक 46

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः। ४६।

यतः, प्रवृत्तिः, भूतानाम्, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य, सिद्धिं, विन्दति, मानवः।।46।।

अनुवाद : (यतः) जिस परमेश्वरसे (भूतानाम्) सम्पूर्ण प्राणियोंकी (प्रवृतिः) उत्पत्ति हुई है और (येन) जिससे (इदम्) यह (तम्) माया रूप (सर्वम्) समस्त जगत् (ततम्) व्याप्त है उस परमेश्वरकी (स्वकर्मणा) अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा अर्थात् हठ योग न करके सांसारिक कार्य करता हुआ (अभ्यर्च्य) पूजा करके (मानवः) मनुष्य (सिद्धिम्) सिद्धिको (विन्दति) प्राप्त हो जाता है। (46)

केवल हिन्दी अनुवाद : जिस परमेश्वरसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी उत्पत्ति हुई है और जिससे यह माया रूप समस्त जगत् व्याप्त है उस परमेश्वरकी अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा अर्थात् हठ योग न करके सांसारिक कार्य करता हुआ पूजा करके मनुष्य सिद्धिको प्राप्त हो जाता है। (46)

अध्याय 18 का श्लोक 61

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया। ६१।

ईश्वरः, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,
भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया।।61।।

अनुवाद : (अर्जुन) हे अर्जुन! (यन्त्रारूढानि) शरीररूप यन्त्रमें आरूढ़ हुए (सर्वभूतानि) सम्पूर्ण प्राणियोंको (ईश्वरः) अन्तर्यामी ईश्वर (मायया) अपनी मायासे उनके कर्मोंके अनुसार (भ्रामयन्) भ्रमण करवाता हुआ (सर्वभूतानाम्) सब प्राणियोंके (हृद्देशे) हृदयमें (तिष्ठति) स्थित है। (61)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! शरीररूप यन्त्रमें आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियोंको अन्तर्यामी ईश्वर अपनी मायासे उनके कर्मोंके अनुसार भ्रमण करवाता हुआ सब प्राणियोंके हृदयमें स्थित है। (61)

अध्याय 18 का श्लोक 62

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्। ६२।

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,
तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम्।।62।।

अनुवाद : (भारत) हे भारत! तू (सर्वभावेन) सब प्रकारसे (तम्) उस परमेश्वरकी (एव) ही (शरणम्) शरणमें (गच्छ) जा। (तत्प्रसादात्) उस परमात्माकी कृपा से ही तू (पराम्) परम (शान्तिम्) शान्तिको तथा (शाश्वतम्) सदा रहने वाला सत (स्थानम्) स्थान/धाम/लोक को (प्राप्स्यसि) प्राप्त होगा। (62)

केवल हिन्दी अनुवाद : हे भारत! तू सब प्रकारसे उस परमेश्वरकी ही शरणमें (गच्छ) जा।

उस परमात्माकी कृपा से ही तू परम शान्तिको तथा सदा रहने वाला सत स्थान/धाम/लोक को प्राप्त होगा। (62)

अध्याय 18 का श्लोक 63

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु।६३।

इति, ते, ज्ञानम्, आख्यातम्, गुह्यात्, गुह्यतरम्, मया,
विमृश्य, एतत्, अशेषेण, यथा, इच्छसि, तथा, कुरु।।63।।

अनुवाद : (इति) इस प्रकार (गुह्यात्) गोपनीयसे (गुह्यतरम्) अति गोपनीय (ज्ञानम्) ज्ञान (मया) मैंने (ते) तुझसे (आख्यातम्) कह दिया (एतत्) इस रहस्ययुक्त ज्ञानको (अशेषेण) पूर्णतया (विमृश्य) भलीभाँति विचारकर (यथा) जैसे (इच्छसि) चाहता है (तथा) वैसे ही (कुरु) कर। (63)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस प्रकार गोपनीयसे अति गोपनीय ज्ञान मैंने तुझसे कह दिया इस रहस्ययुक्त ज्ञानको पूर्णतया भलीभाँति विचारकर जैसे चाहता है वैसे ही कर। (63)

अध्याय 18 का श्लोक 64

सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम्।६४।

सर्वगुह्यतमम्, भूयः, श्रृणु, मे, परमम्, वचः,
इष्टः, असि, मे, दृढम्, इति, ततः, वक्ष्यामि, ते, हितम्।।64।।

अनुवाद : (सर्वगुह्यतमम्) सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय (मे) मेरे (परमम्) परम रहस्ययुक्त (हितम्) हितकारक (वचः) वचन (ते) तुझे (भूयः) फिर (वक्ष्यामि) कहूँगा (ततः) इसे (श्रृणु) सुन (इति) यह पूर्ण ब्रह्म (मे) मेरा (दृढम्) पक्का निश्चित (इष्टः) पूज्यदेव (असि) है। (64)

केवल हिन्दी अनुवाद : सम्पूर्ण गोपनीयोंसे अति गोपनीय मेरे परम रहस्ययुक्त हितकारक वचन तुझे फिर कहूँगा इसे सुन यह पूर्ण ब्रह्म मेरा पक्का निश्चित पूज्यदेव है। (64)

अध्याय 18 का श्लोक 65

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे।६५।

मन्मनाः, भव, मद्भक्तः, मद्याजी, माम्, नमस्कुरु,
माम्, एव, एष्यसि, सत्यम्, ते, प्रतिजाने, प्रियः, असि, मे।।65।।

अनुवाद : (मन्मनाः) एक मनवाला (मद्भक्तः) मेरा मतानुसार भक्त (भव) हो (मद्याजी) मतानुसार मेरा पूजन करनेवाला (माम्) मुझको (नमस्कुरु) प्रणाम कर। (माम्) मुझे (एव) ही (एष्यसि) प्राप्त होगा (ते) तुझसे (सत्यम्) सत्य (प्रतिजाने) प्रतिज्ञा करता हूँ (मे) मेरा (प्रियः) अत्यन्त प्रिय (असि) है। (65)

केवल हिन्दी अनुवाद : एक मनवाला मेरा मतानुसार भक्त हो मतानुसार मेरा पूजन करनेवाला मुझको प्रणाम कर। मुझे ही प्राप्त होगा तुझसे सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ मेरा अत्यन्त प्रिय है। (65)

अध्याय 18 का श्लोक 66

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।६६।

सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, व्रज,
अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः ।।66।।

अनुवाद : (माम्) मेरी (सर्वधर्मान्) सम्पूर्ण पूजाओंको (माम्) मुझ में (परित्यज्य) त्यागकर तू केवल (एकम्) एक उस पूर्ण परमात्मा की (शरणम्) शरणमें (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तुझे (सर्वपापेभ्यः) सम्पूर्ण पापोंसे (मोक्षयिष्यामि) छुड़वा दूँगा तू (मा,शुचः) शोक मत कर। (66)

केवल हिन्दी अनुवाद : मेरी सम्पूर्ण पूजाओंको मुझ में त्यागकर तू केवल एक उस पूर्ण परमात्मा की शरणमें जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे छुड़वा दूँगा तू शोक मत कर। (66)

❑❑❑

''श्री मद् भगवत् गीता अध्याय 15 के कुछ श्लोक''

अध्याय 15 का श्लोक 1

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।१।

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित्।।1।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वृक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे–छोटे हिस्से या टहनियाँ व (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वृक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

केवल हिन्दी अनुवाद : ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला अविनाशी विस्तारित पीपल का वृक्ष है, जिसके जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे-छोटे हिस्से या टहनियाँ व पत्ते कहे हैं उस संसाररूप वृक्षको जो इसे विस्तार से जानता है वह पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है। (1)

अध्याय 15 का श्लोक 2

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ।२।

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः,
विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके।।2।।

अनुवाद : (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मोंमें बाँधने की (मूलानि) जड़ें मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक – स्वर्ग,–नरक लोक पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं। (2)

केवल हिन्दी अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी फैली हुई विकार- काम क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, रूपी कोपल डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव जीवको कर्मोंमें बाँधने की जड़ें मुख्य कारण हैं तथा मनुष्यलोक - स्वर्ग,नरक लोक पृथ्वी लोक में नीचे - नरक, चौरासी लाख जूनियों में ऊपर स्वर्ग लोक आदि में व्यवस्थित किए हुए हैं। (2)

अध्याय 15 का श्लोक 3

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा। ३।

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा ।।3 ।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) नहीं (अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले (असङ्गशस्त्रेण) निर्लेप तत्वज्ञान रूपी (दृढेन्) दृढ़ शस्त्र से अर्थात् निर्मल तत्वज्ञान के द्वारा (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक जानकर। (3)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस रचना का नहीं शुरूवात तथा नहीं अन्त है नहीं वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है इस अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला मजबूत स्वरूपवाले निर्लेप तत्वज्ञान रूपी दृढ़ शस्त्र से अर्थात् निर्मल तत्वज्ञान के द्वारा काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक जानकर। (3)

अध्याय 15 का श्लोक 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं-
यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी। ४।

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी ।।4 ।।

अनुवाद : {जब गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 में वर्णित तत्वदर्शी संत मिल जाए} (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमेश्वर के (पदम्) परम पद अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भलीभाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गये हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसारमें नहीं आते (च) और (यतः) जिस परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृत्तिः) रचना–सृष्टी (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) उस (आद्यम्)सनातन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ। पूर्ण निश्चय के साथ उसी परमात्मा का भजन करना चाहिए। (4)

केवल हिन्दी अनुवाद : {जब गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 में वर्णित तत्वदर्शी संत मिल जाए} इसके पश्चात् उस परमेश्वर के परम पद अर्थात् सतलोक को भलीभाँति खोजना चाहिए जिसमें गये हुए साधक फिर लौटकर संसारमें नहीं आते और जिस परम अक्षर ब्रह्म

से आदि रचना-सृष्टी उत्पन्न हुई है उस सनातन पूर्ण परमात्मा की ही मैं शरण में हूँ। पूर्ण निश्चय के साथ उसी परमात्मा का भजन करना चाहिए। (4)

अध्याय 15 का श्लोक 16

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते। १६।

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ।।16 ।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (पुरुषौ) भगवान हैं (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) भूतप्राणियोंके शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है। (16)

केवल हिन्दी अनुवाद : इस संसारमें दो प्रकारके भगवान हैं नाशवान् और अविनाशी इसी प्रकार इन दोनों लोकों में सम्पूर्ण भूतप्राणियोंके शरीर तो नाशवान् और जीवात्मा अविनाशी कहा जाता है। (16)

अध्याय 15 का श्लोक 17

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः। १७।

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ।।17 ।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) भगवान (तु) तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरुष से (अन्यः) अन्य ही है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकोंमें (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) परमेश्वर (परमात्मा) परमात्मा (इति) इस प्रकार (उदाहृतः) कहा गया है। यह प्रमाण गीता अध्याय 13 श्लोक 22 में भी है। (17)

केवल हिन्दी अनुवाद : उत्तम भगवान तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरुष से अन्य ही है जो तीनों लोकोंमें प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है एवं अविनाशी परमेश्वर परमात्मा इस प्रकार कहा गया है। यह प्रमाण गीता अध्याय 13 श्लोक 22 में भी है। (17)

अध्याय 15 का श्लोक 18

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः। १८।

यस्मात्, क्षरम्, अतीतः, अहम्, अक्षरात्, अपि, च, उत्तमः,
अतः, अस्मि, लोके, वेदे, च, प्रथितः, पुरुषोत्तमः ।।18 ।।

अनुवाद : (यस्मात्) क्योंकि (अहम्) मैं (क्षरम्) नाशवान् स्थूल शरीर से तो सर्वथा (अतीतः) श्रेष्ठ हूँ (च) और (अक्षरात्) अविनाशी जीवात्मासे (अपि) भी (उत्तमः) उत्तम हूँ (च) और (अतः) इसलिये (लोके वेदे)लोक वेद में अर्थात् कहे सुने ज्ञान के आधार से वेदमें (पुरुषोत्तमः) श्रेष्ठ भगवान(प्रथितः) प्रसिद्ध (अस्मि) हूँ पवित्र गीता बोलने वाला ब्रह्म—क्षर पुरुष कह रहा है कि मैं तो लोक वेद में अर्थात् सुने—सुनाए

ज्ञान के आधार पर केवल मेरे इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों में ही श्रेष्ठ प्रभु प्रसिद्ध हूँ। वास्तव में पूर्ण परमात्मा तो कोई और ही है। जिसका विवरण श्लोक 17 में पूर्ण रूप से दिया है। (18)

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि मैं नाशवान् स्थूल शरीर से तो सर्वथा श्रेष्ठ हूँ और अविनाशी जीवात्मासे भी उत्तम हूँ और इसलिये लोक वेद में अर्थात् कहे सुने ज्ञान के आधार से श्रेष्ठ भगवान प्रसिद्ध हूँ पवित्र गीता बोलने वाला ब्रह्म (क्षर पुरुष) कह रहा है कि मैं तो लोक वेद में अर्थात् सुने-सुनाए ज्ञान के आधार से केवल मेरे इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों में ही श्रेष्ठ प्रभु प्रसिद्ध हूँ। वास्तव में पूर्ण परमात्मा तो कोई और ही है। जिसका विवरण श्लोक 17 में पूर्ण रूप से दिया है। (18)

विशेष विचार :- उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं बोला, यह तो श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश होकर ब्रह्म (काल अर्थात् ज्योति निरंजन) ने बोला था।

❑❑❑

सद्ग्रन्थ साहेब से वाणी (धर्मदास से सम्बन्धित)

धर जिंदे का रूप, सैल वृन्दावन कीनी। तहां मिले धर्मदास करत हैं बहुत आधीनी।।940।।
बौहरंगी बरियाम, काम निहकामी सोई। धरि सतगुरु का रूप, धनी उतरे हैं लोई।।941।।
परम उजागर ज्ञान, ध्यान बौहरंगी बानां। तहां मिले धर्मदास, अचार बिचार दिवानां।।942।।
कौन तुम्हारी जाति, कहां सैं आये स्वामी। पूछैं पुरूष कबीर, धनी साहिब निहकामी।।943।।
बोलैं धनी कबीर, सुनौं वैष्णव वैरागी। कौन तुम्हारा नाम, गाम कहिये बड़भागी।।946।।
कौन कौंम कुल जाति, कहां को गवन किया है। कौन तुम्हारी रहसि, किन्हें तुम नाम दिया है।।947।।
कौन तुम्हारा ज्ञान ध्यान, सुमरण है भाई। कौन पुरूषकी सेव, कहां समाधि लगाई।।948।।
को आसन को गुफा, के भ्रमत रहौ सदाई। शालिग सेवन कीन, बहुत अति भार उठाई।।949।।
झोली झंडा धूप दीप, तुम अधिक आचारी। बोलै धनी कबीर, भेद कहियौं ब्रह्मचारी।।950।।
दोहा–हम कूं पार लंघावही, पर उजागर रूप। जिंद कहे धर्मदास सैं, तुम हो मुक्ति स्वरूप।।951।।
दोहा–सुन जिंदा मम ज्ञान कूं, अधिक अचार विचार।हमरी करनी जो करै, उतरे भवजल पार।।945।।
हम वैष्णव बैराग, धर्म मैं सदा रहाई। सुद्र न बैठें संग, कलप ऐसी मन मांही।।944।।
बांदौगढ़ है गाम, नाम धर्मदास कहीजै। वैश्य कुली कुल जाति, शुद्र नहीं बात सुनीजै।।952।।
सिर्गुण ज्ञान स्वरूप, ध्यान शालिग की सेवा। मलागीर छिरकंत, संत सब पुजै देवा।।943।।
अठसठि तीरथ न्हांन, ध्यान करि करि हम आये। पुजै शालिगराम, तिलक गलि माल चढाये।।954।।
धूप दीप अधिकार, आरती करैं हमेशा। राम कृष्ण का जाप, रटत हैं शंकर शेषा।।955।।
नेम धर्म सैं नेह, सनेह दुनियां से नांहीं। आरूढं बैराग, औरकी मानौं नांहीं।956।।
दोहा–सुनि जिंदे मम धर्म कूं, वैष्णव रूप हमार। अठसठि तीरथ हम किये, चीन्हा सिरजनहार।।957।।
राम कृष्ण कहां रहै, नगर और कौन कहावै। ये जड़वत हैं देव, तास क्यौं घंट बजावै।।959।।
सुनहि गुनहि नहीं बात, धात पत्थर के स्वामी। कहां भरमें धर्मदास, चीन्ह निजपद निहकामी।।960।।
आवत जात नकोय,हम ही अलख अविनाशी सांई।रहत सकल सरबंग, बोलि हूँ जहाँ तहाँ सब मांही।।961।।
बोलत घट घट पूर्ण ब्रह्म, धर्म आदू नहीं जाना। चिदानंदकौं चीन्ह, डारि पत्थर पाषाणा।।962।।
दोहा–राम कृष्ण कोट्यौं गये, धनी एक का एक। जिंद कहै धर्मदाससैं, बूझौं ज्ञान विवेक।।963।।
जठर अग्नि में राखि, साखि सुनियौं धर्मदासा। तजि पत्थर पाषान, छाडि यह बोदी आशा।।968।।
दोहा–अनंत कोटि ब्रह्मांड रचि, सब तजि रहै नियार।जिंद कहैं धर्मदाससूं, जाका करो बिचार।।969।।
जाका करौ बिचार, सकल जिन सृष्टी रचाई। वार पार नहीं कोय, बोलता सब घट माहीं।।970।।
बोलत है धर्मदास, सुनौं जिंदे मम बाणी। कौन तुम्हारी जाति, कहांसैं आये प्राणी।।976।।
ये अचरज की बात, कही तैं मोसैं लीला। नामा के पीया दूध, पत्थरसैं करी करीला।।977।।
नरसीला नित नाच, पत्थर के आगै रहते। जाकी हूंडी झालि, सांवल जो शाह कहंते।।978।।
पत्थर सेयै रैंदास, दूध जिन बेगि पिलाया। सुनौ जिंद जगदीश, कहां तुम ज्ञान सुनाया।।989।।
परमेश्वर प्रवानि, पत्थर नहीं कहिये जिंदा। नामा की छांनि छिवाई, दइ देखो सर संधा।।980।।
दोहा–सिरगुण सेवा सार है, निरगुण सैं नहीं नेह। सुन जिंदे जगदीश तूं, हम शिक्षा क्या देह।।981।।
बौलै जिंद कबीर, सुनौ बाणी धर्मदासा। हम खालिक हम खलक, सकल हमरा प्रकाशा।।982।।
हमहीं चंद्र अरू सूर, हमही पानी और पवना। हमही धरणि आकाश, रहै हम चौदह भवना।।983।।
दोहा–हम साहिब सत्यपुरूष हैं, यह सब रूप हमार। जिंद कहै धर्मदाससैं, शब्द सत्य घनसार।।988।।

बोलत हैं धर्मदास, सुनौं सरबंगी देवा। देखत पिण्ड अरू प्राण, कहौ तुम अलख अभेवा।।989।।
नाद बिंद की देह, शरीर है प्राण तुम्हारै। तुम बोलत बड़ बात, नहीं आवत दिल म्हारै।।990।।
खान पान अस्थान, देह में बोलत दीशं। कैसे अलख स्वरूप, भेद कहियो जगदीशं।।991।।
कैसैं चंद अरू सूर, नदी गिरिवर पाषानां। कैसैं पानी पवन, धरनि पृथ्वी असमानां।।992।।
कैसैं सृष्टी संजोग, बिजोग करैं किस भांती। कौन कला करतार, कौन विधि अविगत नांती।।996।।
दोहा–कैसैं घटि घटि रम रहे, किस विधि रहौ नियार। कैसैं धरती पर चलौ, कैसैं अधर अधार।।994।।
बोलत जिंद अबंध, सकल घट साहिब सोई। निर्वानी निजरूप, सकल सें न्यारा होई।।995।।
हमही राम रहीम, करीम कर्म कर्तारा। हमही बांधे सेत, चढे संग पदम अठारा।।996।।
हमही रावण मारा, लंक पर करी चढाई। हमही दशशिर मारि, देवता बंधि छुटाई।।997।।
दोहा–बिंदै धरती पग धरौं, नादैं सृष्टी संजोग। पद अमान न्यारा रहूं, इस विधि दुनी बिजोग।।1000।।
बोलत है धर्मदास, जिंद जननी को थारी। कौंन पिता परवेश, कौन गति रहनि अधारी।।1001।।
क्यौं उतरे कलि मांहि, कहौ सभ भेद बिचारा। तुम निज पूरण ब्रह्म, कहां अन्न पान अहारा।।1002।।
कौन कुली कर्तार, कौन है बंश बिनांनी। शब्द रूप सर्बंग, कहांसैं बोलत बानी।।1003।।
कौन देह सनेह, नयन मुख नासा नेहा। तुम दीखत हौ मनुष्य, कौन विधि जिंद बिदेहा।।1004।।
कौन तुम्हारा धाम, नाम सुमरन क्या कहिये। तुम व्यापक कलिमांहि, कहौ कहां साहिब रहिये।।1005।।
हम उतरे तुम काज, शुन्य सैं किया पयाना। शब्द रूप धरि देह, समझि बानी सुर ज्ञाना।।1009।।
नहीं नाद नहीं बिंद, नहीं सनायु देह अकारं। घुड़िला ज्ञान अमान, हंस हुकमी असवारं।।1010।।
निरखि परखि करि देख, पंच भौतिक हमरैं नहीं काया।हम उतरे तुम काज, नहीं कछु मोह न माया।।1011।।
दोहा–गगन शून्य में धाम है, अविगत नगर नरेश। अगम पंथ कोई ना लखै, खोजत शंकर शेष।।1012।।
बोलत है धर्मदास, सुनौं सतगुरु सैलानी। निरखि परखि सैं न्यार, भेद कछु अकल अमानी।।1013।।
सुन जिंदे जगदीश, शीश पग चरण तुम्हारे। पौहमी आसन साज, कहौ तुम अधरि अधारै।।1014।।
जूंनी जीव दम श्वास, उश्वास कहौ क्यौं स्वामी। नहीं जो माया मोह, तौ क्यौं उतरे घननामी।।1015।।
तुम सुखसागर रूप, अनूप जो अधर रहाई। नहीं पिंड नहीं प्राण, तौ कित सैं बोलैं गुसांई।।1016।।
अन्नजल करौं अहार, ब्यौहार ब्रह्म की बातां। निराकार निर्मूल, तुम्हरै दीखै तन गाता।।1017।।
दोहा–सुंन गगन मैं हम बसैं, पृथ्वी आसन थीर। धर्मदास धोखा दिलं, छानौं नीर अरू षीर।।1018।।
हम हैं शब्द स्वरूप, अनूप अनंत अजूंनी। हमरै पिण्ड अरू प्राण, हमें काया मधि मौनी।।1019।।
दोहा–ना मैं जन्मूं ना मरूं, नहीं आबूं नहीं जांहि। शब्द विहंगम शून्य मैं, ना मेरै धूप न छांहि।।1024।।

त.र.–बोलै जिंद सुनौं धर्मदासा, हमरै पिण्ड प्राण नहीं श्वासा।
गर्भ योनिमैं हम नहीं आये, मादर पिदर न जननी जाये।।
शब्द स्वरूपी रूप हमारा, क्या दिखलावै अचार विचारा।
ब्राह्मण सहंस हत्या जो होई, जल स्नान करत हो सोई।
सतरि ब्राह्मण की है हत्या, जो चौका तुम देहौ नित्या।।
चौके करमी कीट मर जांही, सूक्ष्म जीव सो दरसैं नाहीं।।
हरी भांति पृथ्वी कै रंगा, अनंत कोटि जीव उड़ैं पतंगा।
पृथ्वी ऊपर पग जो धारै, कोटि जीव एक दिन में मारै।
ठाकुर घंटा पौंन झकोरैं, कोटिं जीव सूक्ष्म शिर तोरैं।

ताल मृदंग अरू झालर बाजैं, कोटि जीव सूक्ष्म तहां साजैं।।
धूप दीप और अर्पण अंगा, अनंत कोटि जीव जरैं बिहंगा।
ऐसे खूंनी ठाकुर थारे, जो दीदार करै को म्हारे।।
स्वामी सेवक बूड़त बेरा, मार परै दरगह जम जेरा।
ऐसा ज्ञान अचंभ सुनाऊं, पूजा अर्पण सबै छुड़ाऊं।।
झाड़ा लंघी करत हमेशा, सूक्ष्म जीव होत हैं नेशा।
खान पान में दमन पिरानी, कैसैं पावैं मुक्ति निशानी।।
कोटि जीव जल अचमन प्रानी, यामें शंकि सुबह नहीं जानी।
कहौ कैसैं विधि करौ अचारं, त्रिलोकी का तुम शिर भारं।।
रापति सूक्ष्म एकही अंगा, अल्प जीव जूंनी जत संगा।
योह जतसंग अभंगा होई, कहौ अचार सधै कहां लोई।।
आत्म जीव हतै जो प्राणी, सो कहां पावै मुक्ति निशानी।
तारक मंत्र कोटि जपाहीं, वाह जीव हत्या उतरै नाहीं।।
करै आरती संजम सेवा, या अपराध न उतरै देवा।।
उरध पींघ जो झूलै भेषा, जिनका कदे न सुलझै लेखा।।
दोहा–ऐसा ज्ञान सुनाय हूं, पौहमी धरै न पांव।
गरीबदास जिंदा कहैं, धम्रदास उर भाव।।
झरणै बैठि जलाबिंब धारा, संखौं जीव करत प्रतिहारा।
पंच अग्नि जो धूप धियाना, जन्म तीसरै शूकर स्वाना।।
बजर दंड करि दमकूं तोड़ै, वहां तो जीव मरत हैं कोड़ै।
निसवासर जो धूनी फूकैं, तामैं जीव असंखौ सूकैं।।
तीरथ बाट चलै जो प्राणी, सो तो जन्म जन्म उरझानी।
जाय तीरथ पर करि हैं दानं, दान देत जीव मरैं अरबानं।।
परबी लेन जात है दुनियां, हमारा ज्ञान किनौं नहीं सुनियां।
गोते गोते परिहै भारं, गंगा जमना गया किदारं।।
लोहागिर पौहकरकी आशा, अनंत कोटि जीव होत बिनाशा।
पाती तोरि चढावैं अंधे, जिन के कदे न कटि है फंदे।।
गंगा काशी गया प्रियागु, बहुरि जाय द्वारा लै दागु।
हरि पैड़ी हरिद्वार हमेशा, ऐसा ज्ञान देत उपदेशा।।
जा गरूवाकी गरदन भारं, जो जीव भरमावै अचार बिचारं।
पिण्ड प्रदान मुक्ति नहीं होई, भूत जूनि छूटत है लोई।।
दोहा–भूत योनि जहां छूटि है, पिण्ड प्रदान करंत।
गरीबदास जिंदा कहै, नहीं मिलैं भगवंत।।
जगन्नाथ जो दर्शन जांहीं, काली शिला भवन कै मांहीं।
वह जगदीश न पावै किसही, जगन्नाथ जो घट घट बसही।।
गोमति और गोदावरी न्हांहीं, अठसठ तीरथ का फल पांही।
नहीं पूजै जिन संत सुजाना, जाके मिथ्या सब अस्नाना।।

कोटि यज्ञ अश्वमेघ करांही, संत चरण रज नांहितुलांही।
कोटि गऊ नित दान जुदेहीं, एक पलक संतन परबीलेही।।
धूप दीप और जोग जुगंता, कोटि ज्ञान क्यौं कथहीं मिथ्या।
जिन जान्या नहीं पदका भेऊ, जाके संत न रहे बटेऊ।।
तीरथ ब्रत करै जो प्रानी, तिनकी छूटत है नहीं खानी।
चौदश नौमी द्वादश बरतं, जिनसै जम जौंरा नहीं डरतं।।
करैं एकादशी संजम सोई, करवा चौथ गदहरी होई।
आठैं सातैं करैं कंदूरी, नीच चूहरे कै घर सूरी।।
दोहा–आन धर्म जो मन बसै, कोइ करो नर नार।
गरीबदास जिंदा कहै, सो जासी जमद्वार।।
कहे जो करूवा चौथि कहांनी, तास गदहरी निश्चय जानी।
दुर्गा देवी भैरव भूता, राति जगावै होय जो पूता।।
करै कढाही लपसी नारी, बूढैबंश ताहि घरबारी।
दुर्गाध्यान परै तिस बगरं, ता संगति बूड़ै सब नगरं।।
वेद कितेब न जाकौं पावैं, अठारा पुराण कथा नित गावैं।
नहीं वह पुरूष नहीं वह नारी, जाकौ खोज रहे त्रिपुरारी।।
शब्द स्वरूपी सब घट बोलै, प्रगट देखि नहीं वह ओलै।
सनक सनंदन ब्रह्मा थाके, अनंत कोटि शंकर पद भाखे।।
निर्णय किन्हें न कीन्या भाई, कोटि विष्णु गये दुनी रचाई।
कितसैं बीज पान फल मौरा, अनंत कोटि जहां बीज बिजौरा।।
चतुर्भुजी नहीं अष्ट अनादं, सहंस भुजा कोई जानै साधं।
शंख भुजा परि शंख समूलं, जाका उर्ध विमानं झूलं।।
शब्दै शब्द रहैगा भाई, दुनी सृष्टी सब परलो जाई।
चलसी कच्छ मच्छ कूरंभा, चलसी धौल धरणि अठखंभा।।
चलसी सुरग पाताल समूलं, चलसी चंद सूर दो फूलं।
जे आरंभ चलै धर्मदासा, पिण्ड प्राण चलसी घटश्वासा।।
चलै भिस्त बैकुंठ विशालं, चलसी धर्मराय जमशालं।
पानी पवन पृथ्वी नासा, शब्द रहैगा सुनि धर्मदासा।।
इंद्र कुबेर वरूण धर्मराजा, ब्रह्मा विष्णु ईश चलि साजा।
चलै आदि माया ब्रह्मज्ञानी, हम न चलै जो पद प्रवानी।।
क्षर-अक्षर रूप रहै नहीं कोई, जिन एती लीला समोई।
परम अक्षर है रूप हमारा, हम न चलै चलि है संसारा।।
(गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 वाला प्रमाण)
दोहा–अगम अनाहद अधर में, साकार निज नरेश।
गरीबदास जिंदा कहै, सुनौं धर्म उपदेश।।
धर्मदास बोलत है बानी, कौंन रूप पद कहां निशानी।
तुम जो अकथ कहांनी भाषी, तुमरै आगै तुमही साषी।।

योह अचरज है लीला स्वामी, मैं नहीं जानत हूं निजधामी।
कौन रूप पदका प्रवानं, दया करौं मुझ दीजै दानं।।
हम तो तीरथ ब्रत करांही, अगम धामकी कछु सुध नांही।
गर्भ जोनि में रहैं भुलाई, पद प्रतीति नहीं मोहि आई।।
हम तुम दोयकै एकमएका, सुन जिंदा मोहि कहौ विवेका।
गुण इन्द्री और प्राण समूलं, इनका कहौ कहां अस्थूलं।।
तुम जो बटकबीज कहिदीन्या, तुमरा ज्ञान हमौं नहीं चीन्या।
हमकौं चीन्ह न परही जिंदा, कैसे मिटै प्राण दुख दुन्दा।।
ऐसी कलप करौ गुरुराया, जैसे अंधरें लोचन पाया।
ज्यूं भूखैकौ भोजन भासै, क्षुध्या मिटिहै कलप तिरासै।।
जैसैं जल पीवत तिस जाई, प्राण सुखी होय तृप्ती पाई।
जैसे निर्धन कूं धन पावैं, ऐसैं सतगुरु कलप मिटावैं।।
कैसैं पिण्ड प्राण निस्तरहीं, यह गुण ख्याल परख नहीं परहीं।
तुम जो कहौ हम पद प्रवानी, हम कैसैं जानैं सहनानी।।
दोहा–धर्म कहैं सुन जिंद तुम, हम पाये दीदार।
गरीबदास नहीं कसर कुछ, उघरे मोक्षद्वार।।
तहां वहां लीन भये निरबांनी, मगन रूप साहिब सैलानी।
तहां वहां रोवत है धर्मनीनागर, कहां गये तुम सुख के सागर।।
हम जानैं तुम देह स्वरूपा, हमरी बुद्धि अंध गृह कूपा।
हमतो मनुष्यरूप तुम जान्या, सुनसतगुरु कहां कीन पियाना।।
तुम सतगुरु अविगत अधिकारी, मैं नहीं जानी लीला थारी।
तुम अविगत अविनाशी सांई, फिरि मोकूं कहां मिलौ गोसांई।।
जा पौंहचैं काशी अस्थाना, मौमन के घरि बुनि है ताना।
षटमास बीतै जदि भाई, तहां धर्मदास यज्ञ उपराई।।
बांदौगढ़ में यज्ञ आरंभा, तहां षटदर्शन अधि अचंभा।
यज्ञमांहि जगदीश न आये, धर्मदास ढूंढत कलपाये।।
अनंत भेष टुकड़े के आहारी, भेटै नहीं जिंद व्यौपारी।
तहां धर्मदास कलप जब कीनं, पलक बीच बैठे प्रबीनं।।
औही जिंदे का बदन शरीरं, बैठे कदम वृक्ष के तीरं।
चरण लिये चिंतामणि पाई, अधिक हेत सैं कंठ लगाई।।
अजब कुलाहल बोलत बानी, तुमै धर्मदास करौं प्रवानी।
तुम आये बांदौगढ स्थाना, तुम कारण हम कीन पयाना।।
अललपंख ज्यूं मारग मोरा, तामधि सुरति निरति का डोरा।
ऐसा अगम ज्ञान गोहराऊं, धर्मदास पद पदहिं समाऊं।।
गुप्त कलप तुम राखौं मोरी, देऊं मक्रतार की डोरी।
पद प्रवानि करूं धर्मदासा, गुप्त नाम ह्रदय प्रकाशा।।
हम काशी में रहैं हमेशं, मौमन घर तांना प्रवेशं।

भक्तिभाव लोकन कौ देही, जो कोई हमारी सिष बुद्धि लेही।
अजर करूं अनभै प्रकाशा, खोलि कपाट दिये धर्मदासा।
पद बिहंग निज मूल लखाया, सर्ब लोक एकै दरशाया।।
खुलै कपाट घाटघट मांही, शंखकिरण ज्योति झिलकांहीं।
सकल सृष्टी में देख्या जिंदा, जामन मरण कटे सब फंदा।।
दोहा—जिंद कहैं धर्मदास सैं, अभय दान तुझ दीन।
गरीबदास नहीं जूंनि जग, हुय अभय पद लीन।।

कबीर साहेब कहते हैं :-

मेरे साधो भाई, सब जग भूल्या पाया।।टेक।।
इसी भूल में ब्रह्मा भूल्या, जिसने वेद सरसाया।
वेद पढ़कर पंडित भूल्या, सार शब्द नहीं पाया।
इसी भूल में विष्णु भूल्या, जिसने वैष्णों धर्म चलाया।
कर्म काण्ड में बांध जीव को, चौरासी भरमाया।।
इसी भूल में शंकर भूल्या, जिसने भिक्षुख पंथ चलाया।
सिर पर जटा हाथ में खप्पर, घर—घर अलख जगाया।।
इसी भूल में मोहम्मद भूल्या, जिसने न्यारा धर्म बनाया।
परत्रिया संग फिरा भरमता, लिंग और मूछ कटाया।।
इसी भूल में भूल्या मछंदर, जिसने सिंगल द्वीप बसाया।
विषय वासना के बस हो कर, अपना योग नसाया।।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, हम युग—युग जीव चिताया।
जिसने जाना मर्म भूल का, वो फिर गर्भ नहीं आया।।

।।शब्द।। (ज्ञान सुनादे---------)

शब्द — ज्ञान सुना दे विधि बता दे, हो मेरा कल्याण, भक्त मैं अर्ज करूं।
धर्मदास जब नू बोला, अठसठ तीर्थ नहाऊँगा।
गीता जी का पाठ करत हूँ, इस विधि मुक्ति पाऊँगा।
राम—कृष्ण के गुण गाऊँगा, मिले स्वर्ग में अस्थान।।1।।
तीर्थ जल में कच्छ और मच्छा, जीव बहुत से रहते हैं।
उनकी मुक्ति ना होती वो, कष्ट बहुत सा सहते हैं।
सतयुग में राम—कृष्ण नहीं थे, तब किसका धरते ध्यान।।2।।
एकादशी का व्रत करत हूँ, जीव हिंसा कोए करता ना।
शिवलिंग पूजा गुरु की सेवा, किए बिना भी सरता ना।
शालिग्राम की पूजा करता, हर रोज सुबह और शाम।।3।।
व्रत करे से मुक्ति हो तो, अकाल पड़े क्यों मरते हैं।
शिवलिंग पूजा शालिग सेवा, अनजाने में करते हैं।
चेतन हो कर भूल रहे, हुए पत्थर से निफराम।4।।
तीर्थ बाट चले जो प्राणी, जीव बहुत से मारे है।

जल में सूक्ष्म जीव बहुत हैं, स्नान करत सिंघारै है।
चौका देवो हवन करो, होवै हिंसा बे अनुमान।।5।।
सात द्वीप नौऊं खण्ड, सपने जैसा खेल है।
तीन लोक और भुवन चतुर्दश, काल बलि की जेल है।
महाप्रलय में नष्ट हो जावै, फिर कहाँ करो विश्राम।।6।।
पाठ आरती धर्म दुवा से, खेत सँवारा जाता है।
सतनाम बीज जो बोवै, फल भक्ति का खाता है।
काल जीव को उलझाता है, देकर अपना ज्ञान।।7।।
इतनी कहकर साहेब कबीर, अंतर्ध्यान होया जी।
अपनी गलती जान धर्मदास, फूट–फूट कै रोया जी।
भूल में जीवन खोया जी, अब हो गया सच्चा ज्ञान।।8।।
पाखण्ड पूजा सबहीं छोड़ी, मन चाहा ना तीर्थ नहाने को।
वापिस घर को चल पड़ा, तज वृंदावन बरसाने को।
हे बन्दी छोड़ तेरे पाने को, अब खो दू अपनी जान।।9।।
रो–रो रूदन मचावन लागा, एक धर्म यज्ञ रचाई जी।
दीनदयाल दया के सागर, आकर सूरत दिखाई जी।
रामपाल मुक्ति तब पाई, जब मिले कबीर भगवान।।10।।

।।शब्द।। (भक्ति दान गुरु दीजियो----------)

भक्ति दान गुरु दीजियो देवन के देवा हो।
जन्म पाया विसरो नहीं करहूं पद सेवा हो।।टेक।।
तीर्थ व्रत मैं ना करूं, ना देवल पूजा हो।
मनसा वाचा कर्मणा, मेरे और न दूजा हो।।1।।
अष्ट सिद्धि और नौ निद्धि, बैकुण्ठ का वासा हो।
सो मैं तुमसे ना मांगता, सब थोथरी आशा हो।।2।।
सुख सम्पति परिवार, धन और सुन्दर नारी हो।
सुपने मैं इच्छा ना करूं, गुरु आन तुम्हारी हो।।3।।
धर्मदास की विनती, समरथ चित दीजै हो।
आवन जावन निवार कर, अपना कर लीजै हो।।4।।

।।ऋग्वेद के मन्त्र।।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।
अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

अनुवाद – (उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (इन्द्राय) सर्व सुखदायक (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (पातवे) वृद्धि के लिए (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हो अर्थात् कुँवारी (धेनवः) गाय द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है उस समय कुँवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 16

स्वायुधः सोतृभिः पृयमानोभयर्ष गुह्यं चारु नाम।

अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम।।

अनुवाद :– हे परमेश्वर! आप (स्वायुधः) अपने तत्व ज्ञान रूपी शस्त्र युक्त हैं। उस अपने तत्व ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा (पूयमानः) मवाद रूपी अज्ञान को नष्ट करें तथा (सोतृभिः) अपने उपासक को अपने (गृह्यम्) गुप्त (चारु) सुखदाई श्रेष्ठ (नाम) नाम व मन्त्र का (अभ्यर्ष) ज्ञान कराऐं (सोमदेव) हे अमर परमेश्वर आप के तत्व ज्ञान की (गा) लोकोक्ति गान की (श्रवस्याभि) कानों को अतिप्रिय लगने वाली विश्रुति (वायुमभि) प्राणा अर्थात् जीवनदायीनि (वाजम् अभि) शुद्ध घी जैसी श्रेष्ठ (सप्तिरिव) घोड़े जैसी तिव्रगामी तथा बलशाली है अर्थात् आप के द्वारा दिया गया तत्व ज्ञान जो कविताओं, लोकोक्तियों में है वह मोक्ष दायक है उस अपने यर्थाथ ज्ञान व वास्तविक अपने नाम का ज्ञान कराऐं।

भावार्थ :- इस मन्त्र 16 में प्रार्थना की गई है कि अमर प्रभु का वास्तविक नाम क्या है तथा तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटे अर्थात् अपना वास्तविक नाम व तत्वज्ञान कराऐ। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में कहा है कि संसार रूपी वृक्ष के विषय में जो सर्वांग सहित जानता है वह तत्वदर्शी सन्त है। उस तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर उस परमेश्वर के परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में नहीं आते। गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि मैं भी उसी की शरण हूँ। ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में किए प्रश्न का उत्तर निम्न श्लोक में दिया है कहा है कि उस अमर पुरूष का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17

शिशुम् जज्ञानम् हर्य तम् मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निमरूतः गणेन।

कविर्गीर्भि काव्येना कविर् सन्त् सोमः पवित्रम् अत्येति रेभन्।।

अनुवाद – पूर्ण परमात्मा (हर्य शिशुम्) विलक्षण मनुष्य के बच्चे के रूप में (जज्ञानम्) जान बूझ कर प्रकट होता है तथा अपने तत्वज्ञान को (तम्) उस समय (मृजन्ति) निर्मलता के साथ (शुम्भन्ति) उच्चारण करता है। (वह्नि) प्रभु प्राप्ति की लगी विरह अग्नि वाले (मरुतः) वायु की तरह शीतल भक्त (गणेन) समूह के लिए (काव्येना) कविताओं द्वारा कवित्व से (पवित्रम् अत्येति) अत्यधिक वाणी निर्मलता के साथ (कविर गीर्भि) कविर वाणी अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (रेभन्) ऊंचे स्वर से सम्बोधन करके बोलता है, (कविर् सन्त् सोमः) वह अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष ही संत अर्थात् ऋषि रूप में स्वयं कविर्देव ही होता है। परन्तु उस परमात्मा को न पहचान कर कवि कहने लग जाते हैं।

भावार्थ - ऋग्वेद मंडल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 में वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा के वास्तविक नाम का ज्ञान कराऐं तथा मन्त्र 17 में उस परमात्मा का नाम व परिपूर्ण विवरण नाम सहित बताया है कि पूर्ण परमात्मा विलक्षण मनुष्य के बच्चे के रूप में प्रकट होकर कविर्देव अपने वास्तविक नाम तथा ज्ञान को अपनी कबीर बाणी के द्वारा निर्मल ज्ञान अपने हंसात्माओं अर्थात् पुण्यात्मा अनुयाईयों को कविताओं, लोकोक्तियों के द्वारा सम्बोधन करके अर्थात् उच्चारण करके वर्णन करता है। उस पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव है जो उपरोक्त ज्ञान देता है वह स्वयं सतपुरुष कबीर ही होता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 18

ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्राणीथः पदवीः कवीनाम्।
तृतीयम् धाम महिषः सिषा सन्त् सोमः विराजमानु राजति स्टुप्।।

अनुवाद – वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि (य) जो पूर्ण परमात्मा विलक्षण बच्चे के रूप में आकर (कवीनाम्) प्रसिद्ध कवियों की (पदवीः) उपाधी प्राप्त करके अर्थात् एक संत या ऋषि की भूमिका करता है उस (ऋषिकृत्) संत रूप में प्रकट हुए प्रभु द्वारा रची (सहस्राणीथः) हजारों वाणी (ऋषिमना) संत स्वभाव वाले व्यक्तियों अर्थात् भक्तों के लिए (स्वर्षाः) स्वर्ग तुल्य आनन्द दायक होती हैं। (सन्त् सोम) वह अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष (तृतीया) तीसरे (धाम) मुक्ति लोक अर्थात् सत्यलोक की (महिषः) सुदृढ़ पृथ्वी को (सिषा) स्थापित करके (अनु) पश्चात् मानव सदृश संत रूप में (स्टुप्) गुबंद में उच्चे टिले जैसे सिंहासन पर (विराजमनु राजति) उज्जवल स्थूल आकार में अर्थात् मानव सदृश तेजोमय शरीर में विराजमान है।

भावार्थ - मंत्र 17 में कहा है कि जिस परमेश्वर का वास्तविक नाम कविर्देव है वह कविर्देव शिशु रूप धारण कर लेता है। लीला करता हुआ बड़ा होता है। कविताओं द्वारा तत्वज्ञान वर्णन करने के कारण कवि की पदवी प्राप्त करता है अर्थात् उसे कवि कहने लग जाते हैं, वास्तव में वह पूर्ण परमात्मा कविर् ही है। उसके द्वारा रची अमृतवाणी कविर्गिरः अर्थात् कबीर वाणी (कविर्वाणी) कही जाती है, जो भक्तों के लिए स्वर्ग तुल्य सुखदाई होती है। वही परमात्मा तीसरे मुक्ति धाम अर्थात् सत्यलोक की स्थापना करके तेजोमय मानव सदृश शरीर में आकार में गुबंद में सिंहासन पर विराजमान है।

इस मंत्र में तीसरा धाम सतलोक को कहा है। जैसे एक ब्रह्म का लोक जो इक्कीस ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, दूसरा परब्रह्म का लोक जो सात संख ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, तीसरा परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का सतलोक है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 19

चमूसत् श्येनः शकुनः विभृत्वा गोबिन्दुः द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्।
अपामूर्मिः सचमानः समुदम् तुरीयम् धाम महिषः विवक्ति।।

अनुवाद – (च) तथा (मृषत्) पवित्र (गोविन्दुः) कामधेनु रूपी सर्व मनोकामना पूर्ण करने वाला पूर्ण परमात्मा कविर्देव (विभृत्वा) सर्व का पालन करने वाला है (श्येनः) सफेद रंग युक्त (शुकनः) शुभ लक्षण युक्त (चमूसत्)सर्वशक्तिमान है। (द्रप्सः) दही रूपी पूर्ण मुक्ति दाता (आयुधानि) सारंगपाणी प्रभु है। (सचमानः) वास्तविक (विभ्रत्) सर्व का पालन–पोषण करता है। (अपामूर्भिः) गहरे जल युक्त (समुद्रम्) सागर की तरह गहरा गम्भीर अर्थात् विशाल (तुरीयम्) चौथे (धाम) लोक अर्थात् अनामी लोक में (महिषः) उज्जवल सुदृढ़ पृथ्वी पर (विवक्ति) अलग स्थान पर भिन्न भी रहता है यह जानकारी कविर्देव स्वयं ही भिन्न–भिन्न करके विस्तार से देता है।

भावार्थ - मंत्र 18 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) तीसरे मुक्ति धाम अर्थात् सतलोक में रहता है। इस मंत्र 19 में कहा है कि अत्यधिक सफेद रंग वाला पूर्ण प्रभु जो कामधेनु की तरह सर्व मनोकामना पूर्ण करने वाला है, वही वास्तव में सर्व का पालन कर्ता है। वही कविर्देव जो मृतलोक में शिशु रूप धारकर आता है वही सारंगपाणी है तथा जैसे समुद्र सर्व जल का स्रोत है वैसे ही पूर्ण परमात्मा से सर्व की उत्पत्ति हुई है। वह पूर्ण प्रभु चौथे धाम अर्थात् अनामी लोक में रहता हैं, जैसे प्रथम सतलोक दूसरा अलख लोक, तीसरा अगम लोक, चौथा

अनामी लोक है। इसलिए इस मंत्र 19 में स्पष्ट किया है कि कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अनामी पुरुष रूप में चौथे धाम अर्थात् अनामी लोक में भी अन्य तेजोमय रूप धारण करके रहता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 20

मर्यः न शुभ्रस्तन्वम् मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्
वृषेव यूथा परिकोशम् अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः इरा विवेश

अनुवाद – पूर्ण परमात्मा कविर्देव जो चौथे धाम अर्थात् अनामी लोक में तथा तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक में रहता है वही परमात्मा (मर्यः) मनुष्य (न) जैसा नाश रहित अर्थात् अमर(मृजनः) निर्मल मुखमण्डल युक्त आकार में (अत्यः) बहुत (शुभ्रस्तन्वम्) विशाल श्वेत शरीर धारण करता हुआ ऊपर के लोकों में विद्यमान है तथा वहाँ से (सृत्वा) गति करके अर्थात् चलकर (न) जिसका किसी को पता नहीं चलता वही समरूप परमात्मा (इरा) पृथ्वी पर (विवेश) अन्य वेशभूषा अर्थात् भिन्न रूप (चम्वोः) धारण करके आता है। सतलोक तथा पृथ्वी लोक पर लीला करता है (यथा) बहुत बड़े समुह को वास्तविक(सनये) सनातन पूजा की (वृषेव) वर्षा करके (धनानाम्) उन रामनाम की कमाई से हुए धनियों को (कनिक्रदत्) मंद स्वर से अर्थात् स्वांस–उस्वांस से मन ही मन में उचारण करके पूजा करवाता है, जिससे असंख्य अनुयाईयों का पूरा संघ (परि कोशम्) पूर्व वाले सुख सागर रूप अमृत खजाने अर्थात् सत्यलोक को (अर्षन्) पूजा करके प्राप्त करता है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ऊपर तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक में रहता है तथा वही परमेश्वर अन्य मनुष्य रूप धारण करके चौथे धाम अर्थात् अनामी लोक में रहता है। वही परमात्मा वैसा ही मनुष्य वाला समरूप सुन्दर मुखमण्डल युक्त श्वेत शरीर युक्त आकार में यहाँ पृथ्वी लोक पर भी आता है तथा अपनी वास्तविक पूजा विधि का ज्ञान करवा कर बहुत सारे समूह को अर्थात् पूरे संघ को सत्यभक्ति के धनी बनाता है, असंख्य अनुयाईयों का पूरा संघ सत्य भक्ति की कमाई से पूर्व वाले सुखमय लोक पूर्ण मुक्ति के खजाने को अर्थात् सत्यलोक को साधना करके प्राप्त करता है।

"सद्ग्रन्थ साहेब से वाणी-स्वामी रामानन्द जी को सत्यलोक दर्शन"

सुनि बच्चा मैं स्वर्ग की कैसैं छांडौं रीति। गरीबदास गुदरी लगी, जनम जात है बीत।।486।।
च्यारि मुक्ति बैकुंठ मैं, जिन की मोरै चाह। गरीबदास घर अगम की, कैसैं पाऊं थाह।।487।।
हेम रूप जहाँ धरणि है, रतन जडे बौह शोभ। गरीबदास बैकुंठ कूं, तन मन हमरा लोभ।।488।।
शंख चक्र गदा पदम हैं, मोहन मदन मुरारि। गरीबदास मुरली बजै, सुर लोक दरबारि।।489।।
दूधौं की नदियां बगैं, सेत वृक्ष सुभान। गरीबदास मंदल मुक्ति, सुरगापुर अस्थान।।490।।
रतन जड़ाऊ मनुष्य हैं, गण गंधर्व सब देव। गरीबदास उस धाम की कैसैं छाडूं सेव।।491।।
ऋग यजुः साम अथर्वणं, गावैं चारौं वेद। गरीबदास घर अगम का, कैसैं जानो भेद।।492।।
च्यारि मुक्ति चितवन लगी, कैसैं बंचूं ताहि। गरीबदास गुप्तारगति, हमकूं द्यो समझाय।।493।।
सुरग लोक बैकुंठ है, यासैं परै न और। गरीबदास षट्शास्त्र, च्यारि बेदकी दौर।।494।।
च्यारि बेद गावैं तिसैं, सुरनर मुनि मिलाप। गरीबदास ध्रुव पोर जिस, मिटि गये तीनूं ताप।।495।।
प्रहलाद गये तिस लोककूं, सुरगा पुरी समूल। गरीबदास हरि भक्ति की, मैं बंचत हूँ धूल।।496।।
बिंद्रावनि गये तिस लोककूं, सुरगा पुरी समूल। गरीबदास उस मुक्ति कूं, कैसैं जाऊं भूल।।497।।
नारद ब्रह्मा तिसे रटैं, गावैं शेष गणेश। गरीबदास बैकुंठ सैं, और परै को देश।।498।।
सहंस अठासी जिस जपैं, और तेतीसौं सेव। गरीबदास जासैं परै, और कौन है देव।।499।।

सुनि स्वामी निज मूल गति, कहि समझाऊं तोहि।गरीबदास भगवान कूं, राख्या जगत समोहि।।500।।
तीनि लोक के जीव सब, विषय वास भरमाय। गरीबदास हमकूं जपैं, तिसकूं धाम दिखाय।।501।।
जो देखैगा धाम कूं, सो जानत है मुझ। गरीबदास तोसैं कहूं, सुनि गायत्री गुझ।।502।।
कृष्ण विष्णु भगवान कूं, जहड़ायें हैं जीव। गरीबदास त्रिलोक में ,काल कर्म शिर शीव।।503।।
सुनि स्वामी तोसैं कहूँ, अगम दीप की सैल। गरीबदास पूठे परे, पुस्तक लादे बैल।।504।।
पौहमी धरणि अकाश थंभ, चलसी चंदर सूर। गरीबदास रज बिरजकी, कहाँ रहैगी धूर।।505।।
तारायण त्रिलोक सब, चलसी इन्द्र कुबेर। गरीबदास सब जात हैं, सुरग पाताल सुमेर।।506।।
च्यारि मुक्ति बैकुठ बट, फना हुआ कई बार। गरीबदास अलप रूप मघ, क्या जानैं संसार।।507।।
कहौ स्वामी कित रहौगे, चौदा भुवन बिहंड। गरीबदास बीजक कह्या, चलत प्राण और पिंड।।508।।
सुन स्वामी एक शक्ति है, अरधंगी ॐकार। गरीबदास बीजक तहां, अनंत लोक सिंघार।।509।।
जैसेका तैसा रहै, परलो फना प्रान। गरीबदास उस शक्तिकूं, बार बार कुरबांन।।510।।
कोटि इन्द्र ब्रह्मा जहाँ, कोटि कृष्ण कैलास। गरीबदास शिव कोटि हैं, करौ कौंनकी आश।।511।।
कोटि विष्णु जहाँ बसत हैं, उस शक्ति के धाम।गरीबदास गुल बौहत हैं,अलफ बस्त निहकाम।।512।।
शिव शक्ति जासै हुए, अनंत कोटि अवतार। गरीबदास उस अलफकूं, लखै सो होय करतार।।513।।
अलफ हमारा रूप है, दम देही नहीं दंत। गरीबदास गुलसैं परै, चलना है बिन पंथ।।514।।
बिना पंथ उस कंतकै, धाम चलन है मोर। गरीबदास गति ना किसी, संख सुरग पर डोर।।515।।
संख सुरगपर हम बसैं,सुनि स्वामी यह सैंन।गरीबदास हम अलफ हैं,यौह गुल फोकट फैंन।।516।।
जो तै कहया सौ मैं लहया, बिन देखै नहीं धीज।गरीबदास स्वामी कहै,कहाँ अलफ वौ बीज।।517।।
अनंत कोटि ब्रह्मांड फण, अनंत कोटि उदगार। गरीबदास स्वामी कहै, कहां अलफ दीदार।।518।।
हद बेहद कहीं ना कहीं, ना कहीं थरपी ठौर। गरीबदास निज ब्रह्मकी, कौंन धाम वह पौर।।519।।
चल स्वामी सर पर चलैं, गंग तीर सुन ज्ञान। गरीबदास बैकुंठ बट, कोटि कोटि घट ध्यान।।520।।
तहां कोटि वैकुंठ हैं, नक सरवर संगीत। गरीबदास स्वामी सुनैं, जात अनन्त जुग बीत।521।।
सुनि स्वामी एक गल गुझ,तिल तारी पल जोरि।गरीबदास सर गगन में,सूरज अनंत करोरि।।527।।
सहर अमान अनन्तपुर, रिमझिम रिमझिम होय।गरीबदास उस नगर का,मरम न जानैं कोय।।528।।
सुनि स्वामी कैसैं लखो, कहि समझाऊं तोहि।गरीबदास बिन पर उडैं,तन मन शीश न होय।।529।।
रवनपुरी एक चक्र है, तहाँ धनजय बाय। गरीबदास जीते जन्म, याकूँ लेत समाय।।530।।
आसन पदम लगायकर, भिरंग नाद को खैंचि। गरीबदास अचवन करै, देवदत्त को ऐचि।।531।।
काली ऊन कुलीन रंग, जाकै दो फुन धार। गरीबदास कुरंभ शिर, तास करे उद्गार।।532।।
चिश्में लाल गुलाल रंग, तीनि गिरह नभ पेंच। गरीबदास वह नागनी कूँ, हौने न देवे रेच।।533।।
कुंभक रेचक सब करै, ऊन करत उदगार। गरीबदास उस नागनी कूँ, जीतै कोई खिलार।।534।।
कुंभ भरै रेचक करै, फिर टुटत है पौन। गरीबदास गगन मण्डल, नहीं होत है रौन।। 535।।
आगे घाटी बंद है, ईग्लां–पिंगला दोय। गरीबदास सुषमन खुले, तास मिलावा होय।।536।।
चंदा के घर सूर रखि, सूरज के घर चंद। गरीबदास मध्य महल है, तहाँ वहाँ अजब आनन्द।।537।।
त्रिवेणी का घाट है, गंग जमन गुपतार। गरीबदास परबी परखि, तहाँ सहंस मुख धार।।538।।
मध्य किवारी ब्रह्मरंद्र, वाह खोलत नहीं कोय। गरीबदास सब जोग की, पेज पीछाड़े होय।।539।।
आसन सम्पट सुधि कर, गुफा गिरद गति ढोल। गरीबदास पल पालड़ै, हीरे मानिक तोल।।540।।
पान अपान समान सुध, मंदा चल महकंत। गरीबदास ठाठी बगै, तो दीपक बात बुंझत।।541।।

घंटा टुटे ताल भंग, संख न सुनिए टेर। गरीबदास मुरली मुक्ति, सुनि चढ़ी हंस सुमेर।।542।।
खुलहै खिरकी सहज धुनि, दम नहीं खैंच अतीत। गरीबदास एक सैन है, तजि अनभय छंद गीत।।543।।
धीरैं धीरैं दाटी हैं, सुरग चढैंगे सोय। गरीबदास पग पंथ बिन, ले राखौं जहाँ तोय।।544।।
सुन स्वामी सीढी बिना, चढौं गगन कैलास। गरीबदास प्राणायाम तजि, नाहक तोरत श्वास।।545।।
गली गली गलतान है, सहर सलेमाबाद। गरीबदास पल बीचमैं, पूरण करौं मुराद।।546।।
ज्यूंका त्यूंही बैठि रहो, तजि आसन सब जोग। गरीबदास पल बीच पद, सर्व सैल सब भोग।।547।।
पनग पलक नीचै करौ, ता मुख सहंस शरीर। गरीबदास सूक्ष्म अधरि, सूरति लाय सर तीर।।548।।
सुनि स्वामी यह गति अगम, मनुष्य देवसैं दूर। गरीबदास ब्रह्मा थकै, किन्हैं न पाया मूर।।549।।
मूल डार जाकै नहीं, है सो अनिन अरंग। गरीबदास मजीठ चलि, ये सब लोक पतंग।।550।।
सुतह सिधि परकाशिया, कहा अरघ असनान।गरीबदास तप कोटि जुग, पचि हारे सुर ज्ञान।।551।।
श्याम सेत नहीं लाल है, नाहीं पीत पसाव। गरीबदास कासैं कहूँ, चलै नीर बिन नाव।।552।।
कोटि कोटि बैकुंठ हैं, कोटि कोटि शिव शेष। गरीबदास उस धाममें, ब्रह्मा कोटि नरेश।।553।।
अवादान अमानपुर, चलि स्वामी तहां चाल। गरीबदास परलो अनंत, बौहरि न झंपै काल।।554।।
प्राण पिंड पुरमैं धसौ, गये रामानंद कोटि। गरीबदास सर सुरगमैं, रहौ शब्दकी ओट।।522।।
तहां वहाँ चित चक्रित भया, देखि फजल दरबार। गरीबदास सिजदा किया, हम पाये दीदार।।523।।
तुम स्वामी मैं बाल बुद्धि, भर्म कर्म किये नाश। गरीबदास निज ब्रह्म तुम, हमरै दृढ़ विश्वास।।524।।
सुन्न–बेसुन्न सैं तुम परै, उरैं से हमरै तीर। गरीबदास सरबंगमें, अविगत पुरूष कबीर।।525।।
कोटि कोटि सिजदे करैं, कोटि कोटि प्रणाम। गरीबदास अनहद अधर, हम परसैं तुम धाम।।526।।
अमर चीर तहां पहरि है,अमर हंस सुख धाम। गरीबदास भोजन अजर,चल स्वामी निजधाम।।555।।
बोलत रामानंदजी, सुन कबीर करतार। गरीबदास सब रूपमें, तुमहीं बोलन हार।।556।।
तुम साहिब तुम संत हौ, तुम सतगुरु तुम हंस। गरीबदास तुम रूप बिन और न दूजा अंस।।557।।
मैं भगता मुक्ता भया, किया कर्म कुन्द नाश। गरीबदास अविगत मिले, मेटी मन की बास।।558।।
दोहूँ ठौर है एक तूं, भया एक से दोय। गरीबदास हम कारणैं, उतरे हैं मघ जोय।।559।।
गोष्टी रामानंदसैं, काशी नगर मंझार। गरीबदास जिंद पीरके, हम पाये दीदार।।562।।
बोलै रामानंद जी, सुनौं कबीर सुभांन। गरीबदास मुक्ता भये, उधरे पिंड अरु प्राण।।567।।

अध्याय 9 का श्लोक 24

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते।२४।

अहम्, हि, सर्वयज्ञानाम्, भोक्ता, च, प्रभुः,
एव, च, न, तु, माम्,अभिजानन्ति,तत्त्वेन,अतः,च्यवन्ति,ते।।24।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (सर्वयज्ञानाम्) सम्पूर्ण यज्ञोंका (भोक्ता) भोक्ता (च) और (प्रभुः) स्वामी (च) भी (अहम्) मैं (एव) ही हूँ, (तु) परंतु (ते) वे (माम्) मुझे (तत्त्वेन) तत्त्वसे (न) नहीं (अभिजानन्ति) जानते (अतः) इसीसे (च्यवन्ति) गिरते हैं अर्थात् लख चौरासी में गिरते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : क्योंकि सम्पूर्ण यज्ञोंका भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ, परंतु वे मुझे तत्त्वसे नहीं जानते इसीसे गिरते हैं अर्थात् लख चौरासी में गिरते हैं।

अध्याय 9 का श्लोक 25

यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्। २५।

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितॄन्, यान्ति, पितृव्रताः।
भूतानि,यान्ति,भूतेज्याः,यान्ति, मद्याजिनः,अपि,माम्।।25।।

अनुवाद : (देवव्रताः) देवताओंको पूजनेवाले (देवान्) देवताओंको (यान्ति) प्राप्त होते हैं, (पितृव्रताः) पितरोंको पूजनेवाले (पितॄन्) पितरोंको (यान्ति) प्राप्त होते हैं, (भूतेज्याः) भूतोंको पूजनेवाले (भूतानि) भूतोंको (यान्ति) प्राप्त होते हैं और (मद्याजिनः) इसी तरह मतानुसार अर्थात् शास्त्रानुकुल पूजन करनेवाले भक्त (अपि) भी (माम्) मुझसे (यान्ति) लाभान्वित होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : देवताओंको पूजनेवाले देवताओंको प्राप्त होते हैं, पितरोंको पूजनेवाले पितरोंको प्राप्त होते हैं, भूतोंको पूजनेवाले भूतोंको प्राप्त होते हैं और इसी तरह मतानुसार अर्थात् शास्त्रानुकुल पूजन करनेवाले भक्त भी मुझसे लाभान्वित होते हैं।

❑❑❑

(च)" कौन तथा कैसा है कुल का मालिक?"

जिन-जिन पुण्यात्माओं ने परमात्मा को प्राप्त किया उन्होंने बताया कि कुल का मालिक एक है। वह मानव सदृश तेजोमय शरीर युक्त है। जिसके एक रोम कूप का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा करोड़ चन्द्रमाओं की रोशनी से भी अधिक है। उसी ने नाना रूप बनाए हैं। परमेश्वर का वास्तविक नाम अपनी-अपनी भाषाओं में कविर्देव (वेदों में संस्कृत भाषा में) तथा हक्का कबीर (श्री गुरु ग्रन्थ साहेब में पृष्ठ नं. 721 पर क्षेत्रीय भाषा में) तथा सत् कबीर (श्रीधर्मदास जी की वाणी में क्षेत्रीय भाषा में) तथा बन्दी छोड़ कबीर (सन्त गरीबदास जी के सद्ग्रन्थ में क्षेत्रीय भाषा में) कबीरा, कबीरन् व खबीरा या खबीरन् (श्री कुर्आन शरीफ़ सूरत फुर्कानि नं. 25, आयत नं. 19, 21, 52, 58, 59 में क्षेत्रीय अरबी भाषा में)। इसी पूर्ण परमात्मा के उपमात्मक नाम अनामी पुरुष, अगम पुरुष, अलख पुरुष, सतपुरुष, अकाल मूर्ति, शब्द स्वरूपी राम, पूर्ण ब्रह्म, परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं, जैसे देश के प्रधानमंत्री का वास्तविक शरीर का नाम कुछ और होता है तथा उपमात्मक नाम प्रधान मंत्री जी, प्राइम मिनिस्टर जी अलग होता है। जैसे भारत देश का प्रधानमंत्री जी अपने पास गृह विभाग रख लेता है। जब वह उस विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करता है तो वहाँ गृहमंत्री की भूमिका करता है तथा अपना पद भी गृहमन्त्री लिखता है, हस्ताक्षर वही होते हैं। इसी प्रकार ईश्वरीय सत्ता को समझना है।

जिन सन्तों व ऋषियों को परमात्मा प्राप्ति नहीं हुई, उन्होंने अपना अन्तिम अनुभव बताया है कि प्रभु का केवल प्रकाश देखा जा सकता है, प्रभु दिखाई नहीं देता क्योंकि उसका कोई आकार नहीं है तथा शरीर में धुनि सुनना आदि प्रभु भक्ति की उपलब्धि है।

आओ विचार करें - जैसे कोई अंधा अन्य अंधों में अपने आपको आँखों वाला सिद्ध किए बैठा हो और कहता है कि रात्री में चन्द्रमा की रोशनी बहुत सुहावनी मन भावनी होती है, मैं देखता हूँ। अन्य अन्धे शिष्यों ने पूछा कि गुरु जी चन्द्रमा कैसा होता है। चतुर अन्धे ने उत्तर दिया कि चन्द्रमा तो निराकार है वह दिखाई थोड़े ही दे सकता है। कोई कहे सूर्य निराकार है वह दिखाई नहीं देता रवि स्वप्रकाशित है इसलिए उसका केवल प्रकाश दिखाई देता है। गुरु जी के बताये अनुसार शिष्य 2½ घण्टे सुबह तथा 2½ घण्टे शाम आकाश में देखते हैं। परन्तु कुछ दिखाई नहीं देता। स्वयं ही विचार विमर्श करते हैं कि गुरु जी तो सही कह रहे हैं, हमारी साधना पूरी 2½ घण्टे सुबह शाम नहीं हो पाती। इसलिए हमें सूर्य तथा चन्द्रमा का प्रकाश दिखाई नहीं दे रहा। चतुर गुरु जी की व्याख्या पर आधारित होकर उस चतुर अन्धे(ज्ञान नेत्र हीन) की व्याख्या के प्रचारक करोड़ों अंधे (ज्ञाननेत्र हीन) हो चुके हैं। फिर उन्हें आँखों वाला (तत्वदर्शी सन्त) बताए कि सूर्य आकार में है और उसी से प्रकाश निकल रहा है। सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा? इसी प्रकार चन्द्रमा से प्रकाश निकल रहा है नेत्रहीनों! चन्द्रमा के बिना रात्री में प्रकाश कैसे हो सकता है? जैसे कोई कहे कि ट्यूब लाईट देखी, फिर कोई पूछे कि ट्यूब कैसी होती है जिसकी आपने रोशनी देखी है? उत्तर मिले कि ट्यूब तो निराकार होने के कारण दिखाई नहीं देती। केवल प्रकाश देखा जा सकता है। विचार करें :- ट्यूब बिना प्रकाश कैसा?

यदि कोई कहे कि हीरा स्वप्रकाशित होता है। फिर यह भी कहे कि हीरे का केवल प्रकाश देखा जा सकता है, क्योंकि हीरा तो निराकार है, वह दिखाई थोड़े ही देता है, तो वह व्यक्ति हीरे से परिचित नहीं है। फोकट जौहरी बना है। जो परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा केवल प्रकाश देखना तथा धुनि सुनना ही प्रभु प्राप्ति मानते हैं वे पूर्ण रूप से प्रभु तथा भक्ति से अपरिचित हैं। जब उनसे प्रार्थना की कि कुछ नहीं देखा है तुमने, अपने अनुयाईयों को भ्रमित करके दोषी हो रहे हो। न तो आपके गुरुदेव के तत्वज्ञान रूपी नेत्र हैं तथा न ही आपके, दुनियाँ को भ्रमित मत करो। इस बात पर सर्व अन्धों (ज्ञान नेत्र हीनों) ने उठा लिए लट्ठ कि हम तो झूठे, तूं एक सच्चा। आज वही स्थिति मुझ दास(रामपाल दास) के साथ है।

प्रश्न :- इस बात का निर्णय कैसे हो कि किस सन्त के विचार ठीक है किसके गलत हैं?

उत्तर :- मान लिजिए जैसे किसी अपराध के विषय में पाँच वकील अपना-अपना विचार व्यक्त कर रहे हैं। एक कहे कि इस अपराध पर संविधान की धारा 301 लगेगी, दूसरा कहे 302, तीसरा कहे 304, चौथा कहे 306 तथा पाँचवां वकील 307 को सही बताए।

ये पाँचों ठीक नहीं हो सकते। केवल एक ही ठीक हो सकता है यदि उसकी व्याख्या अपने देश के पवित्र संविधान से मिलती है। यदि उसकी व्याख्या भी संविधान के विपरीत है तो पाँचों वकील गलत हैं। इसका निर्णय देश का पवित्र संविधान करेगा जो सर्व को मान्य होता है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न विचारधाराओं में तथा साधनाओं में से कौन-सी शास्त्र अनुकूल है या कौन-सी शास्त्र विरुद्ध है? इसका निर्णय पवित्र सद्ग्रन्थ ही करेंगे, जो सर्व को मान्य होना चाहिए (यही प्रमाण पवित्र श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में)।

प्रश्न :- कुछेक शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करने वाले हठ योग के आधार से घण्टों एक स्थान पर बैठकर ध्यान करके बताते हैं कि हमें प्रकाश दिखाई देता है। वह क्या है?

उत्तर :- जैसे सूर्य का प्रकाश तालाब में गिरा तालाब के जल से प्रकाश का प्रतिबिम्ब दिवार पर बन जाता है। दिवार पर सूर्य नहीं दिखाई देता केवल मन्दा-2 प्रकाश दिखाई देता है। वह सूर्य नहीं है तथा न ही उसका पूर्ण प्रकाश है। उसको देख कर जो कहता है कि सूर्य का प्रकाश देखा परन्तु सूर्य नहीं है निराकार है तो वह नशा किए हुऐ है या मन्दबुद्धि है। इसी प्रकार अधूरे ज्ञान के आधार पर तत्वज्ञान रहित सन्त तथा उनके अनुयाई कहते हैं परमात्मा निराकार है केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष)साकार है उसकाशरीर मानव सदृश प्रकाशमय है। उसका प्रकाश अन्य ब्रह्मण्डों प्रतिबिम्ब रूप में दृष्टिगोचर है। जो ब्रह्मण्ड में गिर रहा है। उस प्रतिबिम्ब को देखकर व्याख्या की जा रही है कि परमात्मा का प्रकाश देखा परन्तु परमात्मा निराकार है वह दिखाई नहीं देता। जब पूर्ण साधना शास्त्रविधि अनुसार की जाती है तो उस से साधक की दिव्यदृष्टि खुल कर पूर्ण परमात्मा के प्रकाशमय शरीर के दर्शन होते हैं। परमात्मा मानव सदृश तेजोमय शरीर युक्त है जो कहते है कि परमात्मा का प्रकाश देखा तो भी प्रकाश परमात्मा नहीं हुआ। क्योंकि सर्व सद्ग्रन्थों में लिखा है कि परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए। परमात्मा की प्राप्ति से परमशान्ति होती है। जैसे कोई कहे कि हलवा (कड़हा) प्रसाद की महक आ रही है महक हलवा (कड़हा) प्रसाद नहीं है। महक से पेट नहीं भरता तथा न ही हलवे का स्वाद आता है। यह तो

हलवा खाने से ही बात बनेगी। इसलिए जो कहते है कि परमात्मा का प्रकाश देखा वे परमात्मा के लाभ से हलवे की तरह वंचित है। उनसे प्रार्थना है कि उस परमात्मा को प्राप्त करने की विधि मुझ दास (रामपाल दास) के पास है। निःशुल्क प्राप्त करें।

जिन आँखों वालों (पूर्ण सन्तों) ने चन्द्रमा (पूर्ण परमात्मा) को देखा परमात्मा पाया उन में से कुछ के नाम हैं :-

(क) आदरणीय धर्मदास साहेब जी (ख) आदरणीय दादू साहेब जी (ग) आदणीय मलूक दास साहेब जी (घ) आदरणीय गरीबदास साहेब जी (ङ) आदरणीय नानक साहेब जी (च) आदरणीय घीसा दास साहेब जी आदि।

(क) परमेश्वर से धर्मदास जी का साक्षात्कार :-

(क) आदरणीय धर्मदास साहेब जी, बांधवगढ़ मध्य प्रदेश वाले, जिनको पूर्ण परमात्मा जिंदा महात्मा के रूप में मथुरा में मिले, सतलोक दिखाया। वहाँ सत्लोक में दो रूप दिखा कर जिंदा वाले रूप में पूर्ण परमात्मा वाले सिंहासन पर विराजमान हो गए तथा आदरणीय धर्मदास साहेब जी को कहा कि मैं ही काशी (बनारस) में नीरू-नीमा के घर गया हुआ हूँ। आदरणीय श्री रामानन्द जी मेरे गुरु जी हैं। यह कह कर श्री धर्मदास जी की आत्मा को वापिस शरीर में भेज दिया। श्री धर्मदास जी का शरीर दो दिन बेहोश रहा, तीसरे दिन होश आया तो काशी में खोज करने पर पाया कि यही काशी में आया धाणक ही पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) है। आदरणीय धर्मदास साहेब जी ने पवित्र कबीर सागर, कबीर साखी, कबीर बीजक नामक सद्ग्रन्थों की आँखों देखे तथा पूर्ण परमात्मा के पवित्र मुख कमल से निकले अमृत वचन रूपी विवरण से रचना की। अमृत वाणी में प्रमाण :

आज मोहे दर्शन दियो जी कबीर।।टेक।।
सत्यलोक से चल कर आए, काटन जम की जंजीर।।1।।
थारे दर्शन से म्हारे पाप कटत हैं, निर्मल होवै जी शरीर।।2।।
अमृत भोजन म्हारे सतगुरु जीमैं, शब्द दूध की खीर।।3।।
हिन्दू के तुम देव कहाये, मुसलमान के पीर।।4।।
दोनों दीन का झगड़ा छिड़ गया, टोहे ना पाये शरीर।।5।।
धर्मदास की अर्ज गोसांई, बेड़ा लंघाईयो परले तीर।।6।।

नोट :- कृप्या पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ से 164 से 169 पर तथा 205 से 290 पर विस्तृत विवरण है।

(ख) परमेश्वर से दादू जी का साक्षात्कार :-

(ख) आदरणीय दादू साहेब जी (अमृत वाणी में प्रमाण) कबीर परमेश्वर के साक्षी -

आदरणीय दादू साहेब जी जब सात वर्ष के बालक थे तब पूर्ण परमात्मा जिंदा महात्मा के रूप में मिले तथा सत्यलोक ले गए। तीन दिन तक दादू जी बेहोश रहे। फिर होश में आकर बहुत-सी अमृतवाणी उच्चारण की :

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोइ सतगुरु हमार। दादू दूसरा कोई नहीं, कबीर सृजन हार।।
दादू नाम कबीर की, जै कोई लेवे ओट। उनको कबहू लागे नहीं, काल वज्र की चोट।।

दादू नाम कबीर का, सुनकर कांपे काल। नाम भरोसे जो नर चले, होवे न बंका बाल।।
जो जो शरण कबीर के, तरगए अनन्त अपार। दादू गुण कीता कहे, कहत न आवै पार।।
कबीर कर्ता आप है, दूजा नाहिं कोय। दादू पूरन जगत को, भक्ति दृढावन सोय।।
ठेका पूरन होय जब, सब कोई तजै शरीर। दादू काल गँजे नहीं, जपै जो नाम कबीर।।
आदमी की आयु घटै, तब यम घेरे आय। सुमिरन किया कबीर का, दादू लिया बचाय।।
मेटि दिया अपराध सब, आय मिले छनमाँह। दादू संग ले चले, कबीर चरण की छांह।।
सेवक देव निज चरण का, दादू अपना जान। भृंगी सत्य कबीर ने, कीन्हा आप समान।।
दादू अन्तरगत सदा, छिन–छिन सुमिरन ध्यान। वारु नाम कबीर पर, पल–पल मेरा प्रान।।
सुन–2 साखी कबीर की, काल नवावै माथ। धन्य–धन्य हो तिन लोक में, दादू जोड़े हाथ।।
केहरि नाम कबीर का, विषम काल गज राज। दादू भजन प्रतापते, भागे सुनत आवाज।।
पल एक नाम कबीर का, दादू मनचित लाय। हस्ती के अश्वार को, श्वान काल नहीं खाय।।
सुमरत नाम कबीर का, कटे काल की पीर। दादू दिन दिन ऊँचे, परमानन्द सुख सीर।।
दादू नाम कबीर की, जो कोई लेवे ओट। तिनको कबहुं ना लगई, काल बज्र की चोट।।
और संत सब कूप हैं, केते सरिता नीर। दादू अगम अपार है, दरिया सत्य कबीर।।
अबही तेरी सब मिटै, जन्म मरन की पीर। स्वांस उस्वांस सुमिरले, दादू नाम कबीर।।
कोई सर्गुण में रीझ रहा, कोई निर्गुण ठहराय। दादू गति कबीर की, मौसे कही न जाय।।
जिन मोको निज नाम दई, सदगुरु सोई हमार। दादू दूसरा कौन है, कबीर सिरजन हार।।

(ग) परमेश्वर से मलूक दास जी का साक्षात्कार :-

(ग) आदरणीय मलूक दास साहेब जी कविर्देव के साक्षी -

42 वर्ष की आयु में श्री मलूक दास साहेब जी को पूर्ण परमात्मा मिले तथा दो दिन तक श्री मलूक दास जी अचेत रहे। फिर निम्न वाणी उच्चारण की :

जपो रे मन सतगुरु नाम कबीर।।टेक।।
एक समय गुरु बंसी बजाई कालंद्री के तीर।
सुर–नर मुनि थक गए, रूक गया दरिया नीर।।
काँशी तज गुरु मगहर आये, दोनों दीन के पीर।
कोई गाढ़े कोई अग्नि जरावै, ढूंडा न पाया शरीर।
चार दाग से सतगुरु न्यारा, अजरो अमर शरीर।
दास मलूक सलूक कहत हैं, खोजो खसम कबीर।।

(घ) परमेश्वर से गरीबदास जी का साक्षात्कार :-

(घ) आदरणीय गरीबदास साहेब जी छुड़ानी जिला-झज्जर, हरियाणा वाले (अमृत वाणी में प्रमाण) प्रभु कबीर (कविर्देव) के साक्षी -

आदरणीय गरीबदास साहेब जी का आर्विभाव सन् 1717 में हुआ तथा साहेब कबीर जी के दर्शन दस वर्ष की आयु में सन् 1727 में नला नामक खेत में हुए तथा सत्लोक वास सन् 1778 में हुआ। आदरणीय गरीबदास साहेब जी को भी परमात्मा कबीर साहेब जी सशरीर जिंदा रूप में मिले। आदरणीय गरीबदास साहेब जी अपने नला नामक खेतों में अन्य साथी ग्वालों के साथ गाय चरा रहे थे। जो खेत कबलाना गाँव की सीमा से सटा है। बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर को

एक अतिथि रूप में देख कर ग्वालों ने जिन्दा महात्मा के रूप में प्रकट कबीर परमेश्वर से आग्रह किया कि आप खाना नहीं खाते हो तो दूध पीयो क्योंकि परमात्मा ने कहा था कि मैं अपने सतलोक गाँव से खाना खाकर आया हूँ। तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि मैं कुँआरी गाय का दूध पीता हूँ। तब बड़ी आयु के ग्वाले बोले कि महात्मा जी आप मजाक कर रहे हो। कुँआरी गाय कभी दूध देती है? लगता है आप की दूध पीने की नीयत नहीं है। उसी समय बालक गरीबदास जी ने एक कुँआरी गाय को परमेश्वर कबीर जी के पास लाकर कहा कि बाबा जी यह बिना ब्याई (कुँआरी) गाय कैसे दूध दे सकती है ? तब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने कुँआरी गाय (बच्छिया) के कमर पर हाथ रखा, अपने आप कुँआरी गाय (अघ्नि धेनु) के थनों से दूध निकलने लगा। पात्र भरने पर रूक गया। वह दूध परमेश्वर कबीर जी ने पीया तथा प्रसाद रूप में कुछ अपने बच्चे गरीबदास जी को पिलाया तथा सतलोक के दर्शन कराये। सतलोक में अपने दो रूप दिखाकर फिर जिंदा वाले रूप में कुल मालिक रूप में सिंहासन पर विराजमान हो गए तथा कहा कि मैं ही 120 वर्ष तक काशी में धाणक (जुलाहा) रूप में रहकर आया हूँ। मैं पहले भी पृथ्वी पर गया था तब हजरत मुहम्मद जी को भी मिला था। पवित्र कुर्आन शरीफ में जो कबीरा, कबीरन्, खबीरा, खबीरन्, अल्लाहु अक्बर आदि शब्द हैं वे मेरा ही बोध कराते हैं तथा मैं ही श्री नानक जी को बेई नदी पर जिंदा महात्मा के रूप में ही मिला था {मुसलमानों में जिंदा महात्मा होते हैं, वे काला चौगा(ओवर कोट जैसा) घुटनों से नीचे तक तथा सिर पर चोटे वाला काला टोप पहनते हैं} तथा मैं ही श्री अब्राहीम सुलतान अधम जी तथा श्री दादू जी को मिला था तथा चारों पवित्र वेदों में जो कविर अग्नि, कविर्देव (कविरंघारिः) आदि नाम हैं वह मेरा ही बोध है। 'कबीर बेद हमारा भेद है, मैं मिलु बेदों से नांही। जौन बेद से मैं मिलूं, वो बेद जानते नांही।।' *मैं ही वेदों से पहले भी सतलोक में विराजमान था। इसलिए वेदों में मेरी महिमा व वास्तविक नाम लिखा है।*

आदरणीय गरीबदास जी की आत्मा अपने परमात्मा कबीर बन्दी छोड़ के साथ चले जाने के बाद उन्हें मृत जान कर चिता पर रख कर जलाने की तैयारी करने लगे, उसी समय आदरणीय गरीबदास साहेब जी की आत्मा पूर्ण परमेश्वर ने शरीर में प्रवेश कर दिया। दस वर्षीय बालक गरीब दास जी जीवित हो गए। (गाँव छुड़ानी जि. झज्जर (हरियाणा) में आज भी उस स्थान पर जहाँ पूर्ण परमात्मा, सन्त गरीबदास जी को मानव शरीर में साक्षात्कार हुआ था, एक यादगार विद्यमान है।) उसके बाद उस पूर्ण परमात्मा का आँखों देखा विवरण अपनी अमृत वाणी में ''सद्ग्रन्थ'' नाम से रचना की। उसी अमृत वाणी में प्रमाण :

अजब नगर में ले गया, हमकूं सतगुरु आन। झिलके बिम्ब अगाध गति, सूते चादर तान।।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का एक रति नहीं भार। सतगुरु पुरुष कबीर हैं कुल के सृजन हार।।
गैबी ख्याल विशाल सतगुरु, अचल दिगम्बर थीर है। भक्ति हेत काया धर आये, अविगत सत् कबीर हैं।।
हरदम खोज हनोज हाजर, त्रिवैणी के तीर हैं। दास गरीब तबीब सतगुरु, बन्दी छोड़ कबीर हैं।।
हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया। जात जुलाहा भेद नहीं पाया, काशी माहे कबीर हुआ।।
सब पदवी के मूल हैं, सकल सिद्धि हैं तीर। दास गरीब सतपुरुष भजो, अविगत कला कबीर।।
जिंदा जोगी जगत् गुरु, मालिक मुरशद पीर। दहूँ दीन झगड़ा मंड्या, पाया नहीं शरीर।।

उपरोक्त वाणी में आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज ने स्पष्ट कर दिया कि काशी वाले धाणक (जुलाहे) ने मुझे भी नाम दान देकर पार किया, यही काशी वाला धाणक ही (सतपुरुष) पूर्ण ब्रह्म है।

परमेश्वर कबीर ही सतलोक से जिन्दा महात्मा के रूप में आकर मुझे अजब नगर (अद्भुत नगर सतलोक) में लेकर गए। जहाँ पर आनन्द ही आनन्द है, कोई चिन्ता नहीं, जन्म-मृत्यु, अन्य प्राणियों के शरीर में कष्ट आदि का शोक नहीं है।

इसी काशी में धाणक रूप में आए सतपुरुष ने भिन्न-भिन्न समय में प्रकट होकर आदरणीय श्री अब्राहीम सुल्तान अधम साहेब जी तथा आदरणीय दादू साहेब जी व आदरणीय नानक साहेब जी को भी सतनाम देकर पार किया। वही कविर्देव जिसके एक रोम कूप में करोड़ो सूर्यों जैसा प्रकाश है तथा मानव सदृश अति तेजोमय अपने वास्तविक शरीर के ऊपर हल्के तेजपुंज का चोला (भद्रा वस्त्रा अर्थात् तेजपुंज का शरीर) डाल कर हमें मृतलोक में मिलता है। क्योंकि उस परमेश्वर के वास्तविक स्वरूप के प्रकाश को चर्म दृष्टि सहन नहीं कर सकती।

आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने अपनी अमृतवाणी में कहा है 'सर्व कला सतगुरु साहेब की, हरि आए हरियाणे नुँ''। भावार्थ है कि पूर्ण परमात्मा कविर हरि (कविर्देव) जिस क्षेत्र में आए उसका नाम हरयाणा अर्थात् ''परमात्मा के आने वाला पवित्र स्थल'', जिस के कारण आस-पास के क्षेत्र को हरिआना(हरयाणा) प्रान्त कहने लगे। सन् 1966 में को पंजाब प्रान्त के विभाजन होने पर इस क्षेत्र का नाम हरिआणा(हरयाणा) प्रान्त पड़ा। लगभग 236 वर्ष पूर्व कही वाणी 1966 में सिद्ध हुई कि समय आने पर यह क्षेत्र हरयाणा प्रान्त के नाम से विख्यात होगा। जो आज प्रत्यक्ष प्रमाण है।

(ड़) परमेश्वर से नानक जी का साक्षात्कार :-

(ड़) आदरणीय श्री नानक साहेब जी प्रभु कबीर(धाणक) जुलाहा के साक्षी -

नोट :- कृप्या पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 45 से 67 पर श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 18 के सारांश में -

(च) परमेश्वर से घीसा दास जी का साक्षात्कार :-

(च) आदरणीय घीसा दास साहेब जी को भी पूज्य कबीर परमेश्वर जी सशरीर मिले -

भारत वर्ष सदा से ही संतों के आशीर्वाद युक्त रहा है। प्रभु के भेजे संत व स्वयं परमेश्वर समय-समय पर इस भूतल को पावन करते रहे हैं।

उत्तर प्रदेश के जिला मेरठ में एक पावन ग्राम खेखड़ा है, जिसमें विक्रमी सं. 1860 सन् 1803 में परमेश्वर के कृपा पात्र संत घीसा दास जी का आविर्भाव हुआ। जब आप जी सात वर्ष के हुए तो पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर परमेश्वर) सतलोक (ऋतधाम) से सशरीर आए तथा गाँव के बाहर खेल रहे आपजी को दर्शन दिए। परम पूज्य कबीर साहेब (कविर्देव) ने अपने प्यारे हंस घीसादास जी को प्रभु साधना करने को कहा तथा लगभग एक घण्टे तक सत्संग सुनाया। बहुत से बच्चे उपस्थित थे तथा एक वृद्धा भी उपस्थित थी। परमेश्वर कबीर जी के मुख कमल से अपनी ही (परमेश्वर की) महिमा सुनकर आदरणीय घीसा दास साहेब जी ने सत्यलोक चलने

की प्रबल इच्छा व्यक्त की। तब प्रभु कबीर (कविर्देव) ने कहा कि पुत्र आओ, एकांत स्थान पर मंत्र दान करूंगा। अन्य श्रोताओं से 200 फुट की दूरी पर ले जाकर नाम दान किया, मंत्रित जल अपने लोटे(एक पात्र) से पिलाया तथा कुछ मिश्री संत घीसा दास साहेब जी को खिलाई। शाम का अंधेरा होने लगा था। परमेश्वर कबीर (कविर्देव) अन्तर्ध्यान हो गए।

सात वर्षीय बालक घीसादास साहेब जी अचेत हो गए। वृद्धा भतेरी ने गाँव में आकर आप जी के माता-पिता को बताया कि आपके बच्चे को एक जिन्दा महात्मा ने मन्त्रित जल पिला दिया, तुम्हारा बेटा तो अचेत हो गया तथा वह जिन्दा अदृश हो गया। आपजी के माता-पिता जी को वृद्ध अवस्था में एक संत के आशीर्वाद से संतान रूप में आपजी की प्राप्ति हुई थी। समाचार सुनते ही माता-पिता अचेत हो गए। अन्य ग्रामवासी घटना स्थल पर पहुँचे और अचेत अवस्था में ही बालक घीसा दास साहेब जी को घर ले आए। जब माता-पिता होश में आए। बच्चे की गंभीर दशा देखकर विलाप करने लगे। सुबह सूर्य उदय होते ही बालक घीसा जी सचेत हो गए। फिर आप जी ने बताया कि यह बाबा जिंदा रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा कबीर जी थे, यही पूर्ण परमात्मा काशी में धाणक (जुलाहा) रूप में एक सौ बीस वर्ष रह कर सशरीर वापिस चले गए थे। कल मुझे अपने साथ सतलोक लेकर गए थे। आज वापिस छोड़ा है। माता-पिता ने बच्चे के स्वस्थ हो जाने पर सुख की सांस ली, बच्चे की बातों पर विशेष ध्यान नहीं दिया।

आदरणीय घीसा दास साहेब जी ने युवा होने पर विजातीय लड़की से शादी की जिस कारण से क्षेत्र के व्यक्तियों ने आपजी की अत्यधिक आलोचना की। आप समाज की परवाह न करते हुए भक्ति प्रचार में लगे रहे तथा पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) के उपदेशों का प्रचार करने लगे। सर्व को बताने लगे कि वही कबीर जी जो काशी में जुलाहा रूप में रह कर चला गया, पूर्ण परमात्मा है, वह साकार है।

''प्रभु कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी को तत्वज्ञान समझाया''

नोट :- कृप्या पढ़ें इस पुस्तक के पृष्ठ 301 से 358 पर।

"महर्षि सर्वानन्द जी ने पहचाना प्रभु को"
(शास्त्रार्थ कैसे होता था ?)

दो विद्वान प्रश्न-उत्तर किया करते थे तथा श्रोतागण भी बहु संख्या में शास्त्रार्थ (प्रश्नोत्तर) सुनने के लिए विराजमान होते थे। हार जीत का फैसला श्रोताओं के हाथ में होता था, जिन्हें स्वयं ज्ञान नहीं कि ये क्या कह रहे हैं? जिसने ज्यादा संस्कृत लगातार उच्चारण की तो श्रोतागण ताली बजाकर विजयी होने का प्रमाण देते थे। इस तरह विद्वानों की हार - जीत का फैसला अविद्वानों के हाथ में था।

"इस प्रकार शास्त्रार्थ ने प्रभु के तत्वज्ञान को उलझाया"

यह दासों का भी दास चाहता है कि सर्व पवित्र धर्मों की प्रभु चाहने वाली पुण्यात्माऐं तत्वज्ञान से परिचित हो जाऐं, तब स्वयं लाल (तत्व ज्ञान) व लालड़ी (शास्त्रविरूद्ध ज्ञान) की

परख (पहचान) कर लिया करेंगे।

कथा :- एक सेठ के दो पुत्र थे। एक सोलह वर्ष का दूसरा अठारह वर्ष का। पिता जी का देहांत हो गया। बच्चों की माता जी ने एक कपड़े में लिपटे लाल अपने बच्चों के हाथ में रखे तथा कहा पुत्रों यह लाल ले जाओ तथा अपने ताऊ जी (पिता जी के बड़े भाई) को कहना कि हमारे पास पैसे नहीं हैं। यह लाल अपने पास रख लो तथा व्यापार में हमारा हिस्सा कर लो। हम अकेले बालक व्यापार नहीं कर सकते। दोनों बच्चे माता जी के दिए हुए लालों को लेकर अपने ताऊ जी के पास गए तथा जो माता जी ने कहा था प्रार्थना की। उस सेठ(ताऊ जी) ने लालों को देखा तथा बच्चों की प्रार्थना स्वीकार करके कहा पुत्र इन लालों को अपनी माता जी को दे आओ, संभाल कर रख लेगी। आप मेरे साथ दूसरे शहर में चलो, मुझे बहुत उधार माल मिल जाता है, वापिस आकर इन लालों को प्रयोग कर लेंगे।

दोनों बालक ताऊ जी के साथ दूसरे शहर में गए। एक दिन ताऊ जी ने एक लाल बच्चों को दिया तथा कहा पुत्रों यह लाल है, इसे उस सेठ को देकर आना, जिससे कल पचास हजार का माल उधार लिया था तथा कहना कि यह लाल रख लो, हम वापिस आकर आप का ऋण चुका देंगे तथा अपना लाल वापिस ले लेंगे।

दोनों बच्चों ने सेठ को उपरोक्त विवरण कहा। तब सेठ ने एक जौहरी बुलाया। जौहरी ने लाल को परख कर बताया कि यह लाल नहीं है, यह तो लालड़ी है, जो सौ रूपये की भी नहीं है, लाल की कीमत तो नौ लाख रूपये होती है। सेठ ने भली-बुरी कहते हुए उस लालड़ी को गली में फैंक दिया। बच्चे उस लालड़ी को उठा कर अपने ताऊ जी (अंकल) के पास आए। आँखों में आँसु भरे हुए सर्व वृतान्त सुनाया कि एक व्यक्ति ने बताया कि यह लाल नहीं है यह तो लालड़ी है।

ताऊ जी(अंकल) ने कहा पुत्र वह जौहरी था। वह सही कह रहा था, यह तो वास्तव में लालड़ी है, इसकी कीमत तो सौ रूपया भी नहीं है। पुत्रों मेरे से धोखा हुआ है। लाल तो यह है, गलती से आप को मैंने ही लालड़ी दे दी। अब जाओ तथा सेठ से कहना मेरे ताऊजी(अंकल जी) धोखेबाज नहीं हैं। लाल के धोखे में लालड़ी दे दी। दोनों भाई फिर गए उसी व्यापारी के पास तथा कहा कि मेरे ताऊ जी ऐसे धोखेबाज व्यक्ति नहीं हैं सेठ जी, गलती से लाल के स्थान पर लालड़ी दे दी थी, यह लो लाल। जौहरी ने बताया कि वास्तव में यह लाल है वह लालडी थी।

सामान ले कर वापिस अपने शहर लौट आए। तब ताऊ(अंकल जी) ने कहा पुत्रों अपनी माता जी से लाल ले आओ, उधार ज्यादा हो गई है। दोनों बच्चों ने अपनी माता जी से लाल लेकर कपड़े में से निकाल कर देखा तो वे लालड़ी थी, लाल एक भी नहीं था। ताऊजी ने बच्चों को लाल तथा लालड़ी की पहचान करवा दी थी। दोनों पुत्रों ने अपनी माता जी से कहा कि माता जी यह तो लालड़ी है, लाल नहीं है। दोनों बच्चे वापिस ताऊ जी के पास आए तथा कहा कि मेरी माँ बहुत भोली है। उसे लाल व लालड़ी का ज्ञान नहीं है। वे लाल नहीं हैं, लालड़ी हैं। सेठ ने कहा पुत्रों ये उस दिन भी लालड़ी ही थी जिस दिन मेरे पास ले कर आए थे। यदि मैं

लालड़ी कह देता तो आप की माता जी कहती कि मेरा पति नहीं रहा, इसलिए अब मेरे लालों को भी लालड़ी बता रहा है। पुत्र आज मैंने आपको ही लाल तथा लालड़ी के परख (पहचान) करने योग्य बना दिया। आपने स्वयं फैसला कर लिया।

विशेष :- इसी प्रकार आज यह दास यही चाहता है कि तत्वज्ञान को जन-जन तक पहुँचाऊँ तथा शास्त्रों के प्रमाण देख कर आप स्वयं परख (पहचान) करने योग्य हो कर संत-असंत को पहचान सकें।

शास्त्रार्थ विद्वान किया करते थे तथा हार जीत का फैसला अविद्वान के हाथों में था। यह दास चाहता है कि पहले प्रभु प्रेमी पुण्यात्माऐं शास्त्र समझें फिर स्वयं जान जायेंगे कि यह संत व महर्षि जी क्या पढ़ाई पढ़ा रहे हैं।

''शास्त्रार्थ महर्षि सर्वानन्द तथा परमेश्वर कबीर(कविर्देव) का''

एक सर्वानन्द नाम के महर्षि थे। उसकी पूज्य माता श्रीमति शारदा देवी पाप कर्म फल से पीड़ित थी। उसने सर्व पूजाऐं व जन्त्र-मन्त्र कष्ट निवारण के लिए वर्षो किए। शरीरिक पीड़ा निवारण के लिए वैद्यों की दवाईयाँ भी खाई, परन्तु कोई राहत नहीं मिली। उस समय के महर्षियों से उपदेश भी प्राप्त किया, परन्तु सर्व महर्षियों ने कहा कि बेटी शारदा यह आप का पाप कर्म दण्ड प्रारब्ध कर्म का है, यह क्षमा नहीं हो सकता, यह भोगना ही पड़ता है। भगवान श्री राम ने बाली का वद्य किया था, उस पाप कर्म का दण्ड श्री राम(विष्णु) वाली आत्मा ने श्री कृष्ण बन कर भोगा। श्री बाली वाली आत्मा शिकारी बनी। जिसने श्री कृष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वद्य किया। इस प्रकार गुरु जी व महन्तों व संतों - ऋषियों के विचार सुनकर दुःखी मन से भक्तमति शारदा अपना प्रारब्ध पापकर्म का कष्ट रो-रो कर भोग रही थी। एक दिन किसी निजी रिश्तेदार के कहने पर काशी में (स्वयंभू) स्वयं सशरीर प्रकट हुए (कविर्देव) कविर परमेश्वर अर्थात् कबीर प्रभु से उपदेश प्राप्त किया तथा उसी दिन कष्ट मुक्त हो गई। क्योंकि पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में लिखा है कि ''कविरंघारिरसि'' अर्थात् (कविर्) कबीर (अंघारि) पाप का शत्रु (असि) है। फिर इसी पवित्र यजुर्वेद अध्याय 8 मंत्र 13 में लिखा है कि परमात्मा (एनसः एनसः) अधर्म के अधर्म अर्थात् पापों के भी पाप घोर पाप को भी समाप्त कर देता है। प्रभु कविर्देव(कबीर परमेश्वर) ने कहा बेटी शारदा यह सुख आप के भाग्य में नहीं था, मैंने अपने कोष से प्रदान किया है तथा पाप विनाशक होने का प्रमाण दिया है। आप का पुत्र महर्षि सर्वानन्द जी कहा करता है कि प्रभु पाप क्षमा (विनाश) नहीं कर सकता तथा आप मेरे से उपदेश प्राप्त करके आत्म कल्याण करो। भक्तमति शारदा जी ने स्वयं आए परमेश्वर कबीर प्रभु (कविर्देव) से उपदेश लेकर अपना कल्याण करवाया। महर्षि सर्वानन्द जी को जो भक्तमति शारदा का पुत्र था, शास्त्रार्थ का बहुत चाव था। उसने अपने समकालीन सर्व विद्वानों को शास्त्रार्थ करके पराजित कर दिया। फिर सोचा कि जन - जन को कहना पड़ता है कि मैंने सर्व विद्वानों पर विजय प्राप्त कर ली है। क्यों न अपनी माता जी से अपना नाम सर्वाजीत रखवा लूं। यह सोच कर अपनी माता श्रीमति शारदा जी के पास जाकर प्रार्थना की। कहा कि माता

जी मेरा नाम बदल कर सर्वाजीत रख दो। माता ने कहा कि बेटा सर्वानन्द क्या बुरा नाम है ? महर्षि सर्वानन्द जी ने कहा माता जी मैंने सर्व विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया है। इसलिए मेरा नाम सर्वाजीत रख दो। माता जी ने कहा कि बेटा एक विद्वान मेरे गुरु महाराज कविर्देव (कबीर प्रभु) को भी पराजित कर दे, फिर अपने पुत्र का नाम आते ही सर्वाजीत रख दूंगी। माता के ये वचन सुन कर श्री सर्वानन्द पहले तो हँसा, फिर कहा माता जी आप भी भोली हो। वह जुलाहा (धाणक) कबीर तो अशिक्षित है। उसका क्या पराजित करना? अभी गया अभी आया।

महर्षि सर्वानन्द जी सर्व शास्त्रों को एक बैल पर रख कर कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की झोंपड़ी के सामने गया। परमेश्वर कबीर जी की धर्म की बेटी कमाली पहले कूएँ पर मिली, फिर द्वार पर आकर कहा आओ महर्षि जी यही है परमपिता कबीर का घर। श्री सर्वानन्द जी ने लड़की कमाली से अपना लोटा पानी से इतना भरवाया कि यदि जरा-सा जल और डाले तो बाहर निकल जाए तथा कहा कि बेटी यह लोटा धीरे-धीरे ले जाकर कबीर को दे तथा जो उत्तर वह देवें वह मुझे बताना। लड़की कमाली द्वारा लाए लोटे में परमेश्वर कबीर (कविर्देव) जी ने एक कपड़े सीने वाली बड़ी सुई डाल दी, कुछ जल लोटे से बाहर निकल कर पृथ्वी पर गिर गया तथा कहा पुत्री यह लोटा श्री सर्वानन्द जी को लौटा दो। लोटा वापिस लेकर आई लड़की कमाली से सर्वानन्द जी ने पूछा कि क्या उत्तर दिया कबीर ने? कमाली ने प्रभु द्वारा सुई डालने का वृतांत सुनाया। तब महर्षि सर्वानन्द जी ने परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) से पूछा कि आपने मेरे प्रश्न का क्या उत्तर दिया? प्रभु कबीर जी ने पूछा कि क्या प्रश्न था आपका?

श्री सर्वानन्द महर्षि जी ने कहा ''मैंने सर्व विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित कर दिया है। मैंने अपनी माता जी से प्रार्थना की थी कि मेरा नाम सर्वाजीत रख दो। मेरी माता जी ने आपको पराजित करने के पश्चात् मेरा नाम परिवर्तन करने को कहा है। आपके पास लोटे को पूर्ण रूपेण जल से भर कर भेजने का तात्पर्य है कि मैं ज्ञान से ऐसे परिपूर्ण हूँ जैसे लोटा जल से। इसमें और जल नहीं समाएगा, वह बाहर ही गिरेगा अर्थात् मेरे साथ ज्ञान चर्चा करने से कोई लाभ नहीं होगा। आपका ज्ञान मेरे अन्दर नहीं समाएगा, व्यर्थ ही थूक मथोगे। इसलिए हार लिख दो, इसी में आपका हित है।

पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा कि आपके जल से परिपूर्ण लोटे में लोहे की सूई डालने का अभिप्राय है कि मेरा ज्ञान (तत्वज्ञान) इतना भारी (सत्य) है कि जैसे सुई लोटे के जल को बाहर निकालती हुई नीचे जाकर रूकी है। इसी प्रकार मेरा तत्वज्ञान आपके असत्य ज्ञान(लोक वेद) को निकाल कर आपके हृदय में समा जाएगा।

महर्षि सर्वानन्द जी ने कहा प्रश्न करो। एक बहु चर्चित विद्वान को जुलाहों (धाणकों) के मोहल्ले (कॉलोनी) में आया देखकर आस-पास के भोले-भाले अशिक्षित जुलाहे शास्त्रार्थ सुनने के लिए एकत्रित हो गए।

पूज्य कविर्देव ने प्रश्न किया :

कौन ब्रह्मा का पिता है, कौन विष्णु की माँ।
शंकर का दादा कौन है, सर्वानन्द दे बताए।।

उत्तर महर्षि सर्वानन्द जी का : - श्री ब्रह्मा जी रजोगुण हैं तथा श्री विष्णु जी सतगुण युक्त हैं तथा श्री शिव जी तमोगुण युक्त हैं। यह तीनों अजर-अमर अर्थात् अविनाशी हैं, सर्वेश्वर - महेश्वर - मृत्युंजय हैं। इनके माता-पिता कोई नहीं। आप अज्ञानी हो। आपको शास्त्रों का ज्ञान नहीं है। ऐसे ही उट-पटांग प्रश्न किया है। सर्व उपस्थित श्रोताओं ने ताली बजाई तथा महर्षि सर्वानन्द जी का समर्थन किया।

पूज्य कबीर प्रभु (कविर्देव) जी ने कहा कि महर्षि जी आप श्रीमद्देवी भागवत पुराण के तीसरे स्कंद तथा श्री शिव पुराण का छटां तथा सातवां रूद्र संहिता अध्याय प्रभु को साक्षी रखकर गीता जी पर हाथ रख कर पढ़ें तथा अनुवाद सुनाऐं। महर्षि सर्वानन्द जी ने पवित्र गीता जी पर हाथ रख कर शपथ ली की सही-सही सुनाऊँगा।

पवित्र पुराणों को प्रभु कबीर (कविर्देव) जी के कहने के पश्चात् ध्यान पूर्वक पढ़ा। श्री शिव पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार) में पृष्ठ नं. 100 से 103 पर लिखा है कि सदाशिव अर्थात् काल रूपी ब्रह्म तथा प्रकृति (दुर्गा) के संयोग (पति-पत्नी व्यवहार) से सतगुण श्री विष्णु जी, रजगुण श्री ब्रह्मा जी तथा तमगुण श्री शिवजी का जन्म हुआ। यही प्रकृति (दुर्गा) जो अष्टंगी कहलाती है, त्रिदेव जननी(तीनों ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी) की माता कहलाती है।

पवित्र श्री मद्देवी पुराण(गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादक श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी) तीसरे स्कंध में पृष्ठ नं. 114 से 123 तक में स्पष्ट वर्णन है कि भगवान विष्णु जी कह रहे हैं कि यह प्रकृति (दुर्गा) हम तीनों की जननी है। मैंने इसे उस समय देखा था जब मैं छोटा-सा बच्चा था। माता की स्तुति करते हुए श्री विष्णु जी ने कहा कि हे माता मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शिव तो नाशवान हैं। हमारा तो आविर्भाव(जन्म) तथा तिरोभाव(मृत्यु) होती है। आप प्रकृति देवी हो। भगवान शंकर ने कहा कि हे माता यदि ब्रह्मा व विष्णु आप से उत्पन्न हुए हैं तो मैं शंकर भी आप (दुर्गा) से ही उत्पन्न हुआ हूँ अर्थात् आप मेरी भी माता हो।

महर्षि सर्वानन्द जी पहले सुने सुनाए अधूरे शास्त्र विरुद्ध ज्ञान (लोकवेद) के आधार पर तीनों श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव को अविनाशी व अजन्मा कहा करता था। पुराणों को पढ़ता भी था फिर भी अज्ञानी ही था। क्योंकि ब्रह्म(काल) पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 10 में कहता है कि मैं सर्व प्राणियों (जो मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में मेरे अधीन हैं) की बुद्धि हूँ। जब चाहूँ ज्ञान प्रदान कर दूं तथा जब चाहूँ अज्ञान भर दूं। उस समय पूर्ण परमात्मा द्वारा पुराणों के अध्याय तथा पृष्ठ बताने के बाद काल (ब्रह्म) का दबाव हट गया तथा सर्वानन्द जी को स्पष्ट ज्ञान हुआ। वास्तव में ऐसा ही लिखा है। परन्तु मान-हानि के भय से कहा कि मैंने सब पढ़ लिया। ऐसा कहीं नहीं लिखा है। कविर्देव (कबीर परमेश्वर) से कहा तू झूठा है। तू क्या जाने शास्त्रों के विषय में। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। फिर क्या था, सर्वानन्द जी ने धारा प्रवाहित संस्कृत बोलना प्रारम्भ कर दिया। बीस मिनट तक कण्ठस्थ की हुई कोई और ही वेदवाणी बोलता रहा, पुराण नहीं सुनाया।

सर्व उपस्थित भोले-भाले श्रोतागण जो उस संस्कृत को समझ भी नहीं रहे थे, प्रभावित होकर

सर्वानन्द महर्षि जी के समर्थन में वाह-वाह महाज्ञानी कहने लगे। भावार्थ है कि परमेश्वर कबीर (कविर्देव) जी को पराजित कर दिया तथा महर्षि सर्वानन्द जी को विजयी घोषित कर दिया। परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी ने कहा कि सर्वानन्द जी आपने पवित्र गीता जी की कसम खाई थी, वह भी भूल गए। जब आप सामने लिखी शास्त्रों की सच्चाई को भी नहीं मान रहे हो सोए हुए व्यक्ति को जगाया जा सकता है जो जान बूझ कर सोने का बहाना कर रहा हो उसे जगाया नहीं जा सकता कबीर जान बूझ साची तजे करै झूठ से नेह। ताकी संगति हे प्रभु स्वपन में भी न दे। इसलिए हे सर्वानन्द मैं हारा तुम जीते।

एक जमींदार का पुत्र सातवीं कक्षा में पढ़ता था। उसने कुछ अंग्रेजी भाषा को जान लिया था। एक दिन दोनों पिता पुत्र खेतों में बैल गाड़ी लेकर जा रहे थे। सामने से एक अंग्रेज आ गया। उसने बैलगाड़ी वालों से अंग्रेजी भाषा में रास्ता जानना चाहा। पिता ने पुत्र से कहा बेटा यह अंग्रेज अपने आप को ज्यादा ही शिक्षित सिद्ध करना चाहता है। आप भी तो अंग्रेजी भाषा जानते हो। निकाल दे इसकी मरोड़। सुना दे अंग्रेजी बोल कर। किसान के लड़के ने अंग्रेजी भाषा में बीमारी की छुट्टी के लिए प्रार्थना-पत्र पूरा सुना दिया। अंग्रेज उस नादान बच्चे की नादानी को भांप कर कि पूछ रहा हूँ रास्ता, सुना रहा है बीमारी की छुट्टी का प्रार्थना - पत्र। अपनी कार लेकर माथे में हाथ मार कर चल पड़ा। किसान ने अपने विजेता पुत्र की कमर थप-थपाई तथा कहा वाह पुत्र! मेरा तो जीवन सफल कर दिया। आज तुने अंग्रेज को अंग्रेजी भाषा में पराजित कर दिया। तब पुत्र ने कहा पिता जी मुझे माई बैस्ट फ्रेंड एस्से (मेरा खास दोस्त नामक प्रस्ताव) भी याद है। वह सुना देता तो अंग्रेज कार गाड़ी छोड़ कर भाग जाता। इसी प्रकार कविर्देव जी पूछ कुछ रहें हैं और सर्वानन्द जी उत्तर कुछ दे रहे हैं। इस प्रकार शास्त्रार्थ ने तत्वज्ञान को उलझा रखा है।

परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा कि सर्वानन्द जी आप जीते मैं हारा। महर्षि सर्वानन्द जी ने कहा लिख कर दे दो, मैं कच्चा कार्य नहीं करता। परमात्मा कबीर (कविर्देव) जी ने कहा कि यह कृपा भी आप कर दो। लिख लो जो लिखना है, मैं अंगूठा लगा दूंगा। महर्षि सर्वानन्द जी ने लिख लिया कि शास्त्रार्थ में सर्वानन्द विजयी हुआ तथा कबीर साहेब पराजित हुआ तथा कबीर परमेश्वर से अंगूठा लगवा लिया। अपनी माता जी के पास जाकर सर्वानन्द जी ने कहा कि माता जी लो आपके गुरुदेव को पराजित करने का प्रमाण। भक्तमति शारदा जी ने कहा पुत्र पढ़ कर सुनाओ। जब सर्वानन्द जी ने पढ़ा उसमें लिखा था कि शास्त्रार्थ में सर्वानन्द पराजित हुआ तथा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) विजयी हुआ। सर्वानन्द जी की माता जी ने कहा पुत्र आप तो कह रहे थे कि मैं विजयी हुआ हूँ, तुम तो हार कर आये हो। महर्षि सर्वानन्द जी ने कहा माता जी मैं कई दिनों से लगातार शास्त्रार्थ में व्यस्त था, इसलिए निंद्रा वश होकर मुझ से लिखने में गलती लगी है। फिर जाता हूँ तथा सही लिख कर लाऊँगा। माता जी ने शर्त रखी थी कि विजयी होने का कोई लिखित प्रमाण देगा तो मैं मानूँगी, मौखिक नहीं। महर्षि सर्वानन्द जी दोबारा गए तथा कहा कि कबीर साहेब मेरे लिखने में कुछ त्रुटि रह गई है, दोबारा लिखना पड़ेगा। साहेब कबीर जी ने कहा कि फिर लिख लो। सर्वानन्द जी ने फिर

लिख कर अंगूठा लगवा कर माता जी के पास आया तो फिर विपरीत ही पाया। कहा माता जी फिर जाता हूँ। तीसरी बार लिखकर लाया तथा मकान में प्रवेश करने से पहले पढ़ा ठीक लिखा था। सर्वानन्द जी ने उस लेख से दृष्टि नहीं हटाई तथा चलकर अपने मकान में प्रवेश करता हुआ कहने लगा कि माता जी सुनाऊँ, यह कह कर पढ़ने लगा तो उसकी आँखों के सामने अक्षर बदल गए। तीसरी बार फिर यही प्रमाण लिखा गया कि शास्त्रार्थ में सर्वानन्द पराजित हुए तथा कबीर साहेब विजयी हुए। सर्वानन्द बोल नहीं पाया। तब माता जी ने कहा पुत्र बोलता क्यों नहीं? पढ़कर सुना क्या लिखा है। माता जानती थी कि नादान पुत्र पहाड़ से टकराने जा रहा है। माता जी ने सर्वानन्द जी से कहा कि पुत्र परमेश्वर आए हैं, जाकर चरणों में गिर कर अपनी गलती की क्षमा याचना कर ले तथा उपदेश ले कर अपना जीवन सफल कर ले। सर्वानन्द जी अपनी माता जी के चरणों में गिर कर रोने लगा तथा कहा माता जी यह तो स्वयं प्रभु आए हैं। आप मेरे साथ चलो, मुझे शर्म लगती है। सर्वानन्द जी की माता अपने पुत्र को साथ लेकर प्रभु कबीर के पास गई तथा सर्वानन्द जी को भी कबीर परमेश्वर से उपदेश दिलाया। तब उस महर्षि कहलाने वाले नादान प्राणी का पूर्ण परमात्मा के चरणों में आने से ही उद्धार हुआ। पूर्ण ब्रह्म कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा सर्वानन्द आपने अक्षर ज्ञान के आधार पर भी शास्त्रों को नहीं समझा। क्योंकि मेरी शरण में आए बिना ब्रह्म(काल) किसी की बुद्धि को पूर्ण विकसित नहीं होने देता। अब फिर पढ़ो इन्हीं पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी तथा पवित्र पुराणों को। अब आप ब्राह्मण हो गए हो। ''ब्राह्मण सोई ब्रह्म पहचाने'' विद्वान वही है जो पूर्ण परमात्मा को पहचान ले। फिर अपना कल्याण करवाए।

विशेष :- आज सन् 2006 से लगभग 600 वर्ष पूर्व यही पवित्र वेदों, पवित्र गीता जी व पवित्र पुराणों में लिखा ज्ञान कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी ने अपनी साधारण वाणी में भी दिया था। जो उस समय से तथा आज तक के महर्षियों ने व्याकरण त्रुटि युक्त भाषा कह कर पढ़ना भी आवश्यक नहीं समझा तथा कहा कि कबीर तो अज्ञानी है, इसे अक्षर ज्ञान तो है ही नहीं। यह क्या जाने संस्कृत भाषा में लिखे शास्त्रों में छुपे गूढ़ रहस्य को। हम विद्वान हैं जो हम कहते हैं वह सब शास्त्रों में लिखा है तथा श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी के कोई माता-पिता नहीं हैं। ये तो अजन्मा-अजर-अमर-अविनाशी तथा सर्वेश्वर, महेश्वर, मृत्युंजय हैं। सर्व सृष्टी रचन हार हैं, तीनों गुण युक्त हैं। आदि आदि व्याख्या ठोक कर अभी तक कहते रहें। आज वे ही पवित्र शास्त्र अपने पास हैं। जिनमें तीनों प्रभुओं (श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण, श्री शिव जी तमगुण) के माता-पिता का स्पष्ट विवरण है। उस समय अपने पूर्वज अशिक्षित थे तथा शिक्षित वर्ग को शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान नहीं था। फिर भी कबीर परमेश्वर (कविर्देव) के द्वारा बताए सत्यज्ञान को जान बूझ कर झूठला दिया कि कबीर झूठ कह रहा है किसी शास्त्र में नहीं लिखा है कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी के कोई माता-पिता हैं।

आज सर्व मानव समाज बहन-भाई, बालक व जवान तथा बुजुर्ग, बेटे तथा बेटियाँ शिक्षित हैं। आज कोई यह नहीं बहका सकता कि शास्त्रों में ऐसा नहीं लिखा जैसा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) साहेब जी की अमृत वाणी में लिखा है।

अमृतवाणी पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की :-

धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पति भाई।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
माँ अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवों का भ्रम नशाओ।।
भ्रम गए जग वेद पुराणा, आदि राम का भेद न जाना।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरें पार।।
धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।
यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो एक राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवोंका भरम नशाओ।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोइ बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
मां अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। हे साहेब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।

धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उसको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्मको ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

इसके पश्चात् महर्षि सर्वानन्द जी ने चारों वेदों को तत्वज्ञान के आधार से समझा। वास्तविकता से परिचित स्वयं हुआ तथा अन्य को भी समझाया।

''वेदों में कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर का प्रमाण''

(पवित्र वेदों में प्रवेश से पहले)

चारों वेद प्रभु जानकारी के पवित्र प्रमाणित शास्त्र हैं। पवित्र वेदों की रचना उस समय हुई थी जब कोई अन्य धर्म नहीं था। इसलिए पवित्र वेदवाणी किसी धर्म से सम्बन्धित नहीं है, केवल आत्म कल्याण के लिए है। इनको जानने के लिए निम्न व्याख्या बहुत ध्यान तथा विवेक के साथ पढ़नी तथा विचारनी होगी।

प्रभु की विस्तृत तथा सत्य महिमा वेद बताते हैं। (अन्य शास्त्र''श्री गीता जी व चारों वेदों तथा पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त महान संतों तथा स्वयं कबीर साहेब(कविर्देव) जी की अपनी पूर्ण परमात्मा की अपनी अमृत वाणी के अतिरिक्त'' किसी ऋषि साधक की अपनी उपलब्धि है। जैसे छः शास्त्र ग्यारह उपनिषद् तथा सत्यार्थ प्रकाश आदि। यदि ये वेदों की कसौटी में खरे नहीं उतरते हैं तो यह सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है।)

पवित्र वेद तथा गीता जी स्वयं काल प्रभु(ब्रह्म) दत्त हैं। जिन में भक्ति विधि तथा उपलब्धि दोनों सही तौर पर वर्णित हैं। इनके अतिरिक्त जो पूजा विधि तथा अनुभव हैं वह अधूरा समझें। यदि इन्हीं के अनुसार कोई साधक अनुभव बताए तो सत्य जानें। क्योंकि कोई भी प्राणी प्रभु से अधिक नहीं जान सकता।

वेदों के ज्ञान से पूर्वोक्त महात्माओं का विवरण सही मिलता है। इससे सिद्ध हुआ कि वे सर्व महात्मा पूर्ण थे। पूर्ण परमात्मा का साक्षात्कार हुआ है तथा बताया है वह परमात्मा कबीर

साहेब(कविर् देव) है।

वही ज्ञान चारों पवित्र वेद तथा पवित्र गीता जी भी बताते हैं

कलियुगी ऋषियों ने वेदों का टीका (भाषा भाष्य) ऐसे कर दिया जैसे कहीं दूध की महिमा कही गई हो और जिसने कभी जीवन में दूध देखा ही न हो और वह अनुवाद कर रहा हो, वह ऐसे करता है :-

पोष्टिकाहार असि। पेय पदार्थ असि। श्वेदसि।
अमृत उपमा सर्वा मनुषानाम पेय्याम् सः त्वम् दूग्धः असिः।

पौष्टिकाहार असि=कोई शरीर पुष्ट कर ने वाला आहार है (पेय पदार्थ) पीने का तरल पदार्थ (असि) है। (श्वेत्) सफेद (असि) है। (अमृत उपमा) अमृत सदृश है (सर्व) सब (मनुषानाम्) मनुष्यों के (पेय्याम्) पीने योग्य (दूग्धः) पौष्टिक तरल (असि) है।

भावार्थ किया :- कोई सफेद पीने का तरल पदार्थ है जो अमृत समान है, बहुत पौष्टिक है, सब मनुष्यों के पीने योग्य है, वह स्वयं तरल है। फिर कोई पूछे कि वह तरल पदार्थ कहाँ है? उत्तर मिले वह तो निराकार है। प्राप्त नहीं हो सकता। यहाँ पर दूग्धः को तरल पदार्थ लिख दिया जाए तो उस वस्तु ''दूध'' को कैसे पाया व जाना जाए जिसकी उपमा ऊपर की है? यहाँ पर (दूग्धः) को दूध लिखना था जिससे पता चले कि वह पौष्टिक आहार दूध है। फिर व्यक्ति दूध नाम से उसे प्राप्त कर सकता है।

आओ विचार करें :- यदि कोई कहे दुग्धः को दूध कैसे लिख दिया? यह तो वाद-विवाद का प्रत्यक्ष प्रमाण ही हो सकता है। जैसे दुग्ध का दूध अर्थ गलत नहीं है। भाषा भिन्न होने से हिन्दी में दूध तथा क्षेत्रीय भाषा में दूधू लिखना भी संस्कृत भाषा में लिखे दुग्ध का ही बोध है। जैसे पलवल शहर के आसपास के ग्रामीण परवर कहते हैं। यदि कोई कहे कि परवर को पलवल कैसे सिद्ध कर दिया, मैं नहीं मानता। यह तो व्यर्थ का वाद विवाद है। ठीक इसी प्रकार कोई कहे कि कविर्देव को कबीर परमेश्वर कैसे सिद्ध कर दिया यह तो व्यर्थ का वाद-विवाद ही है। जैसे ''यजुर्वेद'' है यह एक धार्मिक पवित्र पुस्तक है जिसमें प्रभु की यज्ञीय स्तुतियों की ऋचाऐं लिखी हैं तथा प्रभु कैसा है? कैसे पाया जाता है? सब विस्तृत वर्णन है।

अब पवित्र यजुर्वेद की महिमा कहें कि प्रभु की यज्ञीय स्तुतियों की ऋचाओं का भण्डार है। बहुत अच्छी विधि वर्णित है। एक अनमोल जानकारी है और यह लिखें नहीं कि वह ''यजुर्वेद'' है अपितु यजुर्वेद का अर्थ लिख दें कि यज्ञीय स्तुतियों का ज्ञान है। तो उस वस्तु(पवित्र पुस्तक) को कैसे पाया जा सके? उसके लिए लिखना होगा कि वह पवित्र पुस्तक ''यजुर्वेद'' है जिसमें यज्ञीय ऋचाऐं हैं।

अब यजुर्वेद की सन्धिच्छेद करके लिखें। यजुर्+वेद, भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है।

यजुः+वेद भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है। जिसमें यज्ञीय स्तुति की ऋचाऐं हैं। उस धार्मिक पुस्तक को यजुर्वेद कहते हैं।

ठीक इसी प्रकार चारों पवित्र वेदों में लिखा है कि वह कविर्देव(कबीर परमेश्वर) है। जो सर्व शक्तिमान, जगत्पिता, सर्व सृष्टी रचनहार, कुल

मालिक तथा पाप विनाशक व काल की कारागार से छुटवाने वाला अर्थात् बंदी छोड़ है।

इसको कविर्+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर का बोध है।

कविः+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर अर्थात् कविर् प्रभु का ही बोध है।

इसलिए कविर्देव उसी कबीर साहेब का ही बोध करवाता है- सर्व शक्तिमान, अजर-अमर, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार कुल मालिक है। क्योंकि पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त सन्तों ने अपनी-अपनी मातृभाषा में 'कविर्' को 'कबीर' बोला है तथा 'वेद' को 'बेद' बोला है। इसलिए 'व' और 'ब' के अन्तर हो जाने पर भी पवित्र शास्त्र वेद का ही बोध है।

विचार करें :- जैसे कोई अंग्रेजी भाषा में लिखें कि **God (Kavir) Kaveer is all mighty** *इसका हिन्दी अनुवाद करके लिखें कविर या कवीर परमेश्वर सर्व शक्तिमान है। अब अंग्रेजी भाषा में तो हलन्त(्) की व्यवस्था ही नहीं है। फिर मात्र भाषा में इसी को कबीर कहने तथा लिखने लगे।*

यही परमात्मा कविर्देव(कबीर परमेश्वर) तीन युगों में नामान्तर करके आते हैं जिनमें इनके नाम रहते हैं - सतयुग में सत सुकृत, त्रेतायुग में मुनिन्द्र, द्वापर युग में करुणामय तथा कलियुग में कबीर देव (कविर्देव)। वास्तविक नाम उस पूर्ण ब्रह्म का कविर् देव ही है। जो सृष्टी रचना से पहले भी अनामी लोक में विद्यमान थे। इन्हीं के उपमात्मक नाम सतपुरुष, अकाल मूर्त, पूर्ण ब्रह्म, अलख पुरुष, अगम पुरुष, परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। उसी परमात्मा को चारों पवित्र वेदों में ''कविरमितौजा'', ''कविरघांरि'', ''कविरग्नि'' तथा ''कविर्देव'', कहा है तथा सर्वशक्तिमान, सर्व सृष्टी रचन हार बताया है। पवित्र कुरान शरीफ में सुरत फुर्कानी नं. 25 आयत नं. 19,21,52,58,59 में भी प्रमाण है।

कई एक का विरोध है कि जो शब्द कविर्देव' है इसको सन्धिच्छेद करने से कविः+देवः बन जाता है यह कबिर् परमेश्वर या कबीर साहेब कैसे सिद्ध किया? व को ब तथा छोटी इ (ि) की मात्रा को बड़ी ई (ी) की मात्रा करना बेसमझी है।

आओ विचार करें :- एक ग्रामीण लड़के की सरकारी नौकरी लगी। जिसका नाम कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर सरकारी कागजों में तथा करमबिर पुत्र श्री धरमबिर पुत्र परताप गाँव के चौकीदार की डायरी में जन्म के समय का लिखा था। सरकार की तरफ से नौकरी लगने के बाद जाँच पड़ताल कराई जाती है। एक सरकारी कर्मचारी जाँच के लिए आया। उसने पूछा कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर का मकान कौन-सा है, उसकी अमूक विभाग में नौकरी लगी है। गाँव में कर्मवीर को कर्मा तथा उसके पिता जी को धर्मा तथा दादा जी को प्रता आदि उर्फ नामों से जानते थे। व्यक्तियों ने कहा इस नाम का लड़का इस गाँव में नहीं है। काफी पूछताछ के बाद एक लड़का जो कर्मवीर का सहपाठी था, उसने बताया यह कर्मा की नौकरी के बारे में है। तब उस बच्चे ने बताया यही कर्मबीर उर्फ कर्मा तथा धर्मबीर उर्फ धर्मा ही है। फिर उस कर्मचारी को शंका उत्पन्न हुई कि कर्मबीर नहीं कर्मवीर है। उसने कहा चौकीदार की डायरी लाओ, उसमें भी लिखा था - ''करमबिर पुत्र धरमबिर पुत्र परताप'' पूरा ''र'' ''व'' के स्थान

पर ''ब'' तथा छोटी ''ि'' की मात्रा लगी थी। तो भी वही बच्चा कर्मवीर ही सिद्ध हुआ, क्योंकि गाँव के नम्बरदारों तथा प्रधानों ने भी गवाही दी कि बेशक मात्रा छोटी बड़ी या ''र'' आधा या पूरा है, लड़का सही इसी गाँव का है। सरकारी कर्मचारी ने कहा नम्बरदार अपने हाथ से लिख दे। नम्बरदार ने लिख दिया मैं करमविर पूतर धरमविर को जानता हूँ जो इस गाम का बासी है और हस्ताक्षर कर दिए। बेसक नम्बरदार ने विर में छोटी ई(ि) की मात्रा का तथा करम में बड़े ''र'' का प्रयोग किया है, परन्तु हस्ताक्षर करने वाला गाँव का गणमान्य व्यक्ति है। किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि नाम की स्पेलिंग गलत नहीं होती।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का नाम सरकारी दस्तावेज(वेदों) में कविर्देव है, परन्तु गाँव(पृथ्वी) पर अपनी-2 मातृ भाषा में कबीर, कबिर, कबीरा, कबीरन् आदि नामों से जाना जाता है। इसी को नम्बरदारों(आँखों देखा विवरण अपनी पवित्र वाणी में ठोक कर गवाही देते हुए आदरणीय पूर्वोक्त सन्तों) ने कविर्देव को हक्का कबीर, सत् कबीर, कबीरा, कबीरन्, खबीरा, खबीरन् आदि लिख कर हस्ताक्षर कर रखे हैं।

वर्तमान (सन् 2006)से लगभग 600 वर्ष पूर्व जब परमात्मा कबीर जी (कविर्देव जी) स्वयं प्रकट हुए थे उस समय सर्व सद्ग्रन्थों का वास्तविक ज्ञान लोकोक्तियों (दोहों, चोपाईयों, शब्दों अर्थात् कविताओं) के माध्यम से साधारण भाषा में जन साधारण को बताया था। उस तत्व ज्ञान को उस समय के संस्कृत भाषा व हिन्दी भाषा के ज्ञाताओं ने यह कह कर ठुकरा दिया की कबीर जी तो अशिक्षित है। इस के द्वारा कहा गया ज्ञान व उस में उपयोग की गई भाषा व्याकरण दृष्टिकोण से ठीक नहीं है। जैसे कबीर जी ने कहा है :--

कबीर बेद मेरा भेद है, मैं ना बेदों माहीं।
जौण बेद से मैं मिलु ये बेद जानते नाहीं।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो चार वेद है ये मेरे विषय में ही ज्ञान बता रहे हैं परन्तु इन चारों वेदों में वर्णित विधि द्वारा मैं (पूर्ण ब्रह्म) प्राप्त नहीं हो सकता। जिस वेद (स्वसम अर्थात् सूक्ष्म वेद) में मेरी प्राप्ति का ज्ञान है। उस को चारों वेदों के ज्ञाता नहीं जानते। इस वचन को सुनकर। उस समय के आचार्यजन कहते थे कि कबीर जी को भाषा का ज्ञान नहीं है। देखो वेद का बेद कहा है। नहीं का नाहीं कहा है। ऐसे व्यक्ति को शास्त्रों का क्या ज्ञान हो सकता है? इसलिए कबीर जी मिथ्या भाषण करते हैं। इस की बातों पर विश्वास नहीं करना। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ग्यारह पृष्ठ 306 पर कबीर जी के विषय में यही कहा है। वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) के विषय में विज्ञापनों में लिखे लेख पर आर्य समाज के आचार्यों ने यही आपत्ति व्यक्त की थी कि''रामपाल को हिन्दी भाषा भी सही नहीं लिखनी आती व को ब लिखता है छोटी-बड़ी मात्राओं को गलत लिखता है। कोमा व हलन्त भी नहीं लगाता। इसका ज्ञान कैसे सही माना जाए।

विचार करें :-- किसी लड़के का विवाह एक सुन्दर सुशील युवती से हो गया। उसने साधारण वस्त्र पहने थे। मेकअप (हार, सिंगार) नहीं कर रखा था। उस के विषय में कोई कहे कि ''यह भी कोई विवाह है। वधु ने मेकअप (हार, सिंगार-आभुषण आदि नहीं पहने) नहीं किया है। विचार

करें विवाह का अर्थ है पुरूष को पत्नि प्राप्ति। यदि मेकअप (श्रृंगार) नहीं कर रखा तो वांच्छित वस्तु प्राप्त है। यदि श्रृंगार कर रखा है लड़की ने तो भी बुरा नहीं परन्तु एक श्रृंगार के अभाव से विवाह को ही नकार देना कौन सी बुद्धिमता है। ठीक इसी प्रकार परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ तथा मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा दिया तत्व ज्ञान है। वास्तविक ज्ञान प्राप्त है। यदि भाषा में श्रृंगार का अभाव अर्थात् मात्राओं व हलन्तों की कमी है तो विद्वान पुरूष कृप्या ठीक करके पढ़ें।

इस तरह इस उलझी हुई ज्ञानगुत्थी को सुलझाया जाएगा। इसमें भाषा तथा व्याकरण की भूमिका क्या है?

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपने द्वारा रचे पवित्र उपनिषद् ''सत्यार्थ प्रकाश'' के सातवें समुलास में (पृष्ठ नं. 217, 212 अजमेर से प्रकाशित तथा पृष्ठ संख्या 173 दीनानगर दयानन्द मठ पंजाब से प्रकाशित) लिखा है, उसका भावार्थ है कि ब्रह्म ने वेद वाणी चार ऋषियों में जीवस्थ रूप से बोले। जैसे लग रहा था कि ऋषि वेद बोल रहे थे, परन्तु ब्रह्म बोल रहा था तथा ऋषियों का मुख प्रयोग कर रहा था। (''जीवस्थ रूप'' का भावार्थ है जैसे ऋषियों के अन्दर कोई और जीव स्थापित होकर बोल रहा हो) बाद में उन ऋषियों को कुछ मालुम नहीं कि क्या बोला, क्या लिखा।

(जैसे कोई प्रेतात्मा किसी के शरीर में प्रवेश करके बोलती है। उस समय लग रहा होता है कि शरीर वाला जीव ही बोल रहा है, परन्तु प्रेत के निकल जाने के बाद उस शरीर वाले जीव को कुछ मालूम नहीं होता, मैंने क्या बोला था)।

इसी प्रकार बाद में ऋषियों ने वेद भाषा को जानने के लिए व्याकरण निघटु आदि की रचना की। जो स्वामी दयानन्द जी के शब्दों में सत्यार्थ प्रकाश तीसरे समुल्लास (पृष्ठ नं. 80, अजमेर से प्रकाशित तथा पृष्ठ संख्या 64 दीनानगर पंजाब से प्रकाशित) में पवित्र चारों वेद ईश्वर कृत होने से निभ्रात हैं, वेदों का प्रमाण वेद ही हैं। चारों ब्राह्मण, व्याकरण, निघटु आदि ऋषियों कृत होने से त्रुटि युक्त हो सकते हैं। उपरोक्त विचार स्वामी दयानन्द जी के हैं।

विचार करें वेद पढ़ने वाले ऋषियों के अपने विचारों से रचे उपनिषद् एक दूसरे के विपरीत व्याख्या कर रहे हैं। इसलिए वेद ज्ञान को तत्वज्ञान से ही समझा जा सकता है। तत्वज्ञान (स्वसम वेद) पूर्ण ब्रह्म कविर्देव ने स्वयं आकर बताया है तथा चारों वेदों का ज्ञान ब्रह्म द्वारा बताया गया है और वेदों को बोलने वाला ब्रह्म स्वयं पवित्र यजुर्वेद अध्याय नं. 40 मन्त्र नं. 10 में कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म को कोई तो (सम्भवात्) जन्म लेकर प्रकट होने वाला अर्थात् आकार में(आहुः) कहता है तथा कोई (असम्भवात्) जन्म न लेने वाला अर्थात् व निराकार(आहुः) कहते हैं। परन्तु इसका वास्तविक ज्ञान तो(धीराणाम्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी संतजन (विचचक्षिरे) पूर्ण निर्णायक भिन्न भिन्न बताते हैं (शुश्रुम्) उसको ध्यानपूर्वक सुनो। इससे स्वसिद्ध है कि वेद बोलने वाला ब्रह्म भी स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म के बारे में मैं भी पूर्ण ज्ञान नहीं रखता। उसको तो कोई तत्वदर्शी संत ही बता सकता है। इसी प्रकार इसी अध्याय के मन्त्र नं. 13 में कहा है कि कोई तो (विद्याया) अक्षर ज्ञानी एक भाषा के जानने वाले को ही विद्वान

कहते हैं, दूसरे (अविद्याया) निरक्षर को अज्ञानी कहते हैं, यह जानकारी भी (धीराणाम्) तत्वदर्शी संतजन ही (विचचक्षिरे) विस्तृत व्याख्या ब्यान करते हैं (तत्) उस तत्वज्ञान को उन्हीं से (शुश्रुम्) ध्यानपूर्वक सुनो अर्थात् वही तत्वदर्शी संत ही बताएगा कि विद्वान अर्थात् ज्ञानी कौन है तथा अज्ञानी अर्थात् अविद्वान कौन है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों को विवेचन करके सद्भावना पूर्वक पुनर् विचार करें तथा व को ब तथा छोटी बड़ी मात्राओं की शुद्धि-अशुद्धि से ही ज्ञानी व अज्ञानी की पहचान नहीं होती, वह तो तत्वज्ञान से ही होती है।

(कविर् देव) = कबीर परमेश्वर के विषय में 'व' को 'ब' कैसे सिद्ध किया है? छोटी इ (ि) की मात्रा बड़ी ई(ी) की मात्रा कैसे सिद्ध हो सकती है? इस वाद-विवाद में न पड़कर तत्वज्ञान को समझना है।

''पूर्ण परमात्मा अपने वास्तविक ज्ञान को स्वयं ही ठीक-ठीक बताता है''

प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 से 18

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा के वास्तविक नाम का ज्ञान कराऐं। इसी का बोध मंत्र 17 से 20 में विशेष विवरण से कहा है तथा जहाँ पूर्ण परमात्मा रहता है उस स्थान का वर्णन किया है।

''पवित्र वेदों में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) का प्रमाण''

ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मंत्र 16

स्वायुधः सोतृभिः पृयमानोभयर्ष गुह्यं चारु नाम।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम।।

अनुवाद :– हे परमेश्वर! आप (स्वायुधः) अपने तत्व ज्ञान रूपी शस्त्र युक्त हैं। उस अपने तत्व ज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा (पूयमानः) मवाद रूपी अज्ञान को नष्ट करें तथा (सोतृभिः) अपने उपासक को अपने (गृह्यम्) गुप्त (चारु) सुखदाई श्रेष्ठ (नाम) नाम व मन्त्र का (अभ्यर्ष) ज्ञान कराऐं (सोमदेव) हे अमर परमेश्वर आप के तत्व ज्ञान की (गा) लोकोक्ति गान की (श्रवस्याभि) कानों को अतिप्रिय लगने वाली विश्रुति (वायुमभि) प्राणा अर्थात् जीवनदायीनि (वाजम् अभि) शुद्ध घी जैसी श्रेष्ठ (सप्तिरिव) घोड़े जैसी तिव्रगामी तथा बलशाली है अर्थात् आप के द्वारा दिया गया तत्व ज्ञान जो कविताओं, लोकोक्तियों में है वह मोक्ष दायक है उस अपने यथार्थ ज्ञान व वास्तविक अपने नाम का ज्ञान कराऐं।

भावार्थ :- इस मन्त्र 16 में प्रार्थना की गई है कि अमर प्रभु का वास्तविक नाम क्या है तथा तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटे अर्थात् अपना वास्तविक नाम व तत्वज्ञान कराऐ। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 के श्लोक 1 से 4 में कहा है कि संसार रूपी वृक्ष के विषय में जो सर्वांग सहित जानता है वह तत्वदर्शी सन्त है। उस तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर उस परमेश्वर के परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में नहीं आते। गीता ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि मैं भी उसी की शरण हूँ। ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में किए प्रश्न का उत्तर निम्न श्लोक में दिया है कहा है कि उस अमर पुरूष

का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17

शिशुम् जज्ञानम् हर्य तम् मृजन्ति शुम्भन्ति वहिन मरूतः गणेन।
कविर्गीर्भि काव्येना कविर् सन्त् सोमः पवित्रम् अत्येति रेभन्।।

अनुवाद – सर्व सृष्टी रचनहार (हर्य शिशुम्) सर्व कष्ट हरण पूर्ण परमात्मा मनुष्य के विलक्षण बच्चे के रूप में (जज्ञानम्) जान बूझ कर प्रकट होता है तथा अपने तत्वज्ञान को (तम्) उस समय (मृजन्ति) निर्मलता के साथ (शुम्भन्ति) उच्चारण करता है। (वह्निः) प्रभु प्राप्ति की लगी विरह अग्नि वाले (मरुतः) भक्त (गणेन) समूह के लिए (काव्येना) कविताओं द्वारा कवित्व से (पवित्रम् अत्येति) अत्यधिक निर्मलता के साथ (कविर् गीर्भि) कविर् वाणी अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (रेभन्) ऊंचे स्वर से सम्बोधन करके बोलता है, हुआ वर्णन करता (कविर् सन्त् सोमः) वह अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष ही संत अर्थात् ऋषि रूप में स्वयं कविर्देव ही होता है। परन्तु उस परमात्मा को न पहचान कर कवि कहने लग जाते हैं। परन्तु वह पूर्ण परमात्मा ही होता है। उसका वास्तविक नाम कविर्देव है।

भावार्थ - ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त नं. 96 मन्त्र 16 में कहा है कि आओ पूर्ण परमात्मा के वास्तविक नाम को जाने इस मन्त्र 17 में उस परमात्मा का नाम व परिपूर्ण परिचय दिया है। वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा मनुष्य के बच्चे के रूप में प्रकट होकर कविर्देव अपने वास्तविक ज्ञानको अपनी कबीर बाणी के द्वारा अपने हंसात्माओं अर्थात् पुण्यात्मा अनुयाईयों को ऋषि, सन्त व कवि रूप में कविताओं, लोकोक्तियों के द्वारा सम्बोधन करके अर्थात् उच्चारण करके वर्णन करता है। इस तत्वज्ञान के अभाव से उस समय प्रकट परमात्मा को न पहचान कर केवल ऋषि व संत या कवि मान लेते हैं वह परमात्मा स्वयं भी कहता है कि मैं पूर्ण ब्रह्म हूँ सर्व सृष्टी की रचना भी मैं ही करता हूँ। मैं ऊपर सतलोक (सच्चखण्ड) में रहता हूँ। परन्तु लोक वेद के आधार से परमात्मा को निराकार माने हुए प्रजाजन नहीं पहचानते जैसे गरीबदास जी महाराज ने काशी में प्रकट परमात्मा को पहचान कर उनकी महिमा कही तथा उस परमेश्वर द्वारा अपनी महिमा बताई थी उसका यथावत् वर्णन अपनी वाणी में किया

गरीब, जाति हमारी जगत गुरू, परमेश्वर है पंथ।
दासगरीब लिख पड़े नाम निरंजन कंत।।
गरीब, हम ही अलख अल्लाह है, कुतूब गोस और पीर।
गरीबदास खालिक धनी, हमरा नाम कबीर।।
गरीब, ऐ स्वामी सृष्टा मैं, सृष्टी हमरे तीर।
दास गरीब अधर बसू। अविगत सत कबीर।।

इतना स्पष्ट करने पर भी उसे कवि या सन्त, भक्त या जुलाहा कहते हैं। परन्तु वह पूर्ण परमात्मा ही होता है। उसका वास्तविक नाम कविर्देव है। वह स्वयं सतपुरुष कबीर ही ऋषि, सन्त व कवि रूप में होता है। परन्तु तत्व ज्ञानहीन ऋषियों व संतों गुरूओं के अज्ञान सिद्धांत के आधार पर आधारित प्रजा उस समय अतिथि रूप में प्रकट परमात्मा को नहीं पहचानते क्योंकि उन अज्ञानि ऋषियों, संतों व गुरूओं ने परमात्मा को निराकार बताया होता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 18

ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्राणीथः पदवीः कवीनाम्। तृतीयम् धाम महिषः सिषा सन्त् सोमः विराजमानु राजति स्टुप्।।

अनुवाद – वेद बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि (य) जो पूर्ण परमात्मा विलक्षण बच्चे के रूप में आकर (कवीनाम्) प्रसिद्ध कवियों की (पदवीः) उपाधी प्राप्त करके अर्थात् एक संत या ऋषि की भूमिका करता है उस (ऋषिकृत्) संत रूप में प्रकट हुए प्रभु द्वारा रची (सहस्राणीथः) हजारों वाणी (ऋषिमना) संत स्वभाव वाले व्यक्तियों अर्थात् भक्तों के लिए (स्वर्षाः) स्वर्ग तुल्य आनन्द दायक होती हैं। (सोम) वह अमर पुरुष अर्थात् सतपुरुष (तृतीया) तीसरे (धाम) मुक्ति लोक अर्थात् सत्यलोक की (महिषः) सुदृढ़ पृथ्वी को (सिषा) स्थापित करके (अनु) पश्चात् (सन्त्) मानव सदृश संत रूप में (स्टुप्) गुबंद अर्थात् गुम्बज में उच्चे टिले जैसे सिंहासन पर (विराजमनु राजति) उज्जवल स्थूल आकार में अर्थात् मानव सदृश तेजोमय शरीर में विराजमान है।

भावार्थ - मंत्र 17 में कहा है कि कविर्देव शिशु रूप धारण कर लेता है। लीला करता हुआ बड़ा होता है। कविताओं द्वारा तत्वज्ञान वर्णन करने के कारण कवि की पदवी प्राप्त करता है अर्थात् उसे ऋषि, सन्त व कवि कहने लग जाते हैं, वास्तव में वह पूर्ण परमात्मा कविर् ही है। उसके द्वारा रची अमृतवाणी कबीर वाणी (कविर्वाणी) कही जाती है, जो भक्तों के लिए स्वर्ग तुल्य सुखदाई होती है। वही परमात्मा तीसरे मुक्ति धाम अर्थात् सत्यलोक की स्थापना करके तेजोमय मानव सदृश शरीर में आकार में गुबन्द में सिंहासन पर विराजमान है।

इस मंत्र में तीसरा धाम सतलोक को कहा है। जैसे एक ब्रह्म का लोक जो इक्कीस ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, दूसरा परब्रह्म का लोक जो सात संख ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है, तीसरा परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म का सतलोक है जो असंख्य ब्रह्मण्डों का क्षेत्र है। क्योंकि पूर्ण परमात्मा ने सत्यलोक में सत्यपुरूष रूप में विराजमान होकर नीचे के लोकों की रचना की है। इसलिए नीचे गणना की गई।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 19

चमूसत् श्येनः शकुनः विभृत्वा गोबिन्दुः द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्।
अपामूर्भिः सचमानः समुद्रम् तुरीयम् धाम महिषः विवक्ति।।

अनुवाद – (च) तथा (मृषत्) पवित्र (गोविन्दुः) कामधेनु रूपी सर्व मनोकामना पूर्ण करने वाला पूर्ण परमात्मा कविर्देव (विभृत्वा) सर्व का पालन करने वाला है (श्येनः) सफेद रंग युक्त (शकुनः) शुभ लक्षण युक्त (चमूसत्)सर्वशक्तिमान है। (द्रप्सः) दही की तरह अति गुणकारी अर्थात् पूर्ण मुक्ति दाता (आयुधानि) तत्व ज्ञान रूपी धनुष बाण युक्त अर्थात् सारंगपाणी प्रभु है। (सचमानः) वास्तविक (विभ्रत्) सर्व का पालन–पोषण करता है। (अपामूर्भिः) गहरे जल युक्त (समुद्रम्) जैसे सागर में सर्व दरिया गिरती हैं तो भी समुद्र विचलित नहीं होता ऐसे सागर की तरह गहरा गम्भीर अर्थात् विशाल (तुरीयम्) चौथे (धाम) लोक अर्थात् अनामी लोक में (महिषः) उज्जवल सुदृढ़ पृथ्वी पर (विवक्ति) अलग स्थान पर भिन्न भी रहता है यह जानकारी कविर्देव स्वयं ही भिन्न–भिन्न करके विस्तार से देता है।

भावार्थ - मंत्र 18 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) तीसरे मुक्ति धाम अर्थात् सतलोक में रहता है। इस मंत्र 19 में कहा है कि अत्यधिक सफेद रंग वाला पूर्ण प्रभु जो कामधेनु की तरह सर्व मनोकामना पूर्ण करने वाला है, वही वास्तव में सर्व का पालन कर्ता है। वही कविर्देव जो मृतलोक में शिशु रूप धारकर आता है वही तत्व ज्ञान रूपी धनुषबाण युक्त

अर्थात् सारंगपाणी है तथा जैसे समुद्र सर्व जल का स्रोत है वैसे ही पूर्ण परमात्मा से सर्व की उत्पत्ति हुई है। वह पूर्ण प्रभु चौथे धाम अकह अर्थात् अनामी लोक में रहता हैं, जैसे प्रथम सतलोक दूसरा अलख लोक, तीसरा अगम लोक, चौथा अनामी लोक है। इसलिए इस मंत्र 19 में स्पष्ट किया है कि कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अनामी पुरुष रूप में चौथे धाम अर्थात् अनामी अर्थात् अकह लोक में भी अन्य तेजोमय रूप धारण करके रहता है। पूर्ण परमात्मा ने अकह लोक में विराजमान होकर नीचे के अन्य तीन लोकों (अगम लोक, अलख लोक तथा सत्य लोक) की रचना की इसलिए अकह लोक चौथाधाम कहा है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 20

मर्यः न शुभ्रस्तन्वम् मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्
वृषेव यूथा परिकोशम् अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः इरा विवेश

अनुवाद – पूर्ण परमात्मा कविर्देव जो चौथे धाम अर्थात् अनामी लोक में तथा तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक में रहता है वही परमात्मा का (न मर्यः) मनुष्य जैसा पाँच तत्व का शरीर नहीं है परन्तु है, मनुष्य जैसा समरूप (मृजनः) निर्मल मुखमण्डल युक्त आकार में विशाल श्वेत शरीर धारण करता हुआ ऊपर के लोकों में विद्यमान है (न अत्यः शुभ्रस्तन्वम्) वह पूर्ण प्रभु न अधिक तेजोमय शरीर सहित अर्थात् हल्के तेज पुंज के शरीर सहित वहाँ से (सृत्वा) गति करके अर्थात् चलकर (न) वही समरूप परमात्मा हमारे लिए अविलम्ब (इरा) पृथ्वी पर (विवेश) अन्य वेशभूषा अर्थात् भिन्न रूप (चम्वोः) धारण करके आता है। सतलोक तथा पृथ्वी लोक पर लीला करता है (यूथा) जो बहुत बड़े समुह को वास्तविक(सनये) सनातन पूजा की (वृषेव) वर्षा करके (धनानाम्) उन रामनाम की कमाई से हुए धनियों को (कनिक्रदत्) मंद स्वर से अर्थात् स्वांस–उस्वांस से मन ही मन में उचारण करके पूजा करवाता है, जिससे असंख्य अनुयाईयों का पूरा संघ (परि कोशम्) पूर्व वाले सुख सागर रूप अमृत खजाने अर्थात् सत्यलोक को (अर्षन्) पूजा करके प्राप्त करता है।

भावार्थ - साकार पूर्ण परमेश्वर ऊपर के लोकों से चलकर हल्के तेज पुंज का श्वेत शरीर धारण करके यहाँ पृथ्वी लोक पर भी अतिथी रूप में अर्थात् कुछ समय के लिए आता है तथा अपनी वास्तविक पूजा विधि का ज्ञान करा के बहुत सारे भक्त समूह को अर्थात् पूरे संघ को सत्यभक्ति के धनी बनाता है, असंख्य अनुयाईयों का पूरा संघ सत्य भक्ति की कमाई से पूर्व वाले सुखमय लोक पूर्ण मुक्ति के खजाने को अर्थात् सत्यलोक को साधना करके प्राप्त करता है।

''शिशु रूप में प्रकट पूर्ण प्रभु कुँवारी गायों का दूध पीता है''

जिस समय सन् 1398 में पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) कविर्देव काशी में आए थे उस समय उनका जन्म किसी माता के गर्भ से नहीं हुआ था, क्योंकि वे सर्व के सृजनहार हैं।

बन्दी छोड़ कबीर प्रभु काशी शहर में लहर तारा नामक सरोवर में कमल के फूल पर एक नवजात शिशु का रूप धारण करके विराजमान हुए थे। जिसे नीरु नामक जुलाहा घर ले गया था, लीला करता हुआ बड़ा होकर कबीर प्रभु अपनी महिमा आप ही अपनी अमृतवाणी कविर्वाणी(कबीर वाणी) द्वारा उच्चारण करके सत्यज्ञान वर्णन किया जो आज सर्व शास्त्रों से मेल खा रही हैं।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

अनुवाद – (उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुखदायक सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर की (पातवे) वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हो अर्थात् कुँवारी (धेनवः) गायों द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश करके की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है सुख सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति कुंवारी गायों द्वारा की जाती है अर्थात् उस समय कुँवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

-: पूर्ण प्रभु कभी माँ से जन्म नहीं लेता का प्रमाण :-

यजुर्वेद अध्याय नं. 40 श्लोक नं. 8 में प्रत्यक्ष प्रमाण है।

यजुर्वेद अध्याय न. 40 श्लोक न. 8(संत रामपाल दास द्वारा भाषा–भाष्य):–

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरँ् शुद्धमपापविद्यम्।

कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतो अर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।। 8 ।।

सः–परि अगात–शुक्रम्–अकायम्–अव्रणम्–अस्नाविरम्–शुद्धम्–अपाप –अविंद्धम्–कविर्–मनीषी–परिभूः–स्वयम्भूः–याथातथ्यतः–अर्थान्–व्यदधात्–शाश्वतीभ्यः–समाभ्यः

अनुवादः– (सः) वह (परि अगात) पूर्ण रूप से अवर्णनीय सर्वशक्तिवान पूर्ण ब्रह्म अविनाशी है। (अस्नाविरम्) बिना नाड़ी के शरीर युक्त है (शुक्रम) वीर्य से बने (अकायम्) पंचतत्व के शरीर रहित (अव्रणम्) छिद्र रहित व चार वर्ण, ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्री, शुद्र से भिन्न (शुद्धम्) पवित्र (अपाप) निष्पाप (कविर) कविर्देव अर्थात् कबीर परमात्मा है, वह कबीर (मनीषी) महाविद्वान है जिसका ज्ञान (अविंद्धम्) अछेद है अर्थात् उनके ज्ञान को तर्क–वितर्क में कोई नहीं काट सकता वह (परिभूः) सर्व प्रथम प्रकट होने वाला प्रभु है जो सर्व प्रथम प्रकट होने वाला तथा सर्व मनोकामना पूर्ण करने वाला प्रभु है (व्यदधात्) नाना प्रकार के ब्रह्मण्ड़ों को रचने वाला (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (याथा तथ्यतः) जैसा कि प्रमाणित है तथा (अर्थान्) सही अर्थों में अर्थात् वास्तव में (शाश्वतीभ्यः) जो उस प्रभु के विषय में लिखी अमर वाणी में प्रमाण है वह वैसा ही अविनाशी पूर्ण शक्ति युक्त अमृत वाणी से अर्थात् शब्द शक्ति से समृद्ध (समाभ्यः) पूर्ण ब्रह्म के समान कांति युक्त है अर्थात् पूर्ण परमात्मा के समान आभा वाला स्वयं कबीर ही पूर्ण ब्रह्म है।

भावार्थ :- कविर्देव का शरीर नाड़ियों से बना हुआ नहीं है। यह परमेश्वर अविनाशी है। इसका शरीर माता-पिता के संयोग से वीर्य से बना पाँच तत्व का नहीं है। यह परमात्मा कविर् है वही सर्वज्ञ है वह महाविद्वान है उसके ज्ञान को तर्क-वितर्क में कोई नहीं काट सकता अर्थात् उसका ज्ञान अछेद है। वह स्वयं प्रकट होता है, सर्व प्रथम प्रकट होने वाला है, माँ से जन्म नहीं लेता। सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, पूर्ण शक्ति युक्त अमृत वाणी से अर्थात् शब्द शक्ति का धनी व कांति युक्त है। कुछ पाठक केवल एक शब्द 'अकायम' को पढ़ कर निर्णय कर लेते हैं कि परमात्मा काया रहित है। परंतु इसके साथ-2 'स्वयंभू' शब्द भी लिखा है जिसका अर्थ है स्वयं प्रकट होने वाला। भावार्थ है कि परमात्मा सशरीर है उसका शरीर पांच तत्व से नहीं बना है। उस पूर्ण परमात्मा का बिना नाड़ी का तेजपुंज का शरीर बना है। इसलिए यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र एक में लिखा है कि ' अग्ने तनूः असि'।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 4 मंत्र 3

शिशुम् न त्वा जेन्यम् वर्धयन्ती माता विभर्ति सचनस्यमाना
धनोः अधि प्रवता यासि हर्यन् जिगीषसे पशुरिव अवसृष्टः

अनुवाद :– हे पूर्ण परमात्मा जब आप (शिशुम्) बच्चे रूप को प्राप्त होते हो अर्थात् बच्चे रूप में प्रकट होते हो तो (त्वा) आपको (माता) माता (जेन्यम्) जन्म देय कर (विभर्ति) पालन पोषण करके (न वर्धयन्ती) बड़ा नहीं करती। अर्थात् पूर्ण परमात्मा का जन्म माता के गर्भ से नहीं होता (सचनस्यमाना) वास्तव में आप अपनी रचना (धनोः अधि) शब्द शक्ति के द्वारा करते हो तथा (हर्यन्) भक्तों के दुःख हरण हेतु (प्रवता) निम्न लोकों को मनुष्य की तरह आकर (यासि) प्राप्त करते हो। (पशुरिव) पशु की तरह कर्म बन्धन में बंधे प्राणी को काल से (जिगीषसे) जीतने की इच्छा से आकर (अव सृष्टः) सुरक्षित रचनात्मक विधि अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना द्वारा पूर्ण रूप से मुक्त कराते हो।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा काल के बन्धन में बंधे प्राणी को छुड़ाने के लिए आता है। बच्चे का रूप स्वयं अपनी शब्द शक्ति से धारण करता है। परमात्मा का जन्म व पालन-पोषण किसी माता द्वारा नहीं होता। इसी यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 8 में स्वयम्भूः परिभू अर्थात् स्वयं प्रकट होने वाला प्रथम प्रभु उसका (अकायम्) पाँच तत्व से बना शरीर नहीं है। इसलिए उस परमात्मा का शरीर (अस्नाविरम) नाड़ी रहित है। वह परमात्मा कविर मनिषी अर्थात् कवीर परमात्मा है जो सर्वज्ञ है।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 4 मंत्र 4

मूरा अमूर न वयं चिकित्वो महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से।
वश्ये व्रिश्चरति जिह्वयादत्रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन्।।४।।

अनुवाद :– पूर्ण परमात्मा की महिमा के (मूरा) मूल अर्थात् आदि व (अमूर) अन्त को (वयम्) हम (न चिकत्वः) नहीं जानते। अर्थात् उस परमात्मा की लीला अपार है (अग्ने) हे परमेश्वर (महित्वम्) अपनी महिमा को (त्वम् अंग) स्वयं ही आंशिक रूप से (वित्से) ज्ञान कराता है। (वशये) अपनी शक्ति से अपनी महिमा का साक्षात आकार में आकर (चरति) विचरण करके (जिह्वयात्) अपनी जुबान से (व्रिः) अच्छी प्रकार वर्णन करता है। (विरपतिःस्रन्) सर्व सृष्टी का पति होते हुए भी (युवतिम्) नारी को (न) नहीं (रेरिह्यते) भोगता।

भावार्थ - वेदों को बोलने वाला ब्रह्म कह रहा है कि मैं तथा अन्य देव पूर्ण परमात्मा की शक्ति के आदि तथा अंत को नहीं जानते। अर्थात् परमेश्वर की शक्ति अपार है। वही परमेश्वर स्वयं मनुष्य रूप धारण करके अपनी आंशिक महिमा अपनी अमृतवाणी से घूम-फिर कर अर्थात् रमता-राम रूप से उच्चारण करके वर्णन करता है। जब वह परमेश्वर मनुष्य रूप धार कर पृथ्वी पर आता है तब सर्व का पति होते हुए भी स्त्री भोग नहीं करता।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 4 मंत्र 5

कूचिज्जायते सनयासु नव्यो वने तस्थौ पलितो धूमकेतुः।
अस्नातापो वृषभो न प्रवेति सचेतसो यं प्रणयन्त मर्ताः।।5।।

अनुवाद :– जब पूर्ण परमात्मा मानव रूप में लीला करने के लिए पृथ्वी पर आता है उस समय जो भी पूर्व जन्म के संस्कारी प्राणी (कुचित्) कहीं भी (सनयासु) पूर्व संस्कारवश (जायते) उत्पन्न हुए हैं उनको तथा (नव्य) नए मनुष्य शरीर धारी प्राणियों में भक्ति संस्कार उत्पन्न करने के लिए (बने) बस्ती या बन में कहीं भी (तस्थौ) निवास करते हैं उनके पास (पलितः) वृद्ध रूप से सफेद दाढ़ी युक्त होकर (वृषभः) सर्व शक्तिमान

सर्व श्रेष्ठ प्रभु (चमकेतुः) बादलों वाली बिजली जैसी तीव्रता से (प्रवेति) चल कर आता है। (न सचेतसः) अज्ञानियों को सत्यज्ञान से (अपः अस्नात) अमृतवाणी रूपी जल से स्नान करवाकर अर्थात् निर्मल करके (यम् मर्ताः) काल जाल में फंसे मनुष्यों को (प्रणयन्त) मोक्ष प्राप्त कराता है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा जब मानव शरीर धारण कर पृथ्वी लोक पर आता है उस समय अन्य वृद्ध रूप धारण करके पूर्व जन्म के भक्ति युक्त भक्तों के पास तथा नए मनुष्यों को नए भक्ति संस्कार उत्पन्न करने के लिए वृद्ध रूप में सफेद दाढ़ी युक्त होकर जंगल तथा ग्राम में वसे भक्तों के पास विद्युत जैसी तीव्रता से जाता है अर्थात् जब चाहे जहाँ प्रकट हो जाता है। उन्हें सत्य भक्ति प्रदान करके मोक्ष प्राप्त कराता है।

उदाहरण :- (1) आदरणीय दादू साहेब जी को पूर्ण परमात्मा श्वेत दाढ़ी युक्त वृद्ध रूप में मिले थे। दादू जी ने उन्हें बूढ़ा बाबा कहा था। फिर दूसरी बार जब उसी वृद्ध रूप में मिले तब अपना पूर्ण भेद दादू जी को बताया था।

(2) आदरणीय धर्मदास जी को मथूरा में जिन्दा बाबा अर्थात् प्रौढ़ आयु के शरीर में मिले थे। धर्मदास जी की आत्मा को सतलोक लेकर गए। अपना पूर्ण भेद बताकर पुनर् पृथ्वी पर छोड़ा तब सन्त धर्मदास जी ने बताया कि यह काशी में जुलाहे की भूमिका करने स्वयं पूर्ण परमात्मा कबीर ही आए हैं।

(3) आदरणीय नानक साहेब जी को बेई नदी पर जिन्दा बाबा के रूप में मिले। उनको भी सच्चखण्ड अर्थात् सतलोक दिखाया तथा कहा मैं काशी में जुलाहे की भूमिका कर रहा हूँ। तीन दिन पश्चात् श्री नानक जी की आत्मा सतलोक से लौटी तथा बताया कि ''सतपुरूष ही पूर्ण परमात्मा है। वह धाणक रूप में कबीर ही पृथ्वी पर भी आया हुआ है।

(4) श्री मलूक दास जी को मिले उन्हें भी सतलोक में देखकर बताया कि जो वृद्धावस्था में सन्त कबीर जी हैं यह ही अन्य रूप में पूर्ण परमात्मा आया हुआ है।

(5) घीसा दास जी को वृद्ध के रूप में मिले।

(6) सन्त गरीबदास जी को वृद्ध रूप में मिले यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 4 मन्त्र 5 में है।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 4 मंत्र 6

तनूत्यजा इव तस्करा वनर्गू रशनाभिः दशभिः अभ्यधीताम्
इयन्ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्षवा रथम् न शुचयरिः अंगैः।

अनुवाद :– (तस्करा) काल भगवान को धोखा देकर एक साधारण व्यक्ति की भूमिका चोरों की तरह करके रहने वाला पूर्ण प्रभु (रशनाभिः) अपनी अमृतवाणी से (अभ्यधीताम्) प्रभु भक्ति के अत्यधिक प्यासे भक्तों को (दशभिः) दशधा भक्ति का ज्ञान देता है। उस तत्वज्ञान के आधार से (तनूत्यजा) शरीर का त्याग (इव) इस प्रकार कर जाते हैं जैसे (वनर्गू) जंगल में विष्ठा का त्याग अनिवार्य जानकर कर देते हैं। इसी प्रकार तत्वज्ञान से मृत्यु समय शरीर त्याग का भय नहीं बनता। क्योंकि नौधा भक्ति तो ब्रह्म–काल तक की साधना है जो श्रीरामचन्द्र जी ने भक्तमति शबरी को प्रदान की थी। दशधा भक्ति पूर्ण परमात्म कविर्देव की है जो स्वयं उसी प्रभु ने प्रदान की है जिसे पाँचवां वेद भी कहा जाता है। (अग्ने) परमेश्वर की (मनीषा) तत्वज्ञान युक्त सत्य दशधा भक्ति (इयन्ते) इतनी अधिक प्रभावशाली (नव्यसी) नूतन है कि भक्त जन (रथम्) शरीर रूपी रथ को (युक्षवा) छोड़कर जब चलता है तब (अंगैः) किसी भी शरीर के भाग में (न शुचयरि) किसी प्रकार की पीड़ा

नहीं होती।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा इस काल के लोक से अपने भक्तों को निकालने के लिए अपनी महिमा को छुपाकर एक अत्यधिक गरीब व्यक्ति की तरह भूमिका करता है, {इसीलिए श्री नानक साहेब जी ने पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर करतार) को दोनों स्थानों पर (सत्यलोक में तथा पृथ्वी पर काशी में) देखकर कहा था कि यह ठगवाड़ा ठगी देश, फाई सूरत मलुकि वेश, खरा सियाना बहुता भार, धाणक रूप रहा करतार।} अपने अनुयाईयों को काल-ब्रह्म की नौधा भक्ति से भिन्न दशधा नूतन भक्ति प्रदान करता है। जिस तत्वज्ञान से प्राप्त भक्ति की भजन कमाई के आधार से साधक इस पाँच तत्व वाले शरीर को ऐसे त्याग जाता है जैसे समय पर मल त्याग (टट्टी त्याग करना) करना अति अनिवार्य होता है। जिस तत्वज्ञान के आधार से व भक्ति की कमाई के कारण शरीर त्यागते समय किसी भी अंग में कष्ट नहीं होता।

आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने कहा है -

देह गिरी तो क्या भया, झूठी सब पटिट। पक्षी उड़ा आकाश में, चलते कर गया बीट।।

मूल जीव की तुलना में पाँच तत्व का शरीर तो पक्षी के शरीर की तुलना में जैसे विष्ठा होता है ऐसा जानना चाहिए। भक्ति पूरी होने के पश्चात् इस पंच भौतिक शरीर का त्याग अनिवार्य जानना चाहिए।

ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 4 मंत्र 7

ब्रह्म च ते जातवेदः नमः च इयम् च गीः सदमित् वर्धनी
भूत् रक्षणः अग्ने तनयानि तोका रक्षेतः न तन्वः अप्रयुच्छन्।

अनुवाद :- (जातवेदः) हे जातदेव अर्थात् तत्वज्ञान सहित प्रकट पूर्ण प्रभु (ते) आपकी (च) तथा (ब्रह्म) ब्रह्म काल की (इयम्) इस प्रकार जो पूर्वोक्त मंत्र 6 में वर्णित है जैसा नौधा भक्ति में ॐ नाम का जाप मुख्य होता है तथा दशधा भक्ति में तत् जो सांकेतिक नाम का जाप प्रमुख होता है, इन दोनों मंत्रों के योग से सत्यनाम बनता है। इसे (नमः) विनम्र भाव से की पूजा (च) तथा (गीः) अर्थात् सुबह, दोपहर तथा शाम के समय स्तुति वाणी द्वारा करने से (सदमित्) शास्त्रविधि अनुसार साधना करने वाले सत्यनाम साधकों को हर प्रकार से (रक्षणः) संरक्षण (च) तथा (वर्धनी) चहूँमुखी धन-धान्य की वृद्धि (भूत्) होती है। (अग्ने) पूर्ण परमात्मा (तन्वः) सशरीर आकर (अप्रयुच्छन्) अधिक उमंग के साथ भाग्य से अधिक सुख प्रदान करके (तोका) बच्चों की ही (न) नहीं अपितु (तनयानि) कई पीढ़ी तक पौत्रों-परपौत्रों अर्थात् वंशजों की (रक्षोतः) रक्षा करता है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा की दशधा भक्ति तथा ब्रह्म की नौधा भक्ति से बने ॐ व तत् मंत्र जो सत्यनाम कहलाता है, उस के जाप करने वाले सत्यभक्ति साधक को पूर्ण परमात्मा शरण में लेकर उसकी तथा कई पीढ़ियों तक की रक्षा व भक्ति तथा धन-धान्य की वृद्धि करता है। जो भाग्य में न हो उस सुख को भी प्रदान करता है।

ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 1 मंत्र 5

अग्निः होता कविः क्रतुः सत्यः चित्रश्रवस्तम् देवः देवेभिः आगमत्।।5।।

अनुवाद : (होता) साधकों के लिए पूजा करने योग्य अविनाशी (अग्निः) प्रभु (क्रतुः) सर्व सृष्टी रचनहार (कविर्) कविर/कविर्देव है जो (सत्यः चित्र) अविनाशी विचित्र तेजोमय शरीर युक्त आकार में (श्रवस्तम्) सुना जाता है। वह (देवः) परमेश्वर (देवेभिः) सत्य भक्ति करने वाले सर्व विकार रहित देव स्वरूप साधकों द्वारा

(आगमत्) प्राप्त होता है।

भावार्थ :- सर्व सृष्टी रचनहार कुल का मालिक कविर्देव अर्थात् कबीर परमात्मा है। जो तेजोमय शरीर युक्त है। जो साधकों के लिए पूजा करने योग्य है। जिसकी प्राप्ति तत्वदर्शी संत के द्वारा बताए वास्तविक भक्ति मार्ग से देवस्वरूप(विकार रहित) भक्त को होती है।

ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 1 मंत्र 6

यत् अंग दाशुषे त्वम् अग्ने भद्रम् करिष्यसि तवेत् तत् सत्यम् अंगिरः।।6।।

अनुवाद :–(अग्ने) परमेश्वर (त्वम्) आपके (यत्) जो (अंग) शरीर के अवयव हैं, उनके दर्शन (दाशुषे) सर्वस दान करने वाले दास भाव वाले भक्तों के लिए ही सुलभ हैं जिसके दर्शन (भद्रम्) भले पुरुष ही (करिष्यसि) करते हैं (तवेत्) आप का ही (तत्) वह (सत्यम्) अविनाशी अर्थात् सदा रहने वाला (अंगिरः) तेजोमय शरीर है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा का अविनाशी तेजोमय शरीर है। उसके दर्शन समर्पण करके तत्वदर्शी सन्त द्वारा साधना करने वाले साधक को ही होते हैं।

ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 1 मंत्र 7

उप त्वा अग्ने दिवे दिवे दोषावस्तः धिया वयम् नमः भरन्त् एमसि ।।7।।

अनुवाद : (उप अग्ने) परमेश्वर अन्य रूप धारण करके उप प्रभु अर्थात् गुरुदेव रूप में परमात्मा की उपमा युक्त (त्वा) स्वयं (दिवे–दिवे) दिन – दिन अर्थात् समय–समय पर नाना प्रकार के (दोषावस्तः) कम तेजोमय भुजा आदि छोटे अवयव युक्त शरीर में यहाँ आकर कुछ समय वास करते हो। उस समय (वयम्) हम (धिया) अपनी बुद्धि अर्थात् सोच समझ अनुसार (नमो) नमस्कार, स्तुति, साधना से (भरन्त् एमसि) प्राय भक्ति का भार अधिक भरते हैं अर्थात् फिर भी हम अपनी सूझ–बूझ से ही भक्ति करके पूर्ति प्राय करते हैं।

भावार्थ :- परमेश्वर कविर्देव अन्य हल्के तेजपुंज का शरीर धारण करके उपअग्ने अर्थात् छोटे प्रभु (गुरुदेव) रूप में कुछ समय यहाँ मनुष्य की तरह वसते हैं। उस समय हम अपनी बुद्धि के अनुसार आप को समझकर आपके बताए मार्ग का अनुसरण करके अपनी भक्ति साधना करके भक्ति धन की पूर्ति करते हैं। जो तत्वज्ञान स्वयं पूर्ण परमात्मा, अन्य उप-प्रभु रूप में प्रकट होकर (कविर् गिरः) कविर्वाणी अर्थात् कबीर वाणी कविताओं व दोहों तथा लोकोक्तियों द्वारा कवित्व से उच्चारण करते हैं उस तत्वज्ञान को बाद में सन्त जन ठीक से नहीं समझ पाते। उसी पूर्व उच्चारित वाणी को यथार्थ रूप से समझाने के लिए (उपअग्ने) उप प्रभु अर्थात् अपने दास को सतगुरु रूप में प्रकट करता है। सन्त गरीबदास जी छुड़ानी वाले ने ''असुर निकन्दन रमैणी'' में कहा है कि साहेब तख्त कबीर ख्वासा दिल्ली मण्डल लीजै वासा, सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी सुती धरती सूम जगायसी। ***जिसका भावार्थ है कि कबीर परमेश्वर के तख्त का निकटत्तम नौकर दिल्ली मण्डल भारतवर्ष में दिल्ली के आस-पास के क्षेत्र में जन्म लेगा तथा वह प्रभु का नौकर दिल्ली व उसके आस-पास के व्यक्तियों को भक्तिमार्ग पर लगाएगा। जो दान धर्म त्याग कर कृपण (कंजूस) हो गए हैं। वह प्रभु का दास पूर्व उच्चारित वाणी का यथार्थ ज्ञान कराएगा। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 5 में है। इस मन्त्र में उस प्रभु दास को उपवक्ता कहा है।***

ऋग्वेद मण्डल 1 सूक्त 2 मंत्र 1

वायो आयहि दर्शत् इमे सोमाः अरंकृताः। तेषाम् पाहि श्रुधी हवम्।।1।।

अनुवाद :– (वायो) सर्व प्राणियों के प्राणाधार समर्थ प्रभु (सोमाः अरंकृताः) अपनी अमर माया से रचे अपने शरीर को सर्व अंगों से अलंकृत किए हुए अमर पुरुष आप (आयहि) यहाँ आईए, हमें प्राप्त होईए(दर्शत इमे) आप साक्षात देखने योग्य हैं। (तेषाम्) आप की महिमा की (हवम्) भक्ति के विषय में (श्रुधी) केवल कहते सुनते हैं वास्तविक ज्ञान (पाहि) आप ही सुरक्षा के साथ प्रदान किजिए।

भावार्थ - हे अमर शरीर से सुशोभित अमर पुरुष अर्थात् पूर्ण परमात्मा आप साक्षात् दर्शन करने योग्य हैं। हम तो आपकी भक्ति व महिमा को केवल लोकवेद के आधार पर कहते-सुनते हैं। जैसी महिमा उपरोक्त ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 2 मन्त्र 1 में कही है उसी प्रकार आप अन्य तेजपुंज का शरीर धारण करके यहाँ आईए तथा वास्तविक ज्ञान आप स्वयं ही आकर कराईये।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 93 मंत्र 1 -

साकमुक्षः मर्जयन्तः स्वसारः दश धीरस्य धीतीयः धनुत्रीः हरिः
पर्य्य द्रवत् जाः सूर्यस्य द्रोणम् न नक्षे अत्यः न वाजी।

अनुवाद :– (धीरस्य) तत्वदर्शी की भूमिका हेतु तत्व दृष्टा के रूप में अवतरित साकार प्रभु (स्वसारः) अपने तत्वज्ञान के द्वारा (दश) दशधा भक्ति की (साकमुक्षः) उसी समय वर्षा करके बौछार बिखेरता है तथा (मर्जयन्तः) काल रूपी शिव अर्थात् ब्रह्म के (धनुत्रीः) तीन ताप रूपी त्रिशूल का (हरिः) हरण करने वाला वही प्रभु है। उस तत्वज्ञान को (धीतीयः) पीने अर्थात् ग्रहण करने वाला (पर्य्य द्रवत्) सर्वत्र समर्थ प्रभु की शक्ति का प्रभाव देखता है, उसे लगता है (नक्षे) तारा मण्डल में चांद की रोशनी रूपी (जाः) तीन लोक के उपज्ञान विचार हैं वे ऐसे है जैसे (सूर्यस्य) सूर्य के उदय होने पर (द्रोणम्) किरण कि रोशनी के समक्ष (न) नहीं के समान होते हैं। काल अर्थात् ब्रह्म ऐसे ही पूर्ण परमात्मा के सामने (अत्यः) अधिक (न वाजी) शक्ति शाली नहीं है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा स्वयं ही तत्वदृष्टा रूप से मनुष्य के साकार रूप में प्रकट होता है। उस समय काल रूपी ब्रह्म द्वारा दिए तीन लोक के लोकवेद वाले ज्ञान को समाप्त करता है तथा अपना तत्वज्ञान भी उसी समय प्रचार करता है। जिस किसी श्रद्धालु ने पूर्ण परमात्मा का ज्ञान ग्रहण कर लिया, उसे तीन लोक का ज्ञान तथा प्रभु ऐसे लगने लगते हैं जैसे रात्री में चन्द्र की महिमा तारामण्डल में होती है, परन्तु सूर्य उदय होने पर विद्यमान होते हुए भी नजर नहीं आते अर्थात् असार हो जाते हैं।

कबीर परमेश्वर ने अपनी महिमा अपनी अमृतवाणी में कही है :-

कबीर, तारामण्डल बैठ कर, चांद बड़ाई खाय।
उदय हुआ जब सूर्य का, स्यौं तारों छिप जाए।।

यही प्रमाण गीता अध्याय 2 श्लोक 46 में है कि बहुत बड़े जलाश्य की प्राप्ति के पश्चात् जैसे आस्था छोटे जलाश्य में रह जाती है उसी प्रकार तत्वज्ञान के आधार से पूर्ण परमात्मा की महिमा से परिचित होने के पश्चात् अन्य प्रभुओं (परब्रह्म, ब्रह्म, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) में आस्था रह जाती है तथा अन्य सन्तों, ऋषियों द्वारा दिया ब्रह्म तक के ज्ञान में भी वही आस्था रह जाती है अर्थात् वह ज्ञान तथा अन्य भगवान पूर्ण नहीं है। उनसे पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं हो सकता। जैसे छोटा जलाश्य तो एक वर्ष वर्षा न होने से जल रहित हो जाता है तथा बड़ा जलाश्य दस वर्ष भी वर्षा नहीं होती तो भी जल रहित नहीं होता। वह छोटा जलाश्य बुरा नहीं लगता परन्तु उसकी क्षमता का ज्ञान हो जाता है तथा बड़े जलाश्य की क्षमता उस से कहीं अधिक होती है। इसलिए

प्रत्येक प्राणी उस बड़े जलाश्य की ही शरण ग्रहण कर लेता है। ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा तथा अन्य प्रभुओं की क्षमता से परिचित व्यक्ति उस पूर्ण परमात्मा की ही शरण ग्रहण करता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 93 मंत्र 2

सम् मातृभिः न शिशुः वावशानः वृषा दधन्वे पुरुवरः अरिः मर्यः
न योषाम् अभि निष्कृतम् यन्त् सम् गच्छते कलश उस्त्रियाभिः।

अनुवाद :– उपरोक्त परमात्मा ही (सम्) उसी सम रूप में (वृषा) उसी महान् शक्ति युक्त (शिशुः) बच्चे का रूप (दधन्वे) धारण करके पृथ्वी पर अवतरित होता है वह प्रभु (वावशानः) दोनों स्थानों पर निवास करता है अर्थात् यहाँ पृथ्वी लोक पर भी तथा तीसरे पूर्ण मुक्ति धाम अर्थात् सत्यलोक में भी रहता है, उस समय (न मातृभिः) माता से जन्म नहीं लेता (पुरुवरः) सर्व श्रेष्ठ परमात्मा जब (मर्यः) मनुष्य रूप (अरिः) प्राप्त करके चल कर पाप कर्मों का (अरिः) शत्रु बन कर आता है उस समय (न योषाम् अभि) विषय वासना के लिए स्त्री ग्रहण नहीं करता। वही (उस्त्रियाभिः) सर्व शक्तिमान प्रभु (निष्कृतम्) निर्दोष (यन्त्) जहाँ से आता है (सम्) उसी के समान ज्यों का त्यों यथावत्(कलश) कलश रूपी शरीर सहित अर्थात् सशरीर (गच्छते) चला जाता है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा सत्यलोक तथा पृथ्वी लोक में दोनों स्थानों पर दो रूप बना कर रहता है। बच्चे रूप में आता है, वह किसी माता से उत्पन्न नहीं होता, जब लीला करता हुआ जवान होता है तब विषय भोग के लिए स्त्री ग्रहण नहीं करता। सशरीर आता है तथा शरीर से कोई विकार नहीं करता वह निर्दोष प्रभु अपनी लीला करके ज्यों का त्यों सशरीर जहाँ से आता है वहीं चला जाता है।

मात–पिता मेरे घर नहीं, ना मेरे घर दासी।
तारण–तरण अभय पद दाता, हूँ कबीर अविनाशी।।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 93 मंत्र 5

नुनः रयिम् उपमास्व नृवन्तम् पुनानः वाताप्यम् विश्वश्चन्द्रम्
प्र वन्दितुः ईन्दो तारि आयुः प्रातः मक्षु धियावसुः जगम्यात्।

अनुवाद :– (नुनः) निसंदेह (रयिम्) पूर्ण धनी परमेश्वर (नृवन्तम्) मनुष्य सदृश रूप धारण करके (पुनानः) फिर एक जीवन भर (उपमास्व) पूर्व की तरह उसी उपमा युक्त हों अर्थात् जैसे ऊपर के मंत्र में वर्णन है ऐसे एक बार फिर हमारे लिए पृथ्वी पर आएं। (विश्वश्चन्द्रम्) हे सर्व श्रेष्ठ आप (वाताप्यम्) प्राप्त करने योग्य (तारि) उज्जवल (ईन्दो) चन्द्रमा तुल्य शीतल सुखदायक परमात्मा आप (प्र वन्दितुः) शास्त्र अनुकूल सत्य भक्ति करने वाले उपासक को (मक्षु) भक्ति की कमाई रूपी धन का ढेर लगवाऐं अर्थात् अत्यधिक नाम कमाई का संचन करवाऐं। (आयुः प्रातः) आयु रूपी सुबह अर्थात् मनुष्य जीवन काल में ही (जगम्यात्) सतलोक से आकर जगत् में निवाश करें तथा (धियावसुः) हमारे को तत्वज्ञान से सत्य भक्ति करवाके सत्यलोक में ले जाकर स्थाई निवास प्रदान करें।

भावार्थ :- हे पूर्ण परमात्मा ! आप सर्व श्रेष्ठ हैं, आप की चाह सर्व प्राणियों को है। जैसे आप की उपरोक्त मंत्र में महिमा वर्णित है, उसी प्रकार एक बार फिर वास्तविक शक्ति युक्त जो आपका मनुष्य सदृश शरीर है, उसी में फिर मेरे मानव जीवन काल में आकर सत्यज्ञान व सत्य भक्ति करवाके सत्यलोक में स्थाई स्थान प्रदान करने की कृप्या करें।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मंत्र 2

द्विता व्यूर्ण्वन् अमृतस्य धाम स्वर्विदे भूवनानि प्रथन्त धियः

पिन्वानाः स्वसरे न गाव ऋतायन्तीः अभि वावश्र इन्दुम्।

अनुवाद :– जो सर्व सुखदायक पूर्ण परमात्मा इस पृथ्वी लोक पर सशरीर आकर कवि की भूमिका करता है वह (द्विता) दोनों स्थानों सतलोक व पृथ्वी लोक पर लीला करने वाला है। उस (अमृतस्य) अमर पुरुष का (व्यूर्वन्) विशाल (धाम) सतलोक स्थान (स्वर्विदे) महासुखदाई जानों, वही सतपुरुष पूर्ण ब्रह्म (भूवनानि) सर्व लोक लोकान्तर में भी इसी तरह सशरीर (स्वसरे) अपने मानव सदृश स्वरूप में (प्रथन्त) प्रकट होकर (धियः) सत्य ज्ञान प्रदान करके (पिन्वानाः) आता जाता रहता है। उस परमात्मा की पहुँच से कोई भी स्थान खाली नहीं है। (गाव) वह कामधेनु की तरह सर्व सुखमय पदार्थ प्रदान करने वाला (ऋतायन्तीः अभि) सत्यलोक से ही (न) नहीं इससे भी ऊपर के लोकों से आगन्तुक, (इन्दुम्) चन्द्रमा तुल्य शीतल सुखदाई प्रभु का (वावश्र) भिन्न–भिन्न स्थानों पर अन्य मानव सदृश रूप में भी वास है।

भावार्थ - कामधेनु की तरह सर्व सुखदायक पदार्थ प्रदान करने वाला लोक लोकान्तरों में नाना रूप बनाकर कवि उपमा से प्रसिद्ध होकर अभिनय करने वाला सत्य भक्ति प्रदान करने वाला परमात्मा सर्व ब्रह्मण्डों में विद्यमान रहता है तथा आता-जाता भी रहता है। उस परमात्मा का विशाल स्थान अर्थात् सत्यलोक है। वह पूर्ण परमात्मा ऊपर व नीचे, पृथ्वी व सतलोक व उससे भी ऊपर के स्थानों में भी वास करता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मंत्र 3

परि यत् कविर् काव्या भरते शुरो न रथो भूवनानि विश्वा देवेषु
यशः मर्ताय भूषन् दक्षाय रायः – पुरुभूषु नव्यः।

अनुवाद :– (यत्) जो परमात्मा (काव्या परि भरते) कवियों की भूमिका करके सत्य भक्ति भाव को परिपूर्ण रूप से प्रदान करता है वह (कविर्) कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। उसके समान (शुरो) कोई भी शूरवीर (न) नहीं है (विश्वा भूवनानि) सर्व ब्रह्मण्डों के (देवेषु) प्रभुओं में (रथः) उसकी शक्ति क्रिया अर्थात् समर्थता का (यशः) यश है। (मर्ताय भूषन्) मनुष्य रूप से सुशोभित होकर (दक्षाय) सर्वज्ञता व (नव्यः) सदा नवीन अर्थात् युवा रूप में समर्थ प्रभु (पुरुभूषु) पुरुषत्व का स्वामी (रायः) पूर्ण धनी परमेश्वर है।

भावार्थ - जो पूर्वोक्त परमात्मा कवियों की भूमिका करके अपना तत्वज्ञान प्रदान करता है वह कविर्देव है अर्थात् वह कबीर प्रभु है जिसकी प्रभुता सर्व ब्रह्मण्डों के प्रभुओं पर है। वह सदा एक रस रहता है अर्थात् मरता व जन्मता नहीं है, वह मनुष्य सदृश शरीर से सुशोभित है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मंत्र 1

कनिक्रन्ति हरिः सृज्यमानः सीदन् वनस्य जठरे पुनानः नृभिः
यतः कृणुते निर्णिजम् गाः अतः मती जनयत स्वधाभिः।

अनुवाद :– पूर्ण परमात्मा (कनिक्रन्ति) शब्द स्वरूप अर्थात् अविनाशी मनुष्य आकार में साक्षात प्रकट होता है। (सीदन्) दुःख को (हरिः) हरण करने वाला प्रभु (सृज्यमानः) स्वयं साक्षात्कार को प्राप्त होता है अर्थात् सशरीर प्रकट होता है। (वनस्य) संसार रूपी जंगल के (जठर) पेट रूपी पृथ्वी पर मनुष्य रूप स्थूल आकार में (पुनानः) पवित्र प्रभु विराजमान होता है। (यतः) जो भक्ति का प्रयत्न करने वाले (नृभिः) मनुष्यों के द्वारा (निर्णिजम्) साक्षात्कार (कृणुते) किया जाता है अर्थात् उन प्रभु भक्ति के प्रयत्न करने वालों को प्रभु स्वयं आकर मिलता है। (अतः) इस प्रकार (स्वधाभिः) अपनी शब्द शक्ति से मंत्र प्रदान करके (मतीजनयत्) सद्बुद्धि प्रदान करता है जिस आधार से भक्त जन (गाः) उस प्रभु की महिमा का गुणगान करते हैं।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा सशरीर संसार में पृथ्वी पर आकर अपनी सत्यभक्ति को प्रभु प्राप्ति

की तड़फ में लगे भक्त वृंद को स्वयं ही सत्यभक्ति प्रदान करता है जिससे सद्बुद्धि को प्राप्त होकर भक्त प्रभु की महिमा का गुणगान करते हैं।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मंत्र 2

हरिः सृजानः पथ्याम् ऋतस्य इयर्ति वाचम् अरितेव नावम्
देव देवानाम् गुह्यानि नाम अविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे।

अनुवाद :– (हरिः) पूर्वोक्त सर्व संकट विनाशक प्रभु (सृजानः) मनुष्य रूप धारण करके साक्षात प्रकट होता है। (वाचम्) अमृतवाणी के प्रवचन करके (ऋतस्य) सत्यनाम की (पथ्याम्) मर्यादा से शास्त्रानुकूल साधना करने की (इयर्ति) प्रेरणा करता है। (देवानाम्) देवताओं का भी (देव) परमेश्वर अर्थात् कुल का मालिक (गुह्यानि) गुप्त (नाम) भक्ति मंत्र अर्थात् नाम (अविष्कृणोति) आविष्कार की तरह प्रकट करता है {सोहं शब्द हम जग में लाए, सार शब्द हम गुप्त छुपाऐ–संत गरीबदास जी} जिससे (अतिरेव) काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार तथा अज्ञान रूपी छः शत्रुओं से (प्रवाचे) तत्वज्ञान के प्रवचनों द्वारा संसार सागर से ऐसे बचा लेता है जैसे जल पर (नावम्) नौका को नाविक सही तरीके से चलाता हुआ (बर्हिषि) भंवर चक्र से बचाकर बाहर कर देता है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा मनुष्य सदृश शरीर में साक्षात प्रकट होकर अपना तत्वज्ञान अपनी अमृतवाणी द्वारा बोलता है तथा गुप्त नाम जाप जो पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति का होता है आविष्कार सा करके उसे प्रकट करते हैं। जैसे आदरणीय गरीबदास साहेब जी ने अपनी अमृतवाणी में कहा है कि कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने बताया कि सोहं शब्द किसी भी शास्त्र में नहीं है, यह विकार व तीन ताप विनाश करने वाला मंत्र परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) इस संसार में लेकर आए हैं। अन्य को ज्ञान नहीं है, फिर भी सार शब्द गुप्त ही रखा है। जो साधक पथ पर अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार मर्यादा से चल कर उस समय सतगुरु रूप में आए प्रभु के वचनों अनुसार साधना करता है, उसके सर्व विकार व तीन ताप के कष्टों से नाविक की तरह संसार सागर से पार कर देता है। आविष्कार का भावार्थ है कि जैसे कोई पदार्थ यही कहीं से खोज कर सर्व के समक्ष उपस्थित करना जिस का अन्य को ज्ञान न हो। इसी प्रकार ये तीनों मन्त्र ओम्-तत्-सत् सद्ग्रन्थों में विद्यमान थे परन्तु अन्य किसी को ज्ञान नहीं था। जो अब मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा आविष्कृत किए गए हैं।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मंत्र 3

अपमिव अदूर्मयः ततुराणाः प्र मनिषा ईरते सोमम् अच्छ
नमस्यन्ति रूप यन्ति स चा च विशन्ति उशतीः उशन्तम्।

अनुवाद :– (सोमम्) पूर्ण परमात्मा (रूप अच्छ यन्ति) साकार में सुन्दर रूप धारण करता है। (मनिषा) भक्तात्मा को (प्र ईरते) प्रभु भक्ति के लिए प्रेरित करके भक्ति में ऐसे संलग्न करता है (अपमिव) जैसे जल की लहरें जल से अपना आत्म भाव रखती हैं (च) और (अदूर्मयः) जैसे लहरें लगातार चलती रहती हैं ऐसे प्रभु भक्ति करने वाली आत्मा (ततुराणाः) उस सतलोक स्थान को (नमस्यन्ति) पूजा करके प्राप्त करती है (च) और (उशन्तम्) उस सुन्दर पूर्ण परमात्मा को (सम्) अव्यवस्थित न होकर (उशतीः) भक्ति से शोभा युक्त हुई भक्त आत्मा (अविशन्ति) प्राप्त होती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा सशरीर आकर सत्य साधना प्रदान करता है, जिस कारण से सत्यभक्ति करने वाली भक्त आत्मा पूर्ण परमात्मा को साकार में मर्यादा से भक्ति निमित कारण

से प्राप्त करती है। जैसे समुद्र में लहरें निरन्तर उठती रहती हैं ऐसे प्रभु भक्ति की तड़फ में हृदय में हिलोर उठती रहें तथा स्मरण मन्त्र की याद सदा बनी रहे। इस प्रकार की गई भक्ति से साधना के आधार से भक्ति के धनी होकर परमात्मा प्राप्त होता है। इसलिए इस वेद मन्त्र में कहा है कि ऐसी लगन वाली भक्ति वह परमात्मा स्वयं उपवक्ता अर्थात् सद्गुरू रूप में प्रकट होकर प्रदान करता है। जैसे कबीर परमात्मा ने सुक्ष्म वेद अर्थात् अपनी अमृत वाणी में कहा है कि :--

स्मरण की सुध यों करों, जैसे पानी मीन। प्राण तजै पल बिछुड़े, सत् कबीर कह दीन्ह।।
स्मरण से मन लाईए जैसे नाद कुरंग। कह कबीर बिसरे नहीं, प्राण तजै तेही संग।।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मंत्र 5

इष्यन् वाचम् उपवक्तेव होतुः पुनान इन्दः विष्या
मनीषाम् इन्द्रः च यत् क्षयथः सौभगाय सुवीर्यस्य पतयः स्याम्।

अनुवाद – (इन्दः) मन भावन चन्द्रमा तुल्य शीतल सुखदाई प्रभु (पुनान्) फिर से आकर (उपवक्तेव) उपवक्ता रूप में अर्थात् स्वयं ही मनुष्य रूप में अपनी महिमा का वर्णन उपवक्ता रूप से (वाचम् इष्यन्) अमृतवाणी उच्चारण करते हुए (होतुः) उपदेश करें (च) तथा (इन्द्रः) ऐश्वर्यवान् प्रभु (मनीषाम्) सदबुद्धि को (विष्या) प्रदान कीजिए। (यत्) जो (क्षयथः) क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से भिन्न अद्वितीय प्रभु सत्यलोक स्थान में (सौभगाय) सौभाग्य से (सुवीर्यस्य) सत्य भक्ति की शक्ति के (पतयः) मालिक (स्याम्) हों।

भावार्थ -हे सर्व सुखदाई प्रभु! उपरोक्त मंत्रों में वर्णित महिमा की तरह एक बार फिर मनुष्य की तरह आकर हमें अपनी अमृतवाणी को अपने मुख से उपवक्ता रूप में उच्चारण करके सदबुद्धि प्रदान करें, जिससे हम सत्यभक्ति करके भक्ति कमाई के धनी बनकर आप के सत्यलोक स्थान को प्राप्त हों। उपवक्ता का भावार्थ है कि जैसे परमात्मा प्रत्येक युग में प्रारम्भ में प्रकट होकर अपना तत्वज्ञान प्रकट करके चले जाते हैं। उस अमृतवाणी को फिर से आकर उपवक्ता रूप में उच्चारण करके यथार्थ रूप से समझाता है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 1 मन्त्र 7 में प्रभु को उप अग्ने कहा है। जिस का अर्थ है उप परमेश्वर(छोटा प्रभु)।

ऋग्वेद मण्डल न. 1 अध्याय न. 1 सूक्त न. 11 श्लोक न. 4

पुरां भिन्दुर्युवा कविरमितौजा अजायत।
इन्द्रो विश्वस्य कर्मणो धर्ता वज्री पुरुष्टुतः ।।4।।

पुराम्–भिन्दुः–युवा–कविर्–अमित–औजा–अजायत–इन्द्रः–विश्वस्य–कर्मणः–धर्ता–वज्री–पुरूष्टुतः।

अनुवाद :– (युवा) पूर्ण समर्थ {जैसे बच्चा तथा वृद्ध सर्व कार्य करने में समर्थ नहीं होते। जवान व्यक्ति सर्व कार्य करने की क्षमता रखता है, ऐसे ही परब्रह्म–ब्रह्म व त्रिलोकिय ब्रह्मा–विष्णु–शिव तथा अन्य देवी–देवताओं को बच्चे तथा वृद्ध समझो इसलिए कबीर परमेश्वर को युवा की उपमा वेद में दी है} परमेश्वर (कविर्) कबीर (अमित औजा) विशाल शक्ति युक्त अर्थात् सर्व शक्तिमान (अजायत) तेजपुंज का शरीर मायावयी बनाकर (धर्ता) प्रकट होकर अर्थात् अवतार धारकर (वज्री) अपने सत्यशब्द व सत्यनाम रूपी शस्त्र से (पुराम्) काल–ब्रह्म के बन्धन रूपी किले को (भिन्दुः) तोड़ने वाला, टुकड़े–टुकड़े करने वाला (इन्द्रः) सर्व सुखदायक परमेश्वर (विश्वस्य) सर्व जगत के सर्व प्राणियों को (कर्मणः) मनसा वाचा कर्मणा अर्थात् पूर्ण निष्ठा के साथ अनन्य मन से धार्मिक कर्मो द्वारा सत्य भक्ति से (पुरूष्टुतः) स्तुति उपासना करने योग्य है।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा को वेद में युवा की उपाधी दी है। क्योंकि जवान व्यक्ति मानव सत्र के सर्व कार्य करने में सक्षम होता है। वृद्ध व बच्चे सक्षम नहीं होते। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) के अतिरिक्त अन्य प्रभुओं (परब्रह्म-ब्रह्म व ब्रह्मा, विष्णु व शिव आदि) को बच्चे जानों। वह पूर्ण परमात्मा हल्के तेज का शरीर धारण करके मनुष्य के बच्चे के रूप में प्रकट होता है। काल के अज्ञान रूप किले को तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से तोड़कर भक्त वृन्द को सत्य साधना करा के अनादि मोक्ष प्राप्त कराता है। वह परमात्मा सर्व के लिए पुज्य है।

विशेषः- उपरोक्त वेद मन्त्रों ने सिद्ध कर दिया कि पूर्ण परमात्मा मनुष्य सदृश शरीर युक्त साकार हैं। उस का शरीर तेजोमय है। वह पूर्ण परमात्मा सतलोक आदि ऊपर के लोकों में तथा नीचे पृथ्वी वाले लोकों में दोनों स्थानों पर विद्यमान रहता है। उसका नाम कविर्देव (कबीर प्रभु) है। वह यहाँ पृथ्वी पर जब शिशु रूप से प्रकट होता है तो उसका जन्म किसी मां से नहीं होता तथा न ही उसका पालन पोषण किसी माता से होता है। उस शिशु रूप में प्रकट परमात्मा की परवरिश कुँवारी गायों द्वारा होती है। वह पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके भी जब चाहे यहाँ पृथ्वी पर या अन्य किसी भी लोक में प्रकट हो जाता है। वह एक समय में अनेक रूपधार कर भिन्न-2 लोकों में भी साकार प्रकट हो जाता है तथा कभी-2 अपने अन्य सेवक भी प्रकट करता है उसके द्वारा अपने पूर्व दिये ज्ञान को यथार्थ रूप में जन साधारण तक पहुँचवाता है।

''पवित्र बाईबल में प्रभु मानव सदृश साकार का प्रमाण''

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुर्आन शरीफ में भी है।

कुर्आन शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाण किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टी रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है?

पवित्र बाईबल(उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :- प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाऐं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टी की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, माँस खाना नहीं कहा है।

सातवां दिन :- विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टी की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमात्मा मानव सदृश शरीर में है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टी की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

उत्पति विषय में लिखा है कि परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया। इससे सिद्ध है कि प्रभु भी मनुष्य जैसे शरीर युक्त है तथा छः दिन में सृष्टी रचना करके सातवें दिन तख्त पर जा विराजा।

पवित्र कुर्आन शरीफ में प्रभु सशरीर है तथा उसका नाम कबीर है का प्रमाण

''प्रभु आकार में मानव सदृश है, कुर्आन शरीफ में प्रमाण''

"पवित्र कुरान शरीफ़ से सहाभार ज्यों का त्यों लेख"

सुरत-फुर्कानि नं. 25 *आयत नं. 52 से 59*

(इन आयत नं. ***52*** *से* ***59*** *में विशेष प्रमाण है)*

(कृप्या देखें पवित्र कुरान शरीफ से ज्यों का त्यों फोटो कापी लेख)

६०४ व क़ालल्लजीन १६ ☪ क़ुर्आन शरीफ़ ☪ सूरतुल्-फ़ुर्क़ानि २५

व क़ौम नूहिल्लम्मा कज्जबुर्रुसुल अग़्रक़्नाहुम् व जअल्नाहुम् लिन्नासि आयतन् , व अअ्तद्ना लिज्ज़ालिमीन अज़ाबन् अलीमन् (३७) व आदंव्व समूद व अस्हाबर्रस्सि व क़ुरूनम् - बैन ज़ालिक कसीरन् (३८) व कुल्लन् ज़रब्ना लहुल् - अम्साल , व कुल्लन् तब्बर्ना तत्बीरन् (३९) व लक़द् अतौ अलल् - क़र्यतिल्लती' उम्तिरत् मतरस्सौअि , अफ़लम् यकूनू यरौनहा , बल् कानू ला यर्जून नुशूरन् (४०) व अिज़ा रऔक अिय्यत्तखिज़ूनक अिल्ला हुज़ुवन् , अहाजल्लज़ी बअसल्लाहु रसूलन् (४१) अिन् काद लयुज़िल्लुना अन् आलिहतिना लौला' अन् सबर्ना अलैहा , व सौफ़ यअ्लमून ह़ीन यरौनल् - अज़ाब मन् अज़ल्लु सबीलन् (४२) अरअैत मनित्तखज अिलाहहू हवाहु , अफ़अन्त तकूनु अलैहि वकीलन् (४३) अम् तह्सबु अन्न अक्सरहुम् यस्मअून औ यअ्क़िलून , अिन् हुम् अिल्ला कल्अन्आमि बल् हुम् अज़ल्लु सबीलन् (४४) ★ अलम् तर अिला रब्बिक कैफ़ मद्दज्ज़िल्ल , व लौ शा'अ लजअलहू साकिनन् , सुम्म जअल्नश्शम्स अलैहि दलीलन् (४५) सुम्म क़बज़्नाहु अिलैना क़ब्ज़ंय्यसीरन् (४६) व हुवल्लज़ी जअल लकुमुल्लैल लिबासंव्वन्नौम सुबातंव्व जअलन्नहार नुशूरन् (४७) व हुवल्लज़ी' अर्सलर्रियाह़ बुश्रम् - बैन यदै रह़्मतिही , व अन्ज़ल्ना मिनस्समा'अि मा'अन् तहूरन् (४८) लि'नुह़्यिय बिही बल्दतम् - मैतंव्व नुस्क़ियहू मिम्मा ख़लक़्ना' अन्आमंव्व अनासिय्य कसीरन् (४९) व लक़द् सर्रफ़्नाहु बैनहुम् लियज़्ज़क्करू , फ़अबा' अक्सरुन्नासि अिल्ला कुफ़ूरन् (५०) व लौ शिअ्ना लबअस्ना फ़ी कुल्लि क़र्यतिन् नज़ीरन् (५१) फ़ला तुतिअिल् - काफ़िरीन व जाहिद्हुम् बिही जिहादन् कबीरन् (५२)

मंज़िल ४

सुरतुल फुर्कानी-25

व हुवल्लजी मरजल् - बह्रैनि हाजा अज़्बुन् फ़ुरातुंव्व हाजा मिल्हुन् अुजाजुन् ज व जअल बैनहुमा बर्ज़खंव्व हिज्रम् - मह्जूरन् (५३) व हुवल्लजी ख़लक़ मिनल्मा'अि बशरन् फ़जअलहु नसबंव्व सिह्रन् त व कान रब्बुक क़दीरन् (५४) व यअ्बुदून मिन् दूनिल्लाहि मा ला यन्फ़अुहुम् व ला यज़ुर्रुहुम् त व कानल्काफ़िरु अला रब्बिही ज़हीरन् (५५) व मा' अर्सल्नाक अिल्ला मुबश्शिरंव्व नजीरन् (५६) क़ुल् मा' अस्अलुकुम् अलैहि मिन् अज्रिन् अिल्ला मन् शा'अ अंय्यत्तखिज अिला रब्बिही सबीलन् (५७) व तवक्कल् अलल् - हय्यिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही त व कफ़ा बिही बिजुनूबि अिबादिही ख़बीरा ज ला (५८) ∴ अ्ल्लजी ख़लक़स्समावाति वल्अर्ज़ व मा बैनहुमा फ़ी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि ज ∴ अर्रह्मानु फ़स्अल् बिही ख़बीरन् (५९) व अिजा क़ील लहुमुस्जुदू लिर्रह्मानि क़ालू व मर्रह्मानु क़ अनस्जुदु लिमा तअ्मुरुना व ज़ादहुम् नुफ़ूरन् (६०) ★ ▲ तबारकल्लजी जअल फ़िस्समा'अि बुरूजंव्व जअल फ़ीहा सिराजंव्व क़मरम्-मुनीरन् (६१) व हुवल्लजी जअलल्लैल वन्नहार खिल्फ़तल्लिमन् अराद अंय्यज्जक्कर औ अराद शुकूरन् (६२) व अिबादुर्रह्मानिल्लजीन यम्शून अलल्अर्ज़ि हौनंव्व अिजा ख़ातबहुमुल् - जाहिलून क़ालू सलामन् (६३) वल्लजीन यबीतून लिरब्बिहिम् सुज्जदंव्व क़ियामन् (६४) वल्लजीन यक़ूलून रब्बनस्रिफ़् अन्ना अज़ाब जहन्नम क़ सला अिन्न अज़ाबहा कान ग़रामन् क़ सला (६५) अिन्नहा सा'अत् मुस्तक़र्रंव्व मुक़ामन् (६६) वल्लजीन अिजा' अन्फ़क़ू लम् युस्रिफ़ू व लम् यक़्तुरू व कान बैन जालिक क़वामन् (६७)

पवित्र कुर्आन शरीफ(सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :– फला तुतिअल् – काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा(कबीरन्) ।52 ।

तो (ऐ पैग़म्बर !) तुम काफ़िरों का कहा न मानना और इस (कुर्आन की दलीलों) से उनका सामना बड़े जोर से करो। (52)

आयत नं. 52 का ऊपर अनुवाद किसी मुसलमान श्रद्धालु का किया हुआ है। तत्वज्ञान के अभाव से ग्रन्थ के वास्तविक अर्थ को प्रकट नहीं कर सका। वास्तव में इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी-देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुर्आन के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना(लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् हर्रुिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही
व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा(कबीरा) ।58 ।

*और (ऐ पैग़म्बर !) उस जिन्दा (चैतन्य) पर भरोसा रखो जो कभी मरनेवाला नहीं और तारीफ़ के साथ उसकी पाकी बयान करते रहो और अपने बन्दों के गुनाहों से वह काफ़ी ख़बरदार है **(58)***

आयत संख्या 58 का ऊपर अनुवाद किसी मुसलमान भक्त का किया हुआ है जो वास्तविकता प्रकट करने में असमर्थ रहा है। वास्तव में इस आयत संख्या 58 का भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह कुरान ज्ञान दाता अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी(पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह(कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन्
सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन्(कबीरन्) ।59 ।।

जिसने आसमानों और जमीन और जो कुछ उनके बीच में है (सबको) छः दिन में पैदा किया, फिर तख्त पर जा विराजा (वह अल्लाह बड़ा) रहमान है, तो उसकी खबर किसी बाखबर (इल्मवाले) से पूछ देखो। (59)

आयत संख्या 59 का ऊपर वाला अनुवाद किसी मुसलमान श्रद्धालु का किया हुआ है जो पवित्र शास्त्र कुर्आन शरीफ के वास्तविक भावार्थ से कोसों दूर है। इसका वास्तविक भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुर्आन शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टी की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो(बैठ) गया।

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी ? तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत(बाखबर) से पूछो, मैं (कुर्आन ज्ञान दाता) नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों(ईसाई तथा मुसलमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टी रचनहार सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू भी कहते हैं।

सुरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में लिखा है कि कबीर परमात्मा ने छः दिन में सृष्टी की रचना की तथा सातवें दिन तख्त पर जा विराजा। जिस से परमात्मा साकार सिद्ध होता है।

"फजाईले आमाल से प्रमाण"

विशेष विचार:- फजाईले आमाल मुसलमानों की एक विशेष पवित्र पुस्तक है जिसमें पूजा की विधि तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब का नाम विशेष रूप से वर्णित है। जैसा कि आप निम्न फजाईले आमाल के ज्यों के त्यों लेख देखेंगे उनमें फजाईले जिक्र में आयत नं. 1, 2, 3, 6 तथा 7 में स्पष्ट प्रमाण है कि ब्रह्म(काल अर्थात् क्षर पुरूष) कह रहा है कि तुम कबीर अल्लाह कि बड़ाई बयान करो। वह कबीर अल्लाह तमाम पोसीदा और जाहिर चीजों को जानने वाला है और वह कबीर है और आलीशान रूत्बे वाला है। जब फरिश्तों को कबीर अल्लाह की तरफ से कोई हुक्म होता है तो वे खौफ के मारे घबरा जाते हैं। यहाँ तक कि जब उनके दिलों से घबराहट दूर होती है तो एक दूसरे से पूछते हैं कि कबीर परवरदिगार का क्या हुक्म है। वह कबीर आलीशान मर्तबे वाला है। ये सब आदेश कबीर अल्लाह की तरफ से है जो बड़े आलीशान रूत्बे वाला है। हजुरे अक्सद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम(हजरत मुहम्मद) का इर्शाद (कथन) कहना है कि कोई बंदा ऐसा नहीं है कि 'लाइला-ह-इल्लल्लाह' कहे उसके लिए आसमानों के दरवाजें न खुल जाए, यहाँ तक कि यह कलिमा सीधा अर्श तक पहुँचता है, बशर्ते कि कबीरा गुनाहों से बचाता रहे। दो कलमों का जिक्र है कि एक तो 'लाइला-ह-इल्लल्लाह' है और दूसरा 'अल्लाहु अक्बर'(कबीर)। यहाँ पर अल्लाहु अक्बर का भाव है भगवान कबीर (कबीर साहेब अर्थात् कविर्देव)।

फिर फजाईले दरूद शरीफ़ में भी कबीर नाम की महिमा का प्रत्यक्ष प्रमाण छुपा नहीं है।

कृप्या निम्न पढ़िये फजाईले आमाल का लेख।

फजाईले आमाल से सहाभार ज्यों का त्यों लेख :-

फजाइले जिक्र

(१) وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰىكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ - (سورۂ بقرہ، رکوع ۲۳)

बल्लत कबीर बूल्लाह आला महादाकुप वाला अल्ला कुम तरकोरून –1

1. और ताकि तुम कबीर अल्लाह की बड़ाई बयान करों, इस बात पर कि तुम को हिदायत फरमायी और ताकि तुम शुक्र करो अल्लाह तआला का।

फजाइले जिक्र

(२) عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْكَبِيْرُ الْمُتَعَالُ - (سورۂ رعد، رکوع ۲)

अल्लीमूल गैब बसाहादाती तील कबीर रूलमुतालू –2

2. वह कबीर अल्लाह तमाम पोशीदा और जाहिर चीजों का जानने वाला है(सबसे) बड़ा है और आलीशान रुत्बे वाला है।

फजाइले जिक्र

(٣) كَذٰلِكَ سَخَّرَهَا لَكُمْ لِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰىكُمْ وَبَشِّرِ الْمُحْسِنِيْنَ ۔ (سورۂ حج، رکوع ۵)

थाजालीका सहारा लाकुम लीतू कबीरू

बुल्लाह आला महादा कुम बसीरी रील मोहसीनीन —3

3. इसी तरह अल्लाह जल्ल शानुहू ने तुम्हारे लिए मुसख्खर कर दिया ताकि तुम कबीर अल्लाह की बड़ाई बयान करो। इस बात पर कि उसने तुमको हिदायत की इख्लास वालों को (अल्लाह की रिजा की) खुशखबरी सुना दीजिए।

फजाइले जिक्र

مَاذَا قَالَ رَبُّكُمْ قَالُوا الْحَقَّ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْكَبِيْرُ ۔ (سورۂ سبا، رکوع ۳)

माजा काला रब्बूकूम कालू लूलहक्का वाहोवर अल्लीयू उल्ल कबीर —6

6. (जब फरिश्तों को कबीर अल्लाह की तरफ से कोई हुक्म होता है तो वे खौफ के मारे घबरा जाते हैं) यहाँ तक कि जब उनके दिलों से घबराहट दूर हो जाती है, तो एक दूसरे से पूछते हैं कि कबीर परवरदिगार का क्या हुक्म है ? वे कहते हैं कि (फ्लानी) हक बात का हुक्म हुआ। वाकई वह (कबीर) आलीशान और मर्तबे वाला है।

फजाइले जिक्र

(٧) فَالْحُكْمُ لِلّٰهِ الْعَلِيِّ الْكَبِيْرِ ۔ (سورۂ مومن، رکوع ۲)

कुल हूक्कू मूल्लाही हीलअल्ली लील कबीर —7

7. पस हुक्म कबीर अल्लाह ही के लिए है, जो आलीशान है, बड़े रुत्बे वाला है।

फजाईले दरूद शरीफ

अल्लाहुम-म सल्लि अलारूहि मुहम्मदिन फ़िल् अर्वाहि अल्लाहुम-म सल्लि अला

ज-स-दि मुहम्मदिन फिल् अज्सादि अल्लाहुम म सल्लि अला कबिर् (कबीर) मुहम्मिद फ़िल् कुबूरि0

फजाईले जिक्र

٥ عن ابي هريرة رض قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم ما قال عبد لا اله الا الله الا فتحت له ابواب السماء حتى يفضي الى العرش ما اجتنبت الكبائر. رواه الترمذي وهكذا في المشكوة لكن ليس فيها حسن بل غريب فقط قال القاري و رواه النسائي وابن حبان وعزاه السيوطي في الجامع الى الترمذي و رقم له بالحسن وحكاه السيوطي في الدر من طريق ابن مردويه عن ابي هريرة وليس فيه ما اجتنبت الكبائر وفي الجامع الصغير برواية الطبراني عن معقل ابن يسار لكل شي مفتاح ومفتاح السموات قول لا اله الا الله ورقم له بالضعف.

5. हुजूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि कोई बन्दा ऐसा नहीं कि 'लाइला-ह-इल्लल्लाहह' कहे और उसके लिए आसमानों के दरवाजें न खुल जायें, यहाँ तक कि यह कलिमा सीधा अर्श तक पहुँचता है, बशर्ते कि कबीरा गुनाहों से बचाता रहे।

फ़—कितनी बड़ी फ़जीलत है और कुबूलियत की इन्तिहा है कि यह कलिमा बराहे रास्त अर्शे मुअल्ला तक पहुँचता है और यह अभी मालूम हो चुका है कि अगर कबीरा गुनाहों के साथ भी कहा जाये, तो नफ़ा से उस वक्त भी खाली नहीं।

मुल्ला अली कारी रह0 फरमाते हैं कि कबाइर से बचने की शर्त कुबूल की जल्दी और आसमान के सब दरवाजे खुलने के एताबर से है, वरना सवाब और कूबूल से कबाइर (कबीर) के साथ भी खाली नहीं।

बाज उलेमा ने इस हदीस का यह मतलब बयान फरमाया है कि ऐसे शख्स के वास्ते मरने के बाद उस की रूह के एजाज में आसमान के सब दरवाजे खुल जायेंगे।

एक हदीस में आया है, दो कलिमे ऐसे हैं कि उनमें से एक के लिए अर्श के नीचे कोई मुन्तहा नहीं।' दूसरा आसमान और जमीन को (अपने नूर या अपने अज्र से) भर दे —

एक 'लाइला-ह इल्लल्लाह',

दूसरा 'अल्लाहु अक्बर, (परमेश्वर कबीर)

फजाइले जिक्र

سبحان الله والحمد لله والله اكبر

'सुब्हानल्लाहि अल्हम्दु लिल्लाहि अल्लाहु अक्बरू'(कबिर्)

फजाइले दरूद शरीफ

مَنْ صَلَّى عَلَى رُوحِ مُحَمَّدٍ فِي الْأَرْوَاحِ وَعَلَى جَسَدِهِ
فِي الْأَجْسَادِ وَعَلَى قَبْرِهِ فِي الْقُبُورِ

मन सल्ला अला रूहि मुहम्मदिन फिल् अर्वाहि व अला-ज-स
दिही फिल् अज्सादि व अला कबिर् (कबीर) ही फिल कुबूरि0

व इन्नहाल कबीर तुन इल्ला अलल् खाशिलीनल्लजीन यजुन्नून
अन्नहुम मुलाकू रब्बिहिन व अन्नहुम इलैहि राजिऊन0

(फजाइले आमाल से लेख समाप्त)

सार :- इससे सिद्ध है कि प्रभु कबीर नाम से है तथा आकार में है, ऊपर सत्यलोक में अपने तख्त पर रहता है।

उपरोक्त दोनों धर्मों के शास्त्रों बाईबल तथा कुरान ने भी मिल-जुल कर सिद्ध कर दिया कि परमेश्वर मनुष्य सदृश शरीर युक्त है तथा उसका नाम कबीर है। पाठकों ने उपरोक्त विवरण में कुरान शरीफ व फजाईले आमाल पुस्तकों में ढ़ेर सारे प्रमाण पढ़ें। कृप्या निम्न पढ़े बाईबल में कुछ विस्तृत जानकारी।

''पवित्र ईसाई धर्म का परिचय''

पवित्र बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ, पृष्ठ नं. 1 से 3

परमेश्वर ने छः दिन में सृष्टी रची तथा सातवें दिन विश्राम किया, प्रभु ने पाँच दिन तक अन्य रचना की, फिर छटवें दिन ईश्वर ने कहा कि हम मनुष्य को अपना ही स्वरूप बनायेंगे।

फिर परमेश्वर ने मनुष्य को अपना ही स्वरूप बनाया, नर-नारी करके उसकी सृष्टी की। फिर ईश्वर ने मनुष्यों के खाने के लिए केवल फलदार वृक्ष तथा बीजदार पौधे दिए। जो तुम्हारे भोजन के लिए हैं। छः दिन में पूरा कार्य करके परमेश्वर ऊपर तख्त पर जा विराजा अर्थात् विश्राम किया।

ईश्वर ने प्रथम आदम बनाया फिर उसकी पसली निकाल कर नारी हव्वा बनाई तथा दोनों को एक वाटिका में छोड़कर तख्त पर जा बैठे। फिर पृष्ठ नं. 8 पर लिखा है कि ईश्वर ने मनुष्य जाति के खाने के लिए फलदार पेड़ तथा बीजदार पौधे बनाए और अन्य प्राणियों के लिए घास व पौधे बनाए।

भगवान ने मनुष्य को अपना प्रति रूप बनाया। इससे स्वसिद्ध है कि भगवान (अल्लाह) आकार में है और वह मनुष्य जैसा है। वह पूर्ण परमात्मा तो यहाँ तक रचना छः दिन में करके

सातवें दिन अपने सत्यलोक में तख्त पर विराजमान हो गया। इसके बाद प्रभु काल अर्थात् ज्योति निरंजन की भूल भुलइयाँ प्रारम्भ हो गई।

प्रभु काल ने हजरत आदम तथा हजरत हव्वा (जो श्री आदम जी की पत्नी थी) को कहा कि इस वाटिका में लगे हुए फलों को तुम खा सकते हो। लेकिन ये जो बीच वाले फल हैं इनको मत खाना, अगर खाओगे तो मर जाओगे। परमेश्वर ऐसा कह कर चला गया।

उसके बाद एक सर्प आया और कहा कि तुम ये बीच वाले फल क्यों नहीं खा रहे हो? हव्वा जी ने कहा कि भगवान (अल्लाह) ने हमें मना किया है कि अगर तुम इनको खाओगे तो मर जाओगे, इन्हें मत खाना। सर्प ने फिर कहा कि भगवान ने आपको बहकाया हुआ है। वह नहीं चाहता है कि तुम प्रभु के सदृश ज्ञानवान हो जाओ। यदि तुम इन फलों को खा लोगे तो तुम्हें अच्छे और बुरे का ज्ञान हो जाएगा। आपकी आँखों पर से अज्ञानता का पर्दा हट जाएगा जो प्रभु ने आपके ऊपर डाल रखा है। यह बात सर्प ने हव्वा को कही जो कि आदम की पत्नी थी। हव्वा ने अपने पति हजरत आदम से कहा कि हम ये फल खायेंगे तो हमें भले-बुरे का ज्ञान हो जाएगा। ऐसा ही हुआ। उन्होंने वह फल खा लिया तो उनकी आँखें खुल गई तथा वह अंधेरा हट गया जो भगवान ने उनके ऊपर अज्ञानता का पर्दा डाल रखा था। जब उन्होंने देखा कि हम दोनों निवस्त्र हैं तो शर्म आई और अंजीर के पत्तों को तोड़ कर बांधा।

कुछ दिनों के बाद जब शाम के समय घूमने के लिए प्रभु आया तो पूछा कि तुम कहाँ हो? आदम जी तथा हव्वा जी ने कहा कि हम छुपे हुए है, क्योंकि हम निवस्त्र हैं। भगवान ने कहा कि क्या तुमने उस बीच वाले फल को खा लिया? आदम ने कहा कि हाँ जी और उसके खाने के बाद हमें महसूस हुआ कि हम निवस्त्र हैं। प्रभु ने पूछा कि तुम्हें किसने बताया कि ये फल खाओ। आदम ने कहा कि हमारे को सर्प ने बताया और हमने वह खा लिया। उसने मेरी पत्नी हव्वा को बहका दिया और हमने उसके बहकावे में आकर ये फल खा लिया।

21. फिर यहोवा प्रभु ने आदम तथा उसकी पत्नी के लिए चमड़े के अंगरखे पहना दिए।

22. फिर यहोवा प्रभु ने कहा मनुष्य भले-बुरे का ज्ञान पाकर हम में से एक के समान हो गया है। *इसलिए ऐसा न हो कि यह जीवन के वृक्ष वाला फल भी तोड़ कर खा ले और सदा जीवित रहे।*

23. व 24. इसलिए प्रभु ने आदम व उसकी पत्नी को अदन के उद्यान से निकाल दिया।

काल प्रभु ने उनको उस वाटिका से निकाल दिया और कहा कि अब तुम्हें यहाँ नहीं रहने दूँगा और तुझे अपना पेट भरने के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ेगा और औरत को श्राप दिया कि तू हमेशा आदमी के पराधीन रहेगी।

{विशेष :- श्री मनु जी के पुत्र इक्ष्वाकु हुए तथा इसी वंश में राजा नाभीराज हुए। राजा नाभीराज के पुत्र श्री ऋषभदेव जी हुए जो पवित्र जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर माने जाते हैं। यही श्री ऋषभदेव जी का जीवात्मा ही बाबा आदम हुए। जैन धर्म की पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने'' पृष्ठ 154 पर लिखा है।}

बाबा आदम व उनकी पत्नी हव्वा के संयोग से दो पुत्र उत्पन्न हुए। एक का नाम काईन

तथा दूसरे का नाम हाबिल रखा। काईन खेती करता था। हाबिल भेड़-बकरियाँ चराया करता था। काईन कुछ धूर्त था परन्तु हाबिल ईश्वर पर विश्वास करने वाला था। काईन ने अपनी फसल का कुछ अंश प्रभु को भेंट किया। प्रभु ने अस्वीकार कर दिया। फिर हाबिल ने अपने भेड़ के पहले मैमने को प्रभु को भेंट किया, प्रभु ने स्वीकार किया। {यदि बाबा आदम में प्रभु बोल रहा होता तो कहता कि बेटा हाबिल मैं तेरे से प्रसन्न हूँ। आप ने जो मैमना भेंट किया यह आप की प्रभु के प्रति श्रद्धा का प्रतीक है। यह आप ही ले जाईये और इसे बेच कर धर्म (भण्डारा) कीजिए और अपनी भेड़ों की ऊन उतार कर रोजी-रोटी चलाईये तथा प्रभु में विश्वास रखिये। यह बाबा आदम के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके पवित्र बाईबल में माँस खाने का प्रावधान पित्तरों ने किसी नबी में बोल कर करवाया है।}

इस से काईन को द्वेष हुआ तथा अपने छोटे भाई को मार दिया। कुछ समय के बाद आदम व हव्वा से एक पुत्र हुआ उसका नाम सेत रखा। सेत को फिर पुत्र हुआ उसका नाम एनोस रखा। उस समय से लोग प्रभु का नाम लेने लगे।

अब यहाँ पर देखना होगा कि जहाँ से पवित्र ईसाई व मुसलमान धर्म की शुरूआत हुई वहीं से मार-काट लोभ और लालच द्वेष परिपूर्ण है। आगे चलकर इसी परंपरा में ईसा मसीह जी का जन्म हुआ। इनकी पूज्य माता जी का नाम मरियम तथा पूज्य पिता जी का नाम यूसुफ था। परन्तु कुँवारी मरियम को गर्भ एक देवता से रहा था। इस पर यूसुफ ने आपत्ति की तथा मरियम को त्यागना चाहा तो स्वपन में (फरिश्ते) देवदूत ने ऐसा न करने को कहा तथा यूसुफ ने डर के मारे मरियम का त्याग न करके उसके साथ पति-पत्नी रूप में रहे। देवता से गर्भवती हुई मरियम ने हजरत ईसा को जन्म दिया। हजरत ईसा से पवित्र ईसाई धर्म की स्थापना हुई। ईसा मसीह के नियमों पर चलने वाले भक्त आत्मा ईसाई कहलाए तथा पवित्र ईसाई धर्म का उत्थान हुआ।

प्रमाण के लिए कुरान शरीफ में सूरः मर्यम-19 में तथा पवित्र बाईबल में मती रचित सुसमाचार मती=1:25 पृष्ठ नं. 1-2 पर।

हजरत ईसा जी को भी पूर्ण परमात्मा सत्यलोक से आकर मिले तथा एक परमेश्वर का मार्ग समझाया। इसके बाद ईसा जी एक ईश्वर की भक्ति समझाने लगे। लोगों ने बहुत विरोध किया। फिर भी वे अपने मार्ग से विचलित नहीं हुए। परन्तु बीच-बीच में ब्रह्म(काल/ज्योति निरंजन) के फरिश्ते हजरत ईसा जी को विचलित करते रहे तथा वास्तविक ज्ञान को दूर रखा।

हजरत यीशु का जन्म तथा मृत्यु व जो जो भी चमत्कार किए वे पहले ब्रह्म(ज्योति निरंजन) के द्वारा निर्धारित थे। यह प्रमाण पवित्र बाईबल में यूहन्ना ग्रन्थ अध्याय 9 श्लोक 1 से 34 में ०है कि एक व्यक्ति जन्म से अंधा था। वह हजरत यीशु मसीह के पास आया। तथा हजरत यीशु जी के आशीर्वाद से स्वस्थ हो गया उसे आँखों से दिखाई देने लगा। शिष्यों ने पूछा हे मसीह जी इस व्यक्ति ने या इसके माता-पिता ने कौन-सा ऐसा पाप किया था जिस कारण से यह अंधा हुआ तथा माता-पिता को अंधा पुत्र प्राप्त हुआ। यीशु जी ने कहा कि इसका कोई पाप नहीं है जिसके कारण यह अंधा हुआ है तथा न ही इसके माता-पिता का कोई पाप है जिस कारण उन्हें अंधा पुत्र प्राप्त हुआ। यह तो इसलिए हुआ है कि प्रभु की महिमा प्रकट करनी है। भावार्थ यह है कि यदि पाप होता तो हजरत यीशु आँखे ठीक नहीं कर सकते थे। तथा काल रूपी ब्रह्म ने यीशु जी की

महिमा बनाने के लिए अपनी शक्ति से किसी प्रेत द्वारा अन्धा करा रखा था। जो यीशु जी के पास आते ही निकल गया और व्यक्ति को दिखाई देने लगा था। यह सर्व काल ज्योति निरंजन (ब्रह्म) का सुनियोजित जाल है। जिस कारण उसके द्वारा भेजे अवतारों की महिमा बन जाए तथा सर्व आस पास के प्राणी उस पर आसक्त होकर उसके द्वारा बताई ब्रह्म साधना पर अटल हो जाऐं। जब परमेश्वर का संदेशवाहक आए तो कोई विश्वास न करें। जैसे हजरत ईसा मसीह के चमत्कारों में लिखा है कि एक प्रेतात्मा से पीड़ित व्यक्ति को ठीक कर दिया। यह काल स्वयं ही किसी प्रेत तथा पित्तर को प्रेरित करके किसी के शरीर में प्रवेश करवा देता है। फिर उसको किसी के माध्यम से अपने भेजे नबी के पास भेजकर किसी फरिश्ते को नबी के शरीर में प्रवेश करके उसके द्वारा प्रेत को भगा देता है। उसके अवतार (मसीह/नबी) की महिमा बन जाती है। या कोई साधक पहले का भक्ति युक्त होता है। उससे भी ऐसे चमत्कार उसी की कमाई से करवा देता है तथा उस साधक की महिमा करवा कर हजारों को उसका अनुयाई बनवा कर काल जाल में फंसा देता है तथा उस पूर्व भक्ति कमाई युक्त सन्त साधक की कमाई को समाप्त करवा कर उस सन्त को नरक में डाल देता है।

इसी तरह का उदाहरण पवित्र बाईबल 'शमूएल' नामक अध्याय 16:14-23 में है कि शाऊल नामक व्यक्ति को एक प्रेत दुःखी करता था। उसके लिए बालक दाऊद को बुलाया जिससे उसको कुछ राहत मिलती थी। क्योंकि हजरत दाऊद भी ज्योति निरंजन का भेजा हुआ पूर्व शक्ति युक्त साधक पूर्व कमाई वाला था। जिसको 'जबूर' नामक किताब ज्योति निरंजन/ब्रह्म ने बड़ा होने पर उतारी।

हजरत ईसा मसीह की मृत्यु पूर्व ही निर्धारित थी। स्वयं ईसा जी ने कहा कि मेरी मृत्यु निकट है तथा तुम (मेरे बारह शिष्यों) में से ही एक मुझे विरोधियों को पकड़ाएगा। उसी रात्री में सर्व शिष्यों सहित ईसा जी एक पर्वत पर चले गए। वहाँ उनका दिल घबराने लगा। अपने शिष्यों से कहा कि आप जागते रहना। मेरा दिल घबरा रहा है। मेरा जी निकला जा रहा है। तुम भी परमात्मा से मेरे जीवन की रक्षा के लिए, प्रार्थना करो, ऐसा कह कर हजरत यीशु जी ने कुछ दूरी पर जाकर स्वयं हजरत इसा जी ने मुंह के बल पृथ्वी पर गिरकर प्रार्थना की (38,39), वापिस चेलों के पास लौटे तो वे सो रहे थे। यीशु ने कहा क्या तुम मेरे साथ एक पल भी नहीं जाग सकते। जागते रहो, प्रार्थना करते रहो, ताकि तुम परीक्षा में असफल न हो जाओ। मेरी आत्मा तो मरने को तैयार है, परन्तु शरीर दुर्बल है। इसी प्रकार यीशु मसीह ने तीन बार कुछ दूर पर जाकर प्रार्थना की तथा फिर वापिस आए तो सर्व शिष्यों को तीनों बार सोते पाया। ईसा मसीह के प्राण जाने को थे, परन्तु चेला राम मस्ती में सोए पड़े हैं। गुरु जी की आपत्ति का कोई गम नहीं।

तीसरी बार भी सोए पाया तब कहा मेरा समय आ गया है, तुम अब भी सोए पड़े हो। इतने में तलवार तथा लाठी लेकर बहुत बड़ी भीड़ आई तथा उनके साथ एक ईसा मसीह का खास शिष्य था, जिसने तीस रूपये के लालच में अपने गुरु जी को विरोधियों के हवाले कर दिया।(मत्ती 26:24-55 पृष्ठ 42-44)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि पुण्यात्मा ईसा मसीह जी को केवल अपना पूर्व का

निर्धारित जीवन काल ही प्राप्त हुआ जो उनके विषय में पहले ही पूर्व धर्म शास्त्रों में लिखा था। ''मत्ती रचित समाचार'' पृष्ठ 1 पर लिखा है कि याकुब का पुत्र युसूफ था। युसूफ ही मरियम का पति था जिस से हजरत ईसा मसीह का जन्म हुआ। मरियम को एक फरिश्ते से गर्भ रहा था।(मत्ती 1:1-18)

एक स्थान पर हजरत ईसा जी ने कहा है कि मैं याकुब (जो मरियम के पति का भी पिता था) से भी पहले था। संसार की दृष्टि में ईसा मसीह का दादा जी याकुब था। यदि ईसा जी वाली आत्मा बोल रही होती तो ईसा जी नहीं कहते कि मैं याकुब अर्थात् अपने दादा जी से भी पहले था। इससे सिद्ध है कि ईसा जी में कोई अन्य फरिश्ता बोल रहा था जो प्रेतवत प्रवेश कर जाता था, भविष्यवाणी कर जाता था तथा वही चमत्कार करता था। यदि यह माने कि हो सकता है याकूब वाली आत्मा ही हजरत इसा रूप में जन्मी हो तो बाईबल में लिखा लेख गलत सिद्ध होता है कि ईसा को परमात्मा ने अपने पास से भेजा था। ईसा जी प्रभु के पुत्र थे।

एक और अनोखा उदाहरण ग्रन्थ बाईबल 2 कुरिन्थियों 2:12-17 पृष्ठ 259-260 में स्पष्ट लिखा है कि एक आत्मा किसी में प्रवेश करके पत्र द्वारा लिख रही है। कहा है कि 14. परन्तु परमेश्वर का धन्यवाद हो, जो मसीह में सदा हम को जय उत्सव में लिए फिरता है और अपने ज्ञान की सुगन्ध हमारे द्वारा हर जगह फैलाता है। 17. हम उन लोगों में से नहीं हैं जो परमेश्वर के वचनों में मिलावट करते हैं। हम तो मन की सच्चाई और परमेश्वर की ओर से परमेश्वर की उपस्थिति जान कर मसीह में बोलते हैं।

उपरोक्त विवरण पवित्र बाईबल के अध्याय कुरिन्थियों 2:12 से 18 पृष्ठ 259-260 से ज्यों का त्यों लिखा है। इससे दो बातें स्पष्ट होती हैं 1. मसीहा (नबी अर्थात् अवतार) में कोई अन्य फरिश्ता बोलकर किताबें लिखाता है। जो प्रभु का भेजा हुआ होता है वह तो प्रभु का संदेश ज्यों का त्यों बिना परिवर्तन किए सुनाता है। 2. दूसरी बात यह भी सिद्ध हुई कि मसीह (नबी) में अन्य आत्मा भी बोलते हैं जो अपनी तरफ से मिलावट करके भी बोलते हैं। यही कारण है कि कुर्आन शरीफ (मजीद) तथा बाईबल आदि में माँस खाने का आदेश अन्य आत्माओं का है, प्रभु का नहीं है। उपरोक्त विवरण से यह भी स्पष्ट है कि फरिश्ता कह रहा है कि प्रभु महिमा रूपी सुगंध फैलाने के लिए प्रेत की तरह प्रवेश करके प्रभु हमारा ही प्रयोग किसी मसीह (अवतार/नबी) में करता है। चमत्कार करते हैं फरिश्ते, नाम होता है नबी का तथा भोली आत्माऐं उस नबी को पूर्ण शक्ति युक्त मानकर उसी के अनुयाई बन जाते हैं। उसी के द्वारा बताए भक्ति मार्ग पर दृढ़ हो जाते हैं। जिस समय पूर्ण परमात्मा का संदेशवाहक आता है तो उसकी बातों पर अविश्वास करते हैं। यह सब ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) का जाल है।

ईसा मसीह की मृत्यु -

एक पर्वत पर ईसा जी 30 वर्ष की आयु में प्रभु से प्राण रक्षा के लिए घबराए हुए बार-बार प्रार्थना कर रहे थे। उसी समय उन्हीं का एक शिष्य 30 रूपये के लालच में अपने गुरु जी के विरोधियों को साथ लेकर उसी पर्वत पर आया वे तलवार तथा लाठियां लिए हुए थे। विरोधियों की भीड़ ने उस गुप्त स्थान से ईसा जी को पकड़ा जहाँ वह छुप कर रात्री बिताया करता था।

क्योंकि हजरत मूसा जी के अनुयाई यहूदी ईसा जी के जानी दुश्मन हो गए थे। उस समय के महन्तों तथा संतों व मन्दिरों के पूजारियों को डर हो गया था कि यदि हमारे अनुयाई हजरत ईसा मसीह के पास चले जायेंगे तो हमारी पूजा का धन कम हो जाएगा। ईसा मसही जी को पकड़ कर राज्यपाल के पास ले गए तथा कहा कि यह पाखण्डी है। झूठा नबी बन कर दुनिया को ठगता है। इसने बहुतों के घर उजाड़ दिए हैं। इसे रौंद(क्रस) दिया जाए। राज्यपाल ने पहले मना किया कि संत, साधु को दुःखी नहीं करते, पाप लगता है। परन्तु भीड़ अधिक थी, नारे लगाने लगी इसे रौंद (क्रस कर) दो। तब राज्यपाल ने कहा जैसे उचित समझो करो। तीस वर्ष की आयु में ईसा जी को दीवार के साथ लगे अंग्रेजी के अक्षर T (टी) के आकार की लकड़ी के साथ खड़ा करके दोनों हाथों की हथेलियों में लोहे की मोटी कील (मेख) गाड़ दी। ईसा जी की मृत्यु असहनीय पीड़ा से हो गई। मृत्यु से पहले हजरत ईसा जी ने उच्चे स्वर में कहा - हे मेरे प्रभु ! आपने मुझे क्यों त्याग दिया ? कुछ दिनों के बाद हजरत ईसा जी फिर दिखाई दिए तथा फिर कुछ स्थानों पर दर्शन व प्रवचन करके अन्तर्ध्यान हो गए। (पवित्र बाईबल मती 27 तथा 28/20 पृष्ठ 45 से 48)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि यह ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) अपने अवतार को भी समय पर धोखा दे जाता है। पूर्ण परमात्मा ही भक्ति की आस्था बनाए रखने के लिए स्वयं प्रकट होता है। पूर्ण परमात्मा ने ही ईसा जी की मृत्यु के पश्चात् ईसा जी का रूप धारण करके प्रकट होकर ईसाईयों के विश्वास को प्रभु भक्ति पर दृढ़ रखा, नहीं तो ईसा जी के पूर्व चमत्कारों को देखते हुए ईसा जी का अंत देखकर कोई भी व्यक्ति भक्ति साधना नहीं करता, नास्तिक हो जाते। (प्रमाण पवित्र बाईबल में यूहन्ना ग्रन्थ अध्याय 16 श्लोक 4 से 15) ब्रह्म(काल) यही चाहता है। काल (ब्रह्म) पुण्यात्माओं को अपना अवतार (रसूल) बना कर भेजता है। फिर चमत्कारों द्वारा उसको भक्ति कमाई रहित करवा देता है। उसी में कुछ फरिश्तों (देवताओं) को भी प्रवेश करके कुछ चमत्कार फरिश्तों द्वारा उनकी पूर्व भक्ति धन से करवाता है। उनको भी शक्ति हीन कर देता है। काल के भेजे अवतार अन्त में वे किसी तरह कष्ट प्राप्त करके मृत्यु को प्राप्त हों। इस प्रकार ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) के द्वारा भेजे नबियों (अवतारों) की महिमा हो जाती है। अनजान साधक उनसे प्रभावित होकर उसी साधना पर अडिग हो जाते हैं। जब पूर्ण परमात्मा या उनका संदेशवाहक वास्तविक भक्ति ज्ञान व साधना समझाने की कोशिश करता है तो कोई नहीं सुनता तथा अविश्वास व्यक्त करते हैं। यह जाल काल प्रभु का है। जिसे केवल पूर्ण परमात्मा ही बताता है तथा सत्य भक्ति प्रदान करके आजीवन साधक की रक्षा करता है। सत्य भक्ति करके साधक पूर्ण मोक्ष को प्राप्त करता है।

"शेख तकी पीर ने नहीं पहचाना परमेश्वर को"

एक बार दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोधी को जलन का रोग हो गया। जलन का रोग ऐसा होता है जैसे किसी का आग में हाथ जल जाए उसमें पीड़ा बहुत होती है। जलन के रोग में कहीं से शरीर जला दिखाई नहीं देता है परन्तु पीड़ा अत्यधिक होती है। उसको जलन का रोग कहते हैं। जब प्राणी के पाप बढ़ जाते हैं तो दवाई भी व्यर्थ हो जाती हैं। दिल्ली के

बादशाह सिकन्दर लौधी के साथ भी वही हुआ। सभी प्रकार की औषधी सेवन की। बड़े-बड़े वैद्य बुला लिए और मुँह बोला इनाम रख दिया कि मुझे ठीक कर दो, जो माँगोगे वही दूँगा। दुःख में व्यक्ति पता नहीं क्या संकल्प कर लेता है ? सर्व उपाय निष्फल हुए। उसके बाद अपने धार्मिक काजी, मुल्ला, संतों आदि सबसे अपना आध्यात्मिक इलाज करवाया। परन्तु सब असफल रहा। {जब हम दुःखी हो जाते हैं तो हिन्दू और मुसलमान नहीं रहते। फिर तो कहीं पर रोग कट जाए, वही पर चले जाते हैं। वैसे तो हिन्दू कहते हैं कि मुसलमान बुरे और मुसलमान कहते हैं कि हिन्दू बुरे और बीमारी हो जाए तो फिर हिन्दू व मुसलमान नहीं देखते। जब कष्ट आए तब तो कोई बुरा नहीं। बुरा कोई नहीं है। जो मुसलमान बुरे हैं वे बुरे हैं और जो हिन्दू बुरे हैं वे बुरे भी हैं और दोनों में अच्छे भी है। हर मज़हब में अच्छे और बुरे व्यक्ति होते हैं। लेकिन हम जीव हैं। हमारी कोई जाति व्यवस्था नहीं है। हमारी जीव जाति है हमारा धर्म मानव है-परमात्मा को पाना है।} हिन्दू वैद्य तथा आध्यात्मिक संत भी बुलाए, स्वयं भी उनसे जाकर मिला और सबसे आशीर्वाद व जंत्र-मंत्र करवाऐं परन्तु सर्व चेष्टा निष्फल रही।

किसी ने बताया कि काशी शहर में एक कबीर नाम का महापुरूष है। यदि वह कृपा कर दे तो आपका दुःख निवारण अवश्य हो जाएगा।

जब बादशाह सिकंदर ने सुना कि एक काशी के अन्दर महापुरूष रहता है तो उसको कुछ-कुछ याद आया कि वह तो नहीं है जिसने गाय को भी जीवित कर दिया था। हजारों अंगरक्षकों सहित दिल्ली से काशी के लिए चल पड़ा। बीरसिंह बघेला काशी नरेश पहले ही कबीर साहेब की महिमा और ज्ञान सुनकर कबीर साहेब के शिष्य हो चुके थे और पूर्ण रूप से अपने गुरुदेव में आस्था रखते थे। उनको कबीर साहेब की महिमा का ज्ञान था क्योंकि कबीर परमेश्वर वहाँ पर बहुत लीलाएँ कर चुके थे। जब सिकंदर लोधी बनारस(काशी) गया तथा बीरसिंह से कहा बीरसिंह मैं बहुत दुःखी हो गया हूँ। अब तो आत्महत्या ही शेष रह गई है। यहाँ पर कोई कबीर नाम का संत है ? आप तो जानते होंगे कि वह कैसा है? इतनी बात सिकंदर बादशाह के मुख से सुनी थी। काशी नरेश बीरसिंह की आँखों में पानी भर आया और कहा कि अब आप ठीक स्थान पर आ गए। अब आपके दुःख का अंत हो जाएगा। बादशाह सिकंदर ने पूछा कि ऐसी क्या बात है? बीरसिंह ने कहा कि वह कबीर जी स्वयं भगवान आए हुए हैं। परमेश्वर स्वरूप हैं। यदि उनकी दयादृष्टि हो गई तो आपका रोग ठीक हो जाएगा। राजा सिकंदर ने कहा कि जल्दी बुला दो। काशी नरेश बीरदेवसिंह बघेल ने विनम्रता से प्रार्थना की कि आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, आदेश भिजवा देता हूँ। लेकिन ऐसा सुना है कि संतो को बुलाया नहीं करते। यदि वे आ भी गए और रजा नहीं बख्सी तो भी आने का कोई लाभ नहीं। बाकी आपकी ईच्छा। सिकंदर ने कहा कि ठीक है मैं स्वयं ही चलता हूँ। इतनी दूर आ गया हूँ वहाँ पर भी अवश्य चलूँगा।

"सिकंदर लौधी बादशाह का असाध्य जलन रोग ठीक करना"

शाम का समय हो गया था। बीरसिंह को पता था कि इस समय साहेब कबीर जी अपने औपचारिक गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में ही होते हैं। यह समय परमेश्वर कबीर जी

का वहाँ मिलने का है। बीरदेव सिंह बघेल काशी नरेश तथा सिकंदर लोधी दिल्ली के बादशाह दोनों, स्वामी रामानन्द जी के आश्रम के सामने खड़े हो गए। वहाँ जाकर पता चला कि कबीर साहेब अभी नहीं आए हैं, आने ही वाले हैं। बीरसिंह अन्दर नहीं गए। बाहर सेवक खड़ा था उससे ही पूछा। सिकंदर ने कहा कि ''तब तक आश्रम में विश्राम कर लेते हैं।'' राजा बीरसिंह ने स्वामी रामानन्द जी के द्वारपाल सेवक से कहा कि रामानन्द जी से प्रार्थना करो कि दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी आपके दर्शन भी करना चाहते हैं और साहेब कबीर का इन्तजार भी आपके आश्रम में ही करना चाहते है। सेवक ने अन्दर जाकर रामानन्द जी को बताया कि दिल्ली के बादशाह सिकंदर लौधी आए हैं। रामानन्द जी मुसलमानों से घृणा करते थे। रामानन्द जी ने कहा कि मैं इन मलेच्छों (मुसलमानों) की शक्ल भी नहीं देखता। कह दो कि बाहर बैठ जाएगा। जब सिकंदर लोधी ने यह सुना तो क्रोध में भरकर (क्योंकि राजा में अहंकार बहुत होता है और वह दिल्ली का बादशाह) कहा कि यह दो कोड़ी का महात्मा दिल्ली के बादशाह का अनादर कर सकता है तो साधारण मुसलमान के साथ यह कैसा व्यवहार करता होगा? इसको मज़ा चखा दूं। रामानन्द जी अलग आसन पर बैठे थे। सिकंदर लोधी ने जाकर रामानन्द जी की गर्दन तलवार से काट दी। वापिस चल पड़ा और फिर उसको याद आया कि मैं जिस कार्य के लिए आया था? और वह काम अब पूरा नहीं होगा। कहा कि बीरसिंह देख मैं क्या जुल्म कर बैठा? मेरे बहुत बुरे दिन हैं। चाहता हूँ अच्छा करना और होता है बुरा। कबीर साहेब के गुरुदेव की हत्या कर दी। अब वे कभी भी मेरे ऊपर दयादृष्टि नहीं करेंगे। मुझे तो यह दुःख भोग कर ही मरना पड़ेगा। मैं बहुत पापी जीव हूँ। यह कहता हुआ आश्रम से बाहर की ओर चल पड़ा। बीरसिंह अपने बादशाह के आगे क्या बोलता। ज्योंही आश्रम से बाहर आए, कबीर साहेब आते दिखाई दिए। बीरसिंह ने कहा कि महाराज जी मेरे गुरुदेव कबीर साहेब आ गए। ज्योंही कबीर साहेब थोड़ी दूर रह गए बीरसिंह ने जमीन पर लेटकर उनको दण्डवत् प्रणाम किया। अब सिकंदर बहुत घबराया हुआ था। {अगर उसने यह जुल्म नहीं किया होता तो वह दण्डवत् नहीं करता और दण्डवत् नहीं करता तो साहेब उस पर रजा भी नहीं बकस पाते। क्योंकि यह नियम होता है।

'अति आधीन दीन हो प्राणी, ताते कहिए ये अकथ कहानी।''
उच्चे पात्र जल ना जाई, ताते नीचा हुजै भाई।
आधीनी के पास हैं पूर्ण ब्रह्म दयाल। मान बड़ाई मारिए बे अदबी सिर काल।।

कबीर परमेश्वर ने यहाँ पर एक तीर से दो शिकार किए। स्वामी रामान्नद जी में धर्म भेद-भाव की भावना शेष थी, वह भी निकालनी थी। रामान्नद जी मुसलमानों को हिन्दूओं से अभी भी भिन्न तथा हेय मानते थे। सिकंदर में अहंकार की भावना थी। यदि वह नम्र नहीं होता तो कबीर साहेब कृपा नहीं करते तथा सिकंदर स्वस्थ नहीं होता} बीरसिंह को देखकर तथा डरते हुए सिकंदर लौधी ने भी दण्डवत् प्रणाम किया। कबीर परमेश्वर जी ने दोनों के सिर पर हाथ रखा और कहा कि दो-2 नरेश आज मुझ गरीब के पास कैसे आए हैं ? मुझ गरीब को कैसे दर्शन दिए? परमेश्वर कबीर जी ने अपना हाथ उठाया भी नहीं था कि सिकंदर का जलन का

रोग समाप्त हो गया। सिकंदर लौधी की आँखों में पानी आ गया। (संत के सामने यह मन भाग जाता है और ये आत्मा ऊपर आ जाती है। क्योंकि परमात्मा आत्मा का साथी है। ''अन्तरयामी एक तू आत्म के आधार।'' आत्मा का आधार कबीर भगवान है।) सिकंदर लौधी ने पैर पकड़ कर छोड़े नहीं और रोता ही रहा। परमेश्वर जानी जान होते हुए भी कबीर साहेब ने सिकन्दर लोधी दिल्ली के बादशाह से पूछा क्या बात है?। सिकंदर ने कहा कि दाता मैंने घोर अपराध कर दिया। आप मुझे क्षमा नहीं कर सकते। जिस काम के लिए मैं आया था वह असाध्य रोग तो आपके स्पर्श मात्र से ठीक हो गया। इस पापी को क्षमा कर दो। कबीर साहेब ने कहा क्षमा कर दिया। यह तो बता कि क्या हुआ? सिकंदर ने कहा कि आप क्षमा कर नहीं सकते। मैंने ऐसा पाप किया है। कबीर साहेब ने कहा कि क्षमा कर दिया। सिकंदर ने फिर कहा कि सच में माफ कर दिया? कबीर साहेब ने कहा कि हाँ क्षमा कर दिया। अब बता क्या कष्ट है? सिकंदर ने कहा कि दाता मुझ पापी ने गुस्से में आकर आपके गुरुदेव का सिर कलम कर दिया और फिर सारी कहानी बताई। कबीर साहेब बोले कोई बात नहीं। जो हुआ प्रभु इच्छा से ही हुआ है आप स्वामी रामानन्द जी का अन्तिम संस्कार करवा कर जाना नहीं तो आप निंदा के पात्र बनोगे। परमेश्वर कबीर साहेब जी नाराज नहीं हुए। सिकंदर लोधी ने बीरसिंह के मुख की ओर देखा और कहा कि बीरसिंह यह तो वास्तव में भगवान है। देखिए मैंने गुरुदेव का सिर काट दिया और कबीर जी को क्रोध भी नहीं आया। बीरसिंह चुप रहा और साथ-साथ हो लिया और मन ही मन में सोचता है कि अभी क्या है, अभी तो और देखना। यह तो शुरूआत है।

"स्वामी रामानन्द जी को जीवित करना"

परमेश्वर कबीर जी ने अन्दर जाकर देखा रामान्नद जी का धड़ कहीं पर और सिर कहीं पर पड़ा था। शरीर पर चादर डाल रखी थी। कबीर साहेब ने अपने गुरुदेव के मृत शरीर को दण्डवत् प्रणाम किया और चरण छुए तथा कहा कि गुरुदेव उठो। दिल्ली के बादशाह आपके दर्शनार्थ आए हैं। एक बार उठना। दूसरी बार ही कहा था, सिर अपने आप उठकर धड़ पर लग गया और रामानन्द जी जीवित हो गए "बोलो सतगुरु देव की जय"!।

"सर्व मनुष्य एक प्रभु के बच्चे हैं, जो दो मानता है वह अज्ञानी है"

रामान्नद जी के शरीर से आधा खून और आधा दूध निकला हुआ था। जब साहेब कबीर से स्वामी रामानन्द जी ने कारण पूछा तो साहेब ने बताया कि स्वामी जी आपके अन्दर यह थोड़ी-सी कसर और रह रही है कि अभी तक आप हिन्दू और मुसलमान को दो समझते हो। इसलिए आधा खून और आधा दूध निकला है। आप अन्य जाति वालों को अपना साथी समझ चुके हो। यह जीव सभी एक हैं। आप तो जानीजान हो। आप तो लीला कर रहे हो अर्थात् उसको गोल-मोल भी कर दिया और समझा भी गए।

कबीर–अलख इलाही एक है, नाम धराया दोय।
कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।1।।
कबीर–राम रहीमा एक है, नाम धराया दोय।

कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।2।।
कबीर–कृष्ण करीमा एक है, नाम धराया दोय।
कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।3।।
कबीर–काशी काबा एक है, एकै राम रहीम।
मैदा एक पकवान बहु, बैठि कबीरा जीम।।4।।
कबीर–एक वस्तु के नाम बहु, लीजै वस्तु पहिचान।
नाम पक्ष नहीं कीजिये, सार तत्व ले जान।।5।।
कबीर–सब काहूका लीजिये, सांचा शब्द निहार।
पक्षपात ना कीजिये, कहै कबीर विचार।।6।।
कबीर–राम कबीरा एक है, दूजा कबहू ना होय।
अंतर टाटी कपट की, तातै दीखे दोय।।7।।
कबीर–राम कबीर एक है, कहन सुनन को दोय।
दो करि सोई जानई, सतगुरु मिला न होय।।8।।

रामान्नद जी ने सिकंदर को सीने से लगाया तथा उसके बाद हिन्दू तथा मुसलमान को तथा सर्व जाति व धर्मों के व्यक्तियों को प्रभु के बच्चे जानकर प्यार देने लगे तथा अपने औपचारिक शिष्य वास्तव में परमेश्वर कबीर साहेब जी का धन्यवाद किया कि आपने मेरा अज्ञान पूर्ण रूप से दूर कर दिया। हम एक पिता प्रभु की संतान हैं, मुझे दृढ़ विश्वास हो गया। दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी के साथ उनका धार्मिक गुरु शेखतकी भी बनारस गया था। वह रैस्ट हाऊस(विश्राम गृह) में ही रूका था। क्योंकि शेखतकी हिन्दू संतों से बहुत ईर्ष्या करता था तथा उन्हें व उनके शिष्यों को काफिर कहता था। इसलिए स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में जाने से इंकार कर दिया था। राजा सिकंदर लोधी के साथ स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में नहीं गया था।

महाराजा सिकंदर ने विश्राम गृह में आकर परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा अपने असाध्य रोग का निवारण केवल आशीर्वाद मात्र से करने तथा स्वामी रामानन्द जी को पुनर् जीवित करने की कथा खुशी के साथ अपने धार्मिक पीर शेखतकी को बताई तथा कहा कि पीर जी मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ हूँ। मुझे कोई पीड़ा किसी अंग में नहीं है। रात्री का समय था। प्रभु कबीर साहेब जी सुबह आने की कहकर अपनी कुटिया पर चले गये थे।

शेखतकी ने बादशाह के मुख से अन्य संत की भूरी-भूरी प्रशंसा सुनी तो अन्दर ही अन्दर जल-भुन गया। रात भर करवटें बदलता रहा। परमेश्वर कबीर साहेब जी को नीचा दिखाने की योजना बनाता रहा।

"पवित्र मुसलमान धर्म का संक्षिप्त परिचय"

अगले दिन पूज्य कबीर परमेश्वर राज दरबार में पहुँचे। काशी नरेश बीरदेव सिंह बघेल तथा दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी ने डण्डवत् प्रणाम (जमीन पर लम्बा लेटकर) किया तथा कविर्देव को आसन पर बैठाया तथा स्वयं नीचे जमीन पर बिछे गलीचे पर विराजमान हो गए।

बादशाह सिकंदर ने प्रार्थना की कि हे परवरदीगार ! मेरा रोग न तो हिन्दू संतों से शांत हुआ तथा न ही मुसलमान पीरों, काजी तथा मुल्लाओं से। क्या कारण था दीन दयाल आपके आशीर्वाद मात्र से ही मेरा जान लेवा रोग छू मंत्र हो गया। कल रात्री में मैंने पेट भर कर खाना खाया। वर्षों से यह कष्ट मुझे सत्ता रहा था। आपकी कृप्या से मैं स्वस्थ हो गया हूँ।

परमेश्वर कबीर साहेब जी ने बताया कि राजन् पूर्ण परमात्मा अल्लाहु अकबर(अल्लाहु कबीरू) ही सर्व पाप नाश (क्षमा) कर सकता है। अन्य प्रभु तो केवल किए कर्म का फल ही दे सकते हैं। जैसे प्राणी को दुःख तो पाप से होता है तथा सुख पुण्य से। आप को पाप कर्म के कारण कष्ट था। यह आप के प्रारब्ध में लिखा था। यह किसी भी अन्य भगवान से ठीक नहीं हो सकता था। क्योंकि पाप नाशक (क्षमा करने वाले) पूर्ण परमात्मा कविर्देव/अल्लाहु अकबर (अल्लाहु कबीरू) के वास्तविक ज्ञान व भक्ति विधि को न तो हिन्दू संत, गुरुजन जानते हैं तथा न ही मुसलमान पीर, काजी तथा मुल्ला ही परिचित हैं। उस सर्व शक्तिमान परमेश्वर की पूजा विधि तथा पूर्ण ज्ञान केवल यह दास जानता है। न श्री राम तथा श्री कृष्ण अर्थात् श्री विष्णु जी जानते तथा न ही श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी, न ब्रह्म (जिसे आप निराकार प्रभु कहते हो) जानता। न हजरत मुहम्मद जानता था, न ही अन्य मुसलमान पीर व काजी तथा मुल्ला ही जानते हैं।

"शेखतकी नामक मुसलमान पीर से वार्ता"

परमेश्वर कबीर साहेब जी के मुख कमल से उपरोक्त वचन सुनकर शेखतकी व्यंगात्मक तरीके से बोला कि तू ही जानता है सर्व ज्ञान को। हमारे हजरत मुहम्मद साहेब जी को भी अज्ञानी कह रहा है। बीच बचाव करते हुए बीरसिंह बघेल काशी नरेश ने कहा पीर जी इसमें नाराज होने की कौन-सी बात है, प्रेम पूर्वक शंका का समाधान करवाओ। काशी नरेश जानता था कि सर्व ज्ञान सम्पन्न पूज्य कबीर साहेब जी ज्ञान गोष्ठी करके पीर जी का भ्रम निवारण करना चाहते हैं। काशी नरेश ने शेखतकी से कहा कबीर जी ने किस कारण से हजरत मुहम्मद जी को पूर्ण ज्ञान से वंचित कहा है आप कारण पूछो। शेखतकी ने कहा प्रश्न ही तो पूछ रहा हूँ। कबीर जी कारण बताए किस आधार पर हमारे परम पूज्य हजरत मुहम्मद जी को अज्ञानी कहा है ?

"पवित्र कुर्आन शरीफ ने प्रभु के विषय में क्या बताया है ?"

परम पूज्य कबीर परमेश्वर ने कहना प्रारम्भ किया। पवित्र कुर्आन शरीफ सुरत फुर्कानि स. 25 आयत 52,58,59 में जिस कबीर अल्लाह का विवरण है वह पूर्ण परमात्मा है। जिसे अल्लाहु अकबर(अकबीरू) कहते हो। कुर्आन शरीफ का ज्ञान दाता अल्लाह किसी अन्य कबीर नामक अल्लाह की महिमा का गुणगान कर रहा है। आयत सं. 52 से 58 तथा 59 में हजरत मुहम्मद जी को कुर्आन शरीफ के ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि हे नबी मुहम्मद ! जो कबीर नामक अल्लाह है उसने सर्व ब्रह्मण्डो की रचना की है। वही सर्व पाप नाश (क्षमा) करने वाला है तथा सर्व के पूजा करने योग्य है(इबादही कबीरा अर्थात् पूजा के योग्य कबीर)। उसी ने जमीन तथा

आसमान के मध्य जो कुछ भी है सर्व की रचना छः दिन में की है तथा सातवें दिन आसमान में तख्त पर जा विराजा। काफिर लोग उस कबीर प्रभु (अल्लाहु अकबर) को सर्व शक्तिमान प्रभु नहीं मानते। आप उनकी बातों में मत आना। उनका कहा मत मानना। मेरे द्वारा दिए कुर्आन शरीफ की दलीलों पर विश्वास रखना तथा अहिंसा के साथ कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष (जिहाद) करना, लड़ाई नहीं करना(सूरत फुर्कानि आयत 52)। उस परमात्मा कबीर (अल्लाहु अकबर) की भक्ति विधि तथा उसके विषय में पूर्ण ज्ञान मुझे नहीं है। उस सर्व शक्तिमान, सर्व ब्रह्मण्डों के रचनहार, सर्व पाप नाशक, सर्व के पूजा योग्य कबीर अल्लाह की पूजा के विषय में किसी तत्वदर्शी (बाखबर) संत से पूछो। कबीर परमेश्वर ने कहा शेखतकी जी आपके अल्लाह को ही ज्ञान नहीं है तो आप के हजरत मुहम्मद साहेब जी को कैसे पूर्ण ज्ञान हो सकता है? तथा अन्य काजी, मुल्ला तथा पीर भी सत्य साधना तथा तत्वज्ञान से वंचित हैं। जिस कारण से साधक के कष्ट का निवारण नहीं होता। अन्य साधना जैसे पाँच समय निमाज, बंग आदि देने से मोक्ष तथा कष्ट निवारण नहीं होता। जन्म-मृत्यु तथा स्वर्ग-नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीरों में भी किए कर्म के आधार से कष्ट भोगना पड़ता है।

उपरोक्त वार्ता सुनकर शेखतकी ने तुरन्त कुर्आन शरीफ को खोला तथा सूरत फुर्कानि संख्या 25 आयत 52, 58, 59 को पढ़ा जिसमें उपरोक्त विवरण सही था। वास्तविकता को आँखों देखकर भी मान हानी के भय से कहा कि ऐसा कहीं नही लिखा है। यह काफिर झूठ बोल रहा है। उस समय शिक्षा का अभाव था। मुसलमान समाज अरबी भाषा से परिचित नहीं था। कुर्आन शरीफ अरबी भाषा में लिखी थी। बादशाह सिकंदर को भी शंका हो गई कि परमेश्वर कबीर साहेब जी भले ही शक्ति युक्त हैं परन्तु अशिक्षित होने के कारण कुर्आन शरीफ के विषय में नहीं जान सकते।

शेखतकी ने जले-भुने वचन बोले क्या तूही है वह बाखबर ? फिर बता दे वह अल्लाहु अकबर कैसा है? यदि परमात्मा को साकार कहता है तो कौन है? कहाँ रहता है?

परमेश्वर कबीर साहेब जी ने कहा :- वह कबीर अल्लाह जिसे आप अल्लाहू अकबर कहते हो मैं ही हूँ। मैं ऊपर सतलोक में रहता हूँ। मैंने ही सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है। मैं हजरत मुहम्मद जी को भी जिन्दा संत का रूप धारण करके मिला था तथा उस प्यारी आत्मा को सतलोक दिखाकर वापिस छोड़ा था। हजरत मुहम्मद से कहा था कि आप अब मेरी महिमा सर्व अनुयाईयों को सुनाओ। परन्तु जिबराईल फरिश्ते के भय के कारण तत्व ज्ञान का प्रचार नहीं किया तथा न मेरी बातों पर विश्वास किया। क्योंकि उससे पूर्व जिबराईल देवता हजरत मुहम्मद जी को पित्तर लोक में घुमा लाया था। जहाँ पर हजरत मुहम्मद जी ने अपने पूर्वज बाबा आदम को देखा जो दांई ओर मुंह करके हंस रहा था तथा बांई ओर मुंह करके रो रहा था। हजरत जिबराईल से हजरत मुहम्मद जी ने पूछा कि यह व्यक्ति कौन है, जो एक बार हंस रहा है एक बार रो रहा है ? जिबराईल ने बताया यह बाबा आदम है। दांई ओर स्वर्ग में इनकी पुण्य कर्मी संतान है तथा बांई ओर नरक में बुरी संतान कष्ट उठा रही है। इसलिए जब नेक संतान को स्वर्ग में सुखी देखता है तो हंसत्ता है। जब बांई ओर बुरी संतान को महा कष्ट से नरक में पीड़ित

देखता है तो बुरी तरह रोता है। इसी लोक में अन्य स्थान पर हजरत मूसा तथा हजरत ईसा जी आदि को भी देखा। उनसे हजरत मुहम्मद जी की वार्ता हुई। इस कारण से हजरत मुहम्मद जी काल के जाल को न समझ कर उसी स्थान को वास्तविक ठिकाना मान चुका था क्योंकि वहाँ पित्तर लोक में पवित्र ईसाई धर्म तथा पवित्र मुसलमान धर्म के पूज्य बाबा आदम भी थे तथा अन्य नबी भी विराजमान थे।

"माँस-मदिरा निषेध का उपदेश"

हजरत मुहम्मद जी जिस साधना को करता था वही साधना अन्य मुसलमान समाज भी कर रहा है। वर्तमान में सर्व मुसलमान श्रद्धालु माँस भी खा रहे हैं। परन्तु नबी मुहम्मद जी ने कभी माँस नहीं खाया तथा न ही उनके सीधे अनुयाईयों(एक लाख अस्सी हजार) ने माँस खाया। केवल रोजा व बंग तथा नमाज किया करते थे। गाय आदि को बिस्मिल(हत्या) नहीं करते थे।

नबी मुहम्मद नमस्कार है, राम रसूल कहाया।
एक लाख अस्सी कूं सौगंध, जिन नहीं करद चलाया।।
अरस कुरस पर अल्लह तख्त है, खालिक बिन नहीं खाली।
वे पैगम्बर पाख पुरुष थे, साहिब के अब्दाली।।

भावार्थ :- नबी मोहम्मद तो आदरणीय है जो प्रभु के अवतार कहलाए हैं। कसम है एक लाख अस्सी हजार को जो उनके अनुयाई थे उन्होंने भी कभी बकरे, मुर्गे तथा गाय आदि पर करद नहीं चलाया अर्थात् जीव हिंसा नहीं की तथा माँस भक्षण नहीं किया। वे हजरत मोहम्मद, हजरत मूसा, हरजत ईसा आदि पैगम्बर(संदेशवाहक) तो पवित्र व्यक्ति थे तथा ब्रह्म(ज्योति निरंजन/काल) के कृपा पात्र थे, परन्तु जो आसमान के अंतिम छोर(सतलोक) में पूर्ण परमात्मा(अल्लाहू अकबर अर्थात् अल्लाह कबीर) है उस सृष्टी के मालिक की नजर से कोई नहीं बचा।

मारी गऊ शब्द के तीरं, ऐसे थे मोहम्मद पीरं।।
शब्दै फिर जिवाई, हंसा राख्या माँस नहीं भाख्या, ऐसे पीर मुहम्मद भाई।।

भावार्थ : एक समय नबी मुहम्मद ने एक गाय को शब्द(वचन सिद्धि) से मार कर सर्व के सामने जीवित कर दिया था। उन्होंने गाय का माँस नहीं खाया। अब मुसलमान समाज वास्तविकता से परिचित नहीं है। जिस दिन गाय जीवित की थी उस दिन की याद बनाए रखने के लिए गऊ मार देते हो। आप जीवित नहीं कर सकते तो मारने के भी अधिकारी नहीं हो। आप माँस को प्रसाद रूप जान कर खाते तथा खिलाते हो। आप स्वयं भी पाप के भागी बनते हो तथा अनुयाईयों को भी गुमराह कर रहे हो। आप दोजख (नरक) के पात्र बन रहे हो।

कबीर–माँस अहारी मानई, प्रत्यक्ष राक्षस जानि।
ताकी संगति मति करै, होइ भक्ति में हानि।।1।।
कबीर–माँस खांय ते ढेड़ सब, मद पीवैं सो नीच।
कुलकी दुरमति पर हरै, राम कहै सो ऊंच।।2।।
कबीर–माँस भखै औ मद पिये, धन वेश्या सों खाय।
जुआ खेलि चोरी करै, अंत समूला जाय।।5।।

कबीर–माँस माँस सब एक है, मुरगी हिरनी गाय।
आँखि देखि नर खात है, ते नर नरकहिं जाय।।6।।
कबीर–यह कूकर को भक्ष है, मनुष देह क्यों खाय।
मुखमें आमिख मेलिके, नरक परंगे जाय।।7।।
कबीर–पापी पूजा बैठिकै, भखै माँस मद दोइ।
तिनकी दीक्षा मुक्ति नहिं, कोटि नरक फल होइ।।10।।
कबीर–जीव हनै हिंसा करै, प्रगट पाप सिर होय।
निगम पुनि ऐसे पाप तें, भिस्त गया नहिं कोय।।14।।
कबीर–तिलभर मछली खायके, कोटि गऊ दै दान।
काशी करौंत ले मरै, तौ भी नरक निदान।।16।।
कबीर–बकरी पाती खात है, ताकी काढी खाल।
जो बकरीको खात है, तिनका कौन हवाल।।18।।
कबीर–मुल्ला तुझै करीमका, कब आया फरमान।
घट फोरा घर घर बांटा, साहबका नीसान।।21।।
कबीर–काजीका बेटा मुआ, उर में सालै पीर।
वह साहब सबका पिता, भला न मानै बीर।।22।।
कबीर–पीर सबनको एकसी, मूरख जानैं नाहिं।
अपना गला कटायकै, क्यों न बसो भिश्त के माहिं।।23।।
कबीर–मुरगी मुल्लासों कहै, जबह करत है मोहिं।
साहब लेखा माँगसी, संकट परिहै तोहिं।।24।।
कबीर–जोर करि जबह करै, मुखसों कहै हलाल।
साहब लेखा माँगसी, तब होसी कौन हवाल।।28।।
कबीर–जोर कीयां जुलूम है, मांगै ज्वाब खुदाय।
खालिक दर खूनी खडा, मार मुहीं मुँह खाय।।29।।
कबीर–गला काटि कलमा भरै, कीया कहै हलाल।
साहब लेखा माँगसी, तब होसी जबाब–सवाल।।30।।
कबीर–गला गुसाकों काटिये, मियां कहरकौ मार।
जो पाँचू बिस्मिल करै, तब पावै दीदार।।31।।
कबीर–ये सब झूठी बंदगी, बेरिया पाँच निमाज।
सांचहि मारै झूठ पढ़ि, काजी करै अकाज।।32।।
कबीर–दिनको रोजा रहत हैं, रात हनत है गाय।
यह खून वह बंदगी, कहुं क्यों खुशी खुदाय।।33।।
कबीर–कबिरा तेई पीर हैं, जो जानै पर पीर।
जो पर पीर न जानि है, सो काफिर बेपीर।।36।।
कबीर–खूब खाना है खीचड़ी, माँहीं परी टुक लौन।
माँस पराया खायकै, गला कटावै कौन।।37।।
कबीर–कहता हूँ कहि जात हूँ, कहा जो मान हमार।

जाका गला तुम काटि हो, सो फिर काटै तुम्हार।।38।।
कबीर–हिन्दू के दया नहीं, मिहर तुरकके नाहिं।
कहै कबीर दोनूं गया, लख चौरासी माहिं।।39।।
कबीर–मुसलमान मारै करदसो, हिंदू मारे तरवार।
कहै कबीर दोनूं मिलि, जैहैं यमके द्वार।।40।।

उपरोक्त अमृतवाणी में पूज्य कबीर परमेश्वर ने समझाया कि जो व्यक्ति माँस खाते हैं, शराब पीते हैं, सत्संग सुनकर भी बुराई नहीं त्यागते, उपदेश प्राप्त नहीं करते, उन्हें तो साक्षात राक्षस जानों। अनजाने में गलती न जाने किससे हो जाए। यदि वह बुराई करने वाला व्यक्ति सत्संग विचार सुनकर बुराई त्याग कर भगवान की भक्ति करने लग जाता है वह तो नेक आत्मा है, वह चाहे किसी जाति व धर्म का हो। जो माँस आहार तथा सुरा पान त्याग कर प्रभु भक्ति नहीं करता वह तो ढेड(नीच) व्यक्ति है, चाहे किसी जाति या धर्म का हो। भावार्थ है कि उच्च कर्म करने वाला उच्च है तथा नीच कर्म करने वाला नीच है। जाति या धर्म विशेष में जन्म मात्र से उच्च-नीच नहीं होता। जिन साधकों ने उपदेश ले रखा है उन्हें उपरोक्त प्रकार के बुराई करने वालों के पास नहीं बैठना चाहिए, जिससे आपकी भक्ति में बाधा पड़ेगी(साखी 1-2)।

जो व्यक्ति माँस भक्षण करते हैं, शराब पीते हैं, जो स्त्री वेश्यावृति करती है तथा जो व्यक्ति उससे व्यवसाय करवा कर वैश्या से धन प्राप्त करते हैं, जुआ खेलते हैं तथा चोरी करते है, समझाने से भी नहीं मानते, वह तो महापाप के भागी हैं तथा घोर नरक में गिरेंगे(साखी 5)।

माँस चाहे गाय, हिरनी तथा मुर्गी आदि किसी प्राणी का है जो व्यक्ति माँस खाते हैं वे नरक के भागी हैं। जो व्यक्ति अनजाने में माँस खाते हैं(जैसे आप किसी रिश्तेदारी में गए, आपको पता नहीं लगा कि सब्जी है या माँस, आपने खा लिया) तो आप को दोष नहीं, परन्तु आगे से अति सावधान रहना। जो व्यक्ति आँखों देखकर भी खा जाते हैं वे दोषी हैं। यह माँस तो कुत्ते का आहार है, मनुष्य शरीर धारी के लिए वर्जित है(साखी 6-7)।

जो गुरुजन माँस भक्षण करते हैं तथा शराब पीते हैं उनसे नाम दीक्षा प्राप्त करने वालों की मुक्ति नहीं होती अपितु महा नरक के भागी होंगे(साखी 10)।

जो व्यक्ति जीव हिंसा करते हैं (चाहे गाय, सूअर, बकरी, मुर्गी, मनुष्य, आदि किसी भी प्राणी को स्वार्थवश मारते हैं) वे महापापी हैं, (भले ही जिन्होंने पूर्ण संत से पूर्ण परमात्मा का उपदेश भी प्राप्त है) वे कभी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते।(साखी-10-14)

जरा-सा (तिल के समान) भी माँस खाकर भक्ति करता है, चाहे करोड़ गाय दान भी करता है, उस साधक की साधना भी व्यर्थ है। माँस आहारी व्यक्ति चाहे काशी में करौंत से गर्दन छेदन भी करवा ले वह नरक ही जायेगा।(नोट - काशी/बनारस के हिन्दूओं के स्वार्थी गुरुओं ने भक्त समाज में भ्रम फैला रखा था कि जो काशी में मरता है वह स्वर्ग जाता है। अधिक भीड़ होने लगी तब एक और घातक योजना बनाई उसके तहत कहा कि जो शीघ्र स्वर्ग जाना चाहता है उसके लिए गंगा पर एक करौंत भगवान का भेजा आता है। उससे गर्दन कटवाने वालों के लिए स्वर्ग के कपाट खुले रहते हैं। उन स्वार्थी गुरुजनों ने मनुष्य हत्या के लिए एक हत्था खोल दिया। श्रद्धालु भक्तों ने आत्मकल्याण के लिए वहाँ गर्दन कटवाना भी स्वीकार कर लिया। परन्तु

ज्ञानहीन गुरुओं के द्वारा बताई साधना से भी कोई लाभ नहीं होता)। इसलिए कहा है कि माँस खाने वाला चाहे कितना भी भक्ति तथा पुण्य व दान तथा बलिदान करे उसका कोई लाभ नहीं(साखी 16)।

बकरी जो आपने मार डाली वह तो घास-फूंस, पत्ते आदि खाकर पेट भर रही थी। इस काल लोक में ऐसे शाकाहारी पशु की भी हत्या हो गई तो जो बकरी का माँस खाते हैं उनका तो अधिक बुरा हाल होगा(साखी 18)।

पशु आदि को हलाल, बिस्मिल आदि करके माँस खाने व प्रसाद रूप में वितरित करने का आदेश दयालु (करीम) प्रभु का कब प्राप्त हुआ(क्योंकि पवित्र बाईबल उत्पत्ति ग्रन्थ में पूर्ण परमात्मा ने छः दिन में सृष्टी रची, सातवें दिन ऊपर तख्त पर जा बैठा तथा सर्व मनुष्यों के आहार के लिए आदेश किया था कि मैंने तुम्हारे खाने के लिए फलदार वृक्ष तथा बीजदार पौधे दिए हैं। उस करीम (दयालु प्रभु पूर्ण परमात्मा) की ओर से आप को फिर से कब आदेश हुआ ? वह कौन-सी कुर्आन में लिखा है ? पूर्ण परमात्मा सर्व मनुष्यों आदि की सृष्टी रचकर ब्रह्म(जिसे अव्यक्त कहते हो, जो कभी सामने प्रकट नहीं होता, गुप्त कार्य करता तथा करवाता रहता है) को दे गया। बाद में पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन शरीफ आदि ग्रन्थों में जो विवरण है वह ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) का तथा उसके फरिश्तों का है, या भूतों-प्रेतों का है। करीम अर्थात् पूर्ण ब्रह्म दयालु अल्लाहु कबीरू का नहीं है। उस पूर्ण ब्रह्म के आदेश की अवहेलना किसी भी फरिश्ते व ब्रह्म आदि के कहने से करने की सजा भोगनी पड़ेगी।)

एक समय एक व्यक्ति की दोस्ती एक पुलिस थानेदार से हो गई। उस व्यक्ति ने अपने दोस्त थानेदार से कहा कि मेरा पड़ोसी मुझे बहुत परेशान करता है। थानेदार (S.H.O.) ने कहा कि मार लट्ठ, मैं आप निपट लूंगा। थानेदार दोस्त की आज्ञा का पालन करके उस व्यक्ति ने अपने पड़ोसी को लट्ठ मारा, सिर में चोट लगने के कारण पड़ौसी की मृत्यु हो गई। उसी क्षेत्र का अधिकारी होने के कारण वह थाना प्रभारी अपने दोस्त को पकड़ कर लाया, कैद में डाल दिया तथा उस व्यक्ति को मृत्यु दण्ड मिला। उसका दोस्त थानेदार कुछ मदद नहीं कर सका। क्योंकि राजा का संविधान है कि यदि कोई किसी की हत्या करेगा तो उसे मृत्यु दण्ड प्राप्त होगा। उस नादान व्यक्ति ने अपने मित्र दरोगा की आज्ञा मान कर राजा का संविधान भंग कर दिया। जिससे जीवन से हाथ धो बैठा।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा की आज्ञा की अवहेलना करने वाला पाप का भागी होगा। क्योंकि कुर्आन शरीफ (मजीद) का सारा ज्ञान ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन, जिसे आप अव्यक्त कहते हो) का दिया हुआ है। इसमें उसी का आदेश है तथा पवित्र बाईबल में केवल उत्पत्ति ग्रन्थ के प्रारम्भ में पूर्ण प्रभु का आदेश है। पवित्र बाईबल में हजरत आदम तथा उसकी पत्नी हव्वा को उस पूर्ण परमात्मा ने बनाया। बाबा आदम की वंशज संतान हजरत ईस्राईल, राजा दऊद, हजरत मूसा, हजरत ईसा तथा हजरत मुहम्मद आदि को माना है। पूर्ण परमात्मा तो छः दिन में सृष्टी रचकर तख्त पर विराजमान हो गया। बाद का सर्व कतेबों (कुर्आन शरीफ आदि) का ज्ञान ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) का प्रदान किया हुआ है। पवित्र कुर्आन का ज्ञान दाता स्वयं कहता है कि पूर्ण परमात्मा जिसे करीम, अल्लाह कहा जाता है उसका नाम कबीर है, वही पूजा के योग्य है।

उसके तत्वज्ञान व भक्ति विधि को किसी बाखबर (तत्वदर्शी संत) से पता करो। इससे सिद्ध है कि जो ज्ञान कुर्आन शरीफ आदि का है वह पूर्ण प्रभु का नहीं है (साखी 21)।

जब काजी के पुत्र की मृत्यु हो जाती है तो काजी को कितना कष्ट होता है। पूर्ण ब्रह्म(अल्लाह कबीर) सर्व का पिता है। उसके प्राणियों को मारने वाले से अल्लाह खुश नहीं होता (साखी 22)।

दर्द सर्व को एक जैसा ही होता है। अनजान नहीं जानते। यदि बकरे आदि का गला काट कर (हलाल करके) उसे स्वर्ग भेज देते हो तो काजी तथा मुल्ला अपना गला छेदन करके (हलाल करके) स्वर्ग प्राप्ति क्यों नहीं करते ? (साखी 23)

जिस समय बकरी को मुल्ला मारता है तो वह बेजुबान प्राणी आँखों में आंसू भर कर म्यां-म्यां करके समझाना चाहता है कि हे मुल्ला मुझे मार कर पाप का भागी मत बन। जब परमेश्वर के न्याय अनुसार लेखा किया जाएगा उस समय तुझे बहुत संकट का सामना करना पड़ेगा। (साखी 24)

जबरदस्ती (बलात्) निर्दयता से बकरी आदि प्राणी को मारते हो, कहते हो हलाल कर रहे हैं। इस दोगली नीति का आपको महा कष्ट भोगना होगा। काजी तथा मुल्ला व कोई भी जीव हिंसा करने वाला पूर्ण प्रभु के कानून का उल्लंघन कर रहा है, जिस कारण वहाँ धर्मराज के दरबार में खड़ा-खड़ा पिटेगा। यदि हलाल ही करने का शौक है तो काम, क्रोध, मोह, अहंकार, लोभ आदि को कर।

पाँच समय निमाज भी पढ़ते हो तथा रोजों के समय रोजे (व्रत) भी रखते हो। शाम को गाय, बकरी, मुर्गी आदि को मार कर माँस खाते हो। एक तरफ तो परमात्मा की स्तुति करते हो दूसरी ओर उसी के प्राणियों की हत्या करते हो। ऐसे प्रभु कैसे खुश होगा ? अर्थात् आप स्वयं भी पाप के भागी हो रहे हो तथा अनुयाईयों को भी गुमराह करने के दोषी होकर नरक में गिरोगे। (साखी 28 से 33)

कबीर परमेश्वर कह रहे हैं कि हे काजी, मुल्लाओं आप पीर (गुरु) भी कहलाते हो। पीर तो वह होता है जो दूसरे के दुःख को समझे उसे, संकट में गिरने से बचाए। किसी को कष्ट न पहुँचाए। जो दूसरे के दुःख में दुःखी नहीं होता वह तो काफिर (नीच) बेपीर (निर्दयी) है। वह पीर (गुरु) के योग्य नहीं है। (साखी 36)

उत्तम खाना नमकीन खिचड़ी है उसे खाओ। दूसरे का गला काटने वाले को उसका बदला देना पड़ता है। यह जान कर समझदार व्यक्ति प्रतिफल में अपना गला नहीं कटाता। दोनों ही धर्मों के मार्ग दर्शक निर्दयी हो चुके हैं। हिन्दूओं के गुरु कहते हैं कि हम तो एक झटके से बकरा आदि का गला छेदन करते हैं, जिससे प्राणी को कष्ट नहीं होता, इसलिए हम दोषी नहीं हैं तथा मुसलमान धर्म के मार्ग दर्शक कहते हैं हम धीरे-धीरे हलाल करते हैं जिस कारण हम दोषी नहीं। परमात्मा कबीर साहेब जी ने कहा यदि आपका तथा आपके परिवार के सदस्य का गला किसी भी विधि से काटा जाए तो आपको कैसा लगेगा ? (साखी 37 से 40)

बात करते हैं पुण्य की, करते हैं घोर अधर्म।
दोनों नरक में पड़हीं, कुछ तो करो शर्म।।

कबीर परमेश्वर ने कहा -

हम मुहम्मद को सतलोक ले गया। इच्छा रूप वहाँ नहीं रहयो। उल्ट मुहम्मद महल पठाया, गुज बीरज एक

कलमा लाया।। रोजा, बंग, नमाज दई रे, बिसमिल की नहीं बात कही रे।

भावार्थ :- नबी मुहम्मद को मैं(कबीर परमेश्वर) सतलोक ले कर गया था परन्तु वहाँ न रहने की इच्छा व्यक्त की, वापिस मुहम्मद जी को शरीर में भेज दिया। नबी मुहम्मद जी ने रोजा(व्रत) बंग(ऊँची आवाज में प्रभु स्तुति करना) तथा पाँच समय की नमाज करना तो कहा था परन्तु गाय आदि प्राणियों को बिस्मिल करने(मारने) को नहीं कहा।

उपरोक्त वार्ता सुनकर शेखतकी पीर ने क्रोध करते हुए कहा कि तू क्या जाने कुर्आन शरीफ तथा हमारे नबी के विषय में तू तो अशिक्षित है। हमारे धर्म के विषय में झूठा प्रचार करके भ्रम फैला रहा है। मैं बताता हूँ पवित्र कुर्आन शरीफ की अमृत वाणी कैसे प्राप्त हुई। यह कोई बाद में लिखा ग्रंथ नहीं है। यह तो अल्लाह(प्रभु) द्वारा बोली वाणी साथ की साथ लिखी गई थी। शेखतकी ने (जो दिल्ली के महाराजा सिकंदर लौधी का धार्मिक गुरु तथा पूरे भारत के मुसलमान शेखतकी की प्रत्येक आज्ञा का पालन करते थे) ने कहा कि सुन गंवार हमारे मुहम्मद नबी का जीवन वृतांत।

''हजरत मुहम्मद जी का जीवन चरित्र''

हजरत मुहम्मद के बारे में श्री मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी के विचार

जीवनी हजरत मुहम्मद(सल्लाहु अलैहि वसल्लम)

लेखक हैं – मुहम्मद इनायतुल्लाह सुब्हानी,

मूल किताब – मुहम्मदे(अर्बी) से,

अनुवादक – नसीम गाजी फलाही,

प्रकाशक – इस्लामी साहित्य ट्रस्ट प्रकाशन नं. 81 के आदेश से प्रकाशन कार्य किया है।

मर्कजी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स, डी–307, दावत नगर, अबुल फज्ल इन्कलेव जामिया नगर, नई दिल्ली–1110025,

श्री हाशिम के पुत्र शौबा थे। उन्हीं का नाम अब्दुल मुत्तलिब पड़ा। क्योंकि जब मुत्तलिब अपने भतीजे शौबा को अपने गाँव लाया तो लोगों ने सोचा कि मुत्तलिब कोई दास लाया है। इसलिए श्री शौबा को श्री अब्दुल मुत्तलिब के उर्फ नाम से अधिक जाना जाने लगा। श्री अब्दुल मुत्तलिब को दस पुत्र प्राप्त हुए। किसी कारण से अब्दुल मुत्तलिब ने अपने दस बेटों में से एक बेटे की कुर्बानी अल्लाह के निमित्त देने का प्रण लिया।

देवता को दस बेटों में से कौन सा बेटा कुर्बानी के लिए पसंद है। इस के लिए एक मन्दिर(काबा) में रखी मूर्तियों में से बड़े देव की मूर्ति के सामने दस तीर रख दिए तथा प्रत्येक पर एक पुत्र का नाम लिख दिया। जिस तीर पर सबसे छोटे पुत्र अब्दुल्ला का नाम लिखा था वह तीर मूर्ति की तरफ हो गया। माना गया कि देवता को यही पुत्र कुर्बानी के लिए स्वीकार है। श्री अब्दुल्ला(नबी मुहम्मद के पिता) की कुर्बानी देने की तैयारी होने लगी। पूरे क्षेत्र के धार्मिक लोगों ने अब्दुल मुत्तल्लिब से कहा ऐसा न करो। हा-हा कार मच गया। एक पुजारी में कोई अन्य आत्मा बोली। उसने कहा कि ऊंटों की कुर्बानी देने से भी काम चलेगा। इससे राहत की स्वांस मिली। उसी शक्ति ने उसके लिए एक अन्य गाँव में एक औरत जो अन्य मन्दिरों के

पुजारियों की दलाल थी के विषय में बताया कि वह फैसला करेगी कि कितने ऊंटों की कुर्बानी से अब्दुल्ला की जान अल्लाह क्षमा करेगा। उस औरत ने कहा कि जितने ऊंट एक जान की रक्षा के लिए देते हो अन्य दस और जोड़ कर तथा अब्दुल्ला के नाम की पर्ची तथा दस ऊंटों की पर्ची डाल कर जाँच करते रहो। जब तक ऊंटों वाली पर्ची न निकले, तब तक करते रहो। इस प्रकार दस-2 ऊंटों की संख्या बढ़ाते रहे तब सौ ऊंटों के बाद ऊंटों की पर्ची निकली, उस से पहले अब्दुल्ला की पर्ची निकलती रही। इस प्रकार सौ ऊटों की कुर्बानी(हत्या) करके बेटे अब्दुल्ला की जान बचाई। जवान होने पर श्री अब्दुल्ला का विवाह भक्तमति आमिनी देवी से हुआ। जब हजरत मुहम्मद माता आमिनी जी के गृभ में थे पिता श्री अब्दुल्ला जी की मृत्यु किसी दूर स्थान पर हो गई। वहीं पर उनकी कबर बनवा दी। जिस समय बालक मुहम्मद की आयु छः वर्ष हुई तो माता आमिनी देवी अपने पति की कबर देखने गई थी। उसकी भी मृत्यु रास्ते में हो गई। छः वर्षिय बालक मुहम्मद जी यतीम (अनाथ) हो गए। (उपरोक्त विवरण पूर्वोक्त पुस्तक 'जीवनी हजरत मुहम्मद' पृष्ठ 21 से 29 तथा 33-34 पर लिखा है)।

हजरत मुहम्मद जी जब 25 वर्ष के हुए तो एक चालीस वर्षिय विधवा खदीजा नामक स्त्री से विवाह हुआ। खदीजा पहले दो बार विधवा हो चुकी थी। तीसरी बार हजरत मुहम्मद से विवाह हुआ। वह बहुत बड़े धनाङ्य घराने की औरत थी।(यह विवरण पूर्वोक्त पुस्तक के पृष्ठ 46, 51-52 पर लिखा है)।

हजरत मुहम्मद जी को संतान रूप में खदीजा जी से तीन पुत्र तथा चार बेटियाँ प्राप्त हुई। तीनों पुत्र 1. कासिम, 2. तय्यब 3. ताहिर आप (हजरत मुहम्मद जी) की आँखों के सामने मृत्यु को प्राप्त हुए। केवल चार लड़कियां शेष रहीं। (पूर्वोक्त पुस्तक के पृष्ठ 64 पर यह उपरोक्त विवरण लिखा है)।

एक समय प्रभु प्राप्ति की तड़फ में हजरत मुहम्मद जी नगर से बाहर एक गुफा में साधना कर रहे थे। एक जिबराईल नामक फरिश्ते ने हजरत मुहम्मद जी का गला घोंट-2 कर बलात् कुर्आन शरीफ का ज्ञान समझाया। हजरत मुहम्मद जी को डरा धमका कर अव्यक्त माना जाने वाले प्रभु का ज्ञान दिया गया। उस जिबराईल देवता के डर से हजरत मुहम्मद जी ने वह ज्ञान याद किया। इस प्रकार मुहम्मद साहेब जी को काल के भेजे फरिश्ते द्वारा इस ज्ञान को जनता में बताने को बाध्य किया गया। हजरत मुहम्मद जी ने अपनी पत्नी खदीजा जी को बताया कि मैं जब गुफा में बैठा था तो एक फरिश्ता आया। उसके हाथ में एक रेशम का रूमाल था। उस पर कुछ लिखा था। फरिश्ते ने मेरा गला घोंट कर कहा इसे पढ़ो। मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे प्राण निकलने वाले हैं। पूरे शरीर को भींच कर जबरदस्ती मुझे पढ़ाना चाहा। ऐसा दो बार किया। तीसरी बार फिर कहा पढ़ो, मैं अशिक्षित होने के कारण नहीं पढ़ पाया। अब की बार मुझे लगा कि यह और ज्यादा पीड़ा देगा। मैंने कहा क्या पढ़ूं। तब उसने मुझे कुर्आन की एक आयत पढ़ाई। (यह विवरण पूर्वोक्त पुस्तक के पृष्ठ 67 से 75 तक लिखा है तथा पृष्ठ 157 से 165 तक लिखा है)।

फरिश्ते जिबराईल ने नबी मुहम्मद जी का सीना चाक किया उसमें शक्ति उड़ेल दी और

फिर सील दिया तथा एक खच्चर जैसे जानवर पर बैठा कर ऊपर ले गया। वहाँ नबियों की जमात आई, उनमें हजरत मुसा जी, ईसा जी और इब्राहीम जी आदि भी थे। जिनको हजरत मुहम्मद जी ने नमाज पढाई।

वहाँ हजरत आदम जी भी थे जो कभी हँस रहे थे और कभी रो रहे थे। फरिश्ते जिबराईल ने हजरत मुहम्मद जी को बताया यह बाबा आदम जी हैं। रोने तथा हँसने का कारण था कि दाई ओर स्वर्ग में नेक संतान थी जो सुखी थी जिसे देख कर बाबा आदम हँस रहे थे तथा बाई ओर निकम्मी संतान नरक में कष्ट भोग रही थी, जिसे देखकर रो रहे थे। जिसके कारण बाबा आदम ऊपर के लोक में भी पूर्ण सुखी नहीं थे।

फिर सातवें आसमान पर गए। पर्दे के पीछे से आवाज आई की प्रति दिन पचास निमाज किया करे। वहाँ से पचास नमाजों से कम करवाकर केवल पाँच नमाज ही अल्लाह से प्राप्त करके नबी मुहम्मद वापिस आ गए।

(पृष्ठ नं. 307 से 315) हजरत मुहम्मद जी द्वारा मुसलमानों को कहा कि खून-खराबा मत करना, ब्याज तक भी नहीं लेना तथा 63 वर्ष की आयु में सख्त बीमार होकर तड़पते-2 भी नमाज की तथा घर पर आकर असहनीय पीड़ा में सारी रात तड़फ कर प्राण त्याग दिए।

(पृष्ठ नं. 319) बाद में उत्तराधिकारी का झगड़ा पड़ा। फिर हजरत अबू बक्र को खलीफा चुना गया।

शेख तकी पीर ने बताया कि अल्लाह तो सातवें आसमान पर रहता है वह तो निराकार है। कबीर जी ने कहा शेख जी एक ओर तो आप भगवान को निराकार कह रहे हो। दूसरी ओर प्रभु को सातवें आसमान पर एक देशीय सिद्ध कर रहे हो। जब परमात्मा सातवें आसमान पर रहता है तो वह साकार हुआ।

शेखतकी से उपरोक्त जीवन परिचय हजरत मुहम्मद साहेब जी का सुनकर परमेश्वर कबीर साहेब जी ने कहा शेखतकी जी आपने बताया कि हजरत मुहम्मद जी जब माता के गर्भ में थे उस समय उनके पिता श्री अब्दुल्लाह जी की मृत्यु हो गई, छः वर्ष के हुए तो माता जी की मृत्यु। आठ वर्ष के हुए तो दादा अब्दुल मुत्तलिब चल बसा। यतीमी का जीवन जीते हुए हजरत मुहम्मद जी की 25 वर्ष की आयु में शादी दो बार पहले विधवा हो चुकी 40 वर्षिय खदीजा से हुई। तीन पुत्र तथा चार पुत्रियाँ संतान रूप में हुई। हजरत मुहम्मद जी को जिबराईल नामक फरिश्ते ने गला घोंट-घोंट कर जबरदस्ती डरा धमका कर कुर्आन शरीफ (मजीद) का ज्ञान तथा भक्ति विधि (निमाज आदि) बताई जो तुम्हारे अल्लाह द्वारा बताई गई थी। फिर भी हजरत मुहम्मद जी के आँखों के तारे तीनों पुत्र (कासिम, तय्यब तथा ताहिर) चल बसे। विचार करें जिस अल्लाह के भेजे रसूल (नबी) के जीवन में कहर ही कहर (महान कष्ट) रहा। तो अन्य अनुयाईयों को कुर्आन शरीफ व मजीद में वर्णित साधना से क्या लाभ हो सकता है ? हजरत मुहम्मद 63 वर्ष की आयु में दो दिन असहाय पीड़ा के कारण दर्द से बेहाल होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। जिस पिता के सामने तीनों पुत्र मृत्यु को प्राप्त हो जाऐं, उस पिता को आजीवन सुख नहीं होता। प्रभु की भक्ति इसीलिए करते हैं कि परिवार में सुख रहे तथा कोई पाप कर्म दण्ड भोग्य

हो, वह भी टल जाए। आप के अल्लाह द्वारा दिया भक्ति ज्ञान अधूरा है। इसीलिए सूरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 तक में कहा है कि जो गुनाहों को क्षमा करने वाला कबीर नामक अल्लाह है उसकी पूजा विधि किसी तत्वदर्शी (बाखबर) से पूछ देखो। कबीर परमेश्वर ने कहा शेखतकी मैं स्वयं वही कबीर अल्लाह हूँ। मेरे पास पूर्ण मोक्ष दायक, सर्व पाप नाशक भक्ति विधि है। इसीलिए आप के समक्ष बादशाह सिकंदर लोधी जी पाप के कारण भोग रहे कष्ट से मुक्त होकर सुख की सांस ले रहे हैं। जो आपकी भक्ति पद्धति से नहीं हो पाया।

जैसा कि शेखतकी जी आपने बताया कि सब मनुष्यों का पिता हजरत आदम ऊपर आसमान पर (जहाँ जिस लोक में जिबराईल फरिश्ता हजरत मुहम्मद को लेकर गया था) कभी रो रहा था, कभी हंस रहा था। क्योंकि उसकी निकम्मी संतान नरक में कष्ट उठा रही थी। उन्हें देखकर रो रहा था तथा अच्छी संतान जो स्वर्ग में सुखी थी, उन्हें देखकर जोर-जोर से हंस रहा था।

विचारणीय विषय है कि पवित्र ईसाई धर्म तथा पवित्र मुसलमान धर्म के प्रमुख बाबा आदम ने जो साधना की उसके प्रतिफल में जिस लोक में पहुँचा है वहाँ पर भी चैन से नहीं रह रहा । इस लोक में भी बाबा आदम जैसे पुण्यात्माओं के प्रथम दोनों पुत्रों में राग-द्वेष भरा था जिस कारण बड़े भाई ने छोटे की हत्या कर दी। यहाँ पृथ्वी पर भी बाबा आदम महादुःखी ही रहे क्योंकि बड़े भाई ने छोटे को मार दिया, बड़ा घर त्याग कर चला गया। सैकड़ों वर्षों पश्चात् बाबा आदम को एक पुत्र हुआ। जिस से भक्ति मार्ग चला है। जिस किसी के दोनों पुत्र ही बिछुड़ जाए वह पिता सुखी नहीं हो सकता यही दशा बाबा आदम जी की हुई थी। सैकड़ों वर्ष दुःख झेलने के पश्चात् एक नेक पुत्र प्राप्त हुआ। फिर बाबा आदम उस लोक में भी इसी कष्ट को झेल रहे हैं। सर्व नबी जो पहले पृथ्वी पर अल्लाह के भेजे आए थे, वे (हजरत ईसा, हजरत अब्राहिम, हजरत मूसा आदि) भी उसी स्थान (लोक) में अपनी साधना से पहुँचे। वास्तव में वह पित्तर लोक है। उसमें अपने-अपने पूर्वजों के पास चले जाते हैं। इसी प्रकार हिन्दूओं का भी ऊपर वही पित्तर लोक है। जिनका संस्कार पित्तर बनने का होता है वह पित्तर योनीधारण करके उस पित्तर लोक में रहता है। फिर पित्तर वाला जीवन भोग कर फिर भूत तथा अन्य पशु व पक्षियों की योनियों को भी भोगता है। यह तो पूर्ण मोक्ष तथा सुख प्राप्ति नहीं हुई। अन्य वर्तमान के साधकों को क्या उपलब्धि होगी ?

पवित्र बाईबल में लिखा है कि हजरत आदम के काईन तथा हाबिल दो पुत्र थे। हाबिल भेड़ बकरियाँ पाल कर निर्वाह कर रहा था तथा काईन खेती करता था। एक दिन काईन अपनी पहली फसल का कुछ अंश प्रभु के लिए ले गया। प्रभु ने काईन की भेंट स्वीकार नहीं की क्योंकि काईन का दिल पाक नहीं था। हाबिल अपने भेड़ का पहलौंठा मेंमना(बच्चा) भेंट के लिए लेकर प्रभु के पास गया, जो प्रभु ने स्वीकार कर लिया। इस बात से काईन क्रोधित हो गया। वह अपने छोटे भाई हाबिल को बहका कर जंगल में ले गया, वहाँ उसकी हत्या कर दी। प्रभु ने पूछा काईन तेरा भाई कहाँ गया? काईन ने कहा मैं क्या उसके पीछे-पीछे फिरता हूँ ? मुझे क्या मालूम?

तब प्रभु ने कहा कि तुने अपने भाई के खून से पृथ्वी को रंगा है। अब मैं तुझे शाप देता

हूँ कि तू रोजी के लिए भटकता रहेगा।

विचार करें :-- विचार करने योग्य है कि जहाँ से दोनों पवित्र धर्मो (मुसलमान तथा ईसाई) के पूर्वज मुखिया की जीवनी प्रारम्भ होती है वहीं से हृदय विदारक घटनाऐं प्रारम्भ हो गई।

वास्तव में हजरत आदम के शरीर में कोई पित्तर आ कर प्रवेश करता था। वही माँस खाने का आदी होने के कारण पवित्र आत्माओं को गुमराह करता था कि अल्लाह (प्रभु) को भेड़ के बच्चे की भेंट स्वीकार है। दोनों भाईयों का झगड़ा करा दिया। हजरत आदम जी के परिवार को बर्बाद कर दिया।

''पवित्र बाईबल में साकार पूर्ण परमात्मा के विषय में वर्णन''

उत्पत्ति ग्रन्थ, पृष्ठ नं. 1 से 3

परमेश्वर ने छः दिन में सृष्टी रची तथा सातवें दिन विश्राम किया, प्रभु ने पाँच दिन तक अन्य रचना की, फिर छटवें दिन ईश्वर ने कहा कि हम मनुष्य को अपना ही स्वरूप बनायेंगे।

फिर परमेश्वर ने मनुष्य को अपना ही स्वरूप बनाया, नर-नारी करके उसकी सृष्टी की। फिर ईश्वर ने मनुष्यों के खाने के लिए केवल फलदार वृक्ष तथा बीजदार पौधे दिए। जो तुम्हारे भोजन के लिए हैं। छः दिन में पूरा कार्य करके परमेश्वर ऊपर तख्त पर जा विराजा अर्थात् विश्राम किया।

ईश्वर ने प्रथम आदम बनाया फिर उसकी पसली निकाल कर नारी (हव्वा) बनाई तथा दोनों को एक वाटिका में छोड़कर तख्त पर जा बैठे। फिर पृष्ठ नं. 8 पर लिखा है कि ईश्वर ने मनुष्य जाति के खाने के लिए फलदार पेड़ तथा बीजदार पौधे बनाए और वन प्राणियों के लिए घास व पौधे बनाए।

भगवान ने मनुष्य को अपना प्रति रूप बनाया। इससे स्वसिद्ध है कि भगवान (अल्लाह) आकार में है और वह मनुष्य जैसा है। वह पूर्ण परमात्मा तो यहाँ तक रचना छः दिन में करके सातवें दिन अपने सत्यलोक में तख्त पर विराजमान हो गया। इसके बाद अव्यक्त प्रभु (काल/ज्योति निरंजन) की भूल-भुलईयाँ प्रारम्भ हो गई।

"पवित्र बाईबल में अव्यक्त साकार प्रभु (काल) के विषय में वर्णन"

पूर्ण परमात्मा ने छः दिन में सृष्टी रचना कर के विश्राम किया। तत्पश्चात् अव्यक्त प्रभु (काल) ने बागडोर संभाल ली। हजरत आदम तथा हजरत हव्वा (जो श्री आदम जी की पत्नी थी) को कहा कि इस वाटिका में लगे हुए फलों को तुम खा सकते हो। लेकिन ये जो बीच वाले फल हैं इनको मत खाना, अगर खाओगे तो मर जाओगे। परमेश्वर ऐसा कह कर चला गया।

उसके बाद एक सर्प आया और कहा कि तुम ये बीच वाले फल क्यों नहीं खा रहे हो? हव्वा जी ने कहा कि भगवान (अल्लाह) ने हमें मना किया है कि अगर तुम इनको खाओगे तो मर जाओगे, इन्हें मत खाना। सर्प ने फिर कहा कि भगवान ने आपको बहकाया हुआ है। वह नहीं चाहता है कि तुम प्रभु के सदृश ज्ञानवान हो जाओ। यदि तुम इन फलों को खा लोगे तो तुम्हें अच्छे और बुरे का ज्ञान हो जाएगा। आपकी आँखों पर से वह पर्दा हट जाएगा जो अज्ञानता का

प्रभु ने आपके ऊपर डाल रखा है। यह बात सर्प ने हव्वा को कही जो कि आदम की पत्नी थी। हव्वा ने अपने पति हजरत आदम से कहा कि हम ये फल खायेंगे और हमें भले-बुरे का ज्ञान हो जाएगा। ऐसा ही हुआ। उन्होंने वह फल खा लिया तो उनकी आँखें खुल गई तथा वह अंधेरा हट गया जो भगवान ने उनके ऊपर अज्ञानता का पर्दा डाल रखा था। जब उन्होंने देखा कि हम दोनों निवस्त्र हैं तो शर्म आई और अंजीर के पत्तों को तोड़ कर अपने पर्दो पर बांधा।

कुछ दिनों के बाद जब शाम के समय घूमने के लिए प्रभु आया तो पूछा कि तुम कहाँ हो? आदम जी तथा हव्वा जी ने कहा कि हम छुपे हुए है, क्योंकि हम निवस्त्र हैं। भगवान ने कहा कि क्या तुमने उस बीच वाले फल को खा लिया? आदम ने कहा कि हाँ जी और उसके खाने के बाद हमें महसूस हुआ कि हम निवस्त्र हैं। प्रभु ने पूछा कि तुम्हें किसने बताया कि ये फल खाओ। आदम ने कहा कि हमारे को सर्प ने बताया और हमने वह खा लिया। उसने मेरी पत्नी हव्वा को बहका दिया और हमने उसके बहकावे में आकर ये फल खा लिया।

21. फिर यहोवा प्रभु ने आदम तथा उसकी पत्नी के लिए चमड़े के अंगरखे पहना दिए।

"अनेक प्रभुओं का प्रमाण"

3:22. फिर यहोवा प्रभु ने (उत्पति अध्याय 3/22 तथा 17/1 तथा 18/1 से 5 तथा 16 से 23 तथा 26-29-32-33 में) कहा मनुष्य भले-बुरे का ज्ञान पाकर हम में से एक के समान हो गया है। इसलिए ऐसा न हो कि यह जीवन के वृक्ष वाला फल भी तोड़ कर खा ले और सदा जीवित रहे। उत्पति ग्रन्थ के अध्याय 17 श्लोक 1 (17:1) में कहा है कि जब अब्राम निन्यानवे (99) वर्ष का हो गया तब यहोवा ने उसको दर्शन दे कर कहा ''मैं सर्वशक्तिमान हुँ। मेरी उपस्थिति में चल और सिद्ध होता जा'' फिर उत्पति ग्रन्थ के अध्याय 18 श्लोक 1 से 10 तथा अध्याय 19 श्लोक 1 से 25 में तीन प्रभुओं का प्रमाण है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि आदम जी का प्रभु कह रहा है कि आदम को भले बुरे का ज्ञान होने से हम में से एक के समान हो गया है। इससे सिद्ध हुआ कि ऐसे प्रभु और भी हैं जब कि इसाई धर्म के श्रद्धालु कहते है परमात्मा एक है तथा यह भी प्रमाणित हुआ कि परमात्मा साकार है मनुष्य जैसा है।

उत्पति ग्रन्थ अध्याय 3 के श्लोक 23. व 24. इसलिए प्रभु ने आदम व उसकी पत्नी को अदन के उद्यान से निकाल दिया।

काल प्रभु ने उनको उस वाटिका से निकाल दिया और कहा कि अब तुम्हें यहाँ नहीं रहने दूँगा और तुझे अपना पेट भरने के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ेगा और औरत को श्राप दिया कि तू हमेशा आदमी के पराधीन रहेगी।

{विशेष :– श्री मनु जी के पुत्र इक्ष्वाकु तथा इसी वंश में राजा नाभीराज हुए। राजा नाभीराज के पुत्र श्री ऋषभदेव जी हुए जो पवित्र जैन धर्म के प्रथम तीर्थकर माने जाते हैं। यही श्री ऋषभदेव जी की पवित्रात्मा बाबा आदम हुए। जैन धर्म के सद्ग्रन्थ ''आओ जैन धर्म को जाने'' पृष्ठ 154 में लिखा है।}

आदम व हव्वा के संयोग से दो पुत्र उत्पन्न हुए। एक का नाम काईन तथा दूसरे का नाम हाबिल रखा। काईन खेती करता था। हाबिल भेड़-बकरियाँ चराया करता था। काईन कुछ धुर्त

था परन्तु हाबिल ईश्वर पर विश्वास करने वाला था। काईन ने अपनी फसल का कुछ अंश प्रभु को भेंट किया। प्रभु ने अस्वीकार कर दिया। फिर हाबिल ने अपने भेड़ के पहले मेमने को प्रभु को भेंट किया, प्रभु ने स्वीकार किया। {यदि बाबा आदम में प्रभु बोल रहा होता तो कहता कि बेटा हाबिल मैं तेरे से प्रसन्न हूँ। आप ने जो मैमना भेंट किया यह आप की प्रभु के प्रति श्रद्धा का प्रतीक है। यह आप ही ले जाईये और इसे बेच कर धर्म (भण्डारा) कीजिए और अपनी भेड़ों की ऊन उतार कर रोजी–रोटी चलाईये तथा प्रभु में विश्वास रखिये। यह बाबा आदम के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कोई प्रेत व पितर बोल रहा था तथा इसी प्रकार पवित्र बाईबल में माँस खाने का प्रावधान पित्तरों ने किसी नबी में बोल कर करवाया है।}

इस से काईन को द्वेष हुआ तथा अपने छोटे भाई को मार दिया। कुछ समय के बाद आदम व हव्वा से एक पुत्र हुआ उसका नाम सेत रखा। सेत को फिर पुत्र हुआ उसका नाम एनोस रखा। उस समय से लोग प्रभु का नाम लेने लगे।

विचार करें - जहाँ से पवित्र ईसाई व मुसलमान धर्म प्रथम पुरूष के वंश की शुरूआत हुई वहीं से मार-काट लोभ और लालच द्वेष परिपूर्ण है। आगे चलकर इसी परंपरा में ईसा मसीह जी का जन्म हुआ। इनकी पूज्य माता जी का नाम मरियम तथा पूज्य पिता जी का नाम यूसुफ था। परन्तु मरियम को गर्भ एक देवता से रहा था। इस पर यूसुफ ने आपत्ति की तथा मरियम को त्यागना चाहा तो स्वपन में (फरिश्ते) देवदूत ने ऐसा न करने को कहा तथा यूसुफ ने डर के मारे मरियम का त्याग न करके उसके साथ पति-पत्नी रूप में रहे। देवता से गर्भवती हुई मरियम ने ईसा को जन्म दिया। हजरत ईसा से पवित्र ईसाई धर्म की स्थापना हुई। ईसा मसीह के नियमों पर चलने वाले भक्त आत्मा ईसाई कहलाए तथा पवित्र ईसाई धर्म का उत्थान हुआ।

प्रमाण के लिए कुरान शरीफ में सूरः मर्यम-19 में तथा पवित्र बाईबल में मती रचित सुसमाचार मती=1:25 पृष्ठ नं. 1-2 पर।

हजरत ईसा जी को भी पूर्ण परमात्मा सत्यलोक से आकर मिले तथा एक परमेश्वर का मार्ग समझाया। इसके बाद ईसा जी एक ईश्वर की भक्ति समझाने लगे। लोगों ने बहुत विरोध किया। फिर भी वे अपने मार्ग से विचलित नहीं हुए। परन्तु बीच-बीच में ब्रह्म(काल/ज्योति निरंजन) के फरिश्ते हजरत ईसा जी को विचलित करते रहे तथा वास्तविक ज्ञान को दूर रखा।

हजरत यीशु का जन्म तथा मृत्यु व जो जो भी चमत्कार किए वे पहले ब्रह्म(ज्योति निरंजन) के द्वारा निर्धारित थे। यह प्रमाण पवित्र बाईबल में है कि एक व्यक्ति जन्म से अंधा था। वह हजरत यीशु मसीह के पास आया। हजरत जी के आशीर्वाद से उस व्यक्ति की आँखें ठीक हो गई। शिष्यों ने पूछा हे मसीह जी इस व्यक्ति ने या इसके माता-पिता ने कौन-सा ऐसा पाप किया था जिस कारण से यह अंधा हुआ तथा माता-पिता को अंधा पुत्र प्राप्त हुआ। यीशु जी ने कहा कि इसका कोई पाप नहीं है जिसके कारण यह अंधा हुआ है तथा न ही इसके माता-पिता का कोई पाप है जिस कारण उन्हें अंधा पुत्र प्राप्त हुआ। यह तो इसलिए हुआ है कि प्रभु की महिमा प्रकट करनी है। भावार्थ यह है कि यदि पाप होता तो हजरत यीशु आँखे ठीक नहीं कर सकते थे। यह सब काल ज्योति निरंजन (ब्रह्म) का सुनियोजित जाल है। जिस कारण उसके द्वारा भेजे अवतारों की महिमा बन जाए तथा आस पास के सभी प्राणी उस पर आसक्त होकर उसके द्वारा बताई

ब्रह्म साधना पर अटल हो जाऐं। जब परमेश्वर का संदेशवाहक आए तो कोई भी विश्वास न करे। जैसे हजरत ईसा मसीह के चमत्कारों में लिखा है कि एक प्रेतात्मा से पीड़ित व्यक्ति को ठीक कर दिया। यह काल स्वयं ही किसी प्रेत तथा पित्तर को प्रेरित करके किसी के शरीर में प्रवेश करवा देता है। फिर उसको किसी के माध्यम से अपने भेजे दूत के पास भेजकर प्रेत को भगा देता है। उसके अवतार की महिमा बन जाती है। या कोई साधक पहले का भक्ति युक्त होता है। उससे भी ऐसे चमत्कार उसी की कमाई से करवा देता है तथा उस साधक की महिमा करवा कर हजारों को उसका अनुयाई बनवा कर काल जाल में फंसा देता है तथा उस पूर्व भक्ति कमाई युक्त साधक की कमाई को समाप्त करवा कर नरक में डाल देता है।

इसी तरह का उदाहरण पवित्र बाईबल 'शमूएल' नामक अध्याय 16:14-23 में है कि शाऊल नामक व्यक्ति को एक प्रेत दुःखी करता था। उसके लिए बालक दाऊद को बुलाया जिससे उसको कुछ राहत मिलती थी। क्योंकि हजरत दाऊद भी ज्योति निरंजन का भेजा हुआ पूर्व शक्ति युक्त साधक पूर्व की भक्ति कमाई वाला था। जिसको 'जबूर' नामक किताब ज्योति निरंजन/ब्रह्म ने बड़ा होने पर उतारी।

हजरत ईसा मसीह की मृत्यु 30 वर्ष की आयु में हुई जो पूर्व ही निर्धारित थी। स्वयं ईसा जी ने कहा कि मेरी मृत्यु निकट है तथा तुम (मेरे बारह शिष्यों) में से ही एक मुझे विरोधियों को पकड़वाएगा। उसी रात्री में सर्व शिष्यों सहित ईसा जी एक पर्वत पर चले गए। वहाँ उनका दिल घबराने लगा। अपने शिष्यों से कहा कि आप जागते रहना। मेरा दिल घबरा रहा है। मेरा जी निकला जा रहा है। मुझे सहयोग देना। ऐसा कह कर कुछ दूरी पर जाकर मुंह के बल पृथ्वी पर गिरकर प्रार्थना की (38,39), वापिस चेलों के पास लौटे तो वे सो रहे थे। यीशु ने कहा क्या तुम मेरे साथ एक पल भी नहीं जाग सकते। जागते रहो, प्रार्थना करते रहो, ताकि तुम परीक्षा में फेल न हो जाओ। मेरी आत्मा तो मरने को तैयार है, परन्तु शरीर दुर्बल है। इसी प्रकार यीशु मसीह ने तीन बार कुछ दूर जाकर प्रार्थना की तथा फिर वापिस आए तो सभी शिष्यों को तीनों बार सोते पाया। ईसा मसीह के प्राण जाने को थे, परन्तु चेले राम मस्ती में सोए पड़े थे। गुरु जी की आपत्ति का कोई गम नहीं।

तीसरी बार भी सोए पाया तब कहा मेरा समय आ गया है, तुम अब भी सोए पड़े हो। इतने में तलवार तथा लाठी लेकर बहुत बड़ी भीड़ आई तथा उनके साथ एक ईसा मसीह का खास यहूंदा इकसरौती नामक शिष्य था, जिसने तीस रूपये के लालच में अपने गुरु जी को विरोधियों के हवाले कर दिया।(मत्ती 26:24-55 पृष्ठ 42-44)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि पुण्यात्मा ईसा मसीह जी को केवल अपना पूर्व का निर्धारित जीवन काल प्राप्त हुआ जो उनके विषय में पहले ही पूर्व धर्म शास्त्रों में लिखा था। ''मत्ती रचित समाचार'' पृष्ठ 1 पर लिखा है कि याकुब का पुत्र युसूफ था। युसूफ ही मरियम का पति था। मरियम को एक फरिश्ते से गर्भ रहा था। तब हजरत ईसा जी का जन्म हुआ समाज की दृष्टि में ईसा जी के पिता युसूफ थे। (मत्ती 1:1-18)

तीस (30) वर्ष की आयु में ईसा मसीह जी को शुक्रवार के दिन सलीब मौत (दीवार) के साथ एक ✝ आकार के लकड़ के ऊपर ईसा को खड़ा करके हाथों व पैरों में मेख (मोटी कील)

गाड़ दी। जिस कारण अति पीड़ा से ईसा जी की मृत्यु हुई। तीसरे दिन रविवार को ईसा जी फिर से दिखाई देने लगे। 40 दिन (चालीस) कई जगह अपने शिष्यों को दिखाई दिए। जिस कारण भक्तों में परमात्मा के प्रति आस्था दृढ़ हुई। वास्तव में पूर्ण परमात्मा ने ही ईसा जी के रूप में प्रकट होकर प्रभु भक्ति को जीवित रखा था। काल तो चाहता है यह संसार नास्तिक हो जाए। परन्तु पूर्ण परमात्मा ने यह भक्ति वर्तमान समय तक जीवित रखनी थी। अब यह पूर्ण रूप से फैलेगी। उस समय के शासक(गवर्नर) पिलातुस को पता था कि ईसा जी निर्दोष हैं परन्तु फरीसियों अर्थात् मूसा के अनुयाईयों के दबाव में आकर सजा सुना दी थी।

"हजरत ईसा मसीह में देव तथा पित्तर प्रवेश करके चमत्कार दिखाने का प्रमाण"

एक स्थान पर हजरत ईसा जी ने कहा है कि मैं याकुब (जो मरियम के पति का भी पिता था) से भी पहले था। संसार की दृष्टि में ईसा मसीह का दादा जी याकुब था। ईसा जी नहीं कहते कि मैं याकुब से भी पहले था। इससे सिद्ध है कि ईसा जी में कोई अन्य फरिश्ता बोल रहा था जो प्रेतवत प्रवेश कर जाता था, भविष्यवाणी कर जाता था।

एक और उदाहरण ग्रन्थ बाईबल अध्याय 2 कुरिन्थियों 2:12-17 पृष्ठ 259-260 में स्पष्ट लिखा है कि एक आत्मा किसी में प्रवेश करके बोल रही है। कहा है कि (14) परन्तु परमेश्वर का धन्यवाद हो, जो मसीह में सदा हम को जय उत्सव में लिए फिरता है और अपने ज्ञान की सुगन्ध हमारे द्वारा हर जगह फैलाता है। 17. हम उन लोगों में से नहीं हैं जो परमेश्वर के वचनों में मिलावट करते हैं। हम तो मन की सच्चाई और परमेश्वर की ओर से परमेश्वर की उपस्थिति जान कर मसीह में बोलते हैं।

उपरोक्त विवरण पवित्र बाईबल के अध्याय कुरिन्थियों 2:12 से 18 पृष्ठ 259-260 से ज्यों का त्यों लिखा है। इससे दो बातें स्पष्ट होती हैं 1. मसीहा (नबी अर्थात् अवतार) में कोई अन्य फरिश्ता बोलकर किताबें लिखाता है। जो प्रभु का भेजा हुआ होता है वह तो प्रभु का संदेश ज्यों का त्यों बिना परिवर्तन किए सुनाता है। 2. दूसरी बात यह भी सिद्ध हुई कि मसीह (नबी) में अन्य आत्मा भी बोलते हैं जो अपनी तरफ से मिलावट करके भी बोलते हैं। यही कारण है कि कुर्आन शरीफ (मजीद) तथा बाईबल आदि में माँस खाने का आदेश अन्य आत्माओं का है, प्रभु का नहीं है।

इन्हीं प्रेतों तथा पित्तरों व फरिश्तों तथा ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने हजरत मुहम्मद जी में प्रवेश करके काल (ब्रह्म/ज्योति निरंजन) तक का अटकल युक्त ज्ञान प्रवेश करके भ्रमित किया हुआ है। न तो कुर्आन शरीफ (मजीद) तथा तौरत, इंजिल आदि का ज्ञान पूर्ण है, न भक्ति विधि पूर्ण है, क्योंकि उपरोक्त सर्व पवित्र पुस्तकों का ज्ञान दाता वही है जो कुर्आन शरीफ (मजीद) का है। जो सूरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 58 व 59 में कह रहा है कि सर्व सृष्टी रचनहार, सर्व पापों का नाश करने वाला, सर्व का पालन कर्ता कबीर दयालु प्रभु है। उपरोक्त सर्व पुस्तकों तथा कुर्आन शरीफ व मजीद सहित का ज्ञान दाता प्रभु अपनी अल्पज्ञता जता रहा है कि उस कबीर प्रभु के वास्तविक ज्ञान तथा भक्ति मार्ग को किसी बाखबर (तत्वदर्शी संत) से पूछो। इससे

सिद्ध है कि कुर्आन शरीफ व अन्य उपरोक्त पुस्तकों में ज्ञान पूर्ण नहीं है।

इसी प्रकार पवित्र हिन्दू धर्म के माने जाने वाले चारों पवित्र वेद तथा पवित्र गीता का ज्ञान दाता ब्रह्म(काल/ज्योति निरंजन) भी कह रहा है कि मेरी भक्ति तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव की साधना व्यर्थ है। इसलिए उस परमेश्वर की शरण में जा जिसकी कृपा से ही तू परम शांति तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। उस परमात्मा की भक्ति विधि तथा पूर्ण ज्ञान के विषय में किसी तत्वदर्शी संत की खोज कर, फिर जैसे वह तत्वदृष्टा संत साधना बताऐ उसी प्रकार अनन्य मन से कर।

फिर गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा कि मैं भी उसी की शरण में हूँ। (प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10, 13 तथा 17 तथा अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मंत्र 1 से 7 तथा गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 18, 20 से 23 में, गीता अध्याय 4 श्लोक 34 व अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4-17 में)।

"हजरत मुहम्मद जी में काल(ब्रह्म) तथा अन्य देव व पित्तर प्रवेश करके बोलते थे का प्रमाण"

सर्व पवित्र धर्मों के श्रद्धालु वास्तविक ज्ञान तथा भक्ति विधि से वंचित हैं। वह वास्तविक तत्वज्ञान तथा भक्ति विधि मैं (कबीर परमेश्वर काशी वाला जुलाहा/धाणक) स्वयं ही बताने आया हूँ। मुझ पर विश्वास करो। और बताता हूँ(परमेश्वर कबीर साहेब जी ने अपने अमृत वचनों को जारी रखते हुए कहा) -

मैंने एक मुल्ला द्वारा कुर्आन शरीफ की कुछ सूरतों का विवरण सुना था, उनमें निम्न विवरण लिखा है - कुर्आन शरीफ अर्थात् कुर्आन मजीद की प्राप्ति कैसे हुई? (कुर्आन शरीफ वाला ज्यों का त्यों विवरण कुर्आन मजीद में है)।

कुर्आन मजीद – तर्जुमा, फतेह मुहम्मद खां साहब जालंधरी, प्रकाशक : महमूद एण्ड कम्पनी, मरोल पाईप लाईन, बम्बई–59, सोल एजेंट, फरीद बुक डिपो, देहली–6

उपरोक्त पुस्तक के : मुकदमा के पृष्ठ 6-7 पर लिखे है -

''कुर्आन मजीद के उतरने और संग्रह व संकलन करने के हालात''

उपरोक्त पुस्तक कुर्आन मजीद के मुकदमा पृष्ठ 6-7 पर लिखें लेखक के लेख का निष्कर्ष -

कुर्आन मजीद (शरीफ) 23 वर्षों में पूरी लिखी गई। जब हजरत मुहम्मद जी की आयु 40 वर्ष थी उस समय से प्रारम्भ हुई तथा अन्तिम समय 63 वर्ष की आयु तक 23 वर्ष लगातार कभी एक आयत, कभी आधी, कभी दो आयत, कभी 10 आयत, कभी पूरी सूरतें उतरी हैं। इसी को शरीअत में ''बह्य'' कहते हैं।

विद्वानों ने लिखा है ''वह्य(वह्य)'' उतरने के भिन्न-भिन्न तरीके हदीसों में पेश किए हैं।

1. फरिश्ता ''वह्य(वह्य)'' ले कर आता था तो घंटियाँ सी बजती थी। नबी मुहम्मद जी की जान निकलने को हो जाती थी। यह तरीका ज्यादा कष्ट दायक नबी मुहम्मद जी के लिए होता था।

यह भी लिखा है कि हजरत मुहम्मद जी नुबूबत के बाद (चालीस वर्ष की आयु से नबी बनने

के बाद) रमजान के दिनों में पूरा कुर्आन मजीद (शरीफ) अल्लाह के पास से उस आसमान से जिसे हम देख नहीं सकते हैं अल्लाह (प्रभु) के हुकम (आज्ञा) से उतारा गया अर्थात् उसी अल्लाह के द्वारा बोला गया। इसके बाद हजरत जिबराईल को जिस समय, जिस कदर हुकम (आज्ञा) हुआ, उन्होंने पवित्र कलाम को बिल्कुल वैसा ही बिना किसी परिवर्तन के नबी मुहम्मद जी तक पहुँचाया।

2. कभी फरिश्ता दिल में कोई बात डाल दे।

3. फरिश्ता आदमी के रूप में आकर बात करे।

{नोट - हजरत मुहम्म्द जी की जीवनी में लिखा है कि जिस समय जिब्राईल फरिश्ता प्रथम बार वह्य (वह्य) लेकर आया मनुष्य रूप में दिखाई दिया, तो उसने मुहम्मद जी का गला घोंट कर कहा इसे पढ़ो। हजरत मुहम्मद जी ने बताया कि मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे, वह मेरा गला घोंट रहा हो। मेरे शरीर को दबा रहा हो। ऐसा दो बार किया फिर तीसरी बार फिर कहा पढ़ो। मुझे ऐसा लगा कि वह फिर गला घोटेंगा, इस बार और जोर से भींचेगा, मैं बोला क्या पढ़ूं ? कुर्आन की प्रथम आयत पढ़ाई, वह मुझे याद हो गई। फिर फरिश्ता चला गया, मैं घबरा गया। दिल बैठता जा रहा था। पूरा शरीर थर-थर कांपने लगा। गुफा के बाहर आकर सोचा यह कौन था। फिर वही फरिश्ता आदमी की सूरत में दिखाई दिया, जहाँ देखूं वही दिखाई देने लगा। ऊपर, नीचे, दांए, बांए सब ओर। घर आकर चादर ओढ़कर लेट गया। सारा शरीर पसीने से भीगा हुआ था। मुझे डर है कि खदीजा कहीं मर न जाऊँ। फिर हजरत मुहम्मद जी ने अपनी पत्नी खदीजा को सारी बात बताई, फिर एक 'बरका' नामक व्यक्ति ने हजरत मुहम्मद जी से सारी बातें सुन कर कहा आप 'नबी' बनोगे। यही फरिश्ता मूसा जी के पास भी आता था। उपरोक्त विवरण से तो सिद्ध होता है कि फरिश्ता आदमी रूप में वह्य लाता था तो भी हजरत मुहम्मद जी को बहुत कष्ट हुआ करता।}

4. अल्लाह तआला जागते में नबी मुहम्मद (सल्ल) से कलाम फरमाए। भावार्थ है कि आकाशवाणी करके ब्रह्म स्वयं बोलता था।

5. अल्लाह तआला सपने की हालत में कलाम फरमाए।

6. फरिश्ता सपने की हालत में आकर कलाम करे(इस छठी व पाँचवी प्रकार पर विवाद है, शेष उपरोक्त कुर्आन मजीद(शरीफ) के उतरने की 4 सही हैं।) पृष्ठ 29 पर लिखा है कि कभी स्वयं ''वह्य(वह्य)'' आती थी। भावार्थ है कि जैसे कोई प्रेत प्रवेश करके बोलता है। कभी नबी मुहम्मद चादर लपेट कर लेट जाते थे, फिर चादर के अन्दर से बोलते थे।

पवित्र कुर्आन मजीद(शरीफ) के मुकदमा के पृष्ठ 6-7 के लिखे लेख से स्पष्ट है कि जिबराईल नामक फरिश्ते ने तो केवल संदेश वाहक का कार्य किया है। ज्ञान व आदेश देने वाला प्रभु अर्थात् काल भगवान एक देशीय साकार सिद्ध हुआ जो सातवें आसमान पर अव्यक्त रूप में है, जिसे देखा नहीं जा सकता। अव्यक्त का उदाहरण है जैसे सूर्य बादलों के पार होने के कारण अदृश्य (अव्यक्त) होता है। दिन होते हुए भी दिखाई नहीं देता। इसी प्रकार परमात्मा एक देशीय जाने तथा अपनी शक्ति से छुपा है। जिस कारण से उसे निराकार माना है। परन्तु

भक्ति की सत्य साधना द्वारा उसे देखा जा सकता है। वह सत्य भक्ति विधि कुरान शरीफ में नहीं है क्योकि उस के लिए किसी बाखबर (तत्वदर्शी) से जानने को कहा है। कुर्आन शरीफ (मजीद) के ज्ञान दाता ने किसी अन्य कबीर नामक अल्लाह (प्रभु) को सर्व का पालन कर्ता, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, सर्व के पूजा के योग्य कहा है। कुर्आन शरीफ (मजीद) सूरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 58 तथा 59 में वर्णन है। जिसमें कुर्आन ज्ञान दाता अल्लाह ने कहा है कि उस उपरोक्त अल्लाह कबीर या खबीर जिसे अल्लाहु अकबर भी कहा जाता है। उसके विषय में मैं(कुर्आन का ज्ञान दाता) नहीं जानता। उसके विषय में किसी बाखबर(तत्वदर्शी संत) से पूछो। वह कबीर अल्लाह छः दिन में सृष्टी की उत्पत्ति करके सातवें दिन तख्त पर जा विराजा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि पूर्ण परमात्मा कबीर साकार है।

यही प्रमाण पवित्र बाईबल ''उत्पत्ति ग्रंथ'' में भी है। हजरत आदम के अल्लाह(प्रभु) ने पूर्ण परमात्मा के द्वारा रची सृष्टि का वर्णन किया है। छठे दिन परमश्ेवर ने कहा कि हम मनुष्य को अपने स्वरूप में बनाएं। प्रभु ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार बनाया। फिर उनके खाने के लिए केवल फलदार वृक्ष तथा बीजदार पौधे दिये। माँस खाने की आज्ञा नहीं दी तथा सातवें दिन विश्राम किया।

"पवित्र ईसाई तथा मुसलमान धर्मों के अनुयाईयों को कर्माधार से लाभ-हानि करने वाले भी (श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) तीन ही देवता"

हजरत आदम तथा उसकी पत्नी हव्वा तथा अन्य प्राणियों व सर्व ब्रह्मण्डों की उत्पत्ति करके कुर्आन व बाईबल बोलने वाले प्रभु को सौंप गया। बाईबल के उत्पत्ति ग्रंथ से भी सिद्ध होता है कि परमात्मा मनुष्य जैसा है। क्योंकि प्रभु ने मनुष्य को अपने जैसा बनाया तथा सात दिन के बाद का वर्णन कुर्आन शरीफ व बाईबल ज्ञान दाता(काल/ज्योति निरंजन) की लीला का है। पवित्र बाईबल में लिखा है कि 'फिर यहोवा परमेश्वर ने कहा, मनुष्य भले-बुरे का ज्ञान पाकर हम में से एक के समान हो गया है। इसलिए अब ऐसा न हो कि वह हाथ बढ़ा कर जीवन के वृक्ष का फल भी तोड़ कर खा ले और सदा जीवित रहे। परमेश्वर ने उसे अदन के उ़द्यान से निकाल दिया।

उपरोक्त विवरण से यह भी सिद्ध होता है कि जो आदम का प्रभु है ऐसा कोई और भी है तथा साकार है। इसीलिए तो कहा है कि मनुष्य जीवन फल को खाकर हम में से एक के समान हो गया है। क्योंकि बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ में ही लिखा है कि आदम ने भले-बुरे के ज्ञान वाला फल तोड़ कर खा लिया तो उसे पता चला वह नंगा है। यहोवा परमेश्वर टहलते हुए आ गया। उसने आदम को पुकारा तू कहाँ है? तब आदम ने कहा मैं तेरी आवाज सुनकर छुप गया हूँ, क्योंकि मैं नंगा हूँ। फिर परमेश्वर ने आदम तथा उसकी पत्नी हव्वा के वस्त्र बनवाए।

विचार करें उपरोक्त विवरण स्वयं सिद्ध कर रहा है कि पूर्ण परमात्मा भी सशरीर मनुष्य जैसे आकार का है तथा अन्य प्रभु भी मनुष्य जैसे आकार के हैं, जिसे पवित्र ईसाई तथा मुसलमान धर्म निराकार मानता है तथा प्रभु एक से अधिक भी हैं।

क्योंकि काल ब्रह्म स्वयं सामने नहीं आता, उसने अपने तीनों पुत्रों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) के द्वारा एक ब्रह्मण्ड का कार्य चला रखा है। हजरत आदम जी भगवान ब्रह्मा के अवतार हैं। हजरत आदम को श्री ब्रह्मा जी ने बहका कर रखा था, उसी ने उसको वहाँ से निकाला था। इसीलिए कहा है कि भले बुरे के ज्ञान वाला फल खाकर आदम हम में से एक के समान हो गया है। क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु व महेश तीनों देव हैं, हजरत ईसा के अवतार धारण करने के विषय में पवित्र बाईबल में लिखा है कि प्रभु ईश्वर ने पृथ्वी पर बढ़ रहे दुराचार के अन्त के लिए अपने पुत्र को भेजा था, क्योंकि हजरत ईसा जी भगवान विष्णु के अवतार हैं। विष्णु लोक से कोई देव आत्मा का जन्म मरयम के गर्भ से फरिस्ते (देव) द्वारा हुआ था।

"मामरे पर तीनों देवताओं के देखने का प्रमाण"

(इसहाक के जन्म की प्रतिज्ञा)

इसमें लिखा है कि अब्राहम मम्रे (मामरे) के बांजों के बीच कड़ी धूप के समय तम्बू के द्वार पर बैठा था , तब यहोवा ने उसे दर्शन दिया। और उसने आँख उठा कर देखा तो तीन पुरुष उसके सामने खड़े हैं। उन्होंने अब्राहम की प्रार्थना पर खाना खाया तथा वृद्ध अवस्था में पुत्र होने का आशीर्वाद देकर चले गए तथा जाते समय कहा कि हम सदोम आदि नगरों का नाश करने जा रहे हैं। वहाँ के लोग अधर्मी हो गए हैं। अब्राहम ने पूछा क्या आप अधर्मियों के साथ धर्मियों को भी मार डालोगे। प्रभु ने कहा यदि 100 व्यक्ति भी धर्मी होंगे तो भी हम उस नगरी का नाश नहीं करेंगे। ''सदोम आदि नगरों का विनाश'' नामक विषय में लिखा है कि उनमें से दो दूत ''सदोम'' में पहुँचे।सदोम में लूत (लोट) नामक व्यक्ति रहता था। उस गाँव के व्यक्ति बहुत निकम्मे थे। लूत (लोट) ने उन्हें आदर पूर्वक रोका। गाँव वालों ने उन फरिश्तों को आम व्यक्ति जान कर उनके साथ कुकर्म (नर से नर बलात्कार करना) करने के लिए बाहर निकलने को कहा। परन्तु लूत(लोट) ने कहा यह मेरे अतिथि हैं, मैं इन्हें आपको नहीं दे सकता। आप मेरी लड़की को ले लो। इस बात से प्रसन्न फरिश्तों ने सभी निकम्मे व्यक्तियों को अंधा कर दिया तथा लूत(लोट) को उसके परिवार सहित उस गाँव से निकाल कर पूरे गाँव को नष्ट कर दिया। इससे सिद्ध हुआ कि तीनों देवता हैं, जो ब्रह्म के आदेश से सर्व को किए कर्म का फल देते हैं।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि तीन देवता हैं। उनमें से कभी दो कभी एक अपने-अपने साधक के पास जाते हैं। यदि कोई तीनों का साधक है तो तीनों भी एक साथ जाते हैं, यदि कोई दो का साधक है तो दो भी दर्शन देते हैं। उपरोक्त प्रमाण से भी सिद्ध होता है कि तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) ही अपने पिता ब्रह्म के आदेशानुसार एक ब्रह्मण्ड में सर्व कार्य करते हैं। भक्ति भाव के व्यक्तियों की कर्म अनुसार रक्षा तथा दुष्कर्म करने वालों का कर्म अनुसार नाश करते हैं। ब्रह्म(अव्यक्त कभी सामने दर्शन न देने वाला) प्रभु उपरोक्त तीनों फरिश्तों (देवताओं) द्वारा अपना आदेश नबियों के पास भिजवाता है तथा आकाशवाणी द्वारा या प्रेतवत प्रवेश करके स्वयं भी आदेश देता है। फरिश्ते तो उसका ज्यों का त्यों आदेश सुनाते हैं। आदेश में कोई

परिवर्तन नहीं करते। इससे स्पष्ट हुआ कि पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुर्आन सहित चारों कतेबों का ज्ञान दाता प्रभु किसी अन्य कबीर नामक प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है।

विशेष :- कुर्आन शरीफ(मजीद) शूरः बकरः 2(87) आयत 21 से 33 तक उस पूर्ण परमात्मा की महिमा के विषय में वर्णन है तथा आयत 34 से अंत तक अपनी महिमा बताई है तथा अपने ज्ञान अनुसार पूजा विधि बताई है। यह भी स्पष्ट किया है कि मैंने (कुर्आन ज्ञान दाता ने) आदम तथा उसकी पत्नी हव्वा को स्वर्ग की वाटिका में ठहराया तथा उनको बीच वाले वृक्षों के फल छोड़ कर शेष वृक्षों के फल खाने को कहा। परन्तु उन्होंने सर्प के बहकाने से बीच वाले वृक्षों के फल खा लिये। मैंने उनको जमीन पर दुःखी होने के लिये भेज दिया। (शूरः बकरः 2(87) आयत 35 से 39 तक।)

कुर्आन ज्ञान दाता अल्लाह ने स्पष्ट किया है कि मैंने ही हजरत मुसा को ''तौरत'' किताब उतारी थी तथा मूसा के लिए पत्थर से पानी के झरने निकाले थे(आयत 41, 53, 60)। हम ही मुसा के बाद एक के बाद दूसरा पैगम्बर भेजते रहे तथा ईसा बिन मरियम को खुली निशानियाँ बख्शी तथा रूहुल कुदस(यानि जिब्रील) से उनको मदद दी। (आयत 87)

सार विचार :- उपरोक्त पवित्र कुर्आन शरीफ के विवरण से स्पष्ट हुआ कि बाबा आदम से लेकर हजरत ईसा, हजरत अब्राहम, हजरत दाऊद, हजरत मुसा, हजरत मुहम्मद साहेब तक को पैगम्बर बना कर भेजने वाला खुदा(अल्लाह/प्रभु) एक ही है। उसी ने कुर्आन शरीफ अर्थात् मजीद का ज्ञान वह्य के द्वारा स्वयं प्रेतवत प्रवेश करके या आकाशवाणी करके कहा है या फरिश्तों के माध्यम से हजरत मुहम्मद तक ज्यों का त्यों पहुँचाया है। वही खुदा सूरत फुर्कानि 25 आयत 52 से 58 तथा 59 में कह रहा है कि हे पैगम्बर (हजरत मुहम्मद) पूर्ण परमात्मा कबीर है, परन्तु काफिर लोग मेरी इस बात पर विश्वास नहीं करते। आप उनकी कही बातों को मत मानना मेरे द्वारा दिया यह कुरान शरीफ वाले ज्ञान की दलीलों पर विश्वास करना की कबीर अल्लाह उसी को अल्लाह अक्बरू कहते हैं। इस ज्ञान के समर्थन में काफिरों के साथ संघर्ष करना भावार्थ है कि काफिर लोग कहते हैं कि कबीर अल्लाह नहीं है। आप (हजरत मुहम्मद) कहना कि कबीर अल्लाह है। लड़ना नहीं है। उनकी बातों में नहीं आना हैं (आयत 52) वह (कबीर अल्लाह) वही है जिसने जमीन व आसमान के बीच सर्व रचा, दिन-रात बनाए, परिवार, रिश्तेदार, आदि इन्सान के लिए बनाए तथा जमीन में मीठा पानी आदि पदार्थ प्रदान किए।(आयत 53 से 55) हे पैगम्बर(हजरत मुहम्मद)! मैंने जो कुरान की आयतों द्वारा ज्ञान दिया है उसमें जो कबीर है वह पूर्ण परमात्मा है उस पर विश्वास रखना। काफिर लोग उस कबीर को परमात्मा अल्लाह नहीं मानते। उनकी बातें मत मानना, उनके साथ ज्ञान का संघर्ष करना लड़ना नहीं परन्तु उनकी बातों को स्वीकार नहीं करना। (आयत 52) वह कबीर परमात्मा वही है जिसने सर्व सृष्टी की रचना की है। जिसने परिवार के जन उत्पन्न किए नाते-रिश्ते बनाए। सर्व का पालन करता है। (आयत 53से 55) हमने तुम्हें खुशखबरी सुनाने(सिर्फ अजाब से) डराने के लिये भेजा है। (आयत 56) और (ऐ पैगम्बर) उस जिंदा पर भरोसा रखो जो कभी मरने वाला नहीं है। {क्योंकि पूर्ण परमात्मा (अल्लाह कबीर) एक जिन्दा महात्मा की वेशभूषा में हजरत

मुहम्मद जी को मिला था तथा सतलोक आदि को दिखाया था, परन्तु हजरत मुहम्मद जी ने पूर्ण परमात्मा की बात पर विश्वास नहीं किया था। उसी का वर्णन है।} तारीफ के साथ उसकी पाकी ब्यान करते रहो और वह कबीर अल्लाह अपने बंदो के गुनाहों से खबरदार है तथा वही (ईवादही खबीरा/कबीरा) कबीर परमात्मा अर्थात् अल्लाहू अकबर पूजा के योग्य है। (58) वह कबीर अल्लाह वही है जिसने छः दिन में सर्व ब्रह्मण्डों को रचा तथा सातवें दिन तख्त पर विराजा। वास्तव में वह अल्लाह कबीर रहमान(क्षमा शील) है। उसके विषय में मैं (कुर्आन शरीफ/मजीद का ज्ञान दाता) नहीं जानता। उसकी खबर अर्थात् पूर्ण ज्ञान व भक्ति की विधि किसी बाखबर(तत्वदर्शी संत) से पूछो। (आयत 59)

उपरोक्त विवरण से यह भी सिद्ध हुआ कि प्रभु एक नहीं अनेक हैं तथा तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी) ही तीनों लोकों के प्राणियों को संस्कारवश लाभ व हानि तथा उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार के कारण हैं तथा ब्रह्म(काल) सर्व को धोखा देकर रखता है। पूर्ण परमात्मा कबीर ही सर्व सुखदायक, सर्व के पूजा के योग्य तथा पूर्ण मोक्ष दायक है।

पूज्य कबीर परमेश्वर बता रहे हैं कि मैंने उस मुल्ला जी से कहा कि जिस बाखबर(तत्वदृष्टा) संत के लिये आपका अल्लाह संकेत कर रहा है। उस तत्वदृष्टा संत द्वारा दिया ज्ञान ही पूर्ण मोक्ष दायक है। वह वास्तविक भक्ति मार्ग न तो हजरत मुहम्मद जी को प्राप्त हुआ, न आप मुल्ला, काजियों व पीरों को। इसलिए आज तक जो भी साधना आप कर रहे हो वह अधूरी है। केवल ब्रह्म (काल/ज्योति निरंजन) का फैलाया भ्रम जाल है। यह नहीं चाहता कि साधक मेरे जाल से निकल जाए। पूज्य कबीर परमेश्वर ने बताया वह बाखबर (अर्थात् तत्वदर्शी संत) मैं हूँ। आप मेरे से उपदेश लो तथा यह तत्व ज्ञान जो मैं आपको बताऊंगा अन्य भक्ति चाहने वालों को भी समझाओ। यह तो काल है जिसे वेदों में ब्रह्म(क्षर पुरुष/ज्योति निरंजन) कहा जाता है। पूर्ण परमात्मा कोई और है जिसे वेदों में कविर्देव कहा है तथा कुर्आन शरीफ(मजीद) में कबीरन्, कबीरा, खबीरन्, खबीरा आदि कहा है तथा जिसे हजरत मुहम्मद जी ने अल्लाहु अकबर कहा है। वह कबीर अल्लाह मैं हूँ। आप सर्व मेरी आत्मा हो। आपको काल(ब्रह्म) ने भ्रमित किया है।

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर ने आगे बताया - यह वार्ता सुनकर वह मुल्ला मुझसे अति नाराज हो गया तथा आगे से उसकी कथा में न आने को कहा। पूज्य कबीर परमेश्वर से उपरोक्त विवरण जानकर बादशाह सिंकदर लौधी ने अपने धार्मिक गुरू शेखतकी से कहा ''पीर जी, क्या कुर्आन शरीफ में महाराज कबीर साहेब जी द्वारा बताया विवरण है?'' शेखतकी ने कुर्आन शरीफ में सूरत फुरकानी 25 आयत 52 से 59 को ध्यान से पढ़ा तथा सत्य को जाना परन्तु मान वश कह दिया कि कबीर जी तो झूठा है। यह क्या जाने पवित्र कुर्आन शरीफ के गूढ रहस्य को। यह कहकर अति नाराजगी व्यक्त करता हुआ उठ कर अपने कमरे में चला गया। बादशाह सिकंदर लौधी भी कुर्आन शरीफ को सुना करता था तो उसे याद आया कि ऐसा वर्णन अवश्य आता है। फिर भी भक्ति मार्ग तथा अरबी भाषा का ज्ञान न होने के कारण पूर्ण विश्वास नहीं हुआ। परन्तु हजरत मुहम्मद जी के जीवन चरित्र से पूर्ण परिचित था। उससे बहुत प्रभावित हुआ तथा कहा कि सच-मुच हजरत मुहम्मद जी के जीवन में कष्ट ही कष्ट रहे हैं।

''बादशाह सिकंदर की शंकाओं का समाधान''

प्रश्न - बादशाह सिकंदर लोधी ने पूछा, हे परवरदिगार (क). यह ब्रह्म(काल) कौन शक्ति है ? (ख). यह सभी के सामने क्यों नहीं आता ?

उत्तर - परमेश्वर कबीर साहेब जी ने सिकंदर लोधी बादशाह के प्रश्न 'क-ख' के उत्तर में सृष्टी रचना सुनाई। (कृप्या देखें इसी पुस्तक के पृष्ठ 84 से 159 पर)

(ग). क्या बाबा आदम जैसे महापुरुष भी इसी के जाल में फंसे थे ?

ग के उत्तर में बताया कि पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय में लिखा है कि पूर्ण परमात्मा मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों की रचना छः दिन में करके तख्त अर्थात् सिंहासन पर चला गया। उसके बाद इस लोक की बाग डोर ब्रह्म ने संभाल ली। इसने कसम खाई है कि मैं सब के सामने कभी नहीं आऊँगा। इसलिए सभी कार्य अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) के द्वारा करवाता रहता है या स्वयं किसी के शरीर में प्रवेश करके प्रेत की तरह बोलता है या आकाशवाणी करके आदेश देता है। प्रेत, पित्तर तथा अन्य देवों (फरिश्तों) की आत्माऐं भी किसी के शरीर में प्रवेश करके अपना आदेश करती हैं। परन्तु श्रद्धालुओं को पता नहीं चलता कि यह कौन शक्ति बोल रही है। पूर्ण परमात्मा ने माँस खाने का आदेश नहीं दिया। पवित्र बाईबल उत्पत्ति विषय में सर्व प्राणियों के खाने के विषय में पूर्ण परमात्मा का प्रथम तथा अन्तिम आदेश है कि मनुष्यों के लिए फलदार वृक्ष तथा बीजदार पौधे दिए हैं जो तुम्हारे खाने के लिए हैं तथा अन्य प्राणियों को जिनमें जीवन के प्राण हैं उनके लिए छोटे-छोटे पेड़ अर्थात् घास, झाड़ियाँ तथा बिना फल वाले पेड़ आदि खाने को दिए हैं। इसके बाद पूर्ण प्रभु का आदेश न पवित्र बाईबल में है तथा न किसी कतेब (तौरत, इंजिल, जुबुर तथा कुर्आन शरीफ) में है। इन कतेबों में ब्रह्म तथा उसके फरिश्तों तथा पित्तरों व प्रेतों का मिला-जुला आदेश रूप ज्ञान है।

(घ). क्या बाबा आदम से पहले भी सृष्टी थी ?

उत्तर - सूर्यवंश में राजा नाभिराज हुआ। उसका पुत्र राजा ऋषभदेव हुआ जो जैन धर्म का प्रवर्तक तथा प्रथम तीर्थकर माना जाता है। वही ऋषभदेव ही बाबा आदम हुआ, यह विवरण जैन धर्म की पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जाने'' के पृष्ठ 154 पर लिखा है।

इससे स्पष्ट है कि बाबा आदम से भी पूर्व सृष्टी थी। पृथ्वी का अधिक क्षेत्र निर्जन था। एक दूसरे क्षेत्र के व्यक्ति भी आपस में नहीं जानते थे कि कौन कहाँ रहता है। ऐसे स्थान पर ब्रह्म ने फिर से मनुष्य आदि की सृष्टी की। हजरत आदम तथा हव्वा की उत्पत्ति ऐसे स्थान पर की जो अन्य व्यक्तियों से कटा हुआ था। काल के पुत्र ब्रह्मा के लोक से यह पुण्यात्मा (बाबा आदम) अपना कर्म संस्कार भोगने आया था। फिर शास्त्र अनुकूल साधना न मिलने के कारण पित्तर योनी को प्राप्त होकर पित्तर लोक में चला गया। बाबा आदम से पूर्व फरिश्ते थे। पवित्र बाईबल ग्रन्थ में लिखा है।

(ड़). यदि अल्लाह का आदेश मनुष्यों को माँस न खाने का है तो बाईबल तथा कुर्आन शरीफ में कैसे लिखा गया ?

उत्तर - पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय में लिखा है कि पूर्ण परमात्मा ने छः दिन में सृष्टी

रचकर सातवें दिन विश्राम किया। उसके बाद बाबा आदम तथा अन्य नबियों को अव्यक्त अल्लाह (काल) के फरिश्ते तथा पित्तर आदि ने अपने आदेश दिए हैं। जो बाद में कुर्आन शरीफ तथा बाईबल में लिखे गए हैं।

(च). अव्यक्त प्रभु काल ने यह सर्व वास्तविक ज्ञान छुपाया है तो पूर्ण परमात्मा का संकेत किसलिए किया ?

उत्तर - ज्योति निरंजन(अव्यक्त माना जाने वाला प्रभु) पूर्ण परमात्मा के डर से यह नहीं छुपा सकता कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य है। यह पूर्ण प्रभु की वास्तविक पूजा की विधि से अपरिचित है। इसलिए यह केवल अपनी साधना का ज्ञान ही प्रदान करता है तथा महिमा गाता है पूर्ण प्रभु की भी।

सिकंदर ने सोचा कि ऐसे भगवान को दिल्ली में ले चलता हूँ और हो सकता है वहाँ के व्यक्ति भी इस परमात्मा के चरणों में आकर एक हो जाऐं। यह हिन्दू और मुसलमान का झगड़ा समाप्त हो जाऐं। कबीर साहेब के विचार कोई सुनेगा तो उसका भी उद्धार होगा। दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी ने प्रार्थना की कि हे ''सतगुरुदेव एक बार हमारे साथ दिल्ली चलने की कृपा करो।'' कबीर साहेब ने सिकंदर लौधी से कहा कि पहले आप मेरे से उपदेश लो फिर आपके साथ चल सकता हूँ। ऐसे नहीं जाऊँगा। सिकंदर ने कहा कि दाता जैसे आप कहोगे वैसे ही करूँगा। कबीर साहेब ने कहा कि एक तो हिन्दू से मुसलमान नहीं बनाएगा। सिकंदर ने कहा कि नहीं बनाऊँगा। कोई जीव हिंसा नहीं करवाएगा। सिकंदर ने कहा प्रभु मैं जीव हिंसा नहीं करूंगा तथा न किसी को जीव हिंसा करने के लिए कहूँगा। परन्तु ये मुल्ला तथा काजी मेरे बस से बाहर हैं। कबीर साहेब ने कहा ठीक है आप अपने मुँख से नहीं कहोगे। सिकंदर ने कहा कि ठीक है दाता अर्थात् सारे नियम बता दिए और सिकंदर ने सारे स्वीकार कर लिए। परमश्ेवर कबीर साहेब जी से दीक्षा ग्रहण कर ली तथा सर्व नियमों को आजीवन पालन करने का प्रण किया।

तब सतगुरुदेव सिकंदर लौधी को प्रथम मंत्र प्रदान करके वहाँ से उसके साथ दिल्ली को रवाना हुए। बादशाह सिकंदर ने परमेश्वर कबीर साहेब को अपने साथ हाथी पर अम्बारी में बैठाया। उसमें राजा के अतिरिक्त कोई बैठ नहीं सकता था। परन्तु सिकंदर को भगवान सामने दिखाई दिया जिसने उसकी असाध्य बिमारी से रक्षा की उसके सामने मुर्दा स्वामी रामानन्द जीवित कर दिया।

जब सिकंदर लौधी के धार्मिक गुरु शेखतकी को पता चला कि राजा स्वस्थ हो गया और इसके सामने कबीर परमेश्वर ने स्वामी रामानन्द जी का कटा शिश जोड़ कर जीवित कर दिया। उसने सोचा कि अब मेरे नम्बर कटेंगे अर्थात् मेरी महिमा कम हो जाएगी और मेरी कमाई तथा प्रभुता गई। शेखतकी को साहेब कबीर से इर्ष्या हो गई। वह विचार करने लगा कि किसी प्रकार इसको नीचा दिखा दूं और सिकंदर के हृदय से यह उतर जाए और मेरी प्रभुता बनी रह जाए। सभी वहाँ से दिल्ली के लिए चल पड़े। रास्ते में रात्री में एक दरिया पर रूक गए। सोचा कि रात्री में विश्राम करेंगे। सुबह चलने का इरादा करके वहाँ पर पड़ाव लगा दिया।

"मृत लड़के कमाल को जीवित करना"

शेखतकी महाराजा सिकंदर से मुख चढ़ाए फिर रहा था। सिकंदर ने पूछा कि क्या बात है पीर जी? शेखतकी ने कहा कि क्या तुझे बात नहीं मालूम? सिकंदर ने पूछा कि क्या बात है? शेखतकी ने कहा कि यह तेरे साथ कौन है? सिकंदर ने कहा कि ये तो भगवान (अल्लाह) है। शेखतकी ने कहा कि अच्छा अल्लाह अब आकार में आने लग गया। अल्लाह कैसे है? सिकंदर ने कहा कि पहले तो अल्लाह ऐसे कि मेरा रोग ऐसा था कि किसी से भी ठीक नहीं हो पा रहा था। इस कबीर प्रभु ने हाथ ही लगाया था मैं स्वस्थ हो गया। शेखतकी ने कहा कि ये जादूगर होते हैं। सिकंदर ने फिर कहा दूसरा भगवान ऐसे है कि मैंने उनके गुरुदेव का सिर काट दिया था और उन्होंने उसे मेरी आँखों के सामने तुरंत जीवित कर दिया। शेखतकी ने कहा कि अगर यह कबीर अल्लाह है तो मैं इसकी परिक्षा लूंगा। यदि कबीर जी मेरे सामने कोई मुर्दा जीवित करे तो इसे अल्लाह मान लूंगा। नहीं तो दिल्ली जाकर मैं पूरे मुसलमान समाज को कह दूँगा कि यह राजा हिन्दू हो गया है। सिकंदर लौधी डर गया कि कहीं ऐसा न हो कि यह जाते ही राज पलट दे। (राज को देने वाला पास बैठा है और उस मूर्ख से डर लगता है।) राजा ने शेखतकी से कहा कि आप कैसे प्रसन्न होंगे। शेखतकी ने कहा कि मैं तब प्रसन्न होऊँगा जब मेरे सामने यह कबीर कोई मुर्दा जीवित कर दे। साहेब से प्रार्थना हुई तो कबीर साहेब ने कहा कि ठीक है। (कबीर साहेब ने सोचा कि यह अनाड़ी आत्मा शेखतकी है। अगर यह मेरी बात मान गया तो आधे से ज्यादा मुसलमान इसकी बात स्वीकार करते हैं। क्योंकि यह दिल्ली के बादशाह का पीर है और अगर यह सही ढंग से मुसलमानों को बता देगा तो बेचारी भोली आत्माऐं इन गुरूओं पर आधारित होती हैं।)

इसलिए कहा कि ठीक है शेखतकी ढूंढ ले कोई मुर्दा। सुबह एक 10-12 वर्ष की आयु के लड़के का शव पानी में तैरता हुआ आ रहा था। शेखतकी ने कहा कि वह आ रहा है मुर्दा, इसे जिन्दा कर दो। कबीर साहेब ने कहा पहले आप प्रयत्न करो, कहीं फिर पीछे नम्बर बनाओ। उपस्थित मन्त्रियों तथा सैनिकों ने कहा कि पीर जी आप कोशिश करके देख लो। शेखतकी जन्त्र-मन्त्र करता रहा। इतने में वह मुर्दा तीन फर्लांग आगे चला गया। शेखतकी ने कहा कि यह कबीर चाहता था कि यह बला सिर से टल जाए। कहीं मुर्दे जीवित होते हैं? मुर्दे तो कयामत के समय ही जीवित होते हैं। कबीर साहेब बोले महात्मा जी आप बैठ जाओ, शान्ति करो। कबीर साहेब ने उस मुर्दे को हाथ से वापिस आने का संकेत किया। बारह वर्षीय बच्चे का मृत शरीर दरिया के पानी के बहाव के विपरीत चलकर कबीर जी के सामने आकर रूक गया। पानी की लहर नीचे-नीचे जा रही और शव ऊपर रूका था। कबीर साहेब ने कहा कि हे जीवात्मा जहाँ भी है कबीर हुकम से मुर्दे में प्रवेश कर और बाहर आ। कबीर साहेब ने इतना कहा ही था कि शव में कम्पन हुई तथा जीवित हो कर बाहर आ गया। कबीर साहेब के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। "बोलो कबीर परमेश्वर की जय"

सर्व उपस्थित जनों ने कहा कि कबीर साहेब ने तो कमाल कर दिया। उस लड़के का नाम कमाल रख दिया। लड़के को अपने साथ रखा। अपने बच्चे की तरह पालन-पोषण किया और

नाम दिया। उसके बाद दिल्ली में आ गए। सभी को पता चला कि यह लड़का जो इनके साथ है यह परमेश्वर कबीर साहेब ने जीवित किया है। दूर तक बात फैल गई। शेखतकी की तो माँ सी मर गई सोचा यह कबीर अच्छा दुश्मन हुआ। इसकी तो और ज्यादा महिमा हो गई।

शेखतकी की इर्षा बढ़ती ही चली गई। उसकी तेरह वर्षीय लड़की को मृत्यु पश्चात् कब्र में जमीन में दबा रखा था। शेखतकी ने कहा यदि कबीर मेरी लड़की को जो कब्र में दफना रखी है। जीवित करेगा तो मैं इसे अल्लाह मान लूंगा।

''शेख तकी द्वारा कबीर जी की अन्य परीक्षाएँ''

"कमाली के पहले के जन्म"

(पूर्ण मुक्ति पूर्ण संत बिना असंभव)

सतयुग में कमाली वाला जीव विद्याधार पंण्डित की पत्नी दीपिका थी। फिर त्रेतायुग में ऋषि वेदविज्ञ (जो विद्याधार वाली ही आत्मा थी) की पत्नी सूर्या थी। सत्ययुग तथा त्रेता में परमात्मा कबीर जी बालक रूप में इन्हीं को प्राप्त हुए थे। तत्पश्चात् अन्य जीवन धारण किए तथा कलयुग में मुस्लमान धर्म में राबी लड़की का जन्म, फिर बंसुरी नामक लड़की का जन्म,उस के पश्चात् एक जीवन वैश्या का, फिर कमाली नामक लड़की का जीवन प्राप्त हुआ।

राबिया के प्रमाण में साखियाँ गरीबदास साहेब रचित ग्रंथ साहेब से पृष्ठ नं. 261 वाणी नं. 56 से 59 तक।

गरीब, सुलतानी मक्के गये, मक्का नहीं मुकाम। गया रांड के लेन कूं, कहै अधम सुलतान।।
गरीब, राबिया परसी रबस्यूं, मक्कै की असवारि। तीन मंजिल मक्का गया, बीबी कै दीदार।
गरीब, फिर राबिया बंसरी बनी, मक्कै चढाया शीश। सुलतान अधम चरणौं लगे, धनि सतगुरु जगदीश।।
गरीब, बंसरी सैं बेश्वा बनी, शब्द सुनाया राग। बहुरि कमाली पुत्री, जुग जुग त्याग बैराग।।

प्रमाण के लिए गरीबदास साहेब रचित ग्रंथ साहेब अंग पृष्ठ नं. 375 पर वाणी नं. 361से 366 तक

गरीब राबी कुं सतगुरु मिले, दीना अपना तेज। ब्याही एक सहाब सैं, बीबी चढ़ी न सेज।।
गरीब, राबी मक्के कूं चली, धर्या अल्हका ध्यान। कुत्ती एक प्यासी खड़ी, छुटे जात हैं प्राण।।
गरीब, केश उपारे शीश के, बाटी रस्सी बीन। जाकै बस्त्र बांधि कर, जल काढ्या प्रबीन।।
गरीब, सुनहीं कूं पानी पीया, उतरी अरस अवाज। तीन मंजिल मक्का गया, बीबी तुम्हरे काज।।
गरीब, बीबी मक्के पर चढ़ी, राबी रंग अपार। एक लाख अस्सी जहाँ, देखै सब संसार।।
गरीब, राबी पटरा घालि कर, किया जहाँ स्नान। एक लाख अस्सी बहे, मंगर मल्या सुलतान।।

एक राबी नाम की लड़की मुसलमान धर्म में उत्पन्न हुई। जब उसकी आयु 16 वर्ष की थी तो उसे पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब मिले। प्रभु में बहुत प्रेम था। रोजा रखना, निमाज करना, ईद मनाना जो परम्परागत साधना धर्म अनुसार थी, वह पूरी लगन से किया करती थी।

तब कबीर साहेब ने बताया बेटी यह साधना प्रभु पाने की नहीं है। सारी सृष्टी रचना सुनाई तथा सत भक्ति का मार्ग बताया। उस लड़की राबिया ने उपदेश ले लिया। फिर चार वर्ष सत साधना करके समाज के दबाव से लोक-लाज के कारण सतमार्ग छोड़ दिया तथा वही परम्परागत

साधना पुनः शुरू कर दी। उस लड़की की आस्था प्रभु में इतनी प्रबल थी कि शादी से मना कर दिया। माता-पिता रोने लग गए कि जवान लड़की को घर पर कैसे रखें? माता-पिता को आवश्यकता से अधिक परेशान देखकर राबिया ने शादी की स्वीकृती दे दी। उस लड़की राबिया की शादी एक बहुत बड़े साहेब (अधिकारी) से हुई। परन्तु अपने पति से स्पष्ट कह दिया कि मैं सन्तान उत्पत्ति नहीं करूँगी। मैंने तो मेरे माता-पिता के विशेष दबाव तथा समाज शर्म के कारण शादी की है। यदि आप मेरी बात स्वीकार नहीं करोगे तो मैं आत्महत्या कर लूंगी। यह मेरा अन्तिम फैसला समझो। मैं केवल प्रभु भक्ति करके आत्म कल्याण चाहती हूँ।

राबिया के पति ने सोचा क्यों मैं इस भक्तात्मा को दुःखी करूं और पाप का भागी बनूं। सोच विचार करके कहा कि राबिया जिस प्रकार आपने समाज से डर था ऐसे ही मेरा भी अपना एक समाज है। आपको समाज की दृष्टि में मेरी पत्नी के रूप में रहना पड़ेगा। मेरी दृष्टि में आप मेरी बहन होंगी। तुझे घर से बाहर नहीं जाने दूँगा। आप भजन(भक्ति) करो। कहो तो आपके लिए दो नौकरानी छोड़ देता हूँ। राबिया बहुत प्रसन्न हुई तथा कहा कि हे प्रभु ! आपने मेरी बड़ी सुनी। उस दिन के बाद राबिया मुसलमान धर्म में प्रचलित साधना करती रही।

मुसलमान धर्म में जन्म था। ईद और बकरीद, रोजे आदि श्रद्धा से करती थी। जब पचास वर्ष से ऊपर की आयु हो गई, तब अपने पति से कहा कि कहते हैं कि मक्का में जाना अति आवश्यक होता है। अब न जाने प्राण कब निकल जाऐं। एक बार मैं हज करना चाहती हूँ। उसके पति ने कहा कि आप जा सकती हो। कहो तो आपके लिए कोई ऊँट की व्यवस्था करवा देता हूँ। राबिया ने कहा कि मैं पैदल यात्रा करूँगी। अन्य भी बहुत यात्री जा रहे हैं। उसके पति ने कहा कि आप जा सकती हो।

राबिया ने मक्के में हज के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में देखा एक कुत्तिया बहुत प्यासी थी। वह कुत्तिया कभी राबिया के पैरों की ओर दौड़ कर आ रही थी, कभी कुएँ की ओर जा रही थी। राबिया समझ गई कि यह कुत्तिया बहुत प्यासी है। साथ में इसके छोटे-छोटे बच्चे भी नजर आ रहे थे। इसको जल प्राप्त नहीं हुआ तो ये प्राण त्याग जाएगी, इसके बच्चे भी मर जाएँगे। भक्तात्मा में दया बहुत होती है। राबीया कुएँ पर गई। वहाँ देखा न वहाँ बाल्टी थी और न ही कोई रस्सा था। आसपास कोई गाँव भी नजर नहीं आ रहा था। राबिया ने आव देखा न ताव, अपने सिर के बालों को उखाड़ कर एक लम्बी रस्सी बनाई। अपने ही कपड़े (क्योंकि उस समय मोटे खादी के कपड़े पहना करते थे।) उतार कर रस्सी से बाँध कर कुएँ में जल से भीगों कर बाहर निकाले और एक मटके का टूटा हुआ आधा हिस्सा वही पर रखा था उसको भर दिया। कुत्तिया ने बहुत शीघ्रता से पानी पीया। राबिया का सारा शरीर लहु-लुहान हो गया। अपने कपड़ों से सारे शरीर को पोंछ कर और उन कपड़ो को धोकर कर पहन लिया तथा जैसे ही चलने के लिए तैयार हुई इतने में वह मक्का ज्यों का त्यों मकान (पवित्र मस्जिद) वहाँ से उठकर राबिया के लिए उस कुएँ के पास आ गया। आकाश वाणी हुई कि ''हे भक्तमति तेरे लिए वह मक्का तीन मंजिल अर्थात् 60 मील से उड़ कर आया है। आप इस में प्रवेश करो। राबिया ने उसमें प्रवेश किया। मक्का वहाँ से उठा। वायुयान की तरह उड़ कर वापिस यथा स्थान पर आ गया।

इस लीला को देख कर समाज में एक विशेष चर्चा हो गई कि भक्ति हो तो राबिया जैसी मुसलमान समाज में (मीरा बाई की तरह) राबिया का नाम आदर के साथ लिया जाने लगा। सभी उसका विशेष सत्कार करने लगे।

कुछ समय पश्चात् राबिया ने प्राण त्याग दिए। दूसरा जन्म मुसलमान धर्म में एक बंसुरी नाम की लड़की का हुआ। क्योंकि जहाँ जीव के संस्कार होते हैं वहीं उसकी उत्पत्ति होती रहती है। इतनी अच्छी धार्मिक वृत्ति की लड़की बहुत अच्छे प्रभु के गुण-गान करती थी और अपनी धार्मिक पूजा मुसलमान धर्म के अनुसार पूरी आयु करती रही। उस लड़की ने भी लोकवेद के आधार से यही सुना था कि यदि मक्का में प्राण निकल जाऐं तो जीव सीधा स्वर्ग (बहिस्त) जाता है। वृद्ध होने पर हज करने मक्का में गई। सोचा कि इससे अच्छा सुअवसर और क्या होगा? यदि मक्का में प्राण निकल जाएं और स्वर्ग प्राप्ति हो जाए। लड़की ने अपना सिर काट कर मक्के में चढ़ा दिया। सारे मुसलमान समाज में इस बात की विशेष चर्चा हो गई कि कुर्बानी प्रभु के नाम पर ऐसे होती है। (अब यहाँ नादान व्यक्तियों को सोचना चाहिए कि कुर्बानी अपनी करनी चाहिए। प्रभु के नाम पर बकरे और गाय या मुर्गे की नहीं। वास्तव में कुर्बानी प्रभु चरणों में समर्पण तथा सत्य भक्ति होती है। शीश काट देने तथा अविधि पूर्वक साधना करने से मुक्ति नहीं होती। यह तो काल की भूल भुलैया है। कुर्बानी गर्दन काटने से नहीं होती, समर्पण से होती है। प्रभु के निमित्त हृदय से समर्पण कर दे कि हे प्रभु तन भी तेरा, धन भी तेरा, यह दास या दासी भी तेरी, यह कुर्बानी प्रभु को पसंद है। हिंसा, हत्या प्रभु कभी पसंद नहीं करता।)

उसके बाद उसी लड़की राबिया का तीसरा जन्म अन्य समाज में हुआ। कर्म आधार पर वैश्या बनी। पूर्ण परमेश्वर (सतपुरूष कबीर साहेब) ही जीव के पाप कर्म काट सकता है अन्य नहीं काट सकते। जैसे हिन्दूस्तान का राष्ट्रपति फांसी की सजा को भी क्षमा कर सकता है, अन्य सजाएं तो कहना ही क्या है? अन्य कोई भी फांसी की सजा को क्षमा नहीं कर सकता। इसी प्रकार (पूर्ण परमात्मा) परम शक्तियुक्त कबीर साहेब हमारे सर्व दुःखों का निवारण कर सकते हैं। इसका प्रमाण अब निम्न देखियेः-

यजुर्वेद अध्याय न. 5 के श्लोक न. 32 का अनुवाद (संत रामपाल दास द्वारा भाषा भाष्य)

उशिगसि कविरङ्घारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाछुन्ध्यूरसि मार्जालीयः। सम्राडसि कृशानुः परिषद्योसि पवमानो नभोसि प्रतक्वा मृष्टोसि हव्यसूदनऋत–धामासि स्वर्ज्योतिः।। 32।।

उशिक्–असि–कविर्–अंघारिः–असि–बम्भारिः–अवस्यूः–असि–दुवस्वान्– शुन्ध्यूः–असि–मार्जालीयः–सम्राट–असि–कृशानुः–परिषद्यः –असि– पवमानः– नभः– असि–प्रतक्वा– मृष्टः–असि–हव्य–सूदनः–ऋत–धामा–असि–स्वर्ज्योतिः।

अनुवाद :– (उशिक्) जो पूर्ण शांतिदायक (असि) है। वह (अंघारिः) पाप का शत्रु अर्थात् पाप विनाशक (कविर्) कबीर (असि) है। (दुवस्वान्) दो स्थानों पर वास करता हुआ। दुःखदाई काल लोक में रहने वालों के (बम्भारिः) कर्म बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ (अवस्यूः) रक्षा के लिए तुरन्त आने वाला (असि) है। (शुन्ध्यूः) पवित्र करने वाला वायु के तुल्य (असि) है। (परिषद्यः) सभा में अर्थात् ओंकार ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों (ब्रह्म,ब्रह्मा,विष्णु,शिव तथा देवी,देवताओं आदि की सभा है में जैसे चूहों की सभा में) (मार्जालीयः) बिलाव की तरह (सम्राट) शक्तिशाली राजाधिराज अर्थात् कुल मालिक (असि) है (कृशानुः) सर्व ऊर्जा स्रोत परमेश्वर

(पवमानः) वायु अर्थात् प्रत्येक जीव का प्राणाधार (असि) है (नभः) आकाश के गुण शब्द रूप में अविनाशी (असि) है (प्रतक्वा) जगत को त्यागने वाला अन्तर्यामी (मृष्टः) जाना माना अर्थात् सर्वविदित (असि) है (हव्यसूदनः) हवन में आहुति दिए घी का जैसे प्रारूप बदल जाता है अर्थात् अधिक लाभ दायक हो जाता है ऐसे भक्ति से भक्त के गुण बदलने वाला (स्वर्ज्योतिः) स्वयं प्रकाशित (ऋतधामा) सत्यलोक में रहने वाला (असि) है।

भावार्थ :- जो पूर्ण शांतिदायक है वह पाप नाशक परमेश्वर कबीर (कविर्देव) है। कर्मों के बन्धन में बंधे हुओं के बन्धन काटने वाला अर्थात् बन्दी छोड़ है। जगत को त्यागने वाला अन्तर्यामी अधियज्ञ स्वयं प्रकाशित सत्यलोक में रहने वाला कबीर प्रभु है।

(शेष कथा)

राबिया वाली आत्मा ने वैश्या का जीवन पूर्ण करके प्राण त्याग दिए। उसी राबिया का चौथा मानव जन्म शेखतकी, पीर के यहाँ लड़की के रूप में हुआ। जो सिकंदर लौधी का धार्मिक गुरु दिल्ली में था बारह वर्ष की आयु पूरी करके वह लड़की शरीर त्याग गई। उसको कब्र में दबा दिया गया। कबीर साहेब कहते हैं कि :-

गरीब, जो जन मेरी शरण है, ताका हूँ मैं दास। गैल गैल लाग्या रहूं, जब लग धरणी आकाश।।

गरीब ज्यों बछा गऊ की नजर में, यों साई ने संत। भक्तों के पीछे फीरे, वो भक्त वत्सल भगवंत।।

उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति अर्थात् कविर्देव अपनी भक्ति जो स्वयं सन्त रूप में आकर बताता है उस सतगुरु रूप में प्रकट कबीर साहेब के बताए अनुसार सत भक्ति इस लड़की ने चार-पाँच वर्ष की थी। उसके बाद त्याग दी थी। उस भक्ति के परिणाम स्वरूप इसको लगातार तीन मनुष्य शरीर प्राप्त हुए। उसका आगे मनुष्य जीवन का संस्कार शेष नहीं था। अब इस आत्मा ने चौरासी लाख योनियों में कष्ट पर कष्ट उठाना था। कबीर प्रभु दयालु हैं। कारण बनाया, उस लड़की को वहाँ कब्र से जीवित करके अपने चरणों में ले करके कमाली नाम रखा और इस प्यारी बिटिया को उपदेश दिया और मुक्ति प्रदान की। इसी प्रकार हमने यह सोचना होगा कि हम जड़ों में पानी डालेंगे तो पौधा हरा-भरा होगा। हम पत्ते और टहनियों की पूजा कर रहे हैं ये गलत है।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष है। इसकी ऊपर को जड़ें परम अक्षर पुरूष सतपुरूष पूर्ण ब्रह्म हैं और जमीन से बाहर जो तना दिखाई देता है वह अक्षर पुरूष (परब्रह्म) समझो। उसके बाद तने के एक मोटी डार होती है। उस डाल को ज्योति निरंजन (ब्रह्म) समझो। उस डार की फिर तीन शाखाएँ ब्रह्मा, विष्णु, महेश समझो और फिर इनके ये टहनियाँ देवी देवता और पत्ते संसार समझो। ऐसा कबीर साहेब ने पूरी सृष्टी रचना को एक ही दोहे में सुना दिया।

"शेखतकी की मृत लड़की कमाली को जीवित करना"

शेखतकी ने देखा कि यह कबीर तो किसी प्रकार भी काबू नहीं आ रहा है। तब शेखतकी ने जनता से कहा कि यह कबीर तो जादूगर है। ऐसे ही जन्त्र-मन्त्र दिखाकर इसने बादशाह सिकंदर की बुद्धि भ्रष्ट कर रखी है। सारे मुसलमानों से कहा कि तुम मेरा साथ दो, वरना बात

बिगड़ जाएगी। भोले मुसलमानों ने कहा पीर जी हम तेरे साथ हैं, जैसे तू कहेगा ऐसे ही करेंगे। शेखतकी ने कहा इस कबीर को तब प्रभु मानेंगे जब मेरी लड़की को जीवित कर देगा जो कब्र में दबी हुई है।

पूज्य कबीर साहेब से प्रार्थना हुई। कबीर साहेब ने सोचा यह नादान आत्मा ऐसे ही मान जाए। {क्योंकि ये सभी जीवात्माऐं कबीर साहेब के बच्चे हैं। यह तो काल ने (मजहब) धर्म का हमारे ऊपर कवर चढ़ा रखा है। एक-दूसरे के दुश्मन बना रखे हैं।} शेखतकी की लड़की का शव कब्र में दबा रखा था। शेखतकी ने कहा कि यदि मेरी लड़की को जीवित कर दे तो हम इस कबीर को अल्लाह स्वीकार कर लेंगे और सभी जगह ढिंढ़ोरा पिटवा दूँगा कि यह कबीर जी भगवान है। कबीर साहेब ने कहा कि ठीक है। वह दिन निश्चित हुआ। कबीर साहेब ने कहा कि सभी जगह सूचना दे दो, कहीं फिर किसी को शंका न रह जाए। हजारों की संख्या में वहाँ पर भक्त आत्मा दर्शनार्थ एकत्रित हुई। कबीर साहेब ने कब्र खुदवाई। उसमें एक बारह-तेरह वर्ष की लड़की का शव रखा हुआ था। कबीर साहेब ने शेखतकी से कहा कि पहले आप जीवित कर लो। सभी उपस्थित जनों ने कहा है कि महाराज जी यदि इसके पास कोई ऐसी शक्ति होती तो अपने बच्चे को कौन मरने देता है? अपने बच्चे की जान के लिए व्यक्ति अपना तन मन धन लगा देता है। हे दीन दयाल आप कृपा करो। पूज्य कबीर परमेश्वर ने कहा कि हे शेखतकी की लड़की जीवित हो जा। तीन बार कहा लेकिन लड़की जीवित नहीं हुई। शेखतकी ने तो भंगड़ा पा दिया। नाचे-कूदे कि देखा न पाखण्ड़ी का पाखंड पकड़ा गया। कबीर साहेब उसको नचाना चाहते थे कि इसको नाचने दे।

कबीर, राज तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह। मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना ये।।

मान-बड़ाई, ईर्ष्या की बीमारी बहुत भयानक है। अपनी लड़की के जीवित न होने का दुःख नहीं, कबीर साहेब की पराजय की खुशी मना रहा था। कबीर साहेब ने कहा कि बैठ जाओ महात्मा जी, शान्ति रखो। कबीर साहेब ने आदेश दिया कि हे जीवात्मा जहाँ भी है कबीर आदेश से इस शव में प्रवेश करो और बाहर आओ। कबीर साहेब का कहना ही था कि इतने में शव में कम्पन हुआ और वह लड़की जीवित होकर बाहर आई, कबीर साहेब के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। (बोलो सतगुरु देव की जय।)

उस लड़की ने डेढ घण्टे तक कबीर साहेब की कृपा से प्रवचन किए। कहा हे भोली जनता ये भगवान आए हुए हैं। पूर्ण ब्रह्म अन्नत कोटि ब्रह्मण्ड के परमेश्वर हैं। क्या तुम इसको एक मामूली जुलाहा(धाणक) मान रहे हो। हे भूले-भटके प्राणियों ये आपके सामने स्वयं परमेश्वर आए हैं। इनके चरणों में गिरकर अपने जन्म-मरण का दीर्घ रोग कटवाओ और सत्यलोक चलो। जहाँ पर जाने के बाद जीवात्मा जन्म-मरण के चक्कर से बच जाती है। कमाली ने बताया कि इस काल के जाल से बन्दी छोड़ कबीर साहेब के बिना कोई नहीं छुटवा सकता। चाहे हिन्दू पद्धति से तीर्थ-व्रत, गीता-भागवत, रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद्ध, वेदों का पाठ करना, राम, कृष्ण, ब्रह्मा-विष्णु-शिव, शेराँवाली(आदि माया, आदि भवानी, प्रकृति देवी), ज्योति निरंजन की उपासना भी क्यों न करें, जीव चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में कष्ट से नहीं बच सकता और

मुसलमान पद्धति से भी जीव काल के जाल से नहीं छूट सकता। जैसे रोजे रखना, ईद बकरीद मनाना, पाँच वक्त नमाज करना, मक्का-मदीना में जाना, मस्जिद में बंग देना आदि सर्व व्यर्थ है। कमाली ने सर्व उपस्थित जनों को सम्बोधित करते हुए अपने पिछले जन्मों की कथा सुनाई जो उसे कबीर साहेब की कृपा से याद हो आई थी। जो कि आप पूर्व पढ़ चुके हो।

कबीर साहेब ने कहा कि बेटी अपने पिता के साथ जाओ। वह लड़की बोली मेरे वास्तविक पिता तो आप हैं। यह तो नकली पिता है। इसने तो मैं मिट्टी में दबा दी थी। मेरा और इसका हिसाब बराबर हो चुका है। सभी उपस्थित व्यक्तियों ने कहा कि कबीर परमेश्वर ने कमाल कर दिया। कबीर साहेब ने लड़की का नाम कमाली रख दिया और अपनी बेटी की तरह रखा और नाम दिया। उपस्थित व्यक्तियों ने हजारों की संख्या में कबीर परमेश्वर से उपदेश ग्रहण किया। अब शेखतकी ने सोचा कि यह तो और भी बात बिगड़ गई। मेरी तो सारी प्रभुता गई।

"कबीर साहेब को सरसों के गर्म तेल के कड़ाहे में डालना"

अब शेखतकी ने देखा कि कबीर साहेब जी की तो और अधिक महिमा हो गई। वह फिर साहेब को किसी न किसी प्रकार नीचा दिखाने की योजना बनाने लगा। इतनी लीला देखकर भी शेखतकी नीच की आँखें नहीं खुली। परमात्मा सामने थे, परन्तु मान-बड़ाई वश स्वीकार नहीं कर रहा था।

कुछ दिनों पश्चात् फिर शेखतकी ने मुसलमानों को इक्कट्ठे किया और कहा कि यह कबीर कोई जादूगर है। हम इसकी एक और परीक्षा लेंगे। हजारों की संख्या में मुसलमान शेखतकी के साथ राजा सिकंदर के पास गए तथा कहा कि हम इस कबीर को उबलते सरसों के तेल के कड़ाहे में डालेंगे। यदि यह नहीं मरा तो हम इसको भगवान मान लेंगे। सिकंदर लौधी घबरा गया कि कहीं ये मेरे राज को न पलट दें। कबीर साहेब के पास गया और प्रार्थना की कि महाराज जी मैं आपको यहाँ पर लाया तो था सेवा करने के लिए। लेकिन मैंने तो आपको दुःखी कर दिया दाता। कबीर साहेब ने पूछा कि क्या बात है राजन्? सिकंदर लौधी ने कहा कि साहेब आप तो जानीजान हो, शेखतकी ऐसे-ऐसे कह रहा है। कबीर साहेब जी बोले राजन् कोई बात नहीं, इन्होंने तो मुझे खत्म करना ही है। आज नहीं तो कल करेंगे। आज ही टंटा कट जाए तो बहुत अच्छा। कबीर साहेब ने कहा कि कह दे उनको कि तेल गर्म कर लेंगे। कबीर साहेब जी सोचते थे कि यह नादान शेखतकी ऐसे ही मान जाए। सिकंदर लौधी ने शेखतकी से कहा कि कर लो तेल गर्म।

शेखतकी ने बहुत मोटी-मोटी लकड़ी लगा कर तेल के कड़ाहे को बहुत उबाल दिया और कहा इस कबीर को उठा कर इसमें डाल दो। कबीर साहेब बोले कि शेख जी यह कष्ट भी क्यों कर रहे हो, मैं स्वयं ही बैठ जाऊँगा। पूज्य कबीर साहेब जी उस उबलते तेल के कड़ाहे में प्रवेश कर गए। केवल गर्दन बाहर दिखाई दे रही थी। शेष शरीर उस उबलते हुए तेल में था। कबीर साहेब जी आराम से बैठे थे जैसे ठण्डे पानी में बैठे हों। शेखतकी ने कहा कि यह जंत्र-मंत्र जानता है। इसने इस तेल को ठंडा कर दिया है। यह वैसे उबलता हुआ दिखाई दे रहा है।

सिकंदर लौधी ने सोचा कि कहीं सचमुच यह ठण्डा हो गया हो। सिकंदर ने परीक्षण के लिए उस उबलते हुए तेल के कड़ाहे में ऊँगली देनी चाही। कबीर साहेब ने कहा कि राजा इसमें ऊँगली मत देना, कहीं इस बावली बूच के चक्कर में आकर हाथ नष्ट करवा ले। यह इतना गर्म है कि ऊँगली ढूंढी नहीं मिलेगी। सिकंदर ने सोचा कि जब कबीर साहेब जी तेल में बैठे हैं तो तुझे क्या होगा? यह सोचकर मना करते-करते उस उबलते हुए तेल के कड़ाहे में ऊँगली दे दी। जितनी ऊँगली तेल में गई थी उतनी कट कर अलग हो गई और राजा दर्द के मारे बेहोश हो गया। कबीर साहेब ने सोचा कि यह नादान बादशाह इस ईर्षालु शेखतकी के चक्कर में मरेगा। कबीर साहेब तेल के कड़ाहे से बाहर आए। सिकंदर को होश में लाया गया। इतनी पीड़ा थी कि फिर बेहोश हो गया। कबीर साहेब ने ऊँगली को पकड़ कर पूरा कर दिया। बादशाह सिकंदर सचेत हो गया। सिकंदर ने क्षमा याचना करते हुए कहा कि मुझे माफ कर दो दाता, मेरे से गलती हो गई। कबीर साहेब ने कहा कि राजन् आपका दोष नहीं है। काल नहीं चाहता कि मेरे बच्चे मुझे पहचान लें।

शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गहरे कुएँ (झेरे) में डालना”

शेखतकी ने देखा कि यह तो ऐसे भी नहीं मरा। मुसलमानों को पुनर् इक्कठा किया और कहा कि अब की बार इस कबीर को कुएँ में डालकर ऊपर से मिट्टी, ईटें और रोड़े डाल देंगे। तब देखेंगे यह कैसे बचेगा? भोली जनता तो जैसे पीर जी कहे वैसे ही करने को तैयार थी।

शेखतकी ने सिकंदर लौधी से कहा कि हम इसकी एक परीक्षा और लेंगे। सिकंदर ने पूछा कि क्या परीक्षा लोगे? शेखतकी ने कहा कि हम इसको झेरे कुएँ में डालेंगे और फिर देखेंगे कि वहाँ से कैसे जीवित होगा?

{अब इतनी लीला देखकर भी राजा का अपने मालिक पर विश्वास नहीं बना। नहीं तो धमका देता कि जा करले तूने जो करना है। मैं नहीं दुःखी करूं अपने भगवान को। फिर देखता उसका राज्य जाता या और मौज हो जाती।} राजा ने सोचा कहीं मेरा राज्य न चला जाए। सिकंदर लौधी राजा ने साहेब से प्रार्थना की कि यह शेखतकी तो नहीं मानता और आज ऐसे-ऐसे जिद्द किए हुए है। पूज्य कबीर साहेब जी ने कहा ठीक है। कर लेने दे इसको जो यह करे। मेरा भी टंटा कटे। मैं भी दुःखी हो लिया। कह दे कि तुने जो करना है कर ले।

शेखतकी कबीर साहेब जी को बाँध जूड़ कर ले गया और जाकर गहरे झेरे कुएँ में डलवा दिया। वहाँ पर हजारों व्यक्तियों को इक्कठा किए हुए था। बहुत गहरा अंधा कुआँ जिसमें पानी गंदा और थोड़ा-सा पड़ा था और ऊपर से मिट्टी, कांटेदार छड़ी, गोबर, ईंट आदि से डेढ़ सो फूट ऊँचा पूरा भर दिया। फिर शेखतकी हाथ-मुँह धोकर सिकंदर लौधी के पास गया तथा कहा कि राजा कर दिया तेरे शेर को समाप्त। उसके ऊपर इतनी मिट्टी डाल दी है कि अब किसी भी प्रकार बाहर नहीं आ सकता। सिकंदर लौधी ने पूछा पीर जी आप किसकी बात कर रहे हो? शेखतकी बोला कि तेरे गुरुदेव कबीर की। उसको आज हमने समाप्त कर दिया है। सिकंदर ने कहा कि पीर जी पूज्य कबीर साहेब जी तो अंदर कमरे में बैठे हैं, वे तो कहीं पर गये ही

नहीं। शेखतकी ने अंदर जाकर देखा तो पूज्य कबीर साहेब अंदर कमरे में आसन पर आराम से बैठे थे। शेखतकी को तो और ज्यादा इर्ष्या हो गई कि यह कबीर तो मारे से मर नहीं रहा। अब क्या किया जाए? अन्य समझदार व्यक्ति तो मान गये, हजारों ने उपदेश लिया, प्रभु कबीर जी के शिष्य बने, परन्तु वह शेखतकी दुष्ट नहीं माना।

शाहतकी नहीं लखी, निरंजन चाल रे। इस परचे तै आगे माँगे जवाल रे।।

शेखतकी बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर की महिमा को नहीं समझ पाया। उसको चाहिए था भगवान के चरणों में गिरकर क्षमा याचना करता तथा अपना आत्म कल्याण करवाता, परन्तु मान-बड़ाई वश होकर साहेब का दुश्मन बन गया। शेखतकी ने और भी बहुत से जुल्म किए। कबीर साहेब काशी लौट गए।

"शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गुंड़ों से मरवाने की निष्फल कुचेष्टा"

कबीर साहेब के काशी आने के बाद शेखतकी ने सोचा कि यह कबीर तो किसी भी प्रकार नहीं मर रहा। वह कबीर साहेब को मारने के लिए रात्री के समय कुछ गुंडों को साथ लेकर कबीर साहेब की झोपड़ी पर गया। कबीर साहेब सो रहे थे। शेखतकी ने गुंडों से कहा कि इसके टुकड़े-टुकड़े कर दो। गुंडों ने तलवार से पूज्य कबीर साहेब जी के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और अपनी तरफ से मरा हुआ जानकर चल पड़े। जब वे झोपड़ी से बाहर निकले तो पीछे से कबीर साहेब ने उठकर कहा कि पीर जी, दूध पीकर जाना। ऐसे थोड़े ही जाते हैं। शेखतकी व उसके गुंडों ने सोचा कि यह भूत है। वहाँ से भाग गये। उन गुंडों को तो बुखार हो गया। कई दिन तक बुखार नहीं उतरा। कबीर साहेब उनके पास गये और उनको ठीक किया तथा कहा कि यह पीर तुम्हें मरवा कर छोड़ेगा, यह तुम्हें गुमराह कर रहा है। तब उन्होंने कबीर साहेब से क्षमा याचना की।

❑❑❑

(छ) ''पुराण मन्थन''

पवित्र हिन्दू धर्म के अनुयाई पुराणों के ज्ञान पर पूर्ण रूप से आश्रित हैं। इन्हीं को आधार बताकर हिन्दु धर्म के धर्म गुरु प्रजा में प्रवचन करते हैं। जिन्होंने भगवान विष्णु जी, भगवान शिवजी आदि देवों को सर्वेश्वर, अजन्मा, सृष्टी, स्थिती संहार कर्ता। सर्वशक्तिमान बताया है तथा यह भी कहा है कि श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी आदि के कोई माता-पिता नहीं हैं। हिन्दू धर्मगुरुओं ने यह भी दृढ़ता से कहा है कि श्री विष्णु जी व श्री शिवजी ही पूज्य हैं। इनसे अन्य कोई परमात्मा नहीं है जिस कारण से श्री शिव जी भगवान में आस्था रखने वाले श्रद्धालु श्री शिव पुराण को श्रद्धा से पढ़ते हैं तथा साथ में श्री विष्णु जी की भी साधना अवश्य करते हैं तथा पुराणों में वर्णित भक्ति विधि के अनुसार अन्य देवों का अनुष्ठान व पूजा भी करते हैं। इसी प्रकार श्री विष्णु जी में आस्था रखने वाले श्रद्धालु श्री विष्णु पुराण को श्रद्धा से पढते हैं। इसी विष्णु पुराण में वर्णित साधना भी करते हैं, साथ में शिव जी की भी पूजा करते हैं तथा अन्य देवों की पूजा भी पुराण के अनुसार करते हैं। पवित्र गीता जी का भी पठन-पाठ्न करते हैं।

उपरोक्त दोनों प्रभुओं के भक्त श्री देवी भागवतपुराण व ब्रह्म पुराण के ज्ञान को सत्य मानते हैं। उनके अनुसार देवी पूजा तथा तीर्थ भ्रमण भी करते हैं इसके साथ-साथ लोकवेद (सुना-सुनाया ज्ञान) के आधार से पीपल, जांटी, बड़ आदि वृक्षों की पूजा, समाध-पूजा, मजार पूजा, शीतला माता आदि की पूजा भी चाव के साथ करते हैं। श्री हनुमान पूजा, भैरो पूजा, भूत पूजा, श्राद्ध क्रिया भी पूरी लगन से करते हैं। जिसे कल्याणकारी मानते हैं।

सर्व प्रथम पुराण क्या है। पुराणों की रचना किस प्रकार हुई? पुराणों पर आसक्त होकर श्रद्धालु वेदों को छोड़ कर इन्हीं पर पूर्ण रूप से आधारित हो गए। इनका ज्ञान दाता कौन है? यह जानते हैं :-

प्रश्न :- पुराणों की रचना किस कारण हुई। वेदों को छोड़ कर श्रद्धालु पुराणों पर ही किस कारण से आसक्त हो गए।

उत्तर :- श्री शिव पुराण, श्री विष्णु पुराण, श्री ब्रह्म पुराण तथा श्री देवी पुराण आदि इन पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी भगवान हैं। श्री देवी पुराण के तीसरे स्कन्ध (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है जिसके अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी) में ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान देते समय श्री ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद से कहा बेटा नारद जब मेरी उत्पति हुई तो मैं कमल के फूल पर बैठा हुआ था। मुझे नहीं पता कि मेरा उत्पति कर्ता कौन है? इस अगाध जल में मैं कैसे उत्पन्न हो गया- - - - - - ''

श्री ब्रह्मा जी द्वारा दिया गया पुराणों का ज्ञान अधूरा है। सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है क्योंकि श्री ब्रह्मा जी ने ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान भी देने का प्रयत्न किया है। जो संस्य युक्त तथा सुना सुनाया है जो तोड़-मरोड़ कर बताया है। क्योंकि श्री ब्रह्माजी को पूर्ण परमात्मा एक ऋषि के रूप में अग्नि ऋषि के नाम से प्रकट होकर मिले थे तथा पांचवें शवस्म (सुक्ष्म) वेद से सृष्टी रचना का ज्ञान व काल का जाल समझाया था। श्री ब्रह्मा जी ने उस ऋषि से उपदेश ग्रहण किया। परन्तु बाद में काल रूपी ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी की बुद्धि बदल दी, अन्दर से प्रेरणा की कोई पांचवां वेद नहीं है केवल चार

ही वेद हैं। इन्हीं का ज्ञान श्रेष्ठ है अन्य किसी की बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए। तू जगत का ज्ञान दाता है तुझे किसी से ज्ञान ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है।

इस कारण से श्री ब्रह्मा जी ने परमेश्वर से सुने ज्ञान को सत्य न मानकर अपनी बुद्धि द्वारा काल रूपी ब्रह्म की गुप्त प्रेरणा से उसे तोड़-मरोड़ कर अपने वंशियों को बताया जो पुराणों में लिपीबद्ध है। श्री ब्रह्म जी ने अपने जन्म के पश्चात् ही सत्य घटनाओं का सत्य विवरण बताया है। जो पूर्वोक्त पुराणों में लिखा है।

सर्व प्रथम ''श्री देवी पुराण का मंथन करके निष्कर्ष निकालते हैं'' :-

''श्री देवी महापुराण से ज्ञान ग्रहण करें''

''श्री देवी महापुराण से आंशिक लेख तथा सार विचार''

(संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत, सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी, सम्पादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार, चिम्मनलाल गोस्वामी, प्रकाशक-गोबिन्दभवन-कार्यालय, गीताप्रेस, गोरखपुर)

।।श्रीजगदम्बिकायै नमः।।

श्री देवी मद्भागवत

तीसरा स्कन्ध अध्याय 1 से 6

राजा परीक्षित ने श्री व्यास जी से ब्रह्मण्ड की रचना के विषय में पूछा। श्री व्यास जी ने कहा कि राजन मैंने यही प्रश्न ऋषिवर नारद जी से पूछा था, वह वर्णन आपसे बताता हूँ। मैंने (श्री व्यास जी ने) श्री नारद जी से पूछा एक ब्रह्मण्ड के रचियता कौन हैं? कोई तो श्री शंकर भगवान को इसका रचियता मानते हैं। कुछ श्री विष्णु जी को तथा कुछ श्री ब्रह्मा जी को तथा बहुत से आचार्य भवानी को सर्व मनोरथ पूर्ण करने वाली बतलाते हैं। वे आदि माया महाशक्ति हैं तथा परमपुरुष के साथ रहकर कार्य सम्पादन करने वाली प्रकृति हैं। ब्रह्म के साथ उनका अभेद सम्बन्ध है।(पृष्ठ114)

नारद जी ने कहा – व्यास जी ! प्रचीन समय की बात है – यही संदेह मेरे ह्रदय में भी उत्पन्न हो गया था। तब मैं अपने पिता अमित तेजस्वी ब्रह्मा जी के स्थानपर गया और उनसे इस समय जिस विषय में तुम मुझसे पूछ रहे हो, उसी विषय में मैंने पूछा। मैंने कहा – पिताजी ! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ ? इसकी रचना आपने की है या श्री विष्णु जी ने या श्री शंकर जी ने – कृपया सत–सत बताना।

ब्रह्मा जी ने कहा – (पृष्ठ 115 से 120 तथा 123, 125, 128, 129) बेटा ! मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। पूर्वकाल में सर्वत्र जल–ही–जल था। तब कमल से मेरी उत्पत्ति हुई। मैं कमल की कर्णिकापर बैठकर विचार करने लगा – 'इस अगाध जल में मैं कैसे उत्पन्न हो गया ? कौन मेरा रक्षक है ? आकाशवाणी हुई कि तप करो, मैंने एक हजार वर्ष तक तप किया फिर आकाशवाणी हुई कि सृष्टी करो। फिर कमलका डंठल पकड़कर जल में उतरा। वहाँ मुझे शेषशायी भगवान् विष्णु का मुझे दर्शन हुआ। वे योगनिद्रा के वशीभूत होकर गाढ़ी नींद में सोये हुए थे। इतने में भगवती योगनिद्रा याद आ गयीं। मैंने उनका स्तवन किया। तब वे कल्याणमयी भगवती श्रीविष्णु के विग्रहसे निकलकर अचिन्त्य रूप धारण करके आकाश में विराजमान हो गयीं। दिव्य आभूषण उनकी छवि बढ़ा रहे थे। जब योगनिद्रा भगवान् विष्णुके शरीर से अलग होकर आकाश में विराजने लगी, तब तुरंत ही श्रीहरि उठ बैठे। अब वहाँ मैं और भगवान् विष्णु – दो थे। वहीं रूद्र भी प्रकट हो गये। हम तीनों को देवी ने कहा – ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर! तुम भलीभांति सावधान होकर अपने–अपने कार्यमें संलग्न हो जाओ। सृष्टी, स्थिति और संहार – ये तुम्हारे कार्य हैं। इतनेमें

एक सुन्दर विमान आकाश से उतर आया। तब उन देवी नें हमें आज्ञा दी – 'देवताओं ! निर्भीक होकर इच्छापूर्वक इस विमान में प्रवेश कर जाओ। ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र! आज मैं तुम्हें एक अद्‌भुत दृश्य दिखलाती हूँ।'

ब्रह्मा जी ने आगे बताया कि हम तीनों देवताओं को उस पर बैठे देखकर देवी ने अपने सामर्थ्य से विमान को आकाश में उड़ा दिया

इतने में हमारा विमान तेजी से चल पड़ा और वह दिव्यधाम– ब्रह्मलोक में जा पहुंचा। वहाँ एक दूसरे ब्रह्मा विराजमान थे। उन्हें देखकर भगवान् शंकर और विष्णु को बड़ा आश्चर्य हुआ। भगवान् शंकर और विष्णुने मुझसे पूछा–'चतुरानन ! ये अविनाशी ब्रह्मा कौन हैं ?' मैंने उत्तर दिया–'मुझे कुछ पता नहीं, सृष्टीके अधिष्ठाता ये कौन हैं। भगवन् ! मैं कौन हूँ और हमारा उद्देश्य क्या है – इस उलझन में मेरा मन चक्कर काट रहा है।'

इतने में मनके समान तीव्रगामी वह विमान तुरंत वहाँ से चल पड़ा और कैलास के सुरम्य शिखरपर जा पहुंचा। वहाँ विमान के पहुंचते ही एक भव्य भवन से त्रिनेत्रधारी भगवान् शंकर निकले। वे नन्दी वृषभपर बैठे थे।

क्षणभर के बाद ही वह विमान उस शिखर से भी पवन के समान तेज चाल से उड़ा और वैकुण्ठ लोकमें पहुंच गया, जहां भगवती लक्ष्मीका विलास–भवन था। बेटा नारद ! वहाँ मैंने जो सम्पति देखी, उसका वर्णन करना मेरे लिए असम्भव है। उस उत्तम पुरी को देखकर विष्णु का मन आश्चर्य के समुद्र में गोता खाने लगा। वहाँ कमललोचन श्रीहरि विराजमान थे। चार भुजाएं थीं।

इतने में ही पवनसे बातें करता हुआ वह विमान तुरंत उड़ गया। आगे अमृत के समान मीठे जल वाला समुद्र मिला। वहीं एक मनोहर द्वीप था। उसी द्वीपमें एक मंगलमय मनोहर पलंग बिछा था। उस उत्तम पलंगपर एक दिव्य रमणी बैठी थीं। हम आपसमें कहने लगे – 'यह सुन्दरी कौन है और इसका क्या नाम है, हम इसके विषय में बिलकुल अनभिज्ञ हैं।

नारद ! यों संदेहग्रस्त होकर हमलोग वहाँ रूके रहे। तब भगवान् विष्णु ने उन चारुसाहिनी भगवती को देखकर विवेकपूर्वक निश्चय कर लिया कि वे भगवती जगदम्बिका हैं। तब उन्होंने कहा कि ये भगवती हम सभीकी आदि कारण हैं। महाविद्या और महामाया इनके नाम हैं। ये पूर्ण प्रकृति हैं। ये 'विश्वेश्वरी', 'वेदगर्भा' एवं 'शिवा' कहलाती हैं।

(श्री विष्णु जी ने बताया) ये वे ही दिव्यांगना हैं, जिनके प्रलयार्णवमें मुझे दर्शन हुए थे। उस समय मैं बालकरूपमें था। मुझे पालनेपर ये झुला रही थीं। वटवृक्षके पत्रपर एक सुदृढ़ शैय्या बिछी थी। उसपर लेटकर मैं पैरके अंगूठेको अपने कमल–जैसे मुख में लेकर चूस रहा था तथा खेल रहा था। ये देवी गा–गाकर मुझे झुलाती थीं। वे ही ये देवी हैं। इसमें कोई संदेहकी बात नहीं रही। इन्हें देखकर मुझे पहले की बात याद आ गयी। ये हम सबकी जननी हैं।

श्रीविष्णु ने समयानुसार उन भगवती भुवनेश्वरी की स्तुति आरम्भ कर दी।

भगवान विष्णु बोले – प्रकृति देवीको नमस्कार है। भगवती विधात्रीको निरन्तर नमस्कार है। तुम शुद्धस्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हींसे उद्‌भासित हो रहा है। मैं, ब्रह्मा और शंकर – हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव और तिरोभाव हुआ करता है। केवल तुम्हीं नित्य हो, जगतजननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो।

भगवान शंकर बोले – 'देवी ! यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं

हुआ – अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो। इस संसार की सृष्टी, स्थिति और संहार में तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नियमानुसार कार्यमें तत्पर रहते हैं। मैं, ब्रह्मा और शिव विमान पर चढ़कर जा रहे थे। हमें रास्तेमें नये–नये जगत् दिखायी पड़े। भवानी ! भला, कहिये तो उन्हें किसने बनाया है?

कृप्या यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा – अहम् महेश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा(42)।

हिन्दी अनुवाद :– श्री विष्णु बोले हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, अर्थात् हमारा जन्म–मृत्यु होता है हम नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो।(42)

पृष्ठ 11–12, अध्याय 5, श्लोक 8 :– यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :– भगवान शंकर बोले :–हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म–मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :– रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी – अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग–विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

ब्रह्मा जी ने कहा – मैं भी महामाया जगदम्बिकाके चरणों पर गिर पड़ा और मैंने उनसे कहा माता! वेद कहते हैं **'एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म'** है तो क्या वह आत्मस्वरूपा तुम्हीं हो अथवा वह कोई और ही पुरुष है ?

देवी ने कहा – मैं और ब्रह्म एक ही हैं। मुझमें और इन ब्रह्ममें कभी किंचितमात्र भी भेद नहीं है। गौरी, ब्राह्मी, रौद्री, वाराही, वैष्णवी, शिवा, वारुणी, कौबेरी, नारसिंही और वासबी – सभी मेरे रूप हैं। ब्रह्मा जी ! इस शक्तिको तुम अपनी स्त्री बनाओ। 'महासरस्वती' नाम से विख्यात यह सुन्दरी अब सदा तुम्हारी स्त्री होकर रहेगी। भगवती जगदम्बा ने भगवान् विष्णु से कहा – ''विष्णो! मनको मुग्ध करनेवाली इस 'महालक्ष्मी को लेकर अब तुम भी पधारो। यह सदा तुम्हारे वक्षःस्थल में विराजमान रहेगी।

देवी ने कहा–शंकर ! मन को मुग्ध करने वाली यह 'महाकाली' गौरी–नाम से विख्यात है। तुम इसे पत्नीरूप से स्वीकार करो।

अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिये विमान पर बैठकर तुमलोग शीघ्र पधारो। कोई कठिन कार्य उपस्थित होनेपर जब तुम मुझे स्मरण करोगे, तब मैं सामने आ जाऊंगी। देवताओ ! मेरा तथा सनातन परमात्मा का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिये। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में किंचितमात्र भी संदेह नहीं रहेगा।

ब्रह्मा जी कहते हैं – इस प्रकार कहकर भगवती जगदम्बिका ने हमें विदा कर दिया। उन्होंने शुद्ध आचारवाली शक्तियों में से भगवान् विष्णु के लिये महालक्ष्मी को, शंकरके लिये महाकाली को और मेरे लिये महासरस्वती को पत्नी बनने की आज्ञा दे दी। अब उस स्थान से हम चल पड़े।

सार विचार :- एक ब्रह्मण्ड की वास्तविक स्थिति से महर्षि व्यास जी, महर्षि नारद जी तथा श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी भी अनभिज्ञ हैं। यह भी स्पष्ट है कि श्री दुर्गा को प्रकृति भी कहते हैं। दुर्गा तथा ब्रह्म (ज्योति निरंजन-काल) का पति-पत्नी का सम्बन्ध है। इसलिए लिखा है कि ब्रह्म के साथ प्रकृति का अभेद सम्बन्ध है, जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं। श्री ब्रह्मा जी को स्वयं नहीं पता कि मैं कहां से उत्पन्न हुआ। हजार वर्ष तक जल में पृथ्वी की खोज की, परन्तु नहीं मिली। तब आकाशवाणी के आधार पर हजार वर्ष तक तप किया। कमल का डंठल पकड़ कर नीचे उतरा तो वहाँ शेष नाग की शैय्या पर भगवान विष्णु बेहोश पड़े थे। श्री विष्णु के शरीर में से एक देवी निकली(जो प्रेतनी की तरह श्री विष्णु जी के शरीर में प्रवेश थी) जो सुन्दर आभूषण पहने आकाश में विराजमान हो गई। तब श्री विष्णु जी होश में आए। इतने में शंकर जी भी वहीं आ गए।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध है कि तीनों भगवान बेहोश कर रखे थे। फिर सचेत किए। आकाश से विमान आया। देवी ने तीनों प्रभुओं को विमान में बैठने का आदेश दिया। विमान को आकाश में उड़ाया। ऊपर एक ब्रह्मा, एक शिव तथा एक विष्णु और देखा जो ब्रह्मलोक में थे।

ब्रह्मलोक में दूसरे ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव दिखाई दिए थे, यह ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की ही कलाबाजी है, वही अन्य तीन रूप धारण करके ब्रह्मलोक में तीन गुप्त स्थान (एक रजोगुण प्रधान क्षेत्र, दूसरा सतोगुण प्रधान क्षेत्र, तीसरा तमोगुण प्रधान क्षेत्र) बनाकर रहता है। प्रकृति (दुर्गा/अष्टंगी) को अपनी पत्नी रूप में रखता है। जब ये दोनों रजोगुण प्रधान क्षेत्र में होते हैं तब यह काल महाब्रह्मा तथा दुर्गा, महासावित्री कहलाते हैं। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस रजोगुण प्रधान क्षेत्र में उत्पन्न होता है वह रजोगुण प्रधान होता है। उसका नाम ब्रह्मा रख देते हैं। जवान होने तक अचेत करके परवरिश करते रहते हैं। कमल के फूल पर रखकर सचेत कर देते हैं। जब ये दोनों (काल तथा प्रकृति) महाविष्णु तथा महालक्ष्मी रूप में सतोगुण प्रधान क्षेत्र में रहते हैं तब दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है वह सतोगुण प्रधान होता है, उसका नाम विष्णु रख देते हैं। कुछ दिन के पश्चात् बालक को अचेत करके युवा होने तक परवरिश करते रहते हैं। शेष नाग की शैय्या पर सुला देते हैं। युवा होने पर सचेत कर देते हैं। इसी प्रकार जब ये दोनों तमोगुण प्रधान क्षेत्र में रहते हैं तब शिवा अर्थात् दुर्गा तथा महाशिव अर्थात् सदाशिव के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र इस क्षेत्र में उत्पन्न होता है, वह तमोगुण प्रधान होता है। इसका नाम शिव रख देते हैं, इसे भी युवा होने तक अचेत रखते हैं, युवा होने पर सचेत करते हैं। फिर तीनों को इक्कठा करके विमान में बैठा कर ऊपर के लोकों का दृश्य दिखाते हैं। कहीं ये अपने आप को सर्वेस्वा न मान बैठें। गुण प्रधान क्षेत्र को समझने के लिए एक उदाहरण है :- किसी मकान में तीन कमरे हैं। एक कमरे में देश भक्त शहीदों के चित्र लगे हों, जब व्यक्ति उस कमरे में जाता है तो उसके विचार भी देश भक्तों जैसे हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-संतों, ऋषियों आदि के चित्र लगे हों। उस कमरे में प्रवेश करते ही मन शान्त तथा प्रभु भक्ति की तरफ लग जाता है। तीसरे कमरे में अश्लील, अर्धनग्न स्त्री-पुरुषों के चित्र

लगे हो तो मन में स्वतः बकवास घर करने लग जाती हैं। इसी प्रकार ऊपर ब्रह्मलोक में काल रूपी ब्रह्म ने तीन स्थान एक-एक गुण प्रधान बनाऐ हैं।

तीनों प्रभु (रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णुजी तथा तमगुण शिव जी) अपने गुणों का प्रभाव कैसे डालते हैं। :- उदाहरण - जैसे रसोईघर में मिर्चों का छोंक सब्जी में लगाया। मिर्च के गुण से सभी कमरों के व्यक्तियों को छींकें आने लगी। जैसे साकार वस्तु मिर्च तो रसोई में थी, परन्तु उसकी निराकार शक्ति अर्थात् गुण ने दूर बैठे व्यक्तियों को भी प्रभावित कर दिया। ठीक इसी प्रकार तीनों प्रभु (श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण) अपने-अपने लोक में रहते हुए तीन लोक (पृथ्वी लोक, पाताल लोक तथा स्वर्ग लोक) के प्राणियों को प्रभावित रखते हैं।

अन्य उदाहरण :- जैसे मोबाईल फोन प्रसारण शक्ति से कार्य करता है। इस प्रकार अदृश शक्ति रूपी गुणों से तीनों देवता अपने पिता काल की सृष्टी उसके आहार के लिए चला रहे हैं। दुर्गा का अपना अलग लोक भी है, जिसमें यह अपने वास्तविक रूप में दर्शन देती है। फिर इनका विमान दुर्गा के द्वीप में पहुंचा। तब ज्योति निरंजन अर्थात् कालरूपी ब्रह्म ने विष्णु जी को बचपन की याद प्रदान कर दी। तब श्री विष्णु जी ने बताया कि यह दुर्गा अपनी तीनों की माता है। मैं बालक रूप में पालने में लेटा था, यह मुझे लोरी देकर झुला रही थी। तब श्री विष्णु जी ने कहा कि हे दुर्गा आप हमारी माता हो। मैं (विष्णु) ब्रह्मा तथा शंकर तो जन्मवान हैं। हमारा तो आविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु होती है, हम अविनाशी नहीं हैं। आप प्रकृति देवी हो। यह बात श्री शंकर जी ने भी स्वीकार की तथा कहा कि मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर भी आपका ही पुत्र हूँ। श्री विष्णु जी तथा श्री ब्रह्मा जी भी आप से ही उत्पन्न हुए हैं।

''ब्रह्मा-विष्णु-शिव का विवाह''

तीनों देवताओं का विवाह दुर्गा ने किया। प्रकृति देवी (दुर्गा) ने अपनी शब्द शक्ति से अपने ही अन्य तीन रूप धारण किए। एक का नाम सावित्री रखा उसका विवाह ब्रह्मा से किया। दूसरी का नाम लक्ष्मी रखा उसका विवाह विष्णु से किया तथा तीसरी का नाम उमा (काली) रखा उसका विवाह शिव से किया तथा उनको अपने-२ लोको में भेज दिया।

ज्योति निरंजन (काल-ब्रह्म) ने अपने स्वांसों द्वारा समुद्र में चार वेद छुपा दिए। फिर प्रथम सागर मंथन के समय ऊपर प्रकट कर दिए। ज्योति निरंजन (काल) के आदेश से दुर्गा ने चारों वेद श्री ब्रह्मा जी को दिए। ब्रह्मा ने दुर्गा (अपनी माता) से पूछा कि वेदों में जो ब्रह्म (प्रभु) कहा है वे आप ही हो या कोई अन्य पुरुष है।

दुर्गा ने काल के डर से वास्तविकता छुपाने की चेष्टा करते हुए कहा कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं, कोई भेद नहीं। फिर भी वास्तविकता नहीं छुपी। दुर्गा ने फिर कहा कि तुम तीनों मेरा तथा ब्रह्म का सदा स्मरण करते रहना। हम दोनों का स्मरण करते रहने से यदि कोई कठिन कार्य होगा तो मैं तुरन्त सामने आ जाऊंगी।

विशेष - काल ब्रह्म ने दुर्गा से कह रखा है कि मेरा भेद किसी को नहीं कहना है। इस डर से दुर्गा सर्व जगत् को वास्तविकता से अपरिचित रखती है। ये अपने पुत्रों को भी धोखे में रखते हैं। इसका कारण है कि काल को शाप लगा है एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों का आहार नित्य करने का। इसलिए अपने तीनों पुत्रों से अपना आहार तैयार करवाता है। श्री ब्रह्मा जी के रजगुण से प्रभावित करके सर्व प्राणियों से संतान उत्पति करवाता है। श्री विष्णु जी के सतोगुण से एक-दूसरे में मोह उत्पन्न करके स्थिति अर्थात् काल जाल में रोके रखता है तथा श्री शंकर जी के तमोगुण से संहार करा के अपना आहार तैयार करवाता है।

तीनों प्रभुओं को भी मार कर खाता है तथा नए पुण्य कर्मी प्राणियों में से तीन पुत्र उत्पन्न करके अपना कार्य जारी रखता है तथा पूर्व वाले तीनों ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव चौरासी लाख योनियों तथा स्वर्ग-नरक में कर्म आधार से चक्र लगाते रहते हैं।

➢ *श्री देवी पुराण के उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ '' श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण हैं तथा तीनों नाशवान हैं, अविनाशी नहीं हैं। इन तीनों का पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टंगी) है। यह भी स्पष्ट हुआ कि पवित्र हिन्दु धर्म के धर्म गुरुओं को अपने शास्त्रों का ज्ञान नहीं था। जिस कारण से श्रद्धालुओं को लोक वेद (सुना-सुनाया क्षेत्रीय ज्ञान जो शास्त्र विरूद्ध होता है) सुनाकर भ्रमित किया हुआ है। जो मानव जीवन के लिए घातक है।*

➢ *यह भी स्पष्ट हुआ कि काल रूपी ब्रह्म ही से ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का अन्य रूप धारण करके सभी प्राणियों को भ्रमित रखता है। इसी कारण से भ्रम में पड़कर श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु से कहता है कि मैं तेरा बाप हूँ! श्री विष्णु जी भी ब्रह्मा जी से कहता है मैं तेरा बाप हूँ! तू मेरी नाभि कमल से उत्पन्न हुआ है। वास्तव में गुप्त रूप से काल रूपी ब्रह्म ही सर्व कला बाजी करता है।*

''श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी का युद्ध''

श्री शिव पुराण (विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 अनुवादक दीन दयाल शर्मा, प्रकाशक रामायण प्रैस मुम्बई, पृष्ठ 67 तथा सम्पादक पंडित रामलग्न पाण्डेय ''विशारद'' प्रकाशक सावित्र ठाकुर, प्रकाशन रथयात्रा वाराणसी, ब्रांच - नाटी इमली वाराणसी के विद्येश्वर संहिता अध्याय 6, पृष्ठ 54 तथा टीकाकार डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी साहित्य आयुर्वेद ज्योतिष आचार्य, एम.ए.,पी.एच.डी.,डी.एस. ,सी.ए.। प्रकाशक चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 38 यू.ए., जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, संस्कृत सहित शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता अध्याय 6 पृष्ठ 45 पर)

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी के पास आए। उस समय श्री विष्णु जी लक्ष्मी सहित शेष शैय्या पर सोए हुए थे। साथ में अनुचर भी बैठे थे। श्री ब्रह्मा जी ने श्री विष्णु जी से कहा बेटा, उठ देख तेरा बाप आया हूँ। मैं तेरा प्रभु हूँ। इस पर विष्णु जी ने कहा आओ, बैठो मैं तुम्हारा पिता हूँ। तेरा मुख टेढ़ा क्यों हो गया। ब्रह्मा जी ने कहा - हे पुत्र! अब तुझे अभिमान हो गया है, मैं तेरा संरक्षक ही नहीं हूँ। परंतु समस्त जगत् का पिता हूँ। श्री विष्णु जी ने कहा रे चोर ! तू अपना बड़पन क्या दिखाता है

? सर्व जगत् तो मुझमें निवास करता है। तू मेरी नाभि कमल से उत्पन्न हुआ और मुझ से ही ऐसी बातें कर रहा है। इतना कह कर दोनों प्रभु आपस में हथियारों से लड़ने लगे। एक-दूसरे के वक्षस्थल पर आघात किए। यह देखकर सदाशिव (काल रूपी ब्रह्म) ने एक तेजोमय लिंग उन दोनों के मध्य खड़ा कर दिया, तब उनका युद्ध समाप्त हुआ। (यह उपरोक्त विवरण गीता प्रैस गोरखपुर वाली शिव पुराण से निकाल रखा है। परन्तु मूल संस्कृत सहित जो ऊपर लिखी है तथा अन्य दो सम्पादकों तथा प्रकाशकों वाली शिव पुराण में सही है।)

श्री शिव महापुराण (अनुवाद कर्ता= पं. ज्वाला प्रसाद जी मिश्र प्रकाशक, मुद्रक :- खेमराज, श्री कृष्णदास प्रकाशन मुम्बइ, अध्यक्षः श्री वैंकटेश्वर प्रैस खेमराज कृष्ण दास मार्ग, मुम्बई) के विद्येश्वर संहिता के अध्याय 9 व 10 पृष्ठ 14 से 18 पर लिखा है कि युद्ध कर रहे ब्रह्मा तथा विष्णु के मध्य में जो प्रकाशमय स्तम्भ प्रकट हुआ था। उस के अन्त को न पा कर दोनों थक चुके तब उस स्तम्भ से वह ईश्वर साकार हुआ। उसको देखते ही विष्णु ने कांपते हुए हाथों से उनके चरण पकड़ लिए। कहा मुझे स्तम्भ का अन्त नहीं पाया। ईश्वर बोले वत्स विष्णु आपने सत्य कहा है। इस प्रकार सत्य कहने से शिव विष्णु पर बहुत खुश हुए। अपनी समानता विष्णु को दी। (विद्येश्वर संहिता अध्याय 7 पृष्ठ 14)

ब्रह्मा ने झूठ बोला कि मैंने स्तम्भ का अन्त पा लिया है। इसलिए शिव ने (जो स्तम्भ से प्रकट हुआ था) भैरो की उत्पति की उस से कह कर ब्रह्मा का पांचवा मुख कटा दिया। जिससे ब्रह्मा ने झूठ बोला था। तब उस शिव ने ब्रह्मा तथा विष्णु को कहा कि तुमने अज्ञान से अपने को ईश (प्रभु) माना यह बड़ा अद्भुत हुआ अर्थात् तुम प्रभु नहीं हो। इसी को दूर करने को ही मैं रण स्थान में आया हूँ। मैं इस सब का ईश्वर हूँ यह संसार मेरा है। (विद्येश्वर संहिता अध्याय 9 पृष्ठ 7) फिर विद्येश्वर संहिता अध्याय 10 पृष्ठ 18 पर लिखा है कि शिव बोला हे पुत्रों (ब्रह्मा-विष्णु) आपने यह कृत्य (सृष्टी-स्थिति) अपने तप से प्राप्त किया है। मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है। इसी प्रकार दूसरे दो कृत्य रूद्र तथा महेश को दिए हैं। परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पाने को समर्थ नहीं है। रूद्र संहिता अध्याय 6 पृष्ठ 17 पर लिखा है कि विष्णु ने बारह हजार दिव्य वर्षों तक तप किया। फिर बहुत समय तक दारूण तप किया परन्तु अपने पिता शिव अर्थात् काल ब्रह्म की प्राप्ति नहीं हुई।

विचार करें - श्री शिव पुराण, श्री विष्णु पुराण तथा श्री ब्रह्मा पुराण तथा श्री देवी महापुराण में तीनों प्रभुओं तथा सदाशिव (काल रूपी ब्रह्म) तथा देवी (शिवा-प्रकृति) की जीवन लीलाऐं हैं। इन्हीं के आधार से सर्व ऋषिजन व गुरुजन ज्ञान सुनाया करते थे। यदि कोई पवित्र पुराणों से भिन्न ज्ञान कहता है वह पाठ्य क्रम के विरुद्ध ज्ञान होने से व्यर्थ है।

उपरोक्त युद्ध का विवरण पवित्र शिव पुराण से है, जिसमें दोनों प्रभु पाँच वर्ष के बच्चों की तरह झगड़ रहे हैं। वे कहा करते हैं कि तू मेरा बेटा, दूसरा कहा करता है तू मेरा बेटा, मैं तेरा बाप। फिर एक - दूसरे का गिरेबान पकड़ कर मुक्कों व लातों से झगड़ा करते हैं। यही चरित्र त्रिलोक नाथों का है।

उपरोक्त पुराण के उल्लेख से यह भी सिद्ध हुआ कि (1) ब्रह्मा-विष्णु तथा महेश ईश (प्रभु) नहीं हैं। (2) यह भी सिद्ध हुआ कि ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश से भिन्न चौथा काल ब्रह्म है। ये तीनों उस

काल ब्रह्म अर्थात् सदा शिव के पुत्र हैं। (3) यह भी सिद्ध हुआ कि काल ब्रह्म पहले तप कराता हे फिर उन्हीं के तप के प्रतिफल में इन्हें सृष्टी-स्थिति, संहार का कार्य भार सौंपता है।

यही कारण है कि श्री विष्णु पुराण में चतुर्थ अंश के अध्याय 1 श्लोक 86 (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में पृष्ठ 231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा है ''मद्रूपमास्थाय सृजत्यजो यः स्थितौ च योसौ पुरुषस्वरूपी। रूद्रस्वरूपेण च योति विश्वं धते तथानन्तवपुस्समस्तम् (86)

हिन्दी अनुवाद :- जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है। स्थिती के समय जो पुरूष (विष्णु) रूप है जो रूद्र(शिव) है। रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है एवं अनंत रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।'' (लेख समाप्त)

उपरोक्त पुराणों से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्माजी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी से भी कोई अन्य काल रूपी ब्रह्म इस ब्रह्माण्ड का संचालक है। जिससे तीनों देवता (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) भी अपरिचित हैं केवल लक्षणों से अनुमान लगाकर उसकी स्थिती बताते हैं। कभी-कभी यही काल रूपी ब्रह्म श्री ब्रह्मा जी में प्रेतवत् प्रवेश करके कहता है कि मैं ही सर्व सृष्टी की रचना करता हूँ, मैं ही सर्व रूप (विष्णु, शिव, ब्रह्मा) में स्थिति, संहार तथा सृष्टी करता हूँ। इसलिए पुराणों में दोनों प्रकार का ज्ञान उपलब्ध है। जिसे तत्वज्ञान (शवस्म वेद,जो पांचवां वेद स्वयं पूर्ण परमात्मा ने प्रदान किया है। जो कविगिरः अर्थात् कविर्वाणी/कबीर वाणी नाम से भी जाना जाता है) से ही समझा जा सकता है।

''श्री शिव पुराण के मंथन से निष्कर्ष :-

''शिव महापुराण''

''श्री शिव महापुराण (अनुवादक : श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार। प्रकाशक : गोबिन्द भवन कार्यालय, गीताप्रैस गोरखपुर) मोटा टाइप, अध्याय 6, रूद्रसंहिता, प्रथम खण्ड(सृष्टी) से निष्कर्ष''

अपने पुत्र श्री नारद जी के श्री शिव तथा श्री शिवा के विषय में पूछने पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा (पृष्ठ 100 से 102) जिस परब्रह्म के विषय में ज्ञान और अज्ञान से पूर्ण युक्तियों द्वारा इस प्रकार विकल्प किये जाते हैं, जो निराकार परब्रह्म है वही साकार रूप में सदाशिव रूप धारकर मनुष्य रूप में प्रकट हुआ। सदा शिव ने अपने शरीर से एक स्त्री को उत्पन्न किया जिसे प्रधान, प्रकृति, अम्बिका, त्रिदेवजननी (ब्रह्मा, विष्णु, शिव की माता) कहा जाता है। जिसकी आठ भुजाऐं हैं।

''श्री विष्णु की उत्पत्ति''

जो वे सदाशिव हैं उन्हें परम पुरुष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक (ब्रह्मलोक में तमोगुण प्रधान क्षेत्र) धाम बनाया। उसे काशी भी कहते हैं। शिव तथा शिवा ने पति-पत्नी रूप में रहते हुए एक पुत्र की उत्पत्ति की, जिसका नाम विष्णु रखा। अध्याय 7, रूद्र संहिता, शिव महापुराण (पृष्ठ 103, 104)।

"श्री ब्रह्मा तथा शिव की उत्पत्ति"

अध्याय 7, 8, 9 (पृष्ठ 105-110) श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि श्री शिव तथा शिवा (काल रूपी ब्रह्म तथा प्रकृति/दुर्गा/अष्टंगी) ने पति-पत्नी व्यवहार से मेरी भी उत्पति की तथा फिर मुझे अचेत करके कमल पर डाल दिया। (यही काल महाविष्णु रूप धारकर अपनी नाभि से एक कमल उत्पन्न कर लेता है) ब्रह्मा जी आगे कहता है कि फिर होश में आया। कमल की मूल को ढूंढना चाहा, परन्तु असफल रहा। फिर तप करने की आकाशवाणी हुई। तप किया। फिर मेरी तथा विष्णु की किसी बात पर लड़ाई हो गई। तब हमारे बीच में एक तेजोमय लिंग प्रकट हो गया तथा ओ३म्-ओ३म् का नाद शब्द प्रकट हुआ तथा उस लिंग पर अ-उ-म तीनों अक्षर भी लिखे थे। फिर रूद्र रूप धारण करके सदाशिव पाँच मुख वाले मानव रूप में प्रकट हुए, उनके साथ शिवा (दुर्गा) भी थी।

फिर शंकर को अचानक प्रकट किया (क्योंकि यह तमगुण शिव पहले अचेत था, फिर सचेत करके तीनों को इक्कठे कर दिया) तथा कहा कि तुम तीनों सृष्टी-स्थिति तथा संहार का कार्य संभालो।

रजगुण प्रधान ब्रह्मा जी, सतगुण प्रधान विष्णु जी तथा तमगुण प्रधान शिव जी हैं। इस प्रकार तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल रूपी ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं (पृष्ठ 110 पर)।

सार विचार :- उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि काल रूपी ब्रह्म अर्थात् सदाशिव तथा प्रकृति (दुर्गा) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव के माता पिता हैं। दुर्गा इसे प्रकृति तथा प्रधान भी कहते हैं, इसकी आठ भुजाऐं हैं। यह सदाशिव अर्थात् ज्योति निरंजन काल के शरीर अर्थात् पेट से निकली है। ब्रह्म अर्थात् काल तथा प्रकृति (दुर्गा) सर्व प्राणियों को भ्रमित रखते हैं। अपने पुत्रों को भी वास्तविकता नहीं बताते। कारण है कि कहीं काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्मण्ड के प्राणियों को पता लग जाए कि हमें तप्तशिला पर भून कर काल (ब्रह्म-ज्योति निरंजन) खाता है। इसीलिए जन्म-मृत्यु तथा अन्य दुःखदाई योनियों में पीड़ित करता है तथा अपने तीनों पुत्रों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी से उत्पत्ति, स्थिति, पालन तथा संहार करवा कर अपना आहार तैयार करवाता है। क्योंकि काल को एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है, कृप्या श्रीमद् भगवत गीता जी अध्याय 14 श्लोक 5 में भी देखें 'काल (ब्रह्म) तथा प्रकृति (दुर्गा) के पति-पत्नी कर्म से रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की उत्पत्ति। लिखा है :- प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुण जीवात्मा को शरीर में बांध कर रखते हैं।

श्री शिव महापुराण के लेख ने यह भी सिद्ध कर दिया कि प्रकृति तथा प्रधान भी दुर्गा के ही नाम हैं। यह प्रमाण पाठकों को गीता जी को समझने में सहयोग देगा। गीता अध्याय 14 श्लोक 1 से 5 तक जो प्रधान व प्रकृति शब्द लिखा है वह दुर्गा का संकेत है तथा तीनों गुण भी तीनों प्रभुओं (श्री ब्रह्मा,श्री विष्णु तथा श्री शिव) का बोध है तथा गीता ज्ञान दाता काल रूपी ब्रह्म है। इन दोनों के योग से काल की मानव सृष्टी प्रारम्भ हुई।

''तीनों गुण क्या हैं ? प्रमाण सहित''

➢ *''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म(काल) तथा प्रकृति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''*

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ सं. 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पृष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव(मृत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सृष्टी-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कृत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पृष्ठ 10, श्लोक 42 :-

ब्रह्मा - अहम् महेश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः, के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकृतिः पुराणा(42)।

हिन्दी अनुवाद :- विष्णु जी ने कहा हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकृति तथा सनातनी देवी हो।(42)

पृष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मृत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- शिव पुराण से भी स्पष्ट हुआ ''दुर्गा अर्थात् प्रकृति (जो अष्टांगी भी कहलाती है) त्रिदेव जननी अर्थात् श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण को

उत्पन्न करने वाली माता है। दोनों (काल रूपी ब्रह्म अर्थात् सदाशिव व प्रकृति अर्थात् दुर्गा) के मैथुन से तीनों की उत्पति हुई है। यह भी सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी रजगुण युक्त है, श्री विष्णु जी सतगुण युक्त हैं तथा श्री शिव जी तमगुण युक्त हैं तथा इन तीनों से भिन्न कोई चौथा प्रभु शिव (सदाशिव/काल रूपी ब्रह्म) है। जो एक ब्रह्मण्ड का संचालक है। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव एक ब्रह्मण्ड के भी संचालक (सर्व शक्तिमान) नहीं हैं। श्री देवी पुराण के तीसरे स्कन्द में लिखा है। देवी ने कहा '' ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तुम तीनों अपना-अपना कार्य करो ब्रह्मा जीवों की उत्पति करे, विष्णु स्थिति तथा शिव संहार करे। जब तुम्हारे सामने कोई कठिन कार्य उत्पन्न हो जाए तो तब तुम हम दोनों को (ब्रह्म/काल तथा दुर्गा/प्रकृति) स्मरण करोगे तो मैं आपका कार्य करने के लिए तुरन्त प्रकट हो जाऊँगी।

उपरोक्त विवरण से यह सिद्ध हुआ कि ये तीनों प्रभु सर्वशक्तिमान नहीं हैं।

श्री देवी पुराण में तीसरे स्कन्ध में यह भी लिखा है कि ''श्री विष्णु जी स्वयं स्वीकार कर रहे हैं कि हम तीनों का जन्म (अविर्भाव) तथा मृत्यु (तिरोभाव) होता है। हम नित्य नहीं हैं अर्थात् अविनाशी नहीं हैं।

श्री ब्रह्मा पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) अध्याय '' तपस्तीर्थ, इन्द्रतीर्थ और वृषकतीर्थ एवं अब्जक-तीर्थ महिमा'' पृष्ठ 216 पर अब्जक तीर्थ की महिमा के उल्लेख में लिखा है कि'' एक महाशनि'' दैत्य था जो देवताओं से पराजित नहीं होता था। एक बार सब देवता भगवान विष्णु के पास गये तथा महाशनि राक्षस को मारने की प्रार्थना की'' भगवान विष्णु ने कहा महाशनि दैत्य मेरे लिए अवध्य है अर्थात् मैं (विष्णु) उस महाशनि को नहीं मार सकता। फिर श्री शिव के पास इन्द्र गया तथा महाशनि राक्षस को मारने की प्रार्थना की। भगवान शिव ने कहा मैं अकेला उस महाशिव राक्षस को नहीं मार सकता आप (इन्द्र) तथा तेरी पत्नी शचि भी उस अविनाशी भगवान जनार्दन की अराध्ना करो तब वह महाशनि राक्षस मारा जा सकता है।

''उपरोक्त ब्रह्मा पुराण के विवरण से भी सिद्ध हुआ '' श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी समर्थ नहीं हैं। सर्वशक्तिमान नहीं हैं। यह भी नहीं कह सकते इनमें कोई शक्ति नहीं है। ये भगवान अन्य देवताओं से अधिक शक्तियुक्त हैं तथा काल रूपी ब्रह्म (सदाशिव जिसे महाविष्णु भी कहते हैं) इन्हीं देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) का रूप धारण करके भी कुछ सहायता कर देता है। जिस कारण से इन तीनों देवताओं की महिमा अधिक बन जाती है। इसलिए साधकजन इन्हीं तीनों परमात्माओं पर ही आश्रित रहते हैं। काल रूपी ब्रह्म के जाल को नहीं समझ सके।

श्री शिव पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) ''कोटि रूद्र संहिता'' अध्याय 42 पृष्ठ 555 पर ''शिव, विष्णु, रूद्र और ब्रह्मा के रूप का विवेचन'' ज्यों का त्यों लेख।

ऋषियों ने पूछा :– शिव कौन है? विष्णु कौन है? और ब्रह्मा कौन है? इन सबमें निर्गुण कौन है? हमारे इस संदेह का आप निवारण कीजिए?

सूत जी ने कहा :– महर्षियों! वेद और वेदांत के विद्वान ऐसा मानते हैं कि निर्गुण परमात्मा सर्वप्रथम जो सगुण रूप प्रकट हुआ उसी का नाम शिव है। शिव से पुरूष सहित प्रकृति उत्पन्न हुए। उन दोनों ने मूल स्थान में स्थित जल के भीतर तप किया। वह स्थान पंचक्रोशी काशी के नाम से विख्यात है। जो भगवान शिव को अत्यंत प्रिय है। यह जल सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त था। उस जल का आश्रय ले योगमाया से युक्त श्री हरि वहां सोए। नार अर्थात् जल

को अयन (निवास स्थान) बनाने के कारण फिर ''नारायण'' नाम से प्रसिद्ध हुए और प्रकृति फिर ''नारायणी'' कहलायी। नारायण के नाभि कमल से जिनकी उत्पत्ति हुई वे ब्रह्मा कहलाते हैं। ब्रह्मा ने तपस्या करके जिनका साक्षात्कार किया, उन्हें विष्णु कहा गया। ब्रह्मा और विष्णु के विवाद को शांत करने के लिए निर्गुण शिव ने जो रूप प्रकट किया उसका नाम 'महादेव' है। उन्होंने (महादेव ने) कहा— मैं शम्भु ब्रह्मा जी के ललाट से प्रकट होऊंगा। इस कथन के अनुसार समस्त लोकों पर अनुग्रह करने के लिए जो ब्रह्मा जी के ललाट से प्रकट हुए, उसका नाम ''रूद्र'' हुआ। इस प्रकार रूप सहित परमात्मा सब के चिन्तन का विषय बनने के लिए साकार रूप में प्रकट हुए। वे ही साक्षात् भक्त वत्सल शिव है। (शिव पुराण से लेख समाप्त)

➢ ***उपरोक्त श्री शिव पुराण के लेख से भी स्पष्ट है कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी से भिन्न चौथा महादेव भगवान भी है। वह नारायण कहलाता है। उसकी पत्नी प्रकृति है जो नारायणी कहलाती है। पुराण के वक्ता श्री लोमषहर्षण सूत जी हैं। जिन्होंने अपने गुरुदेव श्री व्यास जी (कृष्णद्वैपायन) से सुना ज्ञान श्री शौनक जी ऋषि को सुनाया है। तत्वज्ञान (स्वसम वेद) के अभाव से सृष्टी उत्पति के ज्ञान से वंचित सर्व ऋषि-महर्षि जन चौथे प्रभु अर्थात् काल रूपी ब्रह्म के विषय में स्थिति स्पष्ट नहीं कर सके घुमा फिरा कर श्री विष्णु जी को या श्री शिवजी को तथा कभी श्री ब्रह्मा जी को परम पुरूष सर्वेश्वर, अजन्मा, सर्व सृष्टी रचनहार, सर्गुण, निर्गुण, व्यक्त, अव्यक्त कह कर स्वयं भी भ्रमित रहे तथा अपने अनुयाईयों को भी अधूरे ज्ञान का पाठ पढ़ा कर अज्ञान पर दृढ़ कर गए। उन्हीं के द्वारा भ्रमाया पवित्र हिन्दु समाज आज सत्य को आँखों देखकर भी स्वीकार करने से कतराता है, सोचता है ''क्या इतने महर्षि जो पूर्व में हो चुके हैं वे अज्ञानी थे। उन्होंने इन पुराणों को ध्यान से क्यों नहीं पढ़ा? उनका क्या स्वार्थ था शास्त्रों में लिखी सच्चाई को छुपाने का? अब आँखों देख व पढ़कर भी हमें विश्वास नहीं हो रहा कि यह जो पुराण हमारे हाथों में हैं वास्तविक हैं या नकली हैं। फिर गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित देख कर संस्य दूर हो जाता है पुराण नकली नहीं हैं। नकली तो वे ऋषि-महर्षि जन थे जो भक्त समाज को भ्रमित ज्ञान दन्त कथा (लोकवेद) सुनाकर उनका अनमोल मानव जीवन नष्ट कर गए। वर्तमान में जो ज्ञान मुझ दास (रामपाल दास) के द्वारा प्रमाण सहित जनता के सामने रखा गया। इससे सर्व स्थिति स्पष्ट होने के कारण प्रभु प्रेमी हड़बड़ा कर जाग रहे हैं। जैसे कोई गहरी नींद में सोया व्यक्ति किसी के ऊंची आवाज लगा कर जगाने से जागता है तथा उठ कर अपने आवश्यक कार्य पर चल पड़ता है। यही कारण है कि चन्द दिनों में लाखों बुद्धिजीवी मानव समाज इस तत्वज्ञान से परिचित होकर शास्त्रविधि अनुसार भक्ति करके मानव जीवन को सफल कर रहे हैं।***

''श्री विष्णु पुराण का मन्थन''

(अनुवादक श्री मुनिलाल गुप्त, प्रकाशक - गोविन्द भवन कार्यालय, गीताप्रैस गोरखपुर)

श्री विष्णुपुराण का ज्ञान श्री पारासर ऋषि ने अपने शिष्य श्री मैत्रेय ऋषि जी को कहा है।

श्री पारासर ऋषि जी ने विवाह होते ही गृह त्याग कर वन में साधना करने का दृढ़ संकल्प किया। उसकी धर्मपत्नी ने कहा अभी तो शादी हुई है, अभी आप घर त्याग कर जा रहे हो। संतान उत्पत्ति करके फिर साधना के लिए जाना। तब श्री पारासर ऋषि ने कहा कि साधना करने के पश्चात् संतान उत्पन्न करने से नेक संस्कार की संतान उत्पन्न होगी। मैं कुछ समय उपरान्त

आपके लिए अपनी शक्ति (वीर्य) किसी पक्षी के द्वारा भेज दूंगा, आप उसे ग्रहण कर लेना। यह कह कर घर त्याग कर वान प्रस्थ हो गया। एक वर्ष साधना के उपरान्त अपना वीर्य निकाल कर एक वृक्ष के पत्र में बंद करके अपनी मंत्र शक्ति से शुक्राणु रक्षा करके एक कौवे से कहा कि यह पत्र मेरी पत्नी को देकर आओ। कौवा उसे लेकर दरिया के ऊपर से उड़ा जा रहा था। उसकी चोंच से वह पत्र दरिया में गिर गया। उसे एक मछली ने खा लिया। कुछ महिनों उपरांत उस मछली को एक मलहा ने पकड़ कर काटा, उसमें से एक लड़की निकली। मलहा ने लड़की का नाम सत्यवती रखा वही लड़की (मछली के उदर से उत्पन्न होने के कारण) मछोदरी नाम से भी जानी जाती थी नाविक ने सत्यवती को अपनी पुत्री रूप में पाला।

कौवे ने वापिस जा कर श्री पारासर जी को सर्व वृतान्त बताया। जब साधना समाप्त करके श्री पारासर जी सोलह वर्ष उपरान्त वापिस आ रहे थे, दरिया पार करने के लिए मलाह को पुकार कर कहा कि मुझे शीघ्र दरिया से पार कर। मेरी पत्नी मेरी प्रतिक्षा कर रही है। उस समय मलाह खाना खा रहा था तथा श्री पारासर ऋषि के बीज से मछली से उत्पन्न चौदह वर्षीय युवा कन्या अपने पिता का खाना लेकर वहीं पर उपस्थित थी। मलाह को ज्ञान था कि साधना तपस्या करके आने वाला ऋषि सिद्धि युक्त होता है। आज्ञा का शीघ्र पालन न करने के कारण शाप दे देता है। मलाह ने कहा ऋषिवर मैं खाना खा रहा हूँ, अधूरा खाना छोड़ना अन्नदेव का अपमान होता है, मुझे पाप लगेगा। परन्तु श्री पारासर जी ने एक नहीं सुनी। ऋषि को अति उतावला जानकर मलाह ने अपनी युवा पुत्री से ऋषि जी को पार छोड़ने को कहा। पिता जी का आदेश प्राप्त कर पुत्री नौका में ऋषि पारासर जी को लेकर चल पड़ी। दरिया के मध्य जाने के पश्चात् ऋषि पारासर जी ने अपने ही बीज शक्ति से मछली से उत्पन्न लड़की अर्थात् अपनी ही पुत्री से दुष्कर्म करने की इच्छा व्यक्त की। लड़की भी अपने पालक पिता मलाह से ऋषियों के क्रोध से दिए शाप से हुए दुःखी व्यक्तियों की कथाऐं सुना करती थी। शाप के डर से कांपती हुई कन्या ने कहा ऋषि जी आप ब्राह्मण हो, मैं एक शुद्र की पुत्री हूँ। ऋषि पारासर जी ने कहा कोई चिंता नहीं। लड़की ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए फिर बहाना किया हे ऋषिवर मेरे शरीर से मछली की दुर्गन्ध निकल रही है। ऋषि पारासर जी ने अपनी सिद्धि शक्ति से दुर्गन्ध समाप्त कर दी। फिर लड़की ने कहा दोनों किनारों पर व्यक्ति देख रहे हैं। ऋषि पारासर जी ने गंगा दरिया का जल हाथ में उठा कर आकाश में फैंका तथा अपनी सिद्धि शक्ति से धूंध उत्पन्न कर दी। अपना मनोरथ पूरा किया। लड़की ने अपने पालक पिता को अपनी पालक माता के माध्यम से सर्व घटना से अवगत करा दिया तथा बताया कि ऋषि ने अपना नाम पारासर बताया तथा ऋषि वशिष्ठ जी का पौत्र (पोता) बताया था। समय आने पर कंवारी के गर्भ से श्री व्यास ऋषि उत्पन्न हुए।

उसी श्री पारासर जी के द्वारा श्री विष्णु पुराण की रचना हुई है। श्री पारासर जी ने बताया कि हे मैत्रेय जो ज्ञान मैं तुझे सुनाने जा रहा हूँ, यही प्रसंग दक्षादि मुनियों ने नर्मदा तट पर राजा पुरुकुत्स को सुनाया था। पुरुकुत्स ने सारस्वत से और सारस्वत ने मुझ से कहा था। श्री पारासर जी ने श्री विष्णु पुराण के प्रथम अध्याय श्लोक संख्या 31, पृष्ठ संख्या 3 में कहा है कि यह जगत विष्णु से उत्पन्न हुआ है, उन्हीं में स्थित है। वे ही इसकी स्थिति और लय के कर्ता हैं। श्री विष्णु पुराण के

प्रथम अंश के अध्याय 2 श्लोक 15-16 पृष्ठ 4 में कहा है कि हे द्विज ! परब्रह्म का प्रथम रूप पुरुष अर्थात् भगवान जैसा लगता है, परन्तु व्यक्त (महाविष्णु रूप में प्रकट होना) तथा अव्यक्त (अदृश रूप में वास्तविक काल रूप में इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में रहना) उसके अन्य रूप हैं तथा 'काल' उसका परम रूप है। भगवान विष्णु जो काल रूप में तथा व्यक्त और अव्यक्त रूप से स्थित होते हैं, यह उनकी बालवत लीला है।

प्रथम अंश के अध्याय 2 श्लोक 27 पृष्ठ 5 में कहा है - हे मैत्रेय ! प्रलय काल में प्रधान अर्थात् प्रकृति के साम्य अवस्था में स्थित हो जाने पर अर्थात् पुरुष के प्रकृति से पृथक स्थित हो जाने पर विष्णु भगवान का काल रूप प्रवृत होता है।

प्रथम अंश के अध्याय 2 श्लोक 28 से 30 पृष्ठ 5 - तदन्तर (सर्गकाल उपस्थित होने पर) उन परब्रह्म परमात्मा विश्व रूप सर्वव्यापी सर्वभूतेश्वर सर्वात्मा परमेश्वर ने अपनी इच्छा से विकारी प्रधान और अविकारी पुरुष में प्रविष्ट होकर उनको क्षोभित किया।।28-29।। जिस प्रकार क्रियाशील न होने पर भी गंध अपनी सन्निधि मात्र से ही प्रधान व पुरुष को प्रेरित करते हैं।

विशेष - श्लोक संख्या 28 से 30 में स्पष्ट किया है कि प्रकृति (दुर्गा) तथा पुरुष (काल-प्रभु) से अन्य कोई और परमेश्वर है जो इन दोनों को पुनर् सृष्टी रचना के लिए प्रेरित करता है।

प्रथम अंश के अध्याय 2 पृष्ठ 8 पर श्लोक 66 में लिखा है वेही प्रभु विष्णु सृष्टा(ब्रह्मा) होकर अपनी ही सृष्टी करते हैं। श्लोक संख्या 70 में लिखा है। भगवान विष्णु ही ब्रह्मा आदि अवस्थाओं द्वारा रचने वाले हैं। वेही रचे जाते हैं और स्वयं भी संहृत अर्थात् मरते हैं। अध्याय 4 श्लोक 4 पृष्ठ 11 पर लिखा है कि कोई अन्य परमेश्वर है जो ब्रह्मा, शिव आदि ईश्वरों के भी ईश्वर हैं। अध्याय 4 श्लोक 14-15, 17, 22 पृष्ठ 11, 12 पर लिखा है। पृथ्वी बोली - हे काल स्वरूप ! आपको नमस्कार हो। हे प्रभो ! आप ही जगत की सृष्टी आदि के लिए ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र रूप धारण करने वाले हैं। आपका जो रूप अवतार रूप में प्रकट होता है उसी की देवगण पूजा करते हैं। आप ही ओंकार हैं। प्रथम अंश के अध्याय 4 श्लोक 50 पृष्ठ 14 पर लिखा है - फिर उन भगवान हरि ने रजोगुण युक्त होकर चतुर्मुख धारी ब्रह्मा रूप धारण कर सृष्टी की रचना की।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि ऋषि पारासर जी ने सुना सुनाया ज्ञान अर्थात् लोकवेद के आधार पर श्री विष्णु पुराण की रचना की है। क्योंकि वास्तविक ज्ञान पूर्ण परमात्मा ने प्रथम सतयुग में स्वयं प्रकट होकर श्री ब्रह्मा जी को दिया था। श्री ब्रह्मा जी ने कुछ वास्तविक ज्ञान तथा कुछ स्वनिर्मित काल्पनिक ज्ञान अपने वंशजों को बताया। एक दूसरे से सुनते-सुनाते ही लोकवेद श्री पारासर जी को प्राप्त हुआ। श्री पारासर जी ने विष्णु को काल भी कहा है तथा परब्रह्म भी कहा है। उपरोक्त विवरण से यह भी सिद्ध हुआ कि विष्णु अर्थात् ब्रह्म स्वरूप काल अपनी उत्पत्ति ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप से करके सृष्टी उत्पन्न करते हैं। ब्रह्म(काल) ही ब्रह्म लोक में तीन रूपों में प्रकट हो कर लीला करके छल करता है। वहाँ स्वयं भी मरता है (विशेष जानकारी के लिए कृप्या पढ़ें 'प्रलय की जानकारी' पुस्तक 'गहरी नजर गीता में' अध्याय 8 श्लोक 17 की व्याख्या में) उसी ब्रह्म लोक में तीन स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान उसमें यही काल रूपी ब्रह्म अपना ब्रह्मा रूप धारण करके रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को साथ रख कर एक रजोगुण प्रधान पुत्र उत्पन्न करता है। उसका

नाम ब्रह्मा रखता है। उसी से एक ब्रह्मण्ड में उत्पत्ति करवाता है। इसी प्रकार उसी ब्रह्म लोक एक सतगुण प्रधान स्थान बना कर स्वयं अपना विष्णु रूप धारण करके रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकति) को पत्नी रूप में रख कर एक सतगुण युक्त पुत्र उत्पन्न करता है। उसका नाम विष्णु रखता है। उस पुत्र से एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों(पृथ्वी, पाताल, स्वर्ग) में स्थिति बनाए रखने का कार्य करवाता है। (प्रमाण शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित अनुवाद हनुमान प्रसाद पौद्दार चिमन लाल गौस्वामी रूद्र संहिता अध्याय 6, 7 पृष्ठ 102-103)

ब्रह्मलोक में ही एक तीसरा स्थान तमगुण प्रधान रच कर उसमें स्वयं शिव रूप धारण करके रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा(प्रकृति) को साथ रख कर पति-पत्नी के व्यवहार से उसी तरह तीसरा पुत्र तमोगुण युक्त उत्पन्न करता है। उसका नाम शंकर(शिव) रखता है। इस पुत्र से तीन लोक के प्राणियों का संहार करवाता है।

विष्णु पुराण में प्रथम अंश के अध्याय 4 तक जो ज्ञान है वह काल रूप ब्रह्म अर्थात् ज्योति निरंजन का है। प्रथम अंश के अध्याय 5 से आगे का मिला जूला ज्ञान काल के पुत्र सतगुण विष्णु की लीलाओं का है तथा उसी के अवतार श्री राम, श्री कृष्ण आदि का ज्ञान है।

- *विशेष विचार करने की बात है कि श्री विष्णु पुराण का वक्ता श्री पारासर ऋषि है। यही ज्ञान दक्षादि ऋषियों से पुरुकुत्स ने सुना, पुरुकुत्स से सारस्वत ने सुना तथा सारस्वत से श्री पारासर ऋषि ने सुना। वह ज्ञान श्री विष्णु पुराण में लिपि बद्ध किया गया जो आज अपने करकमलों में है। इसमें केवल एक ब्रह्मण्ड का ज्ञान भी अधुरा है। श्री देवीपुराण, श्री शिवपुराण आदि पुराणों का ज्ञान भी ब्रह्मा जी का दिया हुआ है। श्री पारासर वाला ज्ञान श्री ब्रह्मा जी द्वारा दिए ज्ञान के समान नहीं हो सकता। इसलिए श्री विष्णु पुराण को समझने के लिए देवी पुराण तथा श्री शिव पुराण का सहयोग लिया जाएगा। क्योंकि यह ज्ञान दक्षादि ऋषियों के पिता श्री ब्रह्मा जी का दिया हुआ है। श्री देवी पुराण तथा श्री शिवपुराण को समझने के लिए श्रीमद् भगवद् गीता तथा चारों वेदों का सहयोग लिया जाएगा। क्योंकि यह ज्ञान स्वयं भगवान काल रूपी ब्रह्म द्वारा दिया गया है। जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी का उत्पन्न कर्ता अर्थात् पिता है। पवित्र वेदों तथा पवित्र श्रीमद् भगवद् गीता जी के ज्ञान को समझने के लिए स्वसम वेद अर्थात् सूक्ष्म वेद का सहयोग लेना होगा जो काल रूपी ब्रह्म के उत्पत्ति कर्ता अर्थात् पिता परम अक्षर ब्रह्म(कविर्देव) का दिया हुआ है। जो (कविर्गीभिः) कविर्वाणी द्वारा स्वयं सतपुरुष ने प्रकट हो कर बोला था। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16 से 20 तक प्रमाण है।)*

श्री ब्रह्मा जी द्वारा बताए ज्ञान व अपने अनुभव के खिचड़ी ज्ञान से विष्णु पुराण का रचियता श्री पाराशर जी तत्व ज्ञान के अभाव से भ्रमित है जिस कारण से घुमा फिरा कर कभी श्री ब्रह्माजी को सर्व सृष्टी रचनहार, सर्व की स्थिति व संहार का कारण लिखा है, कहीं लिखा है श्री विष्णु भगवान ही ब्रह्मा रूप धारण करके सर्व की उत्पति करता है, विष्णु भगवान ही विष्णु रूप से स्थिति करता है तथा शिव रूपधार कर सर्व का संहार करता है। फिर श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश के अध्याय व श्लोक संख्या 55-56 पृष्ठ 32 श्री ब्रह्मा जी ने कहा है - जिसको देवगण, मुनिगण, शंकर और मैं कोई भी नहीं जान सकते वही परमेश्वर श्री विष्णु का परमपद है(55) जिस अभूतपूर्व देव की ब्रह्मा,

विष्णु और शिव रूप शक्तियाँ हैं वही भगवान विष्णु का परम पद है(56)

** उपरोक्त लेख से स्पष्ट है कि ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी से भिन्न कोई अन्य परमात्मा है जिस की शक्ति से ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव कार्य करते हैं। घुमा फिराकर पुराण वक्ता श्री विष्णु को ही सर्व शक्तिमान कहते हैं।*

➢ विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 22 श्लोक 36 में पृष्ठ 101 पर लिखा है ''हे द्विज! काल के बिना ब्रह्मा प्रजापति एवं अन्य समस्त प्राणी भी सृष्टी रचना नहीं कर सकते {अतः भगवान काल रूप विष्णु ही सर्वदा सृष्टी के कारण हैं}(36)

** उपरोक्त लेख में स्पष्ट है कि ''काल रूप विष्णु'' है जो सर्व सृष्टी रचना करता है न कि सत्गुण विष्णु जी। विष्णु पुराण में श्री पाराशर का श्री सतगुण विष्णु को सृष्टी रचना करने वाला बताना ही पुराण वक्ता के अल्पज्ञान का प्रतीक है।*

➢ विष्णु पुराण प्रथम अंश के अध्याय 22 श्लोक 47, 54 से 63 तक पृष्ठ 102-103 पर पुराण ज्ञान वक्ता श्री पारासर जी का विचलित तथा अज्ञान युक्त उल्लेख का प्रमाण है। श्लोक 47 में कहा है कि क्लेश-बन्धन से मुक्त होने के लिए योगाभ्यासी योगी का साध्यरूप जो ब्रह्म है उसी का ज्ञान आवश्यक है। श्लोक 54 में लिखा है कि पाप-पुण्य से रहित भक्त ही उस परब्रह्म का आश्रय लेता है। {इस श्लोक में परब्रह्म को पूर्ण प्रभु बताया है जबकि श्लोक 47 में ब्रह्म ही अन्तिम साध्य अर्थात् पूर्ण परमात्मा कहा है श्लोक 55 में कहा है कि उस ब्रह्म के मूर्त (साकार)} और अमूर्त (निराकार) दो रूप हैं। श्लोक 56 में अक्षर ही वह ब्रह्म (तत् ब्रह्म) हैं और ''क्षर'' सम्पूर्ण जगत् है। श्लोक 57 में पर ब्रह्म को ही ब्रह्म सिद्ध किया है। श्लोक 58 में कहा है ''ब्रह्मा, विष्णु और शिव, ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ है। इनसे न्यून देवगण है तथा उनके अनन्तर दक्षादि प्रजापति गण है श्लोक 59 में कहा है। उनसे न्यून मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष आदि है।

(उपरोक्त विवरण में ब्रह्मा, विष्णु व शिव से भिन्न ब्रह्म अन्य प्रभु लिखा है। फिर श्लोक 62-63 में भी श्री विष्णु भगवान् की स्थिति ब्रह्म से भिन्न कही है)

समीक्षा :- उपरोक्त विष्णु पुराण के विवरण से स्पष्ट है कि सर्व महर्षि जन तत्व ज्ञान से वंचित थे। जिस कारण सर्व भक्त समाज शास्त्रों में लिखे तत्वज्ञान को नहीं समझ सकां वह तत्वज्ञान पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सर्व प्रथम श्री ब्रह्म जी को सुनाया था। काल रूपी ब्रह्म की गुप्त प्रेरणा से श्री ब्रह्मा जी ने उस तत्वज्ञान को स्वीकार नहीं किया। परन्तु उस तत्वज्ञान का निष्कर्ष अपनी बुद्धि से निकाल कर अपने वंशजों (पुत्रों, पौत्रों) को सुनाया जो बाद में पुराणों के रूप में लीपिबद्ध किया गया है। काल रूपी ब्रह्म ने सर्व ऋषियों तथा तीनों देवों (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव) की बुद्धि को सीमित किया हुआ है। वेदों तथा श्री मदभगवत् गीता में सर्व स्थिति स्पष्ट है परन्तु ऋषिजन तथा तीनों प्रभु (रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) अपने द्वारा बनाए लोकवेद (दन्त कथाओं) पर ही आश्रित रहे तथा काल लोक (इक्कीस ब्रह्माण्डों) के प्राणियों को भी उसी पर आश्रित रखा। जबकि श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में सर्व प्रभुओं की स्थिति स्पष्ट की है परन्तु उस गुप्त ज्ञान को अर्थात् तत्वज्ञान को कोई तत्वदर्शी सन्त ही बताता है। जिसके

विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में लिखा है। उस तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है कहा है कि ''जो संसार रूपी उल्टे लटके वृक्ष के सर्व अंगों का भिन्न-2 वर्णन करेगा वह वेदवित् (वेद के तात्पर्य को जानने वाला अर्थात् तत्वदर्शी सन्त) होगा।

संसार रूपी वृक्ष की विस्तृत जानकारी कृप्या निम्न पढ़ें जिसे श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी व अन्य महर्षि जन नहीं जानते। जबकि वह विवरण पवित्र सद्ग्रन्थों में विद्यमान है। प्रत्येक युग की भांति पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) ने कलयुग में सर्वप्रथम स्वयं प्रकट होकर सन् 1398 से 1518 तक पृथ्वी पर अतिथि रूप में कुछ वर्ष रह कर तत्वज्ञान बताया था।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन उसकी डार।
तीनों देवा शाखा है, पात रूप संसार।।

परमेश्वर कबीर जी ने उसे कविर्गिभिः अर्थात् कविरवाणी द्वारा बताया है कि संसार रूपी वृक्ष जो जमीन से ऊपर दिखाई देता है। उसका जो भाग जमीन से तुरन्त बाहर है वह तना कहलाता है उसे तो अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने की एक मोटी डार को क्षरपुरूष अर्थात् ब्रह्म जानों। उस डार की तीन शाखाओं को तीन देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तम्गुण शिव) जानों। उन तीनों शाखाओं पर लगे पते संसार के अन्य प्राणी जानों तथा उस संसार रूपी वृक्ष की जड़े (मूल) परम अक्षर पुरूष अर्थात् पूर्ण ब्रह्म जानों। उस विवरण का वर्णन पवित्र गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में है। परन्तु अब तक इस दास (रामपाल दास) के अतिरिक्त कोई नहीं जान सका। केवल पूर्ण परमात्मा ही जानता है। उसने इस तत्वज्ञान (मूल ज्ञान) को अब तक (सन् 2006 तक) गुप्त रखना था।

''श्री विष्णु पुराण में लिखा ज्ञान''

➢ *श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश के अध्याय 1 श्लोक 12 से 21 तक पृष्ठ 2 पर लिखा है :- श्री पाराशर जी के पिता श्री शक्ति ऋषि को ऋषि विश्वामित्र की प्रेरणा से राक्षसों ने खा लिया था। श्री पाराशर ने राक्षसों को नष्ट करने के लिए एक यज्ञ प्रारम्भ किया। जिसमें सैकड़ों राक्षस जल कर नष्ट हो गए। तब श्री पाराशर जी के दादा श्री वशिष्ठ जी ने पाराशर को समझाया बेटा तुम्हारे पिता जी के लिए तो ऐसा ही होना था। क्रोध तो मूर्खों को ही हुआ करता है, विचारवानों को भला कैसे हो सकता है? हे प्रियवर! क्रोध तो मनुष्य के अत्यन्त कष्ट से संचित यश और तप का भी प्रबल नाशक है। हे तात! इस लोक और परलोक दोनों को बिगाड़ने वाले क्रोध का महर्षिगण सर्वदा त्याग करते हैं। इसलिए तू इसके वशिभूत मत हो। अपने इस यज्ञ को समाप्त करो। साधुओं का धन जो सदा क्षमा ही है। महात्मा दादा जी के इस प्रकार समझाने पर श्री पाराशर जी ने वह राक्षसों को नष्ट करने वाला यज्ञ समाप्त कर दिया।*

फिर श्लोक 22 से 31 तक में पृष्ठ 2-3 पर लिखा है कि ऋषि पुलस्त्य व महर्षि वशिष्ठ जी का कहा हुआ ज्ञान उन्हीं के आशीर्वाद से मुझे (पाराशर को) याद आ गया। ऋषि पाराशर जी ने अपने शिष्य मैत्रेय ऋषि जी को यह विष्णु पुराण सुनाया। हे मैत्रेय! यह जगत् विष्णु से उत्पन्न हुआ है। उन्हीं में स्थित है वे ही इसकी स्थिति और लय के कर्ता है। यह जगत् भी वे ही हैं।

➢ *विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के अध्याय 5 के श्लोक 1 से 10 तक में पृष्ठ 252 पर लिखा है कि :- इक्ष्वाकु का जो निमि नामक पुत्र था। उसने एक सहस्त्र (एक हजार) वर्ष तक लगातार यज्ञ करने का निर्णय लिया। इसके लिए श्री वशिष्ठ ऋषि को होता होने की प्रार्थना की। वशिष्ठ जी ने कहा मैंने इन्द्र को यज्ञ करने की स्वीकृति दे रखी है। वह यज्ञ पांच सौ वर्षों तक चलेगा। उसके पश्चात् मैं तेरा ऋत्विक् (होता) हो जाऊँगा। उनके ऐसा कहने पर राजा निमि ने कोई उत्तर नहीं दिया। वशिष्ठ जी ने यह समझ कि राजा ने उनका कथन स्वीकार कर लिया है। इन्द्र का पाँच सौं वर्षों में समाप्त होने वाला यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। किन्तु राजा निमि ने भी ऋषि गौतम आदि अन्य होताओं से अपना यज्ञ प्रारम्भ करा दिया।*

इन्द्र का यज्ञ समाप्त करके वशिष्ठ मुनि राजा निमि के घर आए तो वहाँ पर गौतम ऋषि को होता का कर्म करते देख कर वशिष्ठ ऋषि ने राजा निमि को शाप दे दिया कि तेरी मृत्यु होगी। उस समय राजा निमि सो रहा था। जागने पर पता चला कि वशिष्ठ ने मेरी मृत्यु का शाप दिया है। राजा ने वशिष्ठ ऋषि को शाप दे दिया कि तेरी भी मृत्यु होगी। दोनों की मृत्यु हो गई। वशिष्ठ मुनि का लिंग शरीर मित्रावरूण के वीर्य में प्रविष्ट हुआ। एक उर्वशी को देखने से मित्रवरूण का वीर्य स्खलित हुआ। जो पास एक घड़ें में गिरा उस घड़ें से वशिष्ठ वाली आत्मा को पुनः शरीर प्राप्त हुआ।

इस प्रकार वशिष्ठ ने पुनर् शरीर धारण किया। विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के अध्याय 4 श्लोक 38 से 72 तक में पृष्ठ 247 से 249 पर उपरोक्त विवरण लिखा हैं। एक इक्ष्वाकु वंश में मीत्रसह नामक राजा था। उसने वशिष्ठ जी जो कि उसका कुल गुरु था, से यज्ञ कराया। एक मृग रूपधारी राक्षस को राजा ने जंगल में मारा था। वह राक्षस रूप धारकर मृत्यु को प्राप्त हुआ था। उस राक्षस का साथी भी वहीं मृग रूप धारण किए था। उसने अपने साथी का बदला लेने की कसम खाई तथा अर्न्तध्यान हो गया। यज्ञ के सम्पूर्ण होने पर वशिष्ठ जी घुमने के लिए बाहर गए। पीछे से वह मृग राक्षस वशिष्ठ का रूप धारण करके आया तथा राजा मीत्रसह (सौ दास) से बोला मेरे खाने के लिए नर मांस तैयार कराओ में अभी आता हूँ। राजा ने आज्ञा का पालन किया। वशिष्ठ जी के आने पर राजा ने उन्हें नर मांस सोने के पात्र में रख कर दिया। ऋषि वशिष्ठ ने सोचा इस राजा को मान हो गया है इसलिए इसने मेरे को जानबूझ कर नर मांस खाने को दिया है। तब वशिष्ठ जी ने क्रोध के कारण क्षुब्धचित होकर राजा को शाप दे दिया कि तू राक्षस हो जाएगा तथा नर मांस खाया करेगा। राजा ने कहा गुरु जी आपने ही तो कहा था नर मांस तैयार करने को। तब वशिष्ठ जी ने ध्यान द्वारा सर्व कारण जानकर राजा को निर्दोष जानकर कहा तूने केवल बारह वर्ष नर मांस खाना होगा अर्थात् 12 वर्ष राक्षस रहेगा। फिर ठीक हो जाएगा। तब तक राजा शिष्य ने अपने गुरु को शाप देना चाहा तब उसकी पत्नी के कहने पर शाप नहीं दिया। एक दिन एक ब्राह्मण ऋषि अपनी पत्नी से विलास कर रहा था। उस राजा से राक्षस बने मित्रसह राक्षस ने उसको खा लिया। ब्राह्मणी के कहने से भी नहीं छोड़ा तो ब्राह्मणी ने राजा को शाप दे दिया कि तू जब भी अपनी पत्नी का संग करेगा। उसी दिन तेरी मृत्यु हो जाएगी। बारह वर्ष पश्चात् जब राजा शाप मुक्त हुआ। अपनी पत्नी का संग करना

चाहा तो रानी ने उसे ब्राह्मणी का शाप याद दिलाया राजा ने उसी दिन से स्त्री-सम्भोग त्याग दिया। राजा पुत्रहीन था। कुल गुरु वशिष्ठ ऋषि ने उसकी पत्नी के गर्भाधान किया। जिससे उसकी पत्नी ने अश्मक नामक पुत्र को जन्म दिया। उसी वशिष्ठ जी के वीर्य से उत्पन्न अश्मक से ही आगे उसी कुल में राजा दशरथ तथा श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत आदि उत्पन्न हुए। श्री विष्णु पुराण श्लोक 73 से 94 तक पृष्ठ 249-250 पर।

समीक्षा :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है -

पंडित और मसालची, दोनों सूझें नाय। औरन को करें चानना, रहें आप अंधेरे माय।।

अनुवाद :- स्वसम वेद की वाणी का :- परमेश्वर कबीर जी कह रहे हैं मसालची (पुराने समय में नाटक मण्डली को रात्री में रोशनी के लिए एक तीन फुट लम्बे दण्ड/डण्डे के एक सिरे पर कपड़ा लपेट कर उसके ऊपर मिट्टी का तेल डालकर प्रज्वलित करते थे। उसे एक व्यक्ति हाथ से पकड़ कर अपने हाथ को ऊपर उठाए रखता था। ताकि दूर तक रोशनी हो जाए। उस कारण से उस मसाल पकड़े हुए व्यक्ति अर्थात् मसालची के ऊपर अन्धेरा रहता था। अन्य के ऊपर प्रकाश रहता है। इसी की तुलना पंडित अर्थात् विद्वान से की है कहा है कि पंडित अन्य को सद्उपदेश देता है परन्तु स्वयं उस का अनुशरण नहीं करता)

उपरोक्त विष्णु पुराण के लेख में श्री वशिष्ठ जी पंडित अपने पौत्र पाराशर को कह रहे हैं कि पंडित को क्रोध नहीं करना चाहिए। क्रोध तो मुर्खों को ही हुआ करता है। विचारवानों (पंडितों) को भला कैसे हो सकता है। क्रोध तो मनुष्य के तप और यश को नष्ट कर देता है। स्वयं वशिष्ठ जी ने अपने उपदेश का अनुशरण नहीं किया। पृष्ठ 252 के उपरोक्त लेख में ''राजा निमि को ऋषि गौतम से यज्ञ कराते देख कर अति क्रोधित होकर वशिष्ठ जी ने राजा निमि को मृत्यु का शाप दे दिया। जिससे राजा की मृत्यु हो गई। इसी प्रकार पृष्ठ 247 से 249 पर राजा मित्रसह (सौदास) को क्रोध वश शाप दे दिया कि तू राक्षस होगा। मनुष्य का मांस खाएगा।

उपरोक्त विवरण के मंथन से निष्कर्ष निकला कि -

कबीर कहते हैं करते नहीं, मुह से बड़े लबार।
जमपुर धक्के खाऐंगे, धर्मराय दरबार।।
कबीर करनी तज कथनी कथें, अज्ञानी दिन रात।
कुकर ज्यूं भौंकत फिरें, सुनि-सुनाई बात।।

उपरोक्त दोनों साखियों का भावार्थ है कि एक दूसरे से ज्ञान ग्रहण करके ज्ञानी (पंडित) बनकर अन्य को शिक्षा देते फिरते हैं स्वयं अनुशरण नहीं करते। जैसे कुत्ता भौंकता फिरता है। ऐसे उस पंडित की स्थिति हो जा स्वयं ज्ञान का अनुशरण नहीं करता। फिर वह जमपुर अर्थात् यमलोक में नरक में गिरता है। ऐसी स्थिति महर्षि वशिष्ठ जी व पाराशर जी आदि ऋषियों की है।

उपरोक्त विवरण में यह भी लिखा है कि वशिष्ठ जी की मृत्यु राजा निमि के शाप से हो गई थी। वशिष्ठ का लिंग शरीर मित्रावरूण के वीर्य में प्रविष्ठ हुआ। उर्वशी को देखने से मित्रावरूण का वीर्य स्खलित हुआ। उस से वशिष्ठ जी को पुनर् शरीर प्राप्त हुआ। कबीर

परमेश्वर द्वारा बताए तत्वज्ञान के आधार से सन्त गरीबदास जी ने कहा है।

लिंग शरीर मोक्ष नहीं भाई। आगे जा कर देह उठाई।

भावार्थ है कि जिस साधक का सुक्ष्म शरीर साधना से चार्ज (शक्ति युक्त) हो जाता है। वह लिंग शरीर बन जाता है। जिस कारण से उसके मानव शरीर का समय अधिक बन जाता है। किसी कारण से मृत्यु हो जाती है तो फिर मानव शरीर प्राप्त हो जाता है। उसमें भक्ति से संचित शक्ति भी विद्यमान रहती है। वह व्यक्ति फिर किसी को शाप देकर किसी को आशीर्वाद देकर अपने पूर्व संचित भक्ति धन को नष्ट कर जाता है। अनुयाईयों को शास्त्रविरूद्ध साधना बता कर पाप का भागी हो जाता है। जिस कारण से उसकी बैट्री डिस्चार्ज (भक्ति शक्ति रहित शरीर हो जाता है) हो जाती है। जिस कारण से चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाता है ततपश्चात् नरक में गिरता है। क्योंकि लिंग शरीर बनने मात्र से मोक्ष नहीं होता। वह मोक्ष मार्ग तो तत्वज्ञान द्वारा पूर्ण सन्त (तत्वदर्शी सन्त) से सारनाम प्राप्त करके ही सम्भव है अन्यथा नहीं। जो ऋषियों व देवताओं, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवजी को भी प्राप्त नहीं है। वह तत्वज्ञान व वास्तविक मोक्ष प्राप्ति का मार्ग परमेश्वर कबीर जी के व पूज्य गुरुजी के आशीर्वाद से मुझ दास (रामपाल दास) के पास हैं। निःशुल्क प्राप्त करें। इसलिए परम पूज्य कबीर परमेश्वर जी कहते हैं :-

सुर नर मुनि जन तैतीस करोड़ी, बन्धे सभी निरंजन डोरी।

भावार्थ :- तैतीस करोड़ देवता, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव सहित सर्व तत्वज्ञान के अभाव से ब्रह्म तक की भक्तिकरके इसी से मिलने वाला अल्प लाभ प्राप्त करके इसी निरंजन (काल) की डोरी अर्थात् परम्परा से बंधे हैं। उनको पूर्ण परमात्मा की भक्ति के पूर्ण मोक्ष मार्ग का ज्ञान नहीं है। जैसे गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा अध्याय 2 श्लोक 12 तथा अध्याय 8 श्लोक 13 व 5 तथा 7 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म (जिसे ज्योति निरंजन भी कहते हैं। जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवजी के पिता जी हैं) ने कहा है कि मेरा एक ओं अक्षर है उच्चारण करके जाप करने का जिस कारण से साधक मुझे प्राप्त होता है। परन्तु मेरा तथा मेरे साधक का पूर्ण मोक्ष नहीं हो सकता। परम शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती। क्योंकि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं तू नहीं जानता मैं जानता हूँ। मैं, तू तथा ये राजा व सर्व सैनिक पहले भी जन्में थे। वर्तमान में भी हैं आगे भी जन्म तथा मृत्यु होती रहेगी। फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 34, अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा अध्याय 8 श्लोक 8 से 10 व 18 तथा श्लोक 62 व 66 में कहा है कि यदि तूझे पूर्ण मोक्ष व परम शान्ति प्राप्त करनी है तो सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा जिस की कृपा से तू परम शान्ति तथा शाश्वत स्थान अर्थात सतलोक को प्राप्त होगा। उसके लिए तत्वदर्शी सन्त की खोज कर। फिर उसके बताए अनुसार साधना पर लग कर इस परम पद अर्थात् सत्यलोक की खोजकर जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर इस संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त करते हैं। पवित्र गीता जी चारों पवित्र वेदों का सारांश है। जिसमें स्पष्ट है कि (1) ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष,(2) परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष (3) पूर्ण ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर पुरूष = परम अक्षर ब्रह्म तथा रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव सर्व भिन्न-2

प्रभु हैं। परन्तु कोई भी ऋषि व देवता इस रहस्य को नहीं समझ सका। प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि हे भगवन्! जिस तत् ब्रह्म का आपने अध्याय 7 श्लोक 29 में विवरण कहा है कि जिस के जानने के पश्चात् तथा सम्पूर्ण अध्यात्मिक ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान को समझने के पश्चात् साधक संसार की किसी वस्तु की इच्छा नहीं करता व केवल जन्म व मृत्यु से ही छुटकारा पाने अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्ति का ही प्रयास करता है। कृप्या बताईए (किंम् तत् ब्रह्म) वह ब्रह्म अर्थात् वह अन्य परमात्मा जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न है, कौन है? इसका उत्तर गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में दिया है कहा है कि वह परम अक्षर ब्रह्म है। इसी क्रम में इसी अध्याय 8 श्लोक 5, 7 तथा 13 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना की जानकारी दी है तथा अध्याय 8 के ही श्लोक 8 से 10 व 20 से 22 में उस परम अक्षर ब्रह्म के विषय में कहा है। जो मेरी (गीता ज्ञान दाता की) साधना अनन्य मन से करेगा तो मुझे प्राप्त होगा। मुझे प्राप्त प्राणी को पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं होगा। अध्याय 8 श्लोक 8 से 10 में कहा है कि जो साधक परम दिव्य पुरूष अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की साधना करेगा तो उसी को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में स्पष्ट किया है। कि यदि तूने उस परमात्मा की शरण में जाना है तो मेरे सत्र की साधना (ॐ मन्त्र का जाप आदि की कमाई) मुझ मैं त्याग कर उस (एकम्) एक परमात्मा अर्थात् जिसके तुल्य अन्य नहीं है। उस सर्वशक्तिमान की (शरणम्) शरण में (व्रज) जा। फिर मैं (गीता ज्ञान दाता काल रूपी ब्रह्म) तुझे छोड़ दूंगा।

नोट :- श्री मद्भगवत गीता जी का हिन्दी अनुवाद कर्ताओं को तत्वज्ञान नहीं था। जिस कारण से इस अध्याय 18 श्लोक 66 का विपरीत अर्थ किया है। व्रज का अर्थ ''जाना'' होता है अनुवाद कर्ताओंने व्रज का अर्थ आना किया है। जो गलत है। इसी कारण से पूरा हिन्दू समाज शास्त्र विरूद्ध ज्ञान से ओत-प्रोत है। वर्तमान में तत्वज्ञान को सुनकर आँखों देख कर भी स्वीकार करने में कतराता है।

पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मन्त्र 1 से 5 में भी (1) ब्रह्म अर्थात् विराट (2) परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष (3) पूर्ण ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म का भिन्न-2 वर्णन है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 में 17 मन्त्र हैं। जिनमें पूर्वोक्त गीता जी वाला ही ज्ञान वर्णित है। अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में कहा है कि पूर्ण ज्ञान के लिए (धीराणाम्) तत्वदर्शी सन्तों से पूर्ण ज्ञान सुनों उनका ज्ञान टिकाऊ है अर्थात् पूर्ण रूप से संस्य रहित है। मन्त्र 15 में कहा है मेरा (वेद ज्ञानदाता का) तो ओम् मन्त्र है इसका काम करते-2 स्मरण कर विशेष कसक (लगन) के साथ स्मरण कर तथा मनुष्य जन्म का मूल कार्य जानकर स्मरण कर जिसके मृत्यु प्रयन्त स्मरण करते रहने से लिंग शरीर बन जाएगा अर्थात् सुक्ष्म शरीर अमर हो जाएगा। फिर भक्ति शक्ति क्षीण होने पर अन्य प्राणियों की योनियों में जाएगा। मन्त्र 16 में कहा है कि जो पूर्ण सन्त (तत्वदर्शी सन्त जिसका वर्णन मन्त्र 10 व 13 में किया है) से प्राप्त करके साधना करने से साधक पाप रहित होकर शुद्ध स्वर्ण के समान बहुमूल्य हो जाता है। मन्त्र 17 में पूरे यजुर्वेद का निष्कर्ष दिया है कि जो शुद्ध स्वर्ण तुल्य पाप रहित साधक है वह उस पूर्ण परमात्मा के पास चला जाता है जो ऊपर परोक्ष

है अर्थात् गुप्त है। मेरा (वेद ज्ञानदाता का) ओ३म् नाम है इसे स्मरण करने वाला मेरे पास स्वर्ग में आ जाता है। गीता अध्याय 18 श्लोक 63 में कहा है कि मैंने यह गीता ज्ञान आपको बता दिया है। अब जैसा तुझे उचित लगे कर। मेरी शरण में रहना है तो मेरा भजन भी कर और युद्ध भी कर (गीता अध्याय 8 श्लोक 7) मुझे ही प्राप्त होगा। जन्म-मृत्यु तेरी भी मेरी भी सदा होती रहेगी (गीता अध्याय 4 श्लोक 5 अध्याय 2 श्लोक 12)। यहाँ पर (ब्रह्म के लोक में अर्थात् गीता ज्ञान दाता के लोक में) कोई भी जीव पूर्ण शान्त नहीं है। सर्व को कोई न कोई अशान्ति बनी रहती है। इसलिए गीता ज्ञान दाता प्रभु ने कहा है कि यदि तुझे परमशान्ति चाहिए तो उस पूर्ण परमात्मा की शरण में जा उसी की कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा शाश्वत स्थान अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त करेगा। (प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 62) गीता ज्ञान दाता (काल रूपी ब्रह्म) ने यह भी स्पष्ट किया है कि हे अर्जुन! आप को एक और अति गोपनीय से भी गोपनीय भेद बताऊंगा कि जिस पूर्ण परमात्मा के विषय में अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है यह पूर्ण परमात्मा मेरा भी इष्ट देव (पूज्य देव) है। (प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 64 में) ऋषि जनों ने वेदों में लिखे ओ३म् मन्त्र को पूर्ण परमात्मा की साधना का मन्त्र समझ कर घोर तप किया परन्तु अन्त में सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। ब्रह्म रूपी काल ने प्रतिज्ञा की है कि मेरे वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार कोई भी किसी भी साधना जो वेदों में वर्णित है से नहीं कर सकता क्योंकि मेरा यह अनुत्तम (घटिया) अटल नियम है कि मैं किसी के समक्ष नहीं आता ये बुद्धिहीन जन समुदाय मुझे व्यक्तिरूप में (कृष्ण रूप में) आया मान रहे हैं (प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25)। मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) पृष्ठ 113 पर लिखा है ''जिनके सब ओर चरण, मस्तक और कण्ठ हैं, जो विश्व के स्वामी तथा विश्व को उत्पन्न करने वाले हैं, उन विश्व रूपी परमात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन करके उनकी प्राप्ति के लिए परम पुण्यमय 'ॐ' इस एकाक्षर मन्त्र का जाप करें। उसी का अध्ययन करें।

उपरोक्त विचार ऋषि दत्तात्रेय जी के हैं तथा ऋषि मार्कण्डेय जी भी इसी ज्ञान के समर्थक हैं। इसीलिए तो इस ज्ञान को सत्य मान कर अपने शिष्य जैमिनी ऋषि को अर्लक और दत्तात्रेय की वार्ता सुना रहे हैं। इसी पृष्ठ पर लिखा है कि (ओंकार) प्रणव मन्त्र तो धनुष जानों, आत्मा बाण है तथा ब्रह्म को प्राप्त करना है वेधना है।

भावार्थ है कि ब्रह्म उपास्य, अराध्य देव कहा है। फिर इसी पृष्ठ पर कहा है कि ''ये ओंकार नामक अक्षर परब्रह्म स्वरूप है'' विवेचना :- उपरोक्त मार्कण्डेय पुराण के ज्ञान से स्पष्ट है कि मार्कण्डेय जी तथा दत्तात्रेय आदि सर्व ऋषियों को परमेश्वर के विषय में ज्ञान शुन्य था। एक बार तो कह रहे हैं कि विश्व रूपी परमात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन करके फिर उनकी प्राप्ति के लिए ॐ इस एक अक्षर का जाप करें। इसी का अध्ययन करें। विचार करें जब परमात्मा का प्रत्यक्ष दर्शन साधना से पहले ही हो गया। तो उसकी प्राप्ति हो गई। फिर उनकी प्राप्ति के लिए ॐ एक अक्षर के जाप की क्या आवश्यकता रही। फिर कहा है कि ''ॐ अक्षर का ही अध्ययन करें।'' ध्यान करें कहें तो भी चलेगा। अध्ययन करना कहना भी अल्पज्ञता है। फिर इसी पृष्ठ पर ब्रह्म को साध्य प्रभु कहा है। फिर इसी ब्रह्म को ही परब्रह्म भी कहा है। इससे स्वसिद्ध है

कि पुराणों के ज्ञान वक्ता ऋषिजन तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी तथा अन्य सर्व देवता तत्वज्ञान हीन थे। किसी को भी परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं है न भक्ति विधि की वास्तविक जानकारी है। जबकि पवित्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में स्पष्ट कहा है कि पूर्ण परमात्मा की साधना का ॐ-तत्-सत् ये तीन मन्त्र का जाप है जो तीन विधि से स्मरण करने का निर्देश है। सृष्टी की आदि में विद्वान जन इसी विधि से साधना करते थे।

यही प्रमाण सामवेद संख्या 822 में जो ऋषियों को आज तक ज्ञान नहीं।

''श्री विष्णु पुराण में बच्चों से भी निम्न ज्ञान''

विष्णु पुराण से लेख :- विष्णु पुराण प्रथम अंश के अध्याय 5 श्लोक 31 से 43 में पृष्ठ 17-18 पर लिखा है :- श्री पाराशर जी ने कहा है कि मैत्रेय! सृष्टी की रचना की कामना से प्रजापति के युक्तचित होने पर तमोगुण की वृद्धि हुई उनकी जांघ से असुर उत्पन्न हुए। जब ब्रह्मा प्रतापति ने वह शरीर छोड़ दिया। वह तमोमय शरीर रात्री हुआ। अन्य देह धारण करके सृष्टी की कामना की तो उनके मुख से देवगण उत्पन्न हुए। वह छोड़ा हुआ शरीर दिन हुआ। फिर शरीर धारण किया तो पितृगण उत्पन्न हुए वह शरीर भी ब्रह्मा जी ने त्याग दिया वह छोड़ा हुआ शरीर दिन और रात्री के बीच स्थित संध्या हुई। तत्पश्चात फिर शरीर धारण किया उससे रज-प्रधान मनुष्य उत्पन्न हुए फिर वह शरीर भी छोड़ दिया। वह छोड़ा हुआ शरीर पूर्व संध्या अर्थात् प्रातः काल हुआ। फिर ब्रह्मा जी ने अन्य शरीर धारण किया उससे क्षुधा उत्पन्न हुई। क्षुधा से काम की उत्पत्ति हुई फिर ब्रह्मा जी ने अंधकार (अंधेरे) में स्थित होकर क्षुधाग्रस्त सृष्टी की रचना की जिससे बड़े-2 कुरूप और दाढ़ी मूछों वाले व्यक्ति उत्पन्न हुए। वे ब्रह्मा जी को खाने को दौड़ें। उन्हीं में से कुछो ने कहा ''ऐसा मत करो, इसकी रक्षा करो'' वे ''राक्षस'' कहलाए जिन्होंने कहा हम इसे खाऐंगे ''वे यक्ष कहलाए''।

समीक्षा :- उपरोक्त ज्ञान से साधारण व्यक्ति भी समझ जाएगा कि इन ऋषि भगवानों को कैसा ज्ञान था। पवित्र हिन्दु समाज के श्रद्धालु इन पुराणों को श्रद्धा से मोल लेकर घरों में रखते हैं। परन्तु इन पुराणों के पढने से ज्ञान हानि हो सकती है वृद्धि नहीं। पूर्व के महर्षियों को भूगोल व खगोल का भी ज्ञान नहीं कि दिन-रात और प्रातः काल तथा संध्या कैसे बनती हैं? उन्हीं के बताए वेद विरूद्ध भक्ति मार्ग को पवित्र हिन्दु समाज स्वीकार करके अपने मानव शरीर को नष्ट कर रहा है।

''ऋषियों का बर्ताव साधारण व्यक्तियों से भी अनुत्तम''

उदाहरण :- (1) श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 5 श्लोक 1 से 30 में पृष्ठ 174-176 तक लिखा है :- व्यास मुनि के शिष्य वैश्म्पायन ने यजुर्वेद की 27 शाखाओं की रचना की, उन्हें अपने शिष्यों को पढ़ाया एक समय सर्व ऋषियों ने एक सम्मेलन करने की तिथि रखी तथा कहा कि जो ऋषि वहाँ इस समय तक नहीं पहुँचेगा उसे ब्रह्महत्या लगेगी। वैश्म्पायन ने उसकी अवहेलना की। वैश्म्पायन का भान्जा उसके चरण छू रहा था, वैश्म्पायन ऋषि ने उस अपने भान्जे की हत्या कर दी। फिर अपने शिष्यों से कहा कि इस ब्रह्महत्या को दूर करने के

लिए व्रत का अनुष्ठान करो। वैश्म्पायन ऋषि का एक याज्ञवल्क्य नामक ऋषि शिष्य पूर्ण रूप से सर्म्पण था। उसने कहा कि गुरु जी अन्य शिष्य तो निस्तेज (शक्तिहीन) हैं। मैं अकेला ही व्रत का अनुष्ठान करूंगा। इससे गुरु वैश्म्पायन जी ने क्रोधित होकर महामुनि याज्ञवल्क्य से कहा ''अरे ब्रह्माणों का अपमान करने वाले! तूने मुझ से जो कुछ पढ़ा है वह त्याग दे। याज्ञवल्क्य ने कहा मुझे भी आपसे कोई प्रयोजन नहीं है। ऐसा कह कर महामुनि याज्ञवल्क्य ने रूधिर भरा हुआ मूर्तिमान यजुर्वेद वमन (उल्टी) करके उन्हें दे दिया तथा वहाँ से चला गया। याज्ञवल्क्य द्वारा उल्टी (वमन) की हुई उन यजुः की श्रुतियों को वैश्म्पायन ऋषि जी के अन्य शिष्यों ने तीतर बन कर ग्रहण कर लिया। इसलिए वे तैतिरीय कहलाये। पश्चात् याज्ञवल्क्य महामुनि ने यजुर्वेद की प्राप्ति के लिए ''सूर्य भगवान'' की स्तुति की सूर्य ने अश्व (घोड़ा) रूप में प्रकट होकर कहा मांगों क्या मांगते हो? ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने कहा हे वाजी रूप आदित्य! आप मुझे यजुर्वेद की वे श्रुतियाँ दिजिए जिनको मेरे गुरु वैश्म्पायन जी भी नहीं जानते हों। सूर्य ने वाजी (घोड़ा) रूप धारण करके यजुर्वेद की वे श्रुतियाँ याज्ञवल्क्य को दी। जिन्हें वैश्म्पायन जी भी नहीं जानते थे। जिन यजुर्वेद की श्रुतियों का उपदेश सूर्य भगवान ने वाजी रूप धारण करके याज्ञवल्क्य को दिया फिर याज्ञवल्क्य से अन्य ने ग्रहण किया। वे वाजी नाम से विख्यात हुए।

समीक्षा :- ऋषियों में राग-द्वेष, क्रोध परिपूर्ण था। मान बड़ाई की भूख स्पष्ट दिखाई देती है। अपने ही भान्जे की हत्या श्री वैश्म्पायन जी ने कर दी जो महाराक्षसी कर्म है। उस बहन को कितना कष्ट हुआ होगा। गुरु-शिष्य का बर्ताव कितना निम्न है। न गुरुजी मे क्षमा न शिष्य में सहनशीलता। काल भगवान (काल रूपी ब्रह्म/ज्योति निरंजन) ने वास्तविक वेद ज्ञान को नष्ट कर दिया। स्वयं घोड़ा (वाजी) रूप धारण करके याज्ञवल्क्य को वेद विरूद्ध श्रुतियाँ प्रदान करके खिलौना दे दिया। उस ज्ञान को अद्वितीय मान कर याज्ञवल्क्य जी प्रसन्न होकर गर्व वश फूले नहीं समाए हजारों शिष्यों के अनमोल जीवन को नष्ट करके महापाप के भागी हुए।

आर्य समाज प्रवर्तक महर्षि कहलाने वाले दयानन्द सरस्वती जी ने अपने द्वारा अपने अनुभव से लिखी पुस्तक ''सत्यार्थ प्रकाश'' वाले ज्ञान के समर्थन में समुल्लास 7 पृष्ठ 167 (वैद्यिक यति मण्डल दीनानगर पंजाब से प्रकाशित, आयार्य प्रिंटिग प्रेस दयानन्द मठ गोहाना मार्ग रोहतक से छपे) पर इसी याज्ञवल्क्क महर्षि के ज्ञान को आधार बनाया है।

कृप्या पढ़ें सत्यार्थ प्रकाश पुस्तक का लेख :-

य आत्मनि तिष्ठन्नात्मनान्तरो यमात्मा न वेद यस्मात्मा शरीरम्।
य आत्मानमन्तरो यमयति से तआत्मान्तर्याम्यमतः।।

यह वृहदारण्यक का वचन है।

(हिन्दी अनुवाद :-) महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रयी से कहते हैं कि ''हे मैत्रेयी! जो परमेश्वर आत्मा अर्थात् जीव में स्थित और जीवात्मा से भिन्न है; जिसको मूढ़ जीवात्मा नहीं जानता कि वह परमात्मा मेरे में व्यापक है। जिस परमेश्वर का जीवात्मा शरीर अर्थात् जैसे शरीर में जीव रहता है, वैसे जीव में परमेश्वर व्यापक है। जीवात्मा से भिन्न रह कर जीव के पाप पुण्य का साक्षी होकर उनके फल जीव को देकर नियम में रखता है; वही अविनाशी स्वरूप तेरा भी

अन्तर्यामी आत्मा अर्थात् तेरे भीतर व्यापक है, उसको तू जान''(महर्षि दयानन्द द्वारा अनुवादित है महर्षि याज्ञवल्क्य जी का उपरोक्त वचन)

उपरोक्त ज्ञान जो याज्ञवल्क्य महर्षि द्वारा अपनी पत्नी मैत्रेयी को बताया है यह वही ज्ञान है जो वाजी (घोड़ा) रूप में सूर्य ने बताया था। जिस ज्ञान का कोई सिर पैर नहीं है। एक बार तो लिखा है परमात्मा का जीवात्मा, अन्य जीवात्मा में व्यापक है जैसे शरीर में जीवात्मा व्यापक है। फिर लिखा है कि परमात्मा जीवात्मा से भिन्न रहकर पाप पुण्य का फल देता है। फिर लिखा है वही परमात्मा तेरा भी अन्तर्यामी आत्मा है। यहाँ पर आत्मा और परमात्मा को एक सिद्ध किया है। उपरोक्त प्रमाण में भिन्न-2 सिद्ध किया है तथा दो परमात्मा सिद्ध किए हैं। (1) एक तो जीव में व्यापक (2) दूसरा जीव से भिन्न रहकर पाप-पुण्य का लेखा-जोखा रखता है। उपरोक्त ज्ञान अनुभव हीन व्यक्ति का है जो केवल लोकवेद (दन्तकथा-सुना सुनाया ज्ञान) है।

उपरोक्त प्रमाण से दोनों महर्षियों के अज्ञान का पर्दाफाश हो गया है।

(1) महर्षि याज्ञवल्क्य जी का तथा (2) महर्षि दयानन्द जी का तथा ऋषियों में कितना विवेक, कितनी सहनशीलता तथा कितना क्रोध, इर्षा, राग आदि है यह भी स्पष्ट हो गया।

❑❑❑

(ज)"भटकों को मार्ग"

" भक्त समाज प्रभु की वास्तविक भक्ति से कोसों दूर"

सतलोक आश्रम करौंथा, जिला-रोहतक, हरियाणा में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) के प्रकट दिवस के उपलक्ष्य में चल रहे पाँच दिवसीय (18 से 22 जून तक) सत्संग समारोह में भक्त बसंत सिंह सैनी ने अपनी कहानी सुनाई जो कृप्या निम्न पढ़ें :-

"प्रभु प्यासे भक्त बसंत सिंह सैनी को मार्ग मिलना"

मैं बसंत सिंह सैनी गाँव गांधरा जिला-रोहतक हरियाणा का रहने वाला हूँ तथा पुराना पता म.नं. एस 161 पाण्डव नगर, नजदीक मदर डेयरी, यमुनापार, दिल्ली-92 में रहता था। हमारे परिवार पर मानों दुःखों का पहाड़ टूटा हुआ था। फिर भी परमात्मा को पाने की चाहत व दुःखों की निवर्ति के लिए संतों व महंतों के पास आते जाते रहते थे। परन्तु कहीं भी दुःखों का निवारण नहीं हुआ। आखिरकार एक जाने-माने संत श्री आसाराम बापू से मिले। उस समय बापू जी की संगत दिल्ली में लगभग एक हजार थी। जिसके कारण बहुत नजदीक से मिलने का मौका मिला। हमने अपने दुःख व परमात्मा पाने की जिज्ञासा उनके सामने रखी। उन्होंने हमें 7 मंत्र (ॐ गुरु, हरि ॐ, ॐ ऐं नमः, ॐ नमः शिवाय, ॐ नमो भगवते वासुदेवाय, ह्रीं रामाय नमः व गायत्री मंत्र इत्यादि) बताए। जिनमें से एक छांटने के लिए कहा गया और एक 'सोहं' मंत्र जो स्वांस के द्वारा 'सो' अंदर व 'हं' बाहर निकाल कर जाप के लिए कहा गया। एकादशी व पूर्णिमा का व्रत, सोमवार का व्रत व अष्टमी का व्रत करने को कहा, ज्यादा से ज्यादा त्रिबंध प्राणायाम व सिद्धासन में बैठकर ध्यान लगाना व अनुष्ठान करना बताया। हमने मंत्र लिया तथा अपने दुःख उनके सामने रोए तथा बताया कि हमारे ताऊ जी जो चालीस वर्ष पहले मर गए थे वह बहुत बड़ा प्रेत बना हुआ है। उसने हमारे दो भाईयों को मार दिया, आठ-दस भैंसों को मार दिया, पाँच-छः गायों को मार दिया, पशुओं का कोई भी बच्चा जीवित नहीं रहता। घर के सभी सदस्य बिमार रहते हैं। दुःख के कारण बेहाल हैं तथा किसी भी काम धंधे को नहीं चलने देता। अब कह रहा है कि आपके पिता जी को लेकर जाऊंगा। हमने बापू जी से प्रार्थना की कि हमें बचाओ। परन्तु छः महीने बाद वह प्रेत हमारे पिताजी को भी ले गया। बापू जी ने कहा कि जो हुआ वह तो होना ही था, पशु आदि व धन की हानि तथा शारीरिक बिमारी तो पाप का भोग है जो जीव के प्रारब्ध में लिखा होता है, वह तो भोगना ही पड़ता है। आप भक्ति करो। हम परमात्मा प्राप्ति के लिए लगे रहे। बापू जी के समझाने के बाद हम परमात्मा प्राप्ति के लिए पूरी श्रद्धा से लग गये तथा मैंने (बसंत दास) सबसे पहले श्री आसाराम बापू आश्रम दिल्ली में चालीस दिन का अनुष्ठान महन्त नरेन्द्र ब्रह्मचारी की सलाह से किया। इसके बाद चालीस-चालीस दिन के छः अनुष्ठान आसाराम बापू आश्रम पंचेड़ रतलाम, मध्यप्रदेश में महन्त काका जी की देखरेख में किए। उसके बाद दो अनुष्ठान आसाराम आश्रम साबरमती अहमदाबाद गुजरात के मौन मन्दिर में किए। जहाँ पर श्री आसाराम बापू जी से अच्छी तरह बात करने का मौका मिला।

तब मैंने बापू जी से पूछा कि बापू जी जिस परमात्मा को पाने के लिए मैं तथा सारा भक्त समाज लगा हुआ है वह परमात्मा कौन है ? कैसा है? तथा कहां रहता है ? बताने की कृप्या करें।

यह सुनकर बापू जी ने कहा कि आप लगे रहो सब पता चल जायेगा और बताया कि गीता जी के एक अध्याय का पाठ प्रतिदिन करना है और कभी मेरे दर्शनों की इच्छा हो तो एक क्रिया बताता हूँ कि तीन दिन तक एक कमरे में बंद हो जाओ। कमरे में बंद होने से पहले दिन खाना पीना छोड़ दो ताकि शाम तक लैटरिंग व बाथरूम से निवर्ति हो जाये। उसके तीन दिन तक कुछ भी खाना पीना नहीं है, न बाहर निकलना है। कमरे में रहो, त्राटक करो। घर जाकर मैंने यह तीन बार किया, परन्तु बापू के दर्शन नहीं हुए। अनुष्ठान के समय जीवन मृत्यु से जूझ कर बीमारी का सामना करना पड़ा। परन्तु फिर भी परमात्मा पाने के लिए लगा रहा।

सितम्बर 2000 में संत रामपाल दास जी महाराज का सत्संग काठमण्डी रोहतक में सुना, जिन्होंने तत्वज्ञान के आधार पर गीता जी को समझाया उसके बाद गीता जी का पाठ करने से मन में आने लगा कि गीता जी में भगवान क्या कह रहे हैं और बापू जी क्या बता रहे हैं। कहीं सचमुच हम भगवान के निर्देश के विरुद्ध तो साधना नहीं कर रहे हैं? संत रामपाल जी के द्वारा बताए गीता जी के अनुवाद को समझा तो अंतरात्मा रोने लगी तथा बापू जी से मिलकर यह सब शंकाऐं पूछनी चाही। मैं बापू जी के पास गीता लेकर गया तथा गीता जी को दिखाकर सब शंकाऐं पूछी। परन्तु बापू जी ने किसी भी शंका का समाधान नहीं किया। मैंने बापू जी से कहा कि बापू जी आपको परमात्मा के बारे में नहीं पता तो आप भक्त समाज को अपने पास क्यों उलझा रहे हो, इस पर बाबू जी मेरी तरफ घूर कर बोले कि तू क्या जाने भक्ति के विषय में। मैं उठकर रोता हुआ अपने घर आ गया।

परमात्मा की प्राप्ति न होने से तथा उलझे हुए जीवन को देखते हुए तथा हठ रूपी अनुष्ठान व व्रतों के करने से शरीर काफी कमजोर हो गया और मृत्यु नजदीक दिखाई देने लगी। फिर अन्य संतों (राधास्वामी पंथ, धन-धन सतगुरु, श्री सतपाल जी महाराज, श्री बालयोगेश्वर जी महाराज, दिव्य ज्योति, ब्रह्मकुमारी, निरंकारी मिशन, जय गुरुदेव मथुरा वाले आदि) के पास भटका, परन्तु जो निर्णायक ज्ञान संत रामपाल जी महाराज ने बताया वह उपरोक्त किसी भी संत व पंथ के पास नहीं है। मैं पश्चाताप करने लगा कि इस समय शायद पृथ्वी पर कोई भी संत ऐसा नहीं है जिसको परमात्मा प्राप्ति हुई है और जो यह बता सके कि वह परमात्मा कौन है ? कैसा है ? और कहां रहता है ? यह विचार कर मैं फूट फूट कर रातों रोता रहा, संतों से विश्वास उठ गया। मन में आने लगा कि जब श्री आसाराम जी जैसे सुप्रसिद्ध संत ही शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण कर तथा करवा रहे हैं तो किस संत पर विश्वास किया जाए। संत रामपाल जी ज्ञान तो श्रेष्ठ बता रहे हैं परन्तु इनके पास जन समूह कुछ भी नहीं है। ये पूर्ण संत कैसे हो सकते हैं? यह शंका मन में आई। कुछ दिनों के बाद संत रामपाल जी महाराज का एक शिष्य हमारे गाँव का मिला तथा मेरी कहानी सुनकर उसने मुझे फिर से परमात्मा स्वरूप पूर्ण संत रामपाल जी महाराज के सत्संग में दोबारा लाकर बैठा दिया। मैंने एक घंटे का सत्संग सुना और सत्संग के बाद रोता हुआ महाराज जी से मिला। महाराज जी ने मुझे सीने से लगाकर

कहा कि जिस संत के पास आप जाते हो वे शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण कर तथा करवा रहे हैं। जैसा यह सब वे पहले ही जानते थे कि मुझे क्या चाहिए और मेरी शंकाओं का समाधान संत रामपाल जी महाराज ने अपने चरणों में बैठाकर इस तरह से किया।

तत्वदर्शी संत रामपाल जी महाराज ने बताया कि पवित्र गीता जी अध्याय 9 मंत्र 25 में पित्तर पूजना अर्थात् श्राद्ध निकालना मना किया है। अन्य देवी-देवताओं की पूजा करने वालों को मन्द बुद्धि वाले लिखा है(गीता अध्याय 7 मन्त्र 12 से 15 तथा 20 से 23 तक)। परन्तु श्री आसाराम जी ''श्राद्ध महिमा'' नामक पुस्तक में श्राद्ध निकालने की श्रेष्ठ विधि बताते हैं। संत श्री आसाराम जी के साबरमति अहमदाबाद आश्रम से प्रकाशित पत्रिका ऋषि प्रसाद अंक-135 मार्च 2004 में लिखा है कि भूत पूजने वाले तथा पित्तरों को पूजने वाले तथा अन्य देवी देवताओं को पूजने वाले क्या बनेंगे, पढिए पत्रिका के अगले अंक में ....। अगले अंक की पत्रिका ऋषि प्रसाद अंक 136 अप्रैल 2004 पृष्ठ 19 में लिखा था कि भूत पूजने वाले भूत लोकों को प्राप्त होंगे तथा पित्तर पूजने वाले पित्तर लोकों को प्राप्त होंगे तथा श्री कृष्ण के पूजारी भगवान श्री कृष्ण जी के बैकुण्ठ लोक को प्राप्त होंगे।

विचारें - श्री आसाराम जी द्वारा प्रकाशित 'श्राद्ध महिमा' नामक पुस्तक में पित्तर पूजने की अच्छी विधि भी लिखी है अर्थात् पितर पूजने की सलाह संत आसाराम जी दे रहे हैं।

कृप्या सोचें - कोई व्यक्ति यह भी कह रहा हो कि कूएँ में गिरने वाले मृत्यु को प्राप्त होते हैं। फिर स्वयं ही कूएँ में गिरने का परामर्श भी कर रहा है तथा कह रहा है कि कूएँ में गिरने की अच्छी विधि बताता हूँ कि दोनों कदम उठा कर एक दम छलांग लगाऐं। यह कूएँ में गिर कर मरने की श्रेष्ठ विधि है। जो ऐसा नहीं करता वह दोषी है।

क्या वह व्यक्ति नेक है ? यह भूमिका श्री आसाराम जी संत कर रहे हैं कि एक तरफ तो कह रहे हैं कि पित्तर व भूत पूजने वाले भूत व पित्तर बनकर भूतलोक व पित्तरलोक में जायेंगे, जहाँ पर वे भूखे प्यासे रहते हैं। फिर उनको श्राद्धों द्वारा तृप्त किया जाता है। एक और विचारणीय विषय है कि जब अपने माता-पिता जीवित थे तो वे प्रतिदिन कम से कम दो बार भोजन करते थे। अब मृत्यु के पश्चात् वे श्री गीता जी विरुद्ध साधना करके दुःखदाई भूत व पित्तर जूनी को प्राप्त कर चुके हैं। वर्तमान में एक दिन के श्राद्ध से वे कैसे तृप्त हो सकते हैं। 364 दिन क्या खाऐंगे? जिसके लिए संत आसाराम जैसे गुरुजन दोषी हैं जो भोली-भाली आत्माओं को गुमराह कर रहे हैं। शास्त्र ज्ञान से अपरिचित संत ही इस जीव को शास्त्र विधि रहित साधना करवा कर दुःखदाई योनियों में डलवाते हैं।

श्री आसाराम जी श्री शिवजी की उपासना का मन्त्र (ॐ नमो शिवाय) व श्री विष्णु जी का मन्त्र (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) बताते हैं। इन के अतिरिक्त हरि ॐ, ॐ गुरु आदि नामों में से कोई एक मंत्र अपनी इच्छा अनुसार चुन लेने को कहते हैं तथा सोहं को दो हिस्से करके स्वांस द्वारा स्मरण करना आदि मन्त्र देते हैं जो किसी शास्त्र में प्रमाण नहीं है।

विचार करें - कोई रोगी जिसके पेट में दर्द हो किसी वैद्य के पास ईलाज के लिए प्रार्थना करे। वैद्य उसके आगे छः गोलियां डाल कर कहे की तेरी इच्छा हो, इनमें से एक उठा ले। क्या वह

वैद्य हो सकता है ?

पवित्र गीता जी अध्याय 8 मन्त्र 13 में कहा है कि :-

ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म, व्याहरन् माम् अनुस्मरन्, यः प्रयाति त्यजन् देहम् सः याति परमाम् गतिम्।। 13।।

इसका शब्दार्थ है कि गीता बोलने वाला ब्रह्म अर्थात् काल कह रहा है कि (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का तो (इति) यह एक (ओम् एकाक्षरम्) ओं एक अक्षर है (व्याहरन्) उच्चारण करके (अनुस्मरन्) स्मरण करने का (यः) जो साधक (त्यजन् देहम्) शरीर त्यागने तक अर्थात् अन्तिम स्वांस तक (प्रयाति) स्मरण साधना करता है (सः) वह साधक ही मेरे वाली (परमाम् गतिम्) परमगति को (याति) प्राप्त होता है।

भावार्थ है कि श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके ब्रह्म अर्थात् हजार भुजा वाला ज्योति निरंजन काल कह रहा है कि मुझ ब्रह्म की साधना केवल एक ओम् (ॐ) नाम से मृत्यु पर्यन्त करने वाले साधक को मुझ से मिलने वाला लाभ प्राप्त होता है, अन्य कोई मन्त्र मेरी भक्ति का नहीं है तथा अपनी गति को भी गीता अध्याय 7 मन्त्र 18 में अनुत्तमाम् अर्थात् अति घटिया बताया है। इसी का प्रमाण गीता अध्याय 9 मन्त्र 20 से 25 में कहा है कि जो तीनों वेदों(ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद) में वर्णित विधि द्वारा मेरी साधना करते हैं तथा अन्य देवताओं की पूजा करते हैं उनकी जन्म-मृत्यु तथा स्वर्ग-नरक बना रहता है तथा पित्तर पूजने वाले (श्राद्ध करने वाले) पित्तर बनकर पित्तरों को प्राप्त होते हैं। भूत पूजने वाले (तेरहवीं, सतरहवीं, बर्षी, अस्थियां उठा कर गंगा आदि में क्रिया करवा कर प्रवाह करवाना, पिण्ड भरवाना आदि भूत पूजा है) भूत बन कर भूतलोक में चले जायेंगे, फिर पृथ्वी पर भी भटकते रहेंगे। यह पूजा अविधि पूर्वक अज्ञान पूवर्क मन माना आचरण है। इसलिए व्यर्थ है। प्रमाण गीता अध्याय 16 मन्त्र 23-24 । विशेष : यहाँ चौथे अथर्ववेद का विवरण इसलिए नहीं है कि इसमें पूजा विधि कम तथा सृष्टी रचना अधिक है। इसलिए गीता अध्याय 18 मन्त्र 62 में कहा है कि उस परमात्मा की शरण में जा जिससे तेरी पूर्ण मुक्ति होगी तथा परम शान्ति तथा शाश्वत् स्थान अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा तथा गीता अध्याय 15 मंत्र 4 में कहा है कि तत्वदर्शी संत मिलने पर उसके बताए अनुसार शास्त्र विधि अनुसार साधना करनी चाहिए। फिर उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक का कभी लौट कर संसार में नहीं आते उनका जन्म-मृत्यु नहीं होता अर्थात् अनादि मोक्ष प्राप्त हो जाता है।(गीता बोलने वाला काल अर्थात् क्षर पुरुष-ब्रह्म कह रहा है कि) मैं भी उसी आदि पुरुष परमेश्वर की शरण में हूँ।

संत रामपाल महाराज जी ने बताया कि अन्य सर्व संत कहते हैं कि पाप का भोग तो प्रारब्ध में लिखा होने के कारण जीव को भोगना ही पड़ता है। भक्ति करते रहना चाहिए, आने वाला दूसरा जीवन सुखमय हो जायेगा।

कृप्या विचार करें - किसी के पैर में कांटा लगा हो जिस कारण से उसे बहुत पीड़ा हो रही हो। उस कांटे के कष्ट के निवारण के लिए किसी से प्रार्थना करे तो उतर मिलें कि कांटा तो लगा रहने दे, जूता पहन ले, भविष्य में कांटा नहीं लगेगा। क्या वह व्यक्ति ठीक सलाह दे रहा

है? क्योंकि कांटा लगे पैर में जूता पहना ही नहीं जा सकता। पहले कांटा निकले फिर इस डर से जूता पहनेगा कि कहीं दोबारा कांटा न लग जाए। ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा के पूर्ण संत की शरण में आने से पाप रूपी कांटे का कष्ट समाप्त होता है। फिर साधक पूर्ण प्रभु की शास्त्रविधि अनुसार साधना रूपी जूता इस डर से पहनेगा कि कहीं फिर से कोई पाप रूपी कांटा कष्ट दायक न हो जाए।

श्री आसाराम जी ने पवित्र गीता जी के अनुवाद में अर्थों का अनर्थ किया है। गीता अध्याय 7 मन्त्र 18 व 24 में अनुत्तमाम् का अर्थ श्री आसाराम जी ने अति उत्तम किया है तथा व्रज का अर्थ आना किया है। जबकि अनुत्तम का अर्थ अति घटिया होता है तथा व्रज का अर्थ जाना होता है। तत्वज्ञान के अभाव से तथा ज्ञान हीन गुरुओं के कारण ही सर्व भक्त समाज शास्त्र विधि रहित साधना करके मनुष्य जीवन व्यर्थ कर रहा है (पवित्र गीता अध्याय 16 मन्त्र 23-24)। सर्व पवित्र धर्मों की पवित्रात्माऐं तत्व ज्ञान से अपरिचित हैं। जिस कारण नकली गुरुओं, सन्तों, महन्तों तथा ऋषियों का दाव लगा हुआ है। जिस समय पवित्र भक्त समाज आध्यात्मिक तत्वज्ञान से परिचित हो जाएगा उस समय इन नकली सन्तों, गुरुओं व आचार्यो को छुपने का स्थान नहीं मिलेगा।

उपरोक्त सच्चाई को आँखों देखकर मैं तथा अन्य परिवार के सदस्य संत रामपाल महाराज जी के चरणों में लगे हैं। पूरे परिवार में कोई बिमारी नहीं रही और जो भूत कभी परिवार के किसी सदस्य को मार देते थे, किसी पशु को मार देते थे, काम धंधे को नहीं चलने देते थे वे घर से ही नहीं गाँव से भी भाग गये हैं तथा दूसरे रिश्तेदारों के घर चले गए हैं, जो अब भी श्री आसाराम जी के पूजारी हैं। वहाँ जाकर भूत कहते हैं कि उनके (बसंत आदि के) घर तो परमात्मा का निवास हो गया है, उनको परमात्मा स्वरूप पूर्ण संत मिल गये हैं, हम उनके पास नहीं जा सकते। संत रामपाल जी से उपदेश के पश्चात् हम पूरी तरह से स्वस्थ व सुखी जीवन जी रहे हैं। हमारे परिवार व रिश्तेदारों के लगभग दो सौ सदस्यों ने संत रामपाल जी महाराज का उपदेश प्राप्त कर लिया है जो पहले श्री आसाराम जी महाराज के शिष्य थे। संत रामपाल जी के द्वारा बताए तत्वज्ञान को समझ कर लगभग दस हजार श्री आसाराम जी के शिष्य भी सतगुरु रामपाल जी महाराज की शरण में आ चुके हैं। वे भी मेरे की तरह पश्चाताप कर रहे हैं। मेरी भक्त समाज से प्रार्थना है कि जिनको भी परमात्मा पाने की तड़फ है, तलाश है, उनसे प्रार्थना है कि वे परमात्मा स्वरूप पूर्ण संत रामपाल जी महाराज के चरणों में आकर अपने जीवन को सुखी बनाए तथा परमात्मा को प्राप्त करें।

भक्त बसंत दास

''एक श्रद्धालु की आत्म कथा''

मैं राजेन्द्र दास 200-बी पश्चिम बिहार एक्सटैन्शन नई दिल्ली-63 का रहने वाला हूँ। मैंने राधास्वामी पंथ के सन्त चरणसिंह जी महाराज(डेरा बाबा जैमल सिंह ब्यास जि. अमृतसर पंजाब) से सन् 1980 में नाम दान लिया। गुरू जी के बताए अनुसार 2:30 घण्टे सुबह तथा 2:30 घण्टे शाम साधना शुरू की अभ्यास बढाते-२ अधिक समय करने लगा। मेरे दोनों कुल्हे भी पीड़ा

करने लग जाते थे। फिर भी परमात्मा प्राप्ति की तड़फ से कष्ट को सहन करते हुए साधना की। कुछ प्रकाश भी दिखाई देता था तथा कुछ आवाजें भी सुनने लगी। अपने पंथ की साधना को सर्वोच्च मानकर अन्य की बात नहीं सुनता था। शरीर में कष्ट, घर में निर्धनता बढ़ती गई। कोई कार्य सिद्ध नहीं होता था। महा परेशानी का जीवन जीता रहा। गुरू चरण दास जी सत्संगों में कहते थे कि प्रारब्ध का कर्म भोग तो जीव को भोगना ही पड़ता है। इस दृष्टिकोण से अपने महाकष्टमय जीवन को जी रहा था।

एक दिन आस्था टी.वी. चैनल पर सन्त रामपाल दास आश्रम करौंथा जि. रोहतक का सत्संग सुना तो मुझे बहुत गुस्सा आया तथा सोचा यह तो हमारे पंथ की निन्दा कर रहा है। न चाहते हुए भी देखता रहा। जब सन्त रामपाल जी ने हमारे ही पंथ की पुस्तकों को टी.वी. पर दिखाया तथा अन्य शास्त्रों से तुलना की बताया कि श्री सावन सिंह महाराज ने श्री जगत सिंह जी को उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया। तीन वर्ष पश्चात् श्री जगत सिंह जी का निधन हो गया उसके पश्चात श्री सावन सिंह के शिष्य श्री चरण सिंह जी जो नाते में श्री सावन सिंह के पौत्र थे को व्यास गद्दी पर नियुक्त किया गया। श्री चरण सिंह को श्री सावन सिंह जी ने नाम दान का आदेश भी नहीं दिया था। यदि कहें कि श्री जगत सिंह जी ने आदेश दिया तो श्री सावन सिंह जी का शिष्य नहीं रहा। श्री चरण सिंह जी तथा श्री जगत सिंह जी गुरु भाई थे। एक शिष्य दूसरे शिष्य को आदेश नहीं दे सकता। जैसे एक सिपाही दूसरे सिपाही को सिपाही नियुक्त नहीं कर सकता। यह प्रमाण देख कर मुझे करंट जैसा लगा कि सचमुच राधास्वामी पंथ का ज्ञान तथा साधना पूर्ण रूप से शास्त्रविरूद्ध है। वह कार्यक्रम आस्था टी.वी. पर बन्द हो गया। कुछ समय उपरान्त एक समाचार पत्र पढ़ा उसमें भी सन्त रामपाल जी ने सर्व पुस्तकों का तथा पृष्ठों का हवाला देकर लेख लिखा था।

राधास्वामी पंथ की साधना करते-२ भी घर तथा परिवार व कारोबार में अत्यधिक परेशानियों के कारण शराब तथा तम्बाखु का आदी भी हो गया था। उस समाचार पत्र को तथा उसके सम्बन्धित पुस्तकों को लेकर में ब्यास डेरा राधास्वामी पंजाब में गया तथा सन्त रामपाल दास द्वारा बताई गई त्रुटियों के समाधान के लिए श्री रोहतास चन्द्र बहल जी तथा परिचर कथा वाचक श्री खुराना जी से मिला। उनको तुलसी साहेब हाथरस वाले द्वारा रचित घट रामायण भाग पहला के पृष्ठ 27 पर दिखाया। जिसमें लिखा है कि पाँचों नाम काल के हैं। इनसे भिन्न आदि नाम तथा सतनाम(दो नाम) हैं। उनसे ही काल जाल से छुटकारा हो सकता है। वो दो नाम हमें नहीं मिले तो कैसे काल जाल से छुटेगें। कबीर साहेब जी की वाणी दिखाई ''शब्द'' ''सन्तों शब्द शब्द बखाना, शब्द फांस फंशा सब कोई शब्द नहीं पहचाना। प्रथम ही ब्रह्म(काल) स्वईच्छा से पांचों शब्द उच्चारा, सोहं, जोत निरंजन, ररंकार, शक्ति और ओंकारा।'' जब यह पुस्तके दिखाई तो दाँतों तले उंगली दबाई। परन्तु अपनी चतुरता दिखाई की छटवां नाम अन्दर ध्यान में मिलेगा। मैंने पूछा तुलसी साहेब तो कह रहे हैं कि दो नाम और है जो पांचों से अन्य हैं। आदि नाम तथा सतनाम। फिर सातवां कहाँ मिलेगा? इस बात पर उन्होंने कहा आप गुरू जी(सन्त गुरूइन्द्र सिंह जी) से मिल कर पूछो। मैंने कहा मिलाओ मुझे गुरू जी से, टालते हुए

कहा कि करोड़ों शिष्य हैं गुरू जी के, किस-२ से मिलेगें। आप पत्र द्वारा समाधान प्राप्त करना। मैं रोता हुआ वापिस दिल्ली आ गया। पत्र डाला। उसका जवाब मिला, जो बेतुका था, कहा था आप अभ्यास और बढाते जाओ अपने आप ही सब मन्त्र मिल जाएगें।

डेरा ब्यास के उत्तर से कोई सन्तुष्टि नहीं हुई। उसके पश्चात सन्त रामपाल जी महाराज के बताए अनुसार राधास्वामी पंथ की पुस्तकों को पढा तो रोना आने लगा। यह क्या मजाक कर रखा है।

1. हजूर स्वामी शिवदयाल जी का कोई गुरु नहीं था।

2. स्वामी जी हुक्का पीते थे।

3. स्वामी जी प्रेत की तरह अपनी परम शिष्या बुक्की में प्रवेश होकर बोलते थे। मृत्यु उपरान्त भी बुक्की के मुख से हुक्का पीते थे तथा भोजन भी ग्रहण करते थे। सारवचन वार्तिक वचन 4 में कहा है कि सतनाम को सतनाम, सारनाम, सतशब्द, सतलोक, सतपुरूष भी कहते हैं।

आदि व्याख्याओं को पढ़ कर रोना आया। क्या करूं? कहाँ जाऊँ? सन्त रामपाल दास जी महाराज ने बताया कि हठ योग सन्त मार्ग नहीं है। हठ योग का प्रमाण रूहानी फूल पुस्तक पृष्ठ-82 पर श्री जैमल सिंह जी महाराज अभ्यास में आलस आने पर अपने शरीर पर बैंत मारते थे तथा हजूर स्वामी शिवदयाल जी महाराज कई-२ दिन तक बन्द कमरे में हठ योग से साधना करते थे जो किसी भी सन्त के इतिहास में नहीं है। सन्त नानक जी हल चलाते थे तथा स्मरण भी करते थे, सन्त रविदास जी जूते बनाने का कार्य भी करते थे तथा स्मरण भी करते थे तथा परमेश्वर कबीर जी ने लीला करके दिखाया की जुलाहे का कार्य करते-२ भी प्रभु नाम का स्मरण कर सकते हैं। सन्त गरीब दास जी(छुडानी वाले) हल भी चलाते थे तथा स्मरण भी करते थे। हठ योग करने से श्री तुलसीदास साहेब हाथरस वाले के दोनों पैर कमर से नीचे सुन्न हो गए थे (अधरंग हो गया था) उनके शिष्य पालकियों में बैठा कर ले जाते थे (पुस्तक जीवन चरित्र तुलसी साहेब पृष्ठ- 7 पर प्रमाण है)। यह साधना जनसाधारण नहीं कर सकता तथा शास्त्रविरूद्ध होने के कारण व्यर्थ है। पुस्तक सन्तमत प्रकाश भाग-4 पृष्ठ-126 पर श्री सावन सिंह जी ने लिखा है कि अभ्यास में आत्मा सिमट कर आँखों के पीछे चली जाती है शरीर सो जाता है तो यह शरीर मुर्दा दिखाई देता है। यही जीवित मरना है।

उपरोक्त प्रमाणों को आँखों देख कर मैंने(राजेन्द्र ने) परम सन्त रामपाल दास जी महाराज से उपदेश ग्रहण कर लिया। मेरे सर्व कार्य सिद्ध हो गए तथा सर्व नशा छूट गया। मेरे शरीर का रोग भी समाप्त हो गया।

मेरी सर्व भक्त समाज से प्रार्थना है कि सत्य को आँखों देख कर सन्त रामपाल जी महाराज से नाम दान लेकर अपना मानव जीवन सफल बनाऐं।

आपका अपना
राजेन्द्र दास

''दुःखी परिवार की आत्म कथा''

बन्दी छोड़ सतगुरू रामपाल जी महाराज की दया

मेरा नाम दीपक दास पुत्र बलजीत सिंह, गांव महलाना जिला सोनीपत है। हम तीन पीढीयों से राधास्वामी पंथ डेरा बाबा जैमल सिंह से नाम उपदेशी थे। सबसे पहले मेरी दादी जी की माता जी यानि मेरे पिता जी की नानी जी ने राधास्वामी पंथ से नाम उपदेश ले रखा था। उसके बाद मेरे दादा-दादी जी और फिर मेरे माता-पिता जी ने भी नाम लिया हुआ था। हम भी गुरूविन्द्र जी महाराज को पूर्ण पुरूष मानते थे तथा इस पंथ में पूर्ण श्रद्धा यह सोच कर रखते थे कि यह संसार में प्रभु प्राप्ति का श्रेष्ठ पंथ है और उनके विशाल डेरे और विशाल संगत समूह को देखकर विशेष आकर्षित थे और सेवा करने के लिए डेरा बाबा जैमल सिंह व्यास (पंजाब) में तथा छत्तरपुर पूसा रोड़ दिल्ली भी जाते रहते थे। लेकिन इस पंथ में उम्र विशेष में नाम दिया जाता है इसलिए अभी मैं इस पात्रता के लिए अयोग्य था।

मेरे माता-पिता जिस दिन छत्तरपुर से नाम लेने के लिए गये हुए थे उसी दिन मेरे छोटे भाई (उम्र 5) के हाथ से पड़ोस के एक बच्चे की आँख में कोई वस्तु अनजाने में लग गई। जब शाम को नाम उपदेश लेकर मेरे माता-पिता वापिस आए। उसी दिन से हमारा व हमारे पड़ोसियों का वैर हो गया कि आपके बेटे ने हमारे बेटे की आँख में जानबूझ कर चोट मारी है और उसी दिन से हमारे ऊपर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा।

उसी दौरान मेरे दादा जी का बिमारी के कारण देहांत हो गया जब मेरे दादा जी का पार्थिक शरीर दुसरे कमरे में रखा हुआ था तो उस समय मेरी दादी जी, जिनका देहांत हुए 12 वर्ष हो चुके थे, मेरी बुआ प्रेम में प्रेत की तरह प्रवेश करके बोली।(मेरी दादी ने भी राधास्वामी पंथ से प्राप्त पाँच नामों की बहुत ज्यादा साधना कर रखी थी। वे नियमित रूप से तीन बजे ही व दिन में भी भजन व सुमरन करने के लिए बैठ जाती थी और घण्टों राधास्वामी पंथ के बताये नाम का जाप व अभ्यास किया करती थी।) कि आज तुम्हारे दादा जी का जीवन संस्कार समाप्त हो गया इसलिए मैं तुम्हें संभालने आई हूँ। मेरी दादी जी को जीवित अवस्था में सांस की बिमारी के कारण खांसी रहती थी बारह साल के बाद ज्यों की त्यों ही खांस रही थी। तब हमने पूछा कि दादी जी आप तो बहुत दुःखी दिखाई दे रही हो क्या आप सतलोक नहीं गई। तब मेरी दादी ने कहा कि बेटा मैंने गलत साधना के कारण अपना अनमोल मनुष्य जीवन व्यर्थ कर दिया तथा अब मृत्यु के पश्चात् भूत योनि में कष्ट उठा रही हूँ। मैं कहीं सतलोक में नहीं गई। तो फिर मेरी माता जी ने पूछा कि माँ क्या आपको गुरूजी चरण सिंह जी महाराज ने संभाला या नहीं? तो मेरी दादी ने कहा कि उन्होंने मेरी कोई संभाल नहीं कि और मैं आज भी ऐसे ही दुखी हो रही हूँ।

उस घटना के दो साल बाद एक दिन मेरी दूसरी बुआ कमला के अंदर मेरे दादा जी प्रेतवत् प्रवेश कर के बोले और कहा कि मैं तो बहुत दुःखी हूँ तथा मेरी कोई गति नहीं हुई। मैं नहाना चाहता हूँ तो मेरी माता जी ने दुःख व आश्चर्य से कहा कि आप तो सतलोक में गए थे क्या वहाँ पर नहाने के लिए पानी भी नहीं है? फिर मेरी माता जी मेरे दादा जी (जो मेरी

बुआ में प्रेत बन के घुसा हुआ था) को नहलाने लगी तो वह कहने लगा कि बेटी में अपने आप नहा लूगां तो मेरी माता जी ने हालांकि वह मेरी बुआ जी में प्रवेश था इसलिए बुआ वाले कपड़े ही पहना दिये तो मेरा दादा बोला बस बेटी मेरी धोती ले आओ मैं बांध लूगां। मेरी माता जी ने ऐसे ही एक चद्दर पकड़ा दी जो उन्होंने कपड़ों के ऊपर से ही लपेट ली। फिर कहा कि मेरे लिए चाय बनाओ और जल्दी-२ में ही चाय पी ली। मैंने पूछा कि दादा जी आप सतलोक नहीं गए तो उसने कहा कि बेटा मैं तो बहुत कष्ट में हूँ। मेरी माता जी ने फिर पूछा कि आप तो राधास्वामी हजूर चरण सिंह जी महाराज से नाम उपदेशी थे भक्ति भी करते थे क्या उन्होंने आपकी कोई संभाल नहीं की? तब कहा कि उन्होंने मेरी कोई संभाल नहीं की और मैं तो ऐसे ही धक्के खाता फिर रहा हूँ।

उसी दौरान मेरी आँखें भी इतनी कमजोर हो गई कि कम दिखाई देने लग गया था और चश्मा बार बार बदलवाना पड़ा था। मैं एक दोस्त के साथ पढने के लिए उसके पास जाता था वहां पर भक्त संतराम ने मुझे पूर्ण ब्रह्म के अवतार सतगुरू रामपाल जी महाराज की महिमा सुनाई तथा कहा कि आप सतगुरू रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लो आपकी आँखे ठीक हो जाएगी तथा कहा कि इन्हीं कष्टों और दुखों से हम जीवों को निकालने के लिए परमेश्वर कबीर साहेब संत का रूप धारण करके आते हैं। मैंने कहा कि मेरे माता पिता जी ने राधास्वामी पंथ से नाम उपदेश ले रखा है। भक्त संतराम ने कहा कि वह पंथ पूर्ण नहीं है उनकी भक्ति साधना से न तो सतलोक प्राप्ति होगी न ही जीवन में कभी कर्म की मार टल सकेगी उसे तो सिर्फ कबीर साहेब का नुमाईदा संत ही टाल सकता है।

मेरे पिता जी को सांस की बिमारी थी दस कदम चलने पर ही बेहाल हो जाते थे, सांस की बिमारी के कारण दम फूलने लगता था हाई और लो ब्लड प्रेशर की भी बिमारी थी। मेरे पिता जी को इलैक्शन डयूटी के दौरान हार्ट अटैक हुआ पर कर्म संस्कार वश वे बच गये। लेकिन तब भी हम यह सोचते रहे कि गुरूविन्द्र जी महाराज ने हार्ट अटैक से बचा लिया और बड़ी रजा की और हमने तो सर्दियों की एक-एक रात में अपने पिता जी का एक-एक सांस टूटते देखा है, बिल्कुल मृत प्राय हो जाते थे और सिवाय बैठ कर रोने के हम कुछ नहीं कर पाते थे क्योंकि दवाईयों का भी आखिर आ चुका था, डाक्टर जितनी ज्यादा से ज्यादा डोज दवाई की बढा सकते थे बढा चुके थे इससे ज्यादा वे खुराक को नहीं बढा सकते थे। मेरी माता जी डेरे बाबा जैमल सिंह से लाया हुआ प्रशाद उन्हें खिलाती और राधास्वामी गुरूविन्द्र जी महाराज की मूर्ति के सामने बैठ कर प्रार्थना करती और रोती। उसी समय मेरे छोटे भाई को ओपरे की शिकायत रहने लगी वह रात को चमक कर उठ जाता था तथा कहता था कि मेरा पैर पकड़ कर कोई खींच रहा है, सोने नहीं दे रहा है, वह भी बहुत बिमार रहने लगा। मैंने 8 अक्तूबर 1998 को सतगुरू रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लिया। तो बीस दिन के अंदर ही पूर्ण परमेश्वर संत रामपाल जी महाराज की दया से मेरा चश्मा भी उतर गया तथा मैंने दवाई खाना भी छोड़ दी। मुझे सतगुरू रामपाल जी महाराज पर पूरा विश्वास हो गया था। भक्त संतराम ने घर पर आकर मेरे माता पिता जी को भी समझाया कि आप पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब के नुमाईदे संत रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लो आपके सर्व कष्टों का निवारण हो जाएगा।

उसके बाद मैंने भी अपने माता पिता को समझाया तो वे बोले हम पहले तो राधास्वामी थे अब सन्त रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लेगें। दुनिया क्या कहेगी? तब मैंने कहा कि एक डाक्टर से इलाज नहीं हो रहा तो क्या दूसरा डाक्टर नहीं बदलते? परन्तु दुःखी बहुत थे कुछ समय बाद परमेश्वर की शरण में आ गये और राधास्वामी पंथ के उन पांच नामों का त्याग करके पूर्ण संत रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश ले लिया।

सतगुरू कबीर साहेब कहते हैं 'शरण पड़े को गुरु संभाले जान के बालक भोला रे' सारे परिवार के नाम लेने के बाद से ही हमारे दिन फिर गये। मेरे भाई का ओपरा ठीक हो गया पिता जी का स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक हो गया और पहले वे दस कदम नहीं चल सकते थे अब एक आदमी के साथ लग कर चीनी की बोरी को उठा देते हैं। हमारा परिवार आज पूर्ण परमात्मा के अवतार सतगुरू रामपाल जी महाराज की शरण में उनकी दया से पूर्ण सुखी हैं।

परन्तु हमारे दादा-दादी व पिता जी की नानी जी के मनुष्य जीवन का जो नुकसान हुआ उसकी भरपाई किसी भी प्रकार से नहीं हो सकती। यदि किसी आदमी की जान बचाने के लिए लाखों और करोड़ों रूपये खर्च कर दिए जाए और वह बच जाए तो उसे उस पैसे का कोई मलाल नहीं होता कि चलो जान तो बची। लेकिन आज चाहे कितनी भी कीमत चुकाने पर भी मेरे दादा-दादी का जीवन जो गलत मार्गदर्शन से बिल्कुल व्यर्थ चला गया (वे भूत और पितर की योनियों में कष्ट भोग रहे हैं), वापिस नहीं आ सकता। जो घिनौना मजाक ये नकली सन्त और पंथ सर्व समाज के साथ कर रहे हैं क्योंकि चौरासी लाख योनिया भोगने के पश्चात् मिलने वाले अनमोल मनुष्य जीवन को जो पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने का एकमात्र साधन है उसे बरबाद कर रहे हैं। इस महाक्षति की आपूर्ति किसी भी कीमत से पूरी नहीं की जा सकती।

हे बंदी छोड़ सतपुरूष रूप सतगुरू रामपाल जी महाराज आपने बड़ी दया कि हम तुच्छ जीवों पर जो अपना सत्य ज्ञान देकर अपनी शरण में बुला लिया अन्यथा हम भी पीढ़ी दर पीढ़ी से प्राप्त इस अविधिपूर्वक साधना में अपने मनुष्य जन्म को समाप्त करके कहीं भूत और पितरों की योनियों में चले जाते और इस शास्त्रविधियुक्त सतभक्ति से वंचित रह जाते।

सर्व बुद्धिजीवी समाज से प्रार्थना है कि अभी भी समय है। इस सत्य ज्ञान को समझे तथा निष्पक्ष होकर निर्णय करें। बन्दी छोड़ सतगुरू रामपाल जी महाराज के चरणों में आकर सतभक्ति प्राप्त करके अपने मनुष्य जीवन का कल्याण करवाएं।

सत साहेब

सतगुरु चरणों का दास
दीपक दास

"अद्धभुत करिश्मा"

पूजनीय गुरुदेव जी दण्डवत प्रणाम,

मैं अपने परिवार की खुशी आदरपूर्वक सूचित करना चाहता हूँ कि जनवरी 2000 के आरम्भ में आपका प्रवचन/सत्संग ताजपुर गाँव देहली में श्री मुरारी भक्त के निवास पर चल रहा था तो

एक अन्य भक्त की बेटी ने मेरी पत्नी श्रीमति बिमला देवी (छावला) से कहा कि चाची जी पड़ोस के गाँव में जो सत्संग चल रहा है यदि आप उस महाराज से नाम ले लो तो आपका असाध्य रोग (रीढ़ की हड्डी में एक इंच का फासला) दूर हो सकता है। तो मेरी पत्नी ने उस लड़की से कहा कि आल इंडिया मैडीकल इंस्टीच्यूट ऑफ रिसर्च सेंटर ऑफ साईंस दिल्ली में जिसका ढाई वर्ष ईलाज चलकर असफल हो चुका हो तो उस एक नाम या शब्द में कौन-सी शक्ति है जो मेरा असाध्य रोग ठीक हो जायेगा? काफी देर तक दोनों की बहस चलती रही, अन्त में धीरे-धीरे चलकर उस सत्संग में जाने का निर्णय लिया गया। परम पूज्य संत रामपाल जी महाराज के प्रवचन/अमृतवाणी सुनकर अधूरी छूटी हुई भक्ति का तार पुनः बन्दी छोड़ से जुड़ गया और ढाई वर्ष के ईलाज से फायदा न पाकर केवल नाम के सुमरन से पाँच दिन के अंदर ही असाध्य रोग ठीक हो गया। इससे पूर्व डॉक्टरों ने उनको बैठने व खड़ा होने की सख्त मनाही की थी जो आज भी ट्रीटमैंट स्लीप पर लिखा है तथा वह एक इंच के फासले के एक्स-रे भी मौजूद हैं। सबसे बड़ी समस्या मेरी पत्नी को यह थी कि उनसे बैठ कर पाखाना नहीं किया जाता था और हाथ धोने के समय तो दस-पंद्रह मिनट रोना पड़ता था क्योंकि ज्यादा झुकने पर ज्यादा दर्द होता था। अब वह परम पूजनीय सतगुरु रामपाल जी महाराज जी के आर्शीवाद से 50 किलो के गट्ठर/वजन अपने आप उठा सकती है और पूर्ण स्वस्थ है। मेरी सर्व पाठकों से प्रार्थना है कि परमेश्वर तुल्य संत रामपाल जी महाराज जो कविर्देव (कबीर परमेश्वर) जी के पूर्ण कृपा पात्र हैं, से शीघ्रातिशीघ्र मुफ्त नाम प्राप्त करके सपरिवार कल्याण करवाऐं तथा पूर्ण मोक्ष तथा सतलोक (शाश्वतम् स्थानम्) प्राप्त करें।

आपका सेवक भक्त नथूराम,
गाँव छावला, दिल्ली,
दूरभाष 20913936

"अनहोनी की परमेश्वर ने"

मैं भक्त सुरेन्द्र दास गाँव गांधरा, त. सांपला, जिला-रोहतक का निवासी हूँ। मेरी आयु 31 वर्ष है तथा बचपन से ही परमात्मा की खोज में लगा हुआ था तथा मनमुखी पूजा (मन्दिरों में जाना, व्रत आदि करना, श्राद्ध निकालना आदि) भी करता था। परन्तु शारीरिक कष्ट व मानसिक अशान्ति लगातार बनी हुई थी। फिर भी परमात्मा में विश्वास तथा परमात्मा पाने की तड़फ बरकरार थी। यही तड़फ मुझे सन् 1995 में संत आसाराम बापू के पास ले गई। मैंने उनसे नाम उपदेश लिया व जैसा भक्ति मार्ग बापू जी ने बताया डट कर साधना की। परन्तु न तो कोई शारीरिक कष्ट दूर हुआ और न ही कोई आध्यात्मिक उपलब्धि हुई, अपितु कष्ट बढ़ता ही चला गया। मैं आसाराम बापू के बताए अनुसार साधना करता था। जैसे 250 ग्राम दूध सुबह पीता था और 250 ग्राम दूध शाम को पीता था और मेरे मंत्र में जितने अक्षर थे उतने लाख मंत्र जाप करना और समाधी लगाना। चालीस दिन की यह क्रिया थी, जो कि यह एक अनुष्ठान होता था। ऐसे-ऐसे मैंने चौदह अनुष्ठान किए।

एक बार मैंने बापूजी के सत्संग में सुना कि सात दिन तक निराहार रहकर मंत्र जाप करने,

समाधी लगाने तथा प्राणायाम करने से ईश्वर प्राप्ति होगी। फिर मैंने इन वचनों को सत्य मान कर ऐसा ही किया। परन्तु परमात्मा प्राप्ति की बजाए भूखा रहने के कारण मृत्यु के निकट पहुँच गया तथा प्राणायाम करने से दिमागी संतुलन बिगड़ गया और मैं पागल-सा हो गया।

उसी दौरान मेरे ऊपर सतगुरु पूर्ण संत रामपाल जी महाराज की कृपा दृष्टि हुई तथा मुझे सितम्बर 2000 में पूज्य गुरुदेव संत रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश प्राप्त हुआ। उपदेश मिलते ही मुझे ऐसा लगा जैसे किसी ने दीपक में घी डाल दिया हो तथा मेरा जीवन शांत व्यवस्थित रहने लगा।

पूर्ण संत पाप कर्मों को समाप्त कर सकता है इसका प्रमाण मेरे जीवन में स्पष्ट रूप से तब घटित हुआ जब मैं मई 2004 में औरंगाबाद महाराष्ट्र में संत रामपाल जी महाराज के सतसंग के लिए टैंट की सेवा करते हुए 25 फुट ऊपर से नीचे पथरीली जमीन पर गिर गया। यहाँ काल को कुछ और ही मंजूर था तथा मेरी रीढ़ की हड्डी टूट गई और मेरे शरीर के नीचे के हिस्से में अधर्ग मार गया। उसी समय मैंने अपने सतगुरु देव जी संत रामपाल जी महाराज को याद किया। मेरे गुरुदेव की दया से उसी समय दोनों पैर ठीक काम करने लग गए।

गरीब, काल डरै करतार से, जै जै जगदीश।
जौरा जौरी झाड़ती, पग रज डारै शीश।।

उसके बाद मुझे औरंगाबाद के निजी हस्पताल (पटवर्धन हॉस्पीटल) में ले जाया गया। वहाँ पर डॉ. डी.जी. पटवर्धन ने मेरे शरीर की जाँच की तथा मेरी रीढ़ की हड्डी के एक्स-रे लिए। रिपोर्ट से पता चला कि रीढ़ की हड्डी टूटी हुई है। रिपोर्ट देखकर डॉ. बहुत हैरान होकर कहने लगा कि आपकी रीढ़ की हड्डी टूट गई है और उसका एक टूकड़ा टूट कर अलग हो गया है। डॉ. बार-बार मेरे पैरों को हाथ लगाकर देखता रहा और कहा कि आप पर परमात्मा की विशेष कृपा है कि आपके पाँव ठीक काम कर रहे हैं। क्योंकि इस रिपोर्ट के अनुसार आपको अधर्ग होना जरूरी था। वहाँ उस हॉस्पीटल में मैं तीन दिन तक दाखिल रहा। उसके बाद मैं छूट्टी लेकर वापिस अपने घर हरियाणा आ गया। यहाँ रोहतक में मैंने अपना ईलाज हड्डियों के प्रसिद्ध डॉ. चड्ढा से करवाया। डॉ. चड्डा भी मेरी रिपोर्ट देखकर हैरान रह गया तथा कहा कि आप चल-फिर कैसे रहे हो। आपको तो रिपोर्ट के अनुसार अधर्ग होना चाहिए था। डॉ. चड्डा ने फिर से रंगीन एक्स-रे करवाया तथा कहा कि इसका ईलाज संभव नहीं है तथा ऑप्रेशन के द्वारा इसको जिस स्थिति में है वहीं रोका जा सकता है, ताकि हड्डी और न टूट सके। उसने हड्डियों को ताकत देने के लिए इंजेक्शन शुरु किए और तीन महीने में पूरे इंजेक्शन लग गए। फिर उसने कहा कि ऑप्रेशन जरूर करवाना पड़ेगा, नहीं तो बाकी बची हुई हड्डी भी टूट सकती है और कहा कि ऑप्रेशन का खर्च दो लाख रूपये आयेगा। फिर उसी समय डॉ. ने बताया कि रिपोर्ट के अनुसार आपको तीन महीने के अंदर मृत्यु को प्राप्त हो जाना था। आज आप परमात्मा की कृपा से ही जीवित हो। ऑप्रेशन का खर्च दो लाख रूपये देने में मैं असमर्थ था, इसलिए मैं दूसरे डॉ. के पास ईलाज के लिए गया। वह भी मेरी रिपोर्ट देखकर आश्चर्य में पड़ गया और कहा कि यदि ऑप्रेशन में देर हो गई तो हड्डी और भी टूट सकती है। उसने भी बताया कि रिपोर्ट के अनुसार आपको अधर्ग होना चाहिए था, आप चल-फिर कैसे रहे हो ?

आखिर हारकर मैंने अपने गुरुदेव संत रामपाल जी महाराज के चरणों में प्रार्थना की। तब मेरे पूज्य गुरुदेव ने मुझपर दया की और सिर पर हाथ रखकर कहा 'बेटा आप बिल्कुल ठीक हो जाओगे, यदि आज परमेश्वर कबीर साहेब जी की शरण में नहीं होते तो आपको भुगत कर मरना था। आपकी आयु शेष नहीं थी। आप एक बार फिर डॉ. को दिखा लो'। मैंने गुरु जी के आदेशानुसार अगले ही दिन डॉ. को दिखाया, जिसने मेरा एक्स-रे किया और एक्स-रे देखकर डॉक्टर आश्चर्य चकित रह गया और बोला 'जो हड्डी टूट कर अलग हो गई थी, वह अपने आप ऊपर को उठकर कैसे जुड़ गई। डॉक्टर जी ने बताया कि इस हड्डी की ऐसी स्थिति थी कि जैसे कोई गाड़ी बहुत ज्यादा ढलान वाली चढ़ाई में चढ़ रही हो। उसके इंजन में खराबी हो जाऐं, वह वापिस ही आ सकती है या प्रथम गियर में डाल कर पत्थर आदि पहियों के पीछे लगाकर वहीं रोकी जा सकती है, आगे को नहीं चढ़ सकती। आपकी हड्डी ऐसे ऊपर को चढ़ कर जुड़ गई जो डॉक्टरी इतिहास से बाहर की बात है। इससे मुझे भी महसूस होता है कि कोई शक्ति है जो असम्भव को सम्भव कर सकती है। यह तो ऑप्रेशन से भी नहीं हो सकता था। आप्रेशन करके इसमें कोई पदार्थ भरकर वह गैप भरा जा सकता था। फिर भी यदि आप कोई वजन उठाने का कार्य करते तो फिर से हड्डी खिसक कर आप चारपाई पर भुगत कर मरते। डॉक्टर के समझ में भी नहीं आ रहा था। मैंने कहा कि पूर्णब्रह्म कबीर साहेब के स्वरूप मेरे पूज्य गुरुदेव संत रामपाल जी महाराज ने मेरे पाप कर्म काटकर तथा मेरी मृत्यु को टालकर अपने कोटे से मुझे नई जिंदगी दी है। परमेश्वर कबीर साहेब की वाणी है -

जो मेरी भक्ति पीछोड़ी होई, तो हमरा नाम न लेवे कोई।

अब मैं बिल्कुल स्वस्थ हूँ तथा सतगुरु के चरणों में आत्म कल्याण हेतु निःस्वार्थ सेवा कर रहा हूँ। 50 कि.ग्रा. वजन अपने आप ही उठा कर चलता हूँ। हमारे गुरुदेव का वास्तविक उद्देश्य तो भक्ति करवाकर जीव को विकार रहित करवा कर अपने परम धाम सतलोक में ले जाना है, यहाँ के छोटे-मोटे सुख तो हमारे गुरुदेव अपने खजाने से दे देते हैं, ताकि जीव भक्ति मार्ग में लगा रहे। अतः सर्व समाज से प्रार्थना है कि हमारे गुरुदेव के चरणों में आकर सत्यभक्ति करें तथा सांसारिक सुखों के साथ-साथ आत्म कल्याण का मार्ग भी प्राप्त करें। सत् साहिब!

विशेषः- ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 161 मन्त्र 2 में पूर्ण परमात्मा ने कहा है कि हे शास्त्रानुकूल साधना करने वाले साधक तू सम्पूर्ण भाव से मेरी शरण ग्रहण कर अर्थात् संस्यरहित होकर मेरी भक्ति कर मैं तेरे असाध्य रोग को भी समाप्त कर दूगां, यदि तेरी आयु भी शेष नहीं है तो तेरी आयु के स्वांस बढ़ाकर सौ वर्ष कर दूगां। उपरोक्त कथा प्रभु की समर्थता तथा स्वयं साधना को प्रमाणित करती है।

भक्त सुरेन्द्र दास

फोन - 9812151088

"प्रभु ने सुनी गरीबों की"

मैं कर्मवीर पुत्र श्री घासीराम पुत्र श्री छोटूराम, गाँव भराण, जिला-रोहतक का स्थाई निवासी

हूँ। सबसे पहले मैंने व पूरे परिवार ने सन् 1986 में निरंकारी बाबा हरदेव सिंह जी महाराज का नाम लिया। उस समय मैं बहनों को चूडियां पहनाने का कार्य करता था। आर्थिक स्थिति अच्छी थी। धीरे-धीरे स्थिति बिगड़ती चली गई। फिर कुछ दिनों के बाद मेरी पत्नी के शरीर में तरह-तरह की बिमारियां घर कर गई। उसको बवासीर की बीमारी व पित की थैली में पथरी थी। डॉक्टर ने ऑपरेशन में लागत बीस हजार रूपये की बताई। मुझ दास के घर में उस समय बीस हजार दानें भी नहीं थे और मुझ दास को भी दमे की बीमारी थी। मेरी पत्नी तथा मैं अपने कष्टों को याद करके दुःखी मन से चर्चा करते हुए एक ऑटो में बैठकर बस अड्डा जा रहे थे कि पैसा तो है नहीं अब ऑपरेशन कैसे होगा ? हम तो मर ही जायेंगे। उसी ऑटो में एक बहन बैठी हुई थी। उसने हमारी सारी बात पूछी और कहा कि आप करौंथा चले जाओ। वहाँ एक महाराज जी हैं और बीमारियों की दवाई मुफ्त देते हैं। मेरी पत्नी भक्तमति मेवा देवी 27-7-2003 को सतलोक आश्रम करौंथा में गई तथा बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज को अपनी सारी बीमारी व घर की हालत बताई। सतगुरु देव ने बहुत प्यार से सभी बातें सुनी तथा कहा कि बेटी यहाँ कोई औषधी आदि नहीं दी जाती, केवल आत्म कल्याण का मार्ग समझाया जाता है तथा भक्ति करने की विधि पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी के आधार पर शास्त्रानुकूल बताई जाती है। पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी की कृपा से केवल मंत्र जाप के करने मात्र से ही सर्व कष्ट दूर हो जाते हैं तथा मूल लाभ तो जन्म-मृत्यु से पूर्ण रूप से जीव का छूटकारा करवाने का है, समाज सुधार व अन्य सुख तो रूंगे में अर्थात् निशुल्क स्वयं ही हो जाते हैं। रामनाम की दवाई देकर मेरे सारे परिवार को कृतार्थ किया। अब हम प्रेम पूर्वक जिन्दगी जी रहे हैं। सर्व बिमारियां केवल नाम स्मरण से व गुरुदेव के आशीर्वाद मात्र से समाप्त हो गई। हम बन्दी छोड़ से अरदास करते हैं कि दाता जैसा सुखी जीवन हमें दिया है वैसा ही सबको बख्सें।

भक्त कर्मवीर दास पुत्र श्री घासीराम,
गाँव भराण, त. महम, जिला-रोहतक।

“भगवान हो तो ऐसा”

मैं भक्त महाबीर सिंह पुत्र श्री केहर सिंह, गाँव-ढराणा जिला-झज्जर(हरियाणा) निवासी हूँ। पहले मैं शिव का कट्टर भक्त था। मेरे लीवर और गुर्दे के अंदर पीप पड़ गई थी और मेरे को मेरा भाई भक्त महेन्द्र सिंह मैडिकल में ईलाज करवाने के लिए ले गया, उससे पहले भी काफी पैसा लग गया था। लेकिन कोई आराम नहीं हुआ। मैडीकल के अंदर अल्ट्रासाऊंड के बाद तीन ऑपरेशन बोल दिए। मैं घबरा गया। मैंने ऑपरेशन करवाने से इंकार कर दिया। खाना भी नहीं खाया जाता था। हालत बिल्कुल नाजुक हो चुकी थी। मेरा बड़ा भाई महेन्द्र कहा करता कि आप संत रामपाल जी से उपदेश ले लो, वे पूर्ण परमात्मा के अवतार आए हैं। कबीर परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म हैं। मैं कहता था कि शिवजी भगवान के सामने तेरे कबीर जुलाहे (धाणक) की क्या औकात है। कबीर तो एक कवि था, वह भगवान नहीं हो सकता। मेरे बड़े भाई महेन्द्र सिंह पुत्र श्री केहर सिंह का परिवार भी बिल्कुल उजड़ा हुआ था। संत रामपाल जी महाराज की शरण में जाने से वे पूर्ण सुखी हैं। उन्होंने सर्व पूर्व वाली पूजाऐं त्याग रखी हैं। वे फिर भी बहुत सुखी हैं। मैं भी

मानता था, परन्तु फिर भी मैं अपने भगवान शिवजी से अधिक किसी को नहीं मानता था। मेरा बड़ा भाई महेन्द्र मुझे कहता था महाबीर यही भूल सबको लगी है। पूर्णब्रह्म कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही हैं। इनकी शक्ति के सामने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म तो बहुत न्यून शक्ति युक्त हैं। जैसे देश के प्रधान मंत्री व राष्ट्रपति के सामने प्रान्त के मंत्री की शक्ति होती है, इतना अंतर परमेश्वर कबीर जी(राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री जानों) तथा शिव जी (एक विभागीय मंत्री जानों) की शक्ति में है। अब आप स्वयं ही विचार करें कि 'कहाँ ठांठां (कविर्देव/कबीर परमेश्वर) कहां म्यां-म्यां (भगवान शिव जी) अर्थात् खागड़ की तुलना में बकरा। संत रामपाल जी महाराज ने सर्व सद् ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया है तथा भक्ति शक्ति से स्व अनुभव से भी सही पाया है, तब अपनी जे.ई. की नौकरी त्यागकर भक्ति मैदान में कूदे हैं। आज सर्व संतों व महंतों तथा आचार्यों को पिछोड़ कर रख दिया है। सर्व पंथों व महर्षि दयानन्द जैसे को भी उन्हीं के लेखों से फेल कर दिया। समाचार पत्रों में भी खुल्लम-खुला सर्व को ललकारा है। कोई नहीं बोलता। आर्य समाज के कुछ नादानों ने विरोध किया था, मुँह की खानी पड़ी। क्योंकि महाराज रामपाल जी प्रमाणों सहित बात करते हैं। अन्य केवल निराधार दंत कथाओं के आधार पर ही मार्ग दर्शन कर रहे हैं। सत्य के सामने असत्य नहीं टिक सकती।

बड़े भाई महेन्द्र की उपरोक्त बातें सुनकर मन में आता था कि लड़ पडूं, परन्तु बड़ा होने के नाते नहीं बोलता था। कोई और कह देता कि 'कहां ठांठां (कबीर परमेश्वर) कहां म्यां म्यां(भगवान शिव जी) तो मैं (महाबीर) अवश्य लड़ाई कर देता। परन्तु अब पता चला कि सचमुच कबीर जी पूर्ण परमेश्वर ही हैं। मरता क्या नहीं करता ? उस दिन मैंने अपने भाई महेन्द्र से कहा कि मेरी जान बचा ले। मेरे भाई महेन्द्र ने कहा कि करौंथा आश्रम में चल तेरी जान वहीं बचेगी। मुझे ऑप्रेशन थियेटर में ले जाने के लिए ट्राली में लिटा दिया था तथा ऑप्रेशन वाले कपड़े पहना दिए थे। मैं उठकर चल पड़ा और कपड़े उतार कर अपने कपड़े पहन कर अपने भाई महेन्द्र से कहा कि मैं नाम ले लूंगा। हम गाड़ी करके मैडिकल रोहतक से सीधे बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज की शरण में आए। नाम उपदेश लिया, उसी समय आश्रम में मैंने भोजन पाया। मैं फिर मैडीकल में गया और जाँच करवाई। डॉक्टर आश्चर्य में पड़ गए। और मेरे कोई तकलीफ नहीं पाई। मैं स्वस्थ हो गया। मेरा आश्रम में कोई खर्च नहीं हुआ। नाम तथा मंत्र जाप की पुस्तिका मुफ्त प्राप्त हुई। मेरा सारा परिवार अन्य देवी-देवताओं की पूजा पाठ किया करता, परन्तु उपदेश लेने के बाद सर्व त्याग दी, पहले से अधिक सुखी व स्वस्थ हो गए। बन्दी छोड़ पूर्ण परमात्मा सतगुरु रामपाल जी महाराज का दिन-रात गुणगान करते हैं।

संत रामपाल जी महाराज का मुख्य उद्देश्य तो नाम उपदेश देकर भक्ति करवाके काल के जाल से मुक्त करवाना है। समाज सुधार व अन्य सुख तो रूंगे में अर्थात् स्वयं ही हो जाते हैं।

''सत साहेब''

भक्त महाबीर

"लुटे पिटों को सहारा"

मैं भक्त जीयाराम (राजू) पुत्र श्री गणेशी राम, गाँव-ढ़राणा निवासी हूँ। मेरे और मेरी पत्नी को

असाध्य रोग था, कोई ओपरा-पराया कहता था। डॉक्टरों ने टी.बी. बताई। हमने डॉक्टरों से भी काफी ईलाज करवाया और देवी-देवताओं की बहुत पूजा की और यू.पी., हरियाणा, राजस्थान में बालाजी आदि भी ईलाज के लिए गए, काफी पैसा लग गया। दस-बारह वर्ष तक ऐसे ही भटकते रहे। हमने कम-से-कम दो लाख रूपये लगा दिऐं होंगे, लेकिन कोई आराम नहीं हुआ। हम बहुत तंग हो गए। मैं बहुत निर्धन हो गया, 50 रूपये कमाता और 100 रूपये खर्च हो जाते। कई बार आत्म हत्या करने की सोची। हवन भी करवाया। हवन करते समय पंडित डर गया और पंडित ने बताया कि इसके अंदर बहुत बड़ा जिन्द है। पंडित ने कहा कि मैं फिर से हवन करूंगा और फिर बताउंगा। भक्त महेन्द्र पुत्र श्री केहर सिंह(जो मेरे गाँव के हैं) ने संत रामपाल जी महाराज से नाम ले रखा था। मुझे कई बार कहता था कि जीयाराम कहीं घूमले और ठगों के पास लुट ले, संत रामपाल जी महाराज बिना कष्ट निवारण नहीं हो सकता, भक्त महेन्द्र कहता था कि मैं भी सर्व भटक कर तथा लुट कर संत रामपाल जी महाराज के आशीर्वाद से व उनके द्वारा दिए नाम से उजड़ कर बसा हूँ। मैं भक्त महेन्द्र से कहता था कि करौंथा वाला आश्रम तो अभी बना है। मैं तो बहुत बड़े-बड़े मन्दिरों में जा चुका हूँ। परन्तु मैं तंग आने के बाद भक्त महेन्द्र से मिला। हमने भक्त महेन्द्र के साथ जाकर अगले दिन सतगुरु रामपाल जी महाराज से मुफ्त नाम उपदेश लिया और उपदेश लेने के बाद हम बिल्कुल स्वस्थ हो गए। हमें नाम उपदेश लिए सन् 2005 में लगभग दो वर्ष हो गये हैं। अब हमारा पूरा परिवार स्वस्थ है। हम रात-दिन पूर्ण परमात्मा बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज का गुणगान करते हैं।

संत रामपाल जी महाराज का मुख्य उद्देश्य तो नाम उपदेश देकर भक्ति करवाके काल के जाल से मुक्त करवाना है। समाज सुधार व अन्य सुख तो रूंगे में अर्थात् स्वयं ही हो जाते हैं।

''सत साहेब''

भक्त जियाराम

"संत हो तो ऐसा"

मैं शशी प्रभा प्रधानाचार्या(प्रिंसिपल) राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय डिगाना जिला जीन्द में कार्यरत हूँ। मैं अपने घर के लड़ाई-झगड़े, मानसिक तनाव के कारण लगभग 35 वर्ष से परेशान थी। पति मारता भी था। सारा वेतन छीन लेता था तथा जितना उससे परेशान किया जाता वह करता था। 32 किल्ले जमीन का मालिक होते हुए भी हमारे को सदा कुत्तों की तरह रोटी देता था। मैंने उसके तथा अपनी सभी रिश्तेदारों से मदद माँगी। मैंने समाज में रहने वाले पंचायती आदमियों से भी मदद माँगी। मेरा किसी ने भी साथ नहीं दिया। यह विचार करके कि संत बिगड़े कार्यों को संवार दिया करते हैं, मैंने आनन्दपुर (बीना) मध्यप्रदेश वाले को गुरु बनाया। लेकिन घर में वही क्लेश। लड़कियां परमात्मा की दया से अपने दम पर पढ़ाई। अब शादी नहीं हो पा रही थी। बाप ने रिश्ता ढूंढना बंद कर दिया। अब इसी उलझन के कारण मैं बाला जी गई। बगड़ (राजस्थान), धौली धार हिमाचल प्रदेश गई। पीर फकीर, गुरुद्वारे का सहारा लिया। घर में जब अकेली होती थी तब रोती थी कि धरती पर परमात्मा है ही नहीं, जुल्म और नाइन्साफी सहन करती-करती मेरी हालत पागलों की सी हो गई थी।

फिर एक दिन यह दुःखी आत्मा उस परमात्मा के दरबार तक पहुँची जो दुःख निवारण करता है। मेरे पड़ौस में पाठ हुआ। मेरी पड़ौसिन मुझे प्रसाद देने के लिए मेरे घर बुलाने आई। जाने के बाद बातचीत हुई। पाठ के बारे में बताया कि यह पाठ परमात्मा की सच्ची वाणी है, जिससे दुःख कटते हैं। परन्तु यह पाठ केवल संत रामपाल जी की आज्ञा अनुसार करवाने से ही लाभ होता है। अन्य किसी से पाठ करवाने से कोई लाभ नहीं होता। जैसे राजा परिक्षीत को कथा सुनाने के समय किसी भी ऋषि ने पाठ (कथा) करने की हिम्मत नहीं की। क्योंकि वे अनअधिकारी थे तथा सातवें दिन परिणाम मिलना था। इसलिए स्वर्ग से ऋषि सुखदेव आए, उन्होंने राजा परिक्षीत को नाम देकर (शिष्य बनाकर) सात दिन तक कथा (पाठ) की। तब राजा परिक्षीत को कुछ राहत मिली। वर्तमान में कोई भी वास्तविक ज्ञान व सत्य साधना से परिचित नहीं है। इसलिए कोई भी पाठ कर देता है। जिससे साधक को कोई लाभ नहीं होता। वह बहन जिससे मेरी चर्चा हुई, संत रामपाल जी महाराज के विचार सुना करती थी, अशिक्षित होते हुए शास्त्रों का गूढ़ रहस्य संत जी से सुना हुआ सुनाया। मैं प्रधान आचार्या (प्रिंसिपल) होते हुए भी हैरान थी। ऐसा लगा परमात्मा मेरा हाथ पकड़ने जा रहे हैं। बहन ने बताया हमारे गुरु जी दुःखों का निवारण करते हैं। मैंने अपने को व्यक्त किया कि आप मुझे अपने गुरु जी के दर्शन करवा सकते हो। मालिक की दया से अगले दिन मैं गुरु रामपाल महाराज जी को साधारण-सी कुर्सी पर बैठा पाया, मैं नहीं जानती थी कि संत क्या होते है, उनकी महिमा क्या होती है। जो जितना उच्चा होता है, वह उतना ही साधारण दिखता है। हमारा स्थान तो धरती से भी नीचे है। हम परमात्मा की महिमा को क्या समझें। मेरे गुरु जी ने मेरी व्यथा सुनी और कहा कि आप नाम उपदेश ले लो, सब ठीक हो जायेगा। अगले दिन मुझे उपदेश दिया। एक महीने के अंदर-अंदर लड़की का रिश्ता आया और फिर शादी हुई। मुझे ऐसा लगा कि कुछ अनहोनी सी हो रही है। वही पति जो रिश्ता भी नहीं कर रहा था, आज शादी कर रहा है। फिर कुछ समय बाद मेरी बड़ी लड़की के पेट में रिसौली हो गई। बच्चा अभी था नहीं फिर चिन्ता बनी। मैंने अपने लड़के को कहा कि तुमने देखा कि जब हम फिल्म देखते हैं तो इधर से परमात्मा की प्रार्थना की जाती है और उधर से किसी व्यक्ति का ऑप्रेशन चल रहा हो तो वह ठीक हो जाता है। वह मेरी बात से सहमत हो गया और मैं ताजपुर(दिल्ली) सतगुरु के सत्संग में सेवा में चली गई। वहाँ से मैं लड़की के पास अस्पताल में गई। ऑप्रेशन ठीक हुआ। जो शंका कैंसर की हुई वही भी ठीक हुई। फिर लड़की गर्भवती हुई। इतने में जमाई के साथ एक ट्रेक्टर मोटर साईकिल की दुर्घटना का समाचार मिल गया। मुझे तो मेरे पूज्य गुरुदेव जी के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझता, मालिक की जितनी महिमा गाऊं थोड़ी है। इस जिव्हा से जितना मैं अपने गुरु जी की महिमा लोगों को सुनाऊं थोड़ी है। डेढ़ महीने के अंदर ठीक होकर जमाई घर आ गया। दुनियां क्या समझे कि मेरी प्रार्थना परमात्मा सुनता है।

जिस दिन से मैंने यह उपदेश लिया मैंने उन नकली संतों की फोटो अपने आंगन में डालकर स्वाह कर दी। उस दिन से मेरी यह जीवन की गाड़ी पटरी पर चढ़ी। 23 सितम्बर 2003 को मैंने अपनी जागती आँखों से 4-5 बजे को एक भयानक आकृति देखी। इतनी भयंकर आकृति का

व्यक्ति था कि यदि नाम न ले रखा होता तो मेरा दिल फट जाता। परन्तु मुझे उस समय तो भय नहीं लगा। लेकिन यह एहसास हो गया था कि यह यमदूत है। अगले दिन मैंने अपने गुरु जी को बताया, जिन्होंने यह स्पष्ट किया कि मेरे उक्त दिन को सांस पूरे हो गए थे। अब मैं अपने परमात्मा स्वरूप गुरु जी की दया से ही जी रही हूँ। उन्हीं की कृपा से छोटी लड़की की शादी एक इन्जिनियर लड़के से पिछले वर्ष हुई। दो तीन बार मेरी नौकरी जाने की भी आशंका हुई। लेकिन फिर मेरे परमात्मा ने मुझे संभाला, मुझे दो पदोन्नति दी। संत रामपाल जी महाराज कहते हैं कि राजा भी प्रभु का ही बच्चा होता है। उसमें भी प्रभु की शक्ति काम करती है। परमेश्वर ही अपने साधक के लिए राजा में प्रेरणा करके सर्व फेर बदल करवा देता है। करता हुआ राजा दिखाई देता है, परन्तु करवाता परमात्मा ही है। कोई मेरे गुरु रामपाल महाराज जी का आसरा लेकर देखो, लेने वालों के इसी तरह से कांटे निकलेंगे, जैसे मेरे निकले हैं। परमात्मा सचमुच बेसहारों को सहारा देते हैं। आत्मा की पुकार सुनते हैं। मेरे साथ इन चन्द वर्षों में जो हुआ उसे केवल परमात्मा ही कर सकता हैं मेरे गुरु जी की महिमा वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं। यह स्वयं ही कबीर साहिब के अवतार हैं। जो परमात्मा का दीदार चाहता है वह करौंथा आना ना भूलें। मुझ छोटे से जीव को आपने कैसे उभारा? आपकी मैं कृतज्ञ हूँ, किन शब्दों में आपकी महिमा गाऊं ? इन्हीं शब्दों को पाठक अपने हृदय में उतार लो और लाभ उठाओ।

बहुत तुच्छ प्राणी
भक्तमति शशी

"अपने भक्त को धर्मराज के दरबार से छुड़वाना"

मैं भक्त ओमप्रकाश सुपुत्र श्री मातादीन, नजफगढ़, दिल्ली का निवासी हूँ। मुझे परम पूज्य संत रामपाल जी महाराज से नाम लिए डेढ़ वर्ष हो गया है। मेरी नजफगढ़ में हलवाई की दुकान है। 19 मई 2005 को रात के 9:30 बजे मुझे दुकान पर पेट में बहुत ज्यादा दर्द हुआ। दर्द के कारण मेरी हालत बिल्कुल खराब हो गई थी। मैं गुरु जी का नाम जपते-जपते घर पहुँचा। घर में घुसते ही सामने गुरु जी की तस्वीर के सामने दण्डवत प्रणाम किया। मैं दण्डवत् प्रणाम करके खड़ा हुआ तो मुझे पेट का दर्द महसूस नहीं हुआ। फिर मैं चारपाई पर लेट गया। चारपाई पर लेटते ही मैं बेहोश हो गया। मेरे चारों तरफ यम के दूत चक्कर लगाने लगे और मुझे डराने लगे। मैं डर के मारे बेहोश हो गया। तब यम के दूतों ने मेरे ऊपर सफेद चादर डाली और मेरे को उठा कर यमराज के दरबार में ले गये। यमराज के दरबार में मैंने देखा कि वहाँ पर लाईन लगी हुई थी। जब मेरा नम्बर आया तो यमराज ने कहा कि इसको तालाब में फैंक दो। मैंने तालाब की तरफ देखा तो मुझे तालाब में मगरमच्छ ही मगरमच्छ दिखाई दिए। मैं मगरमच्छों को देखकर डर गया। तब मैंने अपने परम पूज्य गुरुदेव संत रामपाल जी महाराज को याद किया, उस समय धर्मराज के दूत मुझे तालाब में फैंकने के लिए तैयार हो गये। मैंने गुरु जी को पुकारा कि - ''हे गुरु जी बचाओ''। तब मैंने देखा कि मेरे गुरु जी कबीर साहेब के रूप में आए और मुझे तालाब में गिरने से पहले ही बाहर निकाल लिया। यमराज ने कबीर साहेब के चरणों में

गिरकर डण्डौतं प्रणाम किया। फिर गुरु जी अपने रूप में आ गए और मुझसे कहने लगे कि अब तू किस लिए डर रहा है, अब मैं तेरे साथ हूँ। तब मेरा डर दूर हो गया। धर्मराज ने गुरु जी से बहस की कि आप इसको बार-बार क्यों बचाते हो। यह तो मेरा भोजन है। आप ने इसको पहले भी दो बार मरते मरते बचाया है। 'पहली बार तो स्कूटर और जीप की आमने-सामने की टक्कर होने पर भी मुझे खरोंच तक नहीं आई थी। और दूसरी बार मोटर साईकिल स्लिप होने के बाद मैं चलते ट्रक के नीचे जा गिरा। गुरुदेव जी ने मुझे उस ट्रक के नीचे से बचाया।'

तब गुरुदेव ने धर्मराज को कहा - 'इसने मेरी पिछले जन्म की भक्ति की हुई थी, इसलिए मैंने इसे बचाया। फिर धर्मराज ने कहा अब कि बार आपने क्यों बचाया, जबकि मैंने इसका नाम तुड़वा रखा था। फिर गुरु जी ने कहा कि इसका नाम आपने तुड़वाया था, इसने अपनी मर्जी से नहीं तोड़ा। इसलिए मैंने बचाया, यह मेरी भक्ति करता है।' तब काल ने कहा कि मैं देखता हूँ कि आप इसे कब तक बचाते हो। फिर गुरु जी ने कहा कि मैं पल-पल इसके साथ हूँ, तुम इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते।

फिर सतगुरुदेव ने धर्मराज को कहा कि अबकि बार इसको किसी प्रकार का कष्ट पहुँचाया तो जैसे तू लोगों को सत्ताता है, उससे बुरा हाल तेरा करूंगा।

उसके बाद सतगुरुदेव जी मुझे धर्मराज के दरबार से नीचे लेकर आए और मुझसे कहा कि तू जल्दी से जल्दी अपने घर वालों को बता दे कि मैं बिल्कुल ठीक हूँ और मुझको घर ले चलो। दो डॉक्टर तो मना कर चुके थे कि हमारे बस की बात नहीं है। मेरे घर वाले मुझे हस्पताल (मैडीकल) में लेकर जा रहे थे। मैंने घरवालों से कहा कि मुझे जल्दी से जल्दी घर ले चलो, मैं बिल्कुल ठीक हूँ। जो मेरे साथ थे, वे एकदम आश्चर्य में पड़ गए कि ये तो मर गया था। इसको होश कैसे आ गया ? ये ऐसी बातें कैसे कर रहा है ? फिर मेरे घर वाले रास्ते में से वापिस घर की तरफ आने लगे तो मुझे सतगुरुदेव कमल के फूल पर बैठे हुए दिखाई दिए। कभी तो गुरु जी के रूप में और कभी कबीर साहेब के रूप में दिखाई दे रहे हैं और मेरी तरफ हाथ हिलाते हुए जाते दिखाई दिए। मैं फिर जोर-जोर से रोने लगा कि मेरे गुरु जी गए, मेरे गुरु जी गए। हमारे घर वाले फिर घबरा गए कि यह ऐसे कैसे कर रहा है। फिर मैडीकल की तरफ जाने लगे। तब गुरु जी ने आवाज लगाई कि भक्त तू यह क्या कर रहा है, मैंने तो तेरे को कहा है कि घर चला जा जल्दी से जल्दी। फिर मैंने अपने घर वालों से कहा कि मैं बिल्कुल ठीक हूँ, मुझे मेरे गुरु जी दिखाई दिए थे। तब हमारे घर वाले मेरे को घर लेकर गए और घरवाले एकदम आश्चर्य में पड़ गए कि यह तो मर गया था, यह जिन्दा कैसे हुआ? मैंने अपने घरवालों को अपने साथ बीती सारी घटना बताई कि मेरे साथ ऐसे-ऐसे हुआ और मेरे सतगुरुदेव जी मुझे घर छोड़कर चले गए।

भक्त ओमप्रकाश दास
RZ-15, B Block, गली नं. 2, मकसूदा
बाद कॉलोनी, नजफगढ़, नई दिल्ली।

❑❑❑

''यथार्थ कबीर पंथ परिचय''

''संत धर्मदास जी के वंशों के विषय में''

प्रश्न : संत धर्मदास जी की गद्दी दामा खेड़ा वाले कहते हैं कि इस गद्दी से नाम प्राप्त करने से मोक्ष संभव है ?

उत्तर : संत धर्मदास जी का ज्येष्ठ पुत्र श्री नारायण दास काल का भेजा हुआ दूत था। उसने बार-बार समझाने से भी परमेश्वर कबीर साहेब जी से उपदेश नहीं लिया। पुत्र प्रेम में व्याकुल संत धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर साहेब जी ने नारायण दास जी का वास्तविक स्वरूप दर्शाया। संत धर्मदास जी ने कहा कि हे प्रभु ! मेरा वंश तो काल का वंश होगा। यह कह कर संत धर्मदास जी बेहोंश(अचेत) हो गए। काफी देर बाद होश में आए। फिर भी अतिचिंतित रहने लगे। उस प्रिय भक्त का दुःख निवारण करने के लिए परमेश्वर कबीर साहेब जी ने कहा कि धर्मदास वंश की चिंता मत कर। यह काल का दूत है। उसका वंश पूरा नष्ट हो जाएगा तथा तेरा बियालीस पीढी तक वंश चलेगा। तब संत धर्मदास जी ने पूछा कि हे दीन दयाल ! मेरा तो इकलौता पुत्र नारायण दास ही है। तब परमेश्वर ने कहा कि आपको एक शुभ संतान पुत्र रूप में मेरे आदेश से प्राप्त होगी। उससे केवल तेरा वंश चलेगा। तब धर्मदास जी ने कहा था कि हे प्रभु ! आप का दास वृद्ध हो चुका है। अब संतान का होना असंभव है। आपकी शिष्या भक्तमति आमिनी देवी का मासिक धर्म भी बंद है। परमेश्वर कबीर साहेब ने कहा कि मेरी आज्ञा से आपको पुत्र प्राप्त होगा। उसका नाम चुड़ामणी रखना। यह कह कर परमेश्वर कबीर साहेब ने उस भावी पुत्र को धर्मदास के आंगन में खेलते दिखाया। फिर अन्तर्ध्यान कर दिया। संत धर्मदास जी शांत हुए। कुछ समय पश्चात् भक्तमति आमिनी देवी को संतान रूप में पुत्र प्राप्त हुआ उसका नाम श्री चुड़ामणी जी रखा। बड़ा पुत्र नारायण दास अपने छोटे भाई चुड़ामणी जी से द्वेष करने लगा। जिस कारण से श्री चुड़ामणी जी बांधवगढ़ त्याग कर कुदरमाल नामक शहर(मध्य प्रदेश) में रहने लगा। कबीर परमेश्वर जी ने संत धर्मदास जी से कहा था कि धार्मिकता बनाए रखने के लिए अपने पुत्र चुड़ामणी को केवल प्रथम मन्त्र(जो यह दास/रामपाल दास प्रदान करता है) देना जिससे इनमें धार्मिकता बनी रहेगी तथा तेरा वंश चलता रहेगा। परंतु आपकी सातवीं पीढ़ी में काल का दूत आएगा। वह इस वास्तविक प्रथम मन्त्र को भी समाप्त करके मनमुखी अन्य नाम चलाएगा। शेष धार्मिकता का अंत ग्यारहवां, तेरहवां तथा सतरहवां गद्दी वाले महंत कर देंगे। इस प्रकार तेरे वंश से भक्ति तो समाप्त हो जाएगी। परंतु तेरा वंश फिर भी बियालीस(42) पीढ़ी तक चलेगा। फिर तेरा वंश नष्ट हो जाएगा।

प्रमाण पुस्तक "सुमिरण शरण गह बयालिश वंश" लेखक : महंत श्री हरिसिंह राठौर, पृष्ठ 52 पर -

वाणी : सुन धर्मनि जो वंश नशाई, जिनकी कथा कहूँ समझाई।।93।।

काल चपेटा देवै आई, मम सिर नहीं दोष कछु भाई।।94।।

सप्त, एकादश, त्रयोदस अंशा, अरु सत्रह ये चारों वंशा।।95।।

इनको काल छलेगा भाई, मिथ्या वचन हमारा न जाई।।96।।

जब-2 वंश हानि होई जाई, शाखा वंश करै गुरुवाई।।97।।

दस हजार शाखा होई है, पुरुष अंश वो ही कहलाही है।।98।।

वंश भेद यही है सारा, मूढ जीव पावै नहीं पारा।।99।।
भटकत फिरि हैं दोरहि दौरा, वंश बिलाय गये केही ठौरा।।100।।
सब अपनी बुद्धि कहै भाई, अंश वंश सब गए नसाई।।101।।

उपरोक्त वाणी में कबीर परमेश्वर ने अपने निजी सेवक संत धर्मदास साहेब जी से कहा कि धर्मदास तेरे वंश से भक्ति नष्ट हो जाएगी वह कथा सुनाता हूँ। सातवीं पीढ़ी में काल का दूत उत्पन्न होगा। वह तेरे वंश से भक्ति समाप्त कर देगा। जो प्रथम मन्त्र आप दान करोगे उसके स्थान पर अन्य मनमुखी नाम प्रारम्भ करेगा। धार्मिकता का शेष विनाश ग्यारहवां, तेरहवां तथा सतरहवां महंत करेगा। मेरा वचन खाली नहीं जाएगा भाई। सर्व अंश वंश भक्ति हीन हो जाएंगे। अपनी-2 मन मुखी साधना किया करेंगे।

"चौदहवीं महंत गद्दी का परिचय"

पुस्तक "धनी धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय" पृष्ठ 49 पर तेरहवें महंत दयानाम के बाद कबीर पंथ में उथल–पुथल मची। काल का चक्र चलने लगा। क्योंकि इस परम्परा में कोई पुत्र नहीं था। तब तक व्यवस्था बनाए रखने के लिए महंत काशीदास जी को चादर दिया गया। कुछ समय पश्चात् काशी दास ने स्वयं को कबीर पंथ का आचार्य घोषित कर दिया तथा खरसीया में अलग गद्दी की स्थापना कर दी। यह देख तीनों माताऐं रोने लगी कि काल का चक्र चलने लगा। बाद में कबीर पंथ के हित में ढाई वर्ष के बालक चतुर्भुज साहेब को बड़ी माता साहिब ने गद्दी सौंप दी जो "गृन्धमुनि नाम साहेब" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

विचार करें : एक ढाई वर्ष का बालक क्या नाम व ज्ञान देगा ?

माता जी ने गद्दी पर बैठा दिया। बेटा महंत बन गया। जिसे भक्ति का क-ख का भी ज्ञान नहीं। सन्त धर्मदास जी के वंशज भोले श्रद्धालुओं को दंत कथाओं (लोकवेद) के आधार से भ्रमित करके गुमराह कर रहे हैं।

महंत काशी दास जी ने खरसिया शहर में नकली कबीर पंथी गद्दी प्रारम्भ कर दी। उसी खरसिया से एक श्री उदीतनाम साहेब ने मनमुखी गद्दी लहर तारा तालाब पर काशी(बनारस) में चालु कर रखी है। कबीर चौरा काशी में श्री गंगाशरण शास्त्री जी भी अलग से महंत पद पर विराजमान है। परंतु तत्व ज्ञान व वास्तविक भक्ति का किसी को क-ख भी ज्ञान नहीं है।

उपरोक्त विवरण से प्रभु प्रेमी पाठक स्वयं निर्णय करें कि दामा खेड़ा वाले महंतों के पास वास्तविक भक्ति है या ड्रामाबाजी?

श्री चुड़ामणी जी के कुदरमाल चले जाने के पश्चात् बांधवगढ़ पूरा नष्ट हो गया। आज भी प्रमाण है।

प्रश्न : दामा खेड़ा गद्दी वाले तो कहते हैं कि कबीर जी ने कहा था कि जब तक तेरी बियालीस वंश की गद्दी चलेगी तब तक मैं पृथ्वी पर नहीं आऊँगा अर्थात् अन्य को यह नाम दान आदेश नहीं दूंगा?

उत्तर : यह उनकी मनघड़ंत कहानी है। कबीर सागर में कबीर बानी नामक अध्याय में पृष्ठ 136-137 पर बारह पंथों का विवरण देते हुए वाणी लिखी हैं जो निम्न हैं :-

द्वादश पंथ चलो सो भेद

द्वादश पंथ काल फुरमाना। भूले जीव न जाय ठिकाना।।

प्रथम आगम कहि हम राखा। वंश हमार चूरामणि शाखा।
दूसर जगमें जागू भ्रमावै। विना भेद ओ ग्रन्थ चुरावै।।
तीसरा सुरति गोपालहि होई। अक्षर जो जोग द्दढ़ावे सोई।।
चौथा मूल निरञ्जन बानी। लोकवेद की निर्णय ठानी।।
पंचम पंथ टकसार भेद लै आवै। नीर पवन को सन्धि बतावै।।
सो ब्रह्म अभिमानी जानी। सो बहुत जीवन की करी है हानी।।
छठवाँ पंथ बीज को लेखा। लोक प्रलोक कहें हममें देखा।।
पांच तत्व का मर्म द्दढावै। सो बीजक शुक्ल ले आवै।।
सातवाँ पंथ सत्यनामि प्रकाशा। घटके माहीं मार्ग निवासा।।
आठवाँ जीव पंथले बोले बानी। भयो प्रतीत मर्म नहिं जानी।।
नौवें राम कबीर कहावै। सतगुरू भ्रमले जीव द्दढावै।।
दसवें ज्ञान की काल दिखावै। भई प्रतीत जीव सुख पावै।।
ग्यारहवें भेद परमधाम की बानी। साख हमारी निर्णय ठानी।।
साखी भाव प्रेम उपजावै। ब्रह्मज्ञान की राह चलावै।।
तिनमें वंश अंश अधिकारा। तिनमें सो शब्द होय निरधारा।।
सम्वत् सत्रासै पचहत्तर होई, तादिन प्रेम प्रकटें जग सोई।।
साखी हमारी ले जीव समझावै, असंख्य जन्म ठौर नहीं पावै।।
बारवें पंथ प्रगट है बानी, शब्द हमारे की निर्णय ठानी।।
अस्थिर घर का मरम न पावैं, ये बारा पंथ हमही को ध्यावैं।
बारवें पंथ हम ही चलि आवैं, सब पंथ मेटि एक ही पंथ चलावें।।

उपरोक्त वाणी में ''बारह पंथों'' का विवरण किया है तथा लिखा है कि संवत् 1775 में प्रभु का प्रेम प्रकट होगा तथा हमरी बानी प्रकट होवेगी। (संत गरीबदास जी महाराज छुड़ानी, (हरियाणा) वाले का जन्म 1774 में वैसाख पूर्णमासी को हुआ है उनको प्रभु कबीर 1784 में मिले थे। यहाँ पर इसी का वर्णन है तथा सम्वत् 1775 के स्थान पर 1774 होना चाहिए, गलती से 1775 लिखा है दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि भारतीय वर्ष चैत्र मास से प्रारम्भ होता है सन्त गरीबदास जी का जन्म वैसाख मास में हुआ जो चैत्र के बाद प्रारम्भ होता है। कई बार दो चैत्र मास भी बनाए जाते हैं। उस समय शिक्षा का अति अभाव था। प्रत्येक गाँव में एक ही तीथि बताने वाला होता था। वह भी अशिक्षित ही होता था। आस–पास के शहर या गाँव से तिथि किसी अन्य ब्राह्मण से पता करके फिर गाँव में सर्व को बताता इस कारण से भी संवत् 1775 के स्थान पर संवत् 1774 लिखा गया हो वास्तव में यह संकेत गरीबदास जी के विषय में ही है)।

भावार्थ यह है कि :- कबीर परमात्मा ने गरीबदास जी का ज्ञान योग खोल कर उनके द्वारा अपना तत्वज्ञान स्वयं ही प्रकट किया। जो सत्ग्रन्थ साहेब रूप में लीपि बद्ध है। कारण यह था कि कबीर वाणी में नकली कबीर पंथियों ने मिलावट कर दी थी। इसलिए परमेश्वर कबीर जी की महिमा का ज्ञान पुनर् प्रकट कराया फिर भी तत्व भेद (सार ज्ञान) गुप्त ही रखा (जो अब प्रकट हो रहा है।) इस कारण गरीबदास जी के पंथ में तत्वज्ञान नहीं है जिस कारण से वे गरीदास साहेब की वाणी का विपरीत अर्थ लगा कर जन्म व्यर्थ करते रहे उन्हें असंख जन्म भी ठौर नहीं है अर्थात् वे मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते केवल एक सन्त शीतल दास जी वाली प्रणाली

में मुझ दास तक एक सन्त ही पार होता आया है जो एक सन्त सारनाम प्राप्त करके केवल एक को आगे बताकर गुप्त रखने की कसम दिलाता था। वह भी आगे केवल एक शिष्य को बताकर गुप्त रखता था समय आने पर परमेश्वर कबीर जी के संकेत से ही आगे शिष्य को आज्ञा देता था। इस प्रकार मुझ दास तक यह सारनाम कड़ी से जुड़ा हुआ पहुँचा है अब यह सर्व अधिकारी श्रद्धालु भक्तों को देने का आदेश प्रभु कबीर जी का है इसलिए कहा है बारहवां पंथ जो गरीबदास जी का चलेगा यह पंथ हमारी साखी लेकर जीव को समझाएगें। परन्तु वास्तविक मन्त्र से अपरिचित होने के कारण गरीबदास पंथ के साधक असंख्य जन्म तक सतलोक नहीं जा सकते। उपरोक्त बारह पंथ हमको ही प्रमाण करके भक्ति करेगें परन्तु स्थाई स्थान (सतलोक) प्राप्त नहीं कर सकते। बारहवें पंथ (गरीबदास वाले पंथ) में आगे चलकर हम (कबीर जी) स्वयं ही आऐगें तथा सब बारह पंथों को मिटा एक ही पंथ चलाऐगें। उस समय तक सारशब्द छुपा कर रखना है। यही प्रमाण सन्त गरीबदास जी महाराज ने अपनी अमृतवाणी ''असुर निकंन्दन रमैणी'' में किया है कि ''सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी, सूती धरती सूम जगायसी'' पुराना रोहतक जिला (वर्तमान में सोनीपत जिला, झज्जर जिला, रोहतक जिला) दिल्ली मण्डल कहलाता है। जो पहले अग्रेंजों के शासन काल में केन्द्र के आधीन था। बारह पंथों का विवरण कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) पृष्ठ नं. 1870 पर भी है जिसमें बारहवां पंथ गरीबदास जी वाला पंथ स्पष्ट लिखा है।

कबीर साहेब के पंथ में काल द्वार प्रचलित बारह पंथों का विवरण कबीर चरित्र बोध (कबीर सागर) पृष्ठ नं. 1870 से :- (1) नारायण दास जी का पंथ (2) यागौदास (जागू) पंथ (3) सूरत गोपाल पंथ (4) मूल निरंजन पंथ (5) टकसार पंथ (6) भगवान दास (ब्रह्म) पंथ (7) सत्यनामी पंथ (8) कमाली (कमाल का) पंथ (9) राम कबीर पंथ (10) प्रेम धाम (परम धाम) की वाणी पंथ (11) जीवा पंथ (12) गरीबदास पंथ।

यदि कबीर परमश्वेर जी ऐसा वचन कहते कि ''जब तक धर्मदास का वंश चलेगा तब तक मैं पृथ्वी पर पग नहीं रखुंगा अर्थात् पृथ्वी पर प्रकट नहीं होऊँगा। तो सन् 1518 में सतलोक प्रस्थान के 33 वर्ष पश्चात् सन् 1551 में सात वर्षीय संत दादू साहेब जी को नहीं मिलते, 209 वर्ष पश्चात् सन् 1727 में दस वर्षीय संत गरीबदास जी को गाँव छुड़ानी, जिला झज्जर(हरियाणा प्रदेश, भारत) में नहीं मिलते तथा गरीबदास जी को नामदान नहीं देते और आगे नामदान करने का आदेश नहीं देते। इसके बाद फिर 292 वर्ष पश्चात् सात वर्षीय संत घीसा दास जी को गाँव खेखड़ा, जिला मेरठ(उतर प्रदेश) में नहीं मिलते। जो आज भी यादगार साक्षी हैं तथा उपरोक्त संतों द्वारा लिखी अमृत वाणी साक्षी रूप हलफिया ब्यान(एफिडेविट) है कि परमेश्वर कबीर जी काशी वाले जुलाहा धाणक ने स्वयं साक्षात दर्शन दिए तथा अपने सतलोक के भी दर्शन करा करके अपनी समर्थता का प्रमाण दिया।

मुझ दास(रामपाल दास) को परमेश्वर कबीर साहेब जी संवत् 2054 फाल्गुन मास शुक्ल पक्ष एकम(मार्च) 1997 को दिन के दस बजे मिले तथा सारशब्द की वास्तविकता तथा संगत को दान करने का सही समय का संकेत दे कर अर्न्तध्यान हो गए तथा इसको अगले आदेश तक रहस्य युक्त रखने का आदेश दिया।

''पवित्र कबीर सागर में अद्भुत रहस्य''

''अनुराग सागर'' :- यह अध्याय कबीर सागर का ही अंग है।

वर्तमान कबीर सागर के संशोधन कर्ता श्री युगलानन्द बिहारी (प्रकाशक एवं मुद्रक-खेमराज श्री कृष्ण दास, श्री वेंकेटेश्वर प्रेस मुंबई) द्वारा अपने प्रस्तावना में लिखा है कि मेरे पास अनुराग सागर की 46 (छियालिस) प्रतियाँ हैं। जिनमें हस्त लिखित तथा प्रिन्टिड हैं। सभी की व्याख्या एक दूसरे से भिन्न हैं। अब मैंने (श्री युगलानन्द जी ने) शुद्ध करके सत्य विवरण लिखा है।

विवेचनः- श्री युगलानन्द जी ने अनुराग सागर पृष्ठ 110 पर लिखा है कि धर्मदास साहेब जी नीरू का अवतार अर्थात् नीरू वाली आत्मा ही धर्मदास रूप में जन्मी थी तथा नीमा वाली आत्मा ही आमनी रूप में जन्मी थी। वाणी बना कर लिखी है, कबीर वचन :-

चलेहु हम तब सीस नवाई, धर्मदास अब तुम लग आई।
धर्मदास तुम नीरू अवतारा, आमिनि नीमा प्रगट बिचारा।।

तथा ''ज्ञान सागर'' पृष्ठ नं. 72 पर धर्मदास को नीरू अवतार नहीं लिखा है तथा नीरू के स्थान पर नूरी लिखा है।

विशेषः- पुस्तक ''धनी धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय'' दामाखेड़ा से प्रकाशित पृष्ठ नं. 9 पर लिखा है। धर्मदास जी का जन्म संवत् 1452(सन् 1395) तथा कबीर सागर ''कबीर चरित्र बोध'' पृष्ठ-1790 पर कबीर जी के जन्म के विषय में लिखा है कि संवत् 1455 (सन् 1398) ज्येष्ठ शुद्धि पूर्णिमा सोमवार के दिन सतपुरूष का तेज काशी के लहरतारा तालाब पर उतरा अर्थात् कबीर जी बालक रूप में प्रकट हुए।

पृष्ठ नं. 1791, 1792 (कबीर चरित्र बोध) पर लिखा है कि नीरू जुलाहा तथा उसकी पत्नी नीमा चले आ रहे थे। उन्हें एक बालक देखा उसे उठा लिया।

पृष्ठ नं. 1794 से 1818 तक आदरणीय गरीबदास जी महाराज (छुड़ानी-हरियाणा वाले) की वाणी के द्वारा महिमा समझाई है। सन्त गरीबदास जी महाराज की वाणी लिखी है (यह भी कबीर सागर में प्रक्षेप अर्थात् मिलावट का प्रत्यक्ष प्रमाण है)

उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि :-

(1.) संत धर्मदास साहेब का जन्म सन् 1395 में तथा परमेश्वर कबीर जी का अवतरण सन् 1398 में तथा नीरू व नीमा को मिलन सन् 1398 में तो धर्मदास जी व परमेश्वर कबीर जी तथा नीरू व नीमा समकालीन हुए। यह वाणी की धर्मदास जी नीरू वाली आत्मा थी, गलत सिद्ध हुई। इससे सिद्ध हुआ कि कबीर सागर में मिलावट (प्रक्षेप) है जो दामाखेड़ा वालो द्वारा जान बूझ कर किया गया। सन्त गरीबदास जी (छुडानी-हरियाणा वाले) का जन्म सन् 1717 (सम्वत् 1774) में हुआ। जो कबीर जी के अन्तर्ध्यान के 199 वर्ष बाद की गरीबदास जी की वाणी भी कबीर सागर में कबीर चरित्र बोध में लिखी है। जो प्रत्यक्ष प्रमाण करती है कि कबीर सागर में मिलावट है।

स्वसम वेद बोध (बोध सागर) पृष्ठ नं. 137 पर साखी लिखी है की काशी में भण्डारे के समय कबीर जी तो घर छोड़ कर चले गए तथा विष्णु ने भण्डारा किया:-

भीर भई साधुन की भारी, गृह तजि सत्य कबीर सिधारी। आये विष्णु भये भण्डारी, साधुन को आदर करि भारी।।

इससे सिद्ध है कि कोई नकली कबीर पंथी मिलावट कर्ता श्री कृष्ण का भी पुजारी है तथा सत् कबीर जी की महिमा से अपरिचित है।

विशेष विवरणः- कबीर सागर ''कबीर चरित्र बोध'' पृष्ठ नं. 1862 से 1865 तक लिखा है कि कलयुग में कबीर साहेब ने चार गुरू नियत किये हैं।

(1.) धर्मदास जी जिस के बयालिश वंश है तथा''उत्तर'' में गुरूवाई सौंपी है।

(2.) दूसरे चतुर्भुज ''दक्षिण'' में गुरूवाई करेगें।

(3.) तीसरे बंक जी ''पूर्व'' में गुरूवाई करेगें।

(4.) चौथे सहती जी ''पश्चिम'' में गुरूवाई करेगें।

जिस समय कबीर सागर लिखा गया सन् 1505(सम्वत् 1562) में उस समय तक केवल एक धर्मदास जी ही प्रकट हुए थे। जब ये चारों गुरू प्रकट हो जाऐगें तब पूरी पृथ्वी पर केवल कबीर साहेब जी का ही ज्ञान चलेगा।

यही प्रमाण ''अनुराग सागर'' पृष्ठ नं. 104-105 पर है। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि कलयुग में धर्मदास जी के अतिरिक्त तीन गुरू और पृथ्वी पर प्रकट होगें, उनके द्वारा भी जीव उद्धार होगा। दामा खेड़ा वालों द्वारा बनाई दन्त कथा गलत सिद्ध हुई कि कलयुग में केवल धर्मदास जी के वंशजो द्वारा ही जीव उद्धार सम्भव है अन्य द्वारा नहीं। यह उल्लेख कबीर सागर में कबीर वाणी पृष्ठ 160 पर लिखा है जो स्पष्ट मिलावट दिखाई देती है।

मुझ दास (रामपाल दास) को एक 450 वर्ष पुराना कबीर सागर प्राप्त हुआ है। जो बहुत ही जीरण-सीरण है। उसके आधार पर कबीर सागर का संशोधन किया जाएगा। ''वर्तमान कबीर सागर'' के संशोधन कर्ता श्री युगलानन्द जी ने ज्ञान प्रकाश- बोध सागर पृष्ठ नं. 37 के नीचे टिप्पणी की है कि इस ज्ञान प्रकाश की कई लीपी मेरे पास हैं परन्तु कोई भी एक दूसरे से मेल नहीं खाती। लेखक महात्माओं की कृपा से पक्षपात और अविद्यावश कबीर पंथ के ग्रन्थों की दुर्दशा हुई है।

विशेष :- भक्त जन विचार करें कि काल ने कैसा जाल फैलाया है। अपने दूतों द्वारा परमेश्वर के सत् ग्रन्थों को ही बदलवा डाला। फिर भी सत्य को छुपा नहीं सके।

कबीर :– चोर चुराई तूम्बड़ी, गाढै पानी मांही।
वो गाढे वह उपर आवै, सच्चाई छयानी नाहिं।।

इसकी पूर्ति परमेश्वर ने संत गरीबदास जी (छुड़ानी-हरियाणा वाले) द्वारा करवाई है। गरीबदास जी द्वारा भी संस्ययुक्त वाणी युक्त करवाई है जिस में श्री विष्णु जी की महिमा भी अधिक वर्णित है तथा सारज्ञान (तत्वज्ञान) भी गुप्त ढ़ंग से लिखा हैं संत गरीबदास जी की वाणी में निर्णायक ज्ञान नहीं है। कबीर जी की शक्ति से ही आदरणीय गरीबदास जी ने वाणी बोली है। कबीर जी ने जो बुलवाना था वही बुलवाया ताकि अब तक(मुझ दास रामपाल तक) भेद छुपा रहे। अब उसी बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने वह पूर्ण ज्ञान(तत्वज्ञान) मुझ दास(रामपाल दास) तेरहवां वंश द्वारा प्रकट कराया है।

कबीर वाणी पृष्ठ 134 :- ''वंश प्रकार''

प्रथम वंश उत्तम ।1। दूसरा वंश अहंकारी ।2। तीसरा वंश प्रचंड ।3। चौथे वंश बीरहे ।4। पाँचवें वंश निद्रा ।5। छटे वंश उदास ।6। सांतवें वंश ज्ञानचतुराई ।7। आठे द्वादश पन्थ विरोध ।8। नौवं वंश पंथ पूजा ।9। दसवें वंश प्रकाश ।10। ग्यारहवें वंश प्रकट पसारा ।11। बारहवें वंश प्रगट होय उजियारा ।12। तेरहवें वंश मिटे सकल अँधियारा ।13।

भावार्थ :- उपरोक्त विवरण में प्रथम वंश जो उत्तम लिखा है वह चूड़ामणी साहेब के विषय में है, दूसरा वंश अहंकारी लिखा है ''यागौदास'' पंथ है, तीसरा वंश प्रचण्ड लिखा है, यह सूरत गोपाल पंथ है, चौथा वंश बीरहे लिखा है, यह ''मूल निरंजन पंथ'' है। पांचवाँ वंश ''पूजा टकसार पंथ'' है। छठा वंश ''उदास'' यह ''भगवान दास पंथ'' सातवां वंश ''ज्ञान चतुराई'' यह सत्यनामी पंथ है। आठवाँ वंश''द्वादश पंथ विरोद्ध'' यह कमाल का पंथ है। नौवाँ वंश ''पंथ पूजा'' यह राम कबीर पंथ है। दशवाँ वंश प्रकाश यह प्रेमधाम (परम धाम) की वाणी पंथ है। ग्यारहवाँ वंश ''प्रकट पसारा'' यह जीवा पंथ है। बारहवाँ वंश ''गरीबदास पंथ'' है। तेरहवाँ वंश यह यथार्थ कबीर पंथ है जो मुझ दास (सन्त रामपाल दास) द्वारा बिचली पीढ़ी के उद्धार के लिए प्रारम्भ कराया है। कबीर परमेश्वर ने अपनी वाणी में काल से कहा था कि तेरे बारह पंथ चल चुके होगें तब मैं अपना नाद (वचन-शिष्य परम्परा वाला) वंश अथार्त् अंस भेजेगें उसी आधार पर यह विवरण लिखा है। बारहवां वंश (अंश) सन्त गरीबदास जी से कबीर वाणी तथा परमेश्वर कबीर जी की महिमा का कुछ-कुछ संस्य युक्त ज्ञान विस्तार होगा। जैसे सन्त गरीबदास जी की परम्परा में परमेश्वर कबीर जी को विष्णु अवतार मान कर साधना तथा प्रचार करते हैं। संत गरीबदास जी ने ''असुर निकन्दन रमैणी'' में कहा है ''साहेब तख्त कबीर खवासा। दिल्ली मण्डल लीजै वासा। सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी, सूती धरणी सूम जगायसी'' भावार्थ है कि सन्त गरीबदास जी वाला बारहवाँ पंथ (अंश) तो काल तक साधना बताने वाला कहा है। इसलिए केवल कबीर महिमा की वाणी ही संत गरीबदास जी द्वारा प्रकट की गई है। उसमें कहा है कि कबीर परमात्मा के तख्त अर्थात् सिंहासन का ख्वास अर्थात् नौकर दिल्ली के आस-पास के क्षेत्र में आएगा वह उस क्षेत्र के कृपण अर्थात् कंजूस व्यक्तियों को परमात्मा की महिमा बता कर जगाएगा अर्थात् दान-धर्म में उनकी रूची बढ़ाएगा। वह तेरहवाँ अंश कबीर परमात्मा के दरबार का उच्चतम् सेवक होगा। वह कबीर परमेश्वर का अत्यंत कृपा पात्र होगा। ऋग्वेद मण्डल 1 सुक्त 1 मन्त्र 7 में उप अग्ने अर्थात् उप परमेश्वर कहा है। इसलिए पूर्ण परमात्मा अपना भेद छुपा कर दास रूप में प्रकट होकर अपनी महिमा करता है। इसलिए उसी परमेश्वर को ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 4 मन्त्र 6 में तस्करा अर्थात् आँखों मे धूल झोंक का कार्य करने वाला तस्कर कहा है। श्री नानक जी ने उसे ठगवाड़ा कहा है। इसलिए तेरहवें अंश को (सन्त रामपाल दास को) उनका दास जाने चाहे स्वयं पूर्ण प्रभु का उपशक्तिरूप(उप अग्ने) समझें। इसलिए लिखा है कि बारहवें अंश की परम्परा में हम ही चलकर तेरहवें अंश रूप में आऐंगे। वह तेरहवां वंश (अंस) पूर्ण रूप से अज्ञान अंधेरा समाप्त करके परमेश्वर कबीर जी की वास्तविक महिमा तथा नाम का ज्ञान करा कर सभी पंथों को समाप्त करके एक ही पंथ चलाएगा, वह तेरहवां वंश हम (परमेश्वर कबीर) ही होंगे।

कबीर वाणी (कबीर सागर) पृष्ठ 136 पर :-

बारह पंथों का विवरण दिया है। बारहवें पंथ (गरीबदास पंथ, बारहवां पंथ लिखा है कबीर

सागर, कबीर चरित्र बोध पृष्ठ 1870 पर) के विषय में कबीर सागर कबीर वाणी पृष्ठ नं. 136-137 पर वाणी लिखी है कि :-

द्वादश पंथ चलो सो भेद

द्वादश पंथ काल फुरमाना। भुले जीव न जाय ठिकाना।।
(प्रथम) आगम कहि हम राखा। वंश हमार चूरामणि शाखा।
दूसर जग में जागू भ्रमावै। बिना भेद ओ ग्रन्थ चुरावे।।
तीसरा सुरति गोपालहि होई। अक्षर जो जोग दृढ़ावे सोई।।
चौथा मूल निरञ्जन बानी। लोकवेद की निर्णय ठानी।।
पंचम पंथ टकसार भेद लै आवै। नीर पवन को सन्धि बतावै।।
सो ब्रह्म अभिमानी जानी। सो बहुत जीवनकीकरी है हानी।।
छठवाँ पंथ बीज को लेखा। लोक प्रलोक कहें हममें देखा।।
पांच तत्व का मर्म दृढ़ावै। सो बीजक शुक्ल ले आवै।।
सातवाँ पंथ सत्यनामि प्रकाशा। घटके माहीं मार्ग निवासा।।
आठवाँ जीव पंथले बोले बानी। भयो प्रतीत मर्म नहिं जानी।।
नौमा राम कबीर कहावै। सतगुरू भ्रमलै जीव दृढ़ावै।।
दशवां ज्ञानकी काल दिखावै। भई प्रतीत जीव सुख पावै।।
ग्यारहवाँ भेद परमधाम की बानी। साख हमारी निर्णय ठानी।।
साखी भाव प्रेम उपजावै। ब्रह्मज्ञान की राह चलावै।।
तिनमें वंश अंश अधिकारा। तिनमेंसो शब्द होय निरधारा।।
संवत सत्रासै पचहत्तर होई। तादिन प्रेम प्रकटें जग सोई।।
आज्ञा रहै ब्रह्म बोध लावे। कोली चमार सबके घर खावे।।
साखि हमार लै जिव समुझावै। असंख्य जन्म में ठौर ना पावै।।
बारवै पन्थ प्रगट होवै बानी। शब्द हमारे की निर्णय ठानी।।
अस्थिर घर का मरम न पावैं। ये बारा पंथ हमहीको ध्यावैं।।
बारहें पन्थ हमही चलि आवै। सब पंथ मिटा एकहीपंथ चलावै।।
तब लगि बोधो कुरी चमारा। फेरी तुम बोधो राज दर्बारा।।
प्रथम चरन कलजुग नियराना। तब मगहर माडौ मैदाना।।
धर्मराय से मांडौ बाजी। तब धरि बोधो पंडित काजी।।
धर्मदास मोरी लाख दोहाई,मूल(सार)शब्द बाहर नहीं जाई।
मूल(सार)ज्ञान बाहर जो परही, बिचली पीढी हंस नहीं तरहीं।
तेतिस अर्ब ज्ञान हम भाखा, तत्वज्ञान गुप्त हम राखा।
मूलज्ञान(तत्वज्ञान)तब तक छुपाई, जब लग द्वादश पंथ न मिट जाई।

पुस्तक=कबीर सागर=अध्याय जीव धर्म बोध (बोध सागर) पृष्ठ 1937 पर प्रमाण :-

धर्मदास तोहि लाख दोहाई। सार शब्द बाहर नहिं जाई।।

सार शब्द बाहर जो परि है। बिचलै पीढी हंस नहीं तरि है।।
युगन–युगन तुम सेवा किन्ही। ता पीछे हम इहां पग दीनी।।
कोटिन जन्म भक्ति जब कीन्हा। सार शब्द तब ही पै चीन्हा।।
अंकूरी जीव होय जो कोई। सार शब्द अधिकारी सोई।।
सत्यकबीर प्रमाण बखाना। ऐसो कठिन है पद निर्वाना।।

कबीर सागर ''कबीर बानी'' नामक अध्याय (बोध सागर) पृष्ठ नं. 134 से 138 पर लिखे विवरण का भावार्थ है :-

पृष्ठ नं. 134 पर बारह वंशों (अंसों) के बाद तेरहवें वंश (अंस) में सब अज्ञान अंधेरा मिट जाएगा। संत गरीबदास पंथ तक काल के बारह वंश अपनी-2 चतुरता दिखाएगें। पृष्ठ नं. 136-137 पर ''बारह पंथों'' का विवरण किया है तथा लिखा है कि संवत् 1775 में प्रभु का प्रेम प्रकट होगा तथा हमरी बानी प्रकट होवेगी। (संत गरीबदास जी महाराज छुड़ानी हरियाणा वाले का जन्म 1774 में हुआ है उनको प्रभु कबीर 1784 में मिले थे। यहाँ पर इसी का वर्णन है तथा सम्वत् 1775 के स्थान पर 1774 होना चाहिए, गलती से 1775 लिखा है दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि संत गरीब दास जी का जन्म वैशाख मास की पूर्णमासी को हुआ। संवत् वाला वर्ष चैत्र से प्रारम्भ होता है जो वैसाख मास के साथ वाला है। कई बार तिथीयों के घटने बढ़ने से दो मास बन जाते हैं। उस समय शिक्षा का अभाव था तिथी व संवत् बताने वाले भी अशिक्षित होते थे। जिस कारण से संवत् 1775 के स्थान पर गरीबदास जी का जन्म संवत् 1774 लिखा गया होगा परन्तु यह संकेत संत गरीबदास जी की ओर है।)।

भावार्थ है कि बारहवां पंथ जो गरीबदास जी का चलेगा उस पंथ सहित अर्थात् उपरोक्त बारह पंथों के अनुयाई मेरी महिमा का गुणगान करेगें तथा हमारी साखी लेकर जीव को समझाएगें। परन्तु वास्तविक मन्त्र के अपरिचित होने के कारण साधक असंख्य जन्म सतलोक नहीं जा सकते। उपरोक्त बारह पंथ हमको ही प्रमाण करके भक्ति करेगें परन्तु स्थाई स्थान (सतलोक) प्राप्त नहीं कर सकते। बारहवें पंथ (गरीबदास वाले पंथ) में आगे चलकर हम (कबीर जी) स्वयं ही आऐगें तथा सब बारह पंथों को मिटा एक ही पंथ चलाऐगें। उस समय तक सारशब्द तथा सारज्ञान (तत्वज्ञान) छुपा कर रखना है। यही प्रमाण सन्त गरीबदास जी महाराज ने अपनी अमृतवाणी ''असुर निकंन्दन रमैणी'' में किया है कि ''सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी, सूती धरती सूम जगायसी'' पुराना रोहतक जिला (वर्तमान में, सोनीपत, झज्जर तथा रोहतक जो पहले एक ही जिला था) दिल्ली मण्डल कहलाता है। जो पहले अग्रेंजों के शासन काल में केन्द्र के आधीन था। मुझ दास का पैत्रिक गाँव धनाना इसी पुराने रोहतक जिले में है। सन् 1951 में मेरा (संत रामपाल का) जन्म हुआ था। बारह पंथों का विवरण कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) पृष्ठ नं. 1870 पर भी है जिसमें बारहवां पंथ गरीबदास लिखा है।

कबीर साहेब के पंथ में काल द्वारा प्रचलित बारह पंथों का विवरण (कबीर चरित्र बोध (कबीर सागर) पृष्ठ नं. 1870 से) :- (1) नारायण दास जी का पंथ (2) यागौदास (जागू) पंथ (3) सूरत गोपाल पंथ (4) मूल निरंजन पंथ (5) टकसार पंथ (6) भगवान दास (ब्रह्म) पंथ (7) सत्यनामी पंथ (8) कमाली (कमाल का) पंथ (9) राम कबीर पंथ (10) प्रेम धाम (परम धाम)

की वाणी पंथ (11) जीवा पंथ (12) गरीबदास पंथ।

विशेष :- यहाँ पर प्रथम पंथ का संचालक नारायण दास लिखा है जबकी कबीर वाणी (कबीर सागर) पृष्ठ 136 पर प्रथम पंथ का संचालक चूरामणी लिखा है, शेष प्रकरण ठीक है। इसमें भी दामाखेड़ा वाले अनुयाइयों ने चुड़ामणी को हटाने का प्रयत्न किया है। उसके स्थान पर नारायण दास लिख दिया। जबकि नारायण दास तो बिल्कुल विपरित था। उसका तो विनाश हो गया था। इसलिए प्रथम पंथ चुड़ामणी जी का ही मानना चाहिए। दूसरी बात है कि कबीर वाणी (कबीर सागर) पृष्ठ नं. 136 पर लिखी वाणी में चूड़ामणी को मिला कर ही बारह पंथ बनते हैं।

विचार करें:- अब वही एक पंथ मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा परमेश्वर कबीर जी की आज्ञा व शक्ति से चलाया जा रहा है जो सभी पंथों को एक करेगा।

वर्तमान कबीर सागर का संशोधन कर्ता भी दामा खेड़ा वालों का अनुयायी है। कबीर सागर में कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) में लेखक ने लिखा है कि धर्मदास जी के बयालीस वंश का नियम है कि प्रत्येक वंश पच्चीस वर्ष बीस दिन तक गद्दी पर बैठा करे तथा स्वःइच्छा से शरीर छोड़े। इस से अधिक तथा कम समय कोई गद्दी पर न रहे। यह भी लिखा है कि वर्तमान में यही क्रिया चल रही है।

''धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय'' पुस्तक पृष्ठ नं. 32 से 49 तक विवरण दिया है :-

पहला चुरामणी जी सम्वत् 1570 से 1630 तक 60 वर्ष कुदुरमाल नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

दूसरा सुदर्शन नाम जी सम्वत् 1630 से 1690 तक 60 वर्ष रतनपुर नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

तीसरा कुलपत नाम जी सम्वत् 1690 से 1750 तक 60 वर्ष कुदुरमाल नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

चौथा प्रमोद गुरू बाला पीर जी सम्वत् 1750 से 1804 तक 54 वर्ष मंढला नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

पाँचवां केवल नाम जी सम्वत् 1804 से 1824 तक 20 वर्ष धमधा गद्दी पर रहे।

छठवां अमोल नाम जी सम्वत् 1824 से 1846 तक 22 वर्ष मंडला नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

सातवां सूरत सनेही जी सम्वत् 1846 से 1871 तक 25 वर्ष सिंघाड़ी नामक स्थान की गद्दी पर रहे।

आठवां 1872 से 1890 तक 18 वर्ष कवर्धा नामक स्थान की गद्दी पर रहा।

नौवां 1890 से 1912 तक 22 वर्ष कवर्धा नामक स्थान की गद्दी पर रहा।

दसवां 1912 से 1939 तक 27 वर्ष कवर्धा नामक स्थान की गद्दी पर रहा।

ग्यारहवें को गद्दी ही नहीं हुई। क्योंकि दो वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई।

बारहवां उग्र नाम साहब जी सम्वत् 1953 में गद्दी पर बैठा तथा सम्वत् 1971 में मृत्यु हुई,

18 वर्ष तक कवर्धा स्थान को त्याग कर दामा खेड़ा में स्वयं गद्दी बना कर रहा तथा सम्वत् 1939 से 1953 तक 14 वर्ष तक दामाखेड़ा नामक स्थान की गद्दी के पंथ वंश बिना पंथ रहा।

तेरहवां वंश दयानाम साहेब सम्वत् 1971 से 1984 तक 13 वर्ष दामाखेड़ा नामक स्थान की गद्दी पर रहा।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध है कि दामाखेड़ा वालों की मनघड़न्त कहानी है कि वंश गद्दी से ही कलयुग में मुक्ति सम्भव है तथा प्रत्येक गद्दी वाला महंत 25 वर्ष 20 दिन तक गद्दी पर रहता है। फिर दूसरे को उत्तराधिकारी बना कर शरीर त्याग जाता है। न अधिक समय, न कम समय अपितु पूरे 25 वर्ष 20 दिन ही रहता है, यह गलत सिद्ध हुआ। क्योंकि उपरोक्त विवरण में किसी भी गद्दी वाले ने 25 वर्ष 20 दिन का समय नहीं रखा कोई 60 वर्ष कोई 54, 22, 27 या पूरे 25 या 18 वर्ष समय गद्दी पर रहे हैं।

शंकाः- अनुराग सागर पृष्ठ नं. 120 से 123 तक बारह दूतों का वर्णन किया है। जिसमें लिखा है कि आठवां दूत जो पंथ चलाएगा वह कुछ कुरान तथा कुछ वेद चुरा कर कुछ कबीर जी का केवल निर्गुण ज्ञान लेकर अपना ज्ञान प्रचार करेगा तथा एक तारतम्य पुस्तक लिखेगा। आप भी वेद व कुरान आदि का वर्णन करके पुस्तक लिख रहे हो। आपका मार्ग कबीर मार्ग ही है क्या प्रमाण है?

समाधानः- यहाँ पर बारह काल पंथों का विवरण है जो दामा खेड़ा वालों के द्वारा मिलावट करके लिखा गया है।

(1.) क्योंकि कबीर बानी (बोध सागर) पृष्ठ नं. 134 से 138 तथा कबीर चरित्र बोध पृष्ठ नं. 1870 पर लिखे बारह पंथों के विवरण से नहीं मिलती।

(2.) यह विवरण आठवें पंथ के प्रवर्तक का है। उसके बाद राम कबीर पंथ, सतनामी पंथ आदि सर्व बारह पंथ चल चुके हैं।

अब इस दास (रामपाल दास) द्वारा तेरहवां अर्थात् एक वास्तविक मार्ग चलाया जा रहा है। जिससे सर्व पंथ मिट कर एक पंथ ही रह जाएगा। जिसका प्रमाण आप पूर्व लिखे विवरण में पढ़ चुके हैं। जो स्वयं कबीर परमेश्वर जी की आज्ञा व कृपा से चल रहा है। यह दास (रामपाल दास) वेदों तथा कुरान व कबीर वाणी आदि को चुरा कर पुस्तक नहीं लिख रहा है अपितु परमेश्वर कबीर साहेब जी की वाणी के आधार से प्रचार किया जा रहा है तथा परमेश्वर की कविर्वाणी (कबीर वाणी) की सत्यता के लिए वेदों तथा कुरान आदि का समर्थन लिया जा रहा है। वाणी चुराने का अर्थ होता है कि वास्तविक ज्ञान को छुपाने के लिए सतग्रन्थों के ज्ञान को मरोड़-तरोड़ कर अपने लोक वेद (दंत कथा) को उजागर करना परन्तु यह दास तो परमेश्वर कबीर जी की वाणी को ही आधार मान कर यथार्थ ज्ञान के आधार से मार्ग दर्शन कर रहा है।

इसलिए हमारा मार्ग कबीर मार्ग (पंथ) है। शेष पंथों की साधना शास्त्र विरूद्ध अर्थात् मनमाना आचरण (पूजा) है जो मोक्षदायक नहीं है।

कबीर सागर– ''अमर मूल'' पृष्ठ 196 पर साखी लिखी है :

साखीः- नाम भेद जो जान ही, सोई वंश हमार।

नातर दुनियाँ बहुत ही, बूड़ मुआ संसार।।

पृष्ठ 205 पर लिखा है:-

नाम जाने सो वंश तुम्हारा, बिना नाम बुड़ा संसारा।

पृष्ठ 207 पर लिखा है:-

सोई वंश सत शब्द समाना, शब्द हि हेत कथा निज ज्ञाना।

पृष्ठ 217 पर लिखा है:-

बिना नाम मिटे नहीं संशा, नाम जाने सो हमारे वंशा।
नाम जाने सो वंश कहावै, नाम बिना मुक्ति न पावै।
नाम जाने सो वंश हमारा, बिना नाम बुड़ा संसारा।

पृष्ठ 244 पर लिखा है:-

बिन्द के बालक रहें उरझाई, मान गुमान और प्रभुताई।

साखीः- हमरे बालक नाम के, और सकल सब झूठ।
सत्य शब्द कह जानही, काल गह नहीं खूंठ।।
वंश हमारा शब्द निज जाना, बिना नाम नहिं वंशहि माना।।
धर्मदास निर्मोहि हिय गहेहू। वंश की चिन्ता छाड़ तुम देहू।

कबीर सागर के अध्याय अनुराग सागर पृष्ठ 138 से 141 तक का भावार्थ है किः- तेरे वंश में बिन्द (सन्तान) तो अभिमानी होगें तथा साथ ही अहंकार वश झगड़ा करेगें तथा कहेगें कि हम तो धर्मदास के वंश (सन्तान) से हैं। हम श्रेष्ठ है। कबीर परमेश्वर ने कहा है कि मेरा वास्तविक वंश वही है जो मेरे निज शब्द अर्थात् सारशब्द से परिचित है जो सारशब्द से परिचित नहीं है वह हमारा वंश नही माना जाएगा। इसलिए बारहवें पंथ अर्थात् गरीबदास जी वाले पंथ तक काल के पंथ ही कहा गया है। इसलिए धर्मदास जी से कबीर जी ने कहा है कि आप अपने वंश की चिन्ता छोड़ कर निर्मोही हो जाओ।

कबीर साहेब ने कहा कि यदि तेरे वंश वाले मेरे वचन अनुसार चलेगें तो उन्हे भी पार कर दूंगा अन्यथा नहीं।

पृष्ठ नं. 139 से :-

वचन गहे सो वंश हमारा, बिना वचन (नाम) नहीं उतरे पारा।
धर्मदास तब बंस तुम्हारा, वचन बंस रोके बटपारा।।
शब्द की चास नाद कह होई, बिन्द तुम्हारा जाय बिगोई।
बिन्द ते होय ना पंथ उजागर। परखि के देखहु धर्मनिनागर।।
चारहु युग देखहु समवादा, पन्थ उजागर किन्हों नादा।
और वंस जो नाद सम्हारै, आप तरें और जीवहीं तारे।
कहां नाद और बिन्द रै भाई। नाम भक्ति बिनु लोक ना जाई।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी से कहा जो मेरी आज्ञा का पालन करेगा। वही हमारा वंश अर्थात् अनुयाई होगा अन्यथा वह पार नहीं होगा तेरे बिन्द वाले अर्थात् शरीर से उत्पन्न सन्तान महंत परम्परा तो अभिमानी हो जाऐगें। वे तो सीधे नरक के भागी होगें। केवल नाद (शिष्य परम्परा) से ही तेरा पंथ चल सकेगा यदि वास्तविक नाम चलता रहेगा तो अन्यथा तेरे दोनों ही नाद (शिष्य) बिन्द (शरीर की संतान) भक्तिहीन हो

जाएगें। केवल तेरा वंश फिर भी चलेगा।

धर्मदास आप की दोनों परम्परा (नाद व बिन्द) से अन्य कोई मेरे वचन अर्थात् नाद (शिष्य परम्परा) के अनुयायी होगें उनसे मेरा यथार्थ कबीर पंथ उजागर (प्रसिद्ध) होगा। कबीर साहेब कह रहे हैं कि धर्मदास किसी युग में देख ले केवल नाद (वचन) अर्थात् शिष्य परम्परा से ही जीव कल्याण हुआ है तथा बिन्द (शरीर) की सन्तान अर्थात् महंत परम्परा से कोई सत्य मार्ग नहीं चलता, वे तो अभिमानी होते हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि दामाखेड़ा वाली गद्दी वाले महंत जी मनघड़ंत कहानी बना कर श्रद्धालुओं को गुमराह कर रहे हैं। जो वास्तविक सतनाम(जो दो मंत्र का है जिससे एक ओ३म् तथा दूसरा सांकेतिक तत् मन्त्र है) यह दास(रामपाल दास) दान करता है। उसका प्रमाण आदरणीय धर्मदास साहेब जी की वाणी जो कबीर सागर तथा कबीर पंथी शब्दावली में तथा आदरणीय गरीबदास साहेब जी की वाणी में तथा आदरणीय दादू साहेब जी की वाणी में तथा आदरणीय घीसा दास साहेब की वाणी में तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी की वाणी में प्रमाण है। परंतु वर्तमान के सर्व तथा कथित कबीर पंथी तथा उपरोक्त अन्य संतों के पंथी सतनाम से अपरीचित हैं तथा मनमाने नाम जाप दान कर रहे हैं। जो व्यर्थ हैं।

प्रश्न : एक भक्त कह रहा था कि सातवीं पीढ़ी के बाद सुधार कर लिया था?

उत्तर : यदि सुधार कर लिया होता तो उनके पास सतनाम मंत्र होता। यह भी किसी काल के दूत की ही सोच है। यदि अब कोई मुझ दास से नाम प्राप्त करके ढोंग रचे कि मेरे पास भी वही मंत्र हैं तो वह अनअधिकारी होने के कारण व्यर्थ है।

प्रश्न : आप तीन बार नाम देते हो तथा फिर सारशब्द भी प्रदान करके चौथा पद प्राप्त कराते हो। परंतु दामा खेड़ा वाले तथा अन्य कबीर पंथी महंत, संत तो नाम एक ही बार देते हैं। कौन सा सत्य है ? इसकी परख कैसे हो ?

कबीर पंथ में दामाखेड़ा वाले महन्तों द्वारा तथा उन्हीं से भिन्न हुए खरसिया गद्दी वालों तथा लहरतारा काशी (बनारस) वालों द्वारा जो उपदेश मन्त्र (नाम) दिया जाता है। वह निम्न है :- ''सत सुकृत की रहनी रहो। अजर अमर गहो सत्य नाम। कह कबीर मूल दीक्षा सत्य शब्द प्रमाण। आदि नाम, अजर नाम, अमी नाम, पाताले सप्त सिंधु नाम, आकाशे अदली निज नाम। यही नाम हंस का काम। खुले कुंजी खुले कपाट पांजी चढ़े मूल के घाट। भर्म भूत का बान्धो गोला कह कबीर यही प्रमाण पांच नाम ले हंसा सत्यलोक समान''

उत्तर : कबीर सागर में अमर मूल बोध सागर पृष्ठ 265 पर लिखा है :-

तब कबीर अस कहेवे लीन्हा, ज्ञानभेद सकल कह दीन्हा ।।
धर्मदास मैं कहो बिचारी, जिहिते निबहै सब संसारी ।।
प्रथमहि शिष्य होय जो आई, ता कहैं पान देहु तुम भाई ।।1 ।।
जब देखहु तुम दृढ़ता ज्ञाना, ता कहैं कहु शब्द प्रवाना ।।2 ।।
शब्द मांहि जब निश्चय आवै, ता कहैं ज्ञान अगाध सुनावै ।।3 ।।

दोबारा फिर समझाया है -

बालक सम जाकर है ज्ञाना । तासों कहहू वचन प्रवाना ।।1 ।।
जा कहैं सूक्ष्म ज्ञान है भाई । ता कहें स्मरन देहु लखाई ।।2 ।।
ज्ञान गम्य जा कहैं पुनि होई । सार शब्द जा कहैं कह सोई ।।3 ।।

जा कहैं दिव्य ज्ञान परवेशा, ताकहैं तत्व ज्ञान उपदेशा।।4।।

उपरोक्त वाणी से स्पष्ट है कि कड़िहार गुरु तीन स्थिति में सार नाम तक प्रदान करता है तथा चौथी स्थिति में सार शब्द प्रदान करना होता है। धर्मदास जी के माध्यम से इस दास (रामपाल दास) को संकेत है। क्योंकि कबीर सागर में तो प्रमाण बाद में देखा था परंतु उपदेश विधि पहले ही पूज्य गुरुदेव तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी ने मुझ दास को प्रदान कर दी थी। जो उपदेश मन्त्र (नाम) दामाखेड़ा वाले व खरसीया तथा लहरतारा काशी वाले देते हैं वह मन्त्र व्यर्थ है। उस में तो सत्यनाम तथा निजनाम (सारनाम) तथा पांच नामों की महीमा बताई है जो यह दास (रामपाल दास) प्रदान करता है। यह उपरोक्त पूरा शब्द(जो दामाखेड़ा व खरसीया व लहरतारा काशी वाले उपदेश में देते हैं) रटने से कुछ लाभ नहीं जो इसमें संकेत है उस सत्यनाम व निज नाम (सारशब्द) तथा पांच नामों को मुझ दास से प्राप्त करके साधना करने से मोक्ष होगा।

धर्मदास जी को तो परमश्ेवर कबीर साहेब जी ने सार शब्द देने से मना कर दिया था तथा कहा था कि यदि सार शब्द किसी काल के दूत के हाथ पड़ गया तो बिचली पीढ़ी वाले हंस पार नहीं हो पाऐंगे।

इसलिए कबीर सागर, जीव धर्म बोध, बोध सागर, पृष्ठ 1937 पर लिखा है :-

धर्मदास तोहि लाख दुहाई, सार शब्द कहीं बाहर नहीं जाई।
सार शब्द बाहर जो परि है, बिचली पीढ़ी हंस नहीं तरि है।

जैसे कलयुग के प्रारम्भ में प्रथम पीढ़ी वाले भक्त अशिक्षित थे तथा कलयुग के अंत में अंतिम पीढ़ी वाले भक्त कृतघनी हो जाऐंगे तथा अब वर्तमान में सन् 1947 से भारत स्वतंत्र होने के पश्चात् बिचली पीढ़ी प्रारम्भ हुई है। सन् 1951 में मुझ दास को भेजा है। अब सर्व भक्तजन शिक्षित हैं। वह बिचली पीढी वाला भक्ति समय प्रारम्भ हो चुका है। मुझ दास के पास सत्यनाम तथा सार शब्द तथा पांच नाम परमेश्वर कबीर दत्त हैं। उपदेश प्राप्त करके अपना कल्याण करायें। मानव जीवन तथा बिचली पीढ़ी वाला समय आप को प्राप्त है। अविलम्ब मुझ दास के पास आऐं अन्यथा पश्चाताप् करना पड़ेगा। यथार्थ कबीर पंथ अर्थात् एक पंथ प्रारम्भ हो चुका है। अब यह सत मार्ग सत साधना पूरे संसार में फैलेगी तथा नकली गुरु तथा संत, महंत छुपते फिरेंगे।

पुस्तक "धनी धर्मदास जीवन दर्शन एवं वंश परिचय" के पृष्ठ 46 पर लिखा है कि ग्यारहवीं पीढ़ी को गद्दी नहीं मिली। जिस महंत जी का नाम "धीरज नाम साहब" कवर्धा में रहता था। उसके बाद बारहवां महंत उग्र नाम साहेब ने दामाखेड़ा में गद्दी की स्थापना की तथा स्वयं ही महंत बन बैठा। इससे पहले दामाखेड़ा में गद्दी नहीं थी।

इससे स्पष्ट है कि पूरे विश्व में मुझ दास के अतिरिक्त वास्तविक भक्ति मार्ग नहीं है। सर्व प्रभु प्रेमी श्रद्धालुओं से प्रार्थना है कि प्रभु का भेजा हुआ दास जान कर अपना कल्याण करवाऐं।

यह संसार समझदा नाहीं, कहन्दा श्याम दोपहरे नूं। गरीबदास यह वक्त जात है, रोवोगे इस पहरे नूं।।

संत रामपाल दास
सतलोक आश्रम करौंथा,
जिला रोहतक(हरियाणा)।

❑❑❑